श्रीरामकृष्ण वचनामृत

श्रीरामकृष्णवचनामृत

प्रथम भाग

श्री महेन्द्रनाथ गुप्त
(श्री 'म')

रामकृष्ण मठ
नागपुर

प्रस्तावना

(प्रथम संस्करण)

भगवान् श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव का जीवन नितान्त आध्यात्मिक था। ईश्वरीय भाव उनके लिए ऐसा ही स्वाभाविक था जैसा किसी प्राणी के लिए श्वास लेना। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण मनुष्य-मात्र के लिए आदेशप्रद कहा जा सकता है तथा उनके उपदेश विशेष रूप से अध्यात्म-गर्भित हैं और मार्वलौकिक होते हुए मानव जीवन पर अपना प्रभाव डालने में अद्वितीय हैं।

श्रीरामकृष्ण परमहंमदेव का संभाषण तथा उनके उपदेशों का सर्वप्रथम संकलन तथा संपादन उनके एक अनन्य गृहस्थ भक्त श्रीम (श्री महेन्द्रनाथ गुप्त) ने ५ जिल्दो मे 'श्रीरामकृष्ण कथामृत' के नाम से किया था। कुछ समय बाद इन ग्रन्थों का अनुवाद किया गया तथा यह अनुवाद क्रमपूर्वक मासिक हिन्दी पत्रिका 'समन्वय' में प्रकाशित हुआ। अनुवाद मे संभाषणों तथा उपदेशों का क्रम तारीखवार रखा गया। 'समन्वय' पत्रिका मायावती अद्वैत आश्रम, हिमालय से प्रकाशित होती थी और इसके कुशल संपादक थे श्री स्वामी माधवानन्दजी, जो आजकल श्रीरामकृष्ण मठ तथा मिशन के मंत्री हैं। इन ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद का श्रेय हिन्दी संसार के लब्धप्रतिष्ठ लेखक तथा सुविख्यात छायावादी कवि श्री पं. सूर्यकान्तजी त्रिपाठी 'निराला' को है। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए हम श्री 'निराला'जी के विशेष आभारी हैं। बंगला भाषा का पूर्ण ज्ञान रखने के कारण श्री निरालाजी ने अनुवाद में केन्द्रीय भावों तथा शैली आदि को ज्यों का त्यों रखा है और साथ ही साथ साहित्यिक दृष्टि से भी उसे बहुत ऊँचा बनाया है।

श्री स्वामी पवित्रानन्दजी, अध्यक्ष, मायावती, अद्वैत आश्रम, के भी हम बड़े कृतज्ञ है जिन्होंने हमें उस पुस्तक की सारी सामग्री दी है तथा इसको पुस्तक रूप में प्रकाशित करने की अनुमति।

साहित्य-शास्त्री प्रोफेसर श्री पं. विद्याभास्करजी शुक्ल, एम्.एससी., पी.ई.एस्., कॉलेज ऑफ साइन्स, (नागपुर यूनिवर्सिटी) नागपुर, के प्रति भी हम अपनी कृतज्ञता प्रकट किए बिना नहीं रह सकते हैं। प्रो. शुक्लजी ने निर्मल भक्ति-भाव से इस पुस्तक में दी हुई श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव की सुन्दर, संक्षेप जीवनी लिखी है। यह जीवनी परमहंस महाराज के उपदेशों के लिए प्रस्तावना के रूप में विशेष लाभदायक होगी। श्री शुक्ल जी ने इस पुस्तक को आद्योपान्त ध्यान से देखा है तथा कई उपयुक्त सूचनाएँ भी दी

हैं और इसके लिए हम उन्हें धन्यवाद देते हैं।

मौलिक बंगाली कथामृत का अनुवाद अन्य कई भाषाओं में हो चुका है और इसका पूर्ण रूप से तथा क्रमानुसार हिन्दी में अनुवाद होना बहुत समय से वांछनीय था। हमें आशा है हमारे इस प्रकाशन से हिन्दी जनता की एक बड़ी जरूरत की पूर्ति हो जाएगी। साथ ही यह पुस्तक श्रीरामकृष्ण आश्रम, धन्तोली, नागपुर, सी. पी. से प्रकाशित श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव की विस्तृत जीवनी (श्रीरामकृष्ण लीलामृत भाग १ और २) के लिए परिपूरक के सदृश है।

हमारे इस प्रकाशन से यदि पाठकों को कुछ लाभ हुआ तो हमें बड़ी प्रसन्नता होगी और हम अपने यत्नों को सफल मानेंगे।

हमारी यह आन्तरिक एवं हार्दिक प्रार्थना है कि यह पुस्तक उन सज्जनों के लिए पथ-पदर्शक हो जो सत्य की खोज में दृढ़ मन से लगे हैं।

वैशाख, अक्षय तृतीया

— प्रकाशक

श्रीमाताजी का आशीर्वाद

भगवान् श्रीरामकृष्णदेव की लीलासहधर्मिणी परमआराध्या श्री माँ सारदादेवी ने 'श्रीरामकृष्णकथामृत' के सम्बन्ध में उसके रचयिता श्री महेन्द्रनाथ गुप्त (श्री 'म') को निम्नलिखित पत्र लिखा था :-

"बेटा,

उनके (श्रीरामकृष्णदेव के) निकट तुमने जो बाते सुनी थी वही बातें सत्य हैं। इस विषय में तुम्हें कोई भय नहीं। किसी समय उन्होंने ही तुम्हारे निकट इन बातों को रख छोड़ा था। अब आवश्यकतानुसार वेही इन्हे प्रकट करा रहे हैं। जान रखो कि इन बातो को व्यक्त किये बिना लोगों का चैतन्य जागृत नही होगा। तुम्हारे पास उनकी जो बातें संचित हैं वे सभी सत्य हैं। एक दिन तुम्हारे मुँह से उन्हें सुनकर मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो वे स्वयं ही ये सब बातें कह रहे हैं।"

तव कथामृतं तप्तजीवनं
कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं
भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः।।

– प्रभो, तुम्हारी लीलाकथा अमृतस्वरूप है। तापतप्त जीवों के लिए तो वह जीवनस्वरूप है। ज्ञानी महात्माओं ने उसका गुणगान किया है। वह पापपुंज को हरनेवाली है। उसके श्रवणमात्र से परम कल्याण होता है। वह परम मधुर तथा सुविस्तृत है। जो तुम्हारी इस प्रकार की लीलाकथा का गान करते हैं , वास्तव में इस भूतल में वे ही सर्वश्रेष्ठ दाता हैं।

भगवान् श्रीरामकृष्णदेव की संक्षिप्त जीवनी

हम यह देखते हैं कि श्रीरामचन्द्र तथा भगवान् बुद्ध को छोड़कर बहुधा अन्य सभी अवतारी महापुरुषों का जन्म संकटग्रस्त परिस्थितियों में ही हुआ है, और यह कहा जा सकता है कि भगवान् श्रीरामकृष्ण भी किसी विशेष प्रकार के सुखद वातावरण मे इस गंसार में अवतरित नहीं हुए।

श्रीरामकृष्ण का जन्म हुगली प्रान्त के कामारपुकुर गाँव में एक श्रेष्ठ ब्राह्मण परिवार में शकाब्द १७५७ फाल्गुन मास की शुक्लपक्ष द्वितीया तदनुसार बुधवार ता. १७ फरवरी १८३६ ई. को हुआ। कामारपुकुर गाँव बर्दवान से लगभग चौबीस-पचीस मील दक्षिण तथा जहानाबाद (आरामबाग) से लगभग आठ मील पश्चिम में है।

श्रीरामकृष्ण के पिता श्री क्षुदिराम चट्टोपाध्याय परम सन्तोषी, सत्यनिष्ठ एवं त्यागी पुरुष थे, और उनकी माता श्री चन्द्रमणि देवी सरलता तथा दयालुता की मूर्ति थीं। यह आदर्श दम्पति पहले देरे नामक गाँव में रहते थे, परन्तु वहाँ के अन्यायी जमींदार की कुछ जबरदस्तियों के कारण इन्हें वह गाँव छोड़कर करीब तीन मील की दूरी पर इसी कामारपुकुर गाँव में आ बसना पड़ा।

बचपन में श्रीरामकृष्ण का नाम गदाधर था। अन्य बालकों की भाँति वे भी पाठशाला भेजे गये, परन्तु एक ईश्वरी अवतार एवं संसार के पथ-प्रदर्शक को उस 'अ, आ, इ, ई' की पाठशाला में चैन कहाँ? बस, जी उचटने लगा, और मन लगा घर में स्थापित आनन्दकन्द सच्चिदानन्द भगवान् श्रीरामजी की मूर्ति में – स्वयं वे फूल तोड़ लाते और इच्छानुसार मनमानी उनकी पूजा करते।

कहते हैं कि अवतारी पुरुषों में कितने ही ऐसे गुण छिपे रहते हैं कि उनका अनुमान करना कठिन होता है। श्री गदाधर की स्मरणशक्ति विशेष तीव्र थी। साथ ही उन्हें गाने की भी रुचि थी और विशेषत: भक्तिपूर्ण गानों के प्रति।

साधु-संन्यासियो के जत्थों के दर्शन तो मानो इनकी जीवनी में संजीवनी का कार्य करते थे। अपने घर के पास लाहा की अतिथिशाला में जहाँ बहुधा संन्यासी उतरा करते थे, इनका काफी समय जाता था। मुहल्ले के बालक, वृद्ध, सभी ने न जाने इनमें कौनसा दैवी गुण परखा था कि वे सब इनसे बड़े प्रसन्न रहते थे। रामायण, महाभारत, गीता आदि के श्लोक ये केवल बड़ी भक्ति से सुनते ही नहीं थे, वरन् उनमें से बहुतसे उन्हें सहजरूप

कण्ठस्थ भी हो जाया करते थे।

यह दैवी बालक अपनी करतूतें शुरू से ही दिखाते रहा और कह नहीं सकते कि उसके बचपन से ही कितनों ने उसे ताड़ा होगा।

छिपे हुए दैवी गुणों का विकास पहले-पहल उस बार हुआ जब यह बालक अपने गाँव के समीपवर्ती आनुड़ गाँव को जा रहा था। एकाएक इस बालक को एक विचित्र प्रकार की ज्योति का दर्शन हुआ और वह बाह्यज्ञानशून्य हो गया। कहना न होगा कि मायाग्रस्त सांसारिकों ने जाना कि गर्मी के कारण वह मूर्च्छा थी, परन्तु वास्तव में वह थी भावसमाधि।

अपने पिता की मृत्यु के बाद श्रीरामकृष्ण अपने ज्येष्ठ भ्राता के साथ, जो एक बड़े विद्वान् पुरुष थे, कलकत्ता आये। उस समय वे लगभग १७-१८ वर्ष के थे। कलकत्ते में उन्होंने एक दो स्थानों पर पूजन का कार्य किया। इसी अवसर पर रानी रासमणि ने कलकत्ते से लगभग पाँच मील पर दक्षिणेश्वर में एक मन्दिर बनवाया और श्रीकालीदेवी की स्थापना की। ता. ३१ मई १८५५ को इसी मन्दिर में श्रीरामकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकुमारजी कालीमन्दिर के पुजारीपद पर नियुक्त हुए, परन्तु यह कार्यभार शीघ्र ही श्रीरामकृष्ण पर आ पड़ा। श्रीरामकृष्ण उक्त मन्दिर में पूजा करते थे, परन्तु अन्य साधारण पुजारियों की भाँति वे कोरी पूजा नहीं करते थे, परन्तु पूजा करते समय ऐसे मग्न हो जाते थे कि उस प्रकार की अलौकिक मग्नता 'देखा सुना कबहुँ नहीं कोई' – और यह अक्षरश: सत्य भी क्यों न हो? ईश्वर ही ईश्वर की पूजा कर रहे थे! उस भाव का वर्णन कौन कर सकता है जिससे श्रीरामकृष्ण प्रेरित हो, ध्यानावस्थित हो श्रीकालीदेवी पर फूल चढ़ाते थे! आँखो में अश्रुधारा बह रही है, तन-मन की सुध नहीं, हाथ काँप रहे हैं , हृदय उल्लास से भरा है, मुख से शब्द नहीं निकलते हैं, पैर भूमि पर स्थिर नहीं रहते है और घण्टी, आरती आदि तो सब किनारे ही पड़ी रही – श्रीकालीजी पर पुष्प चढ़ा रहे हैं और थोड़ी ही देर में उन्हें ही उन्हें देखते हैं – स्वयं में भी उन्हीं को देख रहे हैं और कम्पित कर से अपने ही ऊपर फूल चढ़ाने लगते हैं, कहते हैं – माँ-माँ-तुम-मैं-मैं-तुम और ध्यानमग्न हो समाधिस्थ हो जाते हैं। देखनेवाले समझते हैं कुछ का कुछ, परन्तु ईश्वर मुसकराते हैं, बड़े ध्यान से सब देखते हैं और विचारते होंगे कि यह रामकृष्ण हूँ तो मैं ही!

उनके हृदय की व्याकुलता की पराकाष्ठा उस दिन हो गयी जब व्यथित होकर माँ के दर्शन के लिए एक दिन मन्दिर में लटकती हुई तलवार उन्होंने उठा ली और ज्यो ही उससे वे अपना शरीरान्त करना चाहते थे कि उन्हें जगन्माता का अपूर्व अद्भुत दर्शन हुआ और देहभाव भूलकर वे बेसुध हो जमीन पर गिर पड़े। तदुपरान्त बाहर क्या हुआ और वह दिन तथा उसके बाद का दिन कैसे व्यतीत हुआ, यह उन्हें कुछ भी नहीं मालूम पड़ा। अन्त:करण में केवल एक प्रकार के अननुभूत आनन्द का प्रवाह बहने लगा।

बेचारा मायाग्रस्त पुरुष यह सब कैसे समझ सकता है? उसके लिए तो दिव्य चक्षु की आवश्यकता होती है। बस श्रीरामकृष्ण के घर के लोग समझ गये कि इनके मस्तिष्क

में कुछ फेरफार हो गया है और विचार करने लगे उसके उपचार का। किसी ने सलाह दी कि इनका विवाह कर दिया जाय तो शायद मानसिक विकार (?) दूर हो जाय। विवाह का प्रबन्ध होने लगा और कामारपुकुर से दो कोस पर जयरामवाटी ग्राम में रहनेवाले श्री रामचन्द्र मुखोपाध्याय की कन्या श्रीसारदामणि से इनका विवाह करा दिया गया।

परन्तु इस बालिका के दक्षिणेश्वर में आने पर भी श्रीरामकृष्ण के जीवन में कोई अन्तर नहीं हुआ और श्रीरामकृष्ण ने उस बालिका में प्रत्यक्ष देखा उन्हीं श्रीकालीदेवी को। एक सांसारिक बन्धन सम्मुख आया और वह था पति का कर्तव्य। बालिका को बुलाकर शान्ति से पूछा, "क्या तुम मुझे सांसारिक जीवन की ओर खींचना चाहती हो?" परन्तु उस बालिका ने तुरन्त उत्तर दिया, "मेरी यह बिलकुल इच्छा नहीं कि आप सांसारिक जीवन व्यतीत करें, पर हाँ, आपसे मेरी यह प्रार्थना अवश्य है कि आप मुझे अपने ही पास रहने दें, अपनी सेवा करने दें तथा योग्य मार्ग बतलावें।"

कहा जा सकता है कि उस बालिका ने एक आदर्श अर्धांगिनी का धर्म पूर्ण रूप से निबाहा। अपने सर्वस्व पति को ईश्वर मानकर उनके सुख में अपना सुख देखा और उनके आदर्श जीवन की साथिन बनकर उनकी सहायता करने लगी। श्रीरामकृष्ण को तो श्रीसारदादेवी और श्रीकालीदेवी एक ही प्रतीत होने लगीं और इस भाव की चरम सीमा उस दिन हुई जब उन्होंने श्रीसारदादेवी का साक्षात् श्रीजगदम्बाज्ञान से षोड्शोपचार पूजन किया। पूजाविधि पूर्ण होते ही श्रीसारदादेवी को समाधि लग गयी। अर्ध-बाह्यदशा में मन्त्रोच्चार करते-करते श्रीरामकृष्ण भी समाधिमग्न हो गये। देवी और उसके पुजारी दोनों ही एकरूप हो गये। कैसा उच्च भाव है – अनेकता में एकता झलकने लगी!

हीरे का परखनेवाला जौहरी निकल ही आता है। रानी रासमणि के जामाता श्री मथुरबाबू ने यह भाव कुछ ताड़ लिया और श्रीरामकृष्ण को परखकर शीघ्र ही उन्होंने उनकी सेवाशुश्रूषा का उचित प्रबन्ध कर दिया। इतना ही नही, बल्कि पुजारीपद पर एक दूसरे ब्राह्मण को नियुक्त कर उन्हें अपने भाव में मग्न रहने का पूरा-पूरा अवकाश दे दिया। साथ ही श्रीरामकृष्ण के भानजे श्री हृदयराम को उनकी सेवा आदि का कार्य सौंप दिया।

फिर श्रीरामकृष्ण ने विशेष पूजा नहीं की। दिनरात 'माँ काली' 'माँ काली' ही पुकारा करते थे; कभी जड़वत् हो मूर्ति की ओर देखते, कभी हँसते, कभी बालकों की तरह फूट-फूटकर रोते और कभी कभी तो इतने व्याकुल हो जाते कि भूमि पर लोटते-पोटते अपना मुँह तक रगड़ डालते थे।

इसके बाद श्रीरामकृष्ण ने भिन्न भिन्न साधनाएँ कीं और कई प्रकार के दर्शन प्राप्त कर लिये। कालीमन्दिर में एक बड़े वेदान्ती श्री तोतापुरीजी पधारे थे। वे वहाँ लगभग ग्यारह महीने रहे और उन्होंने श्रीरामकृष्ण से वेदान्त-साधना करायी। श्री तोतापुरीजी को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जिस निर्विकल्प समाधि को प्राप्त करने के लिए उन्हें चालीस वर्ष तक सतत प्रयत्न करना पड़ा था, उसे श्रीरामकृष्ण ने तीन ही दिन में सिद्ध कर डाला। इसके

कुछ समय पूर्व ही वहाँ एक भैरवी ब्राह्मणी पधारी थीं। उन्होंने भी श्रीरामकृष्ण से अनेक प्रकार की तन्त्रोक्त साधनाएँ करायी थीं।

श्री वैष्णवचरण जो एक वैष्णव पण्डित थे, श्रीरामकृष्ण के पास बहुधा आया करते थे। वैष्णवचरण ने मथुरबाबू से कहा था यह उन्माद साधारण नहीं वरन् दैवी है। एक बार श्रीरामकृष्ण कलुटोला की हरिसभा में गये थे। वहाँ वे समाधिस्थ हो गये और चैतन्यदेव के आसन पर जा विराजे। श्रीचैतन्य की भाँति श्रीरामकृष्ण की कभी 'अन्तर्दशा', कभी 'अर्धबाह्य' और कभी 'बाह्य दशा' हो जाया करती थी। वे कहते थे कि अखण्ड सच्चिदानन्द परब्रह्म और माँ सब एक ही हैं।

उन्होंने कामिनी-कांचन का पूर्ण रूप से त्याग किया था। अपने भक्तगणों को, जो सैकड़ों की संख्या में उनके पास आते थे, वे कहा करते थे कि ये दोनों चीजें ईश्वरप्राप्ति के मार्ग में विशेष रूप से बाधक हैं। बुरे आचरणवाली नारी में भी वे जगन्माता का साक्षात् स्वरूप देखते थे और उसी भाव से आदर करते थे। उनका कांचनत्याग इतना पूर्ण था कि यदि वे पैसे या रुपये को छू लेते तो उनकी उँगलिया ही टेढ़ीमेढ़ी होने लगती थीं। कभी कभी वे गिन्नियों और मिट्टी को एक साथ अंजुली में लेकर गंगाजी के किनारे बैठ जाते थे और 'मिट्टी पैसा, पैसा मिट्टी' कहते हुए दोनों चीजों को मलते मलते श्रीगंगाजी की धार में बहा देते थे।

माता चन्द्रमणि को श्रीरामकृष्ण जगज्जननी का स्वरूप मानते थे। अपने ज्येष्ठ भ्राता श्री रामकुमार के स्वर्गलाभ के बाद श्रीरामकृष्ण उन्हें अपने ही पास रखते थे और उनकी पूजा करते थे।

मथुरबाबू तथा उनकी पत्नी जगदम्बा दासी के साथ वे एक बार वाराणसी, प्रयाग तथा वृन्दावन भी गये थे। उस समय हृदयराम भी साथ में थे। वाराणसी में उन्होंने मणिकर्णिका में समाधिस्थ होकर भगवान् शंकर के दर्शन किये और मौनव्रतधारी त्रैलंग स्वामी से भेंट की। मथुरा में तो उन्होंने साक्षात् भगवान् आनन्दकन्द, सच्चिदानन्द, अन्तर्यामी श्रीकृष्ण के दर्शन किये। कैसी उच्च भावदशा रही होगी!

'सेस, महेस, गनेस, दिनेस,
सुरेशहुँ जाहि निरन्तर गावें,
जाहि अनादि, अनन्त, अखण्ड,
अछेद, अभेद सुवेद बतावें।'

(– श्रीरसखानि)

उन्हीं भगवान् श्रीकृष्ण को उन्होंने यमुना पार करते हुए गौओ को गोधूलि समय वापस लाते देखा और ध्रुवघाट पर से वसुदेव की गोद में भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन किये।

श्रीरामकृष्ण तो कभी कभी समाधिस्थ हो कहते थे, 'जो राम थे और जो कृष्ण थे वही अब रामकृष्ण होकर आये हैं।'

सन् १८७९-८० में श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त उनके पास आने लगे थे। उस समय उनकी उन्माद-अवस्था प्राय: चली-सी गयी थी और अब शान्त, सदानन्द और समाधि की अवस्था थी। बहुधा वे समाधिस्थ रहते थे और समाधि भंग होने पर भावराज्य में विचरण किया करते थे।

शिष्यों में उनके मुख्य शिष्य नरेन्द्र (बाद में स्वामी विवेकानन्द) थे। जब से श्री नरेन्द्र उनके पास आने लगे थे तभी से उन्हें नरेन्द्र के प्रति एक विशेष प्रेम हो गया था और वे कहते थे कि नरेन्द्र साधारण जीव नही है। कभी कभी तो नरेन्द्र के न आने से उन्हें व्याकुलता होती थी; क्योंकि वे यह अवश्य जानते रहे होंगे कि उनका कार्य भविष्य में मुख्यत: नरेन्द्र द्वारा ही संचालित होगा। अन्य भक्तगण राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर महाशय आदि थे। ये भक्तगण १८८२ के लगभग आये और इसके उपरान्त दो-तीन वर्ष तक अनेक अन्य भक्त भी आये। इन सब भक्तों ने श्रीरामकृष्ण तथा उनके कार्य के लिए अपना जीवन अर्पित कर दिया।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, डॉ. महेन्द्रलाल सरकार, बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय, अमेरिका के कुक साहब, पं. पद्मलोचन तथा आर्यसमाज के प्रवर्तक श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी ने भी उनके दर्शन किये थे।

ब्राह्मसमाज के अनेक लोग उनके पास आया जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण केशवचन्द्र सेन के ब्राह्ममन्दिर में भी गये थे।

श्रीरामकृष्ण ने अन्य धर्मों की भी साधनाएँ कीं। उन्होंने कुछ दिनों तक इस्लाम धर्म का पालन किया और 'अल्लाह' मन्त्र का जप करते करते उन्होंने उस धर्म का अन्तिम ध्येय प्राप्त कर लिया। इसी प्रकार उसके उपरान्त उन्होंने ईसाई धर्म की साधना की और ईसामसीह के दर्शन किये। जिन दिनों वे जिस धर्म की साधना में लगे रहते थे, उन दिनों उसी धर्म के अनुसार रहते, खाते, पीते, बैठते-उठते तथा बातचीत करते थे। इन सब साधनाओ से उन्होंने यह दिखा दिया कि सब धर्म अन्त में एक ही ध्येय में पहुँचते हैं। और उनमें आपस में विरोध-भाव रखना मूर्खता हैं। ऐसा महान् कार्य करनेवाले ईश्वरी अवतार श्रीरामकृष्ण ही थे।

इस प्रकार ईश्वरप्राप्ति के लिए कामिना-कांचन का सर्वथा त्याग तथा भिन्न भिन्न धर्मों में एकता की दृष्टि रखना इन्होंने अपने सभी भक्तों को सिखाया और उनसे उनका अभ्यास कराया। इनके कतिपय शिष्य आगे चलकर भारतवर्ष के अतिरिक्त अमेरिका आदि अन्य देशों में भी गये और वहाँ उन्होंने श्रीरामकृष्ण के उपदेशों का प्रचार किया।

१५ अगस्त सन् १८८६ की रात को गले के रोग से पीड़ित हो श्रीरामकृष्ण ने महासमाधि ले ली; परन्तु महासमाधि में गया केवल उनका पांचभौतिक शरीर। उनके उपदेश आज संसार भर में श्रीरामकृष्ण मिशन के द्वारा कोने कोने में गूँज रहे है और उनसे असंख्य जनों का कल्याण हो रहा है।

— विद्याभास्कर शुक्ल

अनुक्रमणिका

भगवान् श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्णवचनामृत

(प्रथम भाग)

परिच्छेद १

प्रथम दर्शन

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः।।

श्रीगंगाजी के पूर्वतट पर कलकत्ते से कोई छः मील दूर दक्षिणेश्वर में श्रीकालीजी का मन्दिर है। यहीं भगवान् श्रीरामकृष्णदेव रहते हैं। वसन्त ऋतु है। ईसवीं का फरवरी माह। श्रीरामकृष्ण के जन्मोत्सव के बाद कुछ दिन बीत चुके हैं। श्री केशवचन्द्र सेन और ज़ोसेफ कुक के साथ २३ फरवरी, बृहस्पतिवार के दिन श्रीरामकृष्ण जहाज में बैठकर घूमने गए थे। इसके कुछ ही दिन बाद (२६ फरवरी) की घटना है।

सन्ध्या का समय था। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण के कमरे में प्रवेश किया। इसी समय उन्होंने श्रीरामकृष्णदेव के प्रथम बार दर्शन किए। उन्होंने देखा, कमरा लोगों से भरा हुआ है; सब लोग चुपचाप बैठे उनके वचनामृत का पान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण तखत पर पूर्व की ओर मुँह किये बैठे हुए प्रसन्नवदन हो ईश्वरीय चर्चा कर रहे हैं। भक्तगण फर्श पर बैठे हुए हैं।

कर्मत्याग कब होता है?

मास्टर खड़े खड़े आश्चर्यमुग्ध होकर देखने लगे। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ, माना साक्षात् शुकदेव भगवत्-प्रसंग कर रहे हैं तथा उस स्थान पर सभी तीर्थों का समागम हुआ है अथवा मानो श्रीचैतन्यदेव पुरीधाम में रामानन्द, स्वरूप आदि भक्तों के साथ बैठकर भगवान् का नामगुणगान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे थे – "जब एक बार हरिनाम या रामनाम लेते ही रोमांच होता है, आँसुओ की धारा बहने लगती है, तब निश्चित समझो

कि सन्ध्यादि कर्मों की आवश्यकता नही रह जाती। तब कर्मत्याग का अधिकार पैदा हो जाता है – कर्म आप ही आप छूट जाते है। उस अवस्था मे केवल रामनाम, हरिनाम, या केवल ओंकार का जप करना ही पर्याप्त है।'' आपने फिर कहा – ''सन्ध्यावन्दन का लय गायत्री मे होता है और गायत्री का ओंकार मे।''

मास्टर सिधू* के साथ वराहनगर से निकलकर एक बाग से दूसरे बाग मे घूमते हुए यहॉ आ पहुँचे थे। रविवार का दिन था – छुट्टी थी, इसलिए घूमने निकले थे। थोडी देर पहले श्री प्रसन्न बनर्जी के बाग मे घूम रहे थे। उस समय सिधू ने कहा, ''गंगाजी के किनारे एक सुन्दर बगीचा है, देखने चलिएगा? वहॉ एक परमहंस रहा करते है।''

बगीचे के सामनेवाले फाटक से प्रवेश कर मास्टर और सिधू सीधे श्रीरामकृष्णदेव के कमरे मे आए। मास्टर विस्मित होकर देखते हुए सोचने लगे – 'वाह, कैसा सुन्दर स्थान है। कितने अच्छे महात्मा है। कैसी सुन्दर वाणी है। यहॉ से हिलने तक की इच्छा नही होती। थोडी देर बाद उन्होने मन में विचार किया, एक बार देख आऊँ कहॉ आया हूँ। फिर यहॉ आकर बैठूँगा।'

मास्टर सिधू के साथ कमरे के बाहर निकले। ठीक उसी समय आरती की मधुर ध्वनि आरम्भ हुई। एक साथ घण्टे, घडियाल, झॉझ, मृदग आदि बज उठे। उद्यान की दक्षिण सीमा स नौबत की मधुर ध्वनि गूँज उठी। वह ध्वनि मानो भागीरथी के वक्ष पर से संचार करती हुई कही दूर जाकर विलीन होने लगी। वसन्तसमीर पुष्पो की सुगन्ध लिए मन्द मन्द बह रहा था। चारो ओर ज्योत्स्ना छा गयी। प्रकृति मे सर्वत्र मानो देवताओं की आरती का आयोजन हो रहा था। बारह शिवमन्दिर, श्रीराधाकान्त-मन्दिर और श्रीभवतारिणी के मन्दिर मे आरती देखकर मास्टर को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। सिधू ने बताया, ''यह रासमणि का देवस्थान है। यहॉ देवताओ की नित्य सेवापूजा होती है। रोज कई लोग आते है, कई साधु-सन्त, ब्राह्मण, भिखारी यहॉ प्रसाद पाते है।''

भवतारिणी के मन्दिर से निकलकर दोनो बातचीत करते करते पक्के विस्तीर्ण ऑगन पर से चलते हुए पुन: श्रीरामकृष्ण के कमरे के सामने आ पहुँचे। उन्होने देखा, कमरे का दरवाजा अब भिडा लिया गया है।

कमरे के भीतर अभी धूप दिखाया गया है। मास्टर अंग्रेजी पढे-लिखे आदमी है। सहसा घर मे घुस न सकते थे। द्वार पर वृन्दा (कहारिन) खडी थी। मास्टर ने पूछा, ''साधु महाराज क्या इस समय कमरे के भीतर है?'' उसने कहा, '' हॉ, वे भीतर है।''

मास्टर – ये यहॉ कब से है?

वृन्दा – ये? बहुत दिनो से है।

* श्री सिद्धेश्वर मजुमदार – ये उत्तर वराहनगर मे रहते थे।

मास्टर – अच्छा, तो पुस्तकें खूब पढ़ते होंगे?

वृन्दा – पुस्तकें? उनके मुँह में सब कुछ है।

मास्टर हाल ही में पढ़ाई-लिखाई पूरी कर आए थे। श्रीरामकृष्ण पुस्तकें नहीं पढ़ते, यह सुनकर उन्हें और भी आश्चर्य हुआ।

मास्टर – अब तो ये शायद सन्ध्या करेंगे? क्या हम भीतर जा सकते है? एक बार खबर दे दो न।

वृन्दा – तुम लोग जाते क्यों नहीं? – जाओ, भीतर बैठो।

तब दोनों ने कमरे में प्रवेश किया। देखा, कमरे में और कोई नहीं है। श्रीरामकृष्ण अकेले तख्त पर बैठे है। कमरे में धूप की सुगन्ध भर रही है। सभी दरवाजे बन्द है। मास्टर ने अन्दर आते ही हाथ जोड़कर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण द्वारा बैठने की आज्ञा पाकर वे और सिधू फर्श पर बैठ गए। श्रीरामकृष्ण ने पूछा, कहाँ रहते हो, क्या करते हो, वराहनगर क्यों आए इत्यादि। मास्टर ने कुल परिचय दिया। वे देखने लगे कि श्रीरामकृष्ण का मन बीच बीच में मानो दूसरी ओर खिंच रहा है। उन्हें बाद में मालूम हुआ कि इसी को 'भाव' कहते है। मानो कोई बंसी डालकर मछली पकड़ने बैठा है जब मछली आकर काँटे में लगे चारे को खाने लगती है और बंसी का शोला हिलने लगता है, उस समय वह आदमी किस प्रकार व्यस्त होकर बंसी को पकड़े हुए एकाग्र चित्त से शोले की ओर टक लगाकर देखने लगता है, – किसी से बातचीत नहीं करता यह भी ठीक उसी प्रकार का भाव था। बाद में मास्टर ने सुना और देखा कि सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण को इस प्रकार का भावान्तर प्राय: प्रतिदिन हुआ करता है, कभी कभी तो वे पूरी तरह बाह्यज्ञान-शून्य हो जाते हैं।

मास्टर – आप तो अब सन्ध्या करेंगे, हम अब चलें।

श्रीरामकृष्ण (*भावस्थ*) – नही, – सन्ध्या – ऐसा कुछ नहीं।

और कुछ देर बातचीत होने के बाद मास्टर ने प्रणाम किया और चलना चाहा। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "फिर आना।"

मास्टर लौटते समय सोचने लगे – "ये सौम्यदर्शन पुरुष कौन हैं? – इनके पास फिर लौट जाने की इच्छा हो रही है! क्या बिना पुस्तकों के पढ़े भी मनुष्य महान् बन सकता है? कितना आश्चर्य है, मुझे यहाँ फिर आने की इच्छा हो रही है इन्होंने भी कहा, 'फिर आना' कल या परसों सबेरे फिर आऊँगा।"

परिच्छेद २

द्वितीय दर्शन

(१)

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

द्वितीय दर्शन का प्रसंग। सुबह का समय था, – आठ बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण उस समय दाढ़ी बनवाने की तैयारी में थे। तब भी थोड़ी ठण्डी थी। इसलिए वे शरीर पर गरम किनारीदार शाल ओढ़े हुए थे। मास्टर को देखकर उन्होंने कहा, "तुम आए हो? अच्छा, यहाँ बैठो।"

यह वार्तालाप श्रीरामकृष्ण के कमरे के दक्षिण-पूर्व बरामदे में हो रहा था। नाई आया हुआ था। श्रीरामकृष्ण उसी बरामदें में बैठकर दाढ़ी बनवाने लगे। बीच बीच में वे मास्टर के साथ बातचीत कर रहे थे। शरीर पर शाल थी, पैर में जूतियाँ। सहास्यवदन थे। बात करते समय कुछ तुतलाते थे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्यों जी, तुम्हारा घर कहाँ है?

मास्टर – जी कलकत्ते में।

श्रीरामकृष्ण – यहाँ कहाँ आए हो?

मास्टर – यहाँ वराहनगर में बड़ी दीदी के घर आया हूँ, – ईशान कविराज के यहाँ।

श्रीरामकृष्ण – ओहो, ईशान के यहाँ।

श्री केशवचन्द्र सेन के लिए श्रीरामकृष्ण का जगन्माता के पास रोना।

श्रीरामकृष्ण – क्यों जी, केशव अब कैसा है – बहुत बीमार था।

मास्टर – जी हाँ, मैंने भी सुना था कि बीमार हैं, पर अब शायद अच्छे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैंने तो केशव के लिए माँ के निकट नारियल और चीनी की पूजा मानी थी। रात को जब नींद उचट जाती थी, तब माँ के पास रोता और कहता था, – 'माँ, केशव की बीमारी अच्छी कर दे। केशव अगर न रहा तो मैं कलकत्ते जाकर बातचीत किससे करूँगा?' इसी से तो नारियल-चीनी मानी थी।

"क्यों जी, क्या कोई कुक साहब आया है? सुना वह लेक्चर (व्याख्यान) देता है। मुझे केशव जहाज पर चढ़ाकर ले गया था। कुक साहब भी साथ था।"

मास्टर – जी हाँ, ऐसा ही कुछ मैंने भी सुना था। परन्तु मैंने उनका लेक्चर नहीं सुना। उनके विषय में ज्यादा कुछ मैं नहीं जानता।

गृहस्थ तथा पिता का कर्तव्य

श्रीरामकृष्ण – प्रताप का भाई आया था। कुछ दिन यहाँ रहा। काम-काज कुछ है नहीं। कहता है, मैं यहाँ रहूँगा। सुनते हैं, जोरूजाता सब को ससुराल भेज दिया है। कच्चे-बच्चे कई हैं। मैने खूब डाँटा। भला देखो तो, लड़के-बच्चे हुए हैं, उनकी देख-रेख, उनका पालपोष तुम न करोगे तो क्या कोई गाँववाला करेगा? शर्म नहीं आती, बीवी-बच्चों को ससुर के यहाँ रख दिया है, उन्हें कोई और पाल रहा है। बहुत डाँटा और काम-काज खोज लेने को कहा, तब यहाँ से गया।

(२)

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

मास्टर का तिरस्कार तथा उनका अहंकार चूर्ण करना

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्या तुम्हारा विवाह हो गया है?

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण (चौककर) – अरे रामलाल, अरे अपना विवाह तो इसने कर डाला। रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे और कालीजी के पुजारी हैं। मास्टर घोर अपराधी जैसे सिर नीचा किए चुपचाप बैठे रहे। सोचने लगे, विवाह करना क्या इतना बड़ा अपराध है?

श्रीरामकृष्ण ने फिर पूछा – " क्या तुम्हारे लड़के-बच्चे भी हैं?"

मास्टर का कलेजा काँप उठा। डरते हुए बोले - " जी हाँ, लड़के-बच्चे हुए हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने फिर दु:ख के साथ कहा – "अरे लड़के भी हो गए!"

इस तरह तिरस्कृत होकर मास्टर चुपचाप बैठे रहे। उनका अहंकार चूर्ण होने लगा। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण सस्नेह कहने लगे, "देखो, तुम्हारे लक्षण अच्छे हैं, यह सब मैं किसी के कपाल, आँखें आदि को देखते ही जान लेता हूँ। अच्छा, तुम्हारी स्त्री कैसी है? विद्या-शक्ति है या अविद्या-शक्ति?

ज्ञान क्या है?

मास्टर – जी अच्छी है, पर अज्ञान है।

श्रीरामकृष्ण (अप्रसन्न होकर) – और तुम ज्ञानी हो?

मास्टर नहीं जानते, ज्ञान किसे कहते हैं और अज्ञान किसे। अभी तो उनकी धारणा यही है कि कोई लिख-पढ़ ले तो मानो ज्ञानी हो गया। उनका यह भ्रम दूर तब हुआ जब उन्होंने सुना कि ईश्वर को जान लेना ज्ञान है और न जानना अज्ञान। श्रीरामकृष्ण की इस बात से कि 'तुम ज्ञानी हो' मास्टर के अहंकार पर फिर धक्का लगा।

मूर्तिपूजा

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम्हारा विश्वास 'साकार' पर है या 'निराकार' पर?

मास्टर मन ही मन सोचने लगे, 'यदि साकार पर विश्वास हो तो क्या निराकार पर भी विश्वास हो सकता है? ईश्वर निराकार है – यदि ऐसा विश्वास हो तो ईश्वर साकार है ऐसा भी विश्वास कभी हो सकता है? ये दोनों विरोधी भाव किस प्रकार सत्य हो सकते हैं? सफेद दूध क्या कभी काला हो सकता है?'

मास्टर – निराकार मुझे अधिक पसन्द है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छी बात है। किसी एक पर विश्वास रखने से काम हो जायगा। निराकार पर विश्वास करते हो, अच्छा है। पर यह न कहना कि यही सत्य है, और सब झूठ। यह समझना कि निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। जिस पर तुम्हारा विश्वास हो उसी को पकड़े रहो।

दोनों सत्य हैं, यह सुनकर मास्टर चकित हो गए। यह बात उनके किताबी ज्ञान में तो थी ही नहीं! तीसरी बार धक्का खाकर उनका अहंकार चूर्ण हुआ, पर अभी कुछ रह गया था; इसलिए फिर वे तर्क करने को आगे बढ़े।

मास्टर – अच्छा, वे साकार हैं, यह विश्वास मानो हुआ। पर मिट्टी की या पत्थर की मूर्ति तो वे हैं नहीं।

श्रीरामकृष्ण – मिट्टी की मूर्ति वे क्यों होने लगे? पत्थर या मिट्टी नहीं, चिन्मयी मूर्ति।

चिन्मयी मूर्ति, यह बात मास्टर न समझ सके। उन्होंने कहा – "अच्छा, जो मिट्टी की मूर्ति पूजते हैं, उन्हें समझाना भी तो चाहिए कि मिट्टी की मूर्ति ईश्वर नहीं है और मूर्ति के सामने ईश्वर की ही पूजा करना ठीक है, किन्तु मूर्ति की नहीं!"

लेक्चर तथा श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण (अप्रसन्न होकर) – तुम्हारे कलकत्ते के आदमियों में यही एक धुन सवार है, – सिर्फ लेक्चर देना और दूसरों को समझाना! अपने को कौन समझाए, इसका ठिकाना नहीं। अजी समझानेवाले तुम हो कौन? जिनका संसार है वे समझाएँगे। जिन्होंने सृष्टि रची है, सूर्य-चन्द्र, मनुष्य, जीव-जन्तु बनाए हैं, जीव-जन्तुओं के भोजन के उपाय सोचे हैं, उनका पालन करने के लिए माता-पिता बनाए हैं, माता-पिता में स्नेह का संचार

किया है – वे समझाएँगे। इतने उपाय तो उन्होंने किए और यह उपाय वे न करेंगे? अगर समझाने की जरूरत होगी तो वे समझाएँगे, क्योंकि वे अन्तर्यामी हैं। यदि मिट्टी की मूर्ति पूजने में कोई भूल होगी तो क्या वे नहीं जानते कि पूजा उन्ही की हो रही है? वे उसी पूजा से सन्तुष्ट होते हैं। इसके लिए तुम्हारा सिर क्यों धमक रहा है? तुम यह चेष्टा करो जिससे तुम्हें ज्ञान हो – भक्ति हो।

अब शायद मास्टर का अहंकार बिलकुल चूर्ण हो गया।

वे सोचने लगे, 'ये जो कह रहे हैं वह ठीक ही तो है। मुझे दूसरां को समझाने की क्या जरूरत? क्या मैंने ईश्वर को जान लिया है, या मुझमें उनके प्रति विशुद्ध भक्ति उत्पन्न हुई है? स्वयं के सोने क लिए जगह नहीं है, और लोगो को न्यौता दे रहे हैं! स्वयं को कुछ ज्ञान नही, अनुभव नहीं, और दूसरों को समझाने चले हैं! वास्तव में कितनी लज्जा की बात है, कितनी हीन बुद्धि का काम है। क्या यह गणित, इतिहास या साहित्य है कि दूसरों को समझा दे? यह ईश्वरीय ज्ञान है। ये जो बाते कह रहे है, वे कैसे हृदय को स्पर्श कर रही है!

श्रीरामकृष्ण के साथ मास्टर का यही प्रथम और यही अन्तिम तर्कवाद था।

श्रीरामकृष्ण – तुम मिट्टी की मूर्ति की पूजा की बात कहते थे। यदि मिट्टी ही की हो तो भी उस पूजा की जरूरत हैं। देखो, सब प्रकार की पूजाओं की योजना ईश्वर ने ही की है। जिनका यह संसार है, उन्होने ही यह सब किया है। जो जैसा अधिकारी है उसके लिए वैसा ही अनुष्ठान ईश्वरने किया है। लड़के को जो भोजन रुचता है और जो उसे सह्य है, वही भोजन उसके लिए माँ पकाती है, समझे?

मास्टर – जी हाँ।

(३)

संसारार्णवघोरे यः कर्णधारस्वरूपकः।
नमोऽस्तु रामकृष्णाय तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

भक्ति का उपाय

मास्टर (विनीत भाव से) – ईश्वर में मन किस तरह लगे?

श्रीरामकृष्ण – सर्वदा ईश्वर का नाम-गुणगान करना चाहिए, सत्संग करना चाहिए – बीच बीच में भक्तों और साधुओं से मिलना चाहिए। संसार मे दिनरात विषय के भीतर पड़े रहने से मन ईश्वर में नहीं लगता। कभी कभी निर्जन स्थान में जाकर ईश्वर की चिन्ता करना बहुत जरूरी है। प्रथम अवस्था में बीच बीच में एकान्तवास किए बिना ईश्वर में मन लगाना बड़ा कठिन है।

"पौधे को चारों ओर से रूँधना पड़ता है, नहीं तो बकरी चर लेगी।

"ध्यान करना चाहिए मन में, कोने में और वन में। और सर्वदा सत्-असत् विचार करना चाहिए। ईश्वर ही सत् अथवा नित्य वस्तु है, और सब असत्, अनित्य। बारम्बार इस प्रकार विचार करते हुए मन से अनित्य वस्तुओं का त्याग करना चाहिए।

मास्टर (विनीत भाव से) – संसार में किस तरह रहना चाहिए?

गृहस्थ तथा संन्यास। उपाय – निर्जन में साधना

श्रीरामकृष्ण – सब काम करना चाहिए परन्तु मन ईश्वर में रखना चाहिए। माता-पिता, स्त्री-पुत्र आदि सब के साथ रहते हुए सब की सेवा करनी चाहिए परन्तु मन में इस ज्ञान को दृढ़ रखना चाहिए की ये हमारे कोई नहीं हैं।

"किसी धनी के घर की दासी उसके घर का कुल काम करती है, किन्तु उसका मन अपने गाँव के घर पर लगा रहता है। मालिक के लड़कों का वह अपने लड़कों की तरह लालन-पालन करती है, उन्हें 'मेरा मुन्ना', 'मेरा राजा' कहती है, पर मन ही मन खूब जानती है कि ये मेरे कोई नहीं हैं।"

"कछुआ रहता तो पानी में है, पर उसका मन रहता है किनारे पर जहाँ उसके अण्डे रखे हैं। संसार का काम करो, पर मन रखो ईश्वर मे।

"बिना भगवद्-भक्ति पाए यदि संसार में रहोगे तो दिनोंदिन उलझनोंमें फँसते जाओगे और यहाँ तक फँस जाओगे कि फिर पिण्ड छुड़ाना कठिन होगा। रोग, शोक, तापादि से अधीर हो जाओगे। विषय-चिन्तन जितना ही करोगे, आसक्ति भी उतनी ही अधिक बढ़ेगी।

"हाथों में तेल लगाकर कटहल काटना चाहिए। नही तो, हाथों में उसका दूध चिपक जाता है। भगवद्-भक्तिरूपी तेल हाथों में लगाकर संसाररूपी कटहल के लिए हाथ बढ़ाओ।

"परन्तु यदि भक्ति पाने की इच्छा हो तो निर्जन में रहना होगा। मक्खन खाने की इच्छा हो, तो दही निर्जन में ही जमाया जाता है। हिलाने-डुलाने से दही नहीं जमता। इसके बाद निर्जन में ही सब काम छोड़कर दही मथा जाता है, तभी मक्खन निकलता है।

"देखो, निर्जन में ही ईश्वर का चिन्तन करने से यह मन भक्ति, ज्ञान और वैराग्य का अधिकारी होता है। इस मन को यदि संसार में डाल रखोगे तो यह नीच हो जायगा। संसार में कामिनी-कांचन के चिन्तन के सिवा और है ही क्या?

"संसार जल है और मन मानो दूध। यदि पानी में डाल दोगे तो दूध पानी में मिल जाएगा, पर उसी दूध का निर्जन में मक्खन बनाकर यदि पानी में छोड़ोगे तो मक्खन पानी में उतराता रहेगा। इस प्रकार निर्जन में साधना द्वारा ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके यदि संसार में रहोगे भी तो संसार से निर्लिप्त रहोगे।

"साथ ही साथ विचार भी खूब करना चाहिए। कामिनी और कांचन अनित्य हैं, एकमात्र ईश्वर ही नित्य हैं। रुपये से क्या मिलता है? रोटी, दाल, कपड़े, रहने की जगह – बस यहीं तक। रुपये से ईश्वर नहीं मिलते। तो रुपया जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकता। इसी को विचार कहते हैं – समझे?"

मास्टर – जी हाँ, अभी अभी मैंने 'प्रबोधचन्द्रोदय' नाटक पढ़ा है। उसमें 'वस्तु-विचार' है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वस्तु-विचार! देखो, रुपये में ही क्या है और सुन्दरी की देह में भी क्या है। विचार करो, सुन्दरी की देह में केवल हाड़, मांस, चरबी, मल, मूत्र – यही सब है। ईश्वर को छोड़ इन्हीं वस्तुओ में मनुष्य मन क्यों लगाता है? क्यों वह ईश्वर को भूल जाता है?

ईश्वर-दर्शन के उपाय

मास्टर – क्या ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हो सकते हैं। बीच बीच में एकान्तवास, उनका नाम-गुणगान और वस्तु-विचार करने से ईश्वर के दर्शन होते हैं।

मास्टर – कैसी अवस्था हो तो ईश्वर के दर्शन हों?

श्रीरामकृष्ण - खूब व्याकुल होकर रोने से उनके दर्शन होते हैं। स्त्री या लड़के के लिए लोग आँसुओ की धारा बहाते हैं, रुपये के लिए रोते हुए आँखें लाल कर लेते हैं, पर ईश्वर के लिए कोई कब रोता है? ईश्वर को व्याकुल होकर पुकारना चाहिए।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे –

(भावार्थ) – "मन, तू सच्ची व्याकुलता के साथ पुकारकर तो देख। भला देखें, वह श्यामा बिना सुने कैसे रह सकती हैं! तुझे यदि माँ काली के दर्शन की अत्यन्त तीव्र इच्छा हो तो जवापुष्प और बिल्वपत्र लेकर उन्हें भक्तिचन्दन से लिप्त कर माँ के चरणों में पुष्पांजलि दे।"

"व्याकुलता हुई कि मानो आसमान पर सुबह की ललाई छा गयी। शीघ्र ही सूर्य भगवान् निकलते हैं, व्याकुलता के बाद ही भगवद्दर्शन होते हैं।

"विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती की – यह तीन प्रकार की चाह एकत्रित होकर जब ईश्वर की ओर मुड़ती है तभी ईश्वर मिलते हैं।

"बात यह है कि ईश्वर को प्यार करना चाहिए। विषय पर विषयी की, पुत्र पर माता की और पति पर सती को जो प्रीति है, उसे एकत्रित करने से जितनी प्रीति होती है, उतनी ही प्रीति से ईश्वर को बुलाने से उस प्रेम का महा आकर्षण ईश्वर को खींच लाता है।

"व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। बिल्ली का बच्चा 'मिऊँ-मिऊँ' करके माँ

को पुकारता भर है। उसकी माँ जहाँ उसे रखती, वहीं वह रहता है – कभी राख की ढेरी पर कभी जमीन पर, तो कभी बिछौने पर। यदि उसे कष्ट होता है तो बस वह 'मिऊँ-मिऊँ' करता है ओर कुछ नहीं जानता। माँ चाहे जहाँ रहे 'मिऊँ-मिऊँ' सुनकर आ जाती है।''

□□□

परिच्छेद ३

तृतीय दर्शन

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः।। (गीता, ६।२९)

नरेन्द्र, भवनाथ तथा मास्टर

मास्टर उस समय वराहनगर में अपनी बहन के यहाँ ठहरे थे। जब से श्रीरामकृष्ण के दर्शन हुए तब से मन में सब समय उन्हीं का चिन्तन चल रहा है। मानो आँखों के सामने सदा वही आनन्दमय रूप दिखायी दे रहा हो, कानों में वही अमृतमयी वाणी सुनायी दे रही हो। मास्टर सोचने लगे, इस निर्धन ब्राह्मण ने इन गम्भीर आध्यात्मिक तत्त्वों को कैसे खोज निकाला, किस प्रकार उनका ज्ञान प्राप्त किया? इसके पहले उन्होने इतनी सरलता से इन गूढ़ तत्त्वों को समझाते हुए कभी किसी को नहीं देखा था। मास्टर दिनरात यही विचार करने लगे कि कब उनके पास जाऊँ और उन्हे देखूँ।

देखते ही देखते रविवार (५ मार्च) आ गया। वराहनगर के नेपालबाबू के साथ दोपहर को तीन-चार बजे के लगभग वे दक्षिणेश्वर में आ पहुँचे। देखा, श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटे तखत के ऊपर विराजमान हैं। कमरा भक्तों से ठसाठस भरा हुआ है। रविवार के कारण अवसर पाकर कई भक्त दर्शन के लिए आए हैं। उस समय मास्टर का किसी के साथ परिचय नहीं हुआ था, वे भीड़ में एक ओर जाकर बैठ गए। देखा, श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ प्रसन्नमुख हो वार्तालाप कर रहे हैं।

एक उन्नीस साल के लड़के की ओर देखते हुए श्रीरामकृष्ण बड़े आनन्द के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। लड़के का नाम है नरेन्द्र*। अभी ये कालेज में पढ़ते हैं और साधारण ब्राह्मसमाज में कभी कभी जाते हैं। इनकी आँखें पानीदार और बातें जोशीली हैं। चेहरे पर भक्तिभाव है।

मास्टर को अनुमान से मालूम हुआ कि विषयासक्त संसारियों की बातें चल रही हैं। ये लोग ईश्वरभक्त, धर्मपरायण व्यक्तियों की निन्दा किया करते हैं। फिर संसार में कितने दुर्जन व्यक्ति हैं, उनके साथ किस प्रकार बर्ताव करना चाहिए – ये सब बातें होने लगीं।

* बाद में ये ही स्वामी विवेकानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से) – क्यों नरेन्द्र, भला तू क्या कहेगा? संसारी मनुष्य तो न जाने क्या क्या कहते हैं। पर याद रहे कि हाथी जब जाता है, तब उसके पीछे पीछे कितने ही जानवर बेतरह चिल्लाते हैं। पर हाथी लौटकर देखता तक नहीं। तेरी कोई निन्दा करे तो तू क्या समझेगा ?

नरेन्द्र – मैं तो यह समझूँगा कि कुत्ते भौंकते हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अरे नहीं, यहाँ तक नहीं। (सब का हास्य।) सर्वभूतों में परमात्मा का ही वास है। पर मेल-मिलाप करना हो तो भले आदमियों से ही करना चाहिए, बुरे आदमियों से अलग ही रहना चाहिए। बाघ में भी परमात्मा का वास है, इसलिए क्या बाघ को भी गले लगाना चाहिए? (लोग हँस पड़े।) यदि कहो कि बाघ भी तो नारायण है, इसलिए क्यों भागें? इसका उत्तर यह है कि जो लोग कहते हैं कि भाग चलो, वे भी तो नारायण हैं, उनकी बात क्यों न मानो?

"एक कहानी सुनो। किसी जंगल में एक महात्मा थे। उनके कई शिष्य थे। एक दिन उन्होंने अपने शिष्यों को उपदेश दिया कि सर्वभूतों में नारायण का वास है, यह जानकर सभी को नमस्कार करो। एक दिन एक शिष्य हवन के लिए जंगल में लकड़ी लेने गया। उस समय जंगल में यह शोरगुल मचा था कि कोई कहीं हो तो भागो, पागल हाथी जा रहा है। सभी भाग गए, पर शिष्य न भागा। उसे तो यह विश्वास था कि हाथी भी नारायण है, इसलिए भागने का क्या काम? वह खड़ा ही रहा। हाथी को नमस्कार किया और उसकी स्तुति करने लगा। इधर महावत के ऊँची आवाज लगाने पर भी कि भागो भागो, उसने पैर न उठाए। पास पहुँचकर हाथी ने उसे सूँड़ से लपेटकर एक ओर फेंक दिया और अपना रास्ता लिया। शिष्य घायल हो गया और बेहोश पड़ा रहा।

"यह खबर गुरु के कान तक पहुँची। वे अन्य शिष्यो को साथ लेकर वहाँ गए और उसे आश्रम में उठा लाए। वहाँ उसकी दवा-दारू की, तब वह होश में आया। कुछ देर बाद किसी ने उससे पूछा, हाथी को आते सुनकर तुम वहाँ से हट क्यों न गए ? उसने कहा कि गुरुजी ने कह तो दिया था कि जीव, जन्तु आदि सब में परमात्मा का ही वास है, नारायण ही सब कुछ हुए हैं, इसी से हाथी नारायण को आते देख मैं नहीं भागा। गुरुजी पास ही थे। उन्होंने कहा – बेटा, हाथी नारायण आ रहे थे, ठीक है; पर महावत नारायण ने तो तुम्हें मना किया था। यदि सभी नारायण हैं तो उस महावत की बात पर विश्वास क्यों न किया? महावत नारायण की भी बात मान लेनी चाहिए थी। (सब हँस पड़े।)

"शास्त्रों में है 'आपो नारायणः' – जल नारायण है। परन्तु किसी जल से देवता की सेवा होती है और किसी से लोग मुँह-हाथ धोते हैं, कपड़े धोते हैं और बर्तन माँजते हैं; किन्तु वह जल न पीते हैं, न ठाकुरजी की सेवा में ही लगाते हैं। इसी प्रकार साधु-असाधु, भक्त-अभक्त सभी के हृदय में नारायण का वास है; किन्तु असाधुओं, अभक्तों

से व्यवहार या अधिक हेल-मेल नहीं चल सकता। किसी से सिर्फ बातचीत भर कर लेनी चाहिए और किसी से वह भी नहीं। ऐसे आदमियों से अलग रहना चाहिए।''

एक भक्त – महाराज, यदि दुष्ट जन अनिष्ट करने पर उतारू हों या कर डालें तो क्या चुपचाप बैठं रहना चाहिए ?

गृहस्थ तथा तमोगुण

श्रीरामकृष्ण – दुष्ट जनों के बीच रहने से उनसे अपना जी बचाने के लिए कुछ तमोगुण दिखाना चाहिए; परंतु कोई अनर्थ कर सकता है, यह सोचकर उलटा उसी का अनर्थ न करना चाहिए।

''किसी जंगल में कुछ चरवाहे गौएँ चराते थे। वहाँ एक बड़ा विषधर सर्प रहता था। उसके डर से लोग बड़ी सावधानी से आया-जाया करते थे। किसी दिन एक ब्रह्मचारीजी उसी रास्ते से आ रहे थे। चरवाहे दौड़ते हुए उनके पास आये और उनसे कहा – 'महाराज, इस रास्ते से न जाइए; यहाँ एक साँप रहता है, बड़ा विषधर है।' ब्रह्मचारीजी ने कहा – 'तो क्या हुआ, बेटा, मुझे कोई डर नहीं, मैं मन्त्र जानता हूँ।' यह कहकर ब्रह्मचारीजी उसी ओर चले गए। डर के मारे चरवाहे उनके साथ न गए। इधर साँप फन उठाये झपटता चला आ रहा था, परन्तु पास पहुँचने के पहले ही ब्रह्मचारीजी ने मन्त्र पढ़ा। साँप आकर उनके पैरों पर लोटने लगा। ब्रह्मचारीजी ने कहा – 'तू भला हिंसा क्यों करता है? ले, मैं तुझे मन्त्र देता हूँ। इस मन्त्र को जपेगा तो ईश्वर पर भक्ति होगी, तुझे ईश्वर के दर्शन होंगे; फिर यह हिंसावृत्ती न रह जाएगी।' यह कहकर ब्रह्मचारीजी ने साँप को मन्त्र दिया। मन्त्र पाकर साँप ने गुरु को प्रणाम किया, और पूछा – 'भगवन्, मैं क्या साधना करूँ?' गुरु ने कहा – 'इस मन्त्र को जप और हिंसा छोड़ दे।' चलते समय ब्रह्मचारीजी फिर आने का वचन दे गए।

''इस प्रकार कुछ दिन बीत गए। चरवाहों ने देखा कि साँप अब काटता नहीं, ढेला मारने पर भी गुस्सा नहीं होता, केंचुए की तरह हो गया है। एक दिन चरवाहों ने उसके पास जाकर पूँछ पकड़कर उसे घुमाया और वहीं पटक दिया। साँप के मुँह से खून बह चला, वह बेहोश पड़ा रहा; हिल-डुल तक न सकता था। चरवाहों ने सोचा कि साँप मर गया और यह सोचकर वहाँ से वे चले गए।

''जब बहुत रात बीती तब साँप होश में आया और धीरे धीरे अपने बिल के भीतर गया। देह चूर चूर हो गयी थी, हिलने तक की शक्ति नहीं रह गयी थी। बहुत दिनों के बाद जब चोट कुछ अच्छी हुई तब भोजन की खोज में बाहर निकला। जब से मारा गया तब से सिर्फ रात को ही बाहर निकलता था। हिंसा करता ही न था। सिर्फ घास-फूस, फल-फूल खाकर रह जाता था।

"सालभर बाद ब्रह्मचारी फिर आए। आते ही साँप की खोज करने लगे। चरवाहों ने कहा, 'वह तो मर गया है', पर ब्रह्मचारीजी को इस बात पर विश्वास न आया। वे जानते थे कि जो मन्त्र वे दे गए हैं, वह जब तक सिद्ध न होगा तब तक उसकी देह छूट नहीं सकती। ढूँढ़ते हुए उसी ओर वे अपने दिए हुए नाम से साँप को पुकारने लगे। बिल से गुरुदेव की आवाज सुनकर साँप निकल आया और बड़े भक्तिभाव से प्रणाम किया। ब्रह्मचारीजी ने पूछा, 'क्यों कैसा है?' उसने कहा, 'जी अच्छा हूँ।' ब्रह्मचारीजी – 'तो तू इतना दुबला क्यों हो गया?' साँप ने कहा – 'महाराज, जब से आप आज्ञा दे गए, तब से मैं हिंसा नहीं करता; फल-फूल, घास-पात खाकर पेट भर लेता हूँ; इसीलिए शायद दुबला हो गया हूँ।' सत्त्वगुण बढ़ जाने के कारण किसी पर वह क्रोध न कर सकता था। इसी से मार की बात भी वह भूल गया था। ब्रह्मचारीजी ने कहा, 'सिर्फ न खाने ही से किसी की यह दशा नहीं होती, कोई दूसरा कारण अवश्य होगा, तू अच्छी तरह सोच तो।' साँप को चरवाहों की मार याद आ गयी। उसने कहा – 'हाँ महाराज, अब याद आयी, चरवाहों ने एक दिन मुझे पटक-पटककर मारा था। उन अज्ञानियों को तो मेरे मन की अवस्था मालूम थी नहीं। वे क्या जानें कि मैंने हिंसा करना छोड़ दिया है!' ब्रह्मचारीजी बोले – 'राम राम, तू ऐसा मूर्ख है? अपनी रक्षा करना भी तू नहीं जानता? मैंने तो तुझे काटने ही को मना किया था, पर फुफकारने से तुझे कब रोका था? फुफकार मारकर उन्हें भय क्यों नहीं दिखाया?'

"इस तरह दुष्टों के पास फुफकार मारना चाहिए, भय दिखाना चाहिए, जिससे कि वे अनिष्ट न कर बैठें; पर उनमें विष न डालना चाहिए, उनका अनिष्ट न करना चाहिए।"

भिन्न भिन्न स्वभाव। क्या सब आदमी बराबर हैं?

श्रीरामकृष्ण – परमात्मा की सृष्टि में नाना प्रकार के जीवजन्तु और पेड़-पौधे हैं। पशुओं में अच्छे हैं और बुरे भी। उनमें बाघ जैसा हिंस्र प्राणी भी है। पेड़ों में अमृत जैसे फल लगें ऐसे भी पेड़ हैं और विष जैसे फल हों ऐसे भी हैं। इसी प्रकार मनुष्यों में भी भले-बुरे और साधु-असाधु हैं । उनमें संसारी जीव भी हैं और भक्त भी।

"जीव चार प्रकार के होते हैं। बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य।

"नारदादि नित्यजीव हैं। ऐसे जीव औरों के हित के लिए उन्हें शिक्षा देने के लिए संसार में रहते हैं।

"बद्ध जीव विषय में फँसा रहता है। वह ईश्वर को भूल जाता है, भगवच्चिन्तन वह कभी नहीं करता।

"मुमुक्षु जीव वह है जो मुक्ति की इच्छा रखता है। मुमुक्षुओं में से कोई कोई मुक्त हो जाते हैं, कोई कोई नहीं हो सकते।

"मुक्त जीव संसार के कामिनी-कांचन में नहीं फँसते, जैसे साधु-महात्मा। इनके मन में विषय-बुद्धि नहीं रहती। ये सदा ईश्वर के ही पादपद्मों की चिन्ता करते हैं।

"जब जाल तालाब में फेंका जाता है, तब जो दो-चार होशियार मछलियाँ होती हैं, वे जाल में नहीं आतीं। यह नित्य जीवों की उपमा है। किन्तु अनेक मछलियाँ जाल में फँस जाती हैं। इनमें से कुछ निकल भागने की भी चेष्टा करती हैं। यह मुमुक्षुओ की उपमा है। परन्तु सब मछलियाँ नहीं भाग सकतीं। केवल दो चार उछल-उछलकर जाल से बाहर हो जाती हैं। तब मछुआ कहता है, अरे एक बड़ी मछली बह गयी। किन्तु जो जाल में पड़ी हैं, उनमें से अधिकांश मछलियाँ निकल नहीं सकतीं। वे भागने की चेष्टा भी नहीं करतीं, जाल को मुँह में फाँसकर मिट्टी के नीचे सिर घुसेड़कर चुपचाप पड़ी रहती हैं और सोचती हैं, अब कोई भय की बात नही, बड़े आनन्द में हैं। पर वे नहीं जानतीं कि मछुआ घसीटकर उन्हें ले जाएगा। यह बद्ध जीवों की उपमा है।

संसारी मनुष्य – बद्ध जीव

"बद्ध जीव संसार के कामिनी-कांचन मे फँसे हैं। उनके हाथ पैर बँधे हैं; किन्तु फिर भी वे सोचते हैं कि संसार में कामिनी-कांचन में ही सुख है और यहाँ हम निर्भय हैं। वे नहीं जानते, इन्हीं मे उनकी मृत्यु होगी। बद्ध जीव जब मरता है, तब उसकी स्त्री कहती है, 'तुम तो चले, पर मेरे लिए क्या कर गए?' माया भी ऐसी होती है कि बद्ध जीव पड़ा तो है मृत्युशय्या पर, पर चिराग में ज्यादा बत्ती जलती हुई देखकर कहता है, 'तेल बहुत जल रहा है, बत्ती कम करो!'

"बद्ध जीव ईश्वर का स्मरण नहीं करता। यदि अवकाश मिला तो या तो गप करता है या फालतू काम करता है। पूछने पर कहता है, 'क्या करूँ, चुपचाप बैठ नहीं सकता, इसी से घेरा बाँध रहा हूँ।' कभी ताश ही खेलकर समय काटता है।" (सब स्तब्ध होकर सुन रहे हैं।)

(२)

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते।। (गीता, १०।३)

उपाय – विश्वास

एक भक्त – महाराज, इस प्रकार के संसारी जीवों के लिए क्या कोई उपाय नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – उपाय अवश्य है। कभी कभी साधुओं का संग करना चाहिए और कभी कभी निर्जन स्थान में ईश्वर का स्मरण और विचार। परमात्मा से भक्ति और विश्वास

की प्रार्थना करनी चाहिए।

"विश्वास हुआ कि सफलता मिली। विश्वास से बढ़कर और कुछ नही है।"

"(केदार के प्रति) विश्वास मे कितना बल है, यह तो तुमने सुना है न? पुराणो मे लिखा है कि रामचन्द्र को, जो साक्षात् पूर्णब्रह्म नारायण है, लंका जाने के लिए सेतु बाँधना पड़ा था, परन्तु हनुमान रामनाम के विश्वास ही से कूदकर समुद्र के पार चले गए, उन्होने सेतु की परवाह नही की। (सब हँसते है।)

"किसी को समुद्र के पार जाना था। विभीषण ने एक पत्ते पर रामनाम लिखकर उसके कपड़े के खूँट मे बाँधकर कहा कि तुम्हे अब कोई भय नही, विश्वास करके पानी के ऊपर से चले जाओ, किन्तु यदि तुम्हे अविश्वास हुआ तो तुम डूब जाओगे। वह मनुष्य बड़े मजे मे समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था। उसी समय उसकी यह इच्छा हुई कि गाँठ को खोलकर देखूँ तो इसमे क्या बँधा है। गाँठ खोलकर उसने देखा तो एक पत्ते पर रामनाम लिखा था। ज्योही उसने सोचा कि अरे इसमे तो सिर्फ रामनाम लिखा है – अविश्वास हुआ कि वह डूब गया।"

"जिसका ईश्वर पर विश्वास है, वह यदि महापातक करे – गो-ब्राह्मण-स्त्री-हत्या भी करे – तो भी इस विश्वास के बल से वह बड़े बड़े पापो से मुक्त हो सकता है। वह यदि कहे कि ऐसा काम कभी न करूँगा तो उसे फिर किसी बात का भय नही।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने इस मर्म का बँगला गीत गाया –

"दुर्गा दुर्गा अगर जपूँ मै, जब मेरे निकलेगे प्राण।
देखूँ कैसे नही तारते, कैसे हो करुणा की खान।।
गो-ब्राह्मण की हत्या करके, करके भी मदिरा का पान।
जरा नही परवा पापो की, लूँगा निश्चय पद निर्वाण।।"

नरेन्द्र – होमापक्षी

नरेन्द्र की बात चली। श्रीरामकृष्ण भक्तो से कहने लगे, "इस लड़के को यहाँ एक प्रकार देखते हो। चुलबुला लड़का जब बाप के पास बैठता है, तब चुपचाप बैठा रहता है [illegible] चाँदनी पर खेलता है, तब उसकी और ही मूर्ति हो जाती है। ये लड़के नित्यसिद्ध [illegible] संसार मे नही बँधते। थोड़ी ही उम्र मे [illegible] चैतन्य होता है, और ये ईश्वर की [illegible] है। ये संसार मे जीवो को शिक्षा देने के लिए आते है। संसार की कोई वस्तु [illegible] कामिनी-कांचन मे ये कभी नही पड़ते।

[illegible] की कथा है। यह चिड़िया आकाश मे बहुत ऊँचाई पर रहती है। [illegible] अंडा देते ही वह गिरने लगता है; परन्तु इतने ऊँचे से वह गिरता [illegible] फूट जाता है। तब बच्चा गिरने लगता है। गिरते ही गिरते

उसकी आँखें खुलती और पंख निकल आते हैं। आँखे खुलने से जब वह बच्चा देखता है कि मैं गिर रहा हूँ और जमीन पर गिरकर चूर चूर हो जाऊँगा, तब वह एकदम अपनी माँ की ओर फिर ऊँचे चढ़ जाता है।"

नरेन्द्र उठ गए।

सभा में केदार, प्राणकृष्ण, मास्टर आदि और भी कई सज्जन थे।

श्रीरामकृष्ण – देखो, नरेन्द्र गाने में, बजाने में, पढ़ने-लिखने में – सब विषयों में अच्छा है। उस दिन केदार के साथ उसने तर्क किया था। केदार की बातों को खटाखट काटता गया। (श्रीरामकृष्ण और सब लोग हँस पड़े।) – (मास्टर से) अंग्रेजी में क्या कोई तर्क की किताब है?

मास्टर – जी हाँ है, अंग्रेजी में इसको न्यायशास्त्र (Logic) कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, कैसा है कुछ सुनाओ तो।

मास्टर अब मुश्किल में पड़े। आखिर कहने लगे – एक बात यह है कि साधारण सिद्धान्त से विशेष सिद्धान्त पर पहुँचना; जैसे, सब मनुष्य मरेंगे, पण्डित भी मनुष्य हैं, इसलिए वे भी मरेंगे।

"और एक बात यह है कि विशेष दृष्टान्त या घटना को देखकर साधारण सिद्धान्त पर पहुँचना। जैसे यह कौआ काला है, वह कौआ काला है और जितने कौए दीख पड़ते हैं, वे भी काले हैं, इसलिए सब कौए काले हैं।

"किन्तु उस प्रकार के सिद्धान्त से भूल भी हो सकती है; क्योंकि सम्भव है ढूँढ़-तलाश करने से किसी देश मे सफेद कौआ मिल जाय। एक और दृष्टान्त – जहाँ वृष्टि है, वहाँ मेघ भी है, अतएव यह साधारण सिद्धान्त हुआ कि मेघ से वृष्टि होती है। और भी एक दृष्टान्त – इस मनुष्य के बत्तीस दाँत हैं, उस मनुष्य के बत्तीस दाँत हैं, और जिस मनुष्य को देखते हैं, उसी के बत्तीस दाँत हैं, अतएव सब मनुष्यों के बत्तीस दाँत हैं।

"इस प्रकार के साधारण सिद्धान्त की बातें अंग्रेजी न्यायशास्त्र में हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने इन बातों को सुन भर लिया। फिर वे अन्यमनस्क हो गए इसलिए यह प्रसंग और आगे न बढ़ा।

(३)

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि।। (गीता, २।५३)

समाधि में

सभा भंग हुई। भक्त सब इधर-उधर घूमने लगे। मास्टर भी पंचवटी आदि स्थानों मे घूम रहे थे। समय पाँच के लगभग होगा। कुछ देर बाद वे श्रीरामकृष्ण के कमरे में आए

और देखा उसके उत्तर की ओर छोटे बरामदे में अद्भुत घटना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण स्थिर भाव से खड़े हैं और नरेन्द्र गा रहे हैं। दो-चार भक्त भी खड़े हैं। मास्टर आकर गाना सुनने लगे। गाना सुनते हुए वे मुग्ध हो गए। श्रीरामकृष्ण के गाने को छोड़कर ऐसा मधुर गाना उन्होंने कभी कहीं नहीं सुना था। अकस्मात् श्रीरामकृष्ण की ओर देखकर वे स्तब्ध हो गए। श्रीरामकृष्ण की देह निःस्पन्द हो गयी थी और नेत्र निर्निमेष। श्वासोच्छ्वास चल रहा था या नहीं – बताना कठिन है। पूछने पर एक भक्त ने कहा, यह 'समाधि' है। मास्टर ने ऐसा न कभी देखा था, न सुना था। वे विस्मित होकर सोचने लगे, भगवच्चिन्तन करते हुए मनुष्यों का बाह्यज्ञान क्या यहाँ तक चला जाता है? न जाने कितनी भक्ति और विश्वास हो तो मनुष्यों की यह अवस्था होती है!

नरेन्द्र जो गीत गा रहे थे, उसका भाव यह है –

"ऐ मन, तू चिद्घन हरि का चिन्तन कर। उसकी मोहनमूर्ति की कैसी अनुपम छटा है, जो भक्तों का मन हर लेती है वह रूप नये नये वर्णों से मनोहर है, कोटि चन्द्रमाओं को लजानेवाला है, – उसकी छटा क्या है मानो बिजली चमकती है! उसे देख आनन्द से जी भर जाता है।"

गीत के इस चरण को गाते समय श्रीरामकृष्ण चौंकने लगे। देह पुलकायमान हुई। आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। बीच बीच में मानो कुछ देखकर मुसकराते हैं। कोटि चन्द्रमाओं को लजानेवाले उस अनुपम रूप का वे अवश्य दर्शन करते होंगे। क्या यही ईश्वर-दर्शन है? कितनी साधना, कितनी तपस्या, कितनी भक्ति और विश्वास से ईश्वर का ऐसा दर्शन होता है?

फिर गाना होने लगा।

(भावार्थ) – "हृदय-रूपी कमलासन पर उनके चरणों का भजन कर, शान्त मन और प्रेमभरे नेत्रों से उस अपूर्व मनोहर दृश्य को देख ले।"

फिर वही जगत् को मोहनेवाली मुसकराहट! शरीर वैसा ही निश्चल हो गया। आँखें बन्द हो गयीं – मानो कुछ अलौकिक रूप देख रहे हैं, और देखकर आनन्द से भरपूर हो रहे हैं।

अब गीत समाप्त हुआ। नरेन्द्र ने गाया –

(भावार्थ) – "चिदानन्द-रस में – प्रेमानन्द-रस में – परम भक्ति से चिरदिन के *लिए मग्न हो जा।"*

समाधि और प्रेमानन्द की इस अद्भुत छबि को हृदय में रखते हुए मास्टर घर लौटने लगे। बीच बीच में दिल को मतवाला करनेवाला वह मधुर गीत याद आता रहा।

परिच्छेद ४

चतुर्थ दर्शन

(१)

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।
यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते।। (गीता, ६।२२)

नरेन्द्र, भवनाथ आदि के संग आनन्द

उसके दूसरे दिन (६ मार्च को) भी छुट्टी थी। दिन के तीन बजे मास्टर फिर आए। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे बैठे है। फर्श पर चटाई बिछी है। नरेन्द्र, भवनाथ तथा और भी दो एक लोग बैठे है। सभी अभी लड़के है, उम्र उन्नीस-बीस के लगभग होगी। प्रफुल्लमुख श्रीरामकृष्ण तखत पर बैठे हुए लड़को से सानन्द वार्तालाप कर रहे है।

मास्टर को कमरे मे घुसते देख श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए कहा, "यह देखो, फिर आया।" सब हँसने लगे। मास्टर ने भूमिष्ठ हो प्रणाम करके आसन ग्रहण किया। पहले वे खड़े खड़े हाथ जोड़कर प्रणाम करते थे – जैसा अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग करते है। पर आज उन्होने भूमिष्ठ होकर प्रणाम करना सीखा। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्रादि भक्तो से कहने लगे, "देखो, एक मोर को किसी ने चार बजे अफीम खिला दी। दूसरे दिन से वह अफीमची मोर ठीक चार बजे आ जाता था! यह भी अपने समय पर आया है।" सब लोग हँसने लगे।

मास्टर सोचने लगे, ये ठीक तो कहते है। घर जाता हूँ, पर मन दिन-रात यही पड़ा रहता है। कब जाऊँ, कब उन्हे देखूँ इसी विचार मे रहता हूँ। यहाँ मानो कोई खींच ले आता है! इच्छा होने पर भी दूसरी जगह जा नही पाता, यही आना पड़ता है। इधर श्रीरामकृष्ण लड़कों से हँसी-मजाक करने लगे। मालूम होता था कि वे सब मानो एक ही उम्र के हैं। हँसी की लहरें उठने लगीं। मानो आनन्द की हाट लगी हो।

मास्टर यह अद्भुत चरित्र देखते हुए सोचते हैं कि पिछले दिन क्या इन्हीं को समाधि और अपूर्व प्रेमानन्द में मग्न देखा था? क्या ये वे ही मनुष्य हैं, जो आज प्राकृत मनुष्य जैसा व्यवहार कर रहे हैं? क्या इन्ही ने मुझे पहले दिन उपदेश देते हुए धिक्कारा था? इन्हीं ने मुझे 'तुम ज्ञानी हो' कहा था? इन्हीं ने साकार और निराकार दोनों सत्य हैं,

कहा था? इन्हीं ने मुझे कहा था कि ईश्वर ही सत्य हैं और सब अनित्य? इन्हीं ने मुझे संसार में दासी की भाँति रहने का उपदेश दिया था?

श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे हैं और बीच बीच में मास्टर को देख रहे हैं। मास्टर को सविस्मय बैठे हुए देखकर उन्होंने रामलाल से कहा – "इसकी उम्र कुछ ज्यादा हो गयी है न, इसी से कुछ गम्भीर है। ये सब हँस रहे हैं; पर यह चुपचाप बैठा है।"

मास्टर की उम्र उस समय सत्ताईस साल की होगी।

बात ही बात में परम भक्त हनुमान की बात चली। हनुमान का एक चित्र श्रीरामकृष्ण के कमरे की दीवार पर टँगा था। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "देखो तो, हनुमान का भाव कैसा है! धन, मान, शरीरसुख कुछ भी नहीं चाहते, केवल भगवान् को चाहते हैं। जब स्फटिक-स्तम्भ के भीतर से ब्रह्मास्त्र निकालकर भागे, तब मन्दोदरी नाना प्रकार के फल लेकर लोभ दिखाने लगी। उसने सोचा कि फल के लोभ से उतरकर शायद ये ब्रह्मास्त्र फेंक दें; पर हनुमान इस भुलावे में कब पड़ने लगे? उन्होंने कहा – मुझे फलों का अभाव नहीं है। मुझे जो फल मिला है, उससे मेरा जन्म सफल हो गया है। मेरे हृदय में मोक्षफल के वृक्ष श्रीरामचन्द्रजी हैं। श्रीराम-कल्पतरु के नीचे बैठा रहता हूँ; जब जिस फल की इच्छा होती है, वही फल खाता हूँ। फल के बारे में कहता हूँ कि तेरा फल मैं नहीं चाहता हूँ। तू मुझे फल न दिखा, मैं इसका प्रतिफल दे जाऊँगा।"

इसी भाव का एक गीत श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं। फिर वही समाधि; देह निश्चल, नेत्र स्थिर। बैठे हैं, जैसी मूर्ति फोटोग्राफ में देखने को मिलती है। भक्तगण अभी इतना हँस रहे थे पर अब सब एक दृष्टि से श्रीरामकृष्ण की इस अद्भुत अवस्था का दर्शन करने लगे। मास्टर दूसरी बार यह समाधि-अवस्था देख रहे थे।

बड़ी देर बाद अवस्था का परिवर्तन हो रहा है। देह शिथिल हो गयी, मुख सहास्य हो गया, इन्द्रियाँ फिर अपना अपना काम करने लगीं। नेत्रों से आनन्दाश्रु बहाते हुए 'राम राम' उच्चारण कर रहे हैं।

मास्टर सोचने लगे, क्या ये ही महापुरुष लड़कों के साथ दिल्लगी कर रहे थे? तब तो यह जान पड़ता था कि मानो पाँच वर्ष के बालक हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ होकर फिर प्राकृत मनुष्यों जैसा व्यवहार कर रहे हैं। मास्टर और नरेन्द्र से कहने लगे कि तुम दोनों अंग्रेजी में बातचीत करो, मैं सुनूँगा।

यह सुनकर मास्टर और नरेन्द्र हँस रहे हैं। दोनों परस्पर कुछ बातचीत करने लगे, पर बँगला में। श्रीरामकृष्ण के सामने मास्टर का तर्क करना सम्भव न था; क्योंकि तर्क का तो घर उन्होंने बन्द कर दिया है। अतएव मास्टर अब तर्क कैसे कर सकते हैं! श्रीरामकृष्ण ने फिर कहा, पर मास्टर के मुँह से अंग्रेजी तर्क न निकला।

(२)

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं, त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता, सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे।। (गीता, ११।१८)

अन्तरंग भक्तों के संग में। 'मैं कौन हूँ'?

पाँच बजे हैं। भक्त लोग अपने अपने घर चले गए। सिर्फ मास्टर और नरेन्द्र रह गए। नरेन्द्र मुँह-हाथ धोने के लिए गए। मास्टर भी बगीचे में इधर-उधर घूमते रहे। थोड़ी देर बाद कोठी की बगल से 'हंस तालाब' की ओर आते हुए उन्होंने देखा कि तालाब की दक्षिण तरफवाली सीढ़ी के चबूतरे पर श्रीरामकृष्ण खड़े हैं और नरेन्द्र भी हाथ में गड़ुआ लिए खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, "देख, और जरा ज्यादा आया-जाया करना – तूने हाल ही में आना शुरू किया है न? पहली जान-पहचान के बाद सभी लोग कुछ ज्यादा आया करते हैं, जैसे नया पति। (नरेन्द्र और मास्टर हँसे।) क्यों, आएगा नहीं?" नरेन्द्र ब्राह्मसमाजी लड़के हैं, हँसते हुए कहा, "हाँ, कोशिश करूँगा।"

फिर सभी कोठी की राह से श्रीरामकृष्ण के कमरे की ओर आने लगे। कोठी के पास श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, "देखो, किसान बाजार से बैल खरीदते है। वे जानते हैं कि कौनसा बैल अच्छा है और कौनसा बुरा। वे पूँछ के नीचे हाथ लगाकर परखते हैं। कोई कोई बैल पूँछ पर हाथ लगाने से लेट जाते हैं। वे ऐसे बैल नहीं खरीदते। पर जो बैल पूँछ पर हाथ रखते ही बड़ी तेजी से कूद पड़ता है, उसी बैल को वे चुन लेते हैं। नरेन्द्र इसी बैल की जाति का है। भीतर खूब तेज है।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण मुसकराने लगे। "फिर कोई कोई ऐसे होते हैं कि मानो उनमें जान ही नहीं है – न जोर है, न दृढ़ता।"

सन्ध्या हुई। श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन करने लगे। उन्होंने मास्टर से कहा, "तुम जाकर नरेन्द्र से बातचीत करो, और फिर मुझे बताना कि वह कैसा लड़का है।"

आरती हो चुकी। मास्टर ने बड़ी देर में नरेन्द्र को चाँदनी के पश्चिम की तरफ पाया। आपस में बातचीत होने लगी। नरेन्द्र ने कहा कि मैं साधारण ब्राह्मसमाजी हूँ, कालेज मे पढ़ता हूँ, इत्यादि।

रात हो गयी। अब मास्टर घर जाएँगे, पर जाने को जी नहीं चाहता; इसलिए नरेन्द्र से बिदा होकर वे फिर श्रीरामकृष्ण को ढूँढने लगे। उनका गीत सुनकर मास्टर मुग्ध हो गए हैं। जी चाहता है कि फिर उनके श्रीमुख से गीत सुनें। ढूँढ़ते हुए देखा कि कालीमाता के मन्दिर के सामने जो नाट्यमण्डप है, उसी में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे हैं। मन्दिर में मूर्ति के दोनों तरफ दीपक जल रहे थे। विस्तृत नाट्यमण्डप में एक लालटेन जल रही थी। रोशनी धीमी थी। प्रकाश और अँधेरे का मिश्रण-सा दीख पड़ता था।

मास्टर श्रीरामकृष्ण का गीत सुनकर मुग्ध हो गए हैं, जैसे साँप मन्त्रमुग्ध हो जाता है। अब बड़े संकोच से उन्होंने श्रीरामकृष्णदेव से पूछा, "क्या आज फिर गाना होगा?" श्रीरामकृष्ण ने जरा सोचकर कहा, "नहीं, आज अब न होगा।" यह कहते ही मानो उन्हें फिर याद आयी और उन्होंने कहा, "हाँ, एक काम करना। मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना, वहाँ गाना होगा।"

मास्टर – आपकी जैसी आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण – तुम जानते हो बलराम बसु को?

मास्टर – जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण – बलराम बसु – बोसपाड़ा में उनका घर है।

मास्टर – जी मैं पूछ लूँगा।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के साथ टहलते हुए) – अच्छा, तुमसे एक बात पूछता हूँ – मुझे तुम क्या समझते हो?

मास्टर चुप रहे। श्रीरामकृष्ण ने फिर से पूछा, "तुम्हें क्या मालूम होता है? मुझे कितने आने ज्ञान हुआ है?"

मास्टर – 'आने' की बात तो मैं नहीं जानता पर ऐसा ज्ञान, या प्रेमभक्ति, या विश्वास, या वैराग्य, या उदार भाव मैंने और कही कभी नही देखा।

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे।

इस बातचीत के बाद मास्टर प्रणाम करके विदा हुए। फाटक तक जाकर फिर कुछ याद आयी, उल्टे पाँव लौटकर फिर श्रीरामकृष्णदेव के पास नाट्यमण्डप में हाजिर हुए।

उस धीमी रोशनी में श्रीरामकृष्ण अकेले टहल रहे थे – निःसंग – जैसे सिंह वन में अकेला अपनी मौज में फिरता रहता है। आत्माराम, और किसी की अपेक्षा नही!

विस्मित होकर मास्टर उन महापुरुष को देखने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्यों जी, फिर क्यों लौटे?

मास्टर – जी, वे अमीर आदमी होंगे – शायद मुझे भीतर न जाने दें – इसीलिए सोच रहा हूँ कि वहाँ न जाऊँगा, यहीं आकर आपसे मिलूँगा।

श्रीरामकृष्ण – नहीं जी, तुम मेरा नाम लेना। कहना कि मैं उनके पास जाऊँगा, बस कोई भी तुम्हें मेरे पास ले आएगा।

"जैसी आपकी आज्ञा" – कहकर मास्टर ने फिर प्रणाम किया और वहाँ से विदा हुए।

परिच्छेद ५

बलराम के मकान पर श्रीरामकृष्ण तथा प्रेमानन्द में नृत्य

(१)

रात के आठ-नौ बजे का समय होगा – होली के सात दिन बाद। राम, मनोमोहन, राखाल, नृत्यगोपाल आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर खड़े हैं। सभी लोग हरिनाम का संकीर्तन करते करते तन्मय हो गए हैं। कुछ भक्तों की भावावस्था हुई है। भावावस्था में नृत्यगोपाल का वक्ष:स्थल लाल हो गया है। सब के बैठने पर मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने देखा राखाल सोए हैं, भावमग्न, बाह्यज्ञान-विहीन। वे उनकी छाती पर हाथ रखकर कह रहे हैं – 'शान्त हो, शान्त हो।' राखाल की यह दूसरी बार भावावस्था थी। वे कलकत्ते में अपने पिता के साथ रहते हैं; बीच बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आ जाते हैं। इसके पूर्व उन्होंने श्यामपुकुर में विद्यासागर महाशय के स्कूल में कुछ दिन अध्ययन किया था।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से दक्षिणेश्वर में कहा था, 'मैं कलकत्ते में बलराम के घर जाऊँगा, तुम भी आना।' इसीलिए वे उनका दर्शन करने आए हैं। फाल्गुन कृष्णा सप्तमी, शनिवार, ११ मार्च १८८२ ई.। श्रीयुत बलराम श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर लाए हैं।

अब भक्तगण बरामदे म बैटे प्रसाद पा रहे हैं। दासवत् बलराम खड़े हैं। देखने से समझा नहीं जाता कि वे इस मकान के मालिक हैं।

मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास कुछ दिनों से आने लगे हैं। उनका अभी तक भक्तों के साथ परिचय नहीं हुआ है। केवल दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र के साथ परिचय हुआ था।

(२)

सर्वधर्मसमन्वय

कुछ दिनों बाद श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर भावाविष्ट होकर बैठे हैं। दिन के चार-पाँच बजे का समय होगा। मास्टर भी पास ही बैठे हैं।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण, उनके कमरे के फर्श पर जो बिस्तर बिछाया गया है, उस पर विश्राम कर रहे थे। अभी उनकी सेवा के लिए सदैव उनके पास कोई नहीं रहता

था। हृदय के चले जाने के बाद से उनको कष्ट हो रहा है। कलकत्ते से मास्टर के आने पर वे उनके साथ बात करते करते श्रीराधाकान्त के मन्दिर के सामनेवाले शिव-मन्दिर की सीढ़ी पर आकर बैठे। मन्दिर देखते ही वे एकाएक भावाविष्ट हो गए हैं।

वे जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ, सभी कहते हैं, मेरी घड़ी ठीक चल रही है। ईसाई, हिन्दू, मुसलमान सभी कहते हैं मेरा धर्म ठीक है, परन्तु माँ, किसी की भी तो घड़ी ठीक नहीं चल रही है। तुम्हें ठीक ठीक कौन समझ सकेगा, परन्तु व्याकुल होकर पुकारने पर, तुम्हारी कृपा होने पर सभी पथों से तुम्हारे पास पहुँचा जा सकता है। माँ, ईसाई लोग गिर्जाघरों में तुम्हें कैसे पुकारते हैं, एक बार दिखा देना। परन्तु माँ, भीतर जाने पर लोग क्या कहेंगे? यदि कुछ गड़बड़ हो जाय तो? फिर लोग कालीमन्दिर में यदि न जाने दें तो फिर गिर्जाघर के दरवाजे के पास से दिखा देना।"

(३)

भक्तों के साथ भजनानन्द में – 'प्रेम की सुरा'

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटी खाट पर बैठे हैं। आनन्दमयी मूर्ति है। सहास्य वदन। श्रीयुत कालीकृष्ण* के साथ मास्टर आ पहुँचे।

कालीकृष्ण जानते न थे कि उनके मित्र उन्हें कहाँ ला रहे हैं। मित्र ने कहा था, कलार की दूकान पर जाओगे तो मेरे साथ आओ। वहाँ पर एक मटकी शराब है। मास्टर ने अपने मित्र से जो कुछ कहा था, प्रणाम करने के बाद श्रीरामकृष्ण को सब कह सुनाया। वे सभी हँसने लगे।

वे बोले, "भजनानन्द, ब्रह्मानन्द, यह आनन्द ही सुरा है, प्रेम की सुरा। मानवजीवन का उद्देश्य है ईश्वर से प्रेम, ईश्वर से प्यार करना। भक्ति ही सार है। ज्ञान-विचार करके ईश्वर को जानना बहुत ही कठिन है।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है –

"कौन जाने काली कैसी हैं? षड्दर्शन उन्हें देख नहीं सकते। इच्छामयी वे अपनी इच्छा के अनुसार घट घट में विराजमान हैं। यह विराट् ब्रह्माण्डरूपी भाण्ड जो काली के उदर में है उसे कैसा समझते हो? शिव ने काली का मर्म जैसा समझा वैसा दूसरा कौन जानता है? योगी सदा सहस्रार, मूलाधार में मनन करते हैं। काली पद्म-वन में हंस के साथ हंसी के रूप में रमण करती हैं। 'प्रसाद' कहता है, लोग हँसते हैं। मेरा मन समझता है, पर प्राण नहीं समझता – वामन होकर चन्द्रमा पकड़ना चाहता है।"

---

* कालिकृष्ण भट्टाचार्य – परवर्ति काल में आप विद्यासागर कालेज में संस्कृत भाषा तथा साहित्य के प्रधान अध्यापक हुए थे।

श्रीरामकृष्ण फिर कहते हैं, "ईश्वर से प्यार करना ही जीवन का उद्देश्य है। जिस प्रकार वृन्दावन में गोपगोपीगण, राखालगण श्रीकृष्ण से प्यार करते थे। जब श्रीकृष्ण मथुरा चले गए, राखालगण उनके विरह में रो-रोकर घूमते थे।"

इतना कहकर वे ऊपर की ओर ताकते हुए गाना गाने लगे –

(भावार्थ) – "एक नये राखाल को देख आया जो नये पेड़ की टहनी पकड़े छोटे बछड़े को गोद में लिए कह रहा है, 'कहाँ हो रे भाई कन्हैया'! फिर 'क' कहकर ही रह जाता है, पूरा कन्हैया मुँह से नहीं निकलता। कह रहा है, 'कहाँ हो रे भाई' और आँखों से आँसू की धाराएँ निकल रही हैं।"

श्रीरामकृष्ण का प्रेमभरा गाना सुनकर मास्टर की आँखों में आँसू भर आए।

□□□

परिच्छेद ६

शामपुकुर में प्राणकृष्ण के मकान पर श्रीरामकृष्ण

(१)

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते में शुभागमन किया है। श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय के शामपुकुरवाले मकान के दुमँजले पर बैठक-घर में भक्तों के साथ बैठे हैं। अभी अभी भक्तों के साथ बैठकर प्रसाद पा चुके हैं। आज २ अप्रैल, रविवार १८८२ ई., चैत्र शुक्ला चतुर्दशी है। इस समय दिन के एक-दो बजे होंगे। कप्तान उसी मुहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है कि इस मकान में विश्राम करने के बाद कप्तान के घर होकर उनसे मिलकर 'कमलकुटीर' नामक मकान में श्री केशव सेन को देखने जाएँ। प्राणकृष्ण बैठक-घर में बैठे है। राम, मनोहर, केदार, सुरेन्द्र, गिरीन्द्र (सुरेन्द्र के भाई), राखाल, बलराम, मास्टर आदि भक्तगण उपस्थित हैं।

मुहल्ले के कुछ सज्जन तथा अन्य दूसरे निमन्त्रित व्यक्ति भी आए हैं। श्रीरामकृष्ण क्या कहते हैं – यह सुनने के लिए सभी उत्सुक होकर बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। यह जगत् उनका ऐश्वर्य है। परन्तु ऐश्वर्य देखकर ही सब लोग भूल जाते हैं, जिनका ऐश्वर्य है उनकी खोज नही करते। कामिनीकांचन का भोग करने सभी जाते हैं। परन्तु उसमें दु:ख और अशान्ति ही अधिक है। संसार मानो विशालाक्षी नदी का भँवर है। नाव भँवर में पड़ने पर फिर उसका बचना कठिन है। गुखरू काँटे की तरह एक छूटता है तो दूसरा जकड़ जाता है। गोरखधन्धे में एक बार घुसने पर निकलना कठिन है। मनुष्य मानो जल-सा जाता है।

एक भक्त – महाराज, तो उपाय?

उपाय – साधुसंग और प्रार्थना

श्रीरामकृष्ण – उपाय – साधुसंग और प्रार्थना। वैद्य के पास गए बिना रोग ठीक नहीं होता। साधुसंग एक ही दिन करने से कुछ नहीं होता। सदा ही आवश्यक है। रोग लगा ही है। फिर वैद्य के पास बिना रहे नाड़ीज्ञान नहीं होता। साथ साथ घूमना पड़ता है, तब समझ में आता है कि कौन कफ की नाड़ी है और कौन पित्त की नाड़ी।

भक्त – साधुसंग से क्या उपकार होता है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर पर अनुराग होता है। उनसे प्रेम होता है। व्याकुलता न आने से कुछ भी नहीं होता। साधुसंग करते करते ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होता है – जिस प्रकार घर में कोई अस्वस्थ होने पर मन सदा ही चिन्तित रहता है और यदि किसी की नौकरी छूट जाती है तो वह जिस प्रकार आफिस आफिस में घूमता रहता है, व्याकुल होता रहता है, उसी प्रकार। यदि किसी आफिस में उसे जवाब मिलता है कि कोई काम नहीं है तो फिर दूसरे दिन आकर पूछता है, 'क्या आज कोई जगह खाली हुई?'

"एक और उपाय है – व्याकुल होकर प्रार्थना करना। ईश्वर अपने हैं, उनसे कहना पड़ता है, 'तुम कैसे हो, दर्शन दो – दर्शन देना ही होगा – तुमने मुझे पैदा क्यों किया?' सिक्खों ने कहा था, 'ईश्वर दयामय हैं।' मैंने उनसे कहा था, 'दयामय क्यों कहूँ? उन्होने हमें पैदा किया है, यदि वे ऐसा करें जिससे हमारा मंगल हो, तो इसमे आश्चर्य क्या है? माँ-बाप बच्चों का पालन करेंगे ही, इसमें फिर दया की क्या बात है? यह तो करना ही होगा।' इसीलिए उन पर जबरदस्ती करके उनसे प्रार्थना स्वीकार करानी होगी। वे हमारी माँ, और हमारे बाप जो हैं। लड़का यदि खाना-पीना छोड़ दे तो माँ-बाप उसके बालिग होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा उसे दे देते है। फिर जब लड़का पैसा माँगना और बार बार कहता है, 'माँ, तेरे पैरों पड़ता हूँ, मुझे दो पैसे दे दे' तो माँ हैरान होकर उसकी व्याकुलता देख पैसा फेंक ही देती है।

"साधुसंग करने पर एक और उपकार होता है, – सत् और असत् का विचार। सत् नित्यपदार्थ अर्थात् ईश्वर, असत् अर्थात् अनित्य। असत् पथ पर मन जाते ही विचार करना पड़ता है। हाथी जब दूसरो के केले के पेड़ खाने के लिए सूँड़ बढ़ाता है तो उसी समय महावत उसे अंकुश मारता है।"

पड़ोसी – महाराज, पापबुद्धि क्यों होती है?

श्रीरामकृष्ण – उनके जगत् में सभी प्रकार हैं। साधु लोग भी उन्होंने बनाए हैं, दुष्ट लोगों को भी उन्होंने ही बनाया है। सद्बुद्धि भी वे देते हैं और असद्बुद्धि भी।

पाप की जिम्मेदारी और कर्मफल

पड़ोसी – तो क्या पाप करने पर हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर का नियम है कि पाप करने पर उसका फल भोगना पड़ेगा। मिर्च खाने पर क्या तीखा न लगेगा? सेजो बाबू ने अपनी जवानी में बहुत-कुछ किया था, इसलिए मरते समय उन्हें अनेक प्रकार के रोग हुए। कम उम्र में इतना पता नही चलता। कालीबाड़ी में भोजन पकाने के लिए सुन्दरवन की लकड़ी रहती है। वह गीली लकड़ी पहले-पहल अच्छी जलती है। उस समय मालूम भी नहीं होता कि इसके अन्दर जल है। लकड़ी का जलना समाप्त होते समय सारा जल पीछे की ओर आ जाता है और फैंच-फौंच

करके चूल्हे की आग बुझा देता है। इसीलिए काम, क्रोध, लोभ – इन सब से सावधान रहना चाहिए। देखो न, हनुमान ने क्रोध में लंका जला दी थी। अन्त में ख्याल आया, अशोकवन में सीता हैं। तब सटपटाने लगे कि कहीं सीताजी का कुछ न हो जाय।

पड़ोसी – तो ईश्वर ने दुष्ट लोगों को बनाया ही क्यों?

श्रीरामकृष्ण – उनकी इच्छा, उनकी लीला। उनकी माया में विद्या भी है, अविद्या भी। अन्धकार की भी आवश्यकता है। अन्धकार रहने पर प्रकाश की महिमा और भी अधिक प्रकट होती है। काम, क्रोध, लोभादि खराब चीज तो अवश्य हैं, परन्तु उन्होंने ये दिये क्यों? दिये महान् व्यक्तियों को तैयार करने के लिए। मनुष्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने से महान् होता है। जितेन्द्रिय क्या नहीं कर सकता? उनकी कृपा से उसे ईश्वरप्राप्ति तक हो सकती है। फिर दूसरी ओर देखो, काम से उनकी सृष्टि की लीला चल रही है।

"दुष्ट लोगों की भी आवश्यकता है। एक गाँव के लोग बहुत उद्दण्ड हो गए थे। उस समय वहाँ गोलोक चौधरी को भेज दिया गया। उसके नाम से लोग काँपने लगे – इतना कठोर शासन था उसका। अतएव अच्छे-बुरे सभी तरह के लोग चाहिए। सीताजी बोली, 'राम, अयोध्या में यदि सभी सुन्दर महल होते तो कैसा अच्छा होता! मैं देख रही हूँ अनेक मकान टूट गए है, कुछ पुराने हो गए हैं।' श्रीराम बोले, 'सीता, यदि सभी मकान सुन्दर हों तो मिस्त्री लोग क्या करेंगे?' (सभी हँस पड़े।) ईश्वर ने सभी प्रकार के पदार्थ बनाए हैं – अच्छे पेड़, विषैले पेड़ और व्यर्थ के पौधे भी। जानवरों में भले-बुरे सभी है – बाघ, शेर, साँप – सभी है।"

संसार में भी ईश्वरप्राप्ति होती है। सभी की मुक्ति होगी।

पड़ोसी – महाराज, संसार मे रहकर क्या भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – अवश्य किया जा सकता है। परन्तु जैसा कहा, साधुसंग और सदा प्रार्थना करनी पड़ती है। उनके पास रोना चाहिए। मन का सभी मैल धुल जाने पर उनका दर्शन होता है, मन मानो मिट्टी से लिपटी हुई एक लोहे की सुई है - ईश्वर हैं चुम्बक। मिट्टी रहते चुम्बक के साथ संयोग नहीं होता। रोते रोते सुई की मिट्टी धुल जाती है। सुई की मिट्टी अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, पापबुद्धि विषयबुद्धि आदि। मिट्टी धुल जाने पर सुई को चुम्बक खींच लेगा अर्थात ईश्वरदर्शन होगा। चित्तशुद्धि होने पर ही उनकी प्राप्ति होती है। ज्वर चढ़ा है, शरीर मानो भुन रहा है, इसमें कुनैन से क्या काम होगा?

"संसार में ईश्वरलाभ होगा क्यों नहीं? वही साधुसंग, रो-रोकर प्रार्थना, बीच बीच में निर्जनवास; चारों ओर कटघरा लगाए बिना रास्ते के पौधों को गाय-बकरियाँ खा जाती हैं।"

पड़ोसी – तो फिर जो लोग संसार में है उनकी भी मुक्ति होगी?

श्रीरामकृष्ण – सभी की मुक्ति होगी। परन्तु गुरु के उपदेश के *अनुसार चलना* पड़ता है, टेढ़े रास्ते से जाने पर फिर सीधे रास्ते पर आने में कष्ट होगा। मुक्ति बहुत देर में होती है। शायद इस जन्म में न भी हो। फिर सम्भव है अनेक जन्मों के पश्चात् हो। जनक आदि ने संसार में भी कर्म किया था। ईश्वर को सिर पर रखकर काम करते थे। नाचनेवाली जिस-प्रकार सिर पर बर्तन रखकर नाचती है। और पश्चिम की औरतों को नही देखा, सिर पर जल का घड़ा लेकर हँस-हँसकर बातें करती हुई जाती हैं?

पड़ोसी – आपने गुरूपदेश के बारे मे बताया, पर गुरु कैसे प्राप्त करूँ?

श्रीरामकृष्ण – हरएक गुरु नही हो सकता। कीमती शहतीर पानी मे स्वयं भी बहता हुआ चला जाता है और अनेक जीव-जन्तु भी उस पर चढ़कर जा सकते हैं। पर मामूली लकड़ी पर चढ़ने से लकड़ी भी डूब जाती है और जो चढ़ता है वह भी डूब जाता है। इसलिए ईश्वर युग युग में लोकशिक्षा के लिए गुरु-रूप में स्वयं अवतीर्ण होते है। सच्चिदानन्द ही गुरु है।

"ज्ञान किसे कहते हैं; और मै कौन हूँ? 'ईश्वर ही कर्ता है और सब अकर्ता' इसी का नाम ज्ञान है। मैं अकर्ता, उनके हाथ का यन्त्र हूँ। इसीलिए मैं कहता हूँ, माँ, तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र हूँ; तुम घरवाली हो, मै घर हूँ; मै गाड़ी हूँ, तुम इंजीनियर हो। जैसा चलाती हो वैसा चलता हूँ, जैसा कराती हो वैसा करता हूँ, जैसा बुलवाती हो, वैसा बोलता हूँ; नाहं, नाहं, तू है तू है।"

(२)

'कमलकुटीर' में श्रीरामकृष्ण और श्री केशव सेन

श्रीरामकृष्ण कप्तान के घर होकर श्रीयुत केशव सेन के 'कमलकुटीर' नामक मकान पर आए हैं। साथ हैं राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, मास्टर आदि अनेक भक्त लोग। सब दुमँजले के हाल में बैठे हैं। श्री प्रताप मजुमदार, श्री त्रैलोक्य आदि ब्राह्मभक्त भी उपस्थित हैं।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते हैं। जिन दिनों बेलघर के बगीचे में वे शिष्यों के साथ साधन-भजन कर रहे थे तब, अर्थात् १८७५ ई. के माघोत्सव के बाद कुछ दिनों के अन्दर ही, एक दिन श्रीरामकृष्ण ने बगीचे में जाकर उनके साथ साक्षात्कार किया था। साथ था उनका भानजा हृदयराम। बेलघर के इस बगीचे में उन्होंने केशव से कहा था, "तुम्हारी दुम झड़ गयी है, अर्थात् तुम सब कुछ छोड़कर संसार के बाहर भी रह सकते हो और फिर संसार में भी रह सकते हो। जिस प्रकार मेंढक के बच्चे की दुम झड़ जाने पर वह पानी में भी रह सकता है और फिर जमीन पर भी।" इसके बाद दक्षिणेश्वर में, कमलकुटीर में, ब्राह्मसमाज आदि स्थानों में अनेक बार श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के

सिलसिले में उन्हें उपदेश दिया था। "अनेक पन्थों से तथा अनेक धर्मों द्वारा ईश्वर-प्राप्ति हो सकती है। बीच बीच में निर्जन में साधन-भजन करके भक्तिलाभ करते हुए संसार में रहा जा सकता है। जनक आदि ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके संसार में रहे थे। व्याकुल होकर उन्हें पुकारना पड़ता है तब वे दर्शन देते हैं। तुम लोग जो कुछ करते हो, निराकार का साधन, वह बहुत अच्छा है। ब्रह्मज्ञान होने पर ठीक अनुभव करोगे कि ईश्वर सत्य है और सब अनित्य; ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है। सनातन हिन्दू धर्म में साकार निराकार दोनों ही माने गए हैं। अनेक भावों से ईश्वर की पूजा होती है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर। शहनाई बजाते समय एक आदमी केवल पोंऽऽ ही बजाता है, परन्तु उसके बाजे में सात छेद रहते हैं। और दूसरा व्यक्ति, जिसके बाजे में सात छेद हैं, वह अनेक राग-रागिनियाँ बजाता है।

"तुम लोग साकार को नहीं मानते इसमें कोई हानि नहीं; निराकार में निष्ठा रहने से भी हो सकता है। परन्तु साकारवादियों के केवल प्रेम के आकर्षण को लेना। माँ कहकर उन्हें पुकारने से भक्तिप्रेम और भी बढ़ जायगा। कभी दास्य, कभी सख्य, कभी वात्सल्य, कभी मधुर भाव। 'कोई कामना नहीं है, उन्हें प्यार करता हूँ', यह बहुत अच्छा भाव है। इसका नाम है अहेतुक भक्ति। रुपया-पैसा, मान-इज्जत कुछ भी नही चाहता हूँ, चाहता हूँ केवल तुम्हारे चरण-कमलो मे भक्ति। वेद, पुराण, तन्त्र में एक ईश्वर ही की बात है और उनकी लीला की बात। ज्ञान भक्ति दोनों ही हैं। संसार में दासी की तरह रहो। दासी सब काम करती है, पर उसका मन रहता है अपने घर में। मालिक के बच्चों को पालती-पोसती है; कहती है 'मेरा हरि, मेरा राम।' परन्तु खूब जानती है, लड़का उसका नहीं है। तुम लोग जो निर्जन में साधना करते हो यह बहुत अच्छा है। उनकी कृपा होगी। जनक राजा ने निर्जन में कितनी साधना की थी! साधना करने पर ही तो संसार मे निर्लिप्त होना सम्भव है।

"तुम लोग भाषण देते हो, सभी के उपकार के लिए; परन्तु ईश्वर को प्राप्त करने के बाद तथा उनके दर्शन प्राप्त कर चुकने के बाद ही भाषण देने से उपकार होता है। उनका आदेश न पाकर दूसरों को शिक्षा देने से उपकार नहीं होता। ईश्वर को प्राप्त किए बिना उनका आदेश नहीं मिलता। ईश्वर के प्राप्त होने का लक्षण है – मनुष्य बालक की तरह, जड़ की तरह, उन्मादवाले की तरह, पिशाच की तरह हो जाता है; जैसे शुकदेव आदि। चैतन्यदेव कभी बालक की तरह, कभी उन्मत्त की तरह नृत्य करते थे। हँसते थे, रोते थे, नाचते थे, गाते थे। पुरीधाम में जब थे तब बहुधा जड़ समाधि में रहते थे।"

श्री केशव की हिन्दू धर्म पर उत्तरोत्तर अधिकाधिक श्रद्धा

इस प्रकार अनेक स्थानों में श्रीरामकृष्ण ने वार्तालाप के सिलसिले में श्री केशवचन्द्र

सेन को अनेक प्रकार के उपदेश दिए थे। बेलघर के बगीचे में प्रथम दर्शन के बाद केशव ने २८ मार्च १८७५ ई. के. रविवारवाले 'मिरर' समाचार-पत्र में लिखा था :-

"हमने थोड़े दिन हुए दक्षिणेश्वर के परमहंस श्रीरामकृष्ण का बेलघर के बगीचे में दर्शन किया है। उनकी गम्भीरता, अन्तर्दृष्टि, बालस्वभाव देख हम मुग्ध हुए हैं। वे शान्तस्वभाव तथा कोमल प्रकृति के हैं और देखने से ऐसे लगते हैं मानो सदा योग में रहते हैं। इस समय हमारा ऐसा अनुमान हो रहा है कि हिन्दू धर्म के गम्भीरतम स्थलों का अनुसन्धान करने पर कितनी सुन्दरता, सत्यता तथा साधुता देखने को मिल सकती है! यदि ऐसा न होता तो परमहंस की तरह ईश्वरी भाव में भावित योगी पुरुष देखने में कैसे आते?"÷ १८७६ ई. के जनवरी मे फिर माघोत्सव आया। उन्होने टाउनहाल में भाषण दिया। विषय था – ब्राह्म धर्म और हमारा अनुभव (Our Faith and Experiences) इसमें भी उन्होंने हिन्दू धर्म की सुन्दरता के सम्बन्ध में अनेक बातें कही थीं।*

श्रीरामकृष्ण उन पर जैसा स्नेह रखने थे, केशव की भी उनके प्रति वैसी ही भक्ति थी। प्राय: प्रतिवर्ष ब्राह्मोत्सव के समय तथा अन्य समय भी केशव दक्षिणेश्वर में जाते थे और उन्हें कमलकुटीर में ले आते थे। कभी कभी अकेले कमलकुटीर के दूसरे मँजले पर उपासनागृह मे उन्हें परम अन्तरंग मानते हुए भक्ति के साथ ले जाते तथा एकान्त में ईश्वर की पूजा करते और आनन्द मनाते थे।

÷ We met not long ago Paramhansa of Dakshineswar, and were charmed by the depth, penetration and simplicity of his spirit. The never-ceasing metaphors and analogies in which he indulged, are most of them as apt as they are beautiful. The characteristics of his mind are the very opposite to those of Pandit Dayananda Saraswati, the former being so gentle, tender and contemplative as the latter is sturdy, masculine and polemical.

- *Indian Mirror, 28th March 1875*

Hinduism must have in it a deep source of beauty, truth and goodness to inspire such men as these.

- *Sunday Mirror, 28 Marth 1875*

* "If the ancient Vedic Aryan is gratefully honoured today for having taught us the deep truth of the Nirakar or the bodiless spirit, the same loyal homage is due to the later Puranic Hindu for having taught us religious feelings in all their breadth and depth.

"In the days of the Vedas and the Vedanta, India was all Communion (Yoga). In the days of the Puranas India was all Emotion (Bhakti). The highest and the best feelings of religion have been cultivated under the guardianship of specific divinities."

'Our Faith and Experiences'
- Lecture delivered in January 1877

१८७९ ई. के भाद्रोत्सव के समय केशव श्रीरामकृष्ण को फिर निमन्त्रण देकर बेलघर के तपोवन में ले गए थे – १५ सितम्बर सोमवार और फिर २१ सितम्बर को कमलकुटीर के उत्सव में सम्मिलित होने के लिए ले गए। इस समय श्रीरामकृष्ण के समाधिस्थ होने पर ब्राह्मभक्तों के साथ उनका फोटो लिया गया। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिस्थ थे। हृदय उन्हें पकड़कर खड़ा था। २२ अक्टूबर को महाष्टमी-नवमी के दिन केशव ने दक्षिणेश्वर में जाकर उनका दर्शन किया।

२९ अक्टूबर १८७९ बुधवार को शरद पूर्णिमा के दिन के एक बजे के समय केशव फिर भक्तों के साथ दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने गए थे। स्टीमर के साथ सजी-सजायी एक बड़ी नौका, छ: अन्य नौकाएँ, और दो छोटी नावें भी थीं। करीब अस्सी भक्तगण थे; साथ मे झण्डा, फूल-पत्ते, मृदंग-करताल, भेरी भी थे। हृदय अभ्यर्थना करके केशव को स्टीमर से उतार लाया – गाना गाते गाते। गाने का मर्म इस प्रकार है – 'सुरधुनी के तट पर कौन हरि का नाम लेता है, सम्भवत: प्रेम देनेवाले निताई आए हैं।' ब्राह्मभक्तगण भी पंचवटी से कीर्तन करते करते उनके साथ आने लगे, 'सच्चिदानन्दविग्रहरूपानन्दघन।' उनके बीच मे थे श्रीरामकृष्ण – बीच बीच में समाधिमग्न हो रहे थे। इस दिन सन्ध्या के बाद गंगाजी के घाट पर पूर्णचन्द्र के प्रकाश में केशव ने उपासना की थी।

उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण कहने लगे, तुम सब बोलो, 'ब्रह्म-आत्मा-भगवान्', 'ब्रह्म-माया-जीव-जगत्', 'भागवत-भक्त-भगवान्'।" केशव आदि ब्राह्मभक्तगण उस चन्द्रकिरण मे भागीरथी के तट पर एक स्वर से श्रीरामकृष्ण के साथ साथ उन सब मन्त्रों का भक्ति के साथ उच्चारण करने लगे। श्रीरामकृष्ण फिर जब बोले, "बोलो, 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव" ', तो केशव ने आनन्द से हँसते हँसते कहा, "महाराज, इस समय इतनी दूर नहीं। यदि हम 'गुरु-कृष्ण-वैष्णव' कहें तो लोग हमें कट्टरपन्थी कहेंगे!" श्रीरामकृष्ण भी हँसने लगे और बोले, "अच्छा, तुम (ब्राह्म) लोग जहाँ तक कह सको उतना ही कहो।"

कुछ दिनों बाद १३ नवम्बर १८७९ ई. को श्रीकालीपूजा के बाद राम, मनोमोहन और गोपाल मित्र ने दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

१८८० ई. में एक दिन ग्रीष्मकाल में राम और मनोमोहन कमलकुटीर में केशव के साथ साक्षात्कार करने आए थे। उनकी यह जानने की प्रबल इच्छा हुई कि केशवबाबू की श्रीरामकृष्ण के सम्बन्ध में क्या राय है। उन्होंने केशवबाबू से जब यह प्रश्न किया तो उन्होंने उत्तर दिया, "दक्षिणेश्वर के परमहंस साधारण व्यक्ति नहीं हैं, इस समय पृथ्वी भर में इतना महान् व्यक्ति दूसरा कोई नही है। वे इतने सुन्दर, इतने असाधारण व्यक्ति हैं कि उन्हे बड़ी सावधानी के साथ रखना चाहिए। देखभाल न करने पर उनका शरीर अधिक

टिक नहीं सकेगा। इस प्रकार की सुन्दर मूल्यवान वस्तु को काँच की आलमारी में रखना चाहिए।''

इसके कुछ दिनों बाद १८८१ ई. के माघोत्सव के समय पर जनवरी के महीने में केशव श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर में गए थे। उस समय वहाँ पर राम, मनोमोहन, जयगोपाल सेन आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित थे।

१५ जुलाई १८८१ ई. को केशव फिर श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर से स्टीमर में ले गए।

१८८१ ई. के नवम्बर मास में मनोमोहन के मकान पर जिस समय श्रीरामकृष्ण का शुभागमन तथा उत्सव हुआ था उस समय भी आमन्त्रित होकर केशव उत्सव में सम्मिलित हुए थे। श्री त्रैलोक्य आदि ने भजन गाया था।

१८८१ ई. के दिसम्बर मास में श्रीरामकृष्ण आमन्त्रित होकर राजेन्द्र मित्र के मकान पर गए थे। श्री केशव भी गए। यह मकान ठनठनिया के बेचू चटर्जी स्ट्रीट में है। राजेन्द्र थे राम तथा मनोमोहन के मौसा। राम, मनोमोहन, ब्राह्मभक्त राजमोहन तथा राजेन्द्र ने केशव को समाचार देकर निमन्त्रित किया था।

केशव को जिस समय समाचार दिया गया उस समय वे भाई अघोरनाथ के शोक में अशौच अवस्था में थे। प्रचारक भाई अघोर ने ८ दिसम्बर बृहस्पतिवार को लखनऊ शहर में देहत्याग किया था। सभी ने अनुमान किया कि केशव न आ सकेंगे। समाचार पाकर केशव बोले, ''यह कैसे! परमहंस महाशय आएँगे और मै न जाऊँ? अवश्य जाऊँगा! अशौच में हूँ इसलिए मै अलग स्थान पर बैठकर खाऊँगा।''

मनोमोहन की माता परम भक्तिमती श्यामासुन्दरी देवी ने श्रीरामकृष्ण को भोजन परोसा था। राम भोजन के सम[illegible] पास खड़े थे। जिस दिन राजेन्द्र के घर पर श्रीरामकृष्ण ने शुभागमन किया उस दिन तीसरे पहर सुरेन्द्र ने उन्हें चीनाबाजार में ले जाकर उनका फोटो उतरवाया था। श्रीरामकृष्ण खड़े खड़े समाधिमग्न थे।

उत्सव के दिन महेन्द्र गोस्वामी ने भागवत की कथा की।

जनवरी १८८२ ई. – माघोत्सव के उपलक्ष्य में, शिमुलिया ब्राह्मसमाज के उत्सव में ज्ञान चौधरी के मकान पर श्रीरामकृष्ण और केशव आमन्त्रित होकर उपस्थित थे। आँगन में कीर्तन हुआ। इसी स्थान में श्रीरामकृष्ण ने पहले-पहल नरेन्द्र का गाना सुना और उन्हें दक्षिणेश्वर आने के लिए कहा।

२३ फरवरी १८८२ ई., बृहस्पतिवार को केशव ने दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण का फिर से दर्शन किया। उनके साथ थे अमेरिकन पादरी जोसेफ कुक तथा कुमारी पिगाट। ब्राह्मभक्तो के साथ केशव ने श्रीरामकृष्ण को स्टीमर पर बैठाया। कुक साहब ने श्रीरामकृष्ण की समाधि-स्थिति देखी थी। उस समय श्री नगेन्द्र उसी जहाज में

उपस्थित थे। उनके मुख से समस्त वार्ता सुन १०-१५ दिन के अन्दर मास्टर ने दक्षिणेश्वर मे श्रीरामकृष्ण का प्रथम दर्शन किया।

तीन मास बाद – अप्रैल मास मे – श्रीरामकृष्ण कमलकुटीर मे केशव को देखने आए। उसी का थोड़ासा विवरण निम्नलिखित परिच्छेद मे दिया गया है।

श्रीरामकृष्ण का केशव के प्रति स्नेह। जगन्माता के पास नारियल-शक्कर की मन्नत

आज कमलकुटीर के उसी बैठक-घर मे श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बैठे है। २ अप्रैल १८८२ ई., रविवार, दिन के पाँच बजे का समय। केशव भीतर के कमरे मे थे। उन्हे समाचार दिया गया। कमीज पहनकर और चद्दर ओढकर उन्होने आकर प्रणाम किया। उनके भक्त मित्र कालीनाथ बसु रुग्ण है, वे उन्हे देखने जा रहे है। श्रीरामकृष्ण आए है, इसलिए केशव नही जा सके। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "तुम्हे बहुत काम रहता है, फिर अखबार मे भी लिखना पडता है, वहा (दक्षिणेश्वर) जाने का अवसर नही रहता। इसलिए मै ही तुम्हे देखने आ गया हूँ। तुम्हारी तबीयत ठीक नही है, यह जानकर नारियल शक्कर की मन्नत मानी थी। माँ से कहा, माँ, यदि केशव को कुछ हो जाय तो फिर कलकत्ता जाकर किसके साथ बात करूँगा।"

श्री प्रताप आदि ब्राह्मभक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे है। पास ही मास्टर को बैठे देख वे केशव से कहते है, "वे वहा पर (दक्षिणेश्वर मे) क्यो नही जाते है, पूछो तो। इतना ये कहते है कि स्त्री-बच्चो पर मन नही है।" एक मास से कुछ अधिक समय हुआ, मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास आया जाया करते है। बाद मे जाने मे कुछ दिनो का विलम्ब हुआ। इसीलिए श्रीरामकृष्ण इस प्रकार कह रहे है। उन्होने कह दिया था, 'आने मे देरी होने पर मुझे पत्र देना।'

ब्राह्मभक्तगण श्री सामाध्यायी को दिखाकर श्रीरामकृष्ण से कह रहे है, "आप विद्वान् है। वेद शास्त्रादि का आपने अच्छा अध्ययन किया है।" श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "हाँ, इनकी आँखो मे से इनका भीतरी भाग दिखायी दे रहा है। ठीक जैसे खिड़की की काँच मे से घर के भीतर की चीजे दिखायी देती है।"

श्री त्रैलोक्य गाना गा रहे है। गाना हो रहा है। इतने मे ही सन्ध्या का दिया जलाया गया। गाना सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण एकाएक खड़े हो गए, और 'माँ' का नाम लेते लेते समाधिमग्न हो गए। कुछ स्वस्थ होकर स्वयं ही नृत्य करते करते गाना गाने लगे जिसका आशय इस प्रकार है :–

"मै सुरापान नही करता, 'जय काली' कहता हुआ सुधा का पान करता हूँ। वह सुधा मुझे इतना मतवाला बना देती है कि लोग मुझे नशाखोर कहते है। गुरुजी का दिया

हुआ गुड लेकर उसमे प्रवृत्ति का मसाला मिलाकर ज्ञानरूपी कलार उससे शराब बनाता है और मेरा मतवाला मन उसे मूलमन्त्ररूपी बोतल में से पीता है। पीने के पहले 'तारा' कहकर मै उसे शुद्ध कर लेता हूँ। 'रामप्रसाद' कहता है कि ऐसी शराब पीने पर धर्म-अर्थादि चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है।"

श्री केशव को श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्ण नेत्रों से देख रहे है, मानो अपने निजी है। और मानो भयभीत हो रहे है कि कही केशव किसी दूसरे के अर्थात् ससार के न बन जाएँ। उनकी ओर ताकते हुए श्रीरामकृष्ण ने फिर गाना प्रारम्भ किया, जिसका भावार्थ इस प्रकार का है -

"बात करने से भी डरती हूँ, न करने से भी डरती हूँ। हे राधे, मन मे सन्देह होता है कि कहीं तुम जैसी निधि को गवाँ न बैठूँ। हम तुम्हें वह मन्त्र बतलाती है जिससे हम विपत्ति से पार हो गया है और जो लोगों को भी विपत्ति से पार कर देता है। अब तुम्हारी जैसी इच्छा।' अर्थात् सब कुछ छोड भगवान् को पुकारो, वे ही सत्य है और सब अनित्य है। उन्हें प्राप्त किए बिना कुछ भी न होगा - यही महामन्त्र है।

फिर बैठकर भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे है।

उनके लिए जलपान की तैयारी हो रही है। हाल के एक कोने में एक ब्राह्मभक्त पियानो बजा रहे है। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नवदन हो बालक की तरह पियानो के पास खड़े होकर देख रहे है। थोडी देर बाद उन्हें अन्त पुर में ले जाया गया, – यहाँ वे जलपान करेंगे और महिलाएँ उन्हें प्रणाम करेंगी।

श्रीरामकृष्ण का जलपान समाप्त हुआ। अब वे गाडी में बैठे। ब्राह्मभक्तगण सभी गाडी के पास खड़े है। कमलकुटीर से गाडी दक्षिणेश्वर की ओर चली।

परिच्छेद ७

श्रीरामकृष्ण तथा ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(१)

श्री विद्यासागर का मकान

आज शनिवार है, श्रावण कृष्णा षष्ठी, ५ अगस्त १८८२ ई.। दिन के चार बजे होंगे।

श्रीरामकृष्ण किराये की गाड़ी पर कलकत्ते के रास्ते बादुड़बागान की तरफ जा रहे हैं। भवनाथ, हाजरा और मास्टर साथ में है। आप पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के घर जाएँगे।

श्रीरामकृष्ण की जन्मभूमि जिला हुगली के अन्तर्गत कामारपुकुर गाँव है, जो पण्डित विद्यासागर की जन्मभूमि वीरसिह गाँव के पास है। श्रीरामकृष्णदेव बाल्यकाल से ही विद्यासागर की दया की चर्चा सुनते आए हैं। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में प्राय: उनके पाण्डित्य और दया की बातें सुना करते हैं। यह सुनकर कि मास्टर विद्यासागर के स्कूल में पढ़ाते हैं, आपने उनसे पूछा, "क्या मुझे विद्यासागर के पास ले चलोगे? मुझे उन्हें देखने की बड़ी इच्छा होती है।" मास्टर ने जब विद्यासागर से यह बात कही तो उन्होंने हर्ष के साथ किसी शनिवार को चार बजे उन्हे साथ लाने को कहा। केवल यही पूछा – "कैसे परमहंस हैं? क्या वे गेरुए कपड़े पहनते हैं?" मास्टर ने कहा – "जी नहीं, वे एक अद्भुत पुरुष हैं; लाल किनारीदार धोती पहनते हैं, कुरता पहनते हैं, पालिश किए हुए स्लीपर पहनते हैं, रानी रासमणि के कालीमन्दिर की एक कोठरी में रहते हैं, जिसमें एक तखत है और उस पर बिस्तर और मच्छरदानी, उस बिस्तर पर लेटते हैं। कोई बाहरी भेष तो नहीं है, पर सिवाय ईश्वर के और कुछ नहीं जानते, अहर्निश उन्हीं का चिन्तन किया करते हैं। "

गाड़ी दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर से चलकर श्यामबाजार होते हुए अब अमहर्स्ट स्ट्रीट में आयी है। भक्त लोग कह रहे हैं कि अब बादुड़बागान के पास आयी है। श्रीरामकृष्ण बालक की भाँति आनन्द से बातचीत करते हुए आ रहे हैं। अमहर्स्ट स्ट्रीट में आकर एकाएक उनका भावान्तर हुआ – मानो ईश्वरावेश होना चाहता है।

गाड़ी राममोहन राय के बाग की बगल से आ रही है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण का भावान्तर नही देखा, झट कह दिया – 'यह राममोहन राय का बाग है।' श्रीरामकृष्ण नाराज हुए, कहा, 'अब ये बाते अच्छी नही लगती।' आप भावाविष्ट हो रहे है।

विद्यासागर के मकान के सामने गाड़ी खड़ी हुई। मकान दुमंजिला है, साहबी ढंग से सजा हुआ है। मकान के चारो ओर खुली जगह है जो दीवार से घिरी हुई है। मकान के पश्चिम की ओर फाटक है। ऑगन मे बीच बीच मे पुष्पवृक्ष लगे हुए है। नीचे पश्चिमवाले कमरे मे ऊपर चढ़ने के लिए जीना है। विद्यासागर ऊपर रहते है। जीने से चढ़कर ऊपर जाते ही उत्तर की ओर एक कमरा है, उसके पूर्व की ओर एक हाल है। हॉल के दक्षिण-पूर्ववाले कमरे मे विद्यासागर सोया करते है। दक्षिण की ओर और एक कमरा है। ये सारे कमरे कीमती पुस्तको से भरे है। पुस्तको पर सुन्दर जिल्द लगवाकर उन्हे अच्छी तरह सजाकर रखा गया है। हॉल के पूर्व की ओर मेज और कुर्सी है। यही बैठकर विद्यासागर काम किया करते है। जो लोग उनसे मिलने आते है वे मेज के तीनो ओर रखी हुई कुर्सियो पर बैठा करते है। मेज पर कागज, कलम, स्याही आदि लिखने की वस्तुएँ, बहुतसी चिट्ठियाँ, और कुछ पुस्तके रखी हुई है। इस मेज के दक्षिण दिशा के कमरे मे एक छोटा बिछौना है। यहीपर आप शयन करते है।

मेज पर जो चिट्ठियाँ रखी हुई है उनमे क्या लिखा है? शायद किसी विधवा ने लिखा है, 'मेरा नाबालिग बच्चा अनाथ है, उसकी ओर देखनेवाला कोई नही, आप ही को उसकी ओर देखना होगा।' किसी ने लिखा है, 'आप कही चले गए थे, इसलिए हमे इस माह का पैसा समय पर नही मिला, बड़ी तकलीफ हुई।' किसी गरीब छात्र ने लिखा है, 'आपके स्कूल मे निःशुल्क भरती तो हो गया हूँ, पर मुझमे पुस्तके खरीदने की भी सामर्थ्य नही है।' किसी ने लिखा है, 'मेरे परिवार के लोगो को खाने को नही मिल रहा है – मुझे एक नौकरी लगवा देनी होगी।' उनके स्कूल के किसी शिक्षक ने लिखा है, 'मेरी बहन विधवा हो गयी है, उसका सारा भार मुझ पर आ पड़ा है, इतनी तनख्वाह मे मेरा गुजर नही हो पाएगा।' शायद किसी ने विलायत से पत्र लिखा है, 'मै यहाँ विपत्ति मे पड़ा हूँ; आप दीनबन्धु है, कुछ मदद भेजकर इस संकट से मेरी रक्षा करे।' किसी ने लिखा है, 'अमुक तारीख को हमारे फैसले का दिन निश्चित हुआ है, उस दिन आप आकर हमारा झगड़ा मिटा दे।'

श्रीरामकृष्णदेव गाड़ी से उतरे। मास्टर राह बताते हुए आपको मकान के भीतर ले जा रहे है। ऑगन मे फूलो के पेड़ है। उनके बीच मे से जाते हुए श्रीरामकृष्ण बालक की तरह बटन मे हाथ लगाकर मास्टर से पूछ रहे है, "कुरते के बटन खुले हुए हैं – इसमे कुछ हानि तो न होगी?" बदन पर एक सूती कुरता है और लाल किनारे की धोती पहने हुए है, जिसका एक छोर कन्धे पर पड़ा हुआ है। पैरो मे स्लीपर है। मास्टर ने कहा –

"आप इस सब के लिए चिन्ता न कीजिये, आपकी कहीं कुछ त्रुटि न होगी। आपको बटन नहीं लगाना पड़ेगा।" समझाने पर लड़का जैसे शान्त हो जाता है, आप भी वैसे शान्त हो गए।

विद्यासागर

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ जीने से चढ़कर पहले कमरे में (जो उत्तर की तरफ था) गए। कमरे में उत्तरी हिस्से में विद्यासागर दक्षिणाभिमुख बैठे हैं। सामने एक चौकोर लम्बी चिकनी मेज है। इसी के पास एक बेंच है। मेज के आसपास कुछ कुर्सियाँ हैं। विद्यासागर दो एक मित्रों से बातचीत कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण के प्रवेश करते ही विद्यासागर ने खड़े होकर उनका स्वागत किया। श्रीरामकृष्ण मेज के पूर्व की ओर खड़े हैं – बायाँ हाथ मेज पर है; पीछे वह बेंच है। विद्यासागर को पूर्वपरिचित की भाँति एकटक देखते हैं और भावावेश में हँसते हैं।

विद्यासागर की उम्र तिरसठ के लगभग होगी। श्रीरामकृष्ण से वे सोलह-सत्रह वर्ष बड़े होंगे। मोटी धोती पहने हुए हैं, पैरो में स्लीपर, और बदन में एक आधी आस्तीन का फलालैन का कुरता। सिर का निचला हिस्सा चारो तरफ उड़िया लोगों की तरह मुँड़ा हुआ है। बोलने के ममय उज्ज्वल दाँत नजर आते हैं – सभी दाँत नकली हैं। सिर खूब बड़ा है, ललाट ऊँचा है और कद कुछ छोटा। ब्राह्मण है, इसलिए गले में जनेऊ है।

विद्यासागर में अनेक गुण हैं। पहला गुण – विद्यानुराग। एक दिन मास्टर से यह कहते हुए सचमुच ही रो पड़े थे कि मेरी तो तीव्र इच्छा थी कि खूब विद्या-अध्ययन करूँ, पर कुछ न हो सका; संसार मे पड़ जाने के कारण बिलकुल समय नहीं मिला। दुसरा गुण – सर्व जीवों पर दया। विद्यासागर दया के सागर हैं। बछड़ों को माँ का दूध नहीं मिलता यह देखकर दूध पीना छोड़ ही दिया था; आखिर कई साल बाद स्वास्थ्य बहुत अधिक बिगड़ जाने के कारण फिर दूध शुरू करना पड़ा था। गाड़ी में नहीं चढ़ते थे – घोड़ा बेचारा अपना कष्ट जता नहीं सकता, चुपचाप सहता जाता है। एक दिन आपने देखा, एक बोझ ढोनेवाले हम्माल को हैजा हो गया है, वह रास्ते पर पड़ा हुआ है, पास ही उसकी टोकरी पड़ी है। देखते ही आप स्वयं उसे उठाकर अपने घर ले आए और उसकी सेवाशुश्रूषा करने लगे। तीसरा गुण – स्वाधीनताप्रीति। अधिकारियों के साथ एकमत न होने के कारण संस्कृत कालेज के प्रधानाध्यापक (प्रिन्सिपल) का पद छोड़ दिया। चौथा गुण – लोगों की निन्दास्तुति की परवाह नहीं थी। एक शिक्षक पर आपका स्नेह था, उनकी बेटी के विवाह के समय बगल में उसे उपहार देने के लिए नया वस्त्र दाबकर आ खड़े हुए। पाँचवाँ गुण – मातृभक्ति तथा मानसिक बल। माँ ने कहा था, 'ईश्वर, तुम यदि इस विवाह में (भाई के विवाह में) नहीं आओगे तो मेरे मन में बड़ा दुख होगा।' इसलिए कलकत्ते से पैदल

ही निकल पडे। राह मे दामोदर नदी थी। नाव नही थी, – तैरकर ही उस पार चले गए। विवाह की रात्रि को गीले कपड़ो मे माँ के सामने जा पहुँचे, कहा, 'माँ, मै आ गया।'

विद्यासागर के साथ श्रीरामकृष्ण का वार्तालाप

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे है और थोड़ी देर के लिए उसी दशा मे खड़े है। भाव सम्हालने के लिए बीच बीच मे कहते है कि पानी पीऊँगा। इस बीच मे घर के लड़के और आत्मीय बन्धु भी आकर खडे हो गए।

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर बेंच पर बैठते है। एक सत्रह–अठारह वर्ष का लडका उस पर बैठा है - विद्यासागर के पास सहायता माँगने आया है। श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट है ऋषि की अन्तर्दृष्टि लडके के सब मनोभाव ताड़ गयी। आप कुछ सरककर बैठे और भावावेश मे कहने लगे, "माँ इस लड़के की संसार मे बड़ी आसक्ति है और तुम्हारे अविद्या के संसार पर। यह अविद्या का लड़का है।"

जो ब्रह्मविद्या के लिए व्याकुल नही है, केवल अर्थकरी विद्या का उपार्जन करना उसके लिए व्यर्थ है कदाचित् आप यही कह रहे है।

विद्यासागर ने व्यग्र होकर किसी से पानी लाने को कहा और मास्टर से पूछा, "कुछ मिठाई लाऊँ, क्या ये खायँगे?" मास्टर ने कहा, "जी हा, ले आइये।" विद्यासागर जल्दी से भीतर जाकर कुछ मिठाइयाँ ले आए और कहा कि ये बर्दवान से आयी है। श्रीरामकृष्ण को कुछ खाने को दी गयी, हाजरा और भवनाथ ने भी कुछ पायी। जब मास्टर की बारी आयी तो विद्यासागर ने कहा, "वह तो घर ही का लड़का है, उसके लिए चिन्ता नही।" श्रीरामकृष्ण एक भक्त लड़के के बारे मे विद्यासागर से कह रहे है, जो सामने ही बैठा था। आपने कहा, "यह लडका बड़ा अच्छा है, और इसके भीतर सार है, जैसे फल्गु नदी; ऊपर तो रेत है, पर थोड़ा खोदने से ही भीतर पानी बहता दिखायी देता है।"

मिठाई पा चुकने के बाद आप हँसते हुए विद्यासागर से बातचीत कर रहे है। देखते ही देखते कमरा दर्शको से भर गया, कोई बैठा है, कोई खड़ा है।

श्रीरामकृष्ण - आज सागर मे आ मिला। इतने दिन खाई, सोता और अधिक से अधिक हुआ तो नदी देखी, पर अब सागर देख रहा हूँ। (सब हँसते है।)

विद्यासागर – तो थोड़ा खारा पानी लेते जाइये। (हास्य)

श्रीरामकृष्ण – नही जी, खारा पानी क्यो? तुम तो अविद्या के सागर नही, विद्या के सागर हो! (सब हँसे।) तुम क्षीरसमुद्र हो! (सब हँसे।)

विद्यासागर – आप जो चाहे कह सकते हैं।

सात्त्विक कर्म। दया और सिद्धपुरुष

विद्यासागर चुप रहे। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे –

"तुम्हारा कर्म सात्त्विक कर्म है। यह सत्त्व का रजस् है। सत्त्वगुण से दया होती है। दया से जो कर्म किया जाता है, वह है तो राजसिक कर्म सही, पर यह रजोगुण सत्त्व का रजोगुण है, इसमें दोष नहीं है। शुकदेव आदि ने लोकशिक्षा के लिए दया रख ली थी – ईश्वर के विषय में शिक्षा देने के लिए। तुम विद्यादान और अन्नदान कर रहे हो – यह भी अच्छा है। निष्काम रीति से कर सको तो इससे ईश्वर-लाभ होगा। कोई करता है नाम के लिए, कोई पुण्य के लिए – उनका कर्म निष्काम नहीं।

"फिर सिद्ध तो तुम हो ही।"

विद्यासागर – महाराज, यह कैसे?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – आलू-परवल सिद्ध होने से (पक जाने से) नरम हो जाते है – सो तुम भी बहुत नर्म हो। तुम्हारी ऐसी दया! (हास्य)

विद्यासागर (सहास्य) – पीसा उरद तो सिद्ध होने पर सख्त हो जाता है। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण – तुम वैसे क्यो होने लगे? खाली पण्डित कैसे हैं – मानो एक पके फल का अंश जो अन्त तक कठिन ही रह जाता है। वे न इधर के हैं न उधर के। गीध खूब ऊँचा उड़ता है, पर उसकी नजर हड़ावर पर ही रहती है। जो खाली पण्डित हैं, वे सुनने के ही हैं, पर उनकी कामिनी-कांचन पर आसक्ति होती है – गीध की तरह वे सड़ी लाशे ढूँढ़ते है। आसक्ति का घर अविद्या के संसार मे है। दया, भक्ति, वैराग्य – ये विद्या के ऐश्वर्य हैं।

विद्यासागर चुपचाप सुन रहे है। सभी टकटकी बाँधे इस आनन्दमय पुरुष को देख रहे हैं, उनका वचनामृत पान कर रहे है।

(३)

श्रीरामकृष्ण : ज्ञानयोग अथवा वेदान्त-विचार

विद्यासागर बड़े विद्वान् है। जब संस्कृत कालेज मे पढ़ते थे तब अपनी श्रेणी के सब से अच्छे छात्र थे। हरएक परीक्षा में प्रथम होते और स्वर्णपदक आदि अथवा छात्रवृत्तियाँ पाते थे। होते होते वे संस्कृत कालेज के प्रधान अध्यापक तक हुए थे। संस्कृत व्याकरण तथा काव्य में उन्होंने विशेष ज्ञान प्राप्त किया था। स्वयं के प्रयत्न से अंग्रेजी सीखी थी।

विद्यासागर किसी को धर्मशिक्षा नहीं देते थे। वे दर्शनादि ग्रन्थ पढ़ चुके थे। मास्टर ने एक दिन उनसे पूछा, "आपको हिन्दू दर्शन कैसे लगते हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "मुझे यही मालूम होता है कि वे जो चीज समझाने गए उसे समझा न सके।" वे हिन्दुओं की भाँति श्राद्धादि सब धर्मानुष्ठान करते थे, गले में जनेऊ धारण करते थे, अपनी भाषा में जो पत्र लिखते थे, उनमें सब से पहले "श्रीश्रीहरिः शरणम्" यह ईश्वरवन्दनात्मक

वाक्य लिखते थे।

मास्टर ने और एक दिन उनको ईश्वर के विषय मे यह कहते सुना, "ईश्वर को कोई जान तो सकता नही। फिर करना क्या चाहिए? मेरी समझ मे, हम लोगो को ऐसा होना चाहिए कि यदि सब कोई वैसे हो तो यह पृथ्वी स्वर्ग बन जाय। हरएक को ऐसी चेष्टा करनी चाहिए कि जिससे जगत् का भला हो।"

विद्या और अविद्या की चर्चा करते हुए श्रीरामकृष्ण ब्रह्मज्ञान की बात कह रहे है। विद्यासागर बड़े पण्डित है – शायद षड्दर्शन पढ़कर उन्होने देखा है कि ईश्वर के विषय मे कुछ भी जानना सम्भव नही।

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्म विद्या और अविद्या दोनो के परे है, वह मायातीत है।

ब्रह्म निर्लिप्त है – दुःखादि का सम्बन्ध जीव से ही है।

"इस जगत् मे विद्यामाया और अविद्यामाया दोनो है, ज्ञानभक्ति भी है, और साथ ही कामिनी-काचन भी है, सत् भी है और असत् भी, भला भी है और बुरा भी, परन्तु ब्रह्म निर्लिप्त है। भला-बुरा जीवो के लिए है, सत् असत् जीवो के लिए। वह ब्रह्म को स्पर्श नही कर सकता।

"जैसे, दीप के सामने कोई भागवत पढ रहा है और कोई जाल रच रहा है, पर दीप निर्लिप्त है।

सूर्य शिष्ट पर भी प्रकाश डालता है और दुष्ट पर भी।

"यदि कहो कि दु ख, पाप अशान्ति ये सब फिर क्या है, – तो उसका जवाब यह है कि वे सब जीवो के लिए है, ब्रह्म निर्लिप्त है। साँप मे विष है, औरो को डसने से वे मर जाते है, पर साँप को उससे कोई हानि नही होती।"

ब्रह्म अनिर्वचनीय, 'अव्यपदेश्यम्' है।

'ब्रह्म क्या है सो मुह से नही कहा जा सकता। सभी चीजे जूठी हो गयी है, वेद, पुराण, तन्त्र, षड्दर्शन सब जूठे हो गये है। मुँह से पढ़े गए है, मुँह से उच्चारित हुए है – इसी से जूठे हो गए। पर केवल एक वस्तु जूठी नही हुई है – वह वस्तु ब्रह्म है। ब्रह्म क्या है यह आज तक कोई मुँह से नही कह सका।"

विद्यासागर (मित्रो से) – वाह! यह तो बड़ी सुन्दर बात हुई! आज मैने एक नयी बात सीखी।

श्रीरामकृष्ण – एक पिता के दो लड़के थे। ब्रह्मविद्या सीखने के लिए पिता ने लड़को को आचार्य को सौपा। कुछ वर्ष बाद वे गुरुगृह से लौटे, आकर पिता को प्रणाम किया। पिता की इच्छा हुई कि देखे इन्हे कैसा ब्रह्मज्ञान हुआ। बड़े बेटे से उन्होने पूछा, 'बेटा, तुमने तो सब कुछ पढ़ा है, अब बताओ ब्रह्म कैसा है।' बड़ा लड़का वेदो से बहुत

से श्लोकों की आवृत्ति करते हुए ब्रह्म का स्वरूप समझाने लगा; पिता चुप रहे। जब उन्होंने छोटे लड़के से पूछा तो वह सिर झुकाए चुप रहा, मुँह से बात न निकली; तब पिता ने प्रसन्न होकर छोटे लड़के से कहा, 'बेटा, तुम्हीं ने कुछ समझा है। ब्रह्म क्या है यह मुँह से नहीं कहा जा सकता।'

"मनुष्य सोचता है कि हम ईश्वर को जान गए। एक चीटी चीनी के पहाड़ के पास गयी थी। एक दाना खाकर उसका पेट भर गया, एक दूसरा दाना मुँह मे लिए अपने डेरे को जाने लगी, जाते समय सोच रही है कि अब की बार आकर समूचे पहाड़ को ले जाऊँगी। क्षुद्र जीव यही सब सोचते है – वे नही जानते कि ब्रह्म वाक्य-मन के अतीत है।

"कोई भी हो – वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, ईश्वर को जान थोड़े ही सकता है। शुकदेव आदि मानो बड़े चींटे हैं – चीनी के आठ-दस दाने मुँह मे ले लें – और क्या?

ब्रह्म सच्चिदानन्दस्वरूप है

"वेद-पुराणो मे जो ब्रह्म के विषय में कहा गया है, वह किस ढंग का कथन हैं सो सुनो। एक आदमी के समुद्र देखकर लौटने पर यदि कोई उससे पूछे कि समुद्र कैसा देखा, तो वह जैसे मुँह बाये कहता है, 'आह! क्या देखा! कैसी लहरें! कैसी आवाज!' बस, ब्रह्म का वर्णन भी वैसा ही है। वेदों में लिखा है – वह आनन्दस्वरूप है – सच्चिदानन्द। शुकदेव आदि ने यह ब्रह्मसागर किनारे पर खड़े होकर देखा और छुआ था। किसी के मतानुसार वे इस सागर मे उतरे नहीं। इस सागर में उतरने से फिर कोई लौट नही सकता।

निर्विकल्प समाधि तथा ब्रह्मज्ञान

"समाधिस्थ होने से ब्रह्मज्ञान होता है – ब्रह्मदर्शन होता है – उस दशा मे विचार बिलकुल बन्द हो जाता है, आदमी चुप हो जाता है। ब्रह्म कैसी वस्तु है, यह मुँह से बताने की सामर्थ्य नहीं रहती।

"एक नमक का पुतला समुद्र नापने गया! (सब हँसे।) पानी कितना गहरा है, उसकी खबर देना चाहता था! पर खबर देना उसे नसीब न हुआ। वह पानी में उतरा कि गल गया! बस फिर खबर कौन दे!"

किसी ने प्रश्न किया, "क्या समाधिस्थ पुरुष जिनको ब्रह्मज्ञान हुआ है, फिर बोलते नहीं?"

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर आदि से) – लोकशिक्षा के लिए शंकराचार्य ने विद्या का 'अहं' रखा था। ब्रह्मदर्शन होने से मनुष्य चुप हो जाता है। जब तक दर्शन न हो, तभी तक विचार होता है। घी जब तक पक न जाय, तभी तक आवाज करता है। पके घी से शब्द नहीं निकलता। पर पके घी में कच्ची पूरी छोड़ी जाती है, तो फिर एक बार वैसा ही शब्द

निकलता है। जब कच्ची पूरी को पका डाला, तब वह फिर चुप हो जाता है। वैसे ही समाधिस्थ पुरुष लोकशिक्षण के लिए फिर नीचे उतरता है, फिर बोलता है।

"जब तक मधुमक्खी फूल पर नही बैठती, तब तक भनभनाती रहती है। फूल पर बैठकर मधु पीना शुरू करने के बाद वह चुप हो जाती है। हाँ, मधुपान के उपरान्त मस्त होकर फिर कभी कभी भनभनाती है।

"तालाब में घड़ा भरते समय भक भक आवाज होती है। घड़ा भर जाने के बाद फिर आवाज नही होती। (सब हँसे।) हाँ, यदि एक घड़े में पानी दूसरे में डाला जाय तो फिर शब्द होता है। (हास्य)

(४)

ज्ञान एवं विज्ञान। अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद तथा द्वैतवाद का समन्वय

श्रीरामकृष्ण — ऋषियों को ब्रह्मज्ञान हुआ था। विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते यह ब्रह्मज्ञान नही होता। ऋषि लोग कितना परिश्रम करते थे। सबेरे आश्रम से चले जाते थे। दिनभर अकेले ध्यान-चिंतन करते और रात को आश्रम में लौटकर कुछ फलमूल खाते थे। देखना, सुनना, छूना इन सब विषयों से मन को अलग रखते थे, तब कही उन्हे ब्रह्म का बोध होता था।

"कलियुग में लोगों के प्राण अन्न पर निर्भर है, देहात्मबुद्धि जाती नही। इस दशा में 'सोऽहम्' — मैं ब्रह्म हूं - कहना अच्छा नही। सभी काम किए जाते हैं, फिर 'मैं ही ब्रह्म हूँ' यह कहना ठीक नही। जो विषय का त्याग नही कर सकते, जिनका अहंभाव किसी तरह जाता नही, उनके लिए 'मैं दास हूँ', 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा है। भक्तिपथ में रहने से भी ईश्वर का लाभ होता है।

'ज्ञानी 'नेति नेति' - ब्रह्म यह नही, वह नही, अर्थात् कोई भी ससीम वस्तु नही — यह विचार करके सब विषयबुद्धि छोड़े तब ब्रह्म को जान सकता है। जैसे कोई जीने की एक एक सीढ़ी पार करते हुए छत पर पहुँच सकता है। पर विज्ञानी - जिसने विशेष रूप से ईश्वर से मेल-मिलाप किया है — और भी कुछ दर्शन करता है वह देखता है कि जिन चीजों से छत बनी है - उन ईंटों, चूने, सुर्खी से जीना भी बना है। 'नेति नेति' करके जिस ब्रह्मवस्तु का ज्ञान होता है, वही जीव और जगत् होती है। विज्ञानी देखता है कि जो निर्गुण है, वही सगुण भी है।

"छत पर बहुत देर तक लोग ठहर नही सकते फिर उतर आते हैं। जिन्होंने समाधिस्थ होकर ब्रह्मदर्शन किया है वे भी नीचे उतरकर देखते है कि वही जीव-जगत् हुआ है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि। 'नि' में — चरमभूमि में — बहुत देर तक रहा नही

जाता। 'अहं' नही मिटता; तब मनुष्य देखता है कि ब्रह्म ही 'मै', जीव, जगत – सब कुछ हुआ है। इसी का नाम विज्ञान है।

"ज्ञानी की राह भी राह है, ज्ञान-भक्ति की राह भी राह है, फिर भक्ति की भी राह एक राह है। ज्ञानयोग भी सत्य है, और भक्तिपथ भी सत्य है सभी रास्ते से ईश्वर के समीप जाया जा सकता है। ईश्वर जब तक जीवों में 'मै' बोध रखता है, तब तक भक्तिपथ ही सरल है।

"विज्ञानी देखता है कि ब्रह्म अटल, निष्क्रिय, सुमेरुवत् है। यह संसार उसके सत्त्व, रज और तम – इन तीन गुणो से बना है, पर वह निर्लिप्त है।

"विज्ञानी देखता है कि जो ब्रह्म है वही भगवान् है, – जो गुणातीत है वही षडैश्वर्यपूर्ण भगवान् है। ये जीव और जगत्, मन और बुद्धि, भक्ति, वैराग्य और ज्ञान – सब उसके ऐश्वर्य है। (सहास्य) जिस बाबू के घरद्वार नही है – या तो बिक गया – वह बाबू कैसा! (सब हँसे।) ईश्वर षडैश्वर्यपूर्ण है। यदि उसके ऐश्वर्य न होता तो कौन उसकी परवाह करता? (सब हँसे।)

विभु के रूप में एक – किन्तु शक्तिविशेष

"देखो न, यह जगत् कैसा विचित्र है! कितने प्रकार की वस्तुएँ – चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र – कितने प्रकार के जीव इसमें हैं! बड़ा-छोटा, अच्छा-बुरा, किसी मे शक्ति अधिक है, किसी मे कम।"

विद्यासागर – क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है और किसी को कम?

श्रीरामकृष्ण – वह विभु के रूप मे सब प्राणियो मे है – चीटियो तक मे है। पर शक्ति का तारतम्य होता है, नही तो क्यो कोई दस आदमियो को हरा देता है, और कोई एक ही आदमी से भागता है? और ऐसा न हो तो भला तुम्हे ही सब कोई क्यो मानते है? क्या तुम्हारे दो सीग निकले है? (हास्य।) औरो की अपेक्षा तुममे अधिक दया है, विद्या है, इसीलिए तुमको लोग मानते है और देखने आते है। क्या तुम यह बात नही मानते हो?

विद्यासागर मुसकराते है।

केवल पाण्डित्य, पुस्तकी विद्या असार है – भक्ति ही सार है।

श्रीरामकृष्ण – केवल पण्डिताई में कुछ नही है। लोग किताबें इसलिए पढ़ते हैं कि वे ईश्वरलाभ में सहायता करेगी – उनसे ईश्वर का पता लगेगा। 'आपकी पोथी में क्या है?' – किसी ने एक साधु से पूछा। साधु ने उसे खोलकर दिखाया। हरएक पन्ने मे 'ॐ रामः' लिखा था, और कुछ नही।

"गीता का अर्थ क्या है? उसे दस बार कहने से जो होता है वही। दस बार 'गीता' 'गीता' कहने से 'त्यागी' 'त्यागी' निकल आता है। गीता यह शिक्षा दे रही है कि हे जीव,

तू सब छोड़कर ईश्वर-लाभ की चेष्टा कर। कोई साधु हो चाहे गृहस्थ, मन से सारी आसक्ति दूर करनी चाहिए।

"जब चैतन्यदेव दक्षिण मे तीर्थ-भ्रमण कर रहे थे तो उन्होने देखा कि एक आदमी गीता पढ़ रहा है। एक दूसरा आदमी थोड़ी दूर बैठ उसे सुन रहा है और सुनकर रो रहा है – आँखो से आँसू बह रहे है। चैतन्यदेव ने पूछा, 'क्या तुम यह सब समझ रहे हो?' उसने कहा, 'प्रभु, इन श्लोको का अर्थ तो मै नही समझता हूँ।' उन्होने पूछा, 'तो रोते क्यो हो?' भक्त ने जवाब दिया, मै देखता हूं कि अर्जुन का रथ है और उसके सामने भगवान् और अर्जुन बातचीत कर रहे है। बस, यही देखकर मै रो रहा हूँ।' "

(५)

भक्तियोग का रहस्य

श्रीरामकृष्ण – विज्ञानी क्यो भक्ति लिए रहते है? इसका उत्तर यह है कि 'मै' नही दूर होता। समाधि-अवस्था मे दूर तो होता है, परन्तु फिर आ जाता है। साधारण जीवो का 'अहम्' नही जाता। पीपल का पेड काट डालो, फिर उसके दूसरे दिन अंकुर निकल आता है। (सब हँसे।)

"ज्ञानलाभ के बाद भी, न जाने कहाँ से 'मै' फिर आ जाता है। स्वप्न मे तुमने बाघ देखा, उसके बाद जागे, तो भी तुम्हारी छाती धडकती है। जीवो को जो दुःख होता है, 'मै' से ही होता है। बैल 'हम्बा, हम्बा' (हम, हम) करता है, इसी से तो इतनी यातना मिलती है। हल मे जोता जाता है, वर्षा और धूप सहनी पडती है और फिर कसाई लोग काटते है, चमडे से जूते बनते है, ढोल बनता है, – तब खूब पिटता है। (हास्य)

"फिर भी निस्तार नही। अन्त मे आँतो से ताँत बनती है और उसे धुनिया अपने धनुहे मे लगाता है। तब वह 'मै' नही कहता, तब कहता है 'तू-ऊँ, तू-ऊँ' (अर्थात् तुम, तुम)। जब 'तुम' 'तुम' कहता है तब निस्तार होता है। हे ईश्वर! मै दास हूँ, तुम प्रभु हो, मै सन्तान हूँ, तुम माँ हो।

"राम ने पूछा, हनुमान, तुम मुझे किस भाव से देखते हो? हनुमान ने कहा, राम! जब मुझे 'मै' का बोध रहता है, तब देखता हूँ, तुम पूर्ण हो, मै अंश हूँ, तुम प्रभु हो, मै दास हूँ; और राम! जब तत्त्वज्ञान होता है तब देखता हूँ, तुम्ही 'मै' हो और मै ही 'तुम' हूँ।

"सेव्य-सेवक भाव ही अच्छा है। 'मै' जब कि हटने का ही नही तो बना रहने दो साले को 'दास मै'।

'मैं' और 'मेरा' अज्ञान है

"मैं और मेरा – ये दोनों अज्ञान हैं। यह भाव कि मेरा घर है, मेरे रुपये हैं, मेरी विद्या है, मेरा यह सब ऐश्वर्य है - अज्ञान से पैदा होता है और यह भाव ज्ञान से कि हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और ये सब तुम्हारी चीजें हैं – घर-परिवार, लड़के-बच्चे, स्वजनवर्ग, बन्धु बान्धव – ये सब तुम्हारी वस्तुएँ हैं।

"मृत्यु का सर्वदा स्मरण रखना चाहिए। मरने के बाद कुछ भी न रह जाएगा। यहाँ कुछ कर्म करने के लिए आना हुआ है। जैसे कि देहात में घर है, परन्तु काम करने के लिए कलकत्ता आया जाता है। यदि कोई दर्शक बगीचा देखने को आता है तो धनी मनुष्यों के बगीचे का कर्मचारी कहता है यह बगीचा हमारा है, यह तालाब हमारा है, परन्तु किसी कसूर पर जब वह नौकरी से अलग कर दिया जाता है, तब आम की लकड़ी के बने हुए सन्दूक को ले जाने का भी उसे अधिकार नहीं रह जाता, सन्दूक दरवान के हाथ भेज दिया जाता है। (हास्य)

"भगवान दो बातों पर हँसते हैं। एक तो जब वैद्य रोगी की माँ से कहता है - माँ, क्या भय है? मैं तुम्हारे लड़के को अच्छा कर दूँगा। उस समय भगवान यह सोचकर हँसते हैं कि मैं मार रहा हूँ और यह कहता है मैं बचाऊँगा। वैद्य सोचता है – मैं कर्ता हूँ। ईश्वर कर्ता है – यह वह भूल गया है। दूसरा अवसर वह होता है जब दो भाई रस्सी लेकर जमीन नापते हैं और कहते हैं – इधर की मेरी है, उधर की तुम्हारी। तब ईश्वर और एक बार हँसते हैं, यह सोचकर हँसते हैं कि जगत्-ब्रह्माण्ड मेरा है पर ये कहते हैं यह जगह मेरी है और वह तुम्हारी।"

उपाय – विश्वास और भक्ति

श्रीरामकृष्ण - उन्हें क्या कोई विचार द्वारा जान सकता है? दास होकर - शरणागत होकर उन्हें पुकारो।

(विद्यासागर के प्रति, हँसते हुए) – "अच्छा, तुम्हारा भाव क्या है?"

विद्यासागर मुसकरा रहे हैं। कहते हैं, "अच्छा, यह बात आपसे किसी दिन निर्जन में कहूँगा।" (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – उन्हें पाण्डित्य द्वारा विचार करके कोई जान नहीं सकता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गाने लगे। संगीत का मर्म है –

"कौन जानता है कि काली कैसी है? षड्दर्शनों ने उसका दर्शन नहीं पाया। मूलाधार और सहस्रार में योगी लोग सदा उसका ध्यान करते हैं। वह पद्मवन में हंस के साथ हंसी जैसे रमण करती है। वह आत्माराम की आत्मा है, प्रणव का प्रमाण है। वह इच्छामयी अपनी इच्छा के अनुसार घट घट में विराजमान है। माता के जिस उदर में यह ब्रह्माण्ड समाया हुआ है, समझो कि वह कितना बड़ा हो सकता है। काली का माहात्म्य

महाकाल ही जानते है। वैसा और कोई नही समझ सकता। उसको जानने का लोगो का प्रयास देखकर 'प्रसाद' हँसता है। अपार सागर क्या कोई तैरकर पार कर सकता है? यह मेरा मन समझ रहा है, परन्तु फिर भी जी नही मानता, वामन होकर चन्द्रमा की ओर हाथ बढाता है।'

"सुना? कहते है – माता के जिस उदर मे ब्रह्माण्ड समाया हुआ है समझो कि वह कितना बडा है' और यह भी कहा है कि षडदर्शनो ने उसका दर्शन नही पाया। पाण्डित्य द्वारा उसे प्राप्त करना असम्भव है।

विश्वास का बल – ईश्वर के प्रति विश्वास तथा महापातक

"विश्वास और भक्ति चाहिए। विश्वास कितना बलवान है सुना। किसी मनुष्य को लंका से समुद्र के पार जाना था। विभीषण ने कहा – इस वस्तु को कपडे के छोर मे बाँध लो तो बिना किसी बाधा के पार हो जाओगे, जल के ऊपर से चल कर जा सकोगे, परन्तु खोलकर न देखना, खोलकर देखोगे तो डूब जाओगे। वह मनुष्य आनन्दपूर्वक समुद्र के ऊपर से चला जा रहा था, विश्वास की ऐसी शक्ति है। कुछ रास्ता पार कर वह सोचने लगा कि विभीषण ने ऐसा क्या बाँध दिया, जिसके बल से मैं पानी के ऊपर से चला जा रहा हूँ। यह सोचकर उसने गाठ खोली और देखा तो एक पत्ते पर केवल 'रामनाम' लिखा था। तब वह मन ही मन कहने लगा – अरे, बस यही है। ज्योंही यह सोचा कि डूब गया।

"यह कहावत प्रसिद्ध है कि रामनाम पर हनुमान का इतना विश्वास था कि विश्वास ही के बल से वे समुद्र लाँघ गये, परन्तु स्वयं राम को सेतु बाँधना पड़ा था।

"यदि उन पर विश्वास हो तो चाहे पाप करे और चाहे महापातक ही करे, किन्तु किसी से भय नही होता।'

यह कहकर श्रीरामकृष्ण भक्त के भावो से मस्त होकर विश्वास का माहात्म्य गा रहे है –

(भावार्थ) – "दुर्गा दुर्गा अगर जपूँ मैं, जब मेरे निकलेगे प्राण।
देखूँ कैसे नही तारोगी कैसे हो करुणा की खान।।"

(६)

जीवन का उद्देश्य - ईश्वरप्रेम

"विश्वास और भक्ति। भक्ति से वे सहज ही मे मिलते है। वे भाव के विषय है।" यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण ने फिर भजन आरम्भ किया। भाव यह है –

' मन तू अँधेरे घर मे पागल जैसा उसकी खोज क्यो कर रहा है? वह तो भाव का

विषय है। बिना भाव के, अभाव द्वारा क्या कोई उसे पकड़ सकता है? पहले अपनी शक्ति द्वारा कामक्रोधादि को अपने वश में करो। उसका दर्शन न तो षड्दर्शनों ने पाया, न निगमागम-तन्त्रों ने। वह भक्तिरस का रसिक है, सदा आनन्दपूर्वक हृदय में विराजमान है। उस भक्तिभाव को पाने के लिए बड़े बड़े योगी युग-युगान्तर से योग कर रहे हैं। जब भाव का उदय होता है, तब भक्त को वह अपनी ओर खींच लेता है। जैसे लोहे को चुम्बक। 'प्रसाद' कहता है कि मैं मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा हूँ, उसके तत्त्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोड़ना होगा? मन, इशारे से ही समझ लो।"

श्रीरामकृष्ण समाधि में

गाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए, हाथों की अंजलि बँध गयी – देह उन्नत और स्थिर, – नेत्र स्पन्दहीन हो गए। पश्चिम की ओर मुँह किये उसी बेंच पर पैर लटकाए बैठे रहे। सभी लोग गर्दन ऊँची करके यह अद्भुत अवस्था देखने लगे। पण्डित विद्यासागर भी चुपचाप एकटक देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। लम्बी साँस छोड़कर फिर हँसते हुए बातें कर रहे हैं – "भाव भक्ति, इसके माने उन्हें प्यार करना। जो ब्रह्म हैं, उन्हीं को माँ कहकर पुकारते हैं।

" 'प्रसाद कहता है कि मैं मातृभाव से जिसकी खोज कर रहा हूँ उसके तत्त्व का भण्डा क्या मुझे चौराहे पर फोड़ना होगा? मन, इशारे ही से समझ लो।'

"रामप्रसाद मन को इशारे ही से समझने के लिए उपदेश करते हैं। यह समझने को कहते है कि वेदों ने जिन्हें ब्रह्म कहा है उन्हीं को मैं माँ कहकर पुकारता हूँ। जो निर्गुण हैं वे ही सगुण हैं; जो ब्रह्म हैं वे ही शक्ति है। जब यह बोध होता है कि वे निष्क्रिय हैं तब उन्हे ब्रह्म कहता हूँ और जब यह सोचता हूँ कि वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करते हैं, तब उन्हें आद्याशक्ति काली कहता हूँ।

"ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं, जैसे कि अग्नि और उसकी दाहिकाशक्ति। अग्नि कहते ही दाहिकाशक्ति का ज्ञान होता है और दाहिकाशक्ति कहने से अग्नि का ज्ञान। एक को मानिए तो दूसरा भी साथ मान लिया जाता है।

"उन्हीं को भक्तजन माँ कहकर पुकारते हैं। माँ बड़े प्यार की वस्तु है न। ईश्वर को प्यार करने से वे प्राप्त होते हैं; भाव, भक्ति, प्रीति और विश्वास चाहिए। एक गाना और सुनो –

भाव और विश्वास

(भावार्थ) – " 'चिन्तन करने से भाव का उदय होता है। जैसा भाव होगा, लाभ भी वैसा होगा, मूल है प्रत्यय। काली के चरण-सुधासागर में यदि चित्त डूब जाय तो पूजा-होम, याग-यज्ञ – कुछ भी आवश्यक नहीं।'

"चित्त को उन पर लगाना चाहिए, उन्हे प्यार करना चाहिए। वे सुधासागर है; अमृतसिन्धु है; इसमे डूबने से मनुष्य मरता नहीं, अमर हो जाता है। किसी किसी का यह विचार है कि ईश्वर को ज्यादा पु कारने से मस्तिष्क बिगड़ जाता है, पर बात ऐसी नहीं। यह तो सुधासमुद्र है, अमृतसिन्धु है। वेदो मे इसे अमृत कहा है। इसमे डूब जाने से कोई मरता नही, अमर हो जाता है।

निष्काम कर्म तथा जगत्कल्याण

"पूजा, होम, याग, यज्ञ – ये कुछ नही हैं। यदि ईश्वर पर प्रीति पैदा हो जाय तो इन कर्मो की अधिक आवश्यकता नही। जब तक हवा नही बहती तभी तक पंखे की जरूरत होता है। यदि दक्षिणी हवा आप ही आने लगे तो पंखा रख देना पड़ता है। फिर पंखे का क्या काम?

"तुम जो काम कर रहे हो, ये सब अच्छे कर्म है। यदि 'मै कर्ता हूँ' इस भाव को छोड़कर निष्काम भाव मे कर्म कर सको तो और भी अच्छा है। यह कर्म करने करते ईश्वर पर भक्ति और प्रीति होगी। इस प्रकार निष्काम कर्म करते जाओ तो ईश्वर-लाभ भी होगा।

"उन पर जितनी ही भक्ति-प्रीति होगी, उतने ही तुम्हारे काम घटते जाएँगे। गृहस्थ की बहू जब गर्भिणी होती है, तब उसकी सास उसका काम कम कर देती है। नौ महीने पूरे होने पर बिलकुल काम छूने नही देती। उसे डर रहता है कि कही बच्चे को कोई हानि न पहुँचे, सन्तान-प्रसव में कोई विपत्ति न हो। (हास्य) तुम जो काम कर रहे हो, उससे तुम्हारा ही उपकार है। निष्काम भाव से कर्म कर सकोगे तो चित्त की शुद्धि होगी, ईश्वर पर तुम्हारा प्रेम होगा। प्रेम होने ही तुम उन्हें प्राप्त कर लोगे। संसार का उपकार मनुष्य नहीं करता, वे ही करते है जिन्होंने चन्द्र-सूर्य की सृष्टि की, माता-पिता को स्नेह दिया, सत्पुरुषो मे दया का संचार किया और साधु-भक्तो को भक्ति दी। जो मनुष्य कामनाशून्य होकर कर्म करेगा वह अपना ही हित करेगा।

निष्काम कर्म का उद्देश्य – ईश्वरदर्शन

"भीतर सुवर्ण है, अभी तक तुम्हें पता नहीं चला। ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी है। यदि एक बार पता चल जाय तो अन्य काम घट जाएँगे। गृहस्थ की बहू के लड़का होने से वह लड़के ही को लिए रहती है, उसी को उठाती बैठाती है। फिर उसकी सास उसे घर के काम में हाथ नहीं लगाने देती। (सब हँसे)

"और भी 'आगे बढ़ो।' लकड़हारा लकड़ी काटने गया था; ब्रह्मचारी ने कहा – आगे बढ़ जाओ। उसने आगे बढ़कर देखा तो चन्दन के पेड़ थे! फिर कुछ दिन बाद उसने सोचा कि ब्रह्मचारी ने बढ़ जाने को कहा था, सिर्फ चन्दन के पेड़ तक तो जाने को कहा नहीं। आगे चलकर देखा तो चाँदी की खान थी।

फिर कुछ दिन बीतने पर और आगे बढ़ा और देखा तो सोने की खान मिली। फिर क्रमश: हीरे की – मणियों की। वह सब लेकर वह मालामाल हो गया।

"निष्काम कर्म कर सकने से ईश्वर पर प्रेम होता है। क्रमश: उनकी कृपा से उन्हें लोग पाते भी हैं। ईश्वर के दर्शन होते हैं, उनसे बातचीत होती है जैसे कि मैं तुमसे वार्तालाप कर रहा हूँ।" (सब नि:शब्द हैं।)

(७)

अहेतुक कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण

सब की जबान बन्द है। लोग चुपचाप बैठे ये बाते सुन रहे है। श्रीरामकृष्ण की जिह्वा पर मानो साक्षात् वाग्वादिनी बैठी हुई जीवो के हित के लिए विद्यासागर से बाते कर रही है। रात हो रही है - नौ बजने को है। श्रीरामकृष्ण अब चलनेवाले है।

श्रीरामकृष्ण (विद्यासागर से, सहास्य) – यह सब जो कहा, वह तो ऐसे ही कहा। आप सब जानते है, किन्तु अभी आपको इसकी खबर नही। (सब हँसे।) वरुण के भण्डार मे कितने ही रत्न पड़े है, परन्तु वरुण महाराज को कोई खबर नही।

विद्यासागर (हँसते हुए) - यह आप कह सकते है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ जी, अनेक बाबू नौकरो के नाम तक नही जानते! (सब हँसते है।) घर मे कहाँ कौनसी कीमती चीज पड़ी है, वे नही जानते।

वार्तालाप सुनकर लोग आनन्दित हो रहे है। थोड़ी देर के लिए सब लोग शांत हो गए। श्रीरामकृष्ण विद्यासागर से फिर प्रसंग उठाते है।

श्रीरामकृष्ण (हँसमुख) – एक बार बगीचा देखने जाइए, रासमणि का बगीचा बड़ी अच्छी जगह है।

विद्यासागर – जरूर जाऊँगा। आप आए और मै न जाऊँगा?

श्रीरामकृष्ण – मेरे पास? राम राम

विद्यासागर – यह क्या! ऐसी बात आपने क्यो कही? मुझे समझाइए।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हम लोग छोटी छोटी किश्तियाँ है जो खाई, नाले और बड़ी नदियो मे भी जा सकती हैं। परन्तु आप हैं जहाज; कौन जानता है, जाते समय रेत मे लग जाय! (सब हँसते हैं।)

विद्यासागर प्रफुल्लमुख किन्तु चुपचाप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।

श्रीरामकृष्ण – पर हाँ, इस समय जहाज भी जा सकता है।

विद्यासागर – (हँसते हुए) – हाँ, ठीक है, यह वर्षाकाल है। (लोग हँसे।)

मास्टर (स्वगत) – नवानुराग की वर्षा, नवानुराग जब होता है, तब मान-अपमान का बोध क्या रह सकता है।

श्रीरामकृष्ण उठे। भक्तजन भी उठे। विद्यासागर आत्मीयों के साथ खड़े हैं, श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ाने जाएँगे।

श्रीरामकृष्ण अब भी खड़े हैं। करजाप कर रहे हैं। जपते हुए भाव के आवेश में आ गए, मानो विद्यासागर के आत्मिक हित के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हों।

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण उतर रहे हैं। एक भक्त हाथ पकड़े हुए हैं। विद्यासागर स्वजन-बन्धुओं के साथ आगे आगे जा रहे हैं, हाथ में बत्ती लिए रास्ता दिखाते हुए। सावन की कृष्णपक्ष की षष्ठी है, अभी चन्द्रोदय नहीं हुआ है। अँधेरे से ढकी हुई उद्यान-भूमि को बत्ती के मन्द प्रकाश के सहारे किसी तरह पार कर लोग फाटक की ओर आ रहे हैं।

भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण फाटक के पास ज्योंही पहुँचे त्योंही एक सुन्दर दृश्य ने सब को चकित कर दिया। सामने एक दाढ़ीवाले, गौरवर्ण पुरुष खड़े थे। उम्र छत्तीस-सैंतीस वर्ष की होगी। बंगालियो की तरह पोशाक थी पर सिर पर सिक्खों की तरह शुभ्र साफा बँधा था। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को देखते ही भूमि पर मस्तक टेककर प्रणाम किया। उनके उठ खड़े होने पर श्रीरामकृष्ण ने कहा, "बलराम तुम हो? इतनी रात को?"

बलराम (हँसकर) – मैं बड़ी देर से आया हूँ।

श्रीरामकृष्ण – भीतर क्यो नहीं गए?

बलराम - जी, लोग आपका वार्तालाप सुन रहे थे। बीच मे पहुँचकर क्यो शान्ति भंग करूँ, यह सोचकर नही गया।

यह कहकर बलराम हँसने लगे।

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ गाड़ी पर बैठ गए।

विद्यासागर (मास्टर से धीमी आवाज मे) – गाड़ी का किराया क्या दे दे?

मास्टर – जी नहीं, दे दिया गया है।

विद्यासागर और अन्यान्य लोगो ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

गाड़ी उत्तर की ओर चलने लगी, दक्षिणेश्वर काली मन्दिर को जाएगी। सब लोग गाड़ी की ओर देखते हुए खड़े है। सोच रहे हैं – ये महापुरुष कौन हैं? ये ईश्वर पर कितना प्रेम करते हैं फिर जीवों के घर घर जाकर कहते हैं कि ईश्वर पर प्रेम करना ही जीवन का उद्देश्य है।

परिच्छेद ८

दक्षिणेश्वर में केदार द्वारा आयोजित उत्सव

दक्षिणेश्वर के मन्दिर मे श्रीरामकृष्ण केदार आदि भक्तो के साथ वार्तालाप कर रहे है। आज रविवार, अमावस्या, १३ अगस्त १८८२ ई. है, समय दिन के पाँच बजे का होगा।

श्री केदार चटर्जी का मकान हालीशहर मे है। ये सरकारी अकाउन्टेन्ट का काम करते थे। बहुत दिन ढाका मे रहे। उस समय श्री विजय गोस्वामी उनके साथ सदा श्रीरामकृष्ण के विषय मे वार्तालाप करते थे। ईश्वर की बात सुनते ही उनकी आँखो मे आँसू भर आते थे। वे पहले ब्राह्मसमाज मे थे।

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिणवाले बरामदे मे भक्तो के साथ बैठे है। राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि अनेक भक्त उपस्थित है। केदार ने आज उत्सव किया है; सारा दिन आनन्द से बीत रहा है। राम ने एक गायक बुलाया है। उन्होंने गाना गाया। गाने के समय श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न होकर कमरे मे छोटी खाट पर बैठे है। मास्टर तथा अन्य भक्तगण उनके पैरो के पास बैठे है।

समाधितत्त्व तथा सर्वधर्मसमन्वय – हिन्दु, मुसलमान और ईसाई

श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करते करते समाधितत्त्व समझा रहे है। कह रहे है, "सच्चिदानन्द की प्राप्ति होने पर समाधि होती है, उस समय कर्म का त्याग हो जाता है। मै गायक का नाम ले रहा हूँ, ऐसे समय यदि वे आकर उपस्थित होते है तो फिर उनका नाम लेने की क्या आवश्यकता? मधुमक्खी गुनगुन करती है कब तक? – जब तक फूल पर नही बैठती। कर्म का त्याग करने से साधक का न बनेगा, पूजा, जप, तप, ध्यान, सन्ध्या, कवच, तीर्थ आदि सभी करना होगा।

"ईश्वरप्राप्ति के बाद यदि कोई विचार करता है तो वह वैसा ही है जैसा मधुमक्खी मधु का पान करती हुई अस्फुट स्वर मे गुनगुनाती रहे।"

गायक ने अच्छा गाना गाया था। श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हो गए। उससे कह रहे है, "जिस मनुष्य मे कोई एक बड़ा गुण है, जैसे संगीत-विद्या, उसमे ईश्वर की शक्ति विशेष रूप से वर्तमान है।"

गायक – महाराज, किस उपाय से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – भक्ति ही सार है। ईश्वर तो सर्वभूतो मे विराजमान है। तो फिर भक्त किसे कहूँ – जिसका मन सदा ईश्वर मे है। अहंकार, अभिमान रहने पर कुछ नही होता। 'मै'रूपी टीले पर ईश्वरकृपारूपी जल नही ठहरता, लुढ़क जाता है। मै यन्त्र हूँ।

(केदार आदि भक्तो के प्रति) "सब मार्गो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है। सभी धर्म सत्य है। छत पर चढने से मतलब है, सो तुम पक्की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, लकड़ी की सीढी से भी चढ सकते हो, बॉस की सीढी से भी चढ सकते हो, रस्सी के सहारे भी चढ सकते हो और फिर एक गॉठदार बॉस के जरिये भी चढ सकते हो।

"यदि कहो, दूसरो के धर्म मे अनेक भूल, कुसंस्कार है, तो मै कहता हूँ, है तो रहे, भूल सभी धर्मो मे है। सभी समझते है मेरी घडी ठीक चल रहा है। व्याकुलता होने से ही हुआ। उनमे प्रेम आकर्षण रहना चाहिए। वे अन्तर्यामी जो है। वे अन्तर की व्याकुलता, आकर्षण को देख सकते है। मानो एक मनुष्य के कुछ बच्चे है। उनमे से जो बडे है वे 'बाबा' या 'पापा' इन शब्दो को स्पष्ट रूप मे कहकर, उन्हे पुकारते है। और जो बहुत छोटे है वे बहुत हुआ तो 'बा' या 'पा' कहकर पुकारते है। जो लोग सिर्फ 'बा' या 'पा' कह सकते है, क्या पिता उनसे असन्तुष्ट होगे? पिता जानते है कि वे उन्हे ही बुला रहे है, परन्तु वे अच्छी तरह उच्चारण नही कर सकते। पिता की दृष्टि मे सभी बच्चे बराबर है।

"फिर भक्तगण उन्हे ही अनेक नामो से पुकार रहे है। एक ही व्यक्ति को बुला रहे है। एक तालाब के चार घाट है। हिन्दू लोग एक घाट मे जल पी रहे है और कहते है जल। मुसलमान लोग दूसरे घाट मे पी रहे है – कहते है पानी। अंग्रेज लोग तीसरे घाट मे पी रहे है और कह रहे है वाटर (Water) और कुछ लोग चौथे घाट मे पी रहे है और कहते है अक्वा (aqua) एक ईश्वर, उनके अनेक नाम है।"

परिच्छेद ९

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ विराजमान हैं। दिन बृहस्पतिवार है, सावन शुक्ला दशमी, २४ अगस्त १८८२ ई.।

आजकल श्रीरामकृष्ण के पास हाजरा महाशय, रामलाल, राखाल आदि रहते हैं। श्रीयुत रामलाल श्रीरामकृष्ण के भतीजे है; कालीमन्दिर में पूजा करते हैं। मास्टर ने आकर देखा, उत्तर-पूर्व के लम्बे बरामदे में श्रीरामकृष्ण हाजरा के पास खड़े हुए बातें कर रहे हैं। मास्टर ने भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण की चरणवन्दना की।

श्रीरामकृष्ण का मुख सहास्य है। मास्टर से कहने लगे – "विद्यासागर से और भी दो एक बार मिलना चाहिए। चित्रकार पहले नक्शा खींच लेता है, फिर उस पर रंग चढ़ाता रहता है। प्रतिमा पर पहले दो तीन बार मिट्टी चढ़ायी जाती है, फिर सफेद रंग चढ़ाया जाता है, फिर वह ढंग से रँगी जाती है। – विद्यासागर का सब कुछ ठीक है, सिर्फ ऊपर कुछ मिट्टी पड़ी हुई है। कुछ अच्छे काम करता है; परन्तु हृदय में क्या है उसकी खबर नही। हृदय मे सोना दबा पड़ा है। हृदय मे ईश्वर है, - यह समझने पर सब कुछ छोड़कर व्याकुल हो उसे पुकारने की इच्छा होती है।"

श्रीरामकृष्ण मास्टर से खड़े खड़े वार्तालाप कर रहे हैं, कभी बरामदे मे टहल रहे है।

साधना – कामिनी-कांचनरूपी तूफान से पार होने के लिए

श्रीरामकृष्ण – हृदय में क्या है इसका ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ साधना आवश्यक है।

मास्टर – साधना क्या बराबर करते ही जाना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, पहले कुछ कमर कसकर करनी चाहिए। फिर ज्यादा मेहनत नही उठानी पड़ती। जब तक तरंग, आँधी, तूफान और नदी की मोड़ से नौका जाती है तभी तक मल्लाह को मजबूती से पतवार पकड़नी पड़ती है; उतने से पार हो जाने पर फिर नहीं। जब वह मोड़ से बाहर हो गया और अनुकूल हवा चली तब वह आराम से बैठा रहता है, पतवार में हाथ भर लगाए रहता है। फिर तो पाल टाँगने का बन्दोबस्त करके आराम

से चिलम भरता है। कामिनी और कांचन की आँधी, तूफान से निकल जाने पर शान्ति मिलती है।

श्रीरामकृष्ण तथा योगतत्त्व – योगभ्रष्ट – योगावस्था –

"निर्वातनिष्कम्पमिव प्रदीपम्" – योग के विघ्न

"किसी किसी मे योगियो के लक्षण दीखते है परन्तु उन लोगो को भी सावधानी से रहना चाहिए। कामिनी और कांचन ही योग मे विघ्न डालते है। योगभ्रष्ट होकर साधक फिर संसार मे आता है, – भोग की कुछ इच्छा रही होगी। इच्छा पूरी होने पर वह फिर ईश्वर की ओर जाएगा – फिर वही योग की अवस्था होगी। 'सटका' कल जानते हो?"

मास्टर – जी नही।

श्रीरामकृष्ण – उस देश मे है*। बॉस को झुका देते है। उसमे बर्सी और डोर लगी रहती है। कॉटे मे मछलियो के खाने का चारा बेध दिया जाता है। ज्योही मछली उसे निगल जाती है, त्योही वह बॉस झटके के साथ ऊपर उठ जाता है। जिस प्रकार उसका सिर ऊँचा था वैसा ही हो जाता है।

"तराजू मे किसी ओर कुछ रख देने से नीचे की सुई और ऊपर की सुई दोनो बराबर नही रहती। नीचे की सुई मन है और ऊपर की सुई ईश्वर। नीचे की सुई का ऊपर की सुई से एक होना ही योग है।

"मन के स्थिर हुए बिना योग नही होता। संसार की हवा मनरूपी दीपशिखा को सदा ही चंचल किया करती है। वह शिखा यदि जरा भी न हिले तो योग की अवस्था हो जाती है।

"कामिनी और कांचन योग के विघ्न है। वस्तुविचार करना चाहिए। स्त्रियो के शरीर मे क्या है – रक्त, मांस, आँते, कृमि, मूत्र, विष्ठा – यही सब। उस शरीर पर प्यार क्यो?

"त्याग के लिए मै अपने मे राजसी भाव भरता था। साध हुई थी कि जरी की पोशाक पहनूँगा, अँगूठी पहनूँगा, लम्बी नलीवाले हुक्के मे तम्बाकू पिऊँगा। जरी की पोशाक पहनी। ये लोग (रानी रासमणि के दामाद मथुरबाबू आदि) ले आए थे। कुछ देर बाद मन से कहा – यही शाल है, यही अँगूठी है, यहा हुक्के मे तम्बाकू पीना है। सब फेक दिया, तब से फिर मन नही चला।"

शाम हो रही है। कमरे के दक्षिण-पूर्व की ओर के बरामदे मे द्वार के पास ही, अकेले मे श्रीरामकृष्ण मणि† से बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – योगियो का मन सदा ईश्वर मे लगा रहता है – सदा आत्मस्थ रहता

---

* श्रीरामकृष्ण अपनी जन्मभूमि को बहुधा 'वह देश' कहते थे।

† मणि और मास्टर एक ही व्यक्ति है।

है। शून्य दृष्टि, देखते ही उनकी अवस्था सूचित हो जाती है। समझ मे आ जाता है कि चिड़िया अण्डे को से रही है। सारा मन अण्डे ही की ओर है, ऊपर दृष्टि तो नाममात्र की है। अच्छा, ऐसा चित्र क्या मुझे दिखा सकते हो?

मणि – जैसी आज्ञा। चेष्टा करूँगा यदि कही मिल जाय।

(२)

गुरुशिष्य-संवाद – गुह्यकथा

शाम हो गयी। कालीमन्दिर, राधाकान्तजी के मन्दिर और अन्यान्य कमरों में बत्तियाँ जला दी गयी। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए जगन्माता का स्मरण कर रहे हैं। तदनन्तर वे ईश्वर का नाम जपने लगे। घर में धूनी दी गयी है। एक ओर दीवट पर दिया जल रहा है। कुछ देर बाद शंख घण्टा आदि बजने लगे। कालीमन्दिर में आरती होने लगी। निशि शुक्ला दशमी है, चारो ओर चाँदनी छिटक रही है।

आरती हो जाने पर कुछ क्षण बाद श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले अनेक विषयो पर बाते करने लगे। मणि फर्श पर बैठे है।

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"

श्रीरामकृष्ण – कर्म निष्काम करना चाहिए। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जो कर्म करता है वे अच्छे है, वह निष्काम कर्म करने की चेष्टा करता है।

मणि – जी हाँ। अच्छा, जहाँ कर्म है वहाँ क्या ईश्वर मिलते है? राम और काम क्या एक ही साथ रहते है? हिन्दी मे मैंने पढ़ा है कि 'जहा काम तहँ राम नहि, जहाँ राम नहि काम।'

श्रीरामकृष्ण – कर्म सभी करते है। उनका नाम लेना कर्म है – साँस लेना और छोड़ना भी कर्म है। क्या मजाल है कि कोई कर्म छोड दे। इसलिए कर्म करना चाहिए, किन्तु फल ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिए।

मणि – तो क्या ऐसी चेष्टा की जा सकती है कि जिससे अधिक धन मिले?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, की जा सकती है किन्तु यदि विद्या का परिवार हो, तो। अधिक धन कमाने का प्रयत्न करो, परन्तु सदुपाय से। उद्देश्य उपार्जन नहीं, ईश्वर की सेवा है। धन से यदि ईश्वर की सेवा होती है तो उस धन मे दोष नही है।

मणि – घरवालो के प्रति कर्तव्य कब तक रहता है?

श्रीरामकृष्ण – उन्हे भोजनवस्त्र का अभाव न हो। सन्तान जब स्वयं समर्थ होगी, तब भार-ग्रहण की आवश्यकता नही। चिडियो के बच्चे जब खुद चुगने लगते है तब माँ के पास यदि खाने के लिए आते है तो माँ चोच मारती है।

मणि – कर्म कब तक करना होगा?

श्रीरामकृष्ण – फल होने पर फूल नहीं रह जाता। ईश्वरलाभ हो जाने से कर्म नहीं करना पडता, मन भी नहीं लगता।

"ज्यादा शराब पी लेने से मतवाला होश नहीं सम्हाल सकता – दुअन्नीभर पीने से कामकाज कर सकता है। ईश्वर की ओर जितना ही बढोगे उतना ही व कर्म घटाते रहेंगे। डरो मत। गृहस्थ की बहू के जब लडका होनेवाला होता है तब उसकी सास धीरे धीरे काम घटाती जाती है। दसवें महीने में काम छूने भी नहीं देती। लडका होने पर वह उसी को लिए रहती है।

"जो कुछ कर्म है, जहाँ वे समाप्त हो गए कि चिन्ता दूर हो गयी। गृहिणी घर का सारा कामकाज समाप्त करके जब कहीं बाहर निकलती है, तब जल्दी नहीं लौटती, बुलाने पर भी नहीं आती।"

ईश्वरलाभ तथा ईश्वरदर्शन का अर्थ

मणि – अच्छा ईश्वरलाभ के क्या माने है? ईश्वरदर्शन किसे कहते हैं और किस तरह होते हैं?

श्रीरामकृष्ण – वैष्णव कहते हैं कि ईश्वरमार्ग के पथिक चार प्रकार के होते हैं - प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों में सिद्ध। जो पहले ही पहल मार्ग पर आया है वह प्रवर्तक है। जो भजन-पूजन, जप-ध्यान नाम-गुणकीर्तनादी करता है वह साधक है। जिसे ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव मात्र हुआ है वह सिद्ध है। उसकी वेदान्त में एक उपमा है – वह यह कि अँधेरे घर में बाबूजी सो रहे हैं। कोई टटोलकर उन्हें खोज रहा है। कोच पर हाथ जाता है, तो वह मन ही मन कह उठता है – यह नहीं है, झरोखा छू जाता है तो भी कह उठता है - यह नहीं है, दरवाजे में हाथ लगता है तो यह भी नहीं है, – नेति नेति नेति। अन्त में जब बाबूजी की देह पर हाथ लगा तो कहा – यह – बाबूजी यह है, अर्थात अस्ति का बोध हुआ। बाबूजी को प्राप्त तो किया किन्तु भलीभाँति जान-पहचान नहीं हुई।

"एक दर्जे के और लोग हैं, जो सिद्धों में सिद्ध कहलाते हैं। बाबूजी के साथ यदि विशेष वार्तालाप हो तो वह एक और ही अवस्था है, यदि ईश्वर के साथ प्रेम-भक्ति द्वारा विशेष परिचय हो जाय तो दूसरी ही अवस्था हो जाती है। जो सिद्ध है उसने ईश्वर को पाया तो है, किन्तु जो सिद्धों में सिद्ध है उसका ईश्वर के साथ विशेष परिचय हो गया है।

"परन्तु उनको प्राप्त करने की इच्छा हो तो एक न एक भाव का सहारा लेना पडता है, जैसे – शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य या मधुर।

"शान्त भाव ऋषियों का था। उनमें भोग की कोई वासना न थी, ईश्वरनिष्ठा थी जैसी पति पर स्त्री की होती है, वह यह समझती है कि मेरे पति कन्दर्प है।

"दास्य – जैसे हनुमान का, रामकाज करते समय सिहतुल्य। स्त्रियों का भी दास्य

भाव होता है, – पति की हृदय खोलकर सेवा करती है। माता में भी यह भाव कुछ कुछ रहता है, – यशोदा में था।

"सख्य – मित्रभाव। आओ, पास बैठो। सुदामा आदि श्रीकृष्ण को कभी जूठे फल खिलाते थे, कभी कन्धे पर चढ़ते थे।

"वात्सल्य – जैसे यशोदा का। स्त्रियों में भी कुछ कुछ होता है, – स्वामी को खिलाते समय मानो जी काढ़कर रख देती हैं। लड़का जब भरपेट भोजन कर लेता है, तभी माँ को सन्तोष होता है। यशोदा कृष्ण को खिलाने के लिए मक्खन हाथ में लिए घूमती फिरती थी।

"मधुर – जैसे श्रीराधिका का। स्त्रियों का भी मधुर भाव है। इस भाव में शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य सब भाव हैं।"

मणि – क्या ईश्वर के दर्शन इन्हीं नेत्रों से होते हैं?

श्रीरामकृष्ण – चर्मचक्षु से उन्हे कोई नहीं देख सकता। साधना करते करते शरीर प्रेम का हो जाता है। आँखें प्रेम की, कान प्रेम के। उन्हीं आँखों से वे दीख पड़ते हैं, उन्हीं कानों से उनकी वाणी सुन पड़ती है। और प्रेम का लिंग और योनि भी होती है।

यह सुनकर मणि खिलखिलाकर हँस पड़े। श्रीरामकृष्ण जरा भी नाराज न होकर फिर कहने लगे।

श्रीरामकृष्ण – इस प्रेम के शरीर में आत्मा के साथ रमण होता है।

मणि फिर गम्भीर हो गए।

श्रीरामकृष्ण – "ईश्वर को बिना खूब प्यार किये दर्शन नहीं होते।

"खूब प्यार करने से चारों ओर ईश्वर ही ईश्वर दीखते हैं। जिसे पीलिया हो जाता है उसे चारों ओर पीला दिखायी पड़ता है।

"तब 'मैं वही हूँ' यह बोध भी हो जाता है। मतवाले का नशा जब खूब चढ़ जाता हैं तब वह कहता है, 'मैं ही काली हूँ'।

"गोपियाँ प्रेमोन्मत्त होकर कहने लगीं – 'मैं ही कृष्ण हूँ'।

"दिनरात उन्हीं की चिन्ता करने से चारों ओर वे ही दीख पड़ते हैं। जैसे थोड़ी देर दीपशिखा की ओर ताकते रहो, तो फिर चारों ओर सब कुछ शिखामय ही दिखायी देता है।"

क्या ईश्वरदर्शन मस्तिष्क का भ्रम है? "संशयात्मा विनश्यति"

मणि सोचते हैं कि वह शिखा तो सत्य शिखा है नहीं।

अन्तर्यामी श्रीरामकृष्ण कहने लगे – "चैतन्य की चिन्ता करने से कोई अचेत नहीं हो जाता। शिवनाथ ने कहा था, 'ईश्वर की बार बार चिन्ता करने से लोग पागल हो जाते

है।' मैने उमसे कहा, 'चैतन्य की चिन्ता करने से क्या कभी कोई चैतन्यहीन होता है?' "

मणि – जी, समझा। यह तो किसी अनित्य विषय की चिन्ता है नही, जो नित्य और चेतन है उनमे मन लगाने से मनुष्य अचेतन क्यो होने लगा?

श्रीरामकृष्ण (प्रसन्न होकर) – यह उनकी कृपा है। बिना उनकी कृपा के सन्देह-भंजन नही होता।

"आत्मदर्शन के बिना सन्देह दूर नही होता।

"उनकी कृपा होने पर फिर कोई भय की बात नही रह जाती। पुत्र यदि पिता का हाथ पकडकर चले तो गिर भी सकता है परन्तु यदि पिता पुत्र का हाथ पकड़े तो फिर गिरने का कोइ भय नही। वे यदि कृपा करके संशय दूर कर दे और दर्शन दे तो फिर कोई दु:ख नही। परन्तु उन्हे पाने के लिए खूब व्याकुल होकर पुकारना चाहिए - साधना करनी चाहिए – तब उनकी कृपा होती है। पुत्र को दौडते हाँफते देखकर माता को दया आ जाती है। माँ छिपी थी। सामने प्रकट हो जाती है।"

मणि सोच रहे है, ईश्वर दौडधूप क्यो कराते है? श्रीरामकृष्ण तुरन्त कहने लगे - "उनकी इच्छा कि कुछ देर दौडधूप हो तो आनन्द मिले। लीला से उन्होने इस संसार की रचना की है। इसी का नाम महामाया है। अतएव उस शक्तिरूपिणी महामाया की शरण लेनी पडती है। माया के पाशो ने बाँध लिया है, फाँस काटने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते है।"

आद्याशक्ति महामाया तथा शक्तिसाधना

श्रीरामकृष्ण – कोई ईश्वर की कृपा प्राप्त करना चाहे तो उसे पहले आद्याशक्तिरूपिणी महामाया को प्रसन्न करना चाहिए। वे संसार को मुग्ध करके सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रही है। उन्होने सब को अज्ञानी बना डाला है। वे जब द्वार से हट जाएँगी तभी जीव भीतर जा सकता है। बाहर पडे रहने से केवल बाहरी वस्तुएँ देखने को मिलती है, नित्य सच्चिदानन्द पुरुष नही मिलते। इसीलिए पुराणो मे है - सप्तशती मे - मधुकैटभ का वध करते समय ब्रह्मादि देवता महामाया की स्तुति कर रहे है।*

"संसार का मूल आधार शक्ति ही है। उस आद्याशक्ति के भीतर विद्या और अविद्या दोनो है – अविद्या मोहमुग्ध करती है। अविद्या वह है जिससे कामिनी और कांचन उत्पन्न हुए है, वह मुग्ध करती है, और विद्या वह है जिससे भक्ति, दया, ज्ञान और प्रेम की उत्पत्ति हुई है, वह ईश्वरमार्ग पर ले जाती है।

---

* ब्रह्मोवाच। त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारस्वरात्मिका।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता।। - सप्तशती मधुकैटभवध

"उस अविद्या को प्रसन्न करना होगा। इसीलिए शक्ति की पूजापद्धति हुई।

"उन्हे प्रसन्न करने के लिए नाना भावो से पूजन किया जाता है। जैसे दासीभाव, वीरभाव, सन्तानभाव। वीरभाव अर्थात् उन्हे रमण द्वारा प्रसन्न करना।

"शक्तिसाधना – सब बड़ी विकट साधनाएँ थी, दिल्लगी नही।

"मै माँ के दासीभाव से और सखीभाव से दो वर्ष तक रहा। परन्तु मेरा सन्तानभाव है। स्त्रियो के स्तनो को मातृस्तन समझता हूँ।

"लड़कियाँ शक्ति की एक एक मूर्ति है। पश्चिम म विवाह के समय वर के हाथ मे छुरी रहती है, बंगाल मे सरौता – अर्थात् उस शक्तिरूपिणी कन्या की सहायता से वर मायापाश काट सकेगा। यह वीरभाव है। मैंने वीरभाव से पूजा नही की। मेरा सन्तानभाव था।

"कन्या शक्तिस्वरूपा है। विवाह के समय तुमने नही देखा - वर अहमक की तरह पीछे बैठा रहता है, परन्तु कन्या नि शंक रहती है।

ईश्वरदर्शन तथा ऐहिक ज्ञान या अपरा विद्या

"ईश्वरलाभ करने पर उनके बाहरी ऐश्वर्य, संसार के ऐश्वर्य को भक्त भूल जाता है। उन्हे देखने म उनके ऐश्वर्य की बात याद नही आती। दर्शनानन्द मे मग्न हो जाने पर भक्त का हिसाबकिताब नही रह जाता। नरेन्द्र को देखने पर तेरा नाम क्या है, तेरा घर कहाँ है यह कुछ पूछने की जरूरत नही रहती। पूछने का अवसर ही कहाँ है? हनुमान से किसी ने पूछा, आज कौनसी तिथि है? हनुमान ने कहा, भाई, मै दिन, तिथि, नक्षत्र – कुछ नही जानता, मैं केवल श्रीराम का स्मरण किया करता हूँ।"

परिच्छेद १०

दक्षिणेश्वर में अन्तरंग भक्तों के साथ

(१)

श्रीरामकृष्ण की प्रथम प्रेमोन्माद अवस्था

आज श्रीरामकृष्ण बड़े आनन्द में हैं। दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में नरेन्द्र आए हैं। और भी कुछ अन्तरंग भक्त हैं। नरेन्द्र ने यहाँ आकर स्नान किया और प्रसाद पाया।

आज आश्विन की शुक्ला चतुर्थी है - १६ अक्टूबर १८८२, सोमवार। आगामी गुरुवार को सप्तमी है, दुर्गापूजा होगी।

श्रीरामकृष्ण के पास राखाल, रामलाल और हाजरा हैं। नरेन्द्र के साथ एक-दो और ब्राह्म लड़के आए हैं। आज मास्टर भी आए हैं।

नरेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण के पास ही भोजन किया। भोजन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने अपने कमरे में बिस्तर लगा देने को कहा, जिस पर नरेन्द्र आदि भक्त – विशेषकर नरेन्द्र – आराम करेंगे। चटाई के ऊपर रजाई और तकिये लगाए गए हैं। श्रीरामकृष्ण भी बालक की भाँति नरेन्द्र के पास बिस्तर पर आ बैठे। भक्तों से, विशेषकर नरेन्द्र से, और उन्हीं की ओर मुँह करके, हँसते हुए बड़े आनन्द से बातचीत कर रहे हैं। अपनी अवस्था और अपने चरित्र का बातों बातों में वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि भक्तों से) – मेरी इस अवस्था के बाद मुझे केवल ईश्वरी बातें सुनने की व्याकुलता होती थी। भागवत, अध्यात्मरामायण, महाभारत – कहाँ इनका पाठ हो रहा है, यही सब ढूँढ़ता फिरता था। आरियादह के कृष्णकिशोर के पास अध्यात्मरामायण सुनने जाया करता था।

"कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास है! वह वृन्दावन गया था, वहाँ एक दिन उसे प्यास लगी। कुएँ के पास जाकर उसने देखा कि एक आदमी खड़ा है। पूछने पर उसने जवाब दिया, 'मैं नीच जाति का हूँ और आप ब्राह्मण हैं; मैं कैसे आपको पानी निकाल दूँ?' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू कह 'शिव'। शिव शिव कहने से ही तू शुद्ध हो जाएगा।' उसने शिव शिव कहकर पानी ऊपर निकाला। वैसा निष्ठावान् ब्राह्मण होकर भी उसने वही जल पिया। कैसा विश्वास है!

"आरियादह के घाट पर एक साधु आया था। हमने सोचा कि एक दिन देखने जाएँगे। कालीमन्दिर में मैंने हलधारी से कहा, 'कृष्णकिशोर और हम साधु-दर्शन को जाएँगे। तुम चलोगे?' हलधारी ने कहा, 'एक मिट्टी का पिंजरा देखने जाने से क्या होगा?' हलधारी गीता और वेदान्त पढ़ता था न? इसी से उसने साधु-शरीर को 'मिट्टी का पिजरा' बताया! मैने जाकर कृष्णकिशोर से वह बात कही तो वह बड़े क्रोध में आ गया। उसने कहा, 'क्या! हलधारी ने ऐसी बात कही है? जो ईश्वर-चिन्तन करता है, राम-चिन्तन करता है, और जिसने उसी उद्देश से सर्वत्याग किया है, क्या उसका शरीर मिट्टी का पिजरा ठहरा? हलधारी नही जानता कि भक्त का शरीर चिन्मय होता है!' उसे इतना क्रोध आ गया था कि, कालीमन्दिर मे फूल तोड़ने आया करता था, पर हलधारी से भेट होने पर मुँह फेर लेता था। उससे बोलता तक न था।

"उसने मुझसे कहा था, 'तुमने जनेऊ क्यो फेक दिया?' जब मेरी यह अवस्था हुई तब आश्विन की आँधी की तरह एक भाव आकर वह सब कुछ न जाने कहाँ उड़ा ले गया, कुछ पता ही न चला! पहले की एक भी निशानी न रही। होश नही थे। जब कपड़ा ही खिसक जाता था, तो जनेऊ कैसे रहे? मैने कहा, 'एक बार तुम्हे भी उन्माद हो जाय तो तुम समझो!'

"फिर हुआ भी वैसा। उसे उन्माद हो गया। तब वह केवल 'ॐ ॐ' कहा करता और एक कोठरी मे चुपचाप बैठा रहता था। यह समझकर कि वह पागल हो गया है, लोगो ने वैद्य बुलाया। नाटागढ़ का राम कविराज आया, कृष्णकिशोर ने उससे कहा, 'मेरी बीमारी तो अच्छी कर दो, पर देखो मेरे ॐकार को मत छुड़ाना!' (सब हँसे।)

"एक दिन मैने जाकर देखा कि वह बैठा सोच रहा है। पूछा 'क्या हुआ है?' उसने कहा, 'टैक्सवाले आए थे, इसीलिए सोच मे पड़ा हूँ। उन्होने कहा है रुपया न देने से घर का माल बेच लेंगे।' मैंने कहा, 'तो सोचकर क्या होगा? अगर सब उठा ले जायँ तो ले जाने दो। अगर बाँधकर ही ले जायँ तो तुम्हे थोड़े ही ले जा सकेगे। तुम तो 'ख' (आकाश) हो!' (नरेन्द्र आदि हँसे।) कृष्णकिशोर कहा करता था कि मै आकाशवत् हूँ। वह अध्यात्मरामायण पढ़ता था न! बीच बीच मे उसे 'तुम ख हो' कहकर दिल्लगी करता था। सो हँसते हुए मैने कहा, 'तुम ख हो; टैक्स तुम्हें तो खीचकर नहीं ले जा सकेगा।'

"उन्माद की दशा मे मै लोगो से सच सच बाते – स्पष्ट बातें कह देता था। किसी की परवाह न करता था। अमीरो को देखकर मुझे डर नही लगता था।

"यदु मल्लिक के बाग में यतीन्द्र आया था। मै भी वहीं था। मैंने उससे पूछा, 'कर्तव्य क्या है? क्या ईश्वर का चिन्तन करना ही हमारा कर्तव्य नही है?' यतीन्द्र ने कहा, 'हम संसारी आदमी है। हमारे लिए मुक्ति कैसी! राजा युधिष्ठिर को भी नरक दर्शन करना पड़ा था!' तब मुझे बड़ा क्रोध आया। मैने कहा, 'तुम भला कैसे आदमी हो, युधि

सिर्फ नरकदर्शन ही तुमने याद रखा है? युधिष्ठिर का सत्यवचन, क्षमा, धैर्य, विवेक, वैराग्य, ईश्वर की भक्ति – यह सब बिलकुल याद नही आता!' और भी बहुत कुछ कहने जाता था, पर हृदय ने मेरा मुँह दबा लिया। थोड़ी देर बाद यतीन्द्र यह कहकर कि जरा काम है, चला गया।

"बहुत दिनो बाद मै कप्तान के साथ सौरीन्द्र ठाकुर के घर गया था। उसे देखकर मैने कहा, 'तुम्हे राजा-वाजा कह नही सकूँगा, क्योकि वह झूठ बात होगी।' उसने मुझसे थोडी बातचीत की। फिर मैने देखा कि साहब लोग आने-जाने लगे। वह रजोगुणी आदमी है, बहुत कामो मे लगा रहता है। यतीन्द्र को खबर भजी गयी। उसने जवाब दिया, 'मेरे गले मे दर्द हुआ है।'

"उस उन्माद की दशा मे एक दूसरे दिन बराहनगर के घाट पर मैने देखा कि जय मुकर्जी जप कर रहा है, पर अनमना हाकर। तब मैने पास जाकर दो थप्पड़ लगा दिए।

"एक दिन रासमणि दक्षिणेश्वर मे आयी। कालीमाता के मन्दिर मे आयी। वह पूजा के समय आया करती और मुझसे एक दो गीत गाने को कहती थी। मै गीत गा रहा था, देखा कि वह अनमनी होकर फूल चुन रही है। बस, दो थप्पड जमा दिए तब होश सम्हालकर हाथ बाँधे रही।

"हलधारी से मैने कहा, 'भैया, यह कैसा स्वभाव हो गया। क्या उपाय करूँ? फिर माँ को पुकारते पकारते वह स्वभाव दूर हुआ।

काशी में विषयसम्बन्धी चर्चा सुनकर श्रीरामकृष्ण का रुदन

"उस अवस्था मे ईश्वरीय प्रसंग के सिवा और कुछ अच्छा नही लगता था। वैषयिक चर्चा होते सुनकर म बैठा रोया करता था। जब मथुरबाबू मुझे अपने साथ तीर्थो को ले गए, तब थोडे दिन हम वाराणसी मे राजाबाबू के मकान पर रहे। मथुरबाबू के साथ बैठकखाने म मै बैठा था और राजाबाबू भी थे। मैने देखा कि वे सांसारिक बाते कह रहे है। 'इतने रुपये का नुकसान हुआ ह' - ऐसी ऐसी बाते। मै रोने लगा - कहा 'माँ, मुझे यह कहाँ लायी। मै रासमणि के मन्दिर म कही अच्छा था। तीर्थ करने को आते हुए भी वे ही कामिनी-कांचन की बाते। पर वहाँ (दक्षिणेश्वर मे) तो विषय चर्चा सुननी नही पड़ती थी।' "

श्रीरामकृष्ण ने भक्तो से, विशेषकर नरेन्द्र से, जरा आराम लेने के लिए कहा, और आप भी छोटे तखत पर थोड़ा आराम करने चले गए।

(२)

नरेन्द्र आदि के साथ कीर्तनानन्द। नरेन्द्र का प्रेमालिंगन

तीसरा प्रहर हुआ है। नरेन्द्र गाना गा रहे है। राखाल, लाटू, मास्टर, नरेन्द्र के ब्राह्म मित्र प्रिय, हाजरा आदि सब है।

नरेन्द्र ने कीर्तन गाया, मृदंग बजने लगा –

(भावार्थ) – "ऐ मन, तू चिद्‌घन हरि का चिन्तन कर। उनकी मोहनमूर्ति की कैसी अनुपम छटा है! – वह श्रीहरी भक्तो का हृदयधन उसकी सौदर्य सुषमा कोट्यवधि चन्द्रमाओ को लज्जित करेगी! उसके लावण्य दर्शनसे प्राण पुलकित हो जाते है। हत्कमलासन मे उसके श्रीचरणो का चिन्तन कर, शान्तिपूर्ण मनसे तथा प्रेमनेत्रो से उस अपरूप प्रियदर्शन का दर्शन कर भक्ति के आवेग से उस चिदानन्द रस मे चिरनिमग्न हो जा। "

नरेन्द्र ने फिर गाया –

(भावार्थ) - "सत्य-शिव सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर मे शोभायमान है, जिसे नित्य देखकर हम उस रूप के समुद्र मे डूब जाएँगे। वह दिन कब आएगा? हे प्रभु, मुझ दीन के भाग्य मे यह कब होगा? हे नाथ, कब अनन्त ज्ञान के रूप मे तुम हमारे हृदय मे विराजोगे और हमारा चंचल मन निर्वाक होकर तुम्हारी शरण लेगा? कब अविनाशी आनन्द के रूप मे तुम हृदयाकाश मे उदित होगे? चन्द्रमा के उदय होने पर चकोर जैसे उल्लसित होता है, वैसे हम भी तुम्हारे प्रकट होने पर मस्त हो जाएँगे। तुम शान्त, शिव, अद्वितीय और राजराज हो। हे प्राणसखा, तुम्हारे चरणो मे हम बिक जाएँगे और अपने जीवन को सफल करेगे। ऐसा अधिकार और ऐसा जीते जी स्वर्गभोग हमे और कहां मिलेगा? तुम्हारा शुद्ध ओर अपापविद्ध रूप हम देखेगे। जिस तरह प्रकाश को देखकर अँधेरा जल्द भाग जाता है, उसी तरह तुम्हारे प्रकट होने से पापरूपी अन्धकार भाग जायगा। तुम ध्रुवतारा हो, हे दीनबन्धो, हमारे हृदय मे ज्वलन्त विश्वास का संचार कर मन की आशाएं पूरी कर दो। तुम्हे प्राप्त कर हम अहर्निश प्रेमानन्द मे डूबे रहेगे और अपने आपको भूल जाएंगे। वह दिन कब आएगा, प्रभो?"

(भावार्थ) - "आनन्द मे मधुर ब्रह्मनाम का उच्चारण करो। नाम से सुधा का सिन्धु उमड आयगा। – उसे लगातार पीते रहो आप पीते रहो और दूसरो को पिलाते रहो। विषयरूपी मृगजल मे पड़कर यदि कभी हृदय शुष्क हो जाय तो नामगान करना। प्रेम से हृदय सरस हो उठेगा। देखना, वह महामन्त्र नही भूलना। संकट के समय उसे दयालु पिता कहकर पुकारना। हुंकार से पाप का बन्धन तोड़ डालो। जय ब्रह्म कहकर आओ, सब मिलकर ब्रह्मानन्द मे मस्त होवे और सब कामनाओ को मिटा दे। प्रेमयोग के योगी बने।"

मृदंग और करताल के साथ कीर्तन हो रहा है। नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण को घेरकर कीर्तन कर रहे है। कभी गाते है – 'प्रेमानन्द-रस मे चिरदिन के लिए मग्न हो जा।' फिर कभी गाते है – 'सत्य-शिव-सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर मे शोभायमान है।'

अन्त मे नरेन्द्र ने स्वयं मृदंग उठा लिया और मतवाले होकर श्रीरामकृष्ण के साथ गाने लगे – 'आनन्द से मधर ब्रह्मनाम का उच्चारण करो।'

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को बार बार छाती से लगाया और कहा – "अहा, आज तुमने मुझे कैसा आनन्द दिया!"

आज श्रीरामकृष्ण के हृदय मे प्रेम का स्रोत उमड़ रहा है। रात के आठ बजे होंगे, तो भी प्रेमोन्मत्त होकर बरामदे मे अकेले टहल रहे है। उत्तरवाले लम्बे बरामदे में आए है और अकेले एक छोर से दूसरे छोर तक जल्दी जल्दी टहल रहे है। बीच बीच मे जगन्माता के साथ कुछ बातचीत कर रहे है। एकाएक उन्मत्त की भाँति बोल उठे, "तू मेरा क्या बिगाड़ेगी?"

क्या आप यही कह रहे है कि जगन्माता जिसे सहारा दे रही है, माया उसका क्या बिगाड़ सकती है?

नरेन्द्र, प्रिय और मास्टर रात को रहेंगे। नरेन्द्र रहेंगे – बस, श्रीरामकृष्ण फूले नही समाते। रात का भोजन तैयार हुआ। श्रीमाताजी* नौबतखाने मे हैं – आपने अपने भक्तो के लिए रोटी, दाल आदि बनाकर भेज दिया है। भक्त लोग बीच बीच मे रहा करते है, सुरेन्द्र प्रतिमास कुछ खर्च देते है।

कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे मे भोजन के चौके लगाए जा रहे है। पूर्ववाले दरवाजे के पास नरेन्द्र आदि बातचीत कर रहे हैं।

नरेन्द्रादि लोगों को स्कूल तथा अन्य विषय-चर्चा करने का निषेध

नरेन्द्र – आजकल के लड़को को कैसा देख रहे है?

मास्टर – बुरे नही, पर धर्म के उपदेश कुछ नही पाते है।

नरेन्द्र – मैंने खुद जो देखा है उससे तो जान पडता है कि सब बिगड़ रहे है। चुरुट पीना, ठट्ठेबाजी, ठाटबाट, स्कूल से भागना – ये सब हरदम होते देखे जाते है, यहाँ तक कि खराब जगहो मे भी जाया करते है।

मास्टर – जब हम पढ़ते थे तब तो ऐसा न देखा, न सुना।

नरेन्द्र – शायद आप उतना मिलते-जुलते नही थे। मैंने यह भी देखा कि खराब लोग उन्हें नाम से पुकारते है। कब उनसे मिले है, कौन जाने!

मास्टर – क्या आश्चर्य की बात।

नरेन्द्र – मै जानता हूँ कि बहुतो का चरित्र बिगड़ गया है। स्कूल के संचालक और लड़को के अभिभावक इस विषय पर ध्यान दे तो अच्छा हो।

ईश्वर-चर्चा ही असल। "आत्मानं वा विजानीथ अन्यां वाचं विमुञ्चथ।"

इस तरह बाते हो रही थी कि श्रीरामकृष्ण कोठरी के भीतर से उनके पास आये और

* श्रीरामकृष्णदेव की धर्मपत्नी श्रीसारदादेवी

हँसते हुए कहते हैं, "भला तुम्हारी क्या बातचीत हो रही है?" नरेन्द्र ने कहा, "इनसे स्कूल की चर्चा हो रही थी। लड़कों का चरित्र ठीक नहीं रहता।" श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर तक उन बातों को सुनकर मास्टर से गम्भीर भाव से कहते हैं, "ऐसी बातचीत अच्छी नहीं। ईश्वर की बातों को छोड़ दूसरी बातें अच्छी नहीं। तुम इनसे उम्र में बड़े हो, तुम सयाने हुए हो, तुम्हें ये सब बातें उठने देना उचित न था।"

उस समय नरेन्द्र की उम्र उन्नीस-बीस रही होगी और मास्टर की सत्ताईस-अट्ठाईस।

मास्टर लज्जित हुए, नरेन्द्र आदि भक्त चुप रहे।

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर हँसते हुए नरेन्द्र आदि भक्तों को भोजन कराते हैं। आज उनको बड़ा आनन्द हुआ है।

भोजन के बाद नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में फर्श पर बैठे विश्राम कर रहे हैं और श्रीरामकृष्ण से बातें कर रहे हैं। आनन्द का मेला-सा लग गया है। बातों बातों में श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कहते हैं – 'चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ' जरा इस गाने को तो गा।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया। साथ ही अन्य भक्त मृदंग और करताल बजाने लगे। गीत का आशय इस प्रकार था –

"चिदाकाश में पूर्ण प्रेमचन्द्र का उदय हुआ। क्या ही आनन्दपूर्ण प्रेमसिन्धु उमड़ आया! जय दयामय, जय दयामय, जय दयामय! चारों ओर भक्तरूपी ग्रह जगमगाते हैं। भक्तसखा भगवान भक्तों के संग लीलारसमय हो रहे हैं। जय दयामय! स्वर्ग का द्वार खोल, आनन्द का तूफान उठाते हुए नवविधान* रूपी वसन्त-समीर चल रहा है। उससे लीलारस और प्रेमगन्धवाले कितने ही फूल खिल जाते हैं जिनकी महक से योगीवृन्द योगानन्द में मतवाले हो जाते हैं। जय दयामय! संसार-ह्रद के जल पर नवविधान-रूपी कमल में आनन्दमयी माँ विराजती हैं, और भावावेश से आकुल भक्तरूपी भौंरे उसमे सुधापान कर रहे हैं। वह देखो माता का प्रसन्न वदन – जिसे देखकर चित्त खिल उठता है और जगत् मुग्ध हो जाता है। और देखो – माँ के श्रीचरणों के पास साधुओं का समूह, वे मस्त होकर नाच-गा रहे हैं। अहा, कैसा अनुपम रूप है – जिसे देखकर प्राण शीतल हो गए। 'प्रेमदास' सब के चरण पकड़कर कहता है कि भाई, सब मिलकर माँ की जय गाओ।"

कीर्तन करते करते श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। भक्त भी उन्हें घेरकर नाच रहे हैं।

कीर्तन समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण उत्तर-पूर्ववाले बरामदे में टहल रहे हैं। श्रीयुत हाजरा उसी के उत्तर भाग में बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण जाकर वहाँ बैठे। मास्टर भी वहीं बैठे हैं

---

* श्री केशव सेन द्वारा स्थापित ब्राह्मसमाज का नाम

और हाजरा से बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त से पूछा, "क्या तुम कोई स्वप्न भी देखते हो?"

भक्त – एक अद्भुत स्वप्न मैंने देखा हैं – यह जगत् जलमय हो गया है। अनन्त जलराशि! कुछ एक नावें तैर रही थीं, एकाएक बाढ़ से डूब गयीं। मैं और कुछ और आदमी एक जहाज पर चढ़े है कि इतने में उस अकूल समुद्र के ऊपर से चलते हुए एक ब्राह्मण दिखायी पड़े। मैने पूछा, "आप कैसे जा रहे हैं?' ब्राह्मण ने जरा हँसकर कहा, 'यहाँ कोई तकलीफ नही है; जल के नीचे बराबर पुल है।' मैंने पूछा, 'आप कहाँ जा रहे है?' उन्होंने कहा, 'भवानीपुर जा रहा हूँ।' मैंने कहा, 'जरा ठहर जाइए; मैं भी आपके साथ चलूँगा।'

श्रीरामकृष्ण – यह सब सुनकर मुझे रोमांच हो रहा है!

भक्त – ब्राह्मण ने कहा, 'मुझे अब फुरसत नही है; तुम्हे उतरने में देर लगेगी। अब मैं चलता हूँ। यह रास्ता देख लो, तुम पीछे आना।'

श्रीरामकृष्ण – मुझे रोमांच हो रहा है! तुम जल्दी मन्त्रदीक्षा ले लो।

रात के ग्यारह बज गए हैं। नरेन्द्र आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में फर्श पर बिस्तर लगाकर लेट गये।

(३)

नींद खुलने पर भक्तों मे से कोई कोई देखते हैं कि सबेरा हुआ है (१७ अक्टूबर १८८२ मंगलवार)। श्रीरामकृष्ण बालक की भाँति दिगम्बर है, और देव-देवियों के नाम उच्चारण करते हुए कमरे में टहल रहे हैं। आप कभी गंगादर्शन करते है, कभी देव-देवियों के चित्रों के पास जाकर प्रणाम करते हैं और कभी मधुर स्वर मे नामकीर्तन करते है। कभी कहते है – 'वेद, पुराण, तन्त्र, गीता, गायत्री, भागवत, भक्त, भगवान्। गीता को लक्ष्य करके अनेक बार कहते हैं – 'त्यागी, त्यागी, त्यागी, त्यागी।' फिर कभी – 'तुम्हीं ब्रह्म हो, तुम्ही शक्ति; तुम्ही पुरुष हो, तुम्हीं प्रकृति; तुम्हीं विराट हो, तुम्हीं स्वराट् (स्वतन्त्र अद्वितीय सत्ता) – तुम्हीं नित्य हो, तुम्हीं लीलामयी; तुम्हीं (सांख्य के) चौबीस तत्त्व हो।'

इधर कालीमन्दिर और राधाकान्त के मन्दिर में मंगलारती हो रही है और शंख-घण्टे बज रहे हैं। भक्त उठकर देखते हैं कि मन्दिर की फुलवाड़ी में देव-देवियों की पूजा के लिए फूल तोड़े जा रहे हैं, और प्रभाती रागों की लहरें फैलाती हुई नौबत बज रही है।

नरेन्द्र आदि भक्त प्रातःक्रिया से निपटकर श्रीरामकृष्ण के पास आए। श्रीरामकृष्ण सहास्यमुख हो उत्तर-पूर्ववाले बरामदे में पश्चिम की ओर खड़े हैं।

नरेन्द्र – मैंने देखा कि पंचवटी में कुछ नानकपन्थी साधु बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वे कल आए थे। (नरेन्द्र से) तुम सब एक साथ चटाई पर बैठो,

मै देखूँ।

सब भक्तो के चटाई पर बैठने के बाद श्रीरामकृष्ण आनन्द से देखने और उनसे बातचीत करने लगे। नरेन्द्र ने साधना की बात छेड़ी।

वीरभाव की साधना कठिन है। सन्तानभाव अतिशुद्ध है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र आदि से) – भक्ति ही सार वस्तु है। ईश्वर को प्यार करने से विवेक-वैराग्य आप ही आप आ जाते है।

नरेन्द्र – एक बात पूछूँ – क्या औरतो से मिलकर साधना करना तन्त्रो मे कहा गया है?

श्रीरामकृष्ण – वे सब अच्छे रास्ते नही, बड़े कठिन है, और उनसे प्राय: पतन हुआ करता है। तीन प्रकार की साधनाएँ है – वीरभाव, दासीभाव और मातृभाव। मेरी मातृभाव की साधना है। दासीभाव भी अच्छा है। वीरभाव की साधना बडी कठिन है। सन्तानभाव बडा शुद्ध भाव है।

नानकपन्थी साधुओ ने आकर श्रीरामकृष्ण को 'नमो नारायण' कहकर अभिवादन किया। श्रीरामकृष्ण ने उनसे बैठने को कहा।

ईश्वर के लिए सभी कुछ सम्भव है

श्रीरामकृष्ण कहते है – "ईश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नही। उनका यथार्थ स्वरूप कोई नही बता सकता। सभी सम्भव है। दो योगी थे, ईश्वर की साधना करते थे। नारद ऋषि जा रहे थे। उनका परिचय पाकर एक ने कहा 'तुम नारायण के पास से आते हो? वे क्या कर रहे है?' नारदजी ने कहा, 'मै देख आया कि वे एक सुई के छेद मे ऊँट-हाथी घुसाते है और फिर निकालते है।' उस पर एक ने कहा, 'इसमे आश्चर्य ही क्या है? उनके लिए सभी सम्भव है।' पर दूसरे ने कहा, 'भला ऐसा कभी हो सकता है? तुम वहाँ गए ही नही।'

दिन के नौ बजे होगे। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे बैठे है। कोन्नगर से मनोमोहन सपरिवार आए है। उन्होने प्रणाम करके कहा, "इन्हे कलकत्ते ले जा रहा हूँ।" कुशल प्रश्न पूछने के बाद श्रीरामकृष्ण ने कहा, "आज माह का पहला दिन है और तुम तो कलकत्ते जा रहे हो, – क्या जाने कही कुछ खराबी न हो!" यह कहकर जरा हँसे और दूसरी बात कहने लगे।

नरेन्द्र को मग्न होकर ध्यान करने का उपदेश

नरेन्द्र और उनके मित्र स्नान करके आए। श्रीरामकृष्ण ने व्यग्र होकर नरेन्द्र से कहा, "जाओ, बट के नीचे जाकर ध्यान करो। आसन दूँ?"

नरेन्द्र और उनके कुछ ब्राह्म मित्र पंचवटी के नीचे ध्यान कर रहे हैं। करीब साढ़े दस बजे होंगे। थोड़ी देर में श्रीरामकृष्ण वहाँ आए; मास्टर भी साथ हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं –

(ब्राह्म भक्तों से) – "ध्यान करते समय ईश्वर में डूब जाना चाहिए, ऊपर ऊपर तैरने से क्या पानी के नीचेवाले लाल मिल सकते है?"

फिर आपने रामप्रसाद का एक गीत गाया जिसका आशय इस प्रकार है – "ऐ मन, काली कहकर हृदयरूपी रत्नाकर के अथाह जल मे डुबकी लगा। यदि दो ही चार डुबकियो में धन हाथ न लगा, तो भी रत्नाकर शून्य नही हो सकता। पूरा दम लेकर एक ऐसी डुबकी लगा कि तू कुलकुण्डलिनी के पास पहुँच जाय। ऐ मन, ज्ञानसमुद्र मे शक्तिरूपी मुक्ताएँ पैदा होती हैं। यदि तू शिव की युक्ति के अनुसार भक्तिपूर्वक ढूँढ़ेगा तो तू उन्हे पा सकेगा। उस समुद्र में काम आदि छ: घड़ियाल है, जो खाने के लोभ से सदा ही घूमते रहते है। तो तू विवेकरूपी हल्दी बदन मे चुपड़ ले - उसकी बू से वे तुझे छुएँगे नही। कितने ही लाल और माणिक उस जल मे पड़े हैं। रामप्रसाद का कहना है कि यदि तू कूद पड़ेगा तो तुझे वे सब के सब मिल जाएंगे।"

ब्राह्मसमाज वक्तृता और समाजसंस्कार (Social Reforms) – पहले ईश्वरलाभ, उसके बाद लोकशिक्षा

नरेन्द्र और उनके मित्र पंचवटी के चबूतरे से उतरे और श्रीरामकृष्ण के पास खड़े हुए। श्रीरामकृष्ण दक्षिणमुख होकर उनसे बातचीत करते करते अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – गोता लगाने से तुम्हे घड़ियाल पकड़ सकते हैं, पर हल्दी चुपड़ने से वे नही छू सकते। हृदयरूपी रत्नाकर के अथाह जल में काम आदि छ: घड़ियाल रहते हैं, पर विवेकवैराग्यरूपी हल्दी चुपड़ने से वे फिर तुम्हे नही छुएँगे।

"केवल पण्डिताई या लेक्चर से क्या होगा यदि विवेक-वैराग्य न हुआ? ईश्वर सत्य है और सब कुछ अनित्य; वे ही वस्तु है, शेष सब अवस्तु – इसी का नाम विवेक है।

"पहले हृदय-मन्दिर मे उनकी प्रतिष्ठा करो। वक्तृता, लेक्चर आदि जी चाहे तो उसके बाद करना। खाली 'ब्रह्म ब्रह्म' कहने से क्या होगा, यदि विवेक-वैराग्य न रहा? वह तो नाहक शंख फूकना हुआ!

"किसी गाँव मे पद्मलोचन नाम का एक लड़का था। लोग उसे पदुआ कहकर पुकारते थे। उसी गाँव मे एक जीर्ण मन्दिर था। अन्दर देवता का कोई विग्रह न था – मन्दिर की दीवारो पर पीपल और अन्य प्रकार के पेड़-पौधे उग आए थे। मन्दिर के भीतर चमगीदड़ अड्डा जमाये हुए थे। [illegible] पर गर्द और चमगीदड़ों की विष्ठा पड़ी रहती थी।

मन्दिर में लोगों का समागम नहीं होता था।

"एक दिन सन्ध्या के थोड़ी देर बाद गाँववालों ने शंख की आवाज सुनी। मन्दिर की तरफ से भों भों शंख बज रहा है। गाँववालों ने सोचा कि किसी ने देवता-प्रतिष्ठा की होगी, और सन्ध्या के बाद आरती हो रही है। लड़के, बूढ़े, औरत, मर्द, सब दौड़ते हुए मन्दिर के सामने हाजिर हुए – देवता के दर्शन करेंगे और आरती देखेंगे। उनमें से एक ने मन्दिर का दरवाजा धीरे से खोलकर देखा कि पद्मलोचन एक बगल में खड़ा होकर भों भों शंख बजा रहा है। देवता की प्रतिष्ठा नहीं हुई – मन्दिर मे झाड़ू तक नहीं लगाया गया – चमगीदड़ों की विष्ठा पड़ी हुई है। तब वह चिल्लाकर कहता है – 'तेरे मन्दिर में माधव कहाँ! पदुआ, तूने तो नाहक शंख फूँककर हुल्लड़ मचा दिया है। उसमें ग्यारह, चमगीदड़ रातदिन गश्त लगा रहे हैं –'

"यदि हृदय-मन्दिर मे माधव-प्रतिष्ठा की इच्छा हो, यदि ईश्वर का लाभ करना चाहो तो, सिर्फ भों भों शंख फूँकने से क्या होगा! पहले चित्तशुद्धि चाहिए। मन शुद्ध हुआ तो भगवान् उस पवित्र आसन पर आ विराजेंगे। चमगीदड़ की विष्ठा रहने से माधव नहीं लाए जा सकते। ग्यारह चमगीदड़ का अर्थ है ग्यारह इन्द्रियाँ – पाँच ज्ञान की इन्द्रियाँ, पाँच कर्म की इन्द्रियाँ और मन। पहले माधव-प्रतिष्ठा, बाद में इच्छा हो तो वक्तृता, लेक्चर आदि देना।

"पहले डुबकी लगाओ। गोता लगाकर लाल उठाओ, फिर दूसरे काम करो।

"कोई गोता लगाना नहीं चाहता! न साधन, न भजन, न विवेक-वैराग्य – दो-चार शब्द सीख लिए, बस लगे लेक्चर देने! शिक्षा देना कठिन काम है। ईश्वर-दर्शन के बाद यदि कोई उनका आदेश पाए, तो वह लोगों को शिक्षा दे सकता है।"

अविद्या स्त्री। सच्ची भक्ति हो तो सभी वश में आ जाते हैं।

बातें करते हुए श्रीरामकृष्ण उत्तरवाले बरामदे के पश्चिम भाग में आ खड़े हुए। मणि पास खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण बारम्बार कह रहे हैं, 'बिना विवेक-वैराग्य के भगवान् नहीं मिलेंगे।' मणि विवाह कर चुके हैं इसीलिए व्याकुल होकर सोच रहे हैं कि क्या उपाय होगा। उनकी उम्र अट्ठाईस वर्ष की है, कालेज में पढ़कर उन्होंने कुछ अंग्रेजी शिक्षा पायी है। वे सोच रहे हैं – क्या विवेकवैराग्य का अर्थ कामिनी-कांचन का त्याग है?

मणि (श्रीरामकृष्ण से) – यदि स्त्री कहे कि आप मेरी देखभाल नहीं करते हैं, मैं आत्महत्या करूँगी, तो कैसा होगा?

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वर से) – ऐसे स्त्री को त्यागना चाहिए, जो ईश्वर की राह में विघ्न डालती हो, चाहे वह आत्महत्या करे, चाहे और कुछ।

"जो स्त्री ईश्वर की राह में विघ्न डालती है, वह अविद्या स्त्री है।"

गहरी चिन्ता मे डूबे हुए मणि दीवार से टेककर एक तरफ खड़े रहे। नरेन्द्र आदि भक्त भी थोड़ी देर निर्वाक् हो रहे।

श्रीरामकृष्ण उनसे जरा बातचीत कर रहे है। एकाएक मणि के पास आकर एकान्त में मृदु स्वर से कहते हैं, "परन्तु जिसकी ईश्वर पर सच्ची भक्ति है, उसके वश में सभी आ जाते हैं – राजा, बुरे आदमी, स्त्री – सब। यदि किसी की भक्ति सच्ची हो तो स्त्री भी क्रम से ईश्वर की राह पर जा सकती है। आप अच्छे हुए तो ईश्वर की इच्छा से वह भी अच्छी हो सकती है।"

मणि की चिन्ताग्नि पर पानी बरसा। वे अब तक सोच रहे थे – स्त्री आत्महत्या कर ले तो करने दो, मै क्या कर सकता हूँ?

मणि (श्रीरामकृष्ण से) – संसार मे बड़ा डर रहता है।

श्रीरामकृष्ण – (मणि और नरेन्द्र से) – इसी से तो चैतन्यदेव ने कहा था, 'सुनो भाई नित्यानन्द, संसारी जीवों के लिए कोई उपाय नहीं।'

(मणि से, एकान्त में) – "यदि ईश्वर पर शुद्धा भक्ति न हुई तो कोई उपाय नहीं। यदि कोई ईश्वर का लाभ करके संसार में रहे तो उसे कुछ डर नही। यदि बीच बीच में एकान्त में साधना करके कोई शुद्धा भक्ति प्राप्त कर सके तो संसार में रहते हुए भी उसे कोई डर नहीं। चैतन्यदेव के संसारी भक्त भी थे। वे तो कहने भर के लिए संसारी थे। वे अनासक्त होकर रहने थे।"

देव-देवियों की भोग-आरती हो चुकी, वैसे ही नौबत बजने लगी। अब उनके विश्राम का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण भोजन करने बैठे। नरेन्द्र आदि भक्त आज भी आपके पास प्रसाद पाएँगे।

□□□

परिच्छेद ११

दक्षिणेश्वर में भक्तों से वार्तालाप

(१)

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में विराजमान हैं। दिन के नौ बजे होंगे। अपनी छोटी खाट पर वे विश्राम कर रहे है। फर्श पर मणि बैठे हैं। उनसे श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

आज विजया-दशमी है; रविवार, २२ अक्टूबर १८८२। आजकल राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। नरेन्द्र और भवनाथ कभी कभी आया करते है। श्रीरामकृष्ण के साथ उनके भतीजे रामलाल और हाजरा महाशय रहते हैं। राम, मनोमोहन, सुरेश, मास्टर और बलराम प्राय: हर हप्ते श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाते हैं। बाबूराम अभी एक-दो ही बार दर्शन कर गए है।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारी पूजा की छुट्टी हो गयी ?

मणि – जी हाँ। मै सप्तमी, अष्टमी और नवमी को प्रतिदिन केशव सेन के घर गया था।

श्रीरामकृष्ण – क्या कहते हो?

मणि – दुर्गापूजा की अच्छी व्याख्या सुनी।

श्रीरामकृष्ण – कैसी, कहो तो।

मणि – केशव सेन के घर में रोज सुबह को उपासना होती है; – दस-ग्यारह बजे तक। उसी उपासना के समय उन्होंने दुर्गापूजा की व्याख्या की थी। उन्होंने कहा, यदि माता दुर्गा को कोई प्राप्त कर सके – यदि माता को कोई हृदय-मन्दिर में ला सके, तो लक्ष्मी, सरस्वती, कार्तिक, गणेश स्वयं आते हैं। लक्ष्मी अर्थात् ऐश्वर्य; सरस्वती – ज्ञान; कार्तिक – विक्रम; गणेश – सिद्धि; ये सब आप ही मिल जाते हैं – यदि माँ आ जायँ तो।

श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त

श्रीरामकृष्ण सारा वर्णन सुन गए। बीच बीच में केशव की उपासना के सम्बन्ध मे प्रश्न करने लगे। अन्त में कहा – "तुम यहाँ-वहाँ न जाया करो, यहीं आना।

"जो अन्तरंग हैं वे केवल यहीं आएँगे। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल हमारे अन्तरंग

भक्त हैं, सामान्य नहीं। तुम एक दिन इन्हें भोजन कराना। नरेन्द्र को तुम कैसा समझते हो?"

मणि – जी, बहुत अच्छा।

श्रीरामकृष्ण – देखो नरेन्द्र में कितने गुण हैं, – गाता है, बजाता है, विद्वान् है और जितेन्द्रिय है, कहता है – विवाह न करूँगा; बचपन से ही ईश्वर में मन है।

साकार अथवा निराकार – चिन्मय मूर्तिध्यान – मातृध्यान

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – आजकल तुम्हारे ईश्वर-स्मरण का क्या हाल है? मन साकार पर जाता है या निराकार पर?

मणि – जी, अभी तो मन साकार पर नही जाता। और इधर निराकार में मन को स्थिर नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण – देखो, निराकार में तत्काल मन स्थिर नही होता। पहल पहले तो साकार अच्छा है।

मणि – मिट्टी की इन सब मूर्तियों की चिन्ता करना?

श्रीरामकृष्ण – नहीं नही, चिन्मयी मूर्ति की।

मणि – तो भी हाथ-पैर तो सोचने ही पड़ेंगे। परन्तु यह भी सोचता हूँ कि पहली अवस्था में किसी रूप की चिन्ता किए बिना मन स्थिर न होगा, यह आपने कह भी दिया है। अच्छा वे तो अनेक रूप धारण कर सकते हैं; तो क्या अपनी माता के स्वरूप का ध्यान किया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ। वे (माँ) गुरु तथा ब्रह्ममयी है।

मणि चुप बैठे रहे। कुछ देर बाद, फिर श्रीरामकृष्ण से पूछने लगे।

मणि – अच्छा, निराकार में क्या दिखता है? क्या इसका वर्णन नहीं किया जा सकता?

श्रीरामकृष्ण (कुछ सोचकर) – वह कैसा है बताऊँ? –

यह कहकर श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप बैठे रहे। फिर साकार और निराकार दर्शन मे कैसा अनुभव होता है, इस सम्बन्ध की एक बात कह दी और फिर चुप हो रहे।

श्रीरामकृष्ण – देखो, इसको ठीक ठीक समझने के लिए साधना चाहिए। यदि घर के भीतर के रत्न देखना चाहते हो और लेना चाहते हो, तो मेहनत करके कुंजी लाकर दरवाजे का ताला खोलो और रत्न निकालो। नहीं तो घर में ताला लगा हुआ है और द्वार पर खड़े हुए सोच रहे है, – 'लो, हमने दरवाजा खोला, सन्दूक का ताला तोड़ा, अब यह रत्न निकाल रहे हैं।' सिर्फ खड़े खड़े सोचने से काम न चलेगा। साधना करनी चाहिए।

(२)

अनन्त श्रीरामकृष्ण तथा अनन्त ईश्वर! सभी मार्ग हैं – श्रीवृन्दावन-दर्शन
ज्ञानी तथा अवतारवाद

श्रीरामकृष्ण – ज्ञानी निराकार का चिन्तन करते हैं। वे अवतार नहीं मानते। अर्जुन ने श्रीकृष्ण की स्तुति में कहा, तुम पूर्णब्रह्म हो। श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि आओ, देखो, हम पूर्णब्रह्म हैं या नहीं। यह कहकर श्रीकृष्ण अर्जुन को एक जगह ले गए और पूछा, तुम क्या देखते हो? अर्जुन बोला, मैं एक बड़ा पेड़ देख रहा हूँ जिसमें जामुन के से गुच्छे के गुच्छे फल लगे है। श्रीकृष्ण ने कहा कि और भी पास आकर देखो; वे काले फल नहीं, गुच्छे के गुच्छे अनगिनती कृष्ण फले हुए हैं – मुझ जैसे। अर्थात् उस पूर्णब्रह्मरूपी वृक्ष से करोड़ों अवतार होते हैं और चले जाते हैं।

"कबीरदास का रुख निराकार की ओर था। श्रीकृष्ण की चर्चा होती तो कबीरदास कहते, 'उसे क्या भजूँ? – गोपियाँ तालियाँ पीटती थीं और वह बन्दर की तरह नाचता था।' (हँसते हुए) मै साकारवादियों के निकट साकार हूँ और निराकारवादियों के निकट निराकार।"

मणि (हँसकर) – जिनकी बात हो रही है वे (ईश्वर) जैसे अनन्त हैं आप भी वैसे ही अनन्त हैं! – आपका अन्त ही नहीं मिलता।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – वाह रे, तुम तो समझ गए! सुनो एक बार सब धर्म कर लेने चाहिए; सब मार्गों से आना चाहिए। खेलने की गोटी सब घर बिना पार किए कहीं लाल होती है? गोटी जब लाल होती है, तब कोई उसे नहीं छू पाता।

मणि – जी हाँ।

कुटीचक। तीर्थयात्रा का उद्देश्य

श्रीरामकृष्ण – योगी दो प्रकार के हैं – बहूदक और कुटीचक। जो साधु तीर्थों में घूम रहा है, जिसके मन को अभी तक शान्ति नहीं मिली, उसे बहूदक कहते हैं, और जिसने चारों ओर घूमकर मन को स्थिर कर लिया है – जिसे शान्ति मिल गयी है – वह किसी एक जगह आसन जमा देता है, फिर नहीं हिलता। उसी एक ही जगह बैठे उसे आनन्द मिलता है। उसे तीर्थ जाने की कोई आवश्यकता नहीं। यदि वह तीर्थ जाए तो केवल उद्दीपना के लिए जाता है।

"मुझे एक बार सब धर्म करने पड़े थे, – हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्तान, – इधर शाक्त, वैष्णव, वेदान्त, इन सब रास्तों से भी आना पड़ा है। ईश्वर वही एक हैं – उन्हीं की ओर सब चल रहे हैं, भिन्न भिन्न मार्गों से।

"तीर्थ करने गया तो कभी कभी बड़ी तकलीफ होती थी। काशी में मथुरबाबू आदि के साथ राजाबाबुओं की बैठक में गया। वहाँ देखा – सभी लोग विषयों की बातों में लगे हैं! रुपया, जमीन, यही सब बातें। उनकी बातें सुनकर मैं रो पड़ा। माँ से कहा – माँ! तू मुझे कहाँ लायी? दक्षिणेश्वर मे तो मै बहुत अच्छा था। प्रयाग में देखा, – वही तालाब, वही दूब, वही पेड़, वही इमली के पत्ते!

"परन्तु तीर्थ में उद्दीपन अवश्य होता है। मथुरबाबू के साथ वृन्दावन गया। मथुरबाबू के घर की स्त्रियाँ भी थीं; हृदय भी था। कालीयदमन घाट देखते ही उद्दीपना होती थी, – मैं विह्वल हो जाता था! हृदय मुझे यमुना के घाट में बालक की तरह नहलाता था।

"सन्ध्या को यमुना के तट पर घूमने जाया करता था। यमुना के कछार से उस समय गायें चरकर लौटती थीं। देखते ही मुझे कृष्ण की उद्दीपना हुई, पागल की तरह दौड़ने लगा, 'कहाँ कृष्ण, कृष्ण कहाँ,' कहते हुए।

"पालकी पर चढ़कर श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के रास्ते जा रहा था, गोवर्धन देखने के लिए उतरा, गोवर्धन देखते ही बिलकुल विह्वल हो गया, दौड़कर गोवर्धन पर चढ़ गया; बाह्य ज्ञान जाता रहा। तब व्रजवासी जाकर मुझे उतार लाए। श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के मार्ग का मैदान, पेड़-पौधे, हरिण और पक्षियों को देख विकल हो गया था; आसुओं से कपड़े भीग गए थे; मन में यह आता था कि ऐ कृष्ण, यहाँ सभी कुछ है, केवल तू ही नहीं दिखायी पड़ता। पालकी के भीतर बैठा था, परन्तु एक बात कहने की भी शक्ति नहीं थी, चुपचाप बैठा था। हृदय पालकी के पीछे आ रहा था। कहारों से उसने कह दिया था, खूब होशियार रहना।

"गंगामाई मेरी खूब देखभाल करती थी। उम्र बहुत थी। निधुवन के पास एक कुटी में अकेली रहती थी। मेरी अवस्था और भाव देखकर कहती थी, ये साक्षात् राधिका हैं – शरीर धारण करके आए हैं मुझे दुलारी कहकर बुलाती थी। उसे पाते ही मैं खाना-पीना, घर लौटना सब भूल जाता था। कभी कभी हृदय वहीं भोजन ले जाकर मुझे खिला आता था। वह भी खाना पकाकर खिलाती थी।

"गंगामाई को भावावेश होता था। उसका भाव देखने के लिए लोगों की भीड़ जम जाती थी। भावावेश में एक दिन हृदय के कन्धे पर चढ़ी थी।

"गंगामाई के पास से देश लौटने की मेरी इच्छा न थी। वहाँ सब ठीक हो गया; मैं सिद्ध (भुँजिया) चावल का भात खाऊँगा, गंगामाई का बिस्तरा घर में एक ओर लगेगा, मेरा दूसरी ओर। सब ठीक हो गया। तब हृदय बोला, तुम्हें पेट की शिकायत है, कौन देखेगा? गंगामाई बोली, क्यो, मै देखूँगी, मैं सेवा करूँगी। एक हाथ पकड़कर हृदय खींचने लगा और दूसरा हाथ पकड़कर गंगामाई। ऐसे समय माँ की याद आ गयी! माँ अकेली कालीमन्दिर के नौबतखाने में है। फिर न रहा गया, तब कहा – नहीं, मुझे जाना

होगा।

"वृन्दावन का भाव बड़ा सुन्दर है। नये यात्री जाते हैं तो व्रज के लड़के कहा करते हैं, 'हरि बोलो, गठरी खोलो'।"

दिन के ग्यारह बजे बाद श्रीरामकृष्ण ने काली का प्रसाद पाया। दोपहर को कुछ आराम करके धूप ढलने पर फिर भक्तों के साथ वार्तालाप करने लगे। बीच बीच में रह-रहकर प्रणव-नाद या 'हा चैतन्य' उच्चारण कर रहे हैं।

कालीमन्दिर में सन्ध्यारती होने लगी। आज विजया दशमी है, श्रीरामकृष्ण कालीघर में आए है। कालीमाता को प्रणाम करके भक्तजन श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ग्रहण करने लगे। रामलाल ने कालीजी की आरती की है। श्रीरामकृष्ण रामलाल को बुलाने लगे – "कहाँ हो रामलाल!"

कालीजी को 'विजया' निवेदित की गयी है। श्रीरामकृष्ण उस प्रसाद को छूकर उसे देने के लिए ही रामलाल को बुला रहे है। अन्य भक्तों को भी कुछ कुछ देने को कह रहे हैं।

□□□

परिच्छेद १२

दक्षिणेश्वर मन्दिर में बलराम आदि के साथ –

बलराम को शिक्षा

आज मगलवार है, दिन का पिछला पहर, २४ अक्टूबर। तीन-चार बजे होगे। श्रीरामकृष्ण मिठाई के ताक के पास खड़े है। बलराम और मास्टर कलकत्ते से एक ही गाडी पर चढकर आए है और प्रणाम कर रहे है। प्रणाम करके बैठने पर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कहने लगे, "ताक पर मै कुछ मिठाई लेने गया था, मिठाई पर हाथ रखा ही था कि एक छिपकली बोल उठी, तुरन्त हाथ हटा लिया।" (सब हँसे।)

लक्षण। सत्यभाषण। कामिनी-कांचन ही माया है।

श्रीरामकृष्ण यह सब मानना चाहिए। देखो न, राखाल बीमार पड गया, मेरे भी हाथ-पैर मे दर्द हो रहा है। क्या हुआ, सुनो। सुबह को मैने उठते ही राखाल आ रहा है सोचकर अमुक का मुख देख लिया था। (सब हँसते है।) हाँ जी, लक्षण भी देखना चाहिए। उस दिन नरेन्द्र एक काने लडके को लाया था, – उसका मित्र है आँख बिलकुल कानी नही थी, जो हो, मैने सोचा – नरेन्द्र यह आफत का पुतला कहाँ से लाया!

' और एक आदमी आता है, मै उसके हाथ की कोई चीज नही खा सकता। वह आफिस मे काम करता है, बीस रुपया महीना ' ता है और बीस रुपया न जाने कैसा झूठा बिल लिखकर पाता है। वह झूठ बोलता है, इसलिए आने पर उससे बहुत नही बोलता। कभी तो दो-दो चार-चार ,दिन आफिस जाता ही नही, यही पड़ा रहता है। किस मतलब से, जानते हो? - मतलब यह कि किसी से कह-सुन दूँ तो दूसरी जगह नौकरी हो जाय।"

बलराम का वंश परम वैष्णवो का वंश है। बलराम के पिता वृद्ध हो गए है, – परम वैष्णव है। सिर पर शिखा है, गले मे तुलसी की माला है, हाथ मे सदा ही माला लिए जप करते रहते है। उडीसा मे इनकी बहुत बड़ी जमीदारी है और कोठार, श्रीवृन्दावन तथा और भी कई जगह श्रीराधाकृष्ण-विग्रह की सेवा होती है और धर्मशाला भी है। बलराम अभी पहले-पहल आने लगे है। श्रीरामकृष्ण बातो बातो मे उन्हे उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण – उस दिन अमुक आया था। सुना है, उस कालीकलूटी स्त्री का

गुलाम है। – ईश्वर– दर्शन क्यो नहीं होते? क्योंकि बीच में कामिनी कांचन की आड़ जो है।

पूर्व कथा – बर्दवान के मार्ग में – देश यात्रा – नकुड़ आचार्य का गाना सुनना।

"अच्छा, कहो तो मेरी क्या अवस्था है? उस देश को जा रहा था, बर्दवान से उतरकर; बैलगाड़ी पर बैठा था – ऐसे समय जोर की आँधी चली और पानी बरसने लगा। इधर न जाने कहाँ से गाड़ी के पीछे कुछ आदमी आ गए। मेरे माथी कहने लगे, ये डाकू है। तब मै ईश्वर का नाम जपने लगा, परन्तु कभी तो राम राम जपता और कभी काली काली, कभी हनुमान हनुमान, – सब तरह से जपने लगा; कहो तो यह क्या है?"

श्रीरामकृष्ण क्या ऐसा कह रहे है कि ईश्वर एक है और उसके नाम असंख्य, भिन्न धर्मावलंबी वा सम्प्रदायों के लोग क्या ऐसेही मिथ्या झगड़ा करके मर रहे हैं?

(बलराम से) – "कामिनी-कांचन ही माया है। इसके भीतर अधिक दिन तक रहने से होश चला जाता है, – ऐसा जान पड़ता है कि खूब मजे में हैं। मेहतर विष्ठा का भार ढोता है; ढोते ढोते फिर घृणा नही होती। भगवन्नामगुण-कीर्तन का अभ्यास करने ही से भक्ति होती है। (मास्टर से) इसमें लजाना नहीं चाहिए। लज्जा, घृणा और भय इन तीनो के रहते ईश्वर नही मिलता।

"उस देश मे बड़ा अच्छा कीर्तन करते है, – खोल (मृदंग) लेकर कीर्तन करते है। नकुड़ आचार्य का गाना बड़ा अच्छा है। वृन्दावन में तुम्हारी ओर से सेवा होती है?"

बलराम - जी हॉ, एक कुंज है – श्यामसुन्दर की सेवा होती है।

श्रीरामकृष्ण – मै वृन्दावन गया था। निधुवन बड़ा सुन्दर स्थान है।

परिच्छेद १३

केशवचन्द्र सेन के साथ श्रीरामकृष्ण का नौका विहार, आनन्द और वार्तालाप

(१)

समाधि में

आज शरत्-पूर्णिमा है। लक्ष्मीजी की पूजा है। शुक्रवार, २७ अक्टूबर १८८२। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर के उसी पूर्व-परिचित कमरे में बैठे है। विजय गोस्वामी और हरलाल से बातचीत कर रहे है। एक आदमी ने आकर कहा, 'केशव सेन जहाज पर चढ़कर घाट पर आए हैं।' केशव के शिष्यों ने प्रणाम करके कहा, 'महाराज, जहाज आया है। आपको चलना होगा; चलिए, जरा घूम आइएगा। केशवबाबू जहाज में है, हमें भेजा है।'

शाम के चार बज गए हैं। श्रीरामकृष्ण नाव पर होते हुए जहाज पर चढ़ रहे हैं। साथ विजय है। नाव पर चढ़ते ही बाह्यज्ञानरहित समाधिमग्न हो गए।

मास्टर जहाज में खड़े खड़े यह समाधिचित्र देख रहे है। वे दिन के तीन बजे केशव के साथ जहाज पर चढ़कर कलकत्ते से आए हैं। बड़ी इच्छा है, श्रीरामकृष्ण और केशव का मिलन, उनका आनन्द देखेंगे और उनकी बातें सुनेंगे। केशव ने अपने साधुचरित्र और वक्तृता के बल से मास्टर जैसे अनेक वंगीय युवकों का मन हर लिया है। अनेकों ने उन्हें अपना परम आत्मीय जानकर अपने हृदय का प्रेम समर्पित कर दिया है। केशव अंग्रेजी जानते हैं, अंग्रेजी दर्शन और साहित्य जानते है, फिर बहुत बार देव-देवियों की पूजा को पौत्तलिकता भी कहते है। इस प्रकार के मनुष्य श्रीरामकृष्ण को भक्ति और श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। और बीच बीच में दर्शन करने आते हैं, यह बात अवश्य विस्मयजनक है। उनके मन में मेल कहाँ और किस प्रकार हुआ, यह रहस्य-भेद करने के लिए मास्टर आदि अनेकों को कौतूहल हुआ है। श्रीरामकृष्ण निराकारवादी तो हैं, किन्तु साकारवादी भी हैं। ब्रह्म का चिन्तन करते हैं, और फिर देव-देवियों के सामने पुष्प-चन्दन से पूजा और प्रेम से मतवाले होकर नृत्यगीत भी करते हैं। खाट और बिछौने पर बैठते हैं, लाल धारीदार

धोती, कुर्ता, मोजा, जूता पहनते है; परन्तु संसार से स्वतन्त्र है। सारे भाव संन्यासियो के से है, इसीलिए लोग परमहंस कहते है। इधर केशव निराकारवादी है, स्त्री-पुत्रवाले गृही है; अंग्रेजी मे व्याख्यान देते है, अखबार लिखते है; विषयकर्मो की देखरेख भी करते है।

केशव आदि ब्राह्मभक्त जहाज पर से मन्दिर की शोभा देख रहे है। जहाज के पूर्व ओर पास ही बँधा घाट और मन्दिर का चाँदनीमण्डप है। बायी ओर – चाँदनीमण्डप के उत्तर, बारह शिवमन्दिर मे से छः मन्दिर है, दक्षिण की ओर भी छः मन्दिर है। शरद् के नील आकाश की पृष्ठभूमि पर भवतारिणी के मन्दिर का कलश तथा उत्तर की ओर पंचवटी और देवदारु वृक्षो के शिरोभाग दीखते है। एक नौबतखाना बकुलतला के पास है और कालीमन्दिर के दक्षिण प्रान्त मे एक और नौबतखाना है। दोनो नौबतखानो के बीच मे बगीचे का रास्ता है जिसके दोनो ओर कतार के कतार फूलो के पेड़ लगे है। शरत्-काल के आकाश की नीलिमा श्रीगंगा के वक्ष पर पड़कर अपूर्व शोभा दे रही है। बाहरी संसार मे भी कोमल भाव है और ब्राह्मभक्तो के हृदय मे भी कोमल भाव है। ऊपर सुन्दर नीला अनन्त आकाश है, सामने सुन्दर ठाकुरबाड़ी है, नीचे पवित्रसलिला गंगा है जिनके किनारे आर्यऋषियो ने परमात्मा का स्मरण-मनन किया है। फिर एक महापुरुष आये है, जो साक्षात् सनातन धर्म है। इस प्रकार के दर्शन मनुष्यो को सर्वदा नही होते। ऐसे समाधिमग्न महापुरुष पर किसकी भक्ति नही होगी? ऐसा कौन कठोर मनुष्य है जो द्रवीभूत न होगा?

(२)

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥ (गीता २।२२)

समाधि में। आत्मा अविनश्वर है। पवहारी बाबा

नाव आकर जहाज मे लगी। सभी श्रीरामकृष्ण को देखने के लिए उत्सुक हो रहे है। अच्छी भीड़ है। श्रीरामकृष्ण को निर्विघ्न उतारने के लिए केशव आदि व्यग्र हो रहे है। बड़ी मुश्किल से उन्हे होश मे लाकर कमरे के भीतर ले गए। अभी तक भावस्थ है, एक भक्त का सहारा लेकर चल रहे है। सिर्फ पैर हिल रहे है। केबिन-घर मे आपने प्रवेश किया। केशव आदि भक्तो ने प्रणाम किया किन्तु आपको होश नही। कमरे के भीतर एक मेज और कुछ कुर्सियाँ है। एक कुर्सी पर श्रीरामकृष्ण बैठाए गए, एक पर केशव बैठे। विजय बैठे। दूसरे भक्त फर्श पर जहाँ जगह मिली वही बैठ गए। अनेक मनुष्यो को जगह नही मिली। वे सब बाहर से झाँक-झाँककर देखने लगे। श्रीरामकृष्ण बैठे हुए फिर समाधिस्थ हो गए, – सम्पूर्ण बाह्यज्ञानशून्य। सभी एक नजर से देख रहे है।

केशव ने देखा कि कमरे के भीतर बहुत आदमी है और श्रीरामकृष्ण को तकलीफ

हो रही है। विजय केशव को छोडकर साधारण ब्राह्मसमाज में चले गए है और उनकी कन्या के विवाह आदि के विरुद्ध उन्होंने कितनी वक्तृताएँ दी है, इसलिए विजय को देखकर केशव कुछ अप्रतिभ हो गए। वे आसन छोडकर उठे, कमरे के झरोखे खोल देने के लिए।

ब्राह्मभक्त टकटकी लगाए श्रीरामकृष्ण को देख रहे है। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी, परन्तु अभी तक भाव पूरी मात्रा में वर्तमान है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप अस्फुट स्वरों मे कहते है – 'माँ, मुझे यहाँ क्यो लायी? मै क्या इन लोगो की घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा?'

श्रीरामकृष्ण शायद देख रहे है कि संसारी जीव घेरे के भीतर बन्द है, बाहर नही आ सकते, बाहर का उजेला भी नही देख पाते, सब के हाथ-पैर सांसारिक कामो से बँधे है। केवल घर के भीतर की वस्तु उन्हे देखने को मिलती है। वे सोचते है कि जीवन का उद्देश्य केवल शरीर-सुख और विषय-कर्म – काम और कांचन – है। क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण ने कहा, 'माँ, मुझे यहाँ क्यो लायी? मै क्या इन लोगो की घेरे के भीतर से रक्षा कर सकूँगा?'

धीरे धीरे श्रीरामकृष्ण को बाह्यज्ञान हुआ। गाजीपुर के नीलमाधव बाबू और एक ब्राह्मभक्त ने पवहारी बाबा की बात चलायी।

ब्राह्मभक्त – महाराज, इन लोगो ने पवहारी बाबा को देखा है। वे गाजीपुर मे रहते है, आपकी तरह एक और है।

श्रीरामकृष्ण अभी तक बातचीत नही कर पा रहे है, सुनकर सिर्फ मुसकराए।

ब्राह्मभक्त (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, पवहारी बाबा ने अपने कमरे मे आपका फोटोग्राफ रखा है।

श्रीरामकृष्ण जरा हँसकर अपनी देह की ओर उँगली दिखाकर बोले – "यह गिलाफ !"

(३)

यत्सांख्यै: प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च य: पश्यति स पश्यति।। (गीता, ५।५)

ज्ञानयोग, भक्तियोग तथा कर्मयोग का समन्वय

'तकिया और उसका गिलाफ।' देही और देह। क्या श्रीरामकृष्ण कहते है कि देह नश्वर है, नही रहेगी? देह के भीतर जो देही है वह अविनाशी है, अतएव देह का फोटोग्राफ लेकर क्या होगा? देह अनित्य वस्तु है, इसके आदर से क्या होगा? बल्कि जो

भगवान् अन्तर्यामी है, मनुष्य के हृदय में विराजमान हैं, उन्हीं की पूजा करनी चाहिए।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हुए। वे कह रहे हैं – "परन्तु एक बात है। भक्तों का हृदय उनका निवासस्थान है। भक्तों के हृदय में वे विशेष रूप से रहते हैं। जैसे कोई जमींदार अपनी जमीदारी में सभी जगह रह सकता है, परन्तु वे अमुक बैठक में प्राय: रहते हैं, यही लोग कहा करते हैं। भक्तों का हृदय भगवान् का बैठकघर है। (सब लोग आनन्दित हुए।)

"जिन्हें ज्ञानी ब्रह्म कहते हैं, योगी उन्हीं को आत्मा कहते हैं और भक्त उन्हें भगवान् कहते हैं।

"एक ही ब्राह्मण है। जब पूजा करता है, तब उसका नाम पुजारी है, जब भोजन पकाता है, तब उसे रसोइया कहते है। जो ज्ञानी है, ज्ञानयोग जिसका अवलम्बन है, वह 'नेति नेति' विचार कहता है, – ब्रह्म न यह है, न वह; न जीव है, न जगत्। विचार करते करते जब मन स्थिर होता है, मन का नाश होता है, समाधि होती है, तब ब्रह्मज्ञान होता है। ब्रह्मज्ञानी की सत्यधारणा है कि ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या नामरूप स्वप्नतुल्य है; ब्रह्म क्या है यह मुँह से नही कहा जा सकता; वे व्यक्ति (Personal God) हैं यह भी नहीं कहा जा सकता।

"ज्ञानी इसी प्रकार कहते है – जैसे वेदान्तवादी। परन्तु भक्तगण सभी अवस्थाओं को लेते हैं। वे जाग्रत् अवस्था को भी सत्य कहते हैं; जगत् को स्वप्नवत् नही कहते। भक्त कहते है, यह संसार भगवान् का ऐश्वर्य है; आकाश, नक्षत्र, चन्द्र, सूर्य, पर्वत, समुद्र, जीव-जन्तु आदि सभी भगवान् की सृष्टि है, उन्हीं का ऐश्वर्य है। वे हृदय के भीतर हैं और बाहर भी। उत्तम भक्त कहता है, वे स्वयं ही ये चौबीस तत्त्व – जीवजगत् – बने हैं। भक्त की इच्छा चीनी खाने की है, चीनी होने की नहीं। (सब हँसते हैं।)

"भक्त का भाव कैसा है, जानते हो? 'हे भगवन्, तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ, 'तुम माता हो, मैं तुम्हारी सन्तान हूँ; और यह भी कि 'तुम मेरे पिता या माता हो', 'तुम पूर्ण हो, मैं तुम्हारा अंश हूँ'। भक्त यह कहने की इच्छा नहीं करता कि मैं ब्रह्म हूँ।

"योगी भी परमात्मा के दर्शन करने की चेष्टा करता है। उद्देश्य जीवात्मा और परमात्मा का योग है। योगी विषयों से मन को खींच लेता है और परमात्मा में मन लगाने की चेष्टा करता है। इसीलिए पहले-पहल निर्जन में स्थिर आसन साधकर अनन्य मन से ध्यान-चिन्तन करता है।

"परन्तु वस्तु एक ही है। केवल नाम का भेद है। जो ब्रह्म है, वही आत्मा है, वही भगवान् है। ब्रह्मज्ञानियों के लिए ब्रह्म, योगियों के लिए परमात्मा और भक्तों के लिए भगवान्।"

(४)

त्वमेव सूक्ष्मा त्वं स्थूला व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी।
निराकारापि साकारा कस्त्वां वेदितुमर्हति।। (महानिर्वाण तन्त्र, ४।१५)

वेद तथा तन्त्र का समन्वय। आद्याशक्ति का ऐश्वर्य

इधर जहाज कलकत्ते की ओर जा रहा है, उधर कमरे के भीतर जो लोग श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर रहे है और उनकी अमृतमयी वाणी सुन रहे है, उन्हें सुध नही कि जहाज चल रहा है या नही। भौरा फूल पर बैठने पर फिर क्या भनभनाता है?

धीरे धीरे जहाज दक्षिणेश्वर छोड़कर देवालयो के चित्ताकर्षक दृश्यो के बाहर हो गया। चलते हुए जहाज से मथा हुआ गंगाजल फेनमय तरंगो से भर गया और उससे आवाज होने लगी। परन्तु यह आवाज भक्तो के कानो तक नही पहुँची। वे तो मुग्ध होकर देखते है केवल हँसमुख, आनन्दमय, प्रेमरंजित नेत्रवाले एक अपूर्व प्रियदर्शन योगी को। वे मुग्ध होकर देखते है सर्वत्यागी एक प्रेमी विरागी को, जो ईश्वर को छोड़ और कुछ नही जानते। श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – वेदान्तवादी ब्रह्मज्ञानी कहते है, सृष्टि, स्थिति, प्रलय, जीव, जगत् यह सब शक्ति का खेल है। विचार करने पर यह सब स्वप्नवत् जान पड़ता है, ब्रह्म ही वस्तु है और सब अवस्तु; शक्ति भी स्वप्नवत् अवस्तु है।

"परन्तु चाहे लाख विचार करो, बिना समाधि मे लीन हुए शक्ति के इलाके के बाहर जाने की सामर्थ्य नही। मै ध्यान कर रहा हूँ, मै चिन्तन कर रहा हूँ, – यह सब शक्ति के इलाके के अन्दर है – शक्ति के ऐश्वर्य के भीतर है।

"इसलिए ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है। एक को मानो तो दूसरे को भी मानना पड़ता है। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को मानो तो दाहिका शक्ति को भी मानना पड़ेगा। बिना दाहिका शक्ति के अग्नि का विचार नही किया जा सकता, फिर अग्नि को छोड़कर दाहिका शक्ति का विचार नही किया जा सकता। सूर्य को अलग करके उसकी किरणो की कल्पना नही की जा सकती, न किरणो को छोड़कर कोई सूर्य को ही सोच सकता है।

"दूध कैसा है? सफेद। दूध को छोड़कर दूध की धवलता नहीं सोची जा सकती और न बिना धवलता के दूध ही सोचा जा सकता है।

"इसीलिए ब्रह्म को छोड़कर न शक्ति को कोई सोच सकता है और न शक्ति को छोड़ ब्रह्म को। उसी प्रकार नित्य* को छोड़कर न लीला को कोई सोच सकता है और न

* The Absolute

लीला को छोड़कर नित्य को।

"आद्याशक्ति लीलामयी है। वे सृष्टि, स्थिति और प्रलय करती है। उन्ही का नाम काली है। काली ही ब्रह्म है, ब्रह्म ही काली है। एक ही वस्तु है। वे निष्क्रिय है, सृष्टि-स्थिति-प्रलय का कोई काम नही करते, यह बात जब सोचता हूँ तब उन्हे ब्रह्म कहता हूँ और जब वे ये सब काम करते है, तब उन्हे काली कहता हूँ – शक्ति कहता हूँ। एक ही व्यक्ति है, भेद सिर्फ नाम और रूप मे है।

"जिस प्रकार 'जल', 'वाटर' और 'पानी'। एक तालाब मे तीन-चार घाट है। एक घाट मे हिन्दू पानी पीते है, वे 'जल' कहते है; और एक घाट मे मुसलमान पानी पीते है, वे 'पानी' कहते है, और एक घाट मे अंग्रेज पानी पीते है, वे 'वाटर' कहते है। तीनो एक है, भेद केवल नामो मे है। उन्हे कोई 'अल्लाह' कहता है, कोई 'गाड', कोई 'ब्रह्म' कहता है, कोई 'काली', कोई राम, हरि, ईसा, दुर्गा आदि।"

केशव (सहास्य) – यह कहिए कि काली कितने भावो मे लीला कर रही है।

महाकाली तथा सृष्टिप्रकरण

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – वे नाना भावो से लीला कर रही है। वे ही महाकाली, नित्यकाली, श्मशानकाली, रक्षाकाली और श्यामाकाली है। महाकाली और नित्यकाली की बात तन्त्रो मे है। जब सृष्टि हुई नही थी, सूर्य चन्द्र, ग्रह-पृथ्वी आदि नही थे, – घोर अन्धकार था, तब केवल निराकार महाकाली महाकाल के साथ अभेद रूप से विराज रही थी।

"श्यामाकाली का बहुत कुछ कोमल भाव है, - वराभयदायिनी है। गृहस्थो के घर उन्ही की पूजा होती है। जब अकाल, महामारी, भूकम्प, अनावृष्टि, अतिवृष्टि होती है, तब रक्षाकाली की पूजा की जाती है। श्मशानकाली की संहारमूर्ति है, शव-शिवा-डाकिनी-योगिनियो के बीच, श्मशान मे रहती है। रुधिरधारा, गले मे मुण्डमाला, कटि मे नरहस्तो का कमरबन्द। जब संसार का नाश होता है, महाप्रलय होता है तब माँ सृष्टि के बीज इकट्ठे कर लेती है। घर की गृहिणी के पास जिस प्रकार एक हण्डी रहती है और उसमे तरह तरह की चीजे रखी रहती है।" (केशव तथा और लोग हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ जी, गृहिणियो के पास इस तरह की हण्डी रहती है। उसमे वे समुद्रफेन, नील का डला, खीरे, कोहड़े आदि के बीज छोटी छोटी गठरियो मे बाँधकर रख देती है और जरूरत पड़ने पर निकालती है। माँ ब्रह्ममयी सृष्टिनाश के बाद इसी प्रकार सब बीज इकट्ठे कर लेती है। सृष्टि के बाद आद्याशक्ति संसार के भीतर ही

The relative phenomenal world

रहती है। वे संसार प्रसव करती है, फिर संसार के भीतर रहती है। वेदो मे 'ऊर्णनाभ' की बात है, मकड़ी और उसका जाला। मकड़ी अपने भीतर मे जाला निकालती है और उसी के ऊपर रहती भी है। ईश्वर ससार के आधार और आधेय दोनो है।

कालीब्रह्म – काली निर्गुणा और सगुणा

"काली का रग काला थोडे ही है! दूर है, इसी से काला जान पड़ता है, समझ ने पर काला नही रहता।

"आकाश दूर मे नीला दिखायी पडता है। पास जाकर देखो तो कोई रंग नही। समुद्र का पानी दूर से नीला जान पडता है, पास जाकर चुल्लू मे लेकर देखो, कोई रग नहीं।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम मे मतवाले होकर गाने लगे। भाव यह है - "मेरी माँ क्या काली है? दिगम्बरी का काला रूप हृदयपद्म को प्रकाशपूर्ण करता है।'

(५)

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्य परमव्ययम्।। (गीता, ७।१३)

यह संसार क्यों है?

श्रीरामकृष्ण (केशव आदि से) – बन्धन और मुक्ति दोनो ही की कर्त्री वे है। उनकी माया से ससारी जीव काम-कांचन मे बंधा है और फिर उनकी दया होते ही वह छूट जाता है। वे 'भवबन्धन की फास काटनेवाली तारिणी' है।

यह कहकर गन्धर्वकण्ठ से भक्त रामप्रसाद का गीत गाने लगे जिसका आशय यह है .–

"श्यामा माँ, संसार-रूपी बाजार के बीच तू पतंग उडा रही है। यह आशा-वायु के सहारे उड़ती है। इसमे माया की डोर लगी हुई है। विषयो के माँझे मे यह कड़ी हो गयी है। लाखो मे से दो ही एक (पतंगे) कटती है और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है।'

"वे लीलामयी है। यह संसार उनकी लीला है। वे इच्छामयी, आनन्दमयी है, लाख आदमियो मे कहो एक को मुक्त करती है।"

ब्राह्मभक्त – महाराज, वे चाहे तो सभी को मुक्त कर सकती है, तो फिर क्यो हम लोगो को संसार मे बाँध रखा है?

श्रीरामकृष्ण – उनकी इच्छा। उनकी इच्छा कि वे यह सब लेकर खेल करे। छुई-छुऔअल खेलनेवाले सभी लड़के अगर ढाई को दौड़कर छू ले तो खेल ही बन्द हो जाय। आर यदि सभी छू ले तो ढाई नाराज भी होती है। खेल चलता है तो ढाई खुश रहती है।

इसीलिए कहते हैं – लाखों मे से दो ही एक कटते हैं और तब तू हँसकर तालियाँ पीटती है। (सब प्रसन्न होते हैं।)

"उन्होने मन को आँखों के इशारे कह दिया है – 'जा, संसार में विचर।' मन का क्या कसूर है? वे यदि फिर कृपा करके मन को फेर दें तो विषय-बुद्धि से छुटकारा मिले; तब फिर उनके पादपद्मों में मन लगे।"

श्रीरामकृष्ण संसारियों के भाव में माँ के प्रति अभिमान करके गाने लगे –

(भावार्थ) – "'मै यह खेद करता हूँ कि तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते हुए भी, घर मे चोरी हो! मन में होता है कि तुम्हारा नाम लूँ, परन्तु समय टल जाता है। मैने समझा है, जाना है और मुझे आशय भी मिला है कि यह सब तुम्हारी ही चातुरी है। तुमने न कुछ दिया, न पाया; न लिया, न खाया; यह क्या मेरा ही कसूर है? यदि देती तो पाती, लेती और खाती, मै भी तुम्हारा ही तुम्हे देता और खिलाता। यश अपयश, सुरस कुरस, सभी रस तुम्हारे है। रसेश्वरी! रस मे रहकर यह रसभंग क्यो? 'प्रसाद' कहता है – तुम्ही ने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है। तुम्हारी यह सृष्टि किसी की कुदृष्टि से जल गयी है, पर हम उसे मीठी समझकर भटक रहे हैं।'

"उन्ही की माया से भूलकर मनुष्य संसारी हुआ है। 'प्रमाद' कहता है, तुम्ही ने मन को पैदा करते समय इशारा कर दिया है।"

कर्मयोग। संसार तथा निष्काम कर्म

ब्राह्मभक्त – महाराज, बिना सब त्याग किए क्या ईश्वर नही मिलते?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – नही जी, तुम लोगो को सब कुछ क्यो त्याग करना होगा? तुम लोग तो बड़े अच्छे हो, इधर भी हो और उधर भी, आधा खाँड़ और आधा शिरा! (लोग हँसते है।) बड़े आनन्द मे हो। नक्स का खेल जानते हो? मै ज्यादा काटकर जल गया हूँ। तुम लोग बड़े सयाने हो, कोई दस मे हो, कोई छः मे, कोई पाँच मे। तुमने ज्यादा नही काटा इसलिए मेरी तरह जल नही गए। खेल चल रहा है। यह तो अच्छा है। (सब हँसे।)

"सच कहता हूँ, तुम लोग गृहस्थी में हो, इसमे कोई दोष नही। पर मन ईश्वर की ओर रखना चाहिए। नही तो न होगा। एक हाथ से काम करो और एक हाथ से ईश्वर को पकड़े रहो। काम खतम हो जाने पर दोनो हाथो से ईश्वर को पकड़ लेना।"

"सब कुछ मन पर निर्भर है। मन ही से बद्ध है और मन ही से मुक्त। मन पर जो रंग चढ़ाओगे उसी से वह रँग जायगा। जैसे रँगरेज के घर के कपड़े, लाल रंग से रँगो तो लाल; हरे से रँगो तो हरे; सब्ज से रँगो, सब्ज, जिस रंग से रँगो वही रंग चढ़ जायगा। देखो न, अगर कुछ अंग्रेजी पढ़ लो तो मुँह मे अंग्रेजी शब्द आ जाते है – फुट-फट् इट्-मिट्।

(सब हँसे।) और पैरों मे बूट-जूता, सीटी बजाकर गाना – ये सब आ जाते है। और पण्डित संस्कृत पढ़े तो श्लोक आवृत्ति करने लगता है! मन को यदि कुसंग मे रखो तो वैसी ही बातचीत, वैसी ही चिन्ता हो जाएगी। यदि भक्तो के साथ रखो तो ईश्वरचिन्तन, भगवत्प्रसंग – ये सब होगे।

"मन ही को लेकर सब कुछ है। एक ओर स्त्री है और एक ओर सन्तान। स्त्री को एक भाव से और सन्तान को दूसरे भाव से प्यार करता है, किन्तु है एक ही मन।"

(६)

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। **(गीता, १८।६६)**

ईसाई धर्म, ब्राह्मसमाज और पापवाद

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्मभक्तों के प्रति) – मन ही मे बन्धन है और मन ही में मुक्ति। मै मुक्तपुरुष हू, चाहे संसार में रहूँ, चाहे अरण्य में, मुझे बन्धन कैसा? मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, राजाधिराज का बेटा, मुझे भला कौन बांध सकता है? साँप के काटने पर यदि दृढ़ता के साथ यह कहा जाय कि 'विष नहीं है' तो सचमुच विष उतर जाता है! उसी प्रकार दृढ़ता के साथ यह कहते कहते कि 'मै बद्ध नही, मैं मुक्त हूं', वास्तव मे वैसा ही हो जाता है। मनुष्य मुक्त ही हो जाता है।

"किसी ने ईसाईयों की एक किताब दी थी, मैंने पढ़कर सुनाने के लिए कहा। उसमे केवल 'पाप' 'पाप' ही भरा था। (केशव के प्रति) तुम्हारे ब्राह्मसमाज में भी केवल 'पाप' 'पाप' ही सुनायी देता है। जो व्यक्ति बार बार 'मै बद्ध हू' 'मै बद्ध हूँ' कहता रहता है वह बद्ध ही हो जाता है, जो दिन रात 'मै पापी हूँ' 'मै पापी हूँ' यही रटता रहता है, वह सचमुच पापी ही बन जाता है।

"ईश्वर के नाम पर इस प्रकार का ज्वलन्त विश्वास होना चाहिए – 'क्या! मैंने उनका नाम लिया है, अब भी मुझमे पाप रह सकता है। मुझमे भला पाप कैसा! मुझे भला बन्धन कैसा।' कृष्णकिशोर सनातनी हिन्दू था – सदाचारनिष्ठ ब्राह्मण। एक बार वह वृन्दावन गया था। एक दिन घूमते घूमते उसे प्यास लगी। उसने एक कुएँ के पास जाकर देखा, एक आदमी खड़ा है। उसने उससे कहा, 'क्यो रे तू मुझे एक लोटा पानी पिला सकता है? तू कौन जात है?' वह बोला, 'महाराज, मै नीची जाति का हूँ – चमार हूँ।' कृष्णकिशोर ने कहा, 'तू शिव शिव कह। ले, अब पानी खींच दे।'

"भगवान का नाम लेने से मनुष्य का शरीर, मन – सब कुछ शुद्ध हो जाता है।

"केवल 'पाप' 'नरक' यही सब बाते क्यो? एक बार कहो कि जो कुछ अयोग्य काम किए है उन्हे फिर नही करूँगा, और उनके नाम पर विश्वास रखो।"

श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर नाममाहात्म्य गाने लगे –

(भावार्थ) – "दुर्गा दुर्गा अगर जपूँ मैं जब मेरे निकलेंगे प्राण।
देखूँ कैसे नही तारती, कैसे हो करुणा की खान।।"

"मैने माँ के निकट केवल भक्ति माँगी थी। हाथ मे फूल लेकर माँ के पादपद्मों मे चढ़ाया था, कहा था, 'माँ, यह लो तुम्हारा पाप, यह लो तुम्हारा पुण्य, मुझे शुद्ध भक्ति दो, यह लो तुम्हारा ज्ञान, यह लो तुम्हारा अज्ञान, मुझे शुद्ध भक्ति दो, यह लो तुम्हारी शुचिता, यह लो तुम्हारी अशुचिता, मुझे शुद्ध भक्ति दो, यह लो तुम्हारा धर्म, यह लो तुम्हारा अधर्म, मुझे शुद्ध भक्ति दो।'

(ब्राह्मभक्तों के प्रति) - "एक रामप्रसाद का गीत सुनो -

(भावार्थ) – "चल मन घूमने चलें। कालीरूपी कल्पतरु के नीचे तुझे (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) चारों फल पड़े मिल जाएँगे। अपनी प्रवृत्ति और निवृत्ति इन दो पत्नियों में से तू केवल निवृत्ति को ही साथ ले। उसके विवेक नामक बेटे से तत्त्वज्ञान की बातें पूछना। शुचि अशुचि दोनों को साथ लेकर तू दिव्यगृह में कब सोएगा ? जब इन दो सौतों में प्रीति स्थापित होगी तभी तू श्यामा माँ को पाएगा। अहंकार और अविद्या तेरे पिता और माता हैं - दोनों को भगा दे। यदि मोह तुझे पकड़कर खींचे तो तू धैर्यरूपी खूँटे को पकड़े रह। धर्म अधर्म इन दो बकरों को उपेक्षारूपी खूँटे से बाँधे रख। यदि वे नहीं मानें तो ज्ञानखड्ग के द्वारा उनका बलिदान कर देना। प्रवृत्ति नामक पहली पत्नी की सन्तानों को दूर ही से समझाना। यदि वे न मानें तो उन्हें ज्ञानसिन्धु में डुबो देना। रामप्रसाद कहता है, ऐसा करने पर तू यम को सही जवाब दे सकेगा और तभी तू सच्चा मन होगा।"

गाना समाप्त कर श्रीरामकृष्ण बोले - "संसार में रहकर ईश्वरलाभ क्या नहीं होगा? जनक राजा को हुआ था। रामप्रसाद ने कहा था, यह संसार 'धोखे की जगह' है। परन्तु ईश्वर के चरणकमलों में भक्ति होने पर –

" 'यह संसार मौज की जगह है। मैं यहाँ खाता, पीता और मौज उड़ाता हूँ। जनक राजा महातेजस्वी था, उसकी किसी बात मे कसर नही थी। उसने यह और वह - दोनों बाजू सम्हालकर दूध का प्याला पिया था।' (सब हँसने लगे)

गृहस्थ के लिए उपाय – एकान्तवास तथा विवेक

"परन्तु कोई एकदम फट से जनक राजा नहीं बन जाता। जनक राजा ने निर्जन मे बहुत तपस्या की थी। संसार मे रहते हुए भी बीच बीच मे एकान्तवास करना चाहिए। गृहस्थी से बाहर निकलकर एकान्त मे अकेले रहकर अगर भगवान् के लिए तीन दिन ही रोया जाय तो वह भी अच्छा है। यहाँ तक कि यदि अवसर पाकर एक ही दिन निर्जन में रहकर भगवच्चिन्तन किया जाए तो वह भी अच्छा है। लोग स्त्री-पुत्रों के लिए रोकर लोटाभर आँसू

बहाते हैं, ईश्वर के लिए भला कौन रोता है? बीच बीच में निर्जन में रहकर भगवत्प्राप्ति के लिए साधना करनी चाहिए! संसार के भीतर, विशेषकर कामकाज की झंझट में रहकर प्रथम अवस्था में मन को स्थिर करते समय अनेक बाधाएँ आती हैं। जैसे रास्ते के किनारे लगाया हुआ पेड़, जिस समय वह पौधे की स्थिति में रहता है, उस समय घेरा न लगाने पर गाय-बकरियाँ चर जाती हैं। प्रथम अवस्था में घेरा। किन्तु बादमें तना मजबूत होने पर घेरे की आवश्यकता नहीं रहती। फिर उसमें हाथी बांधनेपर भी कुछ नहीं होता।

"रोग तो हुआ है सन्निपात का। पर जिस कमरे में सन्निपात का रोगी है, उसी कमरे में पानी का घड़ा और इमली का अचार रखा है। अगर रोगी को आराम पहुँचाना चाहते हो तो पहले उसे उस कमरे से हटाना होगा। संसारी जीव मानो सन्निपात के रोगी हैं, और विषय है पानी का घड़ा। विषयभोगतृष्णा मानो जलतृष्णा है। इमली, अचार की बात सिर्फ सोचने से ही मुँह में पानी आ जाता है, वे चीजें पास नहीं लाना पड़ती। रोगी भी उसी रोगी के कमरे में ही रहता है। संसार में स्त्री सहवास ऐसी ही चीज है। इसीलिए निर्जन में जाकर चिकित्सा कराना आवश्यक है।

'विवेक, वैराग्य प्राप्त करके संसार में प्रवेश करना चाहिए। संसारसमुद्र में काम क्रोधादि मगर हैं। बदन में हल्दी मलकर पानी में उतरने पर मगर का डर नहीं रहता। विवेक वैराग्य ही हल्दी है। सदसत्-विचार का नाम विवेक है। ईश्वर ही सत है, नित्यवस्तु है और सब असत्, अनित्य, दो दिन के लिए है - यह बोध ही विवेक है। और ईश्वर के प्रति अनुराग चाहिए, प्रेम, आकर्षण चाहिए - जैसा गोपियों का कृष्ण के प्रति था। एक गाना सुनो

(भावार्थ) - "विपिन में बंसी बज उठी। मुझे तो जाना ही होगा, श्याम मेरी राह देख रहा है। तुम लोग चलोगी या नहीं, बताओ? तुम लोगों के लिए श्याम एक नाम है, पर सखि, मेरे लिए श्याम हृदय की व्यथा है। बंसी तुम्हारे कान में बजती है, पर मेरे तो वह हृदय में बजती है। श्याम की बंसी बज रही है। हे राधे, अब चलो, तुम्हारे बिना कुंज में शोभा नहीं आती।"

श्रीरामकृष्ण ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से यह गीत गाते गाते केशव आदि भक्तों से कहा, "राधाकृष्ण को मानो या न मानो, पर उनके इस आकर्षण को तो ग्रहण करो! ईश्वर के लिए इस प्रकार की व्याकुलता हो, इसके लिए प्रयत्न करो! व्याकुलता के आते ही उन्हें प्राप्त किया जा सकता है।"

(७)

संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः॥ (गीता १२।४)

भाटा शुरू हो गया। जहाज कलकत्ते की ओर द्रुतगति से बढ़ रहा है। इसलिए पुल पार कर कम्पनी के बगीचे की ओर और थोड़ी दूर तक ले जाने के लिए कप्तान को आदेश दिया गया। जहाज कितनी दूर आ पहुँचा है, इसकी अधिकांश लोगो को सुध नही है। वे मग्न होकर श्रीरामकृष्ण की बाते सुन रहे है। समय कैसे चला जा रहा है, इसका होश नही है।

अब मुरमुरे और नारियल के टुकड़े बाँटे गए। सब ने थोड़ा थोड़ा लेकर खाना शुरू किया। आनन्द की हाट लगी है। केशव ने मुरमुरे आदि ला ने की व्यवस्था की थी। ऐसे समय श्रीरामकृष्ण के ध्यान मे आया कि विजय और केशव दोनो ही संकुचित होकर बैठे हुए है। तब जिस प्रकार दो नादान बच्चो मे झगड़ा हो जाने पर कोई बड़ा व्यक्ति समझौता करा देता है, उसी प्रकार श्रीरामकृष्ण उन दोनो के बीच समझौता कराने लगे। 'सर्वभूतहिते रत।'

श्रीरामकृष्ण (केशव के प्रति) – अजी! ये विजय आए है। तुम लोगो का झगड़ा-विवाद मानो शिव और राम की लड़ाई है। राम के गुरु शिव है। दोनो मे युद्ध भी हुआ, फिर सन्धि भी हो गयी। पर शिव के भूतप्रेत और राम के बन्दर ऐसे थे कि उनका झगड़ना किचकिचाना रुकता ही न था। (सब जोर से हँस पड़े।)

"अपने ही लोग है। ऐसा होता ही है। लव-कुश ने भी राम के साथ युद्ध किया था। फिर जानते हो न माँ और बेटी अलग से मंगलवार का व्रत रखती है, मानो माँ का मंगल और बेटी का मंगल अलग अलग है। परन्तु वास्तव मे तो माँ के मंगल मे बेटी का मंगल होता है और बेटी के मंगल से माँ का। इसी तरह तुममे से एक के एक समाज है, अब दूसरे का भी एक चाहिए। (सब हँसते है।) पर यह सब जरूरी है। तुम कहोगे कि जहाँ भगवान् ने स्वयं लीला की, वहाँ जटिला-कुटिला की क्या जरूरत थी ? पर जटिला-कुटिला के सिवा लीला पुष्ट नही हो पाती। बिना उनके रंग नही चढ़ता। (सब जोर से हँसते है।)

'रामानुज विशिष्टाद्वैतवादी थे। उनके गुरु थे अद्वैतवादी। आखिर दोनो मे अनबन होने लगी। गुरु-शिष्य आपस मे एक दूसरे के मत का खण्डन करने लगे। ऐसा हुआ करता है। चाहे जो कुछ हो, फिर भी है तो अपने ही।"

(८)

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।
न त्वत्समोस्त्यऽभ्यधिक: कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव।। (गीता, ११।४३)

गुरुगिरी और ब्राह्मसमाज। एक सच्चिदानन्द ही गुरु है।

सब लोग आनन्दित है। श्रीरामकृष्ण केशव से कहते है, "तुम स्वभाव परखकर

शिष्य नहीं बनाते, इसीलिए आपस में इस तरह की फूट हुआ करती है।

"सभी मनुष्य दिखने में एक सरीखे हैं, पर हर एक का स्वभाव भिन्न है। किसी के भीतर सत्त्वगुण अधिक है, किसी के भीतर रजोगुण तो किसी के भीतर तमोगुण। गुझियाँ बाहर से एक-सी दिखावी देती है पर किसी के भीतर खोया, किसी के भीतर नारियल तो किसी के भीतर उड़द की दाल होती है। (सब हँसते हैं।)

"मेरा भाव क्या है, जानते हो ? मैं खाता, पीता और मजे मे रहता हूँ, बाकी की सब माँ ही जाने। तीन बातों से मेरी देह में मानो काँटा चूभ जाता है -- गुरु, कर्ता और बाबा।

"गुरु एकमात्र सच्चिदानन्द ही है। वे ही सब को शिक्षा देंगे। मेरा सन्तानभाव है। वैसे मनुष्य-गुरु तो लाखो मिलते हैं। सभी गुरु बनना चाहते है। शिष्य कौन बनना चाहता है ?

"लोकशिक्षा देना बड़ा कठिन है। यदि ईश्वर का साक्षात्कार हो और वे आदेश दें, तो यह सम्भव हो सकता है। नारद, शुकदेव आदि को आदेश हुआ था, शंकराचार्य को आदेश हुआ था। आदेश न मिलने से तुम्हारी बात कौन सुनेगा ? कलकत्ते के लोगो की हुल्लड़बाजी तो जानते ही हो! जब तक नीचे लकड़ी जलती है तब दूध उफनकर ऊपर आता है। लकड़ी को खीच लेते ही सब कुछ शान्त हो जाता है। कलकत्ते के लोग हुल्लडबाज है। अभी एक जगह कुआँ खोद रहे है – पानी चाहिए। वहाँ पत्थर निकलने लगे कि खोदना छोड़ दिया! और एक जगह खोदना शुरू किया। वहाँ रेती निकलने लगी कि वह जगह भी छोड़ दी। फिर दूसरी जगह खोदने ही लगे। यही तो उनका हाल है।

"परन्तु आदेश मिला है यह केवल मन मे सोच लेने से नही चलना। ईश्वर सचमुच ही दर्शन देते है और बातचीत करते है। इसी अवस्था मे आदेश प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार आदेशप्राप्त व्यक्ति की बातों मे कितना जोर होता है! पर्वत भी टल जाता है। सिर्फ लेक्चर से क्या होगा ? लोक कुछ दिन सुनेगे, फिर भूल जाएँगे; उसके अनुसार नही चलेगे।

पूर्वकथा – भावनेत्रोंसे हालदारपुकुर का दर्शन

"उस ओर हालदारपुकुर नाम का एक तालाब है। कुछ लोग उसके किनारे रोज सबेरे पाखाना फिरा करते थे। जो लोग सबेरे स्नानादि के लिए आते वे यह देखकर उनके नाम से खूब चिल्लाते, खूब कोसते। पर दूसरे दिन फिर वही हाल! पाखाना फिरना बन्द नही होता था। तब लोगों ने कम्पनी को यह बात जतायी। कम्पनीवालों ने एक चपरासी को भेजा। जब उस चपरासी ने आकर एक कागज चिपका दिया – 'यहाँ पाखाना न फिरें' – तब सब बन्द हो गया। (सब हँसते है)

"लोकशिक्षा देना हो तो चपरास चाहिए। नही तो वह हास्यास्पद बात हो जाती है। खुद को ही नही मिली, दूसरो को देने चला। एक अन्धा दूसरे अन्धे को राह बताते हुए ले चला है। (हास्य) इससे हित होने के बजाय विपरीत ही होता है। ईश्वरलाभ होने पर अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है, उसी समय किसे कौनसा रोग है यह समझ मे आता है, योग्य उपदेश दिया जा सकता है।

"अहंकारविमूढात्मा कर्ताऽहं इति मन्यते"

"आदेश न मिलने पर 'मै लोगो को शिक्षा दे रहा हूँ' इस प्रकार का अहंकार होता है। अहंकार होता है अज्ञान के कारण। अज्ञान मे ऐसा लगता है कि मै कर्ता हूँ। ईश्वर ही कर्ता है, ईश्वर सब कुछ कर रहे है, मै कुछ नही कर रहा हूँ – यह बोध हो जाने पर तो मनुष्य जीवन्मुक्त हो गया। 'मै कर्ता हूँ' इस बोध के कारण ही इतना दुःख, इतनी अशान्ति पैदा होती है ।

(९)

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ।।

केशवादि ब्राह्मभक्तो को कर्मयोगसम्बन्धी उपदेश

श्रीरामकृष्ण (केशवादि से) – तुम लोग 'दुनिया का भला' करने की बात करते हो। क्या दुनिया इतनी छोटी है और तुम कौन हो दुनिया का भला करनेवाले ? साधना के द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार कर लो, उनका लाभ कर लो। वे यदि शक्ति दे तो सब का हित कर सकोगे, अन्यथा नही।

एक भक्त – जब तक ईश्वरलाभ न हो जाय तब तक क्या सब कर्म त्याग दे ?

श्रीरामकृष्ण – नही, कर्मो का त्याग क्यो करोगे ? ईश्वर का चिन्तन, उनका नामगुणगान, नित्यकर्म - यह सब करना पडेगा।

ब्राह्मभक्त – संसार का कर्म ? वैषयिक कर्म ?

श्रीरामकृष्ण - हाँ, वह भी करो, संसारयात्रा के निर्वाह के लिए जितना आवश्यक हो उतना ही। परन्तु निर्जन मे रो-रोकर ईश्वर से प्रार्थना करनी होगी, ताकि इन कर्मो का निष्काम भाव से किया जा सके। कहो, 'हे ईश्वर, मेरे विषय-कर्म कम कर दो, क्योकि प्रभो, मै देख रहा हूँ कि ज्यादा कामकाज के आ पड़ने मे मै तुम्हे भूल जाता हूँ। सोचता हूँ कि मै निष्काम कर्म कर रहा हूँ पर वह सकाम हो जाता है।' दान-धर्म आदि अधिक करने गए कि नाम कमाने की इच्छा आ जाती है।

पूर्वकथा - शम्भु मल्लिक के साथ दानादि कर्मकाण्ड-सम्बन्ध में वार्तालाप

"शम्भु मल्लिक अस्पताल, दवाखाना, स्कूल, रास्ते, तालाब आदि बनवाने की बात कह रहा था। मैने कहा, जो काम सामने आ पड़ा है, *किए बिना नही चल सकता,* उसी को निष्काम होकर करना चाहिए। जान-बूझकर ज्यादा कामो मे उलझना ठीक नही -- इससे ईश्वर का विस्मरण हो जाता है। कालीघाट मे जाकर दान ही करने लग गए, काली के दर्शन हुए ही नही! (हास्य) पहले किसी तरह धक्काधुक्की खाकर भी कालीदर्शन कर लेना चाहिए, उसके बाद चाहे जितना दान करो या न करो, इच्छा हो तो खूब करो। ईश्वरलाभ के लिए ही कर्म है। इसीलिए शम्भु को कहा, अगर ईश्वर के दर्शन हो तो क्या तुम उनसे कहोगे कि कुछ अस्पताल और दवाखाने बनवा दो ? (हास्य) भक्त कभी इस प्रकार नही कहेगा। बल्कि वह तो कहेगा, 'प्रभो, मुझे अपने पादपद्मो मे आश्रय दो, सदा अपने साथ रखो, अपने चरणकमलों के प्रति शुद्ध भक्ति दो'।

"कर्मयोग बड़ा कठिन है। शास्त्र मे जिन कर्मो के बारे मे कहा गया है, कलिकाल मे उन्हे करना बड़ा कठिन है। लोग अन्नगतप्राण है – जीवन अन्न पर ही निर्भर है। अधिक कर्म करना सम्भव नहीं। बुखार होने पर यदि वैद्यजी से चिकित्सा करवाने जायें तो इधर रोगी खत्म हो जाता है। अधिक देरी सहन नहीं होती। आजकल डी. गुप्त का जमाना है। कलियुग में उपाय है भक्तियोग – भगवान् का नामगुणगान और प्रार्थना। भक्तियोग ही युगधर्म है। (ब्राह्मभक्तो के प्रति) तुम लोगो का मार्ग भी भक्तिमार्ग ही है, तुम लोग हरिनामसंकीर्तन करते हो, जगदम्बा का नामगुणगान करते हो, तुम धन्य हो! तुम्हारा भाव बहुत अच्छा है। वेदान्तवादियों की तरह तुम लोग संसार को स्वप्नवत् नही मानते। तुम उस तरह के ब्रह्मज्ञानी नही हो, तुम भक्त हो। तुम ईश्वर को व्यक्ति (Person) मानते हो, यह भी अच्छा भाव है। तुम लोग भक्त हो। व्याकुल होकर ईश्वर को पुकारने से उनके दर्शन अवश्य पाओगे।"

(१०)

सुरेन्द्र के मकान पर नरेन्द्र आदि के साथ

अब जहाज कोयलाघाट लौट आया। सब लोग उतरने की तैयारी करने लगे। कमरे से बाहर निकलते ही सब ने देखा, कोजागरी पौर्णिमा का पूर्णचन्द्र हँस रहा है, भागीरथी के जल पर मानो उसकी ज्योत्स्ना का लीलाविलास चल रहा है। श्रीरामकृष्ण के लिए गाड़ी मँगवायी गयी। कुछ देर बाद मास्टर और एक-दो भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण गाड़ी मे बैठे। केशव के भतीजे नन्दलाल भी गाड़ी मे बैठे, थोड़ी दूर तक साथ जाएँगे।

जब सब जन गाड़ी मे बैठ गए तब श्रीरामकृष्ण ने पूछा, "वे कहाँ है?" अर्थात् केशव कहाँ है? देखते ही देखते केशव आ खड़े हुए। चेहरे पर मुसकान थी। आकर

पूछा, "कौन कौन साथ जा रहे हैं ?" गाड़ी में सब के बैठ जाने पर केशव ने भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण की पदधूलि ग्रहण की। श्रीरामकृष्ण ने भी स्नेहपूर्ण शब्दों में विदा ली।

गाड़ी चलने लगी। यह अंग्रेजों का मुहल्ला है। सुन्दर राजमार्ग है। दोनों ओर सुन्दर सुन्दर इमारतें हैं। पूर्णचन्द्र उदित हुआ है; इमारतें मानो चन्द्र की विमल, शीतल किरणों मे विश्राम कर रही हैं। दरवाजों पर गैसबत्तियाँ, कमरों के भीतर दीपमालाएँ जगमगा रही हैं। जगह जगह पर हार्मोनियम-पियानो के साथ अंग्रेज महिलाएँ गा रही हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्द से मृदु हास्य करते हुए जा रहे हैं। एक जगह एकाएक बोल उठे, "मुझे प्यास लग रही है, क्या किया जाय ?" नन्दलाल ने इण्डिया क्लब के पास गाड़ी रुकवायी और ऊपर जाकर काँच के गिलास में पानी ले आए। श्रीरामकृष्ण ने मुसकराते हुए पूछा, "गिलास धोया है न ?" नन्दलाल के "हाँ" कहने पर श्रीरामकृष्ण ने उस गिलास का पानी पी लिया।

आपका बालक जैसा स्वभाव है। गाड़ी के चलने लगते ही बाहर झाँककर आसपास के मनुष्य, गाड़ी-घोड़े, चाँदनी आदि देखने लगे। हर एक बात में आनन्दित हो रहे हैं।

नन्दलाल कलुटोला में उतरे। श्रीरामकृष्ण की गाड़ी सिमुलिया स्ट्रीट में श्री सुरेश मित्र के मकान के सामने आ पहुँची। श्रीरामकृष्ण इन्हें सुरेन्द्र कहा करते थे। सुरेन्द्र श्रीरामकृष्ण के परम भक्त है।

परन्तु सुरेन्द्र घर में नहीं हैं। अपने नये बगीचे मे गए हैं। घर के लोगों ने बैठने के लिए नीचे का कमरा खोल दिया। गाड़ी का किराया देना होगा। कौन देगा ? अगर सुरेन्द्र होते तो वे ही देते। श्रीरामकृष्ण ने एक भक्त से कहा, "किराया घर की स्त्रियों से माँग लो न! क्या वे नहीं जानतीं कि उनके पति वहाँ आया-जाया करते हैं ?" (सब हँसते हैं।)

नरेन्द्र उसी मुहल्ले में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को बुला लाने कहा। घरवालों ने श्रीरामकृष्ण को दूसरे मँजले पर ले जाकर बैठाया। कमरे की फर्श पर बिछायत बिछी हुई है, उस पर दो-चार तकिये रखे हैं। दीवार पर सुरेन्द्र के द्वारा विशेष प्रयत्नपूर्वक बनावाया हुआ तैलचित्र है, जिसमें श्रीरामकृष्ण केशव को हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध आदि सब धर्म तथा वैष्णव, शाक्त, शैव आदि सब सम्प्रदायों का समन्वय दिखला रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रसन्न बैठकर मुसकराते हुए बातचीत कर रहे हैं। इतने में नरेन्द्र आ पहुँचे। अब तो श्रीरामकृष्ण का आनन्द मानो द्विगुणित हो उठा। आपने कहा, "आज केशव सेन के साथ जहाज में बैठकर घूमने गया था। विजय था, ये सब लोग थे।" मास्टर को निर्देशित करते हुए कहा, "इनसे पूछो, विजय और केशव को मैंने कैसे माँ-बेटी का मंगलवार, जटिला-कुटिला के बिना लीला की पुष्टि नहीं होती – ये सब बातें कहीं। (मास्टर से) क्यों जी ?"

मास्टर – जी हाँ।

रात हो गयी पर अब भी सुरेन्द्र नहीं लौटे। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जाएँगे, अब

अधिक देर नहीं की जा सकती, रात के साढ़े दस बज गए हैं। राह में चन्द्रमा का प्रकाश छाया है।

गाड़ी आयी। श्रीरामकृष्ण चढ़े। नरेन्द्र और मास्टर ने उन्हें प्रणाम किया और दोनों कलकत्ते में अपने अपने घर लौटे।

□□□

परिच्छेद १४

सींती का ब्राह्मसमाज – शिवनाथ आदि ब्राह्मभक्तों के साथ वार्तालाप और आनन्द

(१)

उत्सवमन्दिर

भगवान् श्रीरामकृष्ण सींती का ब्राह्मसमाज देखने आए है। २८ अक्टूबर १८८२ ई., शनिवार, आश्विन की कृष्णा द्वितीया है।

आज यहा ब्राह्मसमाज के छठे महीने का उत्सव होगा। इसीलिए भगवान् श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर बुलाया है। दिन के तीन-चार बजे का समय है, श्रीरामकृष्ण कुछ भक्तो के साथ गाड़ी पर चढ़कर दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर से श्रीयुत वेणीमाधव पाल के मनोहर बगीचे मे पहुँचे है। इसी बगीचे मे ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ करता है। ब्राह्मसमाज को वे बहुत प्यार करते है। ब्राह्मभक्त भी उन्हे बड़ी श्रद्धाभक्ति से देखते है। अभी कल ही शुक्रवार के दिन, शाम को आप केशव सेन और भक्तो के साथ जहाज पर चढ़कर हवाखोरी को निकले थे'

सींती पाइकपाड़ा के पास है। कलकत्ते से तीन मील, उत्तर दिशा मे। स्थान निर्जन और मनोहर है, ईश्वरोपासना के लिए अत्यन्त उपयोगी है। बगीचे के मालिक साल मे दो बार उत्सव मनाते है, एक बार शरत्-काल मे और एक बार वसन्त मे। इस महोत्सव में वे कलकत्ते और सींती के आसपास के ग्रामवासी अनेक भक्तो को निमन्त्रण देते है। अतएव आज कलकत्ते से शिवनाथ आदि भक्त आए है। इनमे से अनेक प्रातःकाल की उपासना में सम्मिलित हुए थे। वे सब सायंकालीन उपासना की प्रतीक्षा कर रहे है। विशेषतः उन लोगो ने सुना है कि अपराह्न मे महापुरुष का आगमन होगा, अतएव उनकी आनन्द-मूर्ति देखेगे, उनका हृदयमुग्धकारी वचनामृत पान करेंगे, मधुर संकीर्तन सुनेगे और देखेगे भगवत्-प्रेममय देवदुर्लभ नृत्य।

दोपहर को बगीचे मे आदमी ठसाठस भर गए है। कोई लतामण्डप की छाया मे बेंच पर बैठा हुआ है, कोई सुन्दर तालाब के किनारे मित्रो के साथ घूम रहा है। कितने ही लोग

समाजगृह मे पहले ही से जगह लेकर आसन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के आने की बाट जोह रहे है। चारो ओर आनन्द उमड़ रहा है। शरद के नील आकाश मे भी आनन्द की छाया झलक रही है। बाग के फूलो से लदे हुए पेड़ो और लताओ से छानकर आती हुई हवा भक्तो के हृदय मे आनन्द का एक झोका लगा जाती है। सारी प्रकृति मानो मधुर स्वर से गा रही है – 'आज हर्ष-शीतल-समीर भरते भक्तो के उर मे है विभु।' सभी उत्कण्ठित हो रहे है, ऐसे समय श्रीरामकृष्ण की गाड़ी आकर समाजगृह के सामने खडी हो गयी।

सभी ने उठकर महापुरुष का स्वागत किया। वे आये है - सुनते ही लोगो ने उन्हे चारो ओर से घेर लिया।

समाजगृह के प्रधान कमरे मे वेदी बनायी गयी है। वह जगह आदमियो से भर गयी है। सामने दालान है, वहा श्रीरामकृष्ण बैठे है, वहाँ भी लोग जम गए है। दालान के दोनो ओर दो कमरे है - वहाँ भी लोग है, - सभी दरवाजे पर खड़े हुए बड़े उत्सुक होकर श्रीरामकृष्ण को देख रहे है। दालान पर चढ़ने की सीढ़ियाँ बराबर दालान के एक छोर से दूसरे छोर तक है। इन सीढ़ियो पर भी अनेक लोग खड़े है। वहा से कुछ दूर पेडो और लतागण्डपो के नीचे रखी हुई बेंचो पर से भी लोग टक लगाकर महापुरुष के दर्शन कर रहे है। दोनो ओर फल और फूलो के पेडो की कतार लगी हुई है, - बीच मे रास्ता है। सभी पेड हवा की झोंको से धीरे धीरे डोल रहे है, मानो वे आनन्दमग्न हो मस्तक नवाकर उनका स्वागत कर रहे हो।

श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए आसन ग्रहण किया। सब की दृष्टि एक साथ उनकी आनन्दमूर्ति पर जा गिरी। जब तक रंगमंच पर खेल शुरू नही होता तब तक दर्शकवृन्दो मे से कोई तो हँसता है, कोई विषयचर्चा छेड़ता है, कोई अकेला या दोस्तो के साथ टहलता है, कोई पान खाता है, कोई सिगरेट पीता है। परन्तु परदा उठते ही सब लोग बातचीत बन्द कर, अनन्यचित्त होकर एकाग्र दृष्टि से खेल देखने लगते है। अथवा, एक फूल से दूसरे फूल मे मंडरानेवाले भौंरे कमल की खोज पाते ही दूसरे फूलो को छोड़कर पद्ममधु का पान करने के लिए भागे चले आते है।

(२)

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।

स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते। (गीता, १४।२६)

हँसमुख श्रीरामकृष्ण शिवनाथ आदि भक्तो की ओर स्नेह की दृष्टि फेरते हुए कहते है, "क्या शिवनाथ! तुम भी आए हो? देखो तुम लोग भक्त हो, तुम लोगो को देखकर बड़ा आनन्द होता है। गंजेड़ो का स्वभाव होता है कि दूसरे गंजेड़ी को देखते ही वह खुश हो जाता है, कभी तो उसे गले ही लगा लेता है। (शिवनाथ तथा अन्य सब हँसते है।)

संसारी लोगों का स्वभाव। नाममाहात्म्य

श्रीरामकृष्ण – जिन्हे मै देखता हूँ कि मन ईश्वर पर नही है, उनसे कहता हूँ 'तुम कुछ देर वहाँ जाकर बैठो' या कह देता हूँ, 'जाओ, इमारते (रानी रासमणि के मन्दिर आदि) देखो।' (सब हँसे।)

"कभी तो देखा है कि भक्तो के साथ निकम्मे आदमी आए है। उनमे बड़ी विषयबुद्धि रहती है। ईश्वरी चर्चा नही सुहाती। भक्त तो बड़ी देर तक मुझसे ईश्वरी वार्तालाप करते है, पर वे लोग उधर बैठे नही रह सकते, तड़फड़ाते है। बार बार कानो मे फिसफिसाते हुए कहते है, 'कब चलोगे – कब चलोगे?' उन्होने अगर कहा, 'ठहरो भी, जरा देर बाद चलते है', तो इन लोगो ने रूठकर कहा, 'तो तुम बातचीत करो, हम नाव पर चलकर बैठते है।' (सब हँसे।)

"संसारी मनुष्यो से यदि कहो कि सब छोड़-छाडकर ईश्वर के पादपद्मो मे मन लगाओ तो वे कभी न सुनेगे। यही कारण है कि गौरांग और नित्यानन्द दोनो भाइयो ने आपस मे विचार करके यह व्यवस्था की – 'मागुर माछेर झोल (मागुर मछली की रसदार तरकारी), युवती मेयेर कोल (युवती स्त्री का अंक), बोल हरि बोल।' प्रथम दोनो के लोभ से बहुत आदमी 'हरि बोल' मे शामिल होते थे। फिर तो हरिनामामृत का कुछ स्वाद पाते ही वे समझ जाते थे कि 'मागुर माछेर झोल' और कुछ नही है, – ईश्वरप्रेम के जो आँसू उमड़ते है, वही है। और युवती स्त्री है पृथ्वी – 'युवती स्त्री का अंक' अर्थात् भगवत्-प्रेम के कारण धूलि मे लोटपोट हो जाना।

"नित्यानन्द किसी तरह हरिनाम करा लेते थे। चैतन्यदेव ने कहा है, ईश्वर के नाम का बड़ा माहात्म्य है। फल जल्दी न मिलने पर भी कभी न कभी अवश्य प्राप्त होगा। जैसे, कोई पक्के मकान के आले मे बीज रखा गया था। बहुत दिनो के बाद जब मकान गिर गया - मिट्टी मे मिल गया, तब भी उस बीज से पेड़ पैदा हुआ और उसमे फल भी लगे।"

मनुष्यप्रकृति तथा तीन गुण। भक्ति का सत्त्व, रज, तम।

श्रीरामकृष्ण – जैसे संसारियो मे सत्त्व, रज और तम – ये तीनो गुण है, भक्ति मे भी सत्त्व, रज और तम तीन गुण है।

"संसारियो का सत्त्वगुण कैसा होता है, जानते हो ? घर यहाँ टूटा है, वहाँ टूटा है – मरम्मत नही कराते। पूजागृह के बरामदे मे कबूतरो की विष्ठा पड़ी है। आँगन मे काई जम गयी है। होश तक नही। असबाब सब पुराने हो गए है। ठीक-ठाक करने की कोशिश नही करते। कपड़ा जो मिला वही सही। देखने मे सीधेसादे, शान्त, दयालु, मिलनसार, कभी किसी का बुरा नही चाहते।

"और फिर संसारियो के रजोगुण के भी लक्षण है। जेब-घड़ी, चेन, उँगलियो मे

दो-तीन अँगूठियाँ मकान की चीजे बड़ी साफ, दीवार पर क्वीन (रानी) की तस्वीर, राजपुत्र की तस्वीर, किसी बड़े आदमी की तस्वीर। मकान चूने से पुता हुआ – कही एक दाग तक नही। तरह तरह की अच्छी पोशाक। नौकरो के भी वर्दियाँ। – आदि आदि।

"संसारियो के तमोगुण के लक्षण है – निद्रा, काम-क्रोध, अहंकार – यही सब।

"और भक्ति का भी सत्त्व है। जिस भक्त मे सत्त्वगुण है वह एकान्त मे ध्यान करता है। कभी तो वह मसहरी के भीतर ध्यान करता है। लोग समझते है कि आप सो रहे है, शायद रात को आँख नही लगी, इसलिए आज उठने मे देर हो रही है। इधर शरीर का ख्याल बस भूख मिटाने तक, साग-पात पाने हा से चल गया। न भोजन मे भरमार, न पोशाक मे टीम-टाम और न घर मे चीजो का जमघट और फिर सतोगुणी भक्त कभी खुशामद करके धन नही कमाता।

"भक्ति का रज जिस भक्त को होता है वह तिलक लगाता है, रुद्राक्ष का माला पहनता है, जिसके बीच बीच सोने के दाने जडे रहने है (सब हँसने है।) जब पूजा करता है तब पीताम्बर पहन लेता है!"

(३)

क्लैब्यं मास्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परंतप।। (गीता, २।३)

श्रीरामकृष्ण – जिसे भक्ति का तम होता है उसका विश्वास अटूट है। इस प्रकार का भक्त हठपूर्वक ईश्वर मे भिड जाता है, मानो डाका डालकर धन छीन लेता है। 'मारो, काटो, बाँधो'! इस तरह डाका डालने का भाव है।

नाममाहात्म्य तथा पाप

श्रीरामकृष्ण ऊर्ध्वदृष्टि है, प्रेमरस से भरे मधुर कण्ठ से गा रहे है, भाव यह है: – " 'काली काली' जपते हुए यदि मेरे शरीर का अन्त हो तो गया गंगा-काशी-कांची-प्रभास आदि की परवाह कौन करता है ? हे काली, तुम्हारा भक्त पूजा-सन्ध्यादि नही चाहता, सन्ध्या खुद उसकी खोज मे फिरती है, पर पता नही लगा सकती। दया-व्रत-दान आदि पर उसका मन नही जाता। मदन के याग-यज्ञ ब्रह्ममयी के रक्तिम चरणो मे होते है। काली के नाम का गुण, जिसे देवाधिदेव महादेव पाचो मुख से गाते है, कौन जान सकता है ?

श्रीरामकृष्ण भावोन्मत्त हो मानो अग्निमन्त्र से दीक्षित होकर गाने लगे। गीत का आशय यह है :–

"यदि मै 'दुर्गा दुर्गा' जपता हुआ मरूँ तो अन्त मे इस दीन को, हे शंकरी, देखूँगा तुम कैसे नही तारती हो।"

श्रीरामकृष्ण – "क्या! मैने उनका नाम लिया हे – मुझे पाप! मै उनकी सन्तान हूँ

– उनके ऐश्वर्य का अधिकारी हूँ!" इस प्रकार की जिद चाहिए।

"तमोगुण को ईश्वर की ओर फेर देने से ईश्वर-लाभ होता है। उनसे हठ करो, वे कोई दूसरे तो नही, अपने ही तो है।

"फिर देखो, यह तमोगुण दूसरो के हित पर लगाया जा सकता है। वैद्य तीन प्रकार के होते है, – उत्तम, मध्यम और अधम। जो वैद्य नाडी देखकर 'दवा खा लेना' कहकर चला जाता है, वह अधम वैद्य है। रोगी ने दवा खाई या नही, इसकी खबर वह नही लेता। जो वैद्य रोगी को दवा खाने के लिए तरह तरह से समझाता बुझाता है, मीठी बातो मे कहता है, 'अजी दवा नही खाओगे तो अच्छे किस तरह होगे। भैया, खा लो, अच्छा मै खुद खरल करके खिलाता हूँ', वह मध्यम वैद्य है और जो वैद्य रोगी को किसी तरह दवा न खाते हुए देखकर छाती पर चढ़ बैठ जबरदस्ती दवा खिलाता है, वह उत्तम वैद्य है। यह वैद्यो का तमोगुण है, इस गुण से रोगी का उपकार होता है, अपकार नही।

तीन प्रकार के आचार्य

"वैद्यो के समान तीन प्रकार के आचार्य भी है। धर्मोपदेश देकर जो शिष्यो की फिर कोई खबर नही लेते वे आचार्य अधम है। जो शिष्यो के हित के लिए बार बार उन्हे समझाते हैं जिससे कि वे उपदेशो की धारणा कर सके, बहुत विनय-प्रार्थना करते है, प्यार करते है, – वे मध्यम आचार्य है। और जब शिष्यो को किसी तरह उपदेश न सुनते देख कोई कोई आचार्य बलपूर्वक उन्हे राह पर लाते है, तो उन्हे उत्तम आचार्य समझना चाहिए।"

(४)

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह। (तैत्तिरीय उपनिषद् २/४)

ब्रह्म का स्वरूप अनिर्वचनीय है

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा – ईश्वर साकार है या निराकार ?

श्रीरामकृष्ण – उनकी इति नही की जा सकती। वे निराकार है, फिर साकार भी है। भक्तो के लिए वे साकार है। जो ज्ञानी है – संसार को जिन्होने स्वप्नवत् मान लिया है, उनके लिए वे निराकार है। भक्त का यह विश्वास है कि मै एक पृथक् सत्ता हूँ तथा संसार एक पृथक सत्ता, इसलिए भक्त के निकट ईश्वर 'व्यक्ति' (Personal God) के रूप मे आते है। ज्ञानी – जैसे वेदान्तवादी – सिर्फ 'नेति नेति' विचार करता है। विचार करने पर उसे यह बोध होता है कि मै मिथ्या हूँ, संसार भी मिथ्या – स्वप्नवत् है। ज्ञानी ब्रह्म को बोधरूप देखता है परन्तु वे क्या है, यह मुँह से नहीं कह सकता।

"वे किस तरह है, जानते हो ? मानो सच्चिदानन्द समुद्र है जिसका ओर-छोर नही।

भक्तो के पास वे व्यक्तभाव से कभी कभी साकाररूप धारण करते हैं। ज्ञान-सूर्य का उदय होने पर वह बर्फ गल जाती है, तब ईश्वर के व्यक्तित्व का बोध नहीं रह जाता – उनका रूप भी नहीं दिखायी देता। वे क्या हैं, मुँह, से नहीं कहा जा सकता। कहे कौन! जो कहेंगे वे ही नहीं रह गए, उनका 'मैं' ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलता।

"विचार करते करते फिर 'मैं' नहीं रह जाता। जब तुम प्याज छीलते हो, तब पहले लाल छिलके निकलते हैं। फिर सफेद मोटे छिलके। इसी तरह लगातार छीलते जाओ तो भीतर ढूँढने से कुछ नहीं मिलता।

"जहाँ अपना 'मैं' खोजे नहीं मिलता – और खोजे भी कौन? – वहाँ ब्रह्म के स्वरूप का बोध किस प्रकार होता है, यह कौन कहे! नमक का एक पुतला समुद्र की थाह लेने गया। समुद्र मे ज्योंही उतरा कि गलकर पानी हो गया। फिर खबर कौन दे?

"पूर्ण ज्ञान का लक्षण यह है, – पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य चुप हो जाता है। तब 'मैं' रूपी नमक का पुतला सच्चिदानन्दरूपी समुद्र मे गलकर एक हो जाता है, फिर जरा भी भेदबुद्धि नही रह जाती।

"विचार करने का जब तक अन्त नही होता, तब तक लोग तर्क पर तुले रहते है। अन्त हुआ कि चुप हो गए। घड़ा भर जाने से – घड़े का जल और तालाब का जल एक हो जाने से - फिर शब्द नही होता। जब तक घड़ा भर नही जाता, शब्द तभी तक होता है।

"पहले के लोग कहते थे, काले पानी मे जहाज जाने से फिर लौट नही सकता।

मैं मन नहीं जा सकता

" 'मैं' मरा कि बला टली। (हास्य) विचार चाहे लाख करो पर 'मैं' दूर नही होता। तुम्हारे और हमारे लिए 'मैं भक्त हूँ' यह अभिमान अच्छा है।

"भक्तों के लिए सगुण ब्रह्म हैं अर्थात् वे सगुण अर्थात् मनुष्य के रूप मे दर्शन देते हैं। प्रार्थनाओ के सुननेवाले वे ही हैं। तुम लोग जो प्रार्थना करते हो वह उन्हीं से करते हो। तुम लोग न वेदान्तवादी हो, न ज्ञानी; तुम लोग भक्त हो। साकार रूप मानो चाहे न मानो, इसमें कुछ हानि नहीं केवल यह ज्ञान रहने ही से काम होगा कि ईश्वर एक वह व्यक्ति हैं जो प्रार्थनाओं को सुनते हैं, सृजन, पालन और प्रलय करते हैं, जिनमें अनन्त शक्ति है।

"भक्तिमार्ग से ही वे जल्दी मिलते हैं।"

(५)

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप।। (गीता, ११।५४)

ईश्वरदर्शन – साकार तथा निराकार

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, "महाराज, ईश्वर को क्या कोई देख सकता है? अगर देख सकता है तो हमें वे क्यों नहीं देखने को मिलते?"

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वे अवश्य देखने को मिलते हैं। साकार रूप देखने में आता है और फिर अरूप भी दीख पड़ता है, परन्तु यह तुम्हें समझाऊँ किस तरह?

ब्राह्मभक्त – हम उन्हें किस उपाय से देख सकने हैं?

श्रीरामकृष्ण – व्याकुल होकर उनके लिए रो सकत हो? लड़के के लिए, स्त्री के लिए, धन के लिए लोग आँसुओं की झड़ी बाँध देते हैं, परन्तु ईश्वर के लिए कौन रोता है? जब तक लड़का खिलौने पर भूला रहता है तब तक माँ रोटी पकाना आदि घरगृहस्थी के कामों में लगी रहती है। जब लड़के को खिलौना नहीं सुहाता, उसे फेंक, गला फाड़कर रोने लगता है, तब माँ तवा उतारकर दौड़ आती है, – बच्चे को गोद में उठा लेती है।

ब्राह्मभक्त – महाराज, ईश्वर के स्वरूप पर इतने भिन्न भिन्न मत क्यों हैं? कोई कहता है साकार और कोई कहता है निराकार। फिर साकारवादियों से तो अनेक रूपों की चर्चा सुन पड़ती है। यह गोरखधन्धा क्यों रचा है?

श्रीरामकृष्ण – जो भक्त जिस प्रकार देखता है वह वैसा ही समझता है। वास्तव मे गोरखधन्धा कुछ भी नहीं। यदि उन्हें कोई किसी तरह एक बार प्राप्त कर सके, तो वे सब समझा देते हैं। उस मुहल्ले में गए ही नहीं, – कुल खबर कैसे पाओगे?

"एक कहानी सुनो। एक आदमी शौच के लिए जंगल गया। उसने देखा कि पेड़ पर एक जन्तु बैठा है। लौटकर उसने एक दूसरे से कहा – 'देखो जी, उस पेड़ पर हमने एक लाल रंग का सुन्दर जीव देखा है।' उस आदमी ने जवाब दिया – 'जब मै शौच के लिए गया था तब मैंने भी देखा; पर उसका रंग लाल तो नहीं है – वह तो हरा है!' तीसरे ने कहा – 'नहीं जी नहीं, हमने भी देखा है, पीला है।' इसी प्रकार और भी कुछ लोग थे जिनमें से किसी ने कहा भूरा, किसी ने बैंगनी, किसी ने आसमानी आदि आदि। अन्त में लड़ाई ठन गयी। तब उन लोगों ने पेड़ के नीचे जाकर देखा। वहाँ एक आदमी बैठा था। पूछने पर उसने कहा – 'मैं इसी पेड़ के नीचे रहता हूँ। उस जीव को मैं खूब पहचानता हूँ। तुम लोगों ने जो कुछ कहा, सब सत्य है। वह कभी लाल, कभी हरा, कभी पीला, कभी आसमानी और भी न जाने कितने रंग बदलता है। वह बहुरुपिया है। और फिर कभी देखता हूँ, कोई रंग नहीं!'

"अर्थात् जो मनुष्य सर्वदा ईश्वर-चिन्तन करता है, वही जान सकता है कि उनका स्वरूप क्या है। वही मनुष्य जानता है कि वे अनेकानेक रूपों में दर्शन देते हैं, अनेक भावों में दीख पड़ते हैं, – वे सगुण हैं और निर्गुण भी। जो पेड़ के नीचे रहता है वही जानता है कि उस बहुरुपिया के कितने रंग हैं, – फिर कभी कभी तो कोई भी रंग नहीं रहता। दूसरे

लोग केवल वादविवाद करके कष्ट उठाते है। कबीर कहते थे, – 'निराकार मेरा पिता है और साकार मेरी माँ।'

"भक्त को जो स्वरूप प्यारा है, उसी रूप से वे दर्शन देते है – वे भक्तवत्सल है न। पुराण मे कहा है कि वीरभक्त हनुमान के लिए उन्होने रामरूप धारण किया था।

कालीरूप तथा श्यामरूप की व्याख्या

"वेदान्त-विचार के सामने नाम-रूप कुछ नही ठहरते। उस विचार का चरम सिद्धान्त है – 'ब्रह्म सत्य और नामरूपोवाला संसार मिथ्या।' जब तक 'मै भक्त हूँ' यह अभिमान रहता है, तभी तक ईश्वर का रूप दिखायी देना और ईश्वर के सम्बन्ध मे व्यक्ति (Person) का बोध रहना सम्भव है। विचार की दृष्टि से देखे तो भक्त के 'मै भक्त हू' इस अभिमान ने उसे कुछ दूर कर रखा है।

"कालीरूप या श्यामरूप साढ़ेतीन हाथ का इसलिए है कि वह दूर है। दूर होने ही के कारण सूर्य छोटा दिखता है। पास जाओ तो इतना बड़ा मालूम होगा कि उसकी धारणा हो न कर सकोगे। और फिर कालीरूप या श्यामरूप श्यामवर्ण क्यो है? – क्योकि वह भी दूर है। सरोवर का जल दूर से हरा, नीला या काला दीख पड़ता है, निकट जाकर हाथ मे लेकर देखो, कोई रंग नही। आकाश दूर ही से नीला दिखायी देता है, पास जाकर देखो तो कोई रंग नही।

"इसलिए कहता हूँ, वेदान्त-दर्शन के विचार से ब्रह्म निर्गुण है। उनका स्वरूप क्या है यह मुँह से नही कहा जा सकता। परन्तु जब तक तुम स्वयं सत्य हो तब तक संसार भी सत्य है, ईश्वर के नामरूप भी सत्य है, ईश्वर को एक व्यक्ति समझना भी सत्य है।

"तुम्हारा मार्ग भक्तिमार्ग है। यह बड़ा अच्छा है, सरल मार्ग है। अनन्त ईश्वर समझ मे थोड़े ही आ सकते है? और उन्हे समझने की जरूरत भी क्या? यह दुर्लभ मनुष्यजन्म प्राप्त कर हमे वह करना चाहिए जिससे उनके चरण-कमलो मे भक्ति हो।

"यदि लोटेभर पानी से हमारी प्यास बुझे तो तालाब मे कितना पानी है, इसकी नापतौल करने की क्या जरूरत? अगर अद्धेभर शराब से हम मस्त हो जायँ तो कलवार की दूकान मे कितने मन शराब है, इसकी जाँच-पड़ताल करने का क्या काम? अनन्त का ज्ञान प्राप्त करने का क्या प्रयोजन?

(६)

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते।। (गीता, ३।१७)

ईश्वरलाभ के लक्षण – सप्तभूमि तथा ब्रह्मज्ञान

"वेदों में ब्रह्मज्ञानी की अनेक प्रकार की अवस्थाओं का वर्णन है। ज्ञानमार्ग बड़ा कठिन मार्ग है। विषय-वासना – कामिनी-कांचन के प्रति आसक्ति – का लेशमात्र रहते ज्ञान नहीं होता। यह पथ कलिकाल में साधन करने योग्य नहीं।

"इस विषय में वेदों में सप्तभूमि (Seven Planes) का उल्लेख है। मन इन सात सोपानों पर विचरण किया करता है। जब वह संसार में रहता है तब लिंग, गुदा और नाभि उसके निवासस्थल हैं। तब वह उन्नत दशा पर नहीं रहता – केवल कामिनी-कांचन में लगा रहता है। मन की चौथी भूमि है हृदय। तब चैतन्य का उदय होता है, और मनुष्य को चारों ओर ज्योति दिखलायी पड़ती है। तब वह मनुष्य ईश्वरी ज्योति देखकर सविस्मय कह उठता है, 'यह क्या है, यह क्या है' तब फिर नीचे (संसार की ओर) मन नहीं मुड़ता।

"मन की पंचम भूमि है कण्ठ। जिसका मन कण्ठ तक पहुँचा है उसकी सारी अविद्या, सम्पूर्ण अज्ञान दूर हो गया है। ईश्वरी प्रसंग के सिवा और कोई बात न तो सुनने को और न कहने को उसका जी चाहता है। यदि कोई व्यक्ति दूसरी चर्चा छेड़ता है तो वह वहाँ से उठ जाता है।

"मन की छठी भूमि कपाल है। मन वहाँ जाने से दिनरात ईश्वरी रूप के दर्शन होते है। उस समय भी कुछ 'मैं' रहता है। वह मनुष्य उस अनुपम रूप को देखकर मतवाले की तरह उसे छूने तथा गले लगाने को बढ़ता है, परन्तु पाता नहीं। जैसे लालटेन के भीतर बत्ती को जलते देखकर, मन में आता है कि छूना चाहें तो हम इसे छू सकते हैं, परन्तु काँच के आवरण के कारण हम उसे छू नहीं पाते।

"शिरोदेश सप्तम भूमि है। वहाँ मन जाने से समाधि होती है और ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का प्रत्यक्ष दर्शन करता है। परन्तु उस अवस्था में शरीर अधिक दिन नहीं रहता है। सदा बेहोश, कुछ खाया नहीं जाता, मुँह में दूध डालने से भी गिर जाता है। इस भूमि में रहने से इक्कीस दिन के भीतर मृत्यु होती है। यही ब्रह्मज्ञानियों की अवस्था है। तुम लोगों के लिए भक्तिपथ है। भक्तिपथ बड़ा अच्छा और सहज है।

समाधि होनेपर कर्मत्याग – पूर्वकथा – श्रीरामकृष्ण का तर्पणादि कर्मत्याग

"मुझसे एक मनुष्य ने कहा था, 'महाराज, मुझे आप समाधि सिखा सकते हैं?' (सब हँसते हैं।)

"समाधि होने पर सब कर्म छूट जाते हैं। पूजा-जपादि कर्म, विषय-कर्म सब छूट जाते हैं। पहले-पहल कामों की बड़ी रेलपेल होती है, परन्तु ईश्वर की ओर जितना ही बढ़ोगे, कामों का आडम्बर उतना ही घटता जाएगा; यहाँ तक कि नामगुणकीर्तन तक छूट जाता है। (शिवनाथ से) जब तक तुम सभा में नहीं आए कि तब तक तुम्हारे नाम और गुणों

की बड़ी चर्चा चलती रही। ज्योही तुम आए कि वे सब बातें बन्द हो गयी। तब तुम्हारे दर्शन से ही आनन्द मिलने लगा। लोग कहने लगे, 'यह लो, शिवनाथ बाबू आ गए।' फिर तुम्हारे बारे में और सब बाते बन्द हो जाती है।

"मेरी यह अवस्था होने पर गंगा मे तर्पण करने के लिए जाकर मैंने देखा, उँगलियो के भीतर से पानी गिरा जा रहा है। तब हलधारी से रोते हुए पूछा, दादा, यह क्या हो गया? हलधारी बोला, इसे 'गलितहस्त' कहते है। ईश्वरदर्शन के बाद तर्पणादि कर्म नही रह जाते।

"संकीर्तन करते समय पहले कहते है, 'निताई आमार माता हाथी!' 'निताई आमार माता हाथी!' (मेरा निताई मतवाले हाथी की तरह नाच रहा है) भाव गहरा होने पर सिर्फ 'हाथी हाथी' कहते है। इसके बाद केवल 'हाथी' शब्द मुंह मे लगा रहता है। अन्त को 'हा' कहते हुए भाव-समाधि होती है। तब वे जो अब तक कीर्तन कर रहे थे, चुप हो जाते है।

"जैसे ब्रह्मभोज मे पहले खूब शोरगुल मचता है। जब सभी के आगे पत्तल पड़ जाती है तब गुलगपाड़ा बहुत-कुछ घट जाता है। केवल 'पूड़ी लाओ, पूड़ी लाओ' की आवाज होती रहती है। फिर जब लोग पूड़ी तरकारी खाना शुरू करते है तब बारह आना शब्द घट जाता है। जब दही आया तब सप-सप् (सब हँसते है।) – शब्द मानो होता ही नही। और भोजन के बाद निद्रा। तब सब चुप!

"इसीलिए कहा कि पहले-पहल कामों की बड़ी रेलपेल रहती है। ईश्वर के रास्ते पर जितना बढ़ोगे उतने ही कर्म घटते जायेंगे। अन्त को कर्म छूट जाते है। और समाधि होती है।

"गृहस्थ की बहू के गर्भवती होने पर उसकी सास काम घटा देती है। दसवे महीने मे काम अक्सर नहीं करना पड़ता। लड़का होने पर उसका काम बिलकुल छूट जाता है। फिर वह सिर्फ लड़के की देखभाल में रहती है। घर-गृहस्थी का काम सास, ननद, जेठानी ये ही सब करती है।

समाधि के बाद लोकशिक्षा

"समाधिस्थ होने के बाद प्राय: शरीर नही रहता। किसी किसी का शरीर लोक-शिक्षण के लिए रह जाता है, – जैसे नारदादिकों का और चैतन्य जैसे अवतारपुरुषों का। कुआँ खुद जाने पर कोई कोई झौवा कुदाल फेंक देते है। कोई कोई रख लेते हैं, – सोचते हैं, शायद पड़ोस में किसी दूसरे को जरूरत पड़े। इसी प्रकार महापुरुष जीवों का दु:ख देखकर विकल हो जाते हैं। ये स्वार्थी नहीं होते कि अपने ही ज्ञान से मतलब रखें। स्वार्थी लोगों की कथा तो जानते हो। कटी उँगली पर भी नहीं मूतते कि कहीं दूसरे का उपकार न हो जाय। (सब हँसे।) एक पैसे की बर्फी दूकान से ले आने को कहो तो उसमें से भी

कुछ साफ कर जायेंगे। (सब हँसते है।)

"परन्तु शक्ति की विशेषता होती है। छोटा आधार (साधारण मनुष्य) लोकशिक्षा देते डरता है। सड़ी लकड़ी खुद तो किसी तरह बह जाती है; परन्तु एक चिड़िया के बैठने से भी वह डूब जाती है। नारदादि 'बहादुरी' लकड़ी है। ऐसी लकड़ी खुद भी बहती है और कितने ही मनुष्यों, मवेशिया, यहाँ तक कि हाथी को भी अपने ऊपर लेकर बह जाती है।"

(७)

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा, भयेन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देव रूपं, प्रसीद देवेश जगन्निवास॥ (गीता, ११।४५)

ब्राह्मसमाज की प्रार्थनापद्धति। ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन।

पूर्वकथा – दक्षिणेश्वर के राधाकान्त मन्दिर में जेवर की चोरी

श्रीरामकृष्ण (शिवनाथ आदि से) – क्यो जी तुम लोग इतना ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन क्यो करते हो? मैंने केशव सेन से यही कहा था। एक दिन केशव वहाँ (कालीमन्दिर) गया था। मैंने कहा, तुम लोग किस तरह लेक्चर देते हो, मैं सुनूँगा। गंगाघाट की चाँदनी मे सभा हुई, और केशव बोलने लगा। खूब बोला। मुझे भाव हो गया था। बाद मे केशव से मैंने कहा, तुम यह सब इतना क्यो बोलते हो – हे ईश्वर, तुमने कैसे सुन्दर सुन्दर फूलो की रचना की, तुमने आकाश की सृष्टि की, तुमने नक्षत्र बनाए, तुमने समुद्र का सृजन किया – यह सब! जो स्वयं ऐश्वर्य चाहते है उन्हे ईश्वर के ऐश्वर्य का वर्णन करना अच्छा लगता है। जब राधाकान्त का जेवर चोरी गया था, तब बाबू (रानी रासमणि के जामाता) राधाकान्त के मन्दिर मे जाकर ठाकुरजी से बोले, 'क्यो महाराज, तुम अपने जेवर की रक्षा न कर सके'' मैंने बाबू से कहा, 'यह तुम्हारी कैसी बुद्धि है! स्वयं लक्ष्मी जिनकी दासी है, चरणसेवा करती है, उनको ऐश्वर्य की क्या कमी है? यह जेवर तुम्हारे लिए ही अमोल वस्तु है, ईश्वर के लिए तो कंकड़-पत्थर है। राम राम! ऐसी बुद्धिहीनता की बाते न किया करो। कौन बड़ा ऐश्वर्य तुम उन्हे दे सकते हो?' इसीलिए कहता हूँ जिसका मन जिस पर रम जाता है वह उसी को चाहता है, कहाँ वह रहता है, उसकी कितनी कोठियाँ है, कितने बगीचे है, कितना धन है, परिवार मे कौन कौन है, नौकर कितने है – इसकी खबर कौन लेता है? जब मै नरेन्द्र को देखता हूँ, तब सबकुछ भूल जाता हूँ। उसका घर कहाँ है, उसका बाप क्या करता है, उसके कितने भाई है, ये सब बाते कभी भूलकर भी नही पूछी, ईश्वर के मधुर रस मे डूब जाओ। उनकी सृष्टि अनन्त है, ऐश्वर्य अनन्त है। ज्यादा ढूँढ़-तलाश की क्या जरूरत?

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से गाने लगे। गीत इस आशय का है – " 'ऐ मन तू रूप

के समुद्र में डूबा जा। तलातल पाताल खोजने पर तुझे प्रेमरत्न-धन मिलेगा। खोज, जी लगाकर खोज। खोजने ही से तू हृदय मे वृन्दावन देखेगा। तब वहाँ सदा ज्ञान की बत्ती जलेगी। भला ऐसा कौन है जो ज़मीन पर डोंगा चलायेगा? कबीर कहते हैं, तू सदा श्रीगुरू का चरणचिन्तन कर।'

"दर्शन के बाद कभी कभी भक्त की साध होती है कि उनकी लीला देखे। श्रीरामचन्द्रजी जब राक्षसों को मारकर लंकापुरी मे घुसे तब बुड्ढी निकषा भागी। तब लक्ष्मण बोले, 'हे राम, भला यह क्या है? यह निकषा इतनी बुड्ढी है, पुत्रशोक भी इसको कम नहीं हुआ, फिर भी इसे प्राणों का इतना भय है कि भाग रही है!' श्रीरामचन्द्रजी ने निकषा को अभय देते हुए सामने लाकर कारण पूछा। वह बोली, 'राम इतने दिनों तक बची हूँ, इसीलिए तुम्हारी इतनी लीला देखी। यही कारण है कि और भी बचना चाहती हूँ। न जाने और कितनी लीलाएँ देखूँ'। (सब हँसते हैं।)

(शिवनाथ से) – "तुम्हें देखने को जी चाहता है। शुद्धात्माओं को बिना देखे किसको लेकर रहूँगा? शुद्धात्मा मेरे पिछले जन्म के मित्र जान पड़ते है।"

एक ब्राह्मभक्त ने पूछा, – "महाराज, आप जन्मान्तर मानते हैं?"

जन्मान्तर – "बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन"

श्रीरामकृष्ण – हाँ, मैंने सुना है कि जन्मान्तर होता है। ईश्वर का काम हम लोग अल्पबुद्धि से कैसे समझ सकते हैं? अनेकों ने कहा है, इसलिए अविश्वास नहीं कर सकते। भीष्मदेव देह छोड़ना चाहते हैं, शरों की शय्या पर लेटे हुए हैं; सब पाण्डव श्रीकृष्ण के साथ खड़े हैं। सब ने देखा, भीष्मदेव की आँखों से आँसू बह रहे हैं। अर्जुन श्रीकृष्ण से बोले, 'भाई, यह तो बड़े आश्चर्य की बात है कि पितामह– जो स्वयं भीष्मदेव ही हैं; सत्यवादी, जितेन्द्रिय, ज्ञानी, आठों वसुओं में से एक हैं – वे भी देह छोड़ते समय माया में पड़े रो रहे हैं।' यह भीष्मदेव से जब श्रीकृष्ण ने कहा तब वे बोले, 'कृष्ण', तुम खूब जानते हो कि मैं इसलिए नही रो रहा हूँ। जब सोचता हूँ कि स्वयं भगवान् पाण्डवों के सारथि हैं, फिर भी उनके दु:ख और विपत्तियों का अन्त नहीं होता तब यही याद करके आँसू बहाता हूँ कि परमात्मा के कार्यो का कुछ भी भेद न पाया।'

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द

समाजगृह मे सन्ध्याकाल की उपासना शुरू हुई। रात के साढ़े आठ बजे का समय है। चाँदनी रात है। बगीचे के वृक्ष लताएँ, कुंज आदि शरत्कालीन चन्द्रमा की निर्मल किरणों में आप्लावित हो उठे। समाजगृह में संकीर्तन हो रहा है। श्रीरामकृष्ण भगवत्प्रेम से मतवाले होकर नाच रहे हैं। ब्राह्म भक्तगण मृदंग-करताल लेकर, उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। भाव में भरे हुए सभी मानो ईश्वर-दर्शन कर रहे हैं। हरिनाम-ध्वनि उत्तरोत्तर बढ़ने लगी।

चारों ओर के ग्रामवासीगण हरिनाम सुन रहे हैं और मन ही मन बगीचे के मालिक वेणीमाधव को कितना धन्यवाद दे रहे हैं।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने जगन्माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। प्रणाम करते हुए कह रहे हैं, "भागवत भक्त भगवान, ज्ञानी के चरणों में प्रणाम है, साकारवादी भक्तों और निराकारवादी भक्तों के चरणों में प्रणाम है, पहले के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों में और आजकल के ब्राह्मसमाज के ब्रह्मज्ञानियों के चरणों मे प्रणाम है।"

वेणीमाधव ने अच्छे से अच्छे रुचिकर पकवान भक्तां को खिलाए। श्रीरामकृष्ण ने भी भक्तो के साथ आनन्दपूर्वक प्रसाद पाया।

परिच्छेद १५

सर्कस में श्रीरामकृष्ण –

गृहस्थ तथा अन्यान्य कर्मयोगियों की कठिन समस्या

श्रीरामकृष्ण गाड़ी से श्यामपुकुर विद्यासागर स्कूल के फाटक पर आ पहुँचे। दिन के तीन बजे का समय होगा। साथ मे उन्होने मास्टर को भी ले लिया। राखाल तथा अन्य दो एक भक्त गाड़ी मे है। आज बुधवार, १५ नवम्बर १८८२ ई., कार्तिक शुक्ला पंचमी है। गाड़ी चितपुर रास्ते से, किले के मैदान की ओर जा रही है।

श्रीरामकृष्ण आनन्दमय है। मतवाले की तरह गाड़ी से कभी इस ओर तथा कभी उस ओर मुख करके बालक की तरह देख रहे है और पथिकों के सम्बन्ध मे भक्तों से बातचीत कर रहे है। मास्टर से कह रहे है, "देखो सब लोगा को देखता हूँ, कैसे निम्न दृष्टि के है। पेट के लिए सब जा रहे है। ईश्वर की ओर दृष्टि नही है।"

श्रीरामकृष्ण आज किले के मैदान मे विल्सन सर्कस देखने जा रहे हैं। मैदान में पहुँचकर टिकट खरीदी गयी। आठ आने की अर्थात् अन्तिम श्रेणी की टिकट। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को लेकर ऊँचे स्थान पर जाकर एक बेंच पर बैठे। श्रीरामकृष्ण आनन्द से कह रहे है, "वाह! यहाँ से बहुत अच्छा दिखता है।

सर्कस मे तरह तरह के खेल काफी देर तक दिखाए गए। गोलाकार रास्ते पर घोड़ा दौड़ रहा है, घोड़े की पीठ पर एक पैर पर मेम खड़ी है। फिर बीच बीच मे सामने बड़े बड़े लोहे के चक्र रखे है। चक्र के पास आकर घोड़ा जब उसके नीचे से दौड़ता है, तो मेम घोड़े की पीठ से कूदकर चक्र के बीच मे से होकर फिर घोड़े की पीठ पर एक पैर पर खड़ी हो जाती है। घोड़ा बार बार तेजी के साथ उस गोलाकार पथ पर दौड़ने लगा, मेम भी फिर उसी प्रकार पीठ पर खड़ी है!

सर्कस समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उतरकर मैदान में गाड़ी के पास आए। ठण्ड पड़ रही थी। हरे रंग की शाल ओढ़कर मैदान मे खड़े खड़े बातचीत कर रहे है। पास ही भक्तगण खड़े है। एक भक्त के साथ मे आपके लिए मसाले (लौंग, इलायची आदि) का एक छोटासा बटुआ है। उसमे कुछ मसाला और विशेष रूप से कबाबचीनी है।

पहले साधना, बाद में संसार। अभ्यासयोग।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, "देखो, मेम कैसे एक पैर के सहारे घोड़े पर खड़ी है और घोड़ा तेजी से दौड़ रहा है। कितना कठिन काम है! अनेक दिनो तक अभ्यास किया है, तब तो ऐसा सीखा। जरा असावधान होते ही हाथ-पैर टूट जाएँगे और मृत्यु भी हो सकती है। संसार करना इसी प्रकार कठिन है। बहुत साधन-भजन करने के बाद ईश्वर की कृपा से कोई कोई इसमे सफल हुए है। अधिकांश लोग असफल हो जाते हैं। संसार करने जाकर और भी बद्ध हो जाते है, और भी डूब जाते है – मृत्यु-यन्त्रणा होती है! जनक आदि की तरह किसी किसी ने उग्र तपस्या के बल पर संसार किया था। इसलिए साधन-भजन की विशेष आवश्यकता है। नही तो संसार मे ठीक नही रहा जा सकता।"

बलराम के मकान पर श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी बागबाजार के बसुपाडा मे बलराम के मकान के दरवाजे पर आ खड़ी हुई। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ दुमँजले पर बैठकघर मे जा बैठे। सायंकाल है – दिया जलाया गया है। श्रीरामकृष्ण सर्कस की बाते कर रहे है। अनेक भक्त एकत्रित हुए है। उनके साथ ईश्वर-सम्बन्धी चर्चा हो रही है। मुख मे दूसरी कोई भी बात नहीं है, केवल ईश्वर की बात।

जातिभेद तथा अस्पृश्यों की समस्या

जातिभेद के सम्बन्ध मे चर्चा चली।

श्रीरामकृष्ण बोले, "एक उपाय से जातिभेद उठ सकता है। वह उपाय है – भक्ति। भक्तो के जाति नही है। भक्ति होने से ही देह, मन, आत्मा सब शुद्ध हो जाते है। गौर, निताई हरिनाम देने लगे और चाण्डाल तक सभी को गोद मे लेने लगे। भक्ति न रहने पर ब्राह्मण ब्राह्मण नही है। भक्ति रहने पर चाण्डाल चाण्डाल नही है। अस्पृश्य जाति भक्ति के होने पर शुद्ध पवित्र हो जाती है।"

संसारबद्ध जीव

श्रीरामकृष्ण संसारबद्ध जीवो की बात कर रहे है। वे मानो रेशम के कीड़े है। चाहे तो कोश को काटकर निकल आ सकते है, परन्तु काफी कोशिश से कोश बनाते है, छोड़कर आ नही सकते। इसी से मरते है। फिर मानो जाल मे फँसी हुई मछली। जिस रास्ते से गयी है, उसी रास्ते से निकल सकती है, परन्तु जल की मीठी आवाज और दूसरी मछलियो के साथ खेलकूद, – इसी मे भूलकर रह जाती है। बाहर निकलने की चेष्टा नही करती। बच्चो की अस्फुट बाते मानो जलकल्लोल का मीठा शब्द है। मछली अर्थात् जीव और परिवारवर्ग। परन्तु एक दौड से जो भाग जाते है उन्हे कहते है मुक्त पुरुष।

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे है --

(भावार्थ) – "महामाया की विचित्र माया है, कैसा मोहजाल फैला रखा है! जिसके प्रभाव से ब्रह्मा विष्णु भी अचैतन्य है, फिर जीव की क्या बात? बिछे हुए जाल मे मछली प्रवेश करती है, पर आने-जाने का रास्ता रहते हुए भी फिर उसमे से भाग नही सकती।"

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे है, "जीव मानो दाल है। चक्की मे पडे है, पिस जाएंग। परन्तु जो थोड़ेमे दाल के दाने खूँटी को पकड़कर रहते है वे नही पिसते। इसलिए खूँटी अर्थात् ईश्वर की शरण मे जाना चाहिए। उन्हे पुकारो, उनका नाम लो, तब मुक्ति होगी। नही तो कालरूपी चक्की मे पिस जाओगे।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "माँ, भवसागर मे पड़कर शरीर-रूपी यह नौका डूब रही है। हे शंकरि, माया की आँधी और मोह का तूफान अधिकाधिक तेज हो रहा है। एक तो मनरूपी माझी अनाडी है, उस पर छः खवैये गँवार है। आँधी मे मँझधार मे आकर डूबा जा रहा हूँ। भक्ति का डाँड टूट गया, श्रद्धा का पाल फट गया, नाव काबू से बाहर हो गयी, अब मै उपाय क्या करूँ? और तो कोई उपाय नही दीखता, सोचकर लाचार हो रहा हूँ। तरंग मे तैरकर श्रीदुर्गानामरूपी 'भेले' को पकड़ता हूँ।"

स्त्री-पुत्रों के प्रति कर्तव्य

विश्वास बाबू बहुत देर से बैठे थे, अब उठकर चले गए। उनके पास काफी धन था, परन्तु चरित्र भ्रष्ट हो जाने से सारा धन उड गया। अब स्त्री, कन्या आदि किसी को नही देखते है। बलराम के उनकी बात उठाने पर श्रीरामकृष्ण बोले, "वह अभागा दरिद्री है। गृहस्थ के कर्तव्य है, ऋण है, देवऋण, पितृऋण, ऋषिऋण – फिर परिवार का ऋण है। सती स्त्री होने पर उसका पालन-पोषण, सन्तान जब तक योग्य नही बन जाते है, तब तक उनका पालन-पोषण करना पड़ता है।

"साधु ही केवल संचय नही करेगा। 'पंछी और दरवेश' संचय नही करते है। परन्तु मादा पक्षी के बच्चा होने पर वह संचय करती है। बच्चे के लिए मुख से उठाकर खाना ले जाती है।"

बलराम – अब विश्वास बाबू की साधुसंग करने की इच्छा है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – साधु का कमण्डलु चार धाम घूमकर आता है, परन्तु वैसा ही कड़ुआ का कड़ुआ रहता है। मलय की हवा जिन पेड़ो को लगती है वे सब चन्दन हो जाते है, परन्तु सेमल, बड़ आदि चन्दन नही बनते! कोई कोई साधुसंग करते है गाँजा पीने के लिए! (हँसी) साधु लोग गाँजा पीते है, इसीलिए उनके पास आकर बैठते है, गाँजा तैयार कर देते है और प्रसाद पाते है! (सभी हँस पड़े।)

परिच्छेद १६

षड्भुजदर्शन! राजमोहन के मकान पर शुभागमन – नरेन्द्र

श्रीरामकृष्ण ने जिस दिन किलेवाले मैदान मे सर्कस देखा उसके दूसरे दिन फिर कलकत्ते मे शुभागमन किया था। बृहस्पतिवार, १६ नवम्बर, १८८२ ई., कार्तिक शुक्ला षष्ठी। आते ही पहले-पहल गरानहट्टा मे षड्भुज महाप्रभु का दर्शन किया। वैष्णव साधुओ का अखाड़ा है, महन्त है श्री गिरिधारीदास। षड्भुज महाप्रभु की सेवा बहुत दिनो से चल रही है। श्रीरामकृष्ण ने तीसरे प्रहर दर्शन किया।

सायंकाल के कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण शिमुलिया-निवासी श्री राजमोहन के मकान पर गाडी से आ पहुँचे। श्रीरामकृष्ण ने सुना है कि यहाँ पर नरेन्द्र आदि युवक मिलकर ब्राह्मसमाज की उपासना करते है। इसीलिए वे देखने आए है। मास्टर तथा और भी दो-एक भक्त साथ है। श्री राजमोहन पुराने ब्राह्मभक्त है।

ब्राह्मभक्त और सर्वत्याग या संन्यास

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र को देख आनन्दित हुए और बोले, "तुम लोगो की उपासना देखूँगा।" नरेन्द्र गाना गाने लगे। युवको मे से श्री प्रिय आदि कोई कोई उपस्थित थे।

अब उपासना हो रही है। नवयुवको मे से एक व्यक्ति उपासना कर रहे है। वे प्रार्थना कर रहे है - "भगवान्, सब कुछ छोड़ तुममे मग्न हो जाऊँ।' – श्रीरामकृष्ण को देख सम्भवत: उनका उद्दीपन हुआ है। इसीलिए सर्वत्याग की बात कह रहे है! मास्टर, श्रीरामकृष्ण के बहुत ही निकट बैठे थे। उन्होने ही केवल सुना, श्रीरामकृष्ण मृदु स्वर मे कह रहे है, "सो तो हो चुका।"

श्री राजमोहन श्रीरामकृष्ण को जलपान के लिए मकान के भीतर ले जा रहे है।

□□□

वर्तमान निमतल्ला स्ट्रीट

परिच्छेद १७

मनोमोहन तथा सुरेन्द्र के मकान पर श्रीरामकृष्ण

रविवार, १९ नवम्बर १८८२ ई.। आज श्रीजगद्धात्री-पूजा है। सुरेन्द्र ने निमन्त्रण दिया है। वे भीतर बाहर हो रहे हैं – कब श्रीरामकृष्ण आते है। मास्टर को देख वे कह रहे हैं, "तुम आए हो, और वे कहाँ हैं?" इतने मे श्रीरामकृष्ण की गाड़ी आ खड़ी हुई। पास ही श्रीमनोमोहन का मकान है। श्रीरामकृष्ण पहले वही पर उतरे, वहाँ पर जरा विश्राम करके सुरेन्द्र के मकान पर जाएँगे।

मनोमोहन के बैठकखाने में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "जो असहाय, दीन, दरिद्र है उसकी भक्ति ईश्वर को प्यारी है, जिस प्रकार खली मिला हुआ चारा गाय को प्यारा है। दुर्योधन उतना धन, उतना ऐश्वर्य दिखाने लगा पर उसके घर पर भगवान् न गए। वे विदुर के घर गए। वे भक्तवत्सल है। जिस प्रकार गाय अपने बच्चे के पीछे पीछे दौड़ती है, उसी प्रकार वे भी भक्तों के पीछे पीछे दौड़ते है।"

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। भावार्थ यह है –

" 'उस भाव के लिए परम योगी युगयुगान्तर तक योग करते है। भाव का उदय होने पर वे ऐसे ही खीच लेते हैं जैसे लोहे को चुम्बक।'

"चैतन्यदेव की आँखों से कृष्णनाम से आँसू गिरने लगते थे। ईश्वर ही वस्तु है, शेष सब अवस्तु। मनुष्य चाहे तो ईश्वर को प्राप्त कर सकता है; परन्तु वह कामिनी-कांचन का भोग करने में ही मस्त रहता है। सिर पर मणि रहते भी साँप मेंढ़क खाता रहता है।

"भक्ति ही सार है। ईश्वर का विचार करके भी उन्हे कौन जान सकेगा? मुझे भक्ति चाहिए। उनका अनन्त ऐश्वर्य है। उतना जानने की मुझे क्या आवश्यकता है? एक बोतल शराब से यदि नशा आ जाए तो फिर यह जानने की क्या आवश्यकता है कि कलार की दूकान में कितने मन शराब है। एक लोटा जल से मेरी तृष्णा शान्त हो सकती है; पृथ्वी मे कितना जल है यह जानने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

सुरेन्द्र के भाई और जज – का पद। जातिभेद

श्रीरामकृष्ण अब सुरेन्द्र के मकान पर आये हैं। आकर दुमँजले के बैठकघर में बैठे हैं। सुरेन्द्र के मँझले भाई जज हैं। वे भी बैठे हैं। अनेक भक्त कमरे में इकट्ठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के भाई से कह रहे है, "आप जज है, बहुत अच्छी बात है। इतना जानिएगा, सभी कुछ ईश्वर की शक्ति है। बड़ा पद उन्होने ही दिया है तभी बना है। लोग समझते है, 'हम बड़े आदमी है।' छत पर का जल शेर के मुँहवाले परनाले से गिरता है। ऐसा लगता है, मानो शेर मुँह से पानी उगल रहा है। परन्तु देखो, कहाँ का जल है। कहाँ आकाश मे बादल बना, उसका जल छत पर गिरा और उसके बाद लुढ़ककर परनाले मे जा रहा है और फिर शेर के मुँह से होकर निकल रहा है।"

सुरेन्द्र के भाई – महाराज, ब्राह्मसमाजवाले स्त्री-स्वाधीनता की बात कहते है, और कहते है जातिभेद उठा दो। यह सब आपको कैसा लगता है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर मे नया नया प्रेम होने पर वैसा हो सकता है। आँधी आने पर धूल उड़ती है, समझ मे नही आता कि कौन आम का पेड़ है और कौन इमली का। आँधी शान्त होने पर फिर समझ मे आता है। नये प्रेम की आँधी शान्त होने पर धीरे धीरे समझ मे आ जाता है कि ईश्वर ही श्रेय, नित्य पदार्थ है और सभी कुछ अनित्य है। साधुसंग और तपस्या न करने पर ठीक धारणा नही होती। पखावज का बोल मुँह मे बोलने से क्या होगा? हाथ से आना बहुत कठिन है। केवल लेक्चर देने से क्या होगा? तपस्या चाहिए, तब धारणा होगी।

"जातिभेद? केवल एक उपाय से जातिभेद उठ सकता है। वह है भक्ति। भक्त की जाति नहीं है। भक्ति से अछूत भी शुद्ध हो जाता है – भक्ति होने पर चाण्डाल फिर चाण्डाल नही रहता। चैतन्यदेव ने चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक सभी को शरण दी थी।

ब्राह्मगण हरिनाम करते है, बहुत अच्छी बात है। व्याकुल होकर पुकारने पर उनकी कृपा होगी, ईश्वरलाभ होगा।

"सभी पथो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है। एक ईश्वर को अनेक नामो से पुकारते है। जिस प्रकार एक घाट का जल हिन्दू लोग पीते है, कहते है जल, दूसरे घाट मे ईसाई लोग पीते है, कहते है वाटर, और तीसरे घाट मे मुसलमान पीते है, कहते है पानी।"

सुरेन्द्र के भाई – महाराज, थिओसफी कैसी लगती है?

श्रीरामकृष्ण – सुना है लोग कहते है कि उससे अलौकिक शक्ति प्राप्त होती है। देव मोड़ोल नामक व्यक्ति के मकान पर देखा था कि एक आदमी पिशाचसिद्ध है। पिशाच कितनी ही चीजे ला देता था। अलौकिक शक्ति लेकर क्या करूँगा? क्या उससे ईश्वरप्राप्ति होती है? यदि ईश्वर-प्राप्ति न हुई तो सभी मिथ्या है!

मणि मल्लिक के ब्राह्मोत्सव में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते मे श्री मणिलाल मल्लिक के सिन्दुरियापट्टीवाले मकान पर भक्तो के साथ शुभागमन किया है। वहा पर ब्राह्मसमाज का प्रतिवर्ष उत्सव होता है। दिन के चार बजे का समय होगा। यहाँ पर आज ब्राह्मसमाज का वार्षिकोत्सव है। २६ नवम्बर १८८२ ई । श्री विजयकृष्ण गोस्वामी तथा अनेक ब्राह्मभक्त और श्री प्रेमचन्द्र बड़ाल तथा गृहस्वामी के अन्य मित्रगण आए है। मास्टर आदि साथ है।

श्री मणिलाल ने भक्तो की सेवा के लिए अनेक प्रकार का आयोजन किया है। प्रह्लाद चरित्र की कथा होगी, इसके बाद ब्राह्मसमाज की उपासना होगी अन्त मे भक्तगण प्रसाद पायेगे।

श्री विजय अभी तक ब्राह्मसमाज मे ही है। वे आज की उपासना करेंगे। उन्होने अभी तक गैरिक वस्त्र धारण नही किया है।

कथक महाशय प्रह्लाद चरित्र की कथा कह रहे है। पिता हिरण्यकशिपु हरि की निन्दा करते हुए पुत्र प्रह्लाद को बार बार क्लेशित कर रहे है। प्रह्लाद हाथ जोड़कर हरि से प्रार्थना कर रहे है और कह रहे है, 'हे हरि, पिता को सद्बुद्धि दो।' श्रीरामकृष्ण इस बात को सुनकर रो रहे है। श्री विजय आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। श्रीरामकृष्ण को भावावस्था हो गयी है।

श्री विजय गोस्वामी प्रभृति ब्राह्मभक्तों को उपदेश। ईश्वर दर्शन और आदेश प्राप्ति, तब लोकशिक्षा।।

कुछ देर बाद विजय आदि भक्तो से कह रहे है, "भक्ति ही सार है। उनके नामगुण का कीर्तन सदा करते करते भक्ति प्राप्त होती है। अहा, शिवनाथ की कैसी भक्ति है! मानो, रस मे पड़ा हुआ रसगुल्ला।

"ऐसा समझना ठीक नही कि मेरा धर्म ही ठीक है तथा दूसरे सभी का धर्म असत्य है। सभी पथो से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है। हृदय मे व्याकुलता रहनी चाहिए। अनन्त पथ, अनन्त मत।

"देखो, ईश्वर को देखा जा सकता है। वेद मे कहा है, 'अवाङ्मानसगोचरम्।'

इसका अर्थ यह है कि वे विषयासक्त मन के अगोचर है। वैष्णवचरण कहा करता था, 'वे शुद्ध मन, शुद्ध बुद्धि द्वारा प्राप्त करने योग्य है।'* इसीलिए साधुसंग, प्रार्थना, गुरु का उपदेश - यह सब आवश्यक है। तभी चित्तशुद्धि होती है, तब उनका दर्शन होता है। मैले जल मे निर्मली डालने से वह साफ होता है, तब मुँह देखा जाता है। मैले आईने मे भी मुँह नही देखा जा सकता।

"चित्तशुद्धि के बाद भक्ति प्राप्त करने पर, उनकी कृपा मे उनका दर्शन होता है। दर्शन के बाद 'आदेश' पाने पर तब लोकशिक्षा दी जा सकती है। पहले से ही लेक्चर देना ठीक नही है। एक गाने मे कहा है - 'मन अकेले बैठे क्या सोच रहे हो? क्या कभी प्रेम के बिना ईश्वर मिल सकता है?'

"फिर कहा है, 'तेरे मन्दिर मे माधव नही है। शंख बजाकर तूने हल्ला मचा दिया। उसमे तो ग्यारह चमगीदड़ रातदिन मँडराते रहते है।'

"पहले हृदय-मन्दिर को साफ करना होता है। ठाकुरजी की प्रतिमा को लाना होता है। पूजा की तैयारी करनी होती है। कोई तैयारी नही, भो भों करके शंख बजाने से क्या होगा?"

अब श्री विजय गोस्वामी वेदी पर बैठे ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना कर रहे हैं। उपासना के बाद वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति) – अच्छा, तुम लोगो ने उतना पाप, पाप क्यो कहा? सौ बार 'मै पापी हूँ, मै पापी हूँ', ऐसा कहने से वैसा ही हो जाता है। ऐसा विश्वास करना चाहिए कि उनका नाम लिया – है, मेरा फिर पाप कैसा? वे हमारे माँ-बाप है, उनसे कहो कि पाप किया है, अब कभी नही करूँगा। और उनका नाम लो। सब मिलकर उनके नाम से देहमन को पवित्र करो – जिह्वा को पवित्र करो।

□□□

* मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।
बन्धाय विषयासंगि मोक्षे निर्विषयं स्मृतम्।। – मैत्रायणी उपनिषद

परिच्छेद १९

विजयकृष्ण गोस्वामी आदि के प्रति उपदेश

(१)

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। (गीता, २।२०)

मुक्त पुरुष का शरीर त्याग क्या आत्महत्या है?

दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर मे श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी भगवान् श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आए है। उनके साथ तीन-चार ब्राह्मभक्त भी है। बृहस्पतिवार, १४ दिसम्बर १८८२ ई.। श्रीरामकृष्णदेव के परम भक्त बलराम बाबू के साथ ये लोग कलकत्ते से नाव पर चढकर आये है। श्रीरामकृष्ण दोपहर को जरा विश्राम कर रहे है। उनके पास रविवार को भीड ज्यादा होती है। इसीलिए जो भक्त उनसे एकान्त मे बातचीत करना चाहते है, वे प्राय. दूसरे ही समय मे आते है।

श्रीरामकृष्ण अपने तखत पर बैठे हुए है। विजय, बलराम, मास्टर और दूसरे भक्त उनकी ओर मुँह करके पश्चिमास्य बैठे है। कोई चटाई पर तो कोई फर्श ही पर बैठा है। कमरे के पश्चिम ओर के दरवाजे से गंगाजी दिखायी दे रही है। शीत ऋतु के कारण भागीरथी शान्त तथा स्वच्छ जल से पूर्ण है। दरवाजे के उस ओर पश्चिम का अर्धगोलाकार बरामदा है। बरामदे के नीचे फूलो का बगीचा और फिर गंगा का पुश्ता है। पुश्ते के पश्चिम अंग से सटकर पुण्यसलीला कलुषहारिणी गंगा मानो ईश्वरमन्दिर के पादमूल को आनन्द के साथ धोते हुए बहती जा रही है।

ठण्डकाल है, इसलिए सभी गरम कपड़े चढाए हुए है। विजय को शूल की बहुत पीड़ा होती है, इसलिए वे अपने साथ दवा की शीशी ले आए है – दवा लेने का समय होने पर दवा लेगे। इस समय विजय साधारण ब्राह्मसमाज मे आचार्य की नौकरी करते है। उन्हे समाज की वेदी पर बैठकर उपदेश देना पड़ता है। परन्तु आजकल समाज के साथ अनेक विषयो पर उनका मतभेद हो रहा है। क्या किया जाय – नौकरी करते है, इसलिए अपनी इच्छा के अनुसार न तो कुछ कह सकते है, और न कर ही सकते है। विजय का जन्म एक अत्यन्त पवित्र और उच्च कुल मे हुआ है। भगवान् श्रीचैतन्यदेव के एक प्रधान

पार्षद अद्वैत गोस्वामी विजय के पूर्वपुरुष है। अद्वैत गौस्वामी ज्ञानी थे, निराकार परब्रह्म के चिन्तन मे लीन रहते थे; पर साथ ही उन्होने भक्ति की भी पराकाष्ठा दिखायी है। वे हरिप्रेम मे मतवाले होकर नृत्य करते थे – इतने आत्मविस्मृत हो जाते थे कि नाचते नाचते अंग से वस्त्र तक खिसक जाते थे। विजय भी ब्रह्मसमाज मे आए है, निराकार परब्रह्म का चिन्तन करते है, परन्तु अपने पूर्वज अद्वैत गोस्वामी के पवित्र रक्त की धारा उनकी देह मे प्रवाहित हो रही है। हृदय मे भगवत्प्रेम का अंकुर प्रकाशोन्मुख है, केवल समय की प्रतीक्षा कर रहा है। इसीलिए वे भगवान् श्रीरामकृष्ण की अपूर्व भगवत्प्रेमोन्मत्त अवस्था को देखकर मुग्ध हुए है। मन्त्रमुग्ध सर्प जिस प्रकार सँपेरे के सामने फन निकाले बैठा रहता है, उसी प्रकार विजय भी श्रीरामकृष्ण के श्रीमुख से निकलने वाले भगवत्प्रसंग को सुनते हुए मुग्ध होकर उनके पास बैठे रहते है। फिर वे जब भगवत्प्रेम मे बालको की भाँति नृत्य करने लगते है तब विजय भी उनके साथ नाचने लग जाते है।

विष्णु 'एँड़ेदह' मे रहता था। उसने गले मे छुरा लगाकर आत्महत्या कर ली। आज उसी की चर्चा हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – देखो, उस लडके ने आत्महत्या कर ली, जब से यह सुना, मन दुखी हो रहा है। यहाँ आता था, स्कूल में पढ़ता था, पर कहता था – संसार अच्छा नही लगता। पश्चिम चला गया था, किसी आत्मीय के यहाँ कुछ दिन ठहरा था। वहाँ निर्जन वन मे, मैदान मे, पहाड़ पर बैठा हुआ सदा ध्यान करता था। उसने मुझसे कहा था, न जाने ईश्वर के कितने रूपों के दर्शन करता हूँ।

'जान पडता है, यह अन्तिम जन्म था। पूर्वजन्म मे बहुत-कुछ काम उसने कर डाला था। कुछ बाकी रह गया था, वह भी जान पडता है इस जन्म मे पूरा हो गया।

'पूर्वजन्म का संस्कार मानना चाहिए। मैंने सुना है, एक मनुष्य शवसाधना कर रहा था। घने जंगल मे भगवती की आराधना कर रहा था। परन्तु वह अनेक प्रकार की विभीषिकाएँ देखने लगा। अन्त को उसे बाघ पकड ले गया। वही एक और आदमी बाघ के भय से पास के एक पेड पर चढ़कर बैठा हुआ था। शव तथा पूजा की अन्य सामग्रियाँ इकट्ठी देखकर वह उतर पड़ा। और आचमन करके शव के ऊपर बैठ गया। कुछ जप करते ही माँ प्रकट होकर बोली, 'मै तुझ पर प्रसन्न हूँ – तू वर माँग ।' माता के पादपंकजो मे प्रणत होकर वह बोला, 'माँ, एक बात पूछना हूँ। तुम्हारा कार्य देखकर बडा आश्चय होता है। उस मनुष्य ने इतनी मेहनत की, इतना आयोजन किया, इतने दिनों से तुम्हारी साधना कर रहा था, उस पर तो तुम्हारी कृपा न हुई, प्रसन्न तुम मुझ पर हुई जो भजन-साधन-ज्ञान-भक्ति आदि कुछ नही जानता।' हँसकर भगवती बोली, 'बेटा, तुम्हे जन्मान्तर की बात याद नही है। तुम जन्म जन्म से मेरे लिए तपस्या कर रहे हो। उसी साधनबल से इस प्रकार सब कुछ तैयार पाया और तुम्हे मेरे दर्शन भी मिले। अब कहो,

क्या वर चाहते हो?' "

मुक्त पुरुष का शरीरत्याग

एक भक्त बोल उठे, "आत्महत्या की बात सुनकर भय लगता है।"

श्रीरामकृष्ण – आत्महत्या करना महापाप है, घूम-फिरकर संसार मे आना पड़ता है, और वहाँ संसार-दुःख भोगना पड़ता है।

"परन्तु यदि कोई ईश्वर-दर्शन के बाद शरीर त्याग दे, तो उसे आत्महत्या नही कहते। उस प्रकार के शरीरत्याग मे दोष नही है। ज्ञानलाभ के बाद कोई कोई शरीर छोड़ देते है। जब मिट्टी के साँचे मे सोने की मूर्ति ढल जाती है, तब मिट्टी का साँचा चाहे कोई रखे, चाहे तोड दे।

"कई वर्ष हो गए, वराहनगर से एक लडका आता था, उम्र कोई बीस साल की होगी। नाम गोपाल सेन था। जब यहाँ आता था तब उसको इतना भाव हो जाता था कि हृदय को उसे पकड़ रखना पड़ता था कि कही गिरकर उसके हाथ-पैर न टूट जाएँ।

"उस लडके ने एक दिन एकाएक मेरे पैरो पर हाथ रखकर कहा, 'मै और न आ सकूँगा – अब मै चला!' कुछ दिन बाद सुना कि उसने देह छोड दी।"

(२)

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।। (गीता, ९।३३)

जीव के चार दर्जे। बद्ध जीव के लक्षण – कामिनी-कांचन।

श्रीरामकृष्ण – जीव चार दर्जे के कहे गए है – बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। संसार मानो जाल है और जीव मछली। ईश्वर, यह संसार जिनकी माया है, मछुए है। जब मछुए के जाल मे मछलियाँ पडती है, तब कुछ मछलियाँ जाल चीरकर भागने की अर्थात् मुक्त होने की कोशिश करती है। उन्हे मुमुक्षु जीव कहना चाहिए। जो भागने की चेष्टा करती है उनमे से सभी नही भाग सकती। दो-चार मछलियाँ ही धडाम से कूदकर भाग जाती है। तब लोग कहते है, वह बड़ी मछली निकल गयी। ऐसे ही दो-चार मनुष्य मुक्त जीव है। कुछ मछलियाँ स्वभावत: ऐसी सावधानी से रहती है कि कभी जाल मे आती ही नही। नारदादि नित्य जीव कभी संसार-जाल मे नही फँसते। परन्तु प्राय: अधिकतर मछलियाँ जाल मे पड़ जाती है, फिर भी उन्हे होश नही कि जाल मे पडी है, अब मरना होगा। जाल मे पडते ही जाल-सहित इधर से उधर भागती है, और सीधे कीच मे घुसकर देह छिपाना चाहती है। भागने की कोई चेष्टा नही, बल्कि कीच मे और गड़ जाती है। ये ही बद्ध जीव है। बद्ध जीव संसार मे अर्थात् कामिनी कांचन मे फँसे हुए है, कलंकसागर मे मग्न है, पर सोचते है कि बडे आनन्द मे है। जो मुमुक्षु या मुक्त है, संसार उन्हे कूप

जान पड़ता है, अच्छा नही लगता। इसीलिए कोई कोई ज्ञानलाभ, ईश्वरलाभ हो जाने पर शरीर छोड़ देते है, परन्तु इस तरह का शरीरत्याग बड़ी दूर की बात है।

"बद्ध जीवो – संसारी जीवो को किसी तरह होश नही होता। कितना दुःख पाते है, कितना धोका खाते है, कितनी विपदाएँ झेलते है, फिर भी बुद्धि ठिकाने नही आती।

"ऊँट कटीली घास को बहुत चाव से खाता है। परन्तु जितना ही खाता है उतना ही मुँह से धर धर खून गिरता है, फिर भी कटीली घास को खाना नही छोड़ता! संसारी मनुष्यो को इतना शोकताप मिलता है, किन्तु कुछ दिन बीते कि सब भूल गए। औरत गुजर गयी या बदचलन निकली, तो, फिर ब्याह कर लेता है। बच्चा मर गया, कितना दुःख पाया, पर कुछ ही दिनो मे सब भूल जाता है। बच्चे की वही माँ जो मारे शोक के अधीर हो रही थी, कुछ दिन बीत जाने पर फिर बाल सँवारती, जूड़ा बाँधती और गहनो से सजती है। इसी तरह मनुष्य बेटी के ब्याह मे कुल धन गँवा बैठता है, परन्तु हर साल बेटियो को पैदा करने मे घाटा नही होने देता! मुकदमेबाजी से घर मे एक कौड़ी नही रह जाती तो भी मुकदमे के लिए लोटा डोर टाँगे फिरते है। जितने लड़के पैदा हुए है, अच्छा भोजन, अच्छे कपड़े, अच्छा घर, उन्ही को नही मिलता, ऊपर से हर साल एक और पैदा होता है।

"कभी कभी तो 'साँप छछूँदर' वाली गति होती है। न निगल सके, न उगल सके। बद्ध जीव कभी समझ भी गया कि संसार मे कुछ है नही, सिर्फ गुठली चाटना है, तो भी वह उसे नही छोड़ सकता, ईश्वर की ओर मन नही ले जा सकता।

"केशव सेन के एक आत्मीय को देखा, उम्र कोई पचास साल की थी, पर ताश खेल रहा था। मानो ईश्वर का नाम लेने का समय नही आया।

"बद्ध जीव का एक और लक्षण है। यदि उसको संसार से हटाकर किसी अच्छी जगह पर ले जाओ, तो वह तड़प-तड़पकर मर जाएगा। विष्ठा के कीट को विष्ठा ही मे आनन्द मिलता है। उसी से वह हृष्टपुष्ट होता है। उस कीट को अगर अन्न की हण्डी मे रख दो तो वह मर जाएगा।" (सब स्तब्ध है।)

(३)

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।। (गीता, ६।३५)

तीव्र वैराग्य तथा बद्ध जीव

विजय – बद्ध जीवो के मन की कैसी अवस्था हो तो मुक्ति हो सकती है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर की कृपा से तीव्र वैराग्य होने पर इस कामिनी-कांचन की आसक्ति से निस्तार हो सकता है। जानते हो तीव्र वैराग्य किसे कहते है? 'बनत बनत बनि

जाई', 'चलो राम भजो', यह सब मन्द वैराग्य है। जिसे तीव्र वैराग्य होता है उसके प्राण भगवान् के लिए व्याकुल रहते है, जैसे अपनी कोख के बच्चे के लिए माँ व्याकुल रहती है। जिसको तीव्र वैराग्य होता है वह भगवान् को छोड़ और कुछ नही चाहता। संसार को वह कुआँ समझता है, उसे जान पडता है कि अब डूबा। आत्मीयो को वह काला नाग देखता है, उनके पास से उसकी भागने की इच्छा होती है और भागता भी है। 'घर का काम पूरा कर ले तब ईश्वर की चिन्ता करेगे', यह उसके मन मे आता ही नही। भीतर बडी जिद रहती है।

"तीव्र वैराग्य किसे कहते है, इसकी एक कहानी सुनो। किसी देश मे एक बार वर्षा कम हुई। किसान नालियाँ काट-काटकर दूर से पानी लाते थे। एक किसान बडा हठी था। उसने एक दिन शपथ ली कि जब तक पानी न आने लगे, नहर से नाली का योग न हो जाए, तब तक बराबर नाली खोदूँगा। इधर नहाने का समय हुआ। उसकी स्त्री ने लड़की को उसे बुलाने भेजा। लडकी बोली, 'पिताजी, दोपहर हो गयी, चलो तुमको माँ बुलाती है। 'उसने कहा, 'तू चल, हमे अभी काम है।' दोपहर ढल गयी, पर वह काम पर डटा रहा। नहाने का नाम न लिया। तब उसकी स्त्री खेत मे जाकर बोली, 'नहाओगे कि नही? रोटियाँ ठण्डी हो रही है। तुम तो हर काम मे हठ करते हो। काम कल करना या भोजन के बाद करना।' गालियाँ देता हुआ कुदाल उठाकर किसना स्त्री को मारने दौड़ा बोला, 'तेरी बुद्धि मारी गयी है क्या? देखती नही कि पानी नही बरसता, खेती का काम सब पडा है, अब की बार लडके-बच्चे क्या खाएँगे? सब को भूखो मरना होगा। हमने यही ठान लिया है कि खेत मे पहले पानी लायेगे, नहाने-खाने की बात पीछे होगी।' मामला टेढा देखकर उसकी स्त्री वहाँ से लौट पडी। किसान ने दिनभर जी तोड़ मेहनत करके शाम के समय नहर के साथ नाली का योग कर दिया। फिर एक किनारे बैठकर देखने लगा, किस तरह नहर का पानी खेत मे 'कलकल' स्वर से बहता हुआ आ रहा है, तब उसका मन शान्ति और आनन्द मे भर गया। घर पहुँचकर उसने स्त्री को बुलाकर कहा, 'ले आ अब डाल और रस्सी।' स्नान भोजन करके निश्चिन्त होकर फिर वह सुख से खुर्राटे लेने लगा। जिद यह है और यही तीव्र वैराग्य की उपमा है।

"खेत मे पानी लाने के लिए एक और किसान ... था। उसकी स्त्री जब गयी और बोली, 'धूप बहुत हो गयी, चलो अब, इतना काम नही करते', तब वह चुपचाप कुदाल एक ओर रखकर बोला, 'अच्छा, तू कहती है तो चलो।' (सब हँसते है।) वह किसान खेत मे पानी न ला सका। यह मन्द वैराग्य की उपमा है।

"हठ बिना जैसे किसान खेत मे पानी नही ला सकता, वैसे ही मनुष्य ईश्वरदर्शन नही कर सकता।"

(४)

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत।
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी।। (गीता २।७०)

कामिनी-कांचन के लिए दासत्व

श्रीरामकृष्ण – पहले तुम इतना आते थे पर अब क्यो नही आते?

विजय – यहाँ आने की बड़ी इच्छा रहती है, परन्तु अब मै स्वाधीन नही हूँ, ब्राह्मसमाज मे नौकरी करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – कामिनी-कांचन जीव को बाँध लेते है। जीव की स्वाधीनता चली जाती है। कामिनी ही से कांचन की आवश्यकता होती है, जिसके लिए दूसरो की गुलामी की जाती है, फिर स्वाधीनता नही रहती, फिर तुम अपने मन का काम नही कर सकते।

"जयपुर मे गोविन्दजी के पुजारी पहले-पहल अपना विवाह नही करते थे। तब वे बड़े तेजस्वी थे। एक बार राजा के बुलाने पर भी वे नही गए और कहा – 'राजा ही को आने को कहो।' फिर राजा और पचा ने मिलकर उनका विवाह करा दिया। तब राजा से साक्षात करने के लिए किसी को बुलाना नही पड़ा। वे खुद हाजिर होते थे। कहते 'महाराज, आशीर्वाद देने आए है, यह निर्माल्य लाए है, धारण कीजिये।' आज घर बनवाना है, आज लड़के का 'अन्नप्राशन' है, आज लड़के का पाठशाला जाने का शुभ मुहूर्त है इन्ही कारणो से आना पड़ता है।

"बारह सौ 'भगत' और तेरह सौ 'भगतिन'वाली कहावत तो जानते हो न। नित्यानन्द गोस्वामी के पुत्र वीरभद्र के तेरह सौ 'भगत' शिष्य थे। जब वे सिद्ध हो गए तब वीरभद्र डरे। वे सोचने लगे कि ये सब के सब सिद्ध हो गए, लोगो को जो कह देगे वही होगा, जिधर से निकलेगे वहीं भय है, क्योंकि मनुष्य बिना जाने यदि कोई अपराध कर डालेगे तो उनका अहित होगा। यह सोचकर वीरभद्र ने उन्हे बुलाकर कहा, 'तुम गंगातट मे सन्ध्या-उपासना करके हमारे पास आओ।' 'भगत' तब ऐसे तेजस्वी थे कि ध्यान करते ही करते समाधिमग्न हो गए। कब ज्वार का पानी सिर से बह गया, इसकी उन्हे खबर ही नही। भाटा हो गया, तथापि ध्यानभग न हुआ। तेरह सौ भगतो म से एक सौ समझ गये थे कि वीरभद्र क्या कहेगे। आचार्य की बात को टालना नही चाहिए, अतएव वे तो खिसक गए, वीरभद्र से साक्षात् नही किया। रहे बारह सौ भगत, वे वीरभद्र के पास लौटकर आए। वीरभद्र बोले, 'ये तेरह सौ भगतिने तुम्हारी सेवा करेगी, तुम लोग इनसे विवाह करो।' शिष्यो ने कहा, 'जैसी आपकी आज्ञा, परन्तु हममे से एक सौ न जाने कहाँ चले गए।' उन बारह सौ भगतो के साथ एक एक सेवादासी रहने लगी। फिर उनका वह तेज, तपस्याबल न रह गया। स्त्री के साथ रहने के कारण वह बल जाता रहा, क्योंकि

उसके साथ स्वाधीनता नही रह जाती। (विजय से) तुम लोग स्वयं यह देखते हो, दूसरो का काम करते हुए क्या हो रहे हो। और देखो, इतनी परीक्षाएँ पास करनेवाले, इतनी अंग्रेजी जाननेवाले पण्डित नौकरी करते हुए सुबह-शाम मालिको के बूट की ठोकरे खाते है। इसका कारण केवल 'कामिनी' है। विवाह करके यह हरी-भरी दुनिया उजाडने की इच्छा नही होती। इसीलिए यह अपमान, दासता की यह इतनी मार!

ईश्वरलाभ के उपरान्त कामिनी की मातृभाव से पूजा

"यदि एक बार उस प्रकार के तीव्र वैराग्य से भगवान् मिल जाएँ तो फिर स्त्रिया के प्रति आसक्ति नही रह जाती। घर मे रहने मे भी स्त्री की लालसा नही होती, फिर उससे कोई भय नही रहता। यदि एक चुम्बक-पत्थर बडा हो और एक छोटा, तो लोहे को कौन खीच सकता है? बडा ही खीच सकता है। ईश्वर बडा चुम्बक-पत्थर है और कामिनी छोटा चुम्बक-पत्थर है। तो भला कामिनी क्या कर सकेगी?"

एक भक्त – महाराज, स्त्रियो से घृणा करे?

श्रीरामकृष्ण - जिन्होने ईश्वरलाभ कर लिया है, वे स्त्रियो को ऐसी दृष्टि से नही देखते, जिससे भय हो। वे यथार्थ देखते हैं कि स्त्रियो मे ब्रह्ममयी माता का अंश है, और उन्हे माता जानकर उनकी पूजा करते है। (विजय से) तुम कभी कभी आया करो, तुम्हे देखने की बडी इच्छा होती है।

(५)

ईश्वरादेश प्राप्त होने के बाद आचार्य-पद

विजय – ब्राह्म समाज का काम करना पडता है इसलिए हर समय नही आ सकता। अवकाश मिलने पर आऊँगा।

श्रीरामकृष्ण - देखो, आचार्य का काम बडा कठिन है। ईश्वर का प्रत्यक्ष आदेश पाए बिना लोकशिक्षा नही दी जा सकती।

"यदि आदेश पाए बिना ही उपदेश दिया जाय तो लोग उस ओर ध्यान नही देते, उस उपदेश मे कोई शक्ति नही रहती। पहले साधना करके या जिस तरह हो, ईश्वर को प्राप्त करना चाहिए। उनकी आज्ञा मिलने पर फिर लेक्चर दिया जा सकता है। उस देश मे 'हालदारपुकुर' नाम का एक तालाब है। उसके बाँध पर लोग पाखाना किया करते थे। जो लोग घाट पर आते थे, वे उन्हे खूब गालियाँ देते थे, खूब गुल-गपाडा मचाते थे, परन्तु गालियो से कोई काम न होता था। दूसरे दिन फिर वही हालत होती थी। अन्त को कम्पनी के चपरासी नोटिस लटका गए कि यहाँ शौच के लिए जाने की सख्त मनाही है, न माननेवाले को सजा दी जाएगी। इस नोटिस के बाद फिर वहा कोई शौच के लिए नही

जाता था।

"उनके आदेश के बाद कही भी आचार्य हुआ जा सकता है और लेक्चर भी दिया *जा सकता है। जिसको उनका आदेश मिलता है, उसे उनकी शक्ति भी मिलती है; तब* वह आचार्य का कठिन काम कर सकता है।

"एक बड़े जमीदार से उसकी एक प्रजा मुकदमा लड़ रही थी। तब लोग समझ गए कि उस प्रजा के पीछे कोई जोरदार आदमी है; सम्भव है कि कोई बड़ा जमीदार ही उसकी ओर से मुकदमा चला रहा हो। मनुष्य साधारण जीव है, ईश्वर की शक्ति के बिना आचार्य जैसा कठिन काम वह नही कर सकता।"

सच्चिदानन्द ही गुरु और मुक्तिदाता है

विजय – महाराज, ब्राह्मसमाज मे जो उपदेश दिए जाते है, क्या उनसे लोगो का उद्धार नही होता?

श्रीरामकृष्ण – मनुष्य मे वह शक्ति कहाँ कि वह दूसरे को संसारबन्धन से मुक्त कर सके? यह भुवनमोहिनी माया जिनकी है, वे ही इस माया से मुक्त कर सकते है। सच्चिदानन्द गुरु को छोड़ और दूसरी गति नही है। जिसको ईश्वर-दर्शन नही हुआ, उनका आदेश नही मिला, जो ईश्वर की शक्ति मे शक्तिशाली नही है, उसकी क्या मजाल कि जीवो का भवबन्धन-मोचन कर सके?

"मै एक दिन पंचवटी के निकट झाऊतल्ले की ओर जा रहा था। एक मेढ़क की आवाज सुनायी दी – जान पड़ा कि साँप ने पकड़ा है। काफी देर बाद जब लौटने लगा तब भी उस मेढ़क की पुकार शुरू ही थी। बढ़कर देखा तो दिखायी दिया की एक कौड़ियाला साप उस मेढक को पकड़े हुए है – न छोड़ सकता है, न निगल सकता है उस मेढ़क की भी भवव्यथा दूर नही हो रही है। तब मैने सोचा कि यदि कोई असल साँप पकड़ता तो तीन ही पुकार मे इसको चुप हो जाना पड़ता। इस कौड़ियाले ने पकड़ा है, इसीलिए साँप की भी दुर्दशा है और मेढ़क की भी!

"यदि सद्गुरु हो तो जीव का अहंकार तीन ही पुकार मे दूर होता है। गुरु कच्चा हुआ तो गुरु की भी दुर्दशा है और शिष्य की भी। शिष्य का अहंकार दूर नही होता, न उसके भवबन्धन की फाँस ही कटती है। कच्चे गुरु के पल्ले पडा तो शिष्य मुक्त नही होता।"

(६)

अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते। (गीता, ३।२७)

माया या अहंबुद्धि का नाश और ईश्वर-दर्शन

विजय – महाराज, हम लोग इस तरह बद्ध क्यो हो रहे है? ईश्वर को क्यो नही देख पाते?

श्रीरामकृष्ण – जीव का अहंकार ही माया है। यही अहंकार कुल आवरणों का कारण है। 'मैं' मरा कि बला टली। यदि ईश्वर की कृपा से 'मैं अकर्ता हूँ' यह ज्ञान हो गया तो *वह मनुष्य तो जीवन्मुक्त हो गया। फिर उसे कोई भय नहीं।*

"यह माया या 'अहं' मेघ की तरह है। मेघ का एक छोटासा ही टुकड़ा क्यों न हो, पर उसके कारण सूर्य नहीं दीख पड़ते। उसके हट जाने से ही सूर्य दीख पड़ते हैं। यदि श्रीगुरु की कृपा से एक बार अहंबुद्धि दूर हो जाय तो फिर ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"सिर्फ ढाई हाथ की दूरी पर श्रीरामचन्द्र हैं, जो साक्षात् ईश्वर हैं; पर बीच में सीतारूपिणी माया का पर्दा पड़ा हुआ है, इसी कारण लक्ष्मणरूपी जीव को ईश्वर के दर्शन नहीं होते। यह देखो तुम्हारे मुँह के आगे मैं इस अँगौछे की ओट करता हूँ। अब तुम मुझे नहीं देख सकते। पर हूँ मैं तुम्हारे बिलकुल निकट। इसी तरह औरों की अपेक्षा भगवान् निकट है, परन्तु इस माया-आवरण के कारण तुम उनके दर्शन नहीं पाते।

"जीव तो स्वयं सच्चिदानन्दस्वरूप हैं, परन्तु इसी माया या अहंकार से वे नाना उपाधियों में पड़े हुए अपने स्वरूप को भूल गए हैं।

"एक एक उपाधि होती है, और जीवों का स्वभाव बदल जाता है। किसी ने काली धारीदार धोती पहनी कि देखना, प्रेमगीतों की तान मुँह से आप ही आप निकल पड़ती है, और ताश खेलना, सैरसपाटे के लिए निकलना तो हाथ में छड़ी लेकर – ये सब आप ही आप जुट जाते हैं! चाहे दुबला-पतला ही हो परन्तु बूट पहनते ही सीटी बजाना शुरू हो जाता है; सीढ़ियों पर चढ़ते समय साहबों की तरह उछलकर चढ़ता है! मनुष्य के हाथ में कलम रहे तो उसका यह गुण है कि कागज का जैसा-तैसा टुकड़ा पाते ही वह उस पर कलम घिसना शुरू कर देता है।

"रुपया भी एक विचित्र उपाधि है। रुपया होते ही मनुष्य एक दूसरी तरह का हो जाता है। वह पहले जैसा नहीं रह जाता। यहाँ एक ब्राह्मण आया जाया करता था। बाहर से वह बड़ा विनयी था। कुछ दिन बाद हम लोग कोन्नगर गए, हृदय साथ था। हम लोग नाव पर से उतरे कि देखा, वही ब्राह्मण गंगा के किनारे बैठा हुआ है। शायद हवाखोरी के लिए आया था। हम लोगों को देखकर बोला, 'क्यों महाराज, कहो कैसे हो?' उसकी आवाज सुनकर मैंने हृदय से कहा, 'हृदय, सुना, इसके धन हो गया है, इसी से आवाज किरकिराने लगी' हृदय हँसने लगा।

"किसी मेढ़क के पास एक रुपया था। वह एक बिल में रखा रहता था। एक हाथी उस बिल को लाँघ गया। तब मेढ़क बिल से निकलकर बड़े गुस्से में आकर लगा हाथी को लात दिखाने! और बोला, तुझे इतनी हिम्मत कि मुझे लाँघ जाय!' रुपये का इतना अहंकार होता है!

अहंकार कब जाता है? – ब्रह्मज्ञान की अवस्था सप्तभूमि

"ज्ञानलाभ होने से अहंकार दूर हो सकता है। ज्ञानलाभ होने से समाधि होती है। जब समाधि होती है, तभी अहंकार जाता है। ऐसा ज्ञानलाभ बड़ा कठिन है।

"वेदो मे कहा है कि मन सप्तम भूमि पर जाने से समाधि होती है। समाधि होने से ही अहंकार दूर हो सकता है। मन प्राय: प्रथम तीन भूमियो मे रहता है। लिग, गुदा और नाभि ये ही वे तीन भूमियाॅ है। तब मन संसार की ओर – कामिनी-कांचन की ओर खिचा रहता है। जब मन हृदय मे रहता है तब ईश्वरी ज्योति के दर्शन होते है। वह मनुष्य ज्योति देखकर कह उठता है – 'यह क्या, यह क्या है!' इसके बाद मन कण्ठ मे आता है। तब केवल ईश्वर की ही चर्चा करने और सुनने की इच्छा होती है। कपाल या भौहो के बीच मे जब मन आता है तब सच्चिदानन्द–रूप दीख पडता है। उस रूप को गले लगाने और उसे छूने की इच्छा होती है, परन्तु छुआ नही जाता। लालटेन के भीतर की बत्ती को कोई चाहे [illegible] पर उसे छू नहीं सकता, जान पड़ता है कि छू लिया, परन्तु छू नही पाता। जब सप्तम भूमि पर मन जाता है तब अहं नही रह जाता, समाधि होती है ।"

विजय – वहाँ पहुँचने पर जब ब्रह्मज्ञान होता है, तब मनुष्य क्या देखता है?

श्रीरामकृष्ण – सप्तम भूमि में मन के जाने पर क्या होता है, मुँह से नहीं कहा जा सकता। नमक की गुड़िया समुदर नापने गई। किन्तु जैसे पानी मे उतरी वैसेही गल गई अब समुदर की गहराई की खबर कौन देगा? जो देगी वही तो उसके साथ मिल गई। सप्तम भूमि मे मन का नाश होता है, समाधि होती है। क्या अनुभव होता है वह मुंह से कहा नही जाता।

'अहं' जाता नहीं है। 'बदमाश मै।' 'दास मै।'

जो 'मै' संसारी बनता है, कामिनी-कांचन मे फँसता है, वह बदमाश 'मै' है। जीव और आत्मा मे भेद सिर्फ इसलिए है कि बीच मे यह 'मै' जुडा हुआ है। पानी पर अगर लाठी डाल दी जाए तो पानी दो हिस्सो मे बॅटा हुआ दीख पड़ता है। परन्तु वास्तव में है वह एक ही पानी, लाठी के कारण उसके दो हिस्से नजर आते है।

"यह लाठी 'अहं' ही है। लाठी उठा लो, वही एक जल रह जायगा।

"बदमाश 'मै' वह है जो कहता है, 'मुझे नही जानते हो! मेरे इतने रुपये है, क्या मुझसे भी कोई बड़ा आदमी है?' यदि किसी ने दस रुपये चुरा लिये तो पहले वह चोर से रुपये छीन लेता है, फिर चोर की ऐसी मरम्मत करता है कि पसली पसली ढीली कर देता है, इतने पर भी उसको नही छोड़ता, पहरेवाले के हाथ सौपता है और सजा दिलवाता है! 'बदमाश मै' कहता है, 'अरे, इसने मेरे दस रुपये चुराये थे, उफ, इतनी हिम्मत!' "

विजय – यदि बिना 'अहं' के दूर हुए सांसारिक भोगो से पिण्ड नही छूटने का –

समाधि नही होने की, तो ज्ञानमार्ग पर आना ही अच्छा है, क्योकि उससे समाधि होगी। यदि भक्तियोग मे 'अहं' रह जाता है तो ज्ञानयोग ही अच्छा ठहरा।

श्रीरामकृष्ण – समाधि प्राप्त होकर एक दो मनुष्यो का अहंकार जाता है अवश्य, परन्तु प्राय: नही जाता। लाख विचार करो, पर देखना कि 'अहं' घूम-घामकर फिर उपस्थित है। आज बरगद का पेड़ काट डालो, कल सुबह को उसमे अंकुर निकला हुआ ही देखोगे। ऐसी दशा मे यदि 'मै' नही दूर होने का तो रहने दो साले को 'दास मै' बना हुआ। 'हे ईश्वर! तुम प्रभु हो, मै दास हूँ' इसी भाव मे रहो। 'मै दास हूँ', 'मै भक्त हूँ' इसमे 'मै' मे दोष नही। मिठाई खाने से अम्लशूल होता है, पर मिश्री मिठाइयो मे नही गिनी जाती।

"ज्ञानयोग बड़ा कठिन है। देहात्मबुद्धि का नाश हुए बिना ज्ञान नही होता। कलियुग मे प्राण अन्नगत है, अतएव देहात्मबुद्धि — अहंबुद्धि नही मिटती। इसीलिए कलियुग के लिए भक्तियोग है। भक्तिपथ सीधा पथ है। हृदय मे व्याकुल होकर उनके नाम का स्मरण करो, उनसे प्रार्थना करो, भगवान् मिलेंगे, इसमे कोई सन्देह नही।

"मानो जलराशि पर बिना बाँस रखे ही एक रेखा खींची गयी है — मानो जल के दो भाग हो गये है, परन्तु वह रेखा बडी देर तक नही रहती। 'दास मै' या 'भक्त का मै' अथवा 'बालक का मै' ये सब 'मै' की रेखाएँ मात्र है।"

(७)

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्
अव्यक्ता हि गतिर्दु:खं देहवद्भिरवाप्यते ।। [illegible]

भक्तियोग ही युगधर्म है। ज्ञानयोग की विशेष कठिनता 'दास मैं' – भक्त मैं' और 'बालक मैं'

विजय – महाराज, आप 'बदमाश मै' को दूर करने के लिए कहते है, तो क्या 'दास मै' मे दोष नही?

श्रीरामकृष्ण – नही। 'दास मै' अर्थात् 'मै ईश्वर का दास हूँ', 'मै उनका भक्त हूँ' इस अभिमान मे दोष नही, बल्कि इससे भगवान् मिलते है।

विजय – अच्छा, तो 'दास मै' वाले के काम-क्रोधादि कैसे होते है?

श्रीरामकृष्ण - अगर उसके भाव मे पूरी सचाई आ जाय तो काम–क्रोधादि का आकार मात्र रह जाता है। यदि ईश्वरलाभ के बाद भी किसी का 'दास मै' या 'भक्त मै' बना रहा तो वह मनुष्य किसी का अनिष्ट नही कर सकता। पारस पत्थर छू जाने पर तलवार सोना हो जाती है, तलवार का स्वरूप तो रहता है पर वह किसी की हिसा नही करती।

"नारियल के पेड़ का पत्ता झड़ जाता है, उसकी जगह सिर्फ दाग बना रहता है,

जिससे यह समझ लिया जाता है कि कभी यहाँ पत्ता लगा हुआ था। इसी तरह जिसको ईश्वर मिल गये हैं उसके अहंकार का चिह्न भर रह जाता है, काम-क्रोध का स्वरूप मात्र रह जाता है, उसकी बालक जैसी अवस्था हो जाती है। बालक सत्त्व, रज, तम में से किसी गुण के बंधन में नहीं आता। बालक जितनी जल्दी किसी वस्तु पर अड़ जाता है, उतनी ही जल्दी वह उसे छोड़ भी देता है। एक पाँच रुपये की कीमत का कपड़ा चाहे तुम धेले के खिलौने पर रिझाकर फुसला लो। पहले तो वह बहककर कहेगा, 'नहीं, मैं न दूँगा, मेरे बाबूजी ने मोल ले दिया है।' और लड़के के लिए सभी बराबर हैं। ये बड़े हैं, यह छोटा है, यह ज्ञान उसे नहीं; इसीलिए उसे जाति-पाँति का विचार भी नहीं है। माँ ने कह दिया है, 'वह तेरा दादा है', फिर चाहे वह कलार हो, वह उसी के साथ बैठकर रोटी खाता है। बालक को घृणा नही, शुचि और अशुचि पर ध्यान नहीं, शौच के लिए जाकर हाथ नही मटियाता।

"कोई कोई समाधि के बाद भी 'भक्त का मैं', 'दास का मैं' लेकर रहते हैं। 'मैं दास हूं, तुम प्रभु हो', 'मैं भक्त हूँ, तुम भगवान् हो।' यह अभिमान भक्तो का बना रहता है। ईश्वरलाभ के बाद भी रहता है। सम्पूर्ण 'मैं' नहीं दूर होता। और फिर इसी अभिमान का अभ्यास करते करते ईश्वर-प्राप्ति भी होती है। यही भक्तियोग है।

"भक्ति के मार्ग पर चलने से भी ब्रह्मज्ञान होता है। भगवान् सर्वशक्तिमान हैं। वे इच्छा करे तो ब्रह्मज्ञान भी दे सकते हैं। भक्त प्राय: ब्रह्मज्ञान नहीं चाहते। 'मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो', 'मैं बच्चा हूँ, तू माँ है' वे ऐसा अभिमान रखना चाहते हैं।"

विजय – जो लोग वेदान्त-विचार करते हैं, वे भी तो उन्हें पाते हैं?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, विचारमार्ग से भी वे मिलते हैं। इसी को ज्ञानयोग कहते हैं। विचारमार्ग बड़ा कठिन है। सप्तभूमि की बात तो तुम्हें बतलायी है। सप्तम भूमि पर मन के पहुँचने से समाधि होती है, 'ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या' यह बोध होने पर मन का लय होता है, समाधि होती है। परन्तु कलि में जीवों का प्राण अन्नगत है 'ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या' का बोध फिर कैसे हो सकता है? ऐसा बोध देहबुद्धि के बिना दूर हुए नहीं हो सकता। 'मैं न शरीर हूँ, न मन हूँ, न चौबीस तत्त्व हूँ, मैं सुख और दु:ख से परे हूँ, मुझे फिर कैसा रोग, कैसा शोक, कैसी जरा, कैसी मृत्यु?' – ऐसा बोध कलिकाल में होना कठिन है। चाहे जितना विचार करो, देहात्मबुद्धि कहीं न कहीं से आ ही जाती है। बड़ के पेड़ को काट डालो, तुम तो सोचते हो कि जड़समेत उखाड़ फेंका, पर दूसरे दिन सबेरे उसमें कनखा निकला ही हुआ देखोगे! देहाभिमान नहीं दूर होता; इसीलिए कलिकाल मे भक्तियोग अच्छा है, सीधा है।

"और 'मैं चीनी बन जाना नहीं चाहता, चीनी खाना ही मुझे अच्छा जान पड़ता है।' मेरी कभी यह इच्छा नहीं होती कि कहूँ 'मैं ही ब्रह्म हूँ।' मैं तो कहता हूँ 'तुम भगवान् हो,

मैं तुम्हारा दास हूँ।' पाँचवीं और छठी भूमि के बीच में चक्कर काटना अच्छा है। छठी भूमि को पार कर सप्तम भूमि में अधिक देर तक रहने की मेरी इच्छा नहीं होती। मैं उनका नामगुण-कीर्तन करूँगा, यही मेरी इच्छा है। सेव्य-सेवक भाव बड़ा अच्छा है। और देखो, ये तरंगें गंगा ही की हैं, परंतु तरंगों की गंगा है ऐसा कोई नहीं कहता। 'मैं वही हूँ' यह अभिमान अच्छा नहीं। देहात्मबुद्धि के रहते ऐसा अभिमान जिसको होता है उसकी बड़ी हानि होती है, फिर वह आगे बढ़ नहीं सकता, धीरे धीरे पतित हो जाता है। वह दूसरों की आँखो में धूल झोंकता है, साथ ही अपनी आँखों में भी; अपनी स्थिति का हाल वह नहीं समझ पाता।

भक्ति के दो प्रकार – उत्तम अधिकारी – ईश्वर दर्शन का उपाय

"परन्तु भेड़ियाधसान की भक्ति से ईश्वर नहीं मिलते, उन्हें पाने के लिए 'प्रेमाभक्ति' चाहिए। 'प्रेमाभक्ति' का एक और नाम है 'रागभक्ति'। प्रेम या अनुराग के बिना भगवान् नहीं मिलते। ईश्वर पर जब तक प्यार नहीं होता तब तक उन्हें कोई प्राप्त नहीं कर सकता।

"और एक प्रकार की भक्ति है उसका नाम है 'वैधीभक्ति'। इतना जप करना होगा, उपवास करना होगा, तीर्थयात्रा करनी होगी, इतने उपचारों से पूजा करनी होगी, बलिदान देना होगा – यह सब वैधीभक्ति है। इसका बहुत–कुछ अनुष्ठान करते करते क्रमशः रागभक्ति होती है। जब तक रागभक्ति न होगी, तब तक ईश्वर नही मिलेंगे। उन्हें प्यार करना चाहिए। जब संसारबुद्धि बिलकुल चली जाएगी – सोलह आना मन उन्हीं पर लग जाएगा, तब वे मिलेगे।

"परन्तु किसी किसी को रागभक्ति अपने आप ही होती है। स्वतःसिद्ध, बचपन से ही। बचपन से ही वह ईश्वर के लिए रोता है, जैसे प्रह्लाद। 'विधिवादीय' भक्ति कैसी है? जैसे हवा लगने के लिए पंखा झलना। हवा के लिए पंखे की जरूरत है। ईश्वर पर अनुराग उत्पन्न करने के लिए जप, तप, उपवास आदि विधियाँ मानी जाती हैं; परन्तु जब दक्षिणी हवा आप बह चलती है तब लोग पंखा रख देते हैं। ईश्वर पर अनुराग प्रेम, आप आ जाने से जप, तप आदि कर्म छूट जाते हैं। भगवत्प्रेम में मग्न हो जाने से वैध कर्म करने के लिए फिर किसको समय है?

"जब तक उन पर प्यार नहीं होगा, तब तक वह भक्ति कच्ची भक्ति है। जब उन पर प्यार होता है, तब वह भक्ति पक्की भक्ति कहलाती है।

"जिसकी भक्ति कच्ची है वह ईश्वर की कथा और उपदेशों की धारणा नहीं कर सकता। पक्की भक्ति होने पर ही धारणा होती है। फोटोग्राफ के शीशे पर अगर स्याही (Silver Nitrate) लगी हो तो जो चित्र उस पर पड़ता है वह ज्यो का त्यों उतर जाता है,

परन्तु सादे शीशे पर चाहे हजारों चित्र दिखाए जाएं, एक भी नहीं उतरता। शीशे पर से चित्र हटा कि वही ज्यों का त्यों सफेद शीशा! ईश्वर पर प्रीति हुए बिना उपदेशों की धारणा नहीं होती।''

विजय – महाराज, ईश्वर को कोई प्राप्त करना चाहे, उनके दर्शन करना चाहे, तो क्या सिर्फ भक्ति से काम सध जाएगा?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, भक्ति ही से उनके दर्शन हो सकते हैं। परन्तु पक्की भक्ति, प्रेमाभक्ति, रागभक्ति चाहिए। उसी भक्ति से उन पर प्रीति होती है, जैसा बच्चों का माँ पर प्यार, माँ का बच्चे पर प्यार और पत्नी का पति पर प्यार होता है।

''इस प्यार, इस रागभक्ति के होने पर, स्त्री-पुत्र और आत्मीय परिवार की ओर पहले जैसा आकर्षण नहीं रह जाता, फिर तो उन पर दया होती है। घर-द्वार विदेश जैसा जान पड़ता है, उसे देखकर सिर्फ एक कर्मभूमि का ख्याल जागता है, जैसे घर देहात में और कलकत्ता है कर्मभूमि, कलकत्ते में किराये के मकान में रहना पड़ता है कर्म करने के लिए। ईश्वर पर प्यार होने से संसार की आसक्ति – विषयबुद्धि – बिलकुल जाती रहेगी!

''विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते उनके दर्शन नहीं हो सकते। दियासलाई अगर भीगी हो तो चाहे जितना रगड़ो वह जलती ही नहीं – बीसों दियासलाई व्यर्थ ही बरबाद हो जाती है। विषयासक्त मन भीगी दियासलाई है।

''श्रीमती (राधिका) ने जब कहा, 'मैं सर्वत्र कृष्णमय देखती हूँ', तब सखियाँ बोलीं, 'कहाँ, हम तो उन्हें नहीं देखतीं तुम प्रलाप तो नहीं कर रही हो?' श्रीमती बोलीं, 'सखियो, नेत्रों में अनुराग का अंजन लगा लो, तभी उन्हें देखोगी।' (विजय से) तुम्हारे ब्राह्मसमाज ही के भजन में है - 'प्रभो, बिना अनुराग के यज्ञ-यागादि करके क्या तुम्हें जाना जा सकता है?'

''यह अनुराग, यह प्रेम, यह सच्ची भक्ति, यह प्यार यदि एक बार भी हो तो साकार और निराकार दोनों मिल जाते हैं।''

ईश्वर-दर्शन उनकी कृपा बिना नहीं होता

विजय – महाराज, क्या किया जाय जो ईश्वर-दर्शन हो।

श्रीरामकृष्ण – चित्तशुद्धि के बिना ईश्वर के दर्शन नहीं होते। कामिनी-कांचन में पड़कर मन मलिन हो गया है, उसमें जंग लग गया है। सुई में कीच लग जाने से उसे चुम्बक नहीं खींच सकता, मिट्टी साफ कर देने ही से चुम्बक खींचता है। मन का मैल नेत्रजल से धोया जा सकता है। 'हे ईश्वर, अब ऐसा काम न करूँगा' यह कहकर यदि कोई अनुताप करता हुआ रोये तो मैल धुल जाता है। तब ईश्वररूपी चुम्बक मनरूपी सुई को खींच लेता है। तब समाधि होती है, ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"परन्तु चेष्टा चाहे जितनी करो, बिना उनकी कृपा के कुछ नहीं होता। उनकी कृपा बिना उनके दर्शन नही मिलते। और कृपा भी क्या सहज ही होती है? अहंकार का सम्पूर्ण त्याग कर देना चाहिए। मै कर्ता हूँ, उस ज्ञान के रहते ईश्वर-दर्शन नही होते। भाण्डार मे अगर कोई हो, और तब घर के मालिक से अगर कोई कहे कि आप खुद चलकर चीजे निकाल दीजिए, तो वह यही कहता है, 'है तो वहाँ एक आदमी, फिर मै क्यो जाऊँ?' जो खुद कर्ता बन बैठा है, उसके हृदय मे ईश्वर सहज ही नही आते।

"कृपा होने से दर्शन होते है। वे ज्ञानसूर्य है। उनकी एक ही किरण से संसार में यह ज्ञानालोक फैला हुआ है। उसी मे हम एक-दूसरे को पहचानते है और संसार मे कितनी ही तरह की विद्याएँ सीखते है। अपना प्रकाश यदि वे एक बार अपने मुँह के सामने रखे तो दर्शन हो जाएँ। सार्जण्ट रात को अंधेरे मे हाथ में लालटेन लेकर घूमता है, पर उसका मुँह कोई नही देख पाता। पर उसी लालटेन के उजाले में वह सब को देखता है और आपस मे सभी एक दूसरे का मुँह देखते है।

"यदि कोई सार्जण्ट को देखना चाहे तो उससे विनती करे, कहे - 'साहब, जरा लालटेन अपने मुँह के सामने लगाइए, आपको एक नजर देख लूँ ।'

"ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि भगवन्, एक बार कृपा करके आप अपना ज्ञानालोक अपने श्रीमुख पर धारण कीजिए, मै आपके दर्शन करूँगा।

"घर मे यदि दीपक न जले तो वह दारिद्र का चिह्न है। हृदय में ज्ञान का दीपक जलाना चाहिए। 'हृदय-मन्दिर मे ज्ञान का दीपक जलाकर ब्रह्ममयी का श्रीमुख देखो'।"

विजय अपने साथ दवा भी लाए है। श्रीरामकृष्ण के सामने पीएंगे। दवा पानी मे मिलाकर पी जाती है। श्रीरामकृष्ण ने पानी मंगवाया। श्रीरामकृष्ण अहेतुक कृपासिन्धु है; विजय किराये की गाड़ी या नाव द्वारा आने मे असमर्थ है, इसलिए कभी कभी वे खुद आदमी भेजकर उन्हे बुला लेते है। इस बार बलराम को भेजा था। किराया बलराम देंगे। विजय बलराम के साथ आए है। शाम के समय विजय, नवकुमार और उनके दूसरे साथी बलराम की नाव पर चढ़े। बलराम उन्हे बागबाजार के घाट पर उतार देंगे। मास्टर भी साथ हो गए।

नाव बागबाजार के अन्नपूर्णाघाट पर लगायी गयी। जब ये लोग उतरकर बागबाजार मे बलराम के मकान के निकट पहुँचे तब चाँदनी फैलने लगी थी। शुक्ल पक्ष की चतुर्थी है। ठण्डी का मौसम है, थोड़ी थोडी ठण्डी लग रही है।

हृदय मे श्रीरामकृष्ण की आनन्दमय मूर्ति का चिन्तन तथा उनके अमृतोपम उपदेशों का मनन करते हुए विजय, बलराम, मास्टर आदि अपने अपने घर पहुँचे।

परिच्छेद २०

भक्तों के प्रति उपदेश

बाबूराम आदि के साथ 'स्वाधीन इच्छा' के सम्बन्ध में वार्तालाप। श्री तोतापुरी का आत्महत्या का संकल्प

श्रीरामकृष्ण तीसरे प्रहर के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे के पश्चिमवाले बरामदे मे वार्तालाप कर रहे है। साथ बाबूराम, मास्टर, रामदयाल आदि है। दिसम्बर १८८२ ई । बाबूराम, रामदयाल तथा मास्टर आज रात को यही रहेगे। बडे दिनो की छुट्टी हुई है। मास्टर कल भी रहेगे। बाबूराम नये नये आये है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो के प्रति) - "ईश्वर सब कुछ कर रहे है, यह ज्ञान होने पर मनुष्य जीवन्मुक्त हो जाता है। केशव सेन शम्भु मल्लिक के साथ आया था। मैने उससे कहा, वृक्ष के पत्ते तक ईश्वर की इच्छा के बिना नही हिलते। 'स्वाधीन इच्छा' है कहाँ? सभी ईश्वर के अधीन है। नंगा* उतने बड़े ज्ञानी थे जी, वे भी पानी मे डूबने गए थे! यहां पर ग्यारह महीने रहे। पेट की पीड़ा हुई, रोग की यन्त्रणा से घबड़ाकर गंगा मे डूबने गए थे। घाट के पास काफी दूर तक जल कम था। जितना ही आगे बढ़ते है, घुटनेभर से अधिक जल नही मिलता। तब उन्होने समझा, समझकर लौट आए। एक बार अत्यन्त अधिक बीमारी के कारण मै बहुत ही जिद्दी हो गया था। गले मे छुरी लगाने चला था! इसलिए कहता हूं, 'मां, मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री, मै रथ हूं, तुम रथी, जैसा चलाती हो वैसा ही चलता हूँ, जैसा कराती हो वैसा ही करता हूं' ।"

श्रीरामकृष्ण के कमरे मे गाना हो रहा है। भक्तगण गाना गा रहे है, उसका भावार्थ इस प्रकार है :-

(१) "हे कमलापति, यदि तुम हृदयरूपी वृन्दावन मे निवास करो तो हे भक्तिप्रिय, मेरी भक्ति सती राधा बनेगी। मुक्ति की मेरी कामना गोपनारी बनेगी। देह नन्द की पुरी बनेगा, और प्रीति माँ यशोदा बन जाएगी। हे जनार्दन, मेरे पापसमूहरूपी गोवर्धन को धारण करो। इसी समय काम आदि कंस के छः चरो को विनष्ट करो। कृपा की बंसरी बजाते

---

* श्री तोतापुरी (श्रीरामकृष्णदेव के वेदान्त-साधना के गुरू), नागा, सम्प्रदाय के होने कारण श्रीरामकृषण उन्हे 'नंगा' कहते थे।

हुए मेरे मनरूपी गाय को वशीभूत कर मेरे हृदयरूपी चरागाह मे निवास करो। मेरी इस कामना की पूर्ति करो, यही प्रार्थना है। इस समय मेरे प्रेमरूपी यमुना के तट पर आशारूपी वट के नीचे कृपा करके प्रकट होकर निवास करो। यदि कहो कि गोपालो के प्रेम में बन्दी होकर ब्रजधाम मे रहता हूँ, तो यह अज्ञानी 'दाशरथि' तुम्हारा गोपाल, तुम्हारा दास बनेगा।"

(२) "हे मेरे प्राणरूपी पिजरे के पक्षी, गाओ न। ब्रह्मरूपी कल्पतरु पर बैठकर, हे पक्षी, तुम प्रभु के गुण गाओ न। और साथ ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-रूपी पके फलो को खाओ न।"

नन्दनबागान के श्रीनाथ मित्र अपने मित्रो के साथ आये है। श्रीरामकृष्ण उन्हे देखकर कहते है, "यह देखो, इनकी आँखो मे से भीतर का सब कुछ दिखायी पड़ रहा है, खिड़की के काँच मे से जिस प्रकार कमरे क भीतर की सभी चीजे देखी जाती है।' श्रीनाथ, यज्ञनाथ ये लोग नन्दनबागान के ब्राह्मपरिवार के है। इनके मकान पर प्रतिवर्ष ब्राह्मसमाज का उत्सव होता था। बाद मे श्रीरामकृष्ण उत्सव देखने गए थे।

सायंकाल को मन्दिर मे आरती होने लगी। कमरे मे छोटे तखत पर बैठकर श्रीरामकृष्ण ईश्वर-चिन्तन कर रहे है। धीरे धीरे भावमग्न हो गए। भाव शान्त होने पर कहते है, "माँ, उसे भी खीच लो। वह इतने दीन भाव से रहता है, तुम्हारे पास आना-जाना कर रहा है!"

श्रीरामकृष्ण भाव मे क्या बाबूराम की बात कह रहे है?

बाबूराम, मास्टर, रामदयाल आदि, बैठे है। रात के आठ-नौ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण समाधि-तत्त्व समझा रहे है। जड़ समाधि, चेतन समाधि, स्थित समाधी, उन्मना समाधि।

विद्यासागर और चंगेजखान। क्या ईश्वर निष्ठुर हैं? श्रीरामकृष्ण का उत्तर

सुख-दु:ख की बात चल रही है। ईश्वर ने इतना दु:ख क्यों बनाया?

मास्टर – विद्यासागर प्रेमकोप से कहते हैं, "ईश्वर को पुकारने की क्या आवश्यकता है! देखो चंगेजखाँ ने जिस समय लूटमार करना आरम्भ किया उस समय उसने अनेक लोगो को बन्द कर दिया। धीरे धीरे करीब एक लाख कैदी इकट्ठे हो गए। तब सेनापतियों ने आकर कहा, 'हुजूर, इन्हें खिलाएगा कौन? इन्हें साथ रखने पर भी हमारे लिए विपत्ति है। क्या किया जाए? छोड़ने पर भी विपत्ति है।' उस समय चंगेजखाँ ने कहा, 'तो फिर क्या किया जाए? उनका वध कर डालो।' इसलिए कचाकच काट डालने का आदेश हो गया! इस हत्याकाण्ड को तो ईश्वर ने देखा। कहाँ, निवारण भी तो नहीं किया। वे हैं, तो रहे। मुझे उनकी आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। मेरा तो कोई भला न हुआ!"

श्रीरामकृष्ण – क्या ईश्वर का काम, वे किस उद्देश्य से क्या करते है समझा जा सकता है? वे सृष्टि, पालन, संहार सभी कर रहे है। वे क्यो संहार कर रहे है, हम क्या समझ सकते है? मै कहता हूँ, माँ, मुझे समझने की आवश्यकता भी नही है। बस, अपने चरणकमल मे भक्ति दो। मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है इसी भक्ति को प्राप्त करना। और सब माँ जाने। बगीचे मे आम खाने को आया हूँ, कितने पेड़, कितनी शाखाएँ, कितने करोड़ पत्ते है – यह सब हिसाब करने से मुझे क्या मतलब? मै आम खाता हूं, पेड़ और पत्तो के हिसाब से मेरा क्या सम्बन्ध?

आज रात मे बाबूराम, मास्टर और रामदयाल श्रीरामकृष्ण के कमरे मे जमीन पर सोये।

आधी रात, दो-तीन बजे का समय होगा, श्रीरामकृष्ण के कमरे मे बत्ती बुझ गयी है। वे स्वयं बिस्तर पर बैठे बीच बीच मे भक्तो के साथ बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण और बाबूराम, मास्टर प्रभृति भक्त – दया और माया – कठिन साधना और ईश्वर दर्शन

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तो के प्रति) – देखो, दया और माया ये दो पृथक् पृथक् चीजे है। माया का अर्थ है, आत्मीयो के प्रति ममता – जैसे बाप, माँ, भाई, बहन, स्त्री, पुत्र इन पर प्रेम। दया का अर्थ है सर्व भूतो मे प्रेम, समदृष्टि। किसी मे यदि दया देखो, जैसे विद्यासागर मे, तो उसे ईश्वर की दया जानो। दया से सर्वभूतो की सेवा होती है। माया भी ईश्वर की ही है। माया द्वारा वे आत्मीयो की सेवा करा लेते है। पर इसमे एक बात है। माया अज्ञानी बनाकर रखती है और बद्ध बनाती है। परन्तु दया से चित्तशुद्धि होती है और धीरे धीरे बन्धन-मुक्ति होती है।

चित्तशुद्धि हुए बिना भगवान् के दर्शन नही होते। काम, क्रोध, लोभ, इन सब पर विजय प्राप्त करने से उनकी कृपा होती है, तब उनके दर्शन होते है। तुम लोगो को बहुत ही गुप्त बाते बता रहा हूँ। काम पर विजय प्राप्त करने के लिए मैने बहुतकुछ किया था। आनन्द-आसन के चारो ओर 'जय काली' जय काली' कहते हुए कई बार प्रदक्षिणा की थी।

"मेरी दस-ग्याराह वर्ष की उम्र मे, जब उस देश मे था, उस समय वह स्थिति- समाधि की स्थिति – प्राप्त हुई थी। मैदान मे से जाते जाते जो कुछ देखा उससे मै विह्वल हो पड़ा था। ईश्वरदर्शन के कुछ लक्षण है। ज्योति देखने मे आती है, आनन्द होता है, हृदय के बीच मे गुर-गुर करके महावायु उठती है ।"

दूसरे दिन बाबूराम, रामदयाल घर लौट गए। मास्टर ने वह दिन व रात्रि श्रीरामकृष्ण के साथ बितायी। उस दिन उन्होने मन्दिर मे ही प्रसाद पाया।

□□□

परिच्छेद २१

मारवाड़ी भक्तों के साथ

तीसरा पहर बीत गया है। मास्टर तथा दो-एक भक्त बैठे हैं। कुछ मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। वे कलकत्ते में व्यापार करते हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा, "आप हमें कुछ उपदेश कीजिए।" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मारवाड़ी भक्तों के प्रति) – देखो 'मैं और मेरा' दोनों अज्ञान है। 'हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और यह सब तुम्हारा है' इसका नाम ज्ञान है। और 'मेरा' क्योंकर कहोगे? बगीचे का कर्मचारी कहता है, 'मेरा बगीचा', परन्तु कोई अपराध करने पर मालिक उसे निकाल देता है। उस समय ऐसा साहस नही होता कि वह आम की लकड़ी का बना अपना सन्दूक भी बगीचे से बाहर ले जाय। काम, क्रोध आदि जाने के नही। ईश्वर की ओर उनका मुँह घुमा दो। कामना, लोभ करना हो तो ईश्वर को पाने के लिए कामना, लोभ करो। विचार करके उन्हे भगा दो। हाथी जब दूसरो के केले के पेड खाने जाता है, तो महावत उसे अंकुश मारता है।

तुम लोग तो व्यापार करते हो। जानते हो कि धीरे धीरे उन्नति करनी होती है। कोई पहले अण्डी पीसने की घानी खोलता है और फिर अधिक धन होने पर कपड़े की दूकान खोलता है। इसी प्रकार ईश्वर के पथ में आगे बढ़ना पडता है। बने तो बीच बीच मे कुछ दिन निर्जन मे रहकर उन्हे अच्छी तरह से पुकारो।

"फिर भी जानते हो? समय न होने पर कुछ नही होता। किसी किसी का भोग-कर्म काफी बाकी रह जाता है। इसीलिए देरी होती है, फोड़ा कच्चा रहते चीरने पर हानि पहुँचाता है। पककर जब मुँह निकलता है, उस समय डाक्टर चीरता है। लड़के ने कहा था, 'माँ, अब मै सोता हूँ। जब मुझे शौच लगे तब तुम जगा देना।', माँ ने कहा, 'बेटा, शौच लगने पर तुम खुद ही उठ जाओगे मुझे उठाना न पड़ेगा।' "(सब हँसते है।)

मारवाडी भक्त और व्यापार में मिथ्या वचन – रामनाम संकीर्तन

मारवाड़ी भक्तगण बीच बीच में श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए मिठाई, फल, सुगंधि मिश्री आदि लाते है। परन्तु श्रीरामकृष्ण साधारणत: उन चीजो का सेवन नही करते। कहते है, वे लोग अनेक झूठी बाते कहकर धन कमाते है। इसलिए उपस्थित मारवाड़ियो को

वार्तालाप के भीतर से उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – देखो, व्यापार करने में सत्य की टेक नहीं रहती। व्यापार में तेजी-मन्दी होती रहती है। नानक की कहानी में है, उन्होंने कहा, "असाधु की चीजें खाने गया तो मैंने देखा कि वे सब खून से लथपथ हो गयी हैं!' साधु को शुद्ध चीज देनी चाहिए। मिथ्या उपाय से प्राप्त की हुई चीजें नहीं देनी चाहिए। सत्यपथ द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है ।'*

"सदा उनका नाम लेना चाहिए। काम के समय मन का उनके हवाले कर देना चाहिए। जिस प्रकार मेरी पीठ पर फोड़ा हुआ है, सभी काम कर रहा हूँ, परन्तु मन फोड़े मे ही है। रामनाम लेना अच्छा है। जो राम दशरथ का बेटा है, उन्होंने जगत् की सृष्टि की है, वे सर्वभूतों में हैं। और वे अत्यन्त निकट हैं, वे ही भीतर और बाहर हैं।

"वही राम दशरथ का बेटा, वही राम घट–घट में लेटा।
वही राम जगत् पसेरा वही राम सब से न्यारा।।"

□□□

---

* सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यक् ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्। (मुण्डकोपनिषद् ३।१।५)
सत्यमेव जयते नानृतम्। –(मुण्डकोपनिषद्, ३।१।६)

परिच्छेद २२

राखाल.प्राणकृष्ण, केदार आदि भक्तों के साथ

(१)

समाधि में

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर के अपने कमरे मे भक्तो के साथ बैठे हैं। दिनरात भगवत्प्रेम में – ब्रह्ममयी माता के प्रेम में – मस्त रहते हैं।

फर्श पर चटाई बिछी है। आप उसी पर आकर बैठ गए। सामने है प्राणकृष्ण और मास्टर। श्री राखाल* भी कमरे में बैठे हुए हैं। हाजरा महाशय घर के बाहर दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में बैठे हुए है।

जाड़े का मौसम है – पूस का महीना। सोमवार, दिन के आठ बजे हैं। पहली जनवरी १८८३। श्रीरामकृष्ण शाल ओढ़े हुए हैं।

इस समय श्रीरामकृष्ण के अनेक अन्तरंग भक्त आने-जाने लगे हैं। लगभग सालभर से नरेन्द्र, राखाल, भवनाथ, बलराम, मास्टर, बाबूराम, लाटू आदि भक्त सदा आते-जाते रहते हैं। इनके आने के सालभर पूर्व से राम, मनोमोहन, सुरेन्द्र और केदार आया करते हैं।

लगभग पाँच महीने हुए होंगे, जब श्रीरामकृष्ण विद्यासागर के 'बादुड़बागान' वाले मकान में पधारे थे। दो महीने पूर्व आप श्री केशव सेन के साथ विजय आदि ब्राह्मभक्तों को लेकर नाव पर आनन्द करते हुए कलकत्ता गए थे।

श्री प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय कलकत्ते के श्यामपुकुर मुहल्ले में रहते हैं। पहले इनका जनाई मौजे में निवास था। ये 'एक्सचेंज' विभाग के बड़े बाबू हैं। नीलाम के काम की देखरेख करते हैं। पहली पत्नी के कोई सन्तान न होने के कारण उनकी सम्मति से उन्होंने दूसरी बार विवाह किया था। दूसरी पत्नी के एक पुत्र हुआ है। वही इनकी इकलौती सन्तान है। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है। शरीर कुछ स्थूल होने के कारण कभी कभी

---

* इन्हें श्रीरामकृष्ण की अभीष्टदेवी काली ने श्रीरामकृष्ण को उनका मानस पुत्र बतलाया था; ये ही बाद में स्वामी ब्रह्मानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए और रामकृष्ण.संघ के प्रथम संचालक हुए थे।

श्रीरामकृष्ण इन्हें 'मोटा ब्राह्मण' कहकर पुकारते थे। ये बड़े सज्जन व्यक्ति हैं। लगभग नौ महीने हुए होंगे, श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ इनका निमन्त्रण स्वीकार किया था। इन्होंने बड़े आदर से सब को भोजन कराया था।

श्रीरामकृष्ण जमीन पर बैठे हुए हैं। पास ही टोकरीभर जलेबियाँ रखी हैं – किसी भक्त ने लायी हैं। आपने जलेबी का एक टुकड़ा तोड़कर खाया।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण आदि से हँसते हुए) – देखा, मैं माता का नाम जपता हूँ, इसीलिए ये सब चीजें खाने को मिलती हैं। (हास्य)

"परन्तु वे लौकी-कोहड़े जैसे फल नहीं देती – वे देतीं हैं अमृतफल – ज्ञान, प्रेम, विवेक, वैराग्य!"

कमरे में छः-सात साल की उम्र का एक लड़का आया। इधर श्रीरामकृष्ण की भी बालको जैसी अवस्था है। जैसे एक बालक किसी दूसरे बालक को देखकर खाने की चीज छिपा लेता है जिससे वह छीनाझपटी न करे, वैसे ही श्रीरामकृष्ण की अवस्था उस बालक को देखकर होने लगी। वे उस जलेबियों की टोकरी को हाथों से ढककर छिपाने लगे। फिर धीरे से उन्होंने उसे एक ओर हटाकर रख दिया।

प्राणकृष्ण गृहस्थ तो हैं परन्तु वे वेदान्तचर्चा भी करते है, कहते है, "ब्रह्म ही सत्य है, संसार मिथ्या; मैं वही हूँ – सोऽहम्।" श्रीरामकृष्ण उन्हें समझाते हैं – "कलिकाल में प्राण अन्नगत है, कलिकाल में नारदीय भक्ति चाहिए।

"वह विषय भाव का है, बिना भाव के कौन उसे पा सकता है?"

बालको की तरह हाथों से जलेबियों की टोकरी छिपाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये।

(२)

भावराज्य व रूपदर्शन

श्रीरामकृष्ण समाधि में मग्न है। काफी समय हुआ, भाव के आवेश में पूर्ण बने बैठे है। न देह डुलती है, न पलके गिरती हैं; साँस भी चलती है या नहीं, जान नहीं पड़ता।

बड़ी देर बाद आपने एक लम्बी साँस छोड़ी – मानो इन्द्रियराज्य में फिर लौट रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (प्राणकृष्ण से) – वे केवल निराकार नहीं, साकार भी हैं। उनके रूप के दर्शन होते हैं। भाव और भक्ति से उनके अनुपम रूप के दर्शन मिलते हैं। माँ अनेक रूपों में दर्शन देती हैं।

"कल माँ को देखा, गेरुए रंग का अँगरखा पहने हुए। मेरे साथ बातें कर रही थीं।

"और एक दिन मुसलमान लड़की के रूप में मेरे पास आयी थीं। कपाल पर

तिलक, पर शरीर पर कपड़ा नही। – छ:-सात साल की बालिका, मेरे साथ साथ घूमने और मुझसे हँसी-ठठ्टा करने लगी।

गौरांग-दर्शन - रति की माँ के वेष में माँ

"जब मैं हृदय के घर पर था तब गौरांग के दर्शन हुए थे, वे काली धारीदार धोती पहने थे।

"हलधारी कहता था, वे भाव और अभाव से परे है। मैंने माँ से जाकर कहा, 'माँ', हलधारी ऐसी बात कह रहा है, तो क्या रूप आदि मिथ्या हैं?' माँ रति की माँ के रूप में मेरे पास आयी और बोली, 'तू भाव में ही रह।' मैंने भी हलधारी से यही कहा।

"कभी कभी यह बात भूल जाता हूँ, इसलिए कष्ट भोगना पड़ता है। भाव मे न रहने के कारण दाँत टूट गए। अतएव 'दैववाणी' या 'प्रत्यक्ष' न होने तक भाव में ही रहूँगा – भक्ति ही लेकर रहूँगा। क्यों – तुम क्या कहते हो?"

प्राणकृष्ण – जी हाँ।

भक्ति का अवतार क्यों? राम की इच्छा

श्रीरामकृष्ण – और तुम्हीं से क्यो पूछूँ? इसके भीतर कोई एक रहता है। वही मुझे इस तरह चला रहा है। कभी कभी मुझमें देवभाव का आवेश होता था, तब बिना पूजा किये चित्त शान्त न होता था।

"मै यन्त्र हूँ, और वे यन्त्री। वे जैसा कराते हैं, वैसा ही करता हूँ। जो कुछ बुलवाते है, वही बोलता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने भक्त रामप्रसाद के एक गीत की पंक्तियाँ उदाहरण के लिए कही; उसका अर्थ यह है –

'भवसागर मे अपना डोंगा बहाकर उस पर बैठा हुआ हूँ। जब ज्वार आयगी, तब पानी के साथ साथ मैं भी चढ़ता जाऊँगा और जब भाटा हो जायगा, तब उतरता जाऊँगा।'

श्रीरामकृष्ण – जूठी पत्तल हवा के झोके से उड़कर कभी तो अच्छी जगह पर गिरती हैं, कभी नाली मे गिर जाती है – हवा जिधर ले जाती है उधर ही चली जाती है।

"जुलाहे ने कहा – राम की मर्जी से डाका डाला गया, राम ही की मर्जी से मुझे छोड़ दिया।

"हनुमान ने कहा – हे राम, मैं शरणागत हूँ, शरणागत हूँ; – यही आशीर्वाद दीजिये कि आपके पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति हो, फिर कभी आपकी भुवनमोहिनी माया में मुग्ध न होऊँ।

"मेढक मरते हुए बोला – राम, जब साँप पकड़ता है, तब तो 'राम, रक्षा करो' कहकर चिल्लाता हूँ, परन्तु अब जब कि राम ही के धनुष से बिंधकर मर रहा हूँ, तो चुप्पी

साधनी ही पड़ी।

"पहले प्रत्यक्ष दर्शन होते थे – इन्हीं आँखों से, जैसे तुम्हें देख रहा हूँ। अब भावावेश में दर्शन होते हैं।

"ईश्वर-लाभ होने पर बालकों का-सा स्वभाव हो जाता है। जो जिसका चिन्तन करता है, वह उसकी सत्ता को भी पाता है। ईश्वर का स्वभाव बालकों जैसा है। खेलते हुए बालक जैसे घरौंदा बनाते, बिगाड़ते और उसे फिर से बनाते हैं, उसी तरह वे भी सृष्टि, स्थिति और प्रलय कर रहे हैं। बालक जैसे किसी गुण के वश में नहीं है, उसी प्रकार वे भी सत्त्व, रज और तम तीनों गुणों से परे हैं।

"इसीलिए जो परमहंस होते हैं, वे दस-पाँच बालक अपने साथ रखते हैं – अपने पर उनके स्वभाव का आरोप करने के लिए।"

आगरपाड़ा से एक बीस-बाईस साल का लड़का आया हुआ है। जब यह आया है, श्रीरामकृष्ण को इशारा करके एकान्त मे ले जाता है और वहीं चुपचाप अपने मन की बात कहता है। यह अभी हाल ही में आने-जाने लगा है। आज वह निकट आकर फर्श पर बैठा।

प्रकृतिभाव तथा कामजय। सरलता और ईश्वरलाभ

श्रीरामकृष्ण (उसी लड़के से) – आरोप करने पर भाव बदल जाता है। प्रकृति के भाव का आरोप करो तो धीरे धीरे कामादि रिपु नष्ट हो जाते हैं। ठीक स्त्रियों के-से हाव-भाव हो जाते हैं। नाटक में जो लोग स्त्रियों का काम करते हैं, उन्हें नहाते समय देखा है, - स्त्रियों की ही तरह दाँत माँजते और बातचीत करते हैं।

"तुम किसी शनिवार या मंगलवार को आओ।"

(प्राणकृष्ण से) – "ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। शक्ति न मानो तो संसार मिथ्या हो जाता है; हम, तुम, घर, परिवार – सब मिथ्या हो जाते हैं। आद्याशक्ति के रहने ही के कारण संसार का अस्तित्व है। बिना आधार के कोई चीज कभी ठहर सकती है? बिना खूँटियों के न तो ढाँचा खड़ा रह सकता है और न उस पर सुन्दर मूर्ति ही बन सकती है।

"विषयबुद्धि का त्याग किये बिना चैतन्य नहीं होता है – ईश्वर नहीं मिलते। उसके रहने ही से कपटता आ जाती है। बिना सरल हुए कोई उन्हें पा नहीं सकता।

'ऐसी भक्ति करो घट भीतर, छोड़ कपट चतुराई।
सेवा बन्दी और अधीनता, सहज मिलें रघुराई।।'

"जो लोग विषयकर्म करते हैं, आफिस का काम या व्यवसाय करते हैं, उन्हें भी सचाई से रहना चाहिए। सच बोलना कालिकाल की तपस्या है।

प्राणकृष्ण – "अस्मिन् धर्मे महेशि स्यात् सत्यवादी जितेन्द्रियः।
परोपकारनिरतो निर्विकारः सदाशयः।।'

"यह महानिर्वाणतन्त्र मे लिखा है।"

श्रीरामकृष्ण – हाँ, इसकी धारणा करनी चाहिए।

(३)

श्रीरामकृष्ण का यशोदा-भाव तथा समाधि

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर जा बैठे है। भाव मे तो सदा ही पूर्ण रहते है। भावनेत्रों मे राखाल को देख रहे है। देखते देखते हृदय मे वात्सल्यरस उमड़ने लगा, अंग पुलकित होने लगे। क्या यशोदामाता इन्ही नेत्रो से गोपाल को देखा करती थी?

देखते ही देखते फिर आप समाधिलीन हो गए। कमरे के भीतर जितने भक्त बैठे हुए थे, वे सभी आश्चर्य से चकित और स्तब्ध होकर श्रीरामकृष्ण के भाव की यह अद्भुत अवस्था देख रहे है।

श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ होकर कहते है, – "राखाल को देखकर इतनी उद्दीपना क्यो होती है? जितना ही ईश्वर की ओर बढ़ते जाओगे, ऐश्वर्य की मात्रा उतनी ही घटती जाएगी। साधक पहले दशभुजा मूर्ति देखता है। वह ईश्वरी मूर्ति है। इसमे ऐश्वर्य का प्रकाश अधिक रहता है। इसके बाद द्विभुजा मूर्ति देखता है। तब दस हाथ नही रहते – इतने अस्त्र-शस्त्र नही रहते। इसके बाद गोपाल-मूर्ति के दर्शन होते है, कोई ऐश्वर्य नही - केवल एक छोटे बच्चे की मूर्ति। इससे भी परे है – केवल ज्योति-दर्शन।

यथार्थ ब्रह्मज्ञान की अवस्था – विचार और आसक्ति का त्याग

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर, उनमे समाधिमग्न हो जाने पर, फिर ज्ञान-विचार नही रह जाता।

"ज्ञान-विचार तो तभी तक है, जब तक अनेक वस्तुओं की धारणा रहती है – जब तक जीव, जगत्, हम तुम, यह ज्ञान रहता है। जब एकत्व का यथार्थ ज्ञान हो जाता है, तब चुप हो जाना पड़ता है। जैसे त्रैलंगस्वामी।

"ब्रह्मभोज के समय नही देखा? पहले खूब गलगपाड़ा मचता है। ज्यों-ज्यों पेट भरता जाता है, त्यो त्यो आवाज घटती जाती है। जब दही आया, तब सुप्-सुप्, बस और कोई शब्द नही। इसके बाद ही निद्रा – समाधि! तब आवाज जरा भी नही रह जाती!

(मास्टर और प्राणकृष्ण से) - "कितने ही ऐसे है जो ब्रह्मज्ञान की डीग मारते है परन्तु नीचे स्तर की वस्तुएँ लेकर मग्न रहते है। – घर-द्वार, धनमान, इन्द्रियसुख। मोनूमेण्ट (Monument) के नीचे जब तक रहा जाता है, तब तक गाड़ी, घोड़ा, साहब, मेम – यही सब दीख पड़ते है। ऊपर चढ़ने पर सिर्फ आकाश, समुद्र लहराता हुआ दीख पडता है। तब घर-द्वार, घोड़ा-गाड़ी, आदमी – इन पर मन नही रमता, ये सब चीटीं जैसे

नजर आते है।

"ब्रह्मज्ञान होने पर संसार की आसक्ति चली जाती है, काम-कांचन के लिए उत्साह नही रहता – सब शान्त हो जाता है। काठ जब जलता है तब उसमे चटाचट आवाज होती है और कड़ुआ धुऑं भी निकलता है। जब सब जलकर खाक हो जाता है, तब फिर शब्द नही होता। आसक्ति के जाते ही उत्साह भी चला जाता है। अन्त मे केवल शान्ति रह जाती है।

"ईश्वर की ओर कोई जितना ही बढ़ता है, उतनी ही शान्ति मिलती है। शान्तिः शान्तिः शान्तिः प्रशान्तिः। गंगा के निकट जितना ही जाया जाता है, उतना ही शीतलता का अनुभव होता जाता है। नहाने पर और भी शान्ति मिलती है।

"परन्तु जीव, जगत, चौबीस तत्त्व, इनकी सत्ता उन्ही की सत्ता से भासित हो रहा है। उन्हे छोड़ देने पर कुछ भी नही रह जाता। एक के बाद शून्य रखने से संख्या बढ़ जाती है। एक को निकाल डालो तो शून्य का कोई अर्थ नहीं रह जाता।"

प्राणकृष्ण पर कृपा करने की लिए श्रीरामकृष्ण अपनी अवस्था के सम्बन्ध मे कह रहे है।

ब्रह्मज्ञान के उपरान्त 'भक्ति का मैं'

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्मज्ञान के पश्चात् समाधि के पश्चात्, कोई कोई नीचे उतरकर 'विद्या का मैं', 'भक्ति का मैं' लेकर रहते है। हाट का क्रय-विक्रय समाप्त हो जाने पर भी कुछ लोग अपनी इच्छानुसार हाट मे ही रह जाते है, जैसे नारद आदि। वे 'भक्ति का मैं' लेकर लोकशिक्षा के लिए संसार मे रहते है। शंकराचार्य ने लोकशिक्षा के लिए 'विद्या का मैं' रखा था।

"आसक्ति का नाममात्र भी रहते वे नही मिल सकते। सूत के रेशे निकले हुए हो तो वह सुई के भीतर नही जा सकता।

"जिन्होने ईश्वर को प्राप्त कर लिया है, उनके काम-क्रोध नाममात्र के हैं, जैसे जली रस्सी, – रस्सी का आकार तो है परन्तु फूकने से ही उड़ जाती है।

"मन से आसक्ति के चले जाने पर उनके दर्शन होते है। शुद्ध मन से जो निकलेगी, वह उन्ही की वाणी है। शुद्ध मन जो है, शुद्ध बुद्धि भी वही है और शुद्ध आत्मा भी वही है, क्योकि उन्हे छोड़ कोई दूसरा शुद्ध नही है।

"परन्तु उन्हे पा लेने पर लोग धर्माधर्म को पार कर जाते है।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से भक्त रामप्रसाद का एक गीत गाने लगे। उसका मर्म यह है –

"मन, चल, सैर करने चले। कालीरूपी कल्पलता के नीचे तुझे चारो फल मिल

जायेगे। अपनी प्रवृत्ति और निवृत्ति, इन दो पत्नियो मे से तू निवृत्ति को साथ लेना और उसी के पुत्र विवेक मे तत्त्व की बाते पूछना।''

(४)

श्रीरामकृष्ण का श्रीराधा-भाव

श्रीरामकृष्ण दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे मे आकर बैठे है। प्राणकृष्ण आदि भक्त भी साथ साथ आये है। हाजरा महाशय बरामदे मे बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण हँसते हुए प्राणकृष्ण से कह रहे है –

''हाजरा कुछ कम नही है। अगर यहाँ (स्वयं को लक्ष्य करके) कोई बड़ी दरगाह हो तो हाजरा छोटी दरगाह है!'' (सब हँसते है।)

नवकुमार आकर बरामदे के दरवाजे मे खड़ हुए और भक्तो को देखते ही चले गय। उन्हे देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा – ''अहंकार की मूर्ति है।''

दिन के आठ बज चुके है। प्राणकृष्ण ने प्रणाम करके चलने की आज्ञा ली, उन्हे कलकत्ते के मकान मे लौट जाना है।

एक वैरागी गोपीयन्त्र (एकतारे की सूरत-शकल का) लेकर श्रीरामकृष्ण के कमरे मे गा रहे है। गीतो का आशय यह है –

(१) ''नित्यानन्द का जहाज आया है। तुम्हे पार जाना हो तो इस पर आ जाओ। छ. गोरे इसमे सदा पहरा देते है। उनकी पीठ ढाल से घिरी हुई है और कमर मे तलवार लटक रही है। सदर दरवाजा खोलकर वे धनरत्न लुटा रहे है।''

(२) ''इस समय घर छा लेना। इस बार वर्षा जोरो की होगी, सावधान हो जाओ, अदरक का पानी पीकर अपने काम पर डट जाओ। जब श्रावण लग जायगा तब कुछ भी न सूझेगा। छप्पर का टाट सड़ जायगा। फिर तुम घर न छा सकोगे। जब झकोरे लगेगे, तब छप्पर उड जायगा। घर वीरान हो जायगा। तुम्हे भी फिर स्थान बदलना ही पडेगा।''

(३) ''किसके भाव मे नदिये मे आकर दीन वेश धारण कर तुम स्वयं हरि होते हुए भी हरिनाम गा रहे हो? किसका भाव लेकर तुमने यह भाव और ऐसा स्वभाव धारण किया? कुछ समझ मे नही आता।''

श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे है, इसी समय श्री केदार चटर्जी आये और उन्होने प्रणाम किया। वे आफिस की पोशाक मे – चोगा, अचकन पहने और घड़ी चेन लगाये हुए आये है। परन्तु ईश्वरचर्चा होती है तो आपकी आँखो से आँसुओ की झड़ी लग जाती है। आप बडे प्रेमी है। हृदय मे गोपीभाव विराजमान है।

केदार को देखकर श्रीरामकृष्ण के मन मे वृन्दावन की लीला का उद्दीपन होने लगा। आप प्रेमोन्मत्त हो गये। खड़े होकर केदार को सुनाते हुए इस मर्म का गाना गाने लगे –

"क्यों सखि, वह वन अभी कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं? अब तो चला नहीं जाता!"

श्रीराधिका के भावावेश में गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। चित्रवत् खड़े हैं। नेत्रो के दोनों कोरों से आनन्दाश्रु लुढक रहे हैं।

भूमिष्ठ होकर श्रीरामकृष्ण के चरणों का स्पर्श करके केदार उनकी स्तुति करने लगे –

"हृदयकमलमध्ये निर्विशेषं निरीहं हरिहरविधिवेद्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
जननमरणभीतिभ्रंशि सच्चित्स्वरूपं सकलभुवनबीजं ब्रह्मचैतन्यमीडे।।"

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। केदार को अपने घर हालीशहर से कलकत्ते में काम पर जाना था। रास्ते में दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करके जा रहे हैं। कुछ देर विश्राम करने के पश्चात् केदार ने बिदाई ली।

इसी तरह भक्तों से वार्तालाप करते हुए दोपहर का समय हो गया। श्री रामलाल श्रीरामकृष्ण के लिए थाली में कालीमाता का प्रसाद ले आये। कमरे में आसन पर दक्षिणास्य बैठकर श्रीरामकृष्ण ने प्रसाद पाया। बालकों की तरह भोजन किया – थोड़ा थोड़ा सभी कुछ खाया।

भोजन करके श्रीरामकृष्ण उसी छोटी खाट पर विश्राम करने लगे। कुछ समय पश्चात् मारवाड़ी भक्तो का आगमन हुआ।

(५)

अभ्यासयोग। दो पथ – विचार और भक्ति

दिन के तीन बजे हैं। मारवाड़ी भक्त जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे है। कमरे में मास्टर, राखाल और दूसरे भक्त भी हैं।

मारवाड़ी भक्त – महाराज, उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – उपाय दो हैं। विचार-मार्ग और अनुराग अथवा भक्ति का मार्ग।

"सत्-असत् का विचार। एकमात्र सत् या नित्य वस्तु ईश्वर हैं, और सब कुछ असत् या अनित्य है। इन्द्रजाल दिखलानेवाला ही सत्य है, इन्द्रजाल मिथ्या है। यही विचार है।

"विवेक और वैराग्य। इस सत्-असत् विचार का नाम विवेक है। वैराग्य अर्थात् संसार की वस्तुओं से विरक्ति। यह एकाएक नही होता – प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिए। कामिनी-कांचन का त्याग पहले मन से करना पड़ता है। फिर तो उनकी इच्छा होते ही वह मन से त्याग कर सकता है और बाहर से भी त्याग कर सकता है। पर कलकत्ते के आदमियों से क्या मजाल जो कहा जाय कि ईश्वर के लिए सब कुछ छोड़ो! उनसे यही

कहना पड़ता है कि मन ही मे त्याग करो। अभ्यासयोग से कामिनी-कांचन मे आसक्ति का त्याग होता है – यह बात गीता मे है। अभ्यास से मन मे असाधारण शक्ति आ जाती है। तब इन्द्रियसंयम करने और काम-क्रोध को वश मे लाने मे कष्ट नही उठाना पड़ता। जैसे कछुआ पैर समेट लेने पर फिर बाहर नही निकालना चाहता – कुल्हाड़ी से टुकड़े टुकड़े कर डालने पर भी बाहर नहीं निकालता।"

मारवाड़ी भक्त – महाराज, आपने दो रास्ते बतलाये। दूसरा कौनसा है?

श्रीरामकृष्ण – वह अनुराग या भक्ति का मार्ग है। व्याकुल होकर एक बार निर्जन मे अकेले मे दर्शन की प्रार्थना करते हुए रोओ।

"ऐ मन, जैसे पुकारा जाता है उस तरह तुम पुकारो तो सही, फिर देखो भला तुम्हे छोड़कर माँ श्यामा कैसे रह सकती है?"

मारवाड़ी भक्त – महाराज, साकार-पूजा का क्या अर्थ है? और निराकार-निर्गुण का क्या मतलब है?

श्रीरामकृष्ण – जैसे पिता का फोटोग्राफ देखने से पिता की याद आती है, वैसे ही प्रतिमा की पूजा करते करते सत्य के रूप की उद्दीपना होती है।

"साकार रूप कैसा है जानते हो? जैसे जलराशि से बुलबुले निकलते है, वैसा ही। महाकाश चिदाकाश से एक एक रूप आविर्भूत होते हुए दीख पड़ते है। अवतार भी एक रूप ही है। अवतार-लीला भी आद्याशक्ति ही की क्रीड़ा है।

पाण्डित्य – मैं कौन? मैं ही तुम

"पाण्डित्य मे क्या रखा है? व्याकुल होकर पुकारने पर वे मिलते हैं। नाना विषयो का ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता नही।

"जो आचार्य है उन्ही को कई विषयो का ज्ञान रखना चाहिए। दूसरो को मारने के लिए ढाल-तलवार की जरूरत होती है, परन्तु अपने को मारने के लिए एक सुई या नहरनी ही मे काम चल सकता है।

"मै कौन हूँ, इसकी ढूँढ़-तलाश करने के लिए चलो तो उन्ही के निकट जाना पड़ता है। *क्या मैं मांस हूँ? या हाड़, रक्त या मज्जा हूँ? मन या बुद्धि हूँ? अन्त में* विचार करते हुए देखा जाता है कि मै यह सब कुछ नही हूँ। 'नेति' 'नेति'। आत्मा वह चीज नहीं कि पकड़ में आ जाय। वह निर्गुण और निरुपाधि है।

"परन्तु भक्तिमत से वे सगुण है। चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम – सब चिन्मय!"

मारवाड़ी भक्तगण प्रणाम करके बिदा हुए।

दक्षिणेश्वर में सन्ध्या और आरती

सन्ध्या हो गयी। श्रीरामकृष्ण गंगा-दर्शन कर रहे है। *कमरे में दीपक जलाया गया।*

श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नामस्मरण कर रहे हैं और अपनी खाट पर बैठे हुए उन्हीं के ध्यान में मग्न हैं!

श्रीमन्दिर मे अब आरती होने लगी। जो लोग इस समय भी गंगा के किनारे या पंचवटी में घूम रहे हैं, वे दूर से आरती की मधुर घण्टाध्वनि सुन रहे हैं। ज्वार आ गयी है, भागीरथी कलकल स्वर से उत्तर की ओर बह रही हैं। आरती का मधुर शब्द इस 'कल-कल' ध्वनि से मिलकर और भी मधुर हो गया है। इस माधुर्य के भीतर प्रेमोन्मत्त श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। सब कुछ मधुर है! हृदय भी मधुमय हो रहा है!

परिच्छेद २३

बेलघर में गोविन्द मुखोपाध्याय के मकान पर

श्रीरामकृष्ण ने बेलघर के श्री गोविन्द मुखोपाध्याय के मकान पर शुभागमन किया है। रविवार, १८ फरवरी १८८३ ई.। नरेन्द्र, राम आदि भक्तगण आये है, पड़ोसीगण भी आये हैं। सबेरे सात-आठ बजे के समय श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र आदि के साथ संकीर्तन मे नृत्य किया था।

कीर्तन के बाद सभी बैठ गये। कई लोग श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे है। श्रीरामकृष्ण बीच बीच मे कह रहे हैं, "ईश्वर को प्रणाम करो।" फिर कह रहे है, "वे ही सब रूपो मे है। परन्तु किसी किसी स्थान पर उनका विशेष प्रकाश है – जैसे साधुओं मे। यदि कहो, दुष्ट लोग भी है, बाघ-सिंह भी तो हैं, तो वह ठीक है, परन्तु बाघरूपी नारायण से आलिंगन करने की आवश्यकता नही है, उसे दूर से प्रणाम करके चले जाना चाहिए। फिर देखो जल। कोई जल पिया जाता है, किसी जल से पूजा की जाती है, किसी जल से स्नान किया जाता है और फिर किसी जल से केवल हाथमुँह धोया जाता है।"

पड़ोसी – वेदान्त का क्या मत है?

श्रीरामकृष्ण – वेदान्तवादी कहते है, 'सोऽहं'। ब्रह्म सत्य, जगत् मिथ्या है। 'मै' भी मिथ्या है, केवल वह परब्रह्म ही सत्य है।

"परन्तु 'मै' तो नही जाता। इसलिए मैं उनका दास, मै उनकी सन्तान, मै उनका भक्त, यह अभिमान बहुत अच्छा है।

"कलियुग में भक्तियोग ही ठीक है। भक्ति द्वारा भी उन्हें प्राप्त किया जाता है। देहबुद्धि के रहने से विषयबुद्धि होती ही है। रूप, रस, गंध, स्पर्श – ये सब विषय हैं। विषयबुद्धि दूर होना बहुत कठिन है। विषयबुद्धि के रहते 'सोऽहं' नहीं होता।*

"संन्यासियों में विषयबुद्धि कम है। संसारीगण सदैव विषयचिन्ता लेकर ही रहते हैं, इसलिए संसारियों के लिए 'दासोऽहं' "

पड़ोसी – हम पापी हैं, हमारा क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण – उनका नाम-गुणगान करने से देह से सब पाप भाग जाते हैं। देहरूपी

---

* अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते। (गीता, १२।५)

वृक्ष पर पाप-पक्षी बैठे हुए हैं उनका नाम कीर्तन करना मानो तालीं बजाना बजाने मे जिस प्रकार वृक्ष के ऊपर के सभी पक्षी भाग जाते है, उसी प्रकार उनके नाम-गुणकीर्तन से सभी पाप भाग जाते है।

"फिर देखो मैदान के तालाब का जल धूप से स्वयं ही सूख जाता है। इसी प्रकार उनके नाम-गुणकीर्तन से पापरूपी तालाब का जल स्वयं ही सूख जाता है।

"रोज अभ्यास करना पड़ता है। सर्कस मे देख आया, घोड़ा दौड़ रहा है, उस पर मेम एक पैर पर खड़ी है। कितने अभ्यास से ऐसा हुआ होगा।

"और उनके दर्शन के लिए कम से कम एक बार रोओ।

"यही दो उपाय है, - अभ्यास और अनुराग, अर्थात् उन्हे देखने के लिए व्याकुलता।"

दुमॅजले पर बैठकखाने के बरामदे म श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ प्रसाद पा रहे हैं। दिन के एक बजे का समय हुआ। भोजन समाप्त होने के साथ ही साथ नीचे के ऑगन म एक भक्त गाने लगे।

(भावार्थ) – "जागो, जागो जननि! हे कुलकुण्डलिनि! मूलाधार मे सोते हुए कितने दिन बीत गये।"

श्रीरामकृष्ण गाना सुनकर समाधिमग्न हुए। सारा शरीर स्थिर है हाथ प्रसाद-पात्र पर जैसा था वैसा ही चित्रलिखित-सा रह गया। और भोजन न हुआ। काफी देर के बाद भाव कुछ कम होने पर कह रहे है, "मै नीचे जाऊँगा, मै नीचे जाऊँगा।"

एक भक्त उन्हे बडी सावधानी के साथ नीचे ले जा रहे है।

ऑगन मे ही प्रातःकाल नामसंकीर्तन तथा प्रेमानन्द मे श्रीरामकृष्ण का नृत्य हुआ था। अभी तक दरी और आसन बिछा हुआ है। श्रीरामकृष्ण अभी तक भावमग्न है। गानेवाले के पास आकर बैठे। गायक ने इतनी देर मे गाना बन्द कर दिया था। श्रीरामकृष्ण दीन भाव से कह रहे है, "भाई, और एक बार 'मॉ' का नाम सुनूॅगा।' गायक फिर गाना गा रहे है।

(भावार्थ) – "जागो, जागो, जननि! हे कुलकुण्डलिनि! मूलाधार मे निद्रितावस्था म कितने दिन बीत गये! अपनी कार्यसिद्धि के लिए मस्तक की ओर चलो, जहॉ सहस्त्रदल पद्म मे परमशिव विराजमान है। हे मॉ, चैतन्यरूपिणी, षट्चक्र को भेदकर मन के खेद को दूर करो।"

गाना सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण फिर भावमग्न हो गये।

दक्षिणेश्वर में राखाल, राम आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे दोपहर को भोजन करके भक्तों के साथ बैठे हुए है! आज २५ फग्वरी १८८३ ई. है।

राखाल, हरीश, लाटू, हाजरा आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते है। कलकत्ते से राम, केदार, नित्यगोपाल, मास्टर आदि भक्त आये है और चौधरी भी आये है।

अभी अभी चौधरी की पत्नी का स्वर्गवास हो गया है। मन मे शान्ति पाने के उद्देश्य से कुछ एक बार वे श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आ चुके है। उन्हे उच्च शिक्षा मिली है, सरकारी पद पर नौकरी करते है।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तों से) -- राखाल, नरेन्द्र, भवनाथ, ये सब नित्यसिद्ध हैं, जन्म ही से इन्हे चैतन्य प्राप्त है। ये लोकशिक्षा के लिए ही शरीर धारण करते है।

"एक श्रेणी के लोग और होते है। वे कृपासिद्ध कहलाते है। एकाएक उनकी कृपा हुई कि दर्शन हुए और ज्ञानलाभ हुआ। जैसे हजार वर्षों के अँधेरे कमरे मे चिराग ले जाओ तो क्षण भर मे उजाला हो जाता है – धीरे धीरे नही होता।

निर्जन में साधना

"जो लोग संसार मे है, उन्हे साधना करनी चाहिए। निर्जन मे व्याकुल होकर ईश्वर को बुलाना चाहिए।

(चौधरी से) – "पाण्डित्य से वे नही मिलते।

"और उन्हे विचार करके समझनेवाला है कौन? उनके पादपद्मो मे जिस से भक्ति हो, सब को वही करना चाहिए।

"उनका ऐश्वर्य अनन्त है – समझ मे क्या आये? और उनके कार्यो को भी कोई क्या समझे?

भीष्मदेव का क्रन्दन

"भीष्मदेव जो साक्षात् अष्टवसुओं मे एक है, शरशय्या पर रोने लगे; कहा, 'क्या आश्चर्य! पाण्डवो के साथ सदा स्वयं भगवान् रहते है, फिर भी उनके दुःख और विपत्तियों का अन्त नही! – भगवान् के कार्यो को कोई क्या समझे!'

"कोई कोई सोचते हैं कि हम भजन-पूजन करते हैं – हम जीत गये। परन्तु हारजीत उनके हाथों में है। यहाँ एक वेश्या मरने के समय ज्ञानपूर्वक गंगा-स्पर्श करके मरी !

चौधरी – किस तरह उनके दर्शन हों?

श्रीरामकृष्ण – इन आँखों से वे नहीं दीख पड़ते। वे दिव्यदृष्टि देते हैं, तब उनके दर्शन होते हैं! अर्जुन को विश्वरूप-दर्शन के समय श्रीभगवान् ने दिव्यदृष्टि दी थी।

"तुम्हारी फिलासफी (Philosophy) में सिर्फ हिसाब-किताब होता है – सिर्फ विचार करते हैं। इससे वे नहीं मिलते।

रागभक्ति – अहैतुकी भक्ति

"यदि रागभक्ति – अनुराग के साथ भक्ति – हो तो वे स्थिर नहीं रह सकते।

"भक्ति उनको उतनी ही प्रिय है जितनी बैल को सानी।

"रागभक्ति – शुद्धा भक्ति – अहैतुकी भक्ति। जैसे प्रह्लाद की।

"तुम किसी बड़े आदमी से कुछ चाहते नहीं हो, परन्तु रोज आते हो, उन्हें देखना ही चाहते हो। पूछने पर कहते हो – 'जी, कोई काम नहीं है, बस दर्शन के लिएँ आ गया।' इसे अहैतुकी भक्ति कहते हैं। तुम ईश्वर से कुछ चाहते नहीं, सिर्फ प्यार करते हो।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गीत का मर्म यह है : –

" 'मैं मुक्ति देने में कातर नहीं होता, किन्तु शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ।'

"मूल बात है ईश्वर में रागानुगा भक्ति और विवेक-वैराग्य चाहिए।"

चौधरी – महाराज, गुरु के न होने से क्या नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – सच्चिदानन्द ही गुरु हैं।

"शवसाधना करते समय जब इष्टदर्शन का मौका आता है, तब गुरु सामने आकर कहते हैं, 'यह देख अपना इष्ट।' फिर गुरु इष्ट में लीन हो जाते हैं। जो गुरु हैं वे ही इष्ट हैं। गुरु मार्ग पर लगा देते हैं।

"अनन्त का तो व्रत, पर पूजा विष्णु की की जाती है। उसी में ईश्वर का अनन्त रूप विराजमान है।

सर्वधर्मसमन्वय

(राम आदि भक्तों से) "यदि कहो किस मूर्ति का चिन्तन करेंगे, तो जो मूर्ति अच्छी लगे, उसी का ध्यान करना। परन्तु समझना कि सभी एक हैं।

"किसी से द्वेष न करना चाहिए। शिव, काली, हरि – सब एक ही के भिन्न भिन्न रूप हैं। वह धन्य है जिसको उनके एक होने का ज्ञान हो गया है।

"बाहर शैव, हृदय में काली, मुख में हरिनाम।

"कुछ कुछ काम-क्रोधादि के न रहने से शरीर नहीं रहता। परन्तु तुम लोग घटाने ही की चेष्टा करना।"

श्रीरामकृष्ण केदार को देखकर कह रहे है –

"ये अच्छे हैं। नित्य भी मानते हैं, लीला भी मानते हैं। एक ओर ब्रह्म और दूसरी ओर देवलीला से लेकर मनुष्यलीला तक!"

केदार कहते हैं कि श्रीरामकृष्ण के रूप मे भगवान् मनुष्यदेह धारण कर अवतीर्ण हुए हैं।

संन्यासी तथा कामिनी

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले –

"इसकी अच्छी अवस्था है। (नित्यगोपाल से) तू वहाँ ज्यादा न जाना। कहीं एक-आध बार चले गए। भक्त है तो क्या हुआ – स्त्री है न? इसीलिए सावधान रहना।

"संन्यासी के नियम बड़े कठिन है। उसके लिए स्त्रियों के चित्र देखने की भी मनाही है। यह संसारियों के लिए नहीं है।

"स्त्री यदि भक्त भी हो तो भी उससे ज्यादा न मिलना चाहिए।

"जितेन्द्रिय होने पर भी संन्यासी को लोकशिक्षा के लिए यह सब करना पड़ता है।

"साधुपुरुष का सोलहों आना त्याग देखने पर दूसरे लोग त्याग की शिक्षा लेंगे, नहीं तो वे भी डूब जायेंगे। संन्यासी जगद्गुरु है।"

अब श्रीरामकृष्ण और भक्तगण उठकर घूमने लगे। मास्टर प्रह्लाद के चित्र के सामने खड़े होकर देख रहे है – श्रीरामकृष्ण ने कहा है कि प्रह्लाद की भक्ति अहैतुकी भक्ति है।

□□□

परिच्छेद २५

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में राखाल, मास्टर आदि दो-एक भक्तों के साथ बैठे हैं। शुक्रवार, ९ मार्च १८८३ ई.। माघी अमावस्या, प्रातःकाल आठ-नौ बजे का समय होगा।

अमावस्या का दिन है। श्रीरामकृष्ण को सतत जगन्माता का उद्दीपन हो रहा है। वे कह रहे हैं, "ईश्वर ही वस्तु है, बाकी सब अवस्तु। माँ ने अपनी महामाया द्वारा मुग्ध कर रखा है। मनुष्यों में देखो, बद्ध जीव ही अधिक है। इतना दुःख कष्ट पाते हैं, फिर भी उसी 'कामिनी-कांचन' में उनकी आसक्ति है। कँटीली घास खाते समय ऊँट के मुँह से धर-धर खून बहता है, फिर भी वह उसे छोड़ता नहीं, खाते ही जाता है। प्रसववेदना के समय स्त्रियाँ कहती हैं, 'ओह, अब और पति के पास नहीं जाऊँगी', परन्तु फिर भूल जाती हैं।

"देखो, उनकी खोज कोई नहीं करता। अनन्नास को छोड़ लोग उसके पत्ते खाते हैं।"

ससार किसलिए? निष्काम कर्म द्वारा चित्तशुद्धि के लिए

भक्त - महाराज, संसार में वे क्यों रख देते हैं?

श्रीरामकृष्ण - संसार कर्मक्षेत्र है। कर्म करते करते ही ज्ञान होता है। गुरु ने कहा इन कर्मों को करो और इन कर्मों को न करो। फिर वे निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं। कर्म करते करते मन का मैल धुल जाता है। अच्छे डाक्टर की चिकित्सा में रहने पर दवा खाते खाते कैसा ही रोग क्यों न हो, ठीक हो जाता है।

"संसार से वे क्यों नहीं छोड़ते? रोग अच्छा होगा तब छोड़ेंगे। कामिनी-कांचन का भोग करने की इच्छा जब न रहेगी, तब छोड़ेंगे। अस्पताल में नाम लिखाकर भाग आने का उपाय नहीं है। रोग की कसर रहते डाक्टर साहब न छोड़ेंगे।"

श्रीरामकृष्ण आजकल यशोदा की तरह सदा वात्सल्य-रस में मग्न रहते हैं, इसलिए उन्होंने राखाल को साथ रखा है। राखाल के प्रति श्रीरामकृष्ण का गोपाल-भाव है। जिस

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। (गीता २।४७)

परन्तु यह विधि सभी अवस्था के लिए नही है। मेरी अब ऐसी अवस्था है कि मैं सामने रहकर बलि नहीं देख सकता हूँ।

"फिर ऐसी भी अवस्था होती है कि सर्वभूतों में ईश्वर को देखता हूँ। चींटियों में भी वे ही दिखायी देते है। ऐसी स्थिति में एकाएक किसी प्राणी के मरने पर मन में यही सान्त्वना होती है कि उसकी देह मात्र का विनाश हुआ। आत्मा की मृत्यु नहीं है।*

"अधिक विचार करना ठीक नहीं, माँ के चरणकमल में भक्ति रहने से ही हो जाएगा। अधिक विचार करने से तब गोलमाल हो जाता है। इस देश में तालाब का जल ऊपर ऊपर से पिओ, अच्छा साफ जल पाओगे; अधिक नीचे हाथ डालकर हिलाने से जल मैला हो जाता है। इसलिए उनसे भक्ति की प्रार्थना करो। ध्रुव की भक्ति सकाम थी, उसने राज्य पाने के लिए तपस्या की थी; परन्तु प्रह्लाद की निष्काम अहैतुकी भक्ति थी।"

भक्त – ईश्वर कैसे प्राप्त होते है?

श्रीरामकृष्ण – उसी भक्ति के द्वारा। परन्तु उनसे जबरदस्ती करनी होती है। दर्शन नही देगा तो गले मे छुरा भोंक लूँगा, – इसका नाम है भक्ति का तम।

भक्त – क्या ईश्वर को देखा जाता है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, अवश्य देखा जाता है। निराकार-साकार दोनों ही देखे जाते है। चिन्मय साकार रूप का दर्शन होता है। फिर साकार मनुष्य रूप में भी वे प्रत्यक्ष हो सकते है। अवतार को देखना और ईश्वर को देखना एक ही है। ईश्वर ही युग युग में मनुष्य के रूप में अवतीर्ण होते है †।

□□□

* न हन्यते हन्यमाने शरीरे। (गीता, २।२०)

† धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे। (गीता, ४। ८)

परिच्छेद २६

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण का जन्मोत्सव

(१)

प्रभात में भक्तों के साथ

कालीमन्दिर मे आज श्रीरामकृष्ण का जन्मोत्सव है। फाल्गुन की शुक्ला द्वितीया है दिन रविवार, ११ मार्च १८८३ ई। आज श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त उन्हे लेकर जन्मोत्सव मनायेंगे।

सबेरे मे भक्त एक एक करके एकत्र हो रहे है। सामने माता भवतारिणी का मन्दिर है। मंगलारती के बाद ही प्रभाती रागिणी मे मधुर तान लगाती हुई नौबत बज रही है। वसन्त का सुहावना मौसम है, लता-वृक्ष नये कोमल पल्लवो मे लहराते हुए दीख पडते है। इधर श्रीरामकृष्ण के जन्मदिन की याद करके भक्तो के हृदय मे आनन्द-सिन्धु उमड रहा है। चारो ओर आनन्द-समीरण बह रहा है। मास्टर ने देखा, इतने सबेरे ही भवनाथ, राखाल, भवनाथ के मित्र कालीकृष्ण आ गये है। श्रीरामकृष्ण पूर्ववाले बरामदे मे बैठे हुए इनसे प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप कर रहे है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – "तुम आये हो। (भक्तो से) लज्जा, घृणा, भय इन तीनो के रहते काम सिद्ध नही होता। आज कितना आनन्द होगा। परन्तु जो लोग भगवन्नाम मे मत्त होकर नृत्य-गीत न कर सकेंगे, उनका कही कुछ न होगा। ईश्वरी चर्चा मे कैसी लज्जा और कैसा भय? अच्छा, अब तुम लोग गाओ।"

भवनाथ और कालीकृष्ण गा रहे है। गीत इस आशय का है : -

"हे आनन्दमय! आज का दिन धन्य है! हम सब तुम्हारे सत्य-धर्म का भारत मे प्रचार करेंगे। हरएक हृदय मे तुम्ही विराजित हो, चारो ओर तुम्हारे ही पवित्र नाम की ध्वनि गूँजती है, भक्त-समाज तुम्हारी स्तुति करते है। हे प्रभो, हमे धन, जन और मान न चाहिए, दूसरी कामना भी नही है, विकल जन तुम्हारी प्रार्थना कर रहे है। हे प्रभो, तुम्हारे चरणो मे शरण ली तो फिर न विपत्ति मे भय है, न मृत्यु मे, मुझे तो अमृत मिल गया। तुम्हारी जय हो।"

हाथ जोड़कर बैठे हुए मन लगाकर श्रीरामकृष्ण गाना सुन रहे हैं। गाना सुनते सुनते आपका मन सीधे भावराज्य में पहुँच गया है। श्रीरामकृष्ण का मन सूखी दियासलाई है। एक बार घिसने से उद्दीपना होती है। प्राकृत मनुष्यों का मन भीगी दियासलाई है, कितनी ही घिसो पर जलती नहीं, क्योंकि वह विषयासक्त है। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक ध्यान में लगे हुए है। कुछ देर बाद कालीकृष्ण भवनाथ से कुछ कह रहे है।

पहले हरिनाम या मजदूरों की शिक्षा

कालीकृष्ण श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उठे। श्रीरामकृष्ण ने विस्मित होकर पूछा, "कहाँ जाओगे?"

भवनाथ – कुछ काम है, इसीलिए वे जा रहे है।

श्रीरामकृष्ण – क्या काम है?

भवनाथ – श्रमजीवियों के शिक्षालय मे (Baranagore Workingmen's Institute) जा रहे है।

श्रीरामकृष्ण – भाग्य ही में नही है। आज हरिनाम-कीर्तन में कितना आनन्द होता है, देखा नहीं। उसके भाग्य ही में नहीं था।

(२)

जन्मोत्सव में भक्तों के संग – संन्यासियों के कठिन नियम

दिन के साढ़े-आठ या नौ बजे होगे। श्रीरामकृष्ण ने आज गंगा में स्नान नही किया, शरीर कुछ अस्वस्थ है। घड़ा भरकर पानी बरामदे में लाया गया। भक्त उनको स्नान करा रहे है। नहाते हुए श्रीरामकृष्ण ने कहा, "एक लोटा पानी अलग रख दो।" अन्त में वही पानी सिर पर डाला। आज आप बड़े सावधान है, एक लोटे से ज्यादा पानी सिर पर नही डाला।

स्नान के बाद मधुर कण्ठ से भगवान् का नाम ले रहे हैं। धोया हुआ कपड़ा पहने, एक-दो भक्तों के साथ आँगन से होते हुए कालीमाता के मन्दिर की ओर जा रहे है। मुख से लगातार नाम उच्चारण कर रहे हैं। चितवन बाहर की ओर नहीं है – अण्डे को सेते समय चिड़िया की दृष्टि जिस प्रकार होती है उसी के सदृश हो रही है।

कालीमाता के मन्दिर में जाकर आपने प्रणाम और पूजा की। पूजा का कोई नियम न था – गन्ध-पुष्प कभी माता के चरणों में देते हैं और कभी अपने सिर पर। अन्त में माता का निर्माल्य सिर पर रख भवनाथ से कहा, "यह लो डाब*।" माता का प्रसादी डाब था।

---

* कच्चा नारियल

फिर आँगन से होते हुए अपने कमरे की तरफ आ रहे हैं। साथ में भवनाथ और मास्टर हैं। भवनाथ के हाथ में डाब है। रास्ते की दाहिनी ओर श्रीराधाकान्त का मन्दिर है, जिसे श्रीरामकृष्ण 'विष्णुघर' कहा करते थे। इन युगलमूर्तियों को देखकर आपने भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। बायीं ओर बारह शिवमन्दिर थे। शिवजी को हाथ जोड़कर प्रणाम करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण अपने डेरे पर पहुँचे। देखा कि और भी कई भक्त आए हुए हैं। राम, नित्यगोपाल, केदार चटर्जी आदि अनेक लोग आए हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। आपने भी उनसे कुशल-प्रश्न पूछा।

नित्यगोपाल को देखकर श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "तू कुछ खाएगा?" ये भक्त उस समय बालक के भाव में थे। इन्होंने विवाह नहीं किया था, उम्र तेईस-चौबीस वर्ष की होगी। ये सदा भावराज्य में रहते थे और कभी अकेले, कभी राम के साथ प्राय: श्रीरामकृष्ण के पास आया करते थे। श्रीरामकृष्ण इनकी भावावस्था को देखकर इनसे बड़ा प्यार करते हैं – और कभी कभी कहते हैं कि इनकी परमहंस की अवस्था है। इसलिए आप इनको गोपाल जैसे देख रहे हैं।

भक्त ने कहा, "खाऊँगा।" उनकी बातें ठीक एक बालक की सी थीं।

नित्यगोपाल को उपदेश – त्यागी के लिए स्त्रीलिंग पूर्णतया निर्विघ्न

खिलाने के बाद श्रीरामकृष्ण उनको गंगा की ओर अपने कमरे के गोल बरामदे में ले गए और उनसे बातें करने लगे।

एक परम भक्त महिला, जिनकी उम्र कोई इकतीस-बत्तीस वर्ष की होगी, श्रीरामकृष्ण के पास अक्सर आती हैं और उनकी बड़ी भक्ति करती हैं। वे भी इन भक्त की अद्भुत भावावस्था को देखकर इन्हें अपने लड़के के भाँति प्यार करती हैं और इन्हें प्राय: अपने घर लिवा ले जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्त से) – क्या तू वहाँ जाता है?

नित्यगोपाल (बालक की तरह) – हाँ, जाता हूँ। मुझे लिवा ले जाती है।

श्रीरामकृष्ण – अरे साधु सावधान! एक-आध बार जाना, बस। ज्यादा मत जाना, नहीं तो गिर पड़ेगा! कामिनी और कांचन ही माया है। साधु को स्त्रियों से बहुत दूर रहना चाहिए। वहाँ सब डूब जाते हैं। वहाँ ब्रह्मा और विष्णु तक लोटपोट हो जाते हैं।

भक्त ने सब सुना।

मास्टर (स्वगत) – क्या आश्चर्य की बात है! इन भक्त की परमहंस की अवस्था है – यह तो आप स्वयं ही कहते हैं। इतनी उच्च अवस्था होते हुए भी इनके पतन की आशंका है! साधुओ के लिए आपने क्या ही कठिन नियम बना दिये हैं! स्त्रियों के साथ

अधिक मिलने-जुलने से साधु का पतन होने की सम्भावना रहती है। यह उच्च आदर्श सामने न रहे तो भला जीवों का उद्धार कैसे हो? वह स्त्री तो भक्त ही है। फिर भी भय है! अब समझा, श्रीचैतन्यदेव ने छोटे हरिदास को इतनी कठोर सजा क्यों दी थी। महाप्रभु के मना करने पर भी हरिदास ने एक भक्त विधवा से वार्तालाप किया था। परन्तु हरिदास संन्यासी थे। इसलिए महाप्रभु ने उन्हें त्याग दिया। कितनी कठोर सजा! संन्यासी के लिए कितना कठिन नियम! फिर इन भक्त पर आपका कितना प्रेम है! आगे चलकर कोई विपत्ति न आ पड़े, इसलिए पहले ही से इन्हें सचेत कर रहे हैं। भक्तगण निःस्तब्ध होकर 'साधु सावधान' यह गम्भीर वाणी सुन रहे हैं।

(३)

साकार-निराकार। श्रीरामकृष्ण की रामनाम में समाधि

अब श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे के उत्तर-पूर्ववाले बरामदे में आ गए हैं। भक्तो में दक्षिणेश्वर के रहनेवाले एक गृहस्थ भी बैठे हैं; वे घर पर वेदान्त की चर्चा करते हैं। श्रीरामकृष्ण के सामने वे केदार चटर्जी से शब्दब्रह्म पर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण और अवतार-वाद – श्रीरामकृष्ण और धर्मसमन्वय

दक्षिणेश्वरवाले – यह अनाहत शब्द सदैव अपने भीतर और बाहर हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण – केवल शब्द होने से ही तो सब कुछ नहीं हुआ। शब्द का एक प्रतिपाद्य विषय भी तो होना चाहिए। तुम्हारे नाम ही से मुझे थोड़े ही आनन्द होता है। बिना तुमको देखे सोलहों आने आनन्द नहीं होता।

दक्षिणेश्वरवाले – वह शब्द ही ब्रह्म है – अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण (केदार से) – अहा, समझे तुम? इनका ऋषियों का-सा मत है। ऋषियों ने श्रीरामचन्द्र से कहा, 'राम, हम जानते हैं कि तुम दशरथ के पुत्र हो। भरद्वाज आदि ऋषि भले ही तुम्हें अवतार जानकर पूजें, पर हम तो अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते हैं।' यह सुनकर राम हँसते हुए चल दिए।

केदार – ऋषियों ने राम को अवतार नहीं जाना। तो वे नासमझ थे।

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर भाव से) – तुम ऐसा मत कहना! जिसकी जैसी रुचि! और जिसके पेट में जो चीज पचे!

"ऋषि ज्ञानी थे, इसीलिए वे अखण्ड सच्चिदानन्द को चाहते थे। पर भक्त अवतार को चाहते हैं, भक्ति का स्वाद चखने के लिए। ईश्वर के दर्शन से मन का अन्धकार हट जाता है। पुराणों में लिखा है कि जब श्रीरामचन्द्र सभा में पधारे, तब वहाँ मानो सौ सूर्यों का उदय हो गया! तो प्रश्न उठता है कि सभा में बैठे हुए लोग जल क्यों नहीं गए? इसका

उत्तर यह है कि उनकी ज्योति जड़ ज्योति नहीं है। सभा में बैठे हुए सब लोगों के हृदयकमल खिल उठे। सूर्य के निकलने से कमल खिल जाते हैं।"

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर भक्तों से यह कह ही रहे थे कि एकाएक उनका मन बाहरी जगत् को छोड़ भीतर की ओर मुड़ गया। "हृदयकमल खिल उठे" – ये शब्द कहते ही आप समाधिमग्न हो गये।

श्रीरामकृष्ण उसी अवस्था में खड़े हैं। क्या भगवान् के दर्शन से आपका हृदयकमल खिल उठा? बाहरी जगत् का कुछ भी ज्ञान आपको नहीं है। मूर्ति की तरह आप खड़े हैं। मुँह उज्ज्वल और सहास्य है। भक्तों में से कुछ खड़े और कुछ बैठे हैं, सभी निर्वाक् होकर टकटकी लगाए प्रेमराज्य की इस अनोखी छबि को – इस अपूर्व समाधिदृश्य को – देख रहे हैं।

बड़ी देर बाद समाधि टूटी। श्रीरामकृष्ण लम्बी साँस छोड़कर बारम्बार रामनाम उच्चारण कर रहे हैं। नाम के प्रत्येक वर्ण से मानो अमृत टपक रहा है। श्रीरामकृष्ण बैठे। भक्त भी चारों तरफ बैठकर उनको एकटक देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – जब अवतार आते हैं, तो साधारण लोग उनको नहीं जान सकते। वे छिपकर आते हैं। दो ही चार अन्तरंग भक्त उनको जान सकते हैं। राम पूर्णब्रह्म थे, पूर्ण अवतार थे, यह बात केवल बारह ऋषियों को मालूम थी। अन्य ऋषियों ने कहा था, 'राम, हम तो तुमको दशरथ का बेटा ही समझते हैं।'

"अखण्ड सच्चिदानन्द को सब कोई थोड़े ही समझ सकते हैं! परन्तु भक्ति उसी की पक्की है, जो नित्य को पहुँचकर विलास के उद्देश्य से लीला लेकर रहता है। विलायत में क्वीन (रानी) को जब देखकर आओ, तब क्वीन की बातें, क्वीन के कार्य, इन सब का वर्णन हो सकता है। क्वीन के विषय में कहना तभी ठीक उतरता है। भरद्वाज आदि ऋषियों ने राम की स्तुति की थी और कहा था, 'हे राम, तुम्हीं वह अखण्ड सच्चिदानन्द हो! हमारे सामने तुम मनुष्य के रूप में अवतीर्ण हुए हो। सच तो यह है कि माया के द्वारा ही तुम मनुष्य जैसे दिखते हो।' भरद्वाज आदि ऋषि राम के परम भक्त थे। उन्हीं की भक्ति पक्की है।"

(४)

कीर्तन का आनन्द तथा समाधि

भक्त निर्वाक् होकर यह अवतार-तत्त्व सुन रहे हैं। कोई कोई सोच रहे हैं, 'क्या आश्चर्य है! वेदोक्त अखण्ड सच्चिदानन्द – जिन्हें वेद ने मन-वचन से परे बताया है – क्या वे ही हमारे सामने साढ़े-तीन हाथ का मनुष्य-शरीर लेकर आते हैं? जब श्रीरामकृष्ण कहते हैं तो वैसा अवश्य ही होगा! यदि ऐसा न होता तो 'राम राम' कहते हुए इन महापुरुष

को क्यो समाधि होती? अवश्य इन्होने हृदयकमल मे राम का रूप देखा होगा।'

थोड़ी देर मे कोन्नगर से कुछ भक्त मृदंग और झाँझ लिए संकीर्तन करते हुए बगीचे मे आए। मनमोहन, नबाई आदि बहुतसे लोग नामसंकीर्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण के पास उसी उत्तरपूर्ववाले बरामदे मे पहुँचे। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर उनसे मिलकर संकीर्तन कर रहे है।

नाचते नाचते बीच बीच मे समाधि हो जाती है। तब संकीर्तन के बीच मे निःस्पन्द होकर खड़े रहते है। उसी अवस्था मे भक्तो ने उनको फूलो की बड़ी बड़ी मालाओ से सजाया। भक्त देख रहे है मानो सामने ही श्रीगौरांग खड़े है। गहरी भावसमाधि मे मग्न है। श्रीगौरांग की तरह श्रीरामकृष्ण की भी तीन दशाएँ है, कभी अन्तर्दशा – तब जड़ वस्तु की भाँति आप बेहोश और निःस्पन्द हो जाते है, कभी अर्धबाह्य दशा – तब प्रेम से भरपूर होकर नाचते है, और फिर बाह्य दशा – तब भक्तो के साथ संकीर्तन करते है।

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो खड़े है। गले मे मालाएँ है। कही गिर न पड़े इसलिए एक भक्त आपको पकड़े हुए है। चारो ओर भक्त खड़े होकर मृदंग और झाँझ के साथ कीर्तन कर रहे है। श्रीरामकृष्ण की दृष्टि स्थिर है। श्रीमुख पर प्रेम की छटा झलक रही है। आप पश्चिम की ओर मुँह किए है। बड़ी देर तक सब लोग यह आनन्दमूर्ति देखते रहे।

समाधि छूटी। दिन चढ गया है। थोड़ी देर बाद कीर्तन भी बन्द हुआ। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को भोजन कराने के लिए व्यग्र हुए।

कुछ देर विश्राम के पश्चात् श्रीरामकृष्ण एक नया पीला वस्त्र पहने अपनी छोटी खाट पर बैठे। आनन्दमय महापुरुष की उस अनुपम ज्योतिर्मय रूपछबि को भक्त देख रहे है, पर देखने की प्यास नही मिटती। वे सोचते है कि इसे देखते ही रहे, इस रूपसागर मे डूब जाये।

श्रीरामकृष्ण भोजन करने बैठे। भक्तो ने भी प्रसाद पाया।

(५)

श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्मसमन्वय

भोजन के उपरान्त श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर आराम कर रहे है। कमरे मे लोगा की भीड़ बढ़ रही है। बाहर के बरामदे भी लोगो से भरे है। कमरे के भीतर जमीन पर भक्त बैठे है और श्रीरामकृष्ण की ओर एकदृष्टि से ताक रहे है। केदार, सुरेश, राम, मनोमोहन, गिरीन्द्र, राखाल, भवनाथ, मास्टर आदि बहुत लोग वहाँ पर मौजूद है। राखाल के पिता आए है, वे भी वही बैठे है।

एक वैष्णव गोसाई भी उसी स्थान पर बैठे है। श्रीरामकृष्ण उनसे बाते कर रहे है। गोसाइयो को देखते ही श्रीरामकृष्ण सिर झुकाकर प्रणाम करते थे – कभी कभी तो उनके

सामने साष्टांग प्रणाम करते थे।

नाममाहात्म्य अथवा अनुराग

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम क्या कहते हो? उपाय क्या है?

गोसाई – जी, नाम से ही सब कुछ होगा। कलियुग में नाम की बड़ी महिमा है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, नाम की बड़ी महिमा तो है. पर बिना अनुराग के क्या हो सकता है? ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होने चाहिए। सिर्फ नाम लेता जा रहा हूँ, पर चित्त कामिनी और कांचन मे है इससे क्या होगा?

"बिच्छू या मकड़ी के काटने पर खाली मन्त्र से वह अच्छा नहीं होता – उसके लिए कण्डे का ताप भी देना पड़ता है।"

गोसाई – तो अजामिल का क्यों हुआ? वह महापातकी था, ऐसा पाप ही न था जो उसने न किया हो; पर मरते समय अपने लड़के को 'नारायण' कहकर बुलाने से ही उसका उद्धार हो गया।

श्रीरामकृष्ण – शायद अजामिल पूर्वजन्म मे बहुत कर्म कर चुका था। और यह भी लिखा है कि उसने बाद में तपस्या भी की थी।

"अथवा यों कहो कि उस समय उसके अन्तिम क्षण आ गए थे। हाथी को नहला देने से क्या होगा, फिर धूल-मिट्टी लिपटाकर वह ज्यों का त्यों हो जाता है। पर हाथीखाने में घुसने के पहले ही अगर कोई उसकी धूल झाड़ दे और उसे नहला दे तो फिर उसका शरीर साफ रह सकता है।

"मान लिया कि नाम से जीव एक बार शुद्ध हुआ, पर वह फिर तरह तरह के पापों मे लिप्त हो जाता हैं। मन में बल नहीं; वह प्रण नहा करता कि फिर पाप नहीं करूँगा। गंगास्नान से सब पाप मिट जाते हैं सही, पर सब लोग कहते हैं कि वे पाप एक पेड़ पर चढ़े रहते हैं। जब वह मनुष्य गंगाजी से नहाकर लौटता है, तो वे पुराने पाप पेड़ से कूदकर फिर उसके सिर पर सवार हो जाते हैं। (सब हँसे) उन पुराने पापों ने उसे फिर घेर लिया!

दो-चार कदम चलते ही उसे धर दबाया!

"इसलिए नाम भी करो और साथ ही प्रार्थना भी करो कि ईश्वर पर अनुराग हो, और जो चीजें दो दिन के लिए हैं – जैसे धन, मान, देहसुख आदि – उनसे आसक्ति घट जाय।

वैष्णवधर्म तथा साम्प्रदायिकता

(गोसाई से) – "यदि आन्तरिकता हो तो सभी धर्मों से ईश्वर मिल सकते हैं। वैष्णवों को भी मिलेंगे तथा शाक्तों, वेदान्तियों और ब्राह्मों को भी, मुसलमानों और ईसाइयों को भी। हृदय से चाहने पर सब को मिलेंगे। कोई कोई झगड़ा कर बैठते हैं। वे कहते हैं कि

हमारे श्रीकृष्ण को भजे बिना कुछ न बनेगा; या हमारी कालीमाता को भजे बिना कुछ न होगा; अथवा हमारे ईसाई धर्म को ग्रहण किए बिना कुछ न होगा।

"ऐसी बुद्धि का नाम हठधर्म है, अर्थात् मेरा ही धर्म ठीक है और बाकी सब का गलत। यह बुद्धि खराब है। ईश्वर के पास हम बहुत रास्तों से पहुँच सकते है।

"फिर कोई कोई कहते है कि ईश्वर साकार है, निराकार नही। यह कहकर वे झगड़ने लग जाते है! जो वैष्णव है वह वेदान्ती से झगड़ता है।

"यदि ईश्वर के साक्षात् दर्शन हो, तो सब हाल ठीक ठीक बताया जा सकता है। जिसने दर्शन किये है वह ठीक जानता है कि भगवान् साकार भी है और निराकार भी। वे और भी कैसे कैसे है, यह कौन बताए!

"कुछ अन्धे एक हाथी के पास गये थे। एक ने बता दिया, इस चौपाये का नाम हाथी है। तब अन्धों से पूछा गया, हाथी कैसा है? वे हाथी की देह छूने लगे। एक ने कहा, हाथी खम्भे के आकार का है। उसने हाथी का पैर ही छुआ था। दूसरे ने कहा, हाथी सूप की तरह है उसके हाथ हाथी के कान पर पड़े थे। इसी तरह किसी ने पेट पकड़कर कुछ कहा, किसी ने सूंड पकड़कर कुछ कहा। ऐसे ही ईश्वर के सम्बन्ध मे जिसने जितना देखा है, उसने यही सोचा है कि ईश्वर बस ऐसे ही है, और कुछ नही।

"एक आदमी शौच के लिए गया था। लौटकर उसने कहा, 'मैंने पेड़ के नीचे एक सुन्दर लाल गिरगिट देखा।' दूसरे ने कहा, 'तुमसे पहले मै उस पेड़ के नीचे गया था, परन्तु वह लाल क्यों होने लगा? वह तो हरा है। मैने अपनी आँखो से देखा है।' तीसरे ने कहा, 'मै तुम दोनों से पहले गया था, उसको मैने भी देखा है परन्तु वह न लाल है, न हरा, वह तो नीला है।' और दो थे, उनमे से एक ने बताया पीला, और एक ने, खाकी। इस तरह अनेक रंग हो गए। अन्त मे सब मे झगड़ा होने लगा। हर एक का यही विश्वास था कि उसने जो कुछ देखा है, वही ठीक है। उनकी लड़ाई देख एक ने पूछा, 'तुम लड़ते क्यो हो?' जब उसने कुल हाल सुना तब कहा, 'मै उसी पेड़ के नीचे रहता हूँ, और उस जानवर को मै खूब पहचानता हूँ। तुममे से हर एक का कहना सच है। वह कभी हरा, कभी नीला, कभी लाल इस तरह अनेक रंग धारण करता है। और कभी देखता हूँ, कोई रंग नही निर्गुण है!' "

साकार अथवा निराकार

(गोस्वामी से) – "ईश्वर को सिर्फ साकार कहने से क्या होगा! वे श्रीकृष्ण की तरह मनुष्यरूप धारण करके आते है, यह भी सत्य है, अनेक रूपो से भक्तो को दर्शन देते है, यह भी सत्य है, और फिर वे निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द है, यह भी सत्य है। वेदो ने उनको साकार भी कहा है, निराकार भी कहा है, सगुण भी कहा है और निर्गुण भी।

"किस तरह, जानते हो। सच्चिदानन्द मानो एक अनन्त समुद्र है। ठण्डक के कारण समुद्र का पानी बर्फ बनकर तैरता है। पानी पर बर्फ के कितने ही आकार के टुकड़े तैरते है। वैसे ही भक्तिहिम के लगने से सच्चिदानन्द-सागर में साकार मूर्ति के दर्शन होते हैं। वे भक्त के लिए साकार होते हैं। फिर जब ज्ञानसूर्य का उदय होता है तब बर्फ गल जाती है, फिर वही पहले का पानी ज्यों का त्यों रह जाता है। ऊपर-नीचे जल ही जल भरा हुआ है। इसीलिए श्रीमद्भागवत में सब स्तव करते हैं, 'हे देव, तुम्हीं साकार हो, तुम्हीं निराकार हो। हमारे सामने तुम मनुष्य बने घूम रहे हो, परन्तु वेदों ने तुम्हीं को वाक्य और मन से परे कहा है।'

"परन्तु यह कह सकते हो कि किसी किमी भक्त के लिए वे नित्य साकार है। ऐसा भी स्थान है जहाँ बर्फ गलती नही, स्फटिक का आकार धारण करती है।"

केदार – श्रीमद्भागवत में व्यासदेव* ने तीन दोषों के लिए परमात्मा से क्षमाप्रार्थना की है। एक जगह कहा है, हे भगवन् तुम मन और वाणी से दूर हो, किन्तु मैंने केवल तुम्हारी लीला, तुम्हारे साकार रूप का वर्णन किया; अतएव अपराध क्षमा करो।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ईश्वर साकार भी हैं और निराकार भी, फिर साकार-निराकार के भी परे है। उनकी इति नही की जा सकती।

(६)

नित्यसिद्ध तथा कौमार-वैराग्य

राखाल के पिता बैठे हुए हैं। राखाल आजकल श्रीरामकृष्ण के पास ही रहते है। राखाल की माता के गुजर जाने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया है। राखाल यहीं रहते है; इसलिए उनके पिता कभी कभी आया करते है। राखाल के यहाँ रहने मे इनकी ओर से कोई बाधा नहीं है। ये श्रीमान् और विषयी मनुष्य हैं। सदा मुकदमों की पैरवी में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के पास कितने ही वकील और डिप्टी मैजिस्ट्रेट आया करते है। राखाल के पिता इनसे वार्तालाप करने के लिए कभी कभी आ जाते है। उनसे मुकदमों की बहुतसी बातें सूझ जाती हैं।

श्रीरामकृष्ण रह-रहकर राखाल के पिता को देख रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है, राखाल उन्हीं के पास रह जाएँ।

---

* रूप रूपविवर्जितस्य भवतो ध्यानेन यत् कल्पितं
स्त्युत्यनिर्वाचनीयताऽखिलगुरो दूरोकृता यन्मया।
व्यापित्वञ्च निराकृतं भगवतो यतीर्थयात्रादिना,
क्षन्तव्यं जगदीश! तद्विकलतादोषत्रयं मत्कृतम्।।

श्रीरामकृष्ण (राखाल के पिता और भक्तों से) – अहा, आजकल राखाल का स्वभाव कैसा हुआ है! उसके मुँह पर दृष्टि डालने से देखोगे, उसके होंठ रह–रहकर हिल रहे हैं। अन्तर में ईश्वर का नाम जपता है, इसलिए होंठ हिलते रहते हैं।

"ये सब लड़के नित्यसिद्ध की श्रेणी के हैं। ईश्वर का ज्ञान साथ लेकर पैदा हुए हैं। कुछ उम्र होते ही ये समझ जाते हैं कि संसार की छूत देह में लगी तो फिर निस्तार न होगा। वेदों में 'होमा' पक्षी की कहानी है। वह चिड़िया आकाश में ही रहती है; जमीन पर कभी नहीं उतरती। आकाश ही में अण्डे देती है। अण्ड़े गिरते रहते हैं, पर वे इतनी ऊँचाई से गिरते हैं कि गिरते ही गिरते बीच में वे फूट जाते हैं। तब बच्चे निकल आते हैं। वे भी गिरने लगते हैं। उस समय भी वे इतने ऊँचे पर रहते हैं कि गिरते ही गिरते उनके पंख निकल आते हैं और आँखें भी खुल जाती हैं। तब वे समझ जाते हैं कि अरे हम मिट्टी में गिर जाएँगे, और गिरे तो चकनाचूर! मिट्टी देखते ही एकदम अपनी माता की ओर उड़ जाते हैं। माता के निकट पहुँचना ही उनका लक्ष्य हो जाता है।

"ये सब लड़के ठीक वैसे ही हैं। बचपन ही में संसार देखकर डर जाते हैं। इनकी एकमात्र चिन्ता यही है कि किस तरह माता के निकट जाएँ, किस प्रकार ईश्वर के दर्शन हों।

"यदि यह कहो कि ये रहे विषयी मनुष्यों में, पैदा हुए विषयी के यहाँ, फिर इनमें ऐसी भक्ति, ऐसा ज्ञान कैसे हो गया, तो इसका भी अर्थ है। मैली जमीन पर यदि चना गिर जाय, तो उसमें चना ही फलता है। उस चने से कितने अच्छे काम होते हैं। मैली जमीन पर गिर गया है, इसलिए उससे कोई दूसरा पौधा थोड़े ही होगा।

"अहा, राखाल का स्वभाव आजकल कैसा हो गया है! और होगा भी क्यों नहीं। यदि सूरण अच्छा हुआ, तो उसके अंकुर भी अच्छे होते हैं। (सब हँसते हैं।) जैसा बाप, वैसा उसका बेटा।"

मास्टर (गिरीन्द्र से अलग से) – साकार और निराकार की बात कैसी समझायी इन्होंने! जान पड़ता है, वैष्णव केवल साकार ही मानते हैं।

गिरीन्द्र – होगा। वे एक ही भाव पर अड़े रहते हैं।

मास्टर – 'नित्य साकार' आप समझे। स्फटिकवाली बात। मैं उसे अच्छी तरह नहीं समझ सका।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – क्यों जी, तुम लोग क्या बातचीत कर रहे हो।

मास्टर और गिरीन्द्र जरा हँसकर चुप हो गए।

वृन्दा दासी (रामलाल से) – 'रामलाल, अभी इस आदमी को मिठाइयाँ दो, हमें बाद में देना।

श्रीरामकृष्ण – वृन्दा को अभी मिठाईयाँ नहीं दी गयीं?

(७)

पंचवटी में कीर्तनानन्द

दिन के तीसरे पहर भक्तगण पंचवटी में कीर्तन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भी उनमें मिल गये; भक्तों के साथ मातृनामसंकीर्तन करते हुए आनन्द में मग्न हो रहे हैं।

(गीत का भावार्थ) – 'श्यामा माँ के चरणरूपी आकाश में मन की पतंग उड़ रही थी। कलुष की वायु से वह चक्कर खाकर गिर पड़ी। माया का कन्ना भारी हुआ, मैं उसे फिर उठा नहीं सका। स्त्री-पुत्रादि के तागे में उलझकर वह फट गयी। उसका ज्ञानरूपी मस्तक (ऊपर का हिस्सा) अलग हो गया है। उठाने से ही वह गिर पड़ती है। जब सिर ही नहीं रह गया तो वह उड़ कैसे सकती है! साथ के छः आदमियों की (कामक्रोधादि की) विजय हुई। वह भक्ति के तागे से बँधी थी। खेलने के लिए आते ही तो यह भ्रम सवार हो गया। 'नरेशचन्द्र' को इस हँसने और रोने से तो बेहतर आना ही न था।''

फिर गाना होने लगा। गीत के साथ ही मृदंग-करताल बजने लगे। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ नाच रहे हैं।

(गीत का भावार्थ) – 'मेरा मन-मधुप श्यामापद-नीलकमल में मस्त हो गया। कामादि पुष्पों में जितने विषय-मधु थे, सब तुच्छ हो गए। चरण काले हैं, मधुप काला है, काले से काला मिल गया। पंचतत्त्व यह तमाशा देखकर भाग गए। 'कमलाकान्त' के मन की आशा इतने दिनों में पूर्ण हुई। सुख-दुःख दोनों बराबर हुए; केवल आनन्द का सागर उमड़ रहा है।''

कीर्तन हो रहा है, और भक्त गा रहे हैं।

(भावार्थ) – ''श्यामा माँ ने एक कल बनायी है। साढ़े-तीन हाथ की कल के भीतर वह कितने ही रंग दिखा रही है। वही स्वयं कल के भीतर रहकर कल की डोर पकड़कर उसे घुमाया करती है। कल कहती है, मैं खुद घूमती हूँ। वह यह नहीं जानती कि कौन उसे घुमा रहा है। जिसने कल को पहचान लिया है, उसे कल न होना होगा। किसी किसी कल की भक्तिरूपी डोर में श्यामा माँ स्वयं बँधी हुई है।''

भक्त लोग आनन्द करने लगे। जब उन्होंने थोड़ी देर के लिए गाना बन्द किया तब श्रीरामकृष्ण उठे। इधर उधर अभी अनेक भक्त हैं।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी से अपने कमरे की ओर जा रहे हैं। मास्टर साथ हैं। बकुल के पेड़ के नीचे जब वे आये तब त्रैलोक्य से भेंट हुई। उन्होंने प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से) – पंचवटी में वे लोग गा रहे हैं, एक बार चलकर देखो तो।

त्रैलोक्य – मैं जाकर क्या करूँ।

श्रीरामकृष्ण – क्यों, देखने का आनन्द मिलता।

त्रैलोक्य – एक बार देख आया।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, ठीक है।

(८)

श्रीरामकृष्ण और गृहस्थधर्म

साढ़े-पाँच या छ:बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में बैठे हुए हैं। भक्तों को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार आदि भक्तों से) – जो संसारत्यागी है वह तो ईश्वर का नाम लेगा ही। उसको तो और दूसरा काम ही नहीं। वह यदि ईश्वर का चिन्तन करता है तो उसमें आश्चर्य की बात क्या है! वह यदि ईश्वर की चिन्ता न करे, यदि ईश्वर का नाम न ले, तो लोग उसकी निन्दा करेंगे।

"संसारी मनुष्य यदि ईश्वर का नाम जपे, तो समझो उसमें बड़ी मर्दानगी है। देखो, राजा जनक बड़े ही मर्द थे। वे दो तलवारें चलाते थे, एक ज्ञान की और एक कर्म की। एक और पूर्ण ज्ञान था, और दूसरी ओर वे संसार का कर्म कर रहे थे। बदचलन स्त्री घर के सब कामकाज बड़ी खूबी से करती है, परन्तु वह सदा अपने यार की चिन्ता में रहती है।

"साधुसंग की सदा आवश्यकता है। साधु ईश्वर से मिला देते हैं।"

केदार – जी हाँ, महापुरुष जीवों के उद्वार के लिए आते हैं। जैसे रेलगाड़ी के इंजन के पीछे कितनी ही गाड़ियाँ बँधी रहती हैं, परन्तु वह उन्हें घसीट ले जाता है। अथवा जैसे नदी या तड़ाग कितने ही जीवों की प्यास बुझाते हैं।

क्रमश: भक्तगण घर लौटने लगे। सभी ने श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। भवनाथ को देखकर श्रीरामकृष्ण बोले, "तू आज न जा, तुझ जैसों को देखते ही उद्दीपना हो जाती है।"

भवनाथ अभी संसारी नहीं हुए। उम्र उन्नीस-बीस होगी। गोरा रंग, सुन्दर देह। ईश्वर के नाम से आँखों में आँसू आ जाते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें साक्षात् नारायण देखते हैं!

□□□

परिच्छेद २७

ब्राह्मभक्तों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि में

फाल्गुन के कृष्णपक्ष की पंचमी है, बृहस्पतिवार, २९ मार्च १८८३। दोपहर को भोजन करके भगवान् श्रीरामकृष्ण थोड़ी देर के लिए विश्राम कर रहे है। दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर का वही पहले का कमरा है। सामने पश्चिम की ओर गंगा बह रही है। दिन के दो बजे का समय है। ज्वार आ रहा है।

कोई कोई भक्त आए हुए है। ब्राह्मभक्त श्री अमृत और ब्राह्मसमाज के नामी गवैये श्री त्रैलोक्य – जिन्होने केशव सेन के ब्राह्म समाज मे भगवान् की लीलाओ का गुणगान कर बालक, वृद्ध सभी का कितनी बार मन लुभाया है – आए है।

राखाल बीमार है। उन्ही की बात श्रीरामकृष्ण भक्तो से कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – यह लो, राखाल बीमार पड़ गया। क्या सोडा पीने से अच्छा होता है? न जाने क्या होगा! राखाल, तू जगन्नाथ का प्रसाद खा।

यह कहते कहते श्रीरामकृष्ण एक अद्भुत भाव मे आ गये। शायद आप देख रहे है, साक्षात् नारायण सामने राखाल के रूप मे बालक का वेष धारण करके आ गए है। इधर कामिनीकांचन-त्यागी बालकभक्त शुद्धात्मा राखाल है और उधर भगवत्प्रेम मे सदा मस्त रहनेवाले श्रीरामकृष्ण की प्रेमभरी दृष्टि – अतएव वात्सल्यभाव का उदय होना स्वाभाविक था। राखाल को वात्सल्यभाव से देखते हुए आप बड़े ही प्रेम से 'गोविन्द' 'गोविन्द' उच्चारण करने लगे। श्रीकृष्ण को देखकर यशोदा के मन मे जिस भाव का उदय होता था, यह शायद वही भाव है! भक्तगण यह अद्भुत दृश्य देख रहे हैं। एकाएक वह भाव स्थिर हो गया। 'गोविन्द' नाम जपते हुए भक्तावतार श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गए! शरीर चित्रवत् स्थिर हो गया। इन्द्रियाँ मानो अपने काम से जबाब देकर चली गयीं। नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि स्थिर हो रही है। साँस चल रही है या नहीं, इसमें सन्देह है। इस लोक में केवल शरीर पड़ा हुआ है, आत्माराम चिदाकाश में विहार कर रहे हैं। अब तक जो माता की तरह सन्तान के लिए घबड़ाए हुए थे, वे अब कहाँ हैं? क्या इसी अद्भुत

अवस्था का नाम समाधि है?

इसी समय गेरुए कपड़े पहने हुए एक अपरिचित बंगाली सज्जन आ पहुँचे। भक्तो के बीच में बैठ गए।

(२)

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचार: स उच्यते।। (गीता, ३।६)

गेरुआ वस्त्र और संन्यासी – अभिनय में भी झूठा आचरण नहीं करना चाहिए।

धीरे धीरे श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटने लगी। भाव में आप ही आप बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (गेरुआ देखकर) – यह गेरुआ क्यों? क्या कुछ लपेट लेने ही से हो गया? (हँसते है।) किसी ने कहा था – 'चण्डी छोड़कर अब ढोल बजाता हूँ।' पहले चण्डी के गीत गाता था, फिर ढोल बजाने लगा। (सब हँसते है।')

"वैराग्य तीन-चार प्रकार के होते हैं। जिसने संसार की ज्वाला से दग्ध होकर गेरुआ धारण कर लिया है, उसका वैराग्य अधिक दिन नही टिकता। किसी ने देखा, काम कुछ मिलता नही, झट गेरुआ पहनकर काशी चला गया! तीन महीने बाद घर में चिट्ठी आयी, उसने लिखा है – 'मुझे काम मिल गया है, कुछ ही दिनों में घर आऊँगा, चिन्ता न करना!' परन्तु जिसके सब कुछ है, चिन्ता की कोई बात नही, किन्तु फिर भी कुछ अच्छा नही लगता, अकेले अकेले में भगवान् के लिए रोता है, उसी का वैराग्य यथार्थ वैराग्य है।

"मिथ्या कुछ भी अच्छा नहीं। मिथ्या वेष भी अच्छा नहीं। वेष के अनुकूल यदि मन न हुआ, तो क्रमश: उससे महा अनर्थ हो जाता है। झूठ बोलने या बुरा कर्म करने से धीरे धीरे उसका भय चला जाता है। इससे सादे कपड़े पहनना अच्छा है। मन में आसक्ति भरी है, कभी कभी पतन भी हो जाता है, और बाहर से गेरुआ! यह बड़ा ही भयानक है!

केशव के घर जाना और नववृन्दावन – दर्शन

"यहाँ तक कि जो लोग सच्चे हैं उनके लिए कौतुकवश भी झूठ की नकल बुरी चीज है। केशव सेन के यहाँ मैं 'नववृन्दावन' नाटक देखने गया था। न जाने कैसा क्रास (Cross) वह लाया और फिर पानी छिड़कने लगा; कहता था, शान्तिजल है। एक को देखा, मतवाला बना बहक रहा था।

ब्राह्मभक्त – कु. बाबू थे।

श्रीरामकृष्ण – भक्त के लिए इस तरह का स्वाँग करना भी अच्छा नहीं। उन सब विषयों में बड़ी देर तक मन को डाल रखना दोष है। मन धोबी के घर का कपड़ा है, जिस रंग से रंगोगे, वही रंग उस पर चढ़ जाएगा। मिथ्या में बड़ी देर तक डाल रखोगे तो मिथ्या

ही हो जाएगा।

"एक दूसरे दिन 'निमाई-संन्यास' का अभिनय था। केशव के घर में मैं भी देखने के लिए गया था। केशव के कुछ खुशामदी चेलों ने अभिनय बिगाड़ डाला था। एक ने केशव से कहा 'कलिकाल के चैतन्य तो आप ही हैं'। केशव मेरी ओर देखकर हँसता हुआ कहने लगा, 'तो फिर ये क्या हुए?' मैंने कहा, 'मैं तुम्हारे दासों का दास – रज की रज हूँ।' केशव को नाम और यश की अभिलाषा थी!"

नरेन्द्र आदि नित्यसिद्ध है – उनकी जन्मजात भक्ति

श्रीरामकृष्ण (अमृत और त्रैलोक्य से) – नरेन्द्र और राखाल आदि ये जो लड़के हैं, ये नित्यसिद्ध हैं। ये जन्म-जन्मान्तर से ईश्वर के भक्त हैं। अनेक लोगों को बड़ी साधना के बाद कहीं थोड़ीसी भक्ति प्राप्त होती है, परन्तु इन्हें जन्म से ही ईश्वर पर अनुराग है। मानो स्वयम्भू शिव हैं – बैठाए हुऐ शिव नहीं।

"नित्यसिद्धों का एक दर्जा ही अलग है। सभी चिड़ियों की चोंच टेढ़ी नहीं होती। ये कभी संसार में नहीं फँसते, जैसे प्रह्लाद।

"साधारण मनुष्य साधना करता है, ईश्वर पर भक्ति भी करता है, और संसार में भी फँस जाता है, स्त्री और धन के लिए भी हाथ लपकाता है। मक्खी जैसे फूल पर भी बैठती है, बर्फियों पर भी बैठती है और विष्ठा पर भी बैठती है। (सब स्तब्ध हैं।)

"नित्यसिद्ध तो मधुमक्खी की तरह होते हैं। मधुमक्खियाँ केवल फूल पर बैठती हैं और मधु ही पीती हैं। नित्यसिद्ध रामरस का ही पान करते हैं, विषयरस की ओर नहीं जाते।

"साधना द्वारा जो भक्ति प्राप्त होती है, इनकी वह भक्ति नही है। इतना जप, इतना ध्यान करना होगा, इस तरह पूजा करनी होगी, यह सब विधिवादीय भक्ति है। जैसे किसी गाँव में किसी को जाना है, परन्तु रास्ते में धनहे खेत पड़ते हैं, तो मेड़ों से घूमकर उसे जाना पड़ता है। अगर किसी को सामनेवाले गाँव में जाना है, परन्तु रास्ते में नदी पड़ती है, तो टेढ़ा रास्ता चक्कर लगाते हुए ही पार करना पड़ता है।

"रागभक्ति, प्रेमाभक्ति, ईश्वर पर आत्मीयों की-सी प्रीति होने पर फिर कोई विधिनियम नहीं रह जाता। तब का जाना धनहे खेतों की मेड़ों पर का जाना नहीं, किन्तु कटे हुए खेतों से सीधा निकल जाना है। चाहे जिस ओर से सीधे चले जाओ। बाढ़ आने पर फिर नदी के टेढ़े रास्ते से नहीं जाना पड़ता। तब इधर उधर की जमीन और रास्ते पर एक बाँस पानी चढ़ जाता है। तब तो बस सीधे नाव चलाकर पार हो जाओ।

"इस रागभक्ति, अनुराग या प्रेम के बिना ईश्वर नहीं मिलते ।"

समाधितत्त्व – सविकल्प और निर्विकल्प

अमृत – महाराज! इस समाधि-अवस्था में भला आपको क्या जान पड़ता है?

श्रीरामकृष्ण – सुना नहीं? भौंरे की चिन्ता करते करते झींगुर भौंरा ही बन जाता है। वह अनुभव कैसा होता है जानते हो? मानो हण्डी की मछली को गंगा में छोड़ दिया हो।

अमृत – क्या जरा भी अहंकार नहीं रह जाता?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, बहुधा मेरा कुछ अहंकार रह जाता है। सोने के एक टुकड़े को तुम चाहे जितना घिस डालो पर अन्त में एक छोटासा कण बचा ही रहता है। और, जैसे कोई बड़ी भारी अग्निराशी है, उसकी एक जरासी चिनगारी हो। बाह्य ज्ञान चला जाता है, परन्तु प्राय: थोड़ासा अहंकार रह जाता है, शायद वे विलास के लिए रख छोड़ते हैं। 'मैं' और 'तुम' इन दोनों के रहने ही से स्वाद मिलता है। कभी कभी इस 'अहं' को भी वे मिटा देते हैं। इसे 'जड़ समाधि' या 'निर्विकल्प समाधि' कहते हैं। तब क्या अवस्था होती है, यह कहा नहीं जा सकता! नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। ज्योंही समुद्र में उतरा कि गल गया। 'तदाकाराकारित'! अब लौटकर कौन बतलाये कि समुद्र कितना गहरा है!

□□□

परिच्छेद २८

नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ बलराम के मकान पर

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बलराम बाबू के मकान मे बैठे हुए है, बैठक के उत्तर-पूर्ववाले कमरे मे। दोपहर ढल चुकी, एक बजा होगा। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल, बलराम और मास्टर कमरे मे उनके साथ बैठे हुए है।

आज अमावस्या है, शनिवार, ७ अप्रैल १८८३। श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के घर सुबह को आए थे। दोपहर को भोजन वही किया है। नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल तथा और भी दो-एक भक्तो को आपने निमन्त्रित करने के लिए कहा था, अतएव उन लोगो ने भी यही आकर भोजन किया है। श्रीरामकृष्ण बलराम से कहते थे – "इन्हे खिलाना, तो बहुतसे साधुओ को खिलाने का पुण्य होगा।"

कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण श्री केशवबाबू के यहॉ 'नववृन्दावन' नाटक देखने गए थे। साथ नरेन्द्र और राखाल भी गए थे। नरेन्द्र ने भी अभिनय मे भाग लिया था। केशव पवहारी बाबा बने थे।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्रादि भक्तो से) – केशव साधु बनकर शान्तिजल छिडकने लगा। परन्तु मुझे यह अच्छा न लगा। अभिनय मे शान्तिजल।

"और एक आदमी (कु. बाबू) पापपुरुष बना था। ऐसा करना भी अच्छा नही। न पाप करना ही अच्छा है और न पाप का अभिनय करना ही।"

नरेन्द्र का स्वास्थ्य अच्छा नही है, परन्तु उनका गाना सुनने की श्रीरामकृष्ण को बड़ी इच्छा है। वे कहने लगे "नरेन्द्र, ये लोग कह रहे है, तू कुछ गा।"

नरेन्द्र तानपुरा लेकर गाने लगे। गीतो का भावार्थ यह है –

(१) "मेरे प्राण-पिजरे के पक्षी, गाओ। ब्रह्म-कल्पतरु पर बैठकर परमात्मा के गुण गाओ! धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष-रूपी पके हुए फल खाओ। हे मेरे हृदय के प्राणविहंग, तुम निरन्तर 'आत्माराम, प्राणाराम' कहकर पुकारो। प्यासे चातक की तरह पुकारो, आलस मत करो।"

(२) "वे विश्वरंजन है, परमज्योति ब्रह्म है, अनादिदेव जगत्पति है, प्राणो के भी प्राण है।... "

(३) "हे राजराजेश्वर! दर्शन दो! मै जिन प्राणो को तुम्हारे चरणो मे अर्पित कर रहा हूँ, वे संसार के अनल-कुण्ड मे पड़कर झुलस गए है। और उस पर यह हृदय कलुष-कलंक से आवृत है। दयामय! मोहमुग्ध होकर मै मृतकल्प हो रहा हूँ, तुम मृतसंजीवनी दृष्टि से मेरा शोधन कर लो।"

(४) "गगनरूपी थाल मे रवि-चन्द्ररूपी दीपक जल रहे है।... "

(५) "चिदाकाश मे प्रेमचन्द्र का पूर्ण उदय हुआ।..."

नरेन्द्रनाथ के गानो के समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने भवनाथ से गाने के लिए कहा। भवनाथ ने भी एक गाना गाया।

(भावार्थ) – "हे दयाघन, तुम्हारे जैसा हितकारी और कौन है? इस प्रकार सुख और दु:ख मे समान रूप से साथ देनेवाला। सभी पाप-ताप, भय आदि का हरण करनेवाला साथी दूसरा कौन है? संकटो से पूर्ण इस घोर भवसागर से तारनेवाला खेवैया और कौन है? किसकी कृपा से ये संग्रामकारी रिपुगण पराजित होकर दूर भागते है? इस प्रकार समस्त पापो का दहन और त्रिताप का निवारण कर शान्तिजल प्रदान करनेवाला और कौन है? अन्त समय मे, जब सभी लोग त्याग देते है उस समय, कौन इस तरह बॉहे फैलाकर गोद मे ले लेता है?"

नरेन्द्र (हँसते हुए) – इसने (भवनाथ ने) पान और मछली खाना छोड़ दिया है।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ से हँसते हुए) – क्यो रे? पान और मछली मे क्या रखा है? इससे कुछ नही होता। कामिनी-कांचन का त्याग ही त्याग है। राखाल कहॉ है?

एक भक्त – जी, राखाल सो रहे है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – एक आदमी बगल मे चटाई लेकर नाटक देखने के लिए गया था। नाटक शुरू होने मे देर थी, इसलिए वह चटाई बिछाकर सो गया। जब जागा तब सब समाप्त हो गया था। (सब हँसते है।)

"फिर चटाई बगल मे दबाकर घर लौट आया।"

रामदयाल बहुत बीमार है। एक दूसरे कमरे मे, बिछौने पर पड़े हुए है। श्रीरामकृष्ण उस कमरे मे जाकर उनकी बीमारी का हाल पूछने लगे।

संसारी तथा शास्त्रार्थ

तीसरे पहर के चार बज चुके है। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि के साथ बैठक मे बैठे हुए है। कुछ ब्राह्मभक्त भी आए है। उन्ही के साथ बातचीत हो रही है।

ब्राह्मभक्त – महाराज ने पंचदशी देखी है।

श्रीरामकृष्ण – यह सब पहले-पहल एक बार सुनना पड़ता है – पहले-पहल एक

बार विचार कर लेना पड़ता है। इसके बाद – 'प्यारी श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में रख। मन, तू देख और मैं देखूँ और दूसरा कोई न देखने पाये।'

"साधन-अवस्था में वह सब सुनना पड़ता है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर ज्ञान का अभाव नहीं रहता। माँ ज्ञान की राशि ठेलती रहती है।

"पहले हिज्जे करके लिखना पड़ता है – फिर सीधे घसीटते जाओ।

"सोना गलाने के समय कमर कसकर काम में लगना पड़ता हैं। एक हाथ मे धौकनी – दूसरे में पंखा – मुँह से फूकना – जब तक सोना न गल जाए। गल जाने पर ज्योंही साँचे में छोड़ा कि सब चिन्ता दूर हो गयी।

"शास्त्र केवल पढ़ने ही से कुछ नही होता। कामिनी-कांचन में रहने से वे शास्त्र का अर्थ समझने नही देते। संसार की आसक्ति में ज्ञान का लोप हो जाता है।

"प्रयत्नपूर्वक मैंने काव्यरसो के जितने भेद सीखे थे वे सब इस काले की प्रीति मे पड़ने से नष्ट हो गए।" (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तों से केशव की बात कहने लगे –

"केशव योग और भोग दोनों में हैं। संसार में रहकर ईश्वर की ओर उनका मन लगा रहता है।"

एक भक्त कानवोकेशन (विश्वविद्यालय की उपाधिवितरण सभा) के सम्बन्ध में कहते हुए बोले, "देखा, वहाँ बड़ी भीड़ लगी हुई थी।"

श्रीरामकृष्ण – एक जगह बहुतसे लोगों को देखने पर ईश्वर का उद्दीपन होता है। यदि मै ऐसा देखता तो विह्वल हो जाता।

परिच्छेद २९

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

(१)

मणिलाल और काशीदर्शन

चलो भाई, आज फिर भगवान् श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने दक्षिणेश्वर मन्दिर चले। देखे, किस तरह वे भक्तो के साथ आनन्दविलास कर रहे है, और किस तरह सदा ईश्वरी भाव मे मस्त होकर समाधिमग्न हो रहे है। हम देखेगे, कभी वे समाधिमग्न है, कभी कीर्तन के आनन्द मे मतवाले बने हुए है, तो कभी प्राकृत मनुष्यो की तरह भक्तो से वार्तालाप करते है। मुख मे ईश्वरी प्रसंग के सिवा दूसरा विषय ही नही। मन सदा अन्तर्मुख है। हर एक श्वास के साथ माँ का नाम जप रहे है। व्यवहार पाँच वर्ष के बालक की तरह है। अभिमान कही छू तक नही गया है। किसी विषय मे आसक्ति नही, सदानन्द, सरल और उदार स्वभाव है। "ईश्वर ही सत्य है, और सब अनित्य, दो दिन का।" – यही एक वाणी है। चलो, उस प्रेमोन्मत्त बालक को देखने चले। वे महायोगी है। अनन्त सागर के किनारे एकाकी विचरण कर रहे है। उस अनन्त सच्चिदानन्द सागर मे मानो कुछ देख रहे है और देखकर प्रेमोन्मत्त बने घूम रहे है।

आज चैत्र की शुक्ला प्रतिपदा है। रविवार, ८ अप्रैल १८८३। कल शनिवार को अमावस्या थी। श्रीरामकृष्ण कल बलराम बाबू के घर गए थे। अमानिशा के घोर अन्धकार मे महाकाली एकाकी महाकाल के साथ लीलाविलास करती है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण अमावस्या के दिन स्थिर नही रह पाते। बालको की-सी स्थिति है। जो दिनरात निरन्तर माँ के दर्शन कर रहा हो, माँ के बिना जो क्षण भर रह नही सकता, वह बालक ही तो है।

प्रात:काल का समय है। श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह बैठे हुए है। पास ही बालकभक्त राखाल बैठे हुए है। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण के भतीजे रामलाल भी है। किशोरी तथा और भी कुछ भक्त आ गये! थोड़ी देर मे पुराने ब्राह्मभक्त श्री मणिलाल मल्लिक भी आए और भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

मणिलाल काशी गए थे। व्यवसायी आदमी है काशी मे उनकी कोठी है।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, काशी गये थे, कुछ साधु-महात्मा भी देखे?

मणिलाल – जी हाँ, त्रैलंगस्वामी, भास्करानन्द, इन सब को देखने गया था।

श्रीरामकृष्ण – कहो, इन सब को कैसे देखा?

मणिलाल – त्रैलंगस्वामी उसी ठाकुरबाड़ी में हैं, मणिकर्णिका घाट पर वेणीमाधव के पास। लोग कहते है, पहले उनकी बड़ी ऊँची अवस्था थी। बड़े बड़े चमत्कार दिखला सकते थे। अब बहुत-कुछ घट गया है।

श्रीरामकृष्ण – यह सब विषयी लोगों की निन्दा है।

मणिलाल – भास्करानन्द सब से मिलते जुलते हैं, वे त्रैलंगस्वामी की तरह नहीं है कि एकदम बोलना ही बन्द।

श्रीरामकृष्ण – भास्करानन्द से तुम्हारी कोई बातचीत हुई?

मणिलाल – जी हाँ, बहुत बातें हुई। उनसे पापपुण्य की भी बात चली थी। उन्होंने कहा, पापमार्ग का त्याग करना, पाप की चिन्ता न करना, ईश्वर यही सब चाहते है। जिन कामों के करने से पुण्य होता है, उन्हीं कामों को करना चाहिए।

सिद्धों की दृष्टि में 'ईश्वर ही कर्ता है'

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह एक तरह की बात है। – ऐहिक इच्छाएँ रखनेवालों के लिए। परन्तु जिनमें चैतन्य का उदय हुआ है, जिन्हें यह बोध हो गया है कि ईश्वर ही सत्य है, और सब असत्, अनित्य, उनका भाव एक दूसरी तरह का होता है। वे जानते हैं कि ईश्वर ही एकमात्र कर्ता है और सब अकर्ता हैं। जिन्हें चैतन्य हुआ है, उनके पैर बेताल नहीं पड़ते। उन्हें हिसाब-किताब करके पाप का त्याग नहीं करना पड़ता। ईश्वर पर उनका इतना अनुराग होता है कि जो कर्म वे करते है, वही सत्कर्म हो जाता है! परन्तु वे जानते है कि इन सब कर्मों का कर्ता मैं नहीं हूँ; मैं तो उनका दास हूँ। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं। वे जैसा कराते हैं, वैसा ही करता हूँ; जैसा कहलाते हैं, वैसा ही कहता हूँ; जैसा चलाते हैं, वैसा ही चलता हूँ।

"जिन्हे चैतन्य हुआ है, वे पापपुण्य के पार चले गए है। वे देखते हैं, ईश्वर ही सब कुछ कर रहे हैं। कहीं एक मठ था। मठ के साधु-महात्मा रोज भिक्षा के लिए जाया करते थे। एक दिन एक साधु ने देखा कि एक जमींदार किसी किसान को पीट रहा है। साधु बड़े दयालु थे। बीच में पड़कर उन्होंने जमींदार को मारने से मना किया। जमींदार उस समय मारे गुस्से के आगबबूला हो रहा था। उसने दिल का सारा बुखार महात्माजी पर ही उतारा; उन्हें इतना पीटा कि वे बड़ी देर तक बेहोश पड़े रहे। किसी ने मठ में जाकर खबर दी कि तुम्हारे किसी साधु को जमींदार ने बहुत मारा। मठ के साधु दौड़ते हुए आए और देखा तो वे साधु बेहोश पड़े हैं। तब उन्होंने उन्हें उठाकर मठ में लाया और एक कमरे में सुला दिया। साधु बेहोश थे, चारों ओर से लोग उन्हें घेरे दुःखित भाव से बैठे थे। कोई कोई पंखा

झल रहे थे। एक ने कहा 'मुँह में जरा दूध डालकर तो देखो।' मुँह में दूध डालने पर उन्हें होश आया। आँखें खोलकर ताकने लगे। किसी ने कहा, 'अब यह देखना चाहिए कि इन्हें इतना ज्ञान है या नहीं कि आदमी पहचान सकें।' यह कहकर उसने ऊँची आवाज लगाकर पूछा 'क्यों महाराज, आपको दूध कौन पिला रहा है?' साधु ने धीमे स्वर में कहा, 'भाई! जिसने मुझे मारा था वही अब दूध पिला रहा है।'

"ईश्वर को बिना जाने ऐसी अवस्था नहीं होती।"

मणिलाल – जी हाँ, पर आपने यह जो कहा यह बड़ी ऊँची अवस्था की बात है। भास्करानन्द के साथ ऐसी ही कुछ बातें हुई थीं।

श्रीरामकृष्ण – वे किसी मकान में रहते हैं?

मणिलाल – जी हाँ, एक आदमी के मकान में रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – उम्र क्या है?

मणिलाल – पचपन की होगी।

श्रीरामकृष्ण – कुछ और भी बातें हुई?

मणिलाल – मैंने पूछा, भक्ति कैसे हो? उन्होंने बतलाया, नाम जपो, राम राम कहो।

श्रीरामकृष्ण – यह बड़ी अच्छी बात हैं।

(२)

गृहस्थ और कर्मयोग

मन्दिर में भवतारिणी, राधाकान्त और द्वादश शिवों की पूजा समाप्त हो गयी। अब उनकी भोगारती के बाजे बज रहे है। चैत का महीना, दोपहर का समय है। अभी अभी ज्वार का चढ़ना आरम्भ हुआ है। दक्षिण की ओर से बड़े जोरों की हवा चल रही है। पूतसलिला भागीरथी अभी अभी उत्तरवाहिनी हुई हैं। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद कमरे में विश्राम कर रहे हैं।

राखाल बसीरहाट में रहते हैं। वहाँ गर्मी के दिनों में पानी के अभाव से लोगों को बड़ा कष्ट होता है।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल से) – देखो, राखाल कहता था, उसके देश में लोगों को पानी बिना बड़ा कष्ट होता है। तुम वहाँ एक तालाब क्यों नहीं खुदवा देते? इससे लोगों का कितना उपकार होगा! (हँसते हुए) तुम्हारे पास तो बहुत रुपये हैं, इतने रुपये रखकर क्या करोगे? वैसे सुना है, तेली लोग बड़े हिसाबी होते हैं। (श्रीरामकृष्ण के साथ दूसरे भक्त भी हँस पड़े)।

मणिलाल कलकत्ते की सिंदूरियापट्टी में रहते हैं। सिंदूरियापट्टी के ब्राह्मसमाज

का अधिवेशन उन्ही के यहाँ होता है। ब्राह्मसमाज के वार्षिक उत्सव मे वे बहुतसे लोगो को आमन्त्रित करते हैं। श्रीरामकृष्ण को भी आमन्त्रण देते है। वगहनगर मे मणिलाल का एक बगीचा है। वहाँ वे बहुधा अकेले आया करते हैं और उस समय श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर जाया करते है। वे सचमुच बडे हिसाबी हैं। रास्ते भर के लिए किराये की गाड़ी नही करते। पहले ट्राम मे चढ़कर शोभाबाजार तक आते है, फिर वहाँ से कुछ आदमियो के साथ हिस्से मे किराया देकर घोड़ागाड़ी पर चढ़कर वराहनगर आते है। परन्तु रुपये की कमी नही हैं। कुछ साल बाद गरीब विद्यार्थियो के लिए उन्होने एक ही किश्त मे पचीस हजार रुपये देने का बन्दोबस्त कर दिया था।

मणिलाल चुप बैठे रहे। कुछ देर इधर उधर की बाते करके बोले, "महाराज! आप तालाब खुदवाने की बात कह रहे थे। उतना कहने ही से काम हो जाता, ऊपर से तेली-तमोली कहने की क्या जरूरत थी?"

श्रीरामकृष्ण, कोई कोई भक्त मुख दबाकर हँस रहे है। मुसकरा भी रहे है।

(३)

दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण तथा ब्राह्मभक्त। प्रेमतत्त्व

कुछ देर बाद कलकत्ते से कुछ पुराने ब्राह्मभक्त आ पहुँचे। उनमे एक श्री ठाकुरदास सेन भी थे। कमरे मे कितने ही भक्तो का समागम हुआ है। श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर बैठे हुए है। सहास्यवदन, बालक की-सी मूर्ति, उत्तरास्य होकर बैठे है। ब्राह्मभक्तो के साथ आनन्द से वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (ब्राह्म तथा दूसरे भक्तो से) – तुम लोग 'प्रेम, प्रेम', चिल्लाते हो, पर प्रेम को क्या ऐसी साधारण वस्तु समझ लिया है? प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। प्रेम के दो लक्षण है। पहला, संसार भूल जाता है। ईश्वर पर इतना प्यार होता है कि संसार का कोई ज्ञान ही नही रह जाता। चैतन्यदेव वन देखकर वृन्दावन सोचते थे और समुद्र देखकर यमुना सोचते थे। दूसरा लक्षण यह है कि अपनी देह जो इतनी प्यारी वस्तु है, उस पर भी ममता नही रह जाती। देहात्मबोध समूल नष्ट हो जाता है।

"ईश्वर के दर्शन हुए बिना प्रेम नही होता।

"ईश्वरप्राप्ति के कुछ लक्षण है। जिसके भीतर अनुराग के ऐश्वर्य प्रकाशित हो रहे है, उसके लिए ईश्वरप्राप्ति मे अधिक देर नही है।

"अनुराग के ऐश्वर्य क्या है, सुनोगे? विवेक, वैराग्य, जीवो पर दया, साधुसेवा, साधुसंग, ईश्वर का नाम-गुणकीर्तन, सत्यवचन, यह सब।

"अनुराग के ये सब लक्षण देखने पर ठीक ठीक कहा जा सकता है कि ईश्वरप्राप्ति मे अब बहुत देर नही है। यदि मालिक का किसी नौकर के घर जाना ठीक हो जाए तो नौकर

के घर की दशा देखकर यह बात समझ में आ जाती है। पहले घासफूस की कटाई होती है, घर का जाला झाड़ा जाता है, घर बुहारा जाता है। बाबू खुद अपने यहाँ से दरी, हुक्का वगैरह भेज देते हैं। यह सब सामान जब उसके घर आने लगता है, तब लोगों के समझने में कुछ बाकी नहीं रहता कि अब बाबूजी आना ही चाहते हैं।"

एक भक्त – क्या पहले विचार करके इन्द्रियनिग्रह करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण – वह भी एक रास्ता है – विचारमार्ग। भक्तिमार्ग से अन्तरिन्द्रिय-निग्रह आप ही आप हो जाता है और सहज ही हो जाता है। ईश्वर पर प्यार जितना ही बढ़ता जाता है, उतना ही इन्द्रियसुख अलोना मालूम पड़ता है।

"जिस रोज लड़का मर जाता है उस रोज क्या स्त्री-पुरुष का मन देहसुख की ओर जा सकता है?"

एक भक्त – उन्हें प्यार कर कहाँ सकते हैं?

नाममाहात्म्य

श्रीरामकृष्ण – उनका नाम लेते रहने से सब पाप कट जाते हैं। काम, क्रोध, शरीरसुख की इच्छा, ये सब दूर हो जाते हैं।

एक भक्त – उनके नाम में रुचि नही होती।

श्रीरामकृष्ण – व्याकुल होकर उनसे प्रार्थना करो जिससे उनके नाम में रुचि हो। वे ही तुम्हारा मनोरथ पूर्ण करेंगे।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण देवदुर्लभ कण्ठ से गाने लगे। जीवों के दुःख से कातर होकर माँ से अपने हृदय का दुःख कह रहे हैं। अपने पर प्राकृत जीवों की अवस्था का आरोप करके माँ को जीवों का दुःख गाकर सुना रहे हैं। गीत का आशय यह है –

"माँ श्यामा! दोष किसी का नहीं, मैं अपने ही हाथों से खोदे हुए कुएँ के पानी में डूब रहा हूँ। माँ कालमनोरमा, षड्रिपुओं की कुदाल लेकर, मैंने पुण्यक्षेत्र पर कूप खोदा, जिसमें अब कालरूपी पानी बढ़ रहा है। तारिणि, त्रिगुणधारिणी माँ, मेरे ही गुणों ने विगुण कर दिया है, अब मेरी क्या दशा होगी? इस वारि का निवारण कैसे करूँ यह सोचते हुए 'दाशरथि' की आँखों से निरन्तर वारिधारा बह रही है। पहले पानी कमर तक था, वहाँ से छाती तक आया। इस पानी में मेरे जीवन की रक्षा कैसे होगी? माँ, मुझे तेरी ही अपेक्षा है। मुझे तू मुक्तिभिक्षा दे, कृपाकटाक्ष करके पार कर दे।"

फिर गाने लगे। उनके नाम पर रुचि होने से जीवों का विकार दूर हो जाता है – इसी भाव का गीत है।

(भावार्थ) – "हे शंकरि यह कैसा विकार है? तुम्हारी कृपाऔषधि मिलने पर ही यह दूर होगा। मिथ्या गर्व से मेरा सर्वांग जल रहा है। मुझे यह कैसा मोह हो गया है! धन-जन

की तृष्णा छूटती ही नहीं, अब मैं कैसे जीवित रह सकता हूँ? सर्वमंगले, जो कुछ कहता हूँ सब अनित्य प्रलाप है। आँखों से माया की नींद किसी तरह नहीं छूटती। पेट में हिंसा की कृमि हो गयी है। व्यर्थ कामों में घूमते रहने का भ्रमरोग हो गया है। जब तुम्हारे नाम ही पर अरुचि है, तब भला इस रोग से मैं कैसे बच सकूँगा?"

श्रीरामकृष्ण – उनके नाम में अरुचि। रोग में यदि अरुचि हो गयी तो फिर बचने की राह नहीं रह जाती। यदि जरा भी रुचि हो तो बचने की बहुत-कुछ आशा है। इसीलिए नाम में रुचि होनी चाहिए। ईश्वर का नाम लेना चाहिए – दुर्गानाम, कृष्णनाम, शिवनाम, चाहे जिस नाम से पुकारो। यदि नाम लेने में दिनदिन अनुराग बढ़ता जाय, आनन्द हो तो फिर कोई भय नहीं, – विकार दूर होगा ही, उनकी कृपा अवश्य होगी ।

आन्तरिक भक्ति तथा दिखावटी भक्ति। भगवान मन देखते हैं।

"जैसा भाव होता है लाभ भी वैसा ही होता है। रास्ते से दो मित्र जा रहे थे। एक जगह भागवत पाठ चल रहा था। एक मित्र ने कहा, "आओ भाई, जरा भागवत सुनें। दूसरे ने जरा झाँककर देखा। फिर वहाँ से वेश्या के घर चला गया। वहाँ कुछ देर बाद उसके मन में बड़ी विरक्ति हो आयी। वह आप ही आप कहने लगा, 'मुझे धिक्कार है! मेरा मित्र तो भागवत सुन रहा है और मैं यहाँ कहाँ पड़ा हूँ!' इधर जो व्यक्ति भागवत सुन रहा था वह भी अपने मन को धिक्कार रहा था। वह कह रहा था, मैं कैसा मूर्ख हूँ! यह पण्डित न जाने क्या बक रहा है और मैं यहाँ बैठा हुआ हूँ! मेरा मित्र वहाँ कैसे आनन्द में होगा!' जब ये दोनों मरे तब जो भागवत सुन रहा था, उसे तो यमदूत ले गए और जो वेश्या के घर गया था, उसे विष्णु के दूत वैकुण्ठ में ले गए।

"भगवान् मन देखते हैं। कौन क्या कर रहा है, कहाँ पड़ा हुआ है, यह नहीं देखते। 'भावग्राही जनार्दनः।'

"कर्ताभजा सम्प्रदाय के लोग मन्त्रदीक्षा देने के समय कहते हैं, 'अब मन तेरा है'। अर्थात् अब सब कुछ तेरे मन पर निर्भर है ।

"वे कहते हैं, जिसका मन ठीक है, उसका करण ठीक है, वह अवश्य ईश्वर को प्राप्त करेगा।

"मन के ही गुण से हनुमान समुद्र पार कर गए। 'मैं श्रीरामचन्द्र का दास हूँ, मैंने रामनाम उच्चारण किया है, मैं क्या नहीं कर सकता' – विश्वास इसे कहते है।

ईश्वरदर्शन क्यों नहीं होते? – अहंभाव के कारण

"जब तक अहंकार है तब तक अज्ञान है। अहंकार के रहते मुक्ति नहीं होती।

"गौएँ 'हम्मा' 'हम्मा' करती है और बकरे 'में' 'में' करते हैं। इसीलिए उनको इतना

कष्ट भोगना पड़ता है। कसाई काटते है, चमड़े से जूते बनते हैं, ढोल मढ़ा जाता है – दु:ख की पराकाष्ठा हो जाती है। हिन्दी में अपने को 'हम' कहते हैं और 'मैं' भी कहते हैं। 'मैं' 'मैं' करने के कारण कितने कर्म भोगने पड़ते हैं! अन्त में आँतों से धनुहे की ताँत बनायी जाती है। घनुहे के हाथ में जब वह पड़ती है, तब 'तू' 'तू' कहती है। 'तू' कहने के बाद निस्तार होता है। फिर दु:ख नहीं उठाना पड़ता।

"हे ईश्वर, तुम कर्ता हो और मैं अकर्ता हूँ, इसी का नाम ज्ञान है।

"नीचे आने से ही ऊँचे उठा जाता है। चातक पक्षी का घोसला नीचे रहता है, परन्तु वह बहुत ऊँचे उड़ जाता है। ऊँची जमीन में कृषि नहीं होती। नीची जमीन चाहिए। पानी उसी में रुकता है। तभी कृषि होती है।

साधुसंग तथा प्रार्थना

"कुछ कष्ट उठाकर सत्संग करना चाहिए। घर में तो केवल विषय-चर्चा होती है, रोग लगा ही रहता है। जब चिड़िया सीखचे पर बैठती है तभी 'राम राम' बोलती है, जब वन में उड़ जाती है तब वही 'टें टें' करने लगती है।

"धन होने से ही कोई बड़ा आदमी नहीं हो जाता। बड़े आदमी के घर का यह लक्षण है कि सब कमरों में दिये जलते रहते हैं। गरीब तेल नही खर्च कर सकते; इसीलिए दिये का वैसा बन्दोबस्त नहीं कर सकते। यह देहमन्दिर अँधेरे में न रखना चाहिए, ज्ञानदीप जला देना चाहिए! 'ज्ञानदीप जलाकर ब्रह्ममयी का मुँह देखो।'

"ज्ञान सभी को हो सकता है। जीवात्मा और परमात्मा। प्रार्थना करो, उस परमात्मा के साथ सभी जीवों का योग हो सकता है। गैस का नल सब घरों मे लगाया हुआ है और गैस गैसकम्पनी के यहाँ मिलती है। अर्जी भेजो, गैस का बन्दोबस्त हो जायगा, घर में गैसबत्ती जल जायगी। सियालदह में आफिस है। (सब हँसते हैं।)

"किसी किसी को चैतन्य हुआ है इसके लक्षण भी हैं। ईश्वरी प्रसंग को छोड़ और कुछ सुनने को उसका जी नही चाहता। ईश्वरी प्रसंग के सिवा कोई दूसरी बात करना उसे अच्छा नहीं लगता। जैसे सातों समुद्र, गंगा-यमुना और सब नदियों मे पानी है, परन्तु चातक को वर्षा की बूँदों की ही रट रहती है। चाहे मारे प्यास के छाती फट जाय, परन्तु वह दूसरा पानी कभी नहीं पीता।"

(४)

गोपीप्रेम। 'अनुरागरूपी बाघ'

श्रीरामकृष्ण ने कुछ गाने के लिए कहा। रामलाल और कालीमन्दिर के एक ब्राह्मण कर्मचारी गाने लगे। ठेका लगाने के लिए एक बायाँ मात्र था। कुछ भजन गाये गये।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – बाघ जैसे दूसरे पशुओ को खा जाता है, वैसे 'अनुरागरूपी बाघ' काम-क्रोध आदि रिपुओ को खा जाता है। एक बार ईश्वर पर अनुराग होने से फिर काम-क्रोध आदि नही रह जाते। गोपियो की ऐसी ही अवस्था हुई थी। श्रीकृष्ण पर उनका ऐसा ही अनुराग था।

"और है 'अनुराग-अंजन।' श्रीमती (राधा) कहती है – 'सखियो, मै चारो ओर कृष्ण ही देखती हूँ।' उन लोगो ने कहा – 'सखि, तुमने आँखो मे अनुराग-अंजन लगा लिया है, इसीलिए ऐसा देखती हो।'

"इस प्रकार लिखा है कि मेढक का सिर जलाकर उसका अंजन आँखो मे लगाने से चारो ओर साँप ही साँप दीख पड़ते है।

"जो लोग केवल कामिनी-कांचन मे पड़े हुए है, कभी ईश्वर का स्मरण नही करते, वे बद्ध जीव है। उन्हे लेकर क्या कभी महान् कार्य हो सकता है? जैसे कौए का चोच मारा हुआ आम ठाकुरसेवा मे लगाने की क्या, खाने मे भी हिचकिचाहट होती है।

"संसारी जीव, बद्धजीव ये रेशम के कीडे है। यदि चाहे तो कोश को काटकर बाहर निकल सकते है, परन्तु खुद जिस घर को बनाया है, उसे छोड़ने मे बडा मोह होता है। फल यह होता है कि उसी मे उनकी मृत्यु हो जाती है।

"जो मुक्त जीव है, वे कामिनी-कांचन के वशीभूत नही होते। कोई कोई कीड़े (रेशम के) जिस कोये को इतने प्रयत्न से बनाते है, उसे काटकर निकल भी आते है। परन्तु ऐसे एक ही दो होते है।

"माया मोह मे डाले रहती है। दो एक मनुष्यो को ज्ञान होता है। वे माया के भुलावे म नही आते-कामिनी-कांचन के वशीभूत नही होते।

"साधनसिद्ध और कृपासिद्ध। कोई कोई बड़े परिश्रम से खेत मे पानी खीचकर लाते है। यदि ला सके तो फसल भी अच्छी होती है। किसी किसी को पानी सीचना ही नही पड़ा, वर्षा के जल से खेत भर गया। उसे पानी सीचने के लिए कष्ट नही उठाना पड़ा। माया के हाथ से रक्षा पाने के लिए कष्टसाध्य साधनभजन करना पड़ता है। कृपासिद्ध को कष्ट नही उठाना पड़ता। परन्तु ऐसे दो ही एक मनुष्य होते है।

"और है नित्यसिद्ध। इनका ज्ञान – चैतन्य – जन्म-जन्मान्तरो मे बना ही रहता है। मानो फौआरे की कल बन्द है, मिस्त्री ने इसे उसे खोलते हुए उसको भी खोल दिया और उससे फर्र से पानी निकलने लगा। जब नित्यसिद्ध का प्रथम अनुराग मनुष्य देखते है तब आश्चर्य से कहने लगते है – '*इतनी भक्ति, इतना वैराग्य, इतना प्रेम इसमे कहाँ था?*' "

श्रीरामकृष्ण गोपियो के अनुराग की बात कह रहे है। फिर गाना होने लगा। रामलाल गाने लगे। गीत का आशय यह है –

"हे नाथ! तुम्ही हमारे सर्वस्व हो, तुम्ही हमारे प्राणों के आधार हो और सब वस्तुओ में सार पदार्थ भी तुम्ही हो। तुम्हे छोड़ तीनों लोक में अपना और कोई नहीं। सुख, शान्ति, सहाय, सम्बल, सम्पद्, ऐश्वर्य, ज्ञान, बुद्धि, बल, वासगृह, आरामस्थल, आत्मीय, मित्र, परिवार सब कुछ तुम्हीं हो। तुम्हीं हमारे इहकाल हो और तुम्हीं परकाल हो, तुम्हीं परित्राण हो और तुम्हीं स्वर्गधाम हो, शास्त्रविधि और कल्पतरू गुरु भी तुम्हीं हो; तुम्हीं हमारे अनन्त सुख के आधार हो। हमारे उपाय, हमारे उद्देश्य तुम्ही हो। तुम्हीं स्रष्टा, पालनकर्ता और उपास्य हो! दण्डदाता पिता, स्नेहमयी माता और भवार्णव के कर्णधार भी तुम्हीं हो।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – अहा! कैसा गीत है! – 'तुम्हीं हमारे सर्वस्व हो।' अक्रूर के आने पर गोपियों ने श्रीराधा से कहा, 'राधे! यह तेरे सर्वस्व-धन का हरण करने के लिए आया है।' प्यार यह है। ईश्वर के लिए व्याकुलता इसे कहते हैं।

फिर गाना होने लगा –

(भावार्थ) – "रथचक्र को न पकड़ो न पकड़ो। क्या रथ चक्र से चलता है! जिनके चक्र से जगत् चलता है! वे हरि ही इस चक्र के चक्री हैं।"

गीत सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि-सागर मे डूब गये। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को चुपचाप टकटकी लगाये देख रहे हैं। कमरे मे सन्नाटा छाया हुआ है। श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़े हुए समाधिस्थ बैठे है – वैसे ही जैसे फोटोग्राफ में दिखायी देते हैं। नेत्रों से आनन्दधारा बह रही है।

बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। परन्तु अभी उन्ही से वार्तालाप कर रहे है, जिन्हें समाधि-अवस्था में देख रहे थे। कोई कोई शब्द सुन पड़ता है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप कह रहे है – "तुम्हीं मैं हो, मै ही तुम हूँ ।...खूब करते हो परन्तु"

"यह मुझे पीलिया रोग तो नहीं हो गया? – चारों ओर तुम्हीं को देख रहा हूँ।

"हे कृष्ण, दीनबन्धु! प्राणवल्लभ! गोविन्द!"

'प्राणवल्लभ! गोविन्द!' कहते हुए श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गये। भक्तगण महाभावमय श्रीरामकृष्ण को बार बार देख रहे हैं, किन्तु फिर भी नेत्रों की तृप्ति नहीं होती।

(५)

श्रीरामकृष्ण का ईश्वरावेश। उनके मुख से ईश्वरवाणी

श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हैं। अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। चारों ओर भक्तगण बैठे हैं। श्री अधर सेन कुछ मित्रों के साथ आये है। अधर डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। इन्होंने श्रीरामकृष्ण को पहले एक बार देखा है – आज दूसरी बार देख रहे हैं। इनकी उम्र लगभग उनतीस-तीस वर्ष की होगी। इनके मित्र सारदाचरण को मृत पुत्र का शोक है। ये स्कूलों

के डिप्टी इन्स्पेक्टर रह चुके हैं। अब पेन्शन ले ली है। साधन-भजन पहले ही से कर रहे हैं। बड़े लड़के का देहान्त हो जाने से किसी तरह मन को सान्त्वना नहीं मिलती। इसीलिए अधर उन्हें श्रीरामकृष्ण के पास ले आये हैं। बहुत दिनों से अधर स्वयं भी श्रीरामकृष्ण को देखना चाहते थे।

श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। आँखें खोलकर आपने देखा, कमरे भर के लोग आपकी ओर ताक रहे हैं। उस समय आप अपने आप कुछ कहने लगे।

क्या श्रीरामकृष्ण के मुँह से ईश्वर स्वयं उपदेश दे रहे हैं!

श्रीरामकृष्ण – "कभी कभी विषयी मनुष्यों मे ज्ञान का उन्मेष होता है, वह दीपशिखा की तरह दीख पड़ता है, – नहीं नहीं, सूर्य की किरण की तरह; छेद के भीतर से मानो किरण निकल रही है। विषयी मनुष्य और ईश्वर का नाम! उसमें अनुराग नहीं होता। जैसे बालक कहता है, तुझे भगवान् की कसम है। घर की स्त्रियों का झगड़ा सुनकर 'भगवान् की कसम' याद कर ली है।

"विषयी मनुष्यों में निष्ठा नहीं होती। हुआ हुआ, न हुआ तो न सही। पानी की जरूरत है, कुआँ खोद रहा है। खोदते खोदते जैसे ही कंकड़ निकला कि बस छोड़ दी वह जगह, दूसरी जगह खोदने लगा। लो, वहाँ भी बालू ही बालू निकलती है! बस वहाँ से भी अलग हुआ। जहाँ खोदना आरम्भ किया है, वहीं जब खोदता रहे तभी तो पानी मिलेगा।

"जीव जैसे कर्म करता है वैसे ही फल भी पाता है।

"इसीलिए गाने में कहा है –

(भावार्थ) – " 'माँ श्यामा! दोष किसी का नही, मैं अपने ही हाथों खोदे हुए कुएँ के पानी मे डूब रहा हूँ।'

" 'मैं' ओर 'मेरा' अज्ञान है। विचार तो करा, देखोगे जिसे 'मैं' कह रहे हो, वह आत्मा के अतिरिक्त और कुछ नही है। विचार करो – तुम शरीर हो या हाड़ हो या मांस या और कुछ? तब देखोगे, तुम कुछ नही हो। तुम्हारी कोई उपाधि नहीं। तब कहोगे, मैंने कुछ भी नही किया; मेरे न दोष हैं, न गुण; न पाप है, न पुण्य।

"यह सोना है और यह पीतल, ऐसे विचार को अज्ञान कहते हैं और सब कुछ सोना है, इसे ज्ञान।

"ईश्वरदर्शन होने पर विचार बन्द हो जाता है। फिर ऐसा भी है कि कोई ईश्वरलाभ करके भी विचार करता है। कोई भक्ति लेकर रहता है, उनका गुणगान करता है।

"बच्चा तभी तक रोता है जब तक उसे माता का दूध पीने को नहीं मिलता। मिला कि रोना बन्द हो गया। तब आनन्दपूर्वक पीता रहता है। परन्तु एक बात है। कभी कभी वह दूध पीते पीते खेलता भी है और आनन्द से किलकारियाँ भरता है।

"वे ही सब कुछ हुए हैं। परन्तु मनुष्य मे उनका प्रकाश अधिक है। जहाँ शुद्धसत्त्व बालकों का-सा स्वभाव है कि कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी नाचता है, कभी गाता है, वहाँ वे प्रत्यक्ष भाव से रहते हैं।"

श्रीरामकृष्ण अधर का कुशलसमाचार ले रहे हैं। अधर ने अपने मित्र के पुत्रशोक का हाल कहा। श्रीरामकृष्ण अपने ही भाव में गाने लगे –

(भावार्थ) – " 'जीव! समर के लिए तैयार हो जाओ। रण के वेश मे काल तुम्हारे घर में घुस रहा है। भक्ति-रथ पर चढ़कर, ज्ञान-तूण लेकर रसना-धनुष में प्रेम गुण लगा, ब्रह्ममयी के नामरूपी ब्रह्मास्त्र का सन्धान करो। लड़ाई के लिए एक युक्ति और है। तुम्हें रथ-रथी की आवश्यकता न होगी यदि भागीरथी के तट पर तुम्हारी यह लड़ाई हो।'

"क्या करोगे? इस काल के लिए तैयार हो जाओ। काल घर में घुस रहा है। उनका नामरूपी अस्त्र लेकर लड़ना होगा। कर्ता वे ही है। मै कहता हूँ,'जैसा कराते हो, वैसा ही करता हूँ। जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ। मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री; मै घर हूँ, तुम घर के मालिक, मै गाड़ी हूँ, तुम इंजिनियर।'

"आममुख्तार उन्ही को बनाओ। काम का भार अच्छे आदमी को देने से कभी अमंगल नही होता। उनकी जो इच्छा हो, करे।

"शोक भला क्यो नही होगा। आत्मज है न। रावण मरा तो लक्ष्मण दौड़े हुए गए, देखा, उसके हाड़ो मे ऐसी जगह नही थी जहॉ छेद न रहे हो। लौटकर राम से बोले – भाई, तुम्हारे बाणो की बड़ी महिमा है, रावण की देह मे ऐसी जगह नहीं है जहॉ छेद न हो! राम बोले – हाड के भीतरवाले छेद हमारे बाणो के नहीं है, मारे शोक के उसके हाड़ जर्जर हो गए है। वे छेद शोक के ही चिह्न है।

"परन्तु है यह सब अनित्य। गृह, परिवार, सन्तान, सब दो दिन के लिए है। ताड़ का पेड़ ही सत्य है। दो एक फल गिर जाते हैं। इसके लिए दु:ख क्यो?

"ईश्वर तीन काम करते है, - सृष्टि, स्थिति और प्रलय। मृत्यु है ही। प्रलय के समय सब ध्वंस हो जाएगा, कुछ भी न रह जाएगा। माँ केवल सृष्टि के बीज बीनकर रख देगी। फिर नयी सृष्टि होने के समय उन्हें निकालेंगी। घर की स्त्रियों के जैसे हण्डी रहती है जिसमें वे खीरे-कोहड़े के बीज, समुद्रफेन, नील का डला आदि छोटी छोटी पोटलियों में बॉधकर रख देती हैं।" (सब हँसते हैं।)

(६)

अधर को उपदेश

श्रीरामकृष्ण अधर के साथ अपने कमरे के उत्तरीं ओर के बरामदे में खड़े होकर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (अधर से) – तुम डिप्टी हो। यह पद भी ईश्वर के ही अनुग्रह से मिला है। उन्हे न भूलना, समझना, सब को एक ही रास्ते से जाना है, यहाँ सिर्फ दो दिन के लिए आना हुआ है।

"संसार कर्मभूमि है। यहाँ कर्म करने के लिए आना हुआ है, जैसे देहात में घर है और कलकत्ते में काम करने के लिए आया जाता है।

"कुछ काम करना आवश्यक है। यह साधन है। जल्दी जल्दी सब काम समाप्त कर लेना चाहिए। जब सुनार सोना गलाते हैं, तब धौकनी, पंखा, फूँकनी आदि से हवा करते है, जिससे आग तेज हो और सोना गल जाय। सोना गल जाता है, तब कहते हैं, चिलम भरो। अब तक पसीने पसीने हो रहे थे पर काम करके ही तम्बाकू पीएँगे।

"पूरी जिद चाहिए; साधना तभी होती है। दृढ़ प्रतिज्ञा होनी चाहिए।

"उनके नाम-बीज में बड़ी शक्ति है। वह अविद्या का नाश करता है। बीज कितना कोमल है और अंकुर भी कितना नरम होता है, परन्तु मिट्टी कैसी ही कड़ी क्यों न हो, वह उसे पार कर ही जाता है – मिट्टी फट जाती है।

"कामिनी-कांचन के भीतर रहने से वे मन को खींच लेते है। सावधानी से रहना चाहिए। त्यागियों के लिए विशेष भय की बात नहीं। यथार्थ त्यागी कामिनी-कांचन से अलग रहता है। साधना के बल से सदा ईश्वर पर मन रखा जा सकता है।

"जो यथार्थ त्यागी है वे सर्वदा ईश्वर पर मन रख सकते हैं; वे मधुमक्खी की तरह केवल फूल पर बैठते हैं; मधु ही पीते हैं। जो लोग संसार में कामिनी-कांचन के भीतर है उनका मन ईश्वर में लगता तो है, पर कभी कभी कामिनी-कांचन पर भी चला जाता है; जैसे साधारण मक्खियाँ बर्फी पर भी बैठती हैं और सड़े घाव पर भी बैठती हैं। हाँ, विष्ठा पर भी बैठती है।

"मन सदा ईश्वर पर रखना। पहले कुछ मेहनत करनी पड़ेगी; फिर पेन्शन पा जाओगे।"

परिच्छेद ३०

सुरेन्द्र के मकान पर अन्नपूर्णा पूजा के उत्सव में

(१)

अहंकार। स्वाधीन इच्छा अथवा ईश्वर-इच्छा। साधुसंग

सुरेन्द्र के घर के आँगन में श्रीरामकृष्ण सभा को आलोकित कर बैठे हुए हैं। शाम के छः बजे होंगे।

आँगन से पूर्व की ओर, दालान के भीतर, देवीप्रतिमा प्रतिष्ठित है। माता के पादपद्मों में जवा और बिल्वपत्र तथा गले में फूलों की माला शोभायमान् है। माता दालान को आलोकित करके बैठी हुई हैं।

आज अन्नपूर्णा देवी की पूजा है। चैत्र शुक्ला अष्टमी, १५ अप्रैल १८८३*, दिन रविवार। सुरेन्द्र माता की पूजा कर रहे हैं, इसीलिए निमन्त्रण देकर श्रीरामकृष्ण को ले आए हैं। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आये हैं। आते ही उन्होंने दालान पर चढ़कर देवी के दर्शन किए। फिर प्रणाम करके खड़े होकर देवी की ओर देखते हुए उँगलियों पर मूलमन्त्र जपने लगे। भक्तगण दर्शन और प्रणाम करके पास ही खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आँगन में आए। आँगन में दरी पर साफ चद्दर बिछी है। उस पर कुछ तकिये रखे हुए हैं। एक ओर मृदंग-करताल लेकर कुछ वैष्णव बैठे हुए है; संकीर्तन होगा। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर बैठ गए।

लोग श्रीरामकृष्ण को एक तकिये के पास ले जाकर बैठाने लगे; परन्तु वे तकिया हटाकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – तकिये के सहारे बैठना! जानते हो न अभिमान छोड़ना बड़ा कठिन है! अभी विचार कर रहे हो कि अभिमान कुछ नहीं है, परन्तु फिर न जाने कहाँ से आ जाता है

"बकरा काट डाला गया, फिर भी उसके अंग हिल रहे हैं।

"स्वप्न में डर गए हो; आँखें खुल गयीं, बिलकुल सचेत हो गए, फिर भी छाती धड़क रही है। अभिमान ठीक ऐसा ही है। हटा देने पर भी न जाने कहाँ से आ जाता है! बस आदमी मुँह फुलाकर कहने लगता है, मेरा आदर नहीं किया।"

केदार – 'तृणादपि सुनीचेन तरोरिव सहिष्णुना।'

श्रीरामकृष्ण – मै भक्तो की रेणु की रेणु हूँ।

वैद्यनाथ आए है। वैद्यनाथ विद्वान् है। कलकत्ता के हाइकोर्ट के वकील है। वे श्रीरामकृष्ण को हाथ जोड़कर प्रणाम करके एक ओर बैठ गए।

सुरेन्द्र (श्रीरामकृष्ण से) – ये मेरे आत्मीय है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, इनका स्वभाव तो बड़ा अच्छा है।

सुरेन्द्र – ये आपसे कुछ पूछना चाहते हैं, इसीलिए आए है।

श्रीरामकृष्ण (वैद्यनाथ से) – जो कुछ देख रहे हो, सभी उनकी शक्ति है। उनकी शक्ति के बिना कोई कुछ भी नही कर सकता। परन्तु एक बात है। उनकी शक्ति मब जगह बराबर नही है। विद्यासागर ने कहा था, 'परमात्मा ने क्या किसी को अधिक शक्ति दी है?' मैने कहा, 'शक्ति अगर अधिक न देते तो तुम्हे हम लोग देखने क्यो आते? तुम्हारे दो सीग थोड़े ही है!' अन्त मे यही ठहरा कि विभुरूप से सर्वभूतो मे ईश्वर है, केवल शक्ति का भेद है।

वैद्यनाथ – महाराज! मुझे एक सन्देह है। यह जो Free Will अर्थात् स्वाधीन इच्छा की बात होती है, – कहते है कि हम इच्छा करे तो अच्छा काम भी कर सकते हैं और बुरा भी, – क्या यह सच है? क्या हम सचमुच स्वाधीन है?

श्रीरामकृष्ण - सभी ईश्वर के अधीन है। उन्ही की लीला है। उन्होने अनेक वस्तुओ की सृष्टि की है, – छोटी-बड़ी, भली-बुरी, मजबूत-कमजोर। अच्छे आदमी, बुरे आदमी। यह सब उन्ही की माया है – उन्ही का खेल है। देखो न, बगीचे के सब पेड़ बराबर नही होते।

"जब तक ईश्वर नही मिलते, तब तक जान पड़ता है, हम स्वाधीन है। यह भ्रम वे ही रख देते है, नही तो पाप की वृद्धि होती, पाप से कोई न डरता, न पाप की सजा मिलती।

"जिन्होने ईश्वर को पा लिया है, उनका भाव जानते हो क्या है? मै यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो; मै गृह हूँ, तुम गृही; मै रथ हूँ, तुम रथी, जैसा चलाते हो, वैसा ही चलता हूँ जैसा कहाते हो, वैसा ही कहता हूँ।

(वैद्यनाथ से) – "तर्क करना अच्छा नही। आप क्या कहते है?"

वैद्यनाथ – जी हॉ, तर्क करने का स्वभाव ज्ञान होने पर नष्ट हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण – Thank you (धन्यवाद)! (लोग हॅसते है।) तुम पाओगे। ईश्वर की बात कोई कहता है, तो लोगो को विश्वास नही होता। यदि कोई महापुरुष कहे, मैने ईश्वर को देखा है, तो कोई उस महापुरुष की बात ग्रहण नही करता। लोग सोचते है, इसने अगर ईश्वर को देखा है तो हमे भी दिखाये तो जाने। परन्तु नाडी देखना कोई एक दिन मे थोड़े

ही सीख लेता है! वैद्य के पीछे महीनों घूमना पड़ता है। तभी वह कह सकता है, कौन कफ की नाड़ी है, कौन पित्त की है और कौन वात की है। नाड़ी देखना जिनका पेशा है, उनका संग करना चाहिए। (सब हँसते हैं।)

"क्या सभी पहचान सकते हैं कि यह अमुक नम्बर का सूत है? सूत का व्यवसाय करो, जो लोग व्यवसाय करते हैं, उनकी दूकान में कुछ दिन रहो, तो कौन चालीस नम्बर का सूत है, कौन इकतालीस नम्बर का, तुरन्त कह सकोगे।"

(२)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द। समाधि में

अब संकीर्तन होगा। मृदंग बजाया जा रहा है। गोष्ठ मृदंग बजा रहा है। अभी गाना शुरू नही हुआ। मृदंग का मधुर वाद्य गौरांगमण्डल और उनके नामसंकीर्तन की याद दिलाकर मन को उद्दीप्त करता है। श्रीरामकृष्ण भाव में मग्न हो रहे हैं। रह-रहकर मृदंगवादक पर दृष्टि डालकर कह रहे हैं – "अहा! मुझे रोमांच हो रहा है!"

गवैयों ने पूछा, "कैसा पद गाएँ?" श्रीरामकृष्ण ने विनीत भाव से कहा, "जरा गौरांग के कीर्तन गाओ।"

कीर्तन आरम्भ हो गया। पहले गौरचन्द्रिका होगी, फिर दूसरे गाने।

कीर्तन मे गौरांग के रूप का वर्णन हो रहा है। कीर्तन-गवैये अन्तरों में चुन-चुनकर अच्छे पद जोड़ते हुए गा रहे हैं – "सखि, मैंने पूर्णचन्द्र देखा", "न ह्रास है – न मृगांक", "हृदय को आलोकित करता है।"

गवैयों ने फिर गाया – "कोटि चन्द्र के अमृत से उसका मुख धुला हुआ है।"

श्रीरामकृष्ण यह सुनते ही सुनते समाधिमग्न हो गए।

गाना होता ही रहा। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। वे भाव में मग्न होकर एकाएक उठकर खड़े हो गए तथा प्रेमोन्मत्त गोपिकाओं की तरह श्रीकृष्ण के रूप का वर्णन करते हुए कीर्तन-गवैयों के साथ साथ गाने लगे – "सखि! रूप का दोष है या मन का?" "दूसरों को देखती हुई तीनों लोक में श्याम ही श्याम देखती हूँ।"

श्रीरामकृष्ण नाचते हुए गा रहे हैं। भक्तगण निर्वाक् होकर देख रहे हैं। गवैये फिर गा रहे है, – गोपिका की उक्ति – "बंसी री! तू अब न बज। क्या तुझे नींद भी नहीं आती?" इसमें पद जोड़कर गा रहे हैं – "और नींद आए भी कैसे!" – "सेज तो करपल्लव है न?" – "श्रीमुख के अमृत का पान करती है" – "तिस पर उँगलियाँ सेवा करती हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। कीर्तन होता रहा। श्रीमती राधा की उक्ति गायी जाने लगी। वे कहती हैं – "दृष्टि, श्रवण और घ्राण की शक्ति तो चली गयी – सभी

इन्द्रियों ने उत्तर दे दिया, तो मै ही अकेली क्यो रह गयी?"

अन्त मे श्रीराधा-कृष्ण दोनो के एक दूसरे से मिलन का कीर्तन होने लगा –

"राधिकाजी श्रीकृष्ण को पहनाने के लिए माला गूँथ ही रही थी कि अचानक श्रीकृष्ण उनके सामने आकर खड़े हो गए।"

युगल-मिलन के संगीत का आशय यह है –

"कुंजवन मे श्याम-विनोदिनी राधिका कृष्ण के भावावेश मे विभोर हो रही है। दोनो मे से न तो किसी के रूप की उपमा हो सकती है और न किसी के प्रेम की ही सीमा है। आधे मे सुनहली किरणो की छटा है और आधे मे नीलकान्त मणि की ज्योति। गले के आधे हिस्से मे वन के फूलो की माला है और आधे मे गज-मुक्ता। कानो के अर्धभाग मे मकरकुण्डल है और अर्धभाग मे रत्नो की छबि। अर्धललाट मे चन्द्रोदय हो रहा है। और आधे मे सूर्योदय। मस्तक के अर्धभाग मे मयूरशिखण्ड शोभा पा रहा है और आधे मे वेणी। कनककमल झिलमिला रहे है, फणी मानो मणि उगल रहा है।"

कीर्तन बन्द हुआ। श्रीरामकृष्ण 'भागवत, भक्त, भगवान्' इस मन्त्र का बार बार उच्चारण करते हुए भूमिष्ठ हो प्रणाम कर रहे है। चारो ओर के भक्तो को उद्देश्य करके प्रणाम कर रहे है और संकीर्तन-भूमि की धूलि लेकर अपने मस्तक पर रख रहे है।

(३)

श्रीरामकृष्ण और साकार-निराकार

रात के साढे नौ बजे का समय होगा। अन्नपूर्णा देवी दालान को आलोकित कर रही है। सामने श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ खड़े हुए है। सुरेन्द्र, राखाल, केदार, मास्टर, राम, मनमोहन तथा और भी अनेक भक्त है। उन लोगो ने श्रीरामकृष्ण के साथ ही प्रसाद पाया है। सुरेन्द्र ने सब को तृप्तिपूर्वक भोजन कराया है। अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जानेवाले है। भक्तजन भी अपने अपने घर जाएँगे। सब लोग दालान मे आकर इकट्ठे हुए है।

सुरेन्द्र – (श्रीरामकृष्ण से) – परन्तु आज मातृवन्दना का एक भी गाना नही हुआ।

श्रीरामकृष्ण (देवीप्रतिमा की ओर उँगली उठाकर) – अहा! दालान की कैसी शोभा हुई है! माँ मानो अपनी दिव्य छटा छिटकाकर बैठी हुई है। इस रूप के दर्शन करने पर कितना आनन्द होता है! भोग की इच्छा, शोक, ये सब भाग जाते है। परन्तु क्या निराकार के दर्शन नही होते? नही, होते है। हाँ, जरा भी विषय-बुद्धि के रहते नही होते। ऋषियो ने सर्वस्वत्याग करके 'अखण्ड-सच्चिदानन्द' मे मन लगाया था।

"आजकल ब्रह्मज्ञानी उन्हे 'अचल धन' कहकर गाते है, – मुझे अलोना लगता है। जो लोग गाते है, वे मानो कोई मधुर रस नही पाते। शीरे पर ही भूले रहे, तो मिश्री की खोज

करने की इच्छा नहीं हो सकती।

"तुम लोग देखते हो – बाहर कैसे सुन्दर दर्शन हो रहे हैं, और आनन्द भी कितना मिलता है। जो लोग निराकार निराकार करते, कुछ नहीं पाते, उनके न है बाहर और न है भीतर।"

श्रीरामकृष्ण माता का नाम लेकर इस भाव का गीत गा रहे हैं, – "माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना। मेरा मन तुम्हारे उन दोनो चरणों के सिवा और कुछ नहीं जानता। मै नही जानता, धर्मराज मुझे किस दोष से दोषी बतला रहे हैं। मेरे मन में यह वासना थी कि तुम्हारा नाम लेता हुआ मैं भवसागर से तर जाऊँगा। मुझे स्वप्न में भी नहीं मालूम था कि तुम मुझे असीम सागर में डुबा दोगी। दिनरात मैं दुर्गानाम जप रहा हूँ, किन्तु फिर भी मेरी दु:खराशि दूर न हुई। परन्तु हे हरसुन्दरी, यदि इस बार भी मैं मरा तो यह निश्चय है कि संसार में फिर तुम्हारा नाम कोई न लेगा।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। गीत इस आशय का है –

"मेरे मन! दुर्गानाम जपो। जो दुर्गानाम जपता हुआ रास्ते में चला जाता है, शूलपाणि शूल लेकर उसकी रक्षा करते है। तुम दिवा हो, तुम सन्ध्या हो, तुम्ही रात्रि हो; कभी तो तुम पुरुष का रूप धारण करती हो, कभी कामिनी बन जाती हो। तुम तो कहती हो कि मुझे छोड़ दो, परन्तु मैं तुम्हें कदापि न छोड़ूँगा, – मैं तुम्हारे चरणों में नूपुर होकर बजता रहूँगा, – जय दुर्गा, श्रीदुर्गा कहता हुआ! माँ, जब शंकरी होकर तुम आकाश में उड़ती रहोगी तब मै मीन बनकर पानी में रहूँगा तुम अपने नखों पर मुझे उठा लेना। हे ब्रह्ममयीं, नखों के आघात से यदि मेरे प्राण निकल जायें, तो कृपा करके अपने अरुण चरणों का स्पर्श मुझे करा देना।"

श्रीरामकृष्ण ने देवी को फिर प्रणाम किया। अब सीढ़ियों से उतरते समय पुकारकर कह रहे हैं – "ओ रा – जू – हैं?" (ओ राखाल! जूते सब हैं?)

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। सुरेन्द्र ने प्रणाम किया। दूसरे भक्तों ने भी प्रणाम किया। चाँदनी अभी भी रास्ते पर पड़ रही है। श्रीरामकृष्ण की गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

परिच्छेद ३१

सींती के ब्राह्मसमाज में ब्राह्मभक्तों के साथ

(१)

संसार में निष्काम कर्म

श्रीरामकृष्ण ने श्री वेणी पाल के सींती के बगीचे में शुभागमन किया है। आज सींती के ब्राह्मसमाज का छ:माही महोत्सव है। रविवार, चैत्र पूर्णिमा, २२ अप्रैल १८८३। तीसरे प्रहर का समय। अनेक ब्राह्मभक्त उपस्थित है। भक्तगण श्रीरामकृष्ण को घेरकर दक्षिण के बरामदे में आ बैठे। सायंकाल के बाद आदिसमाज के आचार्य श्री बेचाराम उपासना करेंगे। ब्राह्मभक्तगण बीच बीच में श्रीरामकृष्ण से प्रश्न कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त – महाराज, मुक्ति का उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – उपाय अनुराग, अर्थात् उनसे प्रेम करना, और प्रार्थना।

ब्राह्मभक्त – अनुराग या प्रार्थना?

श्रीरामकृष्ण – अनुराग पहले, फिर प्रार्थना।

श्रीरामकृष्ण सुर के साथ गाना गाने लगे जिसका भावार्थ यह है, – 'हे मन, पुकारने की तरह पुकारो तो देखूँ श्यामा कैसे रह सकती हैं!' फिर बोले –

"और सदा ही उनका नामगुणगान, कीर्तन और प्रार्थना करनी चाहिए। पुराने लोटे को रोज माँजना होगा, एक बार माँजने से क्या होगा? और विवेक-वैराग्य तथा संसार अनित्य है यह बुद्धि चाहिए।"

ब्राह्मभक्त – संसार छोड़ना क्या अच्छा है?

श्रीरामकृष्ण – सभी के लिए संसारत्याग ठीक नहीं। जिनके भोग का अन्त नहीं हुआ, उनसे संसारत्याग नहीं होता। रत्ती भर शराब से क्या मस्ती आती है?

ब्राह्मभक्त -- तो फिर वे लोग क्या संसार करेंगे?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वे लोग निष्काम कर्म करने की चेष्टा करें। हाथ में तेल मलकर कटहल छीलें। धनियों के घर में दासियाँ सब काम करती हैं, परन्तु मन रहता है अपने निज

के घर मे; इसी का नाम निष्काम कर्म है।* इसी का नाम है मन से त्याग। तुम लोग मन से त्याग करो। संन्यासी बाहर का त्याग और मन का त्याग दोनो ही करे।

ब्राह्मभक्त – भोग के अन्त का क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण – कामिनी-कांचन भोग है। जिस कमरे मे इमली का अचार और पानी की सुराही है, उस कमरे मे यदि सन्निपात का रोगी रहे, तो मुश्किल ही है। रुपया, पैसा, मान, इज्जत, शारीरिक सुख ये सब भोग एक बार न हो जाने पर, – भोग का अन्त न होने पर, – ईश्वर के लिए सभी को व्याकुलता नही होती।

ब्राह्मभक्त – स्त्री-जाति खराब है या हम खराब है?

श्रीरामकृष्ण – विद्यारूपिणी स्त्री भी है, और फिर अविद्यारूपिणी स्त्री भी है। विद्यारूपिणी स्त्री भगवान् की ओर ले जाती है और अविद्यारूपिणी स्त्री ईश्वर को भुला देती है, संसार मे डुबा देती है।

"उनकी महामाया से यह जगत्-संसार हुआ है। इस माया के भीतर विद्यामाया और अविद्यामाया दोनो ही है। विद्यामाया का आश्रय लेने पर साधुसंग की इच्छा, ज्ञान, भक्ति, प्रेम, वैराग्य ये सब होते है। पंचभूत तथा इन्द्रिया के भोग के विषय अर्थात् रूप-रस-गन्ध-स्पर्श-शब्द, यह सब अविद्यामाया है। यह ईश्वर को भुला देती है।"

ब्राह्मभक्त – अविद्या यदि अज्ञान पैदा करती है तो उन्होने अविद्या को पैदा क्यो किया?

श्रीरामकृष्ण – उनकी लीला। अन्धकार न रहने पर प्रकाश की महिमा समझी नही जा सकती। दुःख न रहने पर सुख समझा नही जा सकता। बुराई का ज्ञान रहने पर ही भलाई का ज्ञान होता है।

"फिर आम पर छिलका है इसीलिए आम बढ़ता है और पकता है। आम जब तैयार हो जाता है उस समय छिलका फेंक देना पड़ता है। मायारूपी छिलका रहने पर ही धीरे धीरे ब्रह्मज्ञान होता है। विद्यामाया, अविद्यामाया, आम के छिलके की तरह है। दोनो ही आवश्यक है।"

ब्राह्मभक्त – अच्छा, साकार पूजा, मिट्टी से बनायी हुई देवमूर्ति की पूजा – ये सब क्या ठीक है?

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग साकार नही मानते हो, अच्छी बात है। तुम्हारे लिए मूर्ति नही, भाव मुख्य है। तुम लोग आकर्षण मात्र को लो, जैसे श्रीकृष्ण पर राधा का आकर्षण, प्रेम। साकारवादी जिस प्रकार माँ काली, माँ दुर्गा की पूजा करते है, 'माँ, माँ, कहकर

---

* कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। – गीता, २। ४७

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासियत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्।। – गीता, ९।२७

पुकारते हैं, कितना प्यार करते है, तुम लोग इसी भाव को लो, मूर्ति को न भी मानो तो कोई बात नहीं है।

ब्राह्मभक्त – वैराग्य कैसे होता है? और सभी को क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – भोग की शान्ति हुए बिना वैराग्य नहीं होता। छोटे बच्चे को खाना और खिलौना देकर अच्छी तरह से भुलाया जा सकता है, परन्तु जब खाना हो गया और खिलौने के साथ खेल भी समाप्त हो गया तब वह कहता है, 'माँ के पास जाऊँगा।' माँ के पास न ले जाने पर खिलौना पटक देता है और चिल्लाकर रोता है।

सच्चिदानन्द ही गुरु है – ईश्वरलाभ के बाद सन्ध्यादि कर्मों का त्याग

ब्राह्मभक्तगण गुरुवाद के विरोधी हैं। इसीलिए ब्राह्मभक्त इस सम्बन्ध में चर्चा कर रहे हैं।

ब्राह्मभक्त – महाराज, गुरु न होने पर क्या ज्ञान न होगा?

श्रीरामकृष्ण – सच्चिदानन्द ही गुरु है। यदि कोई मनुष्य गुरु के रूप में तुम्हारा चैतन्य जागृत कर दे तो जानो कि सच्चिदानन्द ने ही उस रूप को धारण किया है। गुरु मानो सखा हैं। हाथ पकड़कर ले जाते हैं। भगवान् का दर्शन होने पर फिर गुरु-शिष्य का ज्ञान नही रह जाता। 'वह बड़ा कठिन स्थान है, वहाँ पर गुरु-शिष्यों में साक्षात्कार नहीं होता।' इसीलिए जनक ने शुकदेव से कहा था, 'यदि ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो पहले दक्षिणा दो;' क्योकि ब्रह्मज्ञान हो जाने पर गुरु-शिष्यों में भेदबुद्धि नही रहेगी। जब तक ईश्वर का दर्शन नहीं होता, तभी तक गुरु-शिष्य का सम्बन्ध रहता है।

थोड़ी देर मे सन्ध्या हुई। ब्राह्मभक्तों में से कोई कोई श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं, "शायद अब आपको सन्ध्या करनी होगी।"

श्रीरामकृष्ण – नहीं, ऐसा कुछ नहीं। यह सब पहले-पहल एक एक बार कर लेना पड़ता है। उसके बाद फिर अर्घ्यपात्र या नियम आदि की आवश्यकता नहीं रहती।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा आचार्य बेचाराम: वेदान्त और ब्रह्मतत्त्व के प्रसंग में

सन्ध्या के बाद आदि-समाज के आचार्य श्री बेचाराम ने वेदी पर बैठकर उपासना की। बीच बीच में ब्राह्मसंगीत और उपनिषद् का पाठ होने लगा।

उपासना के बाद श्रीरामकृष्ण के साथ बैठकर आचार्यजी अनेक प्रकार के वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है। आपका क्या मत है?

आचार्य – जी, निराकार मानो electric current (बिजली का प्रवाह) है; आँखों से देखा नही जाता, परन्तु अनुभव किया जाता है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, दोनों ही सत्य हैं। साकार-निराकार दोनो सत्य है। केवल निराकार कहना कैसा है जानते हो? जैसे शहनाई मे सात छेद रहते हुए भी एक व्यक्ति केवल 'पों' करता रहता है, परन्तु दूसरे को देखो, कितनी ही रागरागिनियाँ बजाता है। उसी प्रकार देखो, साकारवादी ईश्वर का कितने भावो से आस्वाद लेता है। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर – अनेक भावो से।

"असली बात क्या है जानते हो? किसी भी प्रकार से अमृत के कुण्ड* मे गिरना है। चाहे स्तव करके गिरो अथवा कोई धक्का दे दे और तुम जाकर कुण्ड मे गिर पड़ो। परिणाम एक ही होगा। दोनो ही अमर होगे।

"ब्राह्मो के लिए जल और बरफकी उपमा ठीक है। सच्चिदानन्द मानो अनन्त जलराशि है। महासागर का जल ठण्डे देश मे स्थान स्थान पर जिस प्रकार बरफ का आकार धारण कर लेता है, उसी प्रकार भक्तिरूपी ठण्ड से वे सच्चिदानन्द भक्त के लिए साकार रूप धारण करते है। ऋषियो ने उस अतीन्द्रिय, चिन्मय रूप का दर्शन किया था और उनके साथ वार्तालाप किया था। भक्त के प्रेम के शरीर – भागवती तनु † द्वारा इस चिन्मय रूप का दर्शन होता है।

"फिर है ब्रह्म 'अवाङ्मनमगोचरम्।' ज्ञानरूपी सूर्य के ताप से साकार बरफ गल जाती है; ब्रह्मज्ञान के बाद, निर्विकल्प समाधि के बाद फिर वही अनन्त, वाक्य-मन के अतीत, अरूप, निराकार ब्रह्म।

"उसका स्वरूप मुख से नही कहा जाता, चुप हो जाना पड़ता है। मुख से कहकर अनन्त को कौन समझाएगा? पक्षी जितना ही ऊपर उठता है, उसके ऊपर और भी है। आप क्या कहते है?"

आचार्य – जी हॉ, वेदान्त मे इसी प्रकार की बाते है।

श्रीरामकृष्ण – नमक का पुतला समुद्र नापने गया था। लौटकर फिर उसने खबर न दी। एक मत में है, शुकदेव आदि ने दर्शन-स्पर्शन किया था, डुबकी नही लगायी थी।

"मैने विद्यासागर से कहा था, 'सब चीजे उच्छिष्ट हो गयी है, परन्तु ब्रह्म उच्छिष्ट

---

* अमृतकुण्ड :– आनन्दरूपम् अमृतं यद् विभाति। ब्रह्म एव इदम् अमृतम्, पुरस्ताद् ब्रह्म, पश्चाद् ब्रह्म, दक्षिणतश्चोत्तरेण, अधश्चोर्ध्व च प्रसृतं ब्रह्म। – मुण्डक उपनिषद २। २। ११

† नारद ने कहा था – "मुझे शुद्धा, सर्वमयी, भागवती तनु प्राप्त हो गयी।"

प्रयुज्यमाने मयि मां शुद्धां भागवती तनुम्।
आरब्धकर्मनिर्वाणो न्यपतन् पांचभौतिकः।। – श्रीमद्भागवत १। ६। २९

नही हुआ।* अर्थात् ब्रह्म क्या है, कोई मुँह से कह नही सका। मुख से बोलने से ही चीज उच्छिष्ट हो जाती है।' विद्यासागर विद्वान् है, यह सुनकर बहुत खुश हुए।

"सुना है, केदार के उस तरफ बरफ से ढका पहाड़ है। अधिक ऊँचाई पर उठने से फिर लौटना नही होता। जो लोग यह जानने के लिए गए है कि अधिक ऊँचाई पर क्या है तथा वहाँ जाने पर कैसी स्थिति होती है, उन्होने फिर लौटकर खबर नही दी।

उठने से फिर लौटना नही होता। जो लोग यह जानने के लिए गए है कि अधिक ऊँचाई पर क्या है तथा वहाँ जाने पर कैसी स्थिति होती है, उन्होने फिर लौटकर खबर नही दी।

"उनका दर्शन होने पर मनुष्य आनन्द मे विह्वल हो जाता है, चुप हो जाता है। खबर कौन देगा? समझाएगा कौन?

"सात फाटको से परे राजा है। प्रत्येक फाटक पर एक एक महा ऐश्वर्यवान पुरुष बैठे है। प्रत्येक फाटक मे शिष्य पूछ रहा है, 'क्या यही राजा है?' गुरु भी कह रहे है नही;' नेति नेति। सातवे फाटक पर जाकर जो कुछ देखा, एकदम अवाक् रह गए! आनन्द मे विह्वल हो गए। फिर यह पूछना न पडा कि क्या यही राजा है? देखते ही सब सन्देह मिट गये।†

आचार्य – जी हाँ, वेदान्त मे इसी प्रकार सब लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – जब वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते है, तब हम उन्हे सगुण ब्रह्म, आद्याशक्ति कहते है। जब वे तीनो गुणो से अतीत है, तब उन्हे निर्गुण ब्रह्म, वाक्य-मन के अतीत परब्रह्म कहा जाता है।

"मनुष्य उनकी माया मे पडकर अपने स्वरूप को भूल जाता है। इस बात को भूल जाता है कि वह अपने पिता के अनन्त ऐश्वर्य का अधिकारी है। उनकी माया त्रिगुणमयी है। ये तीनो ही गुण डाकू है। सब कुछ हर लेते है, हमारे स्वरूप को भुला देते है। सत्त्व, रज, तम तीन गुण है। इनमे से केवल सत्त्वगुण ही ईश्वर का रास्ता बताता है, परन्तु ईश्वर के पास सत्त्वगुण भी नही ले जा सकता।

"एक धनी जंगल के बीच मे से जा रहा था। ऐसे समय तीन डाकुओ ने आकर उसे घेर लिया और उसका सब कुछ छीन लिया। सब कुछ छानकर एक डाकू ने कहा, 'अब इसे रखकर क्या करोगे! इसे मार डालो।' ऐसा कहकर वह उसे काटने गया। दूसरा डाकू बोला, 'जान से मत मारो; हाथ-पैर बाँधकर इसे यही पर छोड दिया जाय, तो फिर यह पुलिस को खबर नही दे सकेगा।' यह कहकर उसे बाँधकर डाकू लोग वही छोड़कर चले

* अचिन्त्यम् अव्यपदेश्यम् अद्वैतम्। – माण्डूक्य उपनिषद्, ७

† यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह। – तैत्तिरीय उपनिषद २। ९। १

गए।

"थोड़ी देर के बाद तीसरा डाकू लौट आया। आकर बोला, 'खेद है; तुमको बहुत कष्ट हुआ? मैं तुम्हारा बन्धन खोले देता हूँ।' बन्धन खोलने के बाद उस व्यक्ति को साथ लेकर डाकू रास्ता दिखाता हुआ चलने लगा। सरकारी रास्ते के पास आकर उसने कहा, 'इस रास्ते से चले जाओ, अब तुम सहज ही अपने घर जा सकोगे।' उस व्यक्ति ने कहा, 'यह क्या महाशय? आप भी चलिए! आपने मेरा कितना उपकार किया! हमारे घर पर चलने से हम कितने आनन्दित होंगे!' डाकू ने कहा, 'नही, मेरे वहाँ जाने पर छुटकारे का उपाय नही, पुलिस पकड़ लेगी।' यह कहकर रास्ता बताकर वह लौट गया।

"पहला डाकू तमोगुण है, जिसने कहा था, 'इसे रखकर क्या करोगे, मार डालो।' तमोगुण से विनाश होता है। दूसरा डाकू रजोगुण है; रजोगुण से मनुष्य संसार मे आबद्ध होता है; अनेकानेक कार्यो मे जकड़ जाता है। रजोगुण ईश्वर को भुला देता है। सत्त्वगुण ही केवल ईश्वर का रास्ता बताता है। दया, धर्म, भक्ति यह सब सत्त्वगुण से उत्पन्न होते हैं। सत्त्वगुण मानो अन्तिम सीढ़ी है। उसके बाद ही है छत। मनुष्य का धाम है परब्रह्म। त्रिगुणातीत न होने पर ब्रह्मज्ञान नही होता।"

आचार्य – अच्छा हुआ, ये सब बडी अच्छी बाते हुई।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – भक्त का स्वभाव क्या है, जानते हो? मैं कहूँ, तुम सुनो; तुम कहो, मैं सुनूँ। तुम लोग आचार्य हो, कितने लोगो को शिक्षा दे रहे हो। तुम लोग जहाज हो, हम तो है मछुओं की छोटी नैया। (सभी हँस पड़े।)

□□□

परिच्छेद ३२

नन्दनबागान के ब्राह्मसमाज में भक्तों के साथ

(१)

श्रीमन्दिर-दर्शन और उद्दीपन। श्रीराधा का प्रेमोन्माद

श्रीरामकृष्ण नन्दनबागान के ब्राह्मसमाज-मन्दिर में भक्तों के साथ बैठे हैं। ब्राह्मभक्तों से बातचीत कर रहे हैं। साथ में राखाल, मास्टर आदि हैं। शाम के पाँच बजे होंगे।

काशीश्वर मित्र का मकान नन्दनबागान में है। वे पहले सबजज थे। वे आदिब्राह्मसमाजवाले ब्राह्म थे। अपने ही घर पर ईश्वर की उपासना किया करते थे, और बीच बीच में भक्तों को निमन्त्रण देकर उत्सव मनाते थे। उनके देहान्त के बाद श्रीनाथ, यज्ञनाथ आदि उनके पुत्रों ने कुछ दिन तक उसी तरह उत्सव मनाए थे। वे ही श्रीरामकृष्ण को बड़े आदर से आमन्त्रित कर लाए हैं।

श्रीरामकृष्ण आकर पहले नीचे के एक कमरे में बैठे, जहाँ धीरे धीरे बहुतसे ब्राह्मभक्त सम्मिलित हुए। रवीन्द्रबाबू आदि टाकुर-परिवार के भक्त भी इस उत्सव में सम्मिलित हुए थे।

बुलाए जाने पर श्रीरामकृष्ण ऊपरी मँजले के उपासना-मन्दिर में जा विराजे। कमरे के पूर्व की ओर वेदी रची गयी है। नैऋत्य कोने में एक पियानो है। कमरे के उत्तरी हिस्से में कुछ कुर्सियाँ रखी हुई हैं। उसी के पूर्व की ओर अन्तःपुर में जाने का दरवाजा है।

शाम को उत्सव के निमित्त उपासना होगी। आदि ब्राह्मसमाज के श्री भैरव बन्द्योपाध्याय और एक-दो भक्त मिलकर वेदी पर उपासना का अनुष्ठान करेंगे।

गर्मी का मौसम है। आज बुधवार चैत्र की कृष्णा दशमी है। २ मई, १८८३। अनेक ब्राह्मभक्त नीचे के बड़े आँगन या बरामदे में इधर-उधर घूम रहे हैं। श्री जानकी घोषाल आदि दो-चार सज्जन उपासनागृह में आकर श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। — वे उनके श्रीमुख से ईश्वरी प्रसंग सुनेंगे। कमरे में प्रवेश करते ही श्रीरामकृष्ण ने वेदी के सम्मुख प्रणाम किया। फिर बैठकर राखाल मास्टर आदि से कहने लगे–

"नरेन्द्र ने मुझसे कहा था, 'समाज-मन्दिर को प्रणाम करने से क्या होता है?'

मन्दिर देखने से ईश्वर ही की याद आती है – उद्दीपना होती है। जहाँ उनकी चर्चा होती है, वहाँ उनका आविर्भाव होता है, और सारे तीर्थ वहाँ आ जाते हैं। ऐसे स्थानों के देखने से भगवान् की ही याद होती है।

"एक भक्त बबूल का पेड़ देखकर भावाविष्ट हुआ था। यही सोचकर कि इसी लकड़ी से श्रीराधाकान्त के बगीचे के लिए कुल्हाडी का बेट बनता है।

"किसी और भक्त की ऐसी गुरुभक्ति थी कि गुरुजी के मुहल्ले के एक आदमी को ही देखकर भावों से तर हो गया!

"मेघ देखकर, नील वस्त्र देखकर अथवा एक चित्र देखकर श्रीराधा को श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो जाती थी! ये सब चीजें देखकर वे 'कृष्ण कहाँ हैं?' कहकर बावली-सी हो जाती!"

घोषाल – उन्माद तो अच्छा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – यह तुम क्या कह रहे हो? यह उन्माद विषयचिन्ता का फल थोड़े ही है कि उससे बेहोशी आ जाएगी! यह अवस्था तो ईश्वर-चिन्तन से उत्पन्न होती है! क्या तुमने प्रेमोन्माद, ज्ञानोन्माद की बात नहीं सुनी?

उपाय – ईश्वर पर प्रेम तथा षड्रिपुओ की गति बदलना

एक ब्राह्मभक्त – किस उपाय से ईश्वर मिल सकता है?

श्रीरामकृष्ण – उस पर प्रेम हो, और सदा यह विचार रहे कि ईश्वर ही सत्य है, और जगत् अनित्य।

"पीपल का पेड़ ही सत्य है - फल तो दो ही दिन के लिए हैं।'

ब्राह्मभक्त – काम, क्रोध आदि रिपु हैं – क्या किया जाय?

श्रीरामकृष्ण – छः रिपुओं को ईश्वर की ओर मोड़ दो। आत्मा के साथ रमण करने की कामना हो। जो ईश्वर की राह पर बाधा पहुँचाते हैं उन पर क्रोध हो। उसे ही पाने के लिए लोभ। यदि ममता है तो उसी के लिए हो। जैसे 'मेरे राम' 'मेरे कृष्ण'। यदि अहंकार करना है तो विभीषण की तरह – 'मैंने श्रीरामचन्द्रजी को प्रणाम किया, फिर यह सिर किसी दूसरे के सामने नहीं नवाऊँगा।'

ब्राह्मभक्त – यदि ईश्वर ही सब कुछ करा रहा है तो मैं पापों के लिए उत्तरदायी नहीं हूँ?

पापकर्मों का उत्तरदायित्व

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – दुर्योधन ने वही बात कही थी – 'त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'*

---

* 'हे हृषिकेश, तुम हृदय में बैठकर जैसा करा रहे हो, वैसा ही मैं करता हूँ।'

"जिसको ठीक विश्वास है कि ईश्वर ही कर्ता हैं और मैं अकर्ता हूँ, वह पाप नहीं कर सकता। जिसने नाचना सीख लिया है उसके पैर ताल के विरुद्ध नहीं पड़ते।

"मन शुद्ध न होने से यह विश्वास ही नहीं होता कि ईश्वर है!"

श्रीरामकृष्ण उपासना-मन्दिर में एकत्रित भक्तों को देख रहे हैं और कहते हैं, "बीच बीच में इस तरह एक साथ मिलकर ईश्वर-चिन्तन करना और उनके नामगुण गाना बहुत अच्छा है।

"परन्तु संसारी लोगों का ईश्वरानुराग क्षणिक है – वह उतनी ही देर तक ठहरता है जितना तपाये हुए लोहे पर पानी का छिड़काव।"

ब्रह्मोपासना तथा श्रीरामकृष्ण

अब सन्ध्या की उपासना होगी। वह बड़ा कमरा भक्तों से भर गया। कुछ ब्राह्म महिलाएँ हाथों में संगीत-पुस्तक लिए कुर्सियों पर आ बैठीं।

पियानो और हार्मोनियम के सहारे ब्रह्मसंगीत होने लगा। गाना सुनकर श्रीरामकृष्ण के आनन्द की सीमा न रही। क्रमश: उद्बोधन, प्रार्थना और उपासना हुई। आचार्य वेदी पर बैठ वेदों से मन्त्रपाठ करने लगे।

"ॐ पिता नोऽसि, पिता नो बोधि। नमस्तेऽस्तु मा मा हिंसी:।

- तुम हमारे पिता हो, हमें सद्बुद्धि दो। तुम्हें नमस्कार है। हमें नष्ट न करो।"

ब्राह्मभक्त उनसे स्वर मिलाकर कहते हैं –

"ॐ सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म। आनन्दरूपममृतं यद्विभाति। शान्तं शिवमद्वैतम्। शुद्धमपापविद्धम्।"

फिर आचार्यों ने स्तवपाठ किया। –

"ॐ नमस्ते सते ते जगत्कारणाय। नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।।" इत्यादि।

तदन्तर उन्होंने प्रार्थना की –

"असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।

मृत्योर्माऽमृतं गमय। आविराविर्म एधि।

रुद्र यत्ते दक्षिणं मुखं तेन मां पाहि नित्यम्।*

स्तोत्रादि का पाठ सुनकर श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो रहे हैं। अब आचार्य निबन्ध पढ़ते हैं।

अहेतुक कृपासिन्धु श्रीरामकृष्ण

उपासना समाप्त हो गयी। भक्तों को खिलाने का प्रबन्ध हो रहा है। अधिकांश

* "मुझे अनित्य से नित्य को, अन्धकार से ज्योति को और मृत्यु से अमरत्व को पहुँचाओ। मेरे पास आविर्भुत होओ। हे रुद्र, अपने कारुण्यपूर्ण मुख से सदा मेरी रक्षा करो।"

ब्राह्मभक्त नीचे आँगन और बरामदे में टहल रहे हैं।

रात के नौ बज गए। श्रीरामकृष्ण को दक्षिणेश्वर लौट जाना है। घर के मालिक निमन्त्रित गृही भक्तों की संवर्धना में इतने व्यस्त हैं कि श्रीरामकृष्ण की कोई खबर ही नहीं ले सकते।

श्रीरामकृष्ण (राखाल आदि से) – अरे, कोई बुलाता भी तो नहीं।

राखाल – (क्रोध में) – महाराज, आइए, हम दक्षिणेश्वर चलें।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – अरे ठहर। गाड़ी का किराया – तीन रुपये – दो आने – कौन देगा? चिढ़ने से ही काम न चलेगा! पैसे का नाम नहीं, और थोथी झाँझ! फिर इतनी रात को खाऊँ कहाँ?

बड़ी देर में सुना गया कि पत्तलें बिछी हैं। सब भक्त एक साथ बुलाए गए। उस भीड़ में श्रीरामकृष्ण भी राखाल आदि के साथ दूसरे मँजले में भोजन करने चले। भीड़ में बैठने की जगह नहीं मिलती थी। बड़ी मुश्किल से श्रीरामकृष्ण एक तरफ बैठाये गए। स्थान भद्दा था। एक रसोइया ठकुराइन ने भाजी परोसी। श्रीरामकृष्ण को उसे खाने की रुचि नहीं हुई। उन्होंने नमक के सहारे एक आध पूड़ी और थोड़ीसी मिठाई खायी।

आप दयासागर हैं। गृहस्वामी लड़के हैं। वे आपकी पूजा करना नहीं जानते तो क्या आप उनसे नाराज होंगे? अगर आप बिना खाए चले जायें तो उनका अमंगल होगा। फिर उन्होंने तो ईश्वर के ही उद्देश्य से इतना आयोजन किया।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी का किराया कौन दे? उस भीड़ में गृहस्वामियों का पता ही नहीं चलता था। इस किराये के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण ने बाद में विनोद करते हुए भक्तों से कहा था –

"गाड़ी का किराया माँगने गया! पहले तो उसे भगा ही दिया। फिर बड़ी कोशिश से तीन रुपये मिले, पर दो आने नहीं दिए। कहा कि उसी से हो जायगा!"

परिच्छेद ३३

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द में

(१)

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ता कँसारीपाड़ा की हरिभक्ति-प्रदायिना सभा मे शुभागमन किया है। रविवार, वैशाख शुक्ला सप्तमी, संक्रान्ति, १३ मई १८८३ ई। आज सभा मे वार्षिकोत्सव हो रहा है। मनोहर सॉई का कीर्तन हो रहा है।

श्रीराधाकृष्ण-प्रेम का गाना हो रहा है। सखियॉ श्रीमती राधिका से कह रही है, 'तूने मान (प्रणयकोप) क्यो किया? तो क्या तू कृष्ण का सुख नही चाहती?' श्रीमती कहती है, 'उनके चन्द्रावली के कुंज मे जाने क लिए मैने कोप नही किया। वहॉ उन्हे क्यो जाना चाहिए? चन्द्रावली तो सेवा नही जानती।'

(२)

दूसरे रविवार को (२०-५-८३) रामचन्द्र के मकान पर फिर कीर्तन हो रहा है। श्रीरामकृष्ण आए है। वैशाख शुक्ला चतुर्दशी। श्रीमती राधिका श्रीकृष्ण के विरह मे बहुत-कुछ कह रही है – "जब मै बालिका थी उसी समय से श्याम को देखना चाहती थी। सखि, दिन गिनते गिनते नाखून घिस गये। देखो, उन्होने जो माला दी थी वह सूख गयी है, फिर भी मैने उसे नही फेका। कृष्णचन्द्र का उदय कहॉ हुआ? वह चन्द्र मान (प्रणयकोप) रूपी राहू के भय से कही चला तो नही गया! हाय! उस कृष्णमेघ का कब दर्शन होगा? क्या फिर दर्शन होगा! प्रिय, प्राण खोलकर तुम्हे कभी भी न देख सकी! एक तो कुल दो ही ऑखे, उसमे फिर पलक, उसमें फिर ऑसुओ की धारा। उनके सिर पर मोर का पंख मानो स्थिर बिजली के समान है। मोरगण उस मेघ को देख पंख खोलकर नृत्य करते थे।

"सखि! यह प्राण तो नही रहेगा – मेरी देह तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना और मेरे शरीर पर कृष्णनाम लिख देना।'

श्रीरामकृष्ण कह रहे है, "वे और उनका नाम अभिन्न है। इसीलिए श्रीमती राधिका इस प्रकार कह रही है। जो राम वही नाम है।"

श्रीरामकृष्ण भावमग्न होकर यह कीर्तन का गाना सुन रहे है। गोस्वामी कीर्तनिया इन गानो को गा रहे है। अगले रविवार को फिर दक्षिणेश्वर मन्दिर मे वही गाना होगा। उसके बाद के शनिवार को फिर अधर के मकान पर वही कीर्तन होगा।

□□□

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में खड़े खड़े भक्तों के साथ बातचीत कर रहे है। रविवार, वैशाख कृष्णा पंचमी, २७ मई १८८३ ई.। दिन के नौ बजे का समय होगा। भक्तगण धीरे धीरे आकर उपस्थित हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि भक्तों के प्रति) – विद्वेषभाव अच्छा नहीं, – शाक्त, वैष्णव, वेदान्ती ये सब झगड़ा करते हैं, यह ठीक नहीं। पद्मलोचन बर्दवान के सभापण्डित थे। सभा में विचार हो रहा था – 'शिव बड़े हैं या ब्रह्मा।' पद्मलोचन ने बहुत सुन्दर बात कही थी, – 'मैं नही जानता, मुझसे न शिव का परिचय है, और न ब्रह्मा का!' (सभी हँसने लगे।)

"व्याकुलता रहने पर सभी पथों से उन्हें प्राप्त किया जाता है, परन्तु निष्ठा रहनी चाहिए। निष्ठा-भक्ति का दूसरा नाम है अव्यभिचारिणी भक्ति, – जिस प्रकार एक शाखावाला वृक्ष सीधा ऊपर की ओर जाता है। व्यभिचारिणी भक्ति – जैसे पाच शाखावाला वृक्ष। गोपियों की ऐसी निष्ठा थी कि वृन्दावन के पीताम्बर और मोहनचूड़ावाले गोपालकृष्ण के अतिरिक्त और किसी से प्रेम न करेंगी। मथुरा में जब राजवेष में सिर पर पगड़ी पहने कृष्ण का देखा तो उन्होंने घूँघट की आड़ में मुँह छिपा लिया और कहा, 'वह कौन है? क्या इसके साथ बात करके हम द्विचारिणी बनेंगी?'

"स्त्री जो स्वामी की सेवा करती है वह भी निष्ठा-भक्ति है। देवर, जेठ को खिलाती है, पैर धोने को जल देती है, परन्तु स्वामी के साथ दूसरा ही सम्बन्ध रहता है। इसी प्रकार अपने धर्म में भी निष्ठा हो सकती है। इसीलिए दूसरे धर्म से घृणा नहीं करनी चाहिए, बल्कि उनके साथ मीठा व्यवहार करना चाहिए।"

श्रीरामकृष्ण द्वारा जगन्माता की पूजा तथा आत्मपूजा

श्रीरामकृष्ण गंगास्नान करके काली के दर्शन करने गए हैं। साथ में मास्टर हैं। श्रीरामकृष्ण पूजा के आसन पर बैठकर माँ के चरणकमलों पर फूल चढ़ा रहे हैं; बीच बीच में अपने सिर पर भी चढ़ा रहे हैं और ध्यान कर रहे हैं।

बहुत समय के बाद श्रीरामकृष्ण आसन से उठे। भाव में विभोर होकर नृत्य कर रहे हैं और मुँह से माँ का नाम ले रहे हैं। कह रहे हैं, 'माँ विपद्‌नाशिनी।' देह धारण करने से

ही दुःख, विपदाएँ होती है, सम्भव है इसीलिए जीव को इस 'विपद्नाशिनी' महामन्त्र का उच्चारण कर कातर होकर पुकारना सिखा रहे है।

अब श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के पश्चिमवाले बरामदे मे आकर बैठै है। अभी तक भाव का आवेश है। पास है राखाल, मास्टर, नकुड़ वैष्णव आदि। नकुड वैष्णव को श्रीरामकृष्ण अट्ठाईस-उनतीस वर्षो से जानते है। जिस समय वे पहले-पहल कलकत्ते मे आकर झामापुकुर मे रहे थे और घर घर में जाकर पूजा करते थे, उस समय कभी कभी नकुड़ वैष्णव की दुकान मे जाकर बैठते थे और आनन्द मनात थे। आजकल पानिहाटी मे राघव पण्डित के महोत्सव के उपलक्ष्य मे नकुड़ बाबाजी आकर प्राय: प्रतिवर्ष श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते है। नकुड़ वैष्णव भक्त थे। कभी कभी वे भी महोत्सव का भण्डारा देते थे। नकुड़ मास्टर के पड़ोसी थे।

श्रीगमकृष्ण जिस समय झामापुकुर मे थे, उस समय गोविन्द चटर्जी के मकान मे रहते थे। नकुड़ ने मास्टर को वह पुराना मकान दिखाया था।

जगन्माता के नामकीर्तन के आनन्द में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश मे गीत गा रहे हैं, जिनका भावार्थ यह है :–

(१) "हे महाकाल की मनोमोहिनी सदानन्दमयी काली, माँ, तुम अपने आनन्द मे आप ही नाचती हो और आप ही ताली बजाती हो। हे आदिभूते सनातनि, शून्यरूपे शशिभालिके, जिस समय ब्रह्माण्ड न था, उस समय तुझे मुण्डमाला कहाँ मिली? एकमात्र तुम यन्त्री हो, हम सब तुम्हारे निर्देश पर चलते है। माँ, तुम जैसा कराती हो, वैसा ही करते है, जैसा कहलाती हो वैसा ही कहते है। हे निर्गुणे, माँ, कमलाकान्त गाली देकर कहता है कि तुझ सर्वनाशिनी ने खड़ग धारण करके धर्म और अधर्म दोनो को नष्ट कर दिया है!"

(२) "हे तारा, तुम ही मेरी माँ हो। तुम त्रिगुणधरा परात्परा हो। मैं जानता हूँ, माँ, कि तुम दीनों पर दया करनेवाली और विपत्ति मे दुःख को हरण करनेवाली हो। तुम सन्ध्या, तुम गायत्री, तुम जगद्धात्री हो। माँ, तुम असहाय को बचानेवाली तथा सदाशिव के मन को हरनेवाली हो। माँ, तुम जल में, थल में और आदिमूल मे विराजमान हो। तुम साकार रूप मे सर्व घट में विद्यमान होते हुए भी निराकार हो।"

श्रीरामकृष्ण ने 'माँ' के और भी कुछ गीत गाये। फिर भक्तों से कह रहे हैं, "संसारियों के सामने केवल दुःख की बात ठीक नही। आनन्द चाहिए। जिनको अन्न का अभाव है, वे दो दिन उपवास भी कर सकते हैं, परन्तु खाने में थोड़ा विलम्ब होने पर जिन्हें दुःख होता है उनके पास केवल रोने की बातें, दुःख की बातें करना ठीक नहीं।

"वैष्णवचरण कहा करता था, 'केवल, पाप, पाप यह सब क्या है? आनन्द करो।' "

श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद विश्राम भी न कर सके थे कि मनोहर साँई गोस्वामी आ पधारे।

श्रीराधा के भाव में महाभावमय श्रीरामकृष्ण। क्या श्रीरामकृष्ण गौरांग है?

गोस्वामी पूर्वराग का कीर्तन गा रहे है। थोड़ा सुनकर ही श्रीरामकृष्ण राधा के भाव में भावाविष्ट हो गए।

पहले ही गौरचन्द्रिका-कीर्तन। "हथेली पर हाथ – चिन्तित गोरा – आज क्यों चिन्तित है? सम्भवत: राधा के भाव मे भावित हुए है।"

गोस्वामी फिर गा रहे है -

(भावार्थ) – "घड़ी मे सौ बार, पल पल मे घर से बाहर आती और फिर भीतर जाती है। कही पर भी मन नही लग रहा है, जोर जोर से श्वास चल रहा है, बार बार कदम्ब-कानन की ओर ताकती है। राधे, ऐसा क्यो हुआ?"

संगीत की इसी पंक्ति को सुन श्रीरामकृष्ण की महाभाव की स्थिति हुई है! उन्होंने अपना कमीज को फाड़कर फेक दिया।

कीर्तनकार फिर गा रहे है – 'तेरा अंग शीतल है ..'

कीर्तनकार का संगीत सुनते सुनते महाभाव मे श्रीरामकृष्ण काँप रहे है। केदार को देखकर कीर्तन के स्वर मे कह रहे है, "प्राणनाथ, हृदयवल्लभ, तुम लोग मुझे कृष्ण ला दो, यही तो मित्रता का काम है, या तो उन्हे ला दो और नही तो मुझे ले चलो, तुम लोगो की मै चिरकाल के लिए दासी बनी रहूँगी।"

गोस्वामी कीर्तनिया श्रीरामकृष्ण के महाभाव की स्थिति को देखकर मुग्ध हुए है। वे हाथ जोड़कर कह रहे है, "मेरी विषयबुद्धि मिटा दीजिए।"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – तुम उस साधु के सदृश हो जिसने पहले रहने की जगह ठीक कर, फिर शहर देखना शुरू किया। तुम इतने बड़े रसिक हो, तुम्हारे भीतर से इतना मीठा रस निकल रहा है।

गोस्वामी – प्रभो, मै चीनी का बोझ ढोनेवाला बैल हूँ, चीनी का आस्वादन कहाँ कर सका?

फिर कीर्तन होने लगा। कीर्तनकार श्रीमती राधिका की अवस्था का वर्णन कर रहे है – "कोकिलकुल कुर्वंति कलनादम्।"

कोकिल का कलनाद श्रीमती को वज्रध्वनि जैसा लग रहा है। इसलिए वे जैमिनी का नाम उच्चारण कर रही है और कह रही है, 'सखि, कृष्ण के विरह मे यह प्राण नही रहेगा, इस देह को तमाल वृक्ष की शाखा पर रख देना।'

गोस्वामी ने राधाश्याम का मिलन गाकर कीर्तन समाप्त किया।

□□□

परिच्छेद ३५

भक्तों के मकान पर

(१)

बलराम के मकान पर श्रीरामकृष्ण। नरलीला का दर्शन और आस्वादन

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर से कलकत्ता आ रहे हैं। बलराम के मकान से होकर अधर के मकान पर और उसके बाद राम के मकान पर जाएँगे। अधर के मकान में मनोहर साँई का कीर्तन होगा। राम के घर पर कथा होगी। शनिवार, वैशाख कृष्णा द्वादशी, २ जून १८८३ ई.।

श्रीरामकृष्ण गाड़ी में आते आते राखाल, मास्टर आदि भक्तों से कह रहे हैं, "देखो, उन पर प्रेम हो जाने पर पाप आदि सब भाग जाते हैं, जैसे धूप से मैदान के तालाब का जल सूख जाता है।

संन्यासी और गृहस्थ – दोनों को विषयासक्ति छोड़नी होगी।

"विषय की वासना तथा कामिनी-कांचन पर मोह रखने से कुछ नहीं होता। यदि विषयासक्ति रहे तो संन्यास लेने पर भी कुछ नहीं होता – जैसे थूक को फेंककर फिर चाट लेना।"

थोड़ी देर बाद गाड़ी में श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "ब्राह्मसमाजी लोग साकार को नहीं मानते। (हँसकर) नरेन्द्र कहता है, 'पुत्तलिका!' फिर कहता है, 'वे अभी तक कालीमन्दिर में जाते हैं।' "

श्रीरामकृष्ण बलराम के घर पर आए हैं। वे एकाएक भावाविष्ट हो गए हैं। सम्भव हैं, देख रहे हैं, ईश्वर ही जीव तथा जगत् बने हुए हैं, ईश्वर ही मनुष्य बनकर घूम रहे हैं। जगन्माता से कह रहे हैं, "माँ, यह क्या दिखा रही हो? रुक जाओ; यह सब क्या दिखा रही हो? राखाल आदि के द्वारा क्या क्या दिखा रही हो, माँ! रूप आदि सब उड़ गया। अच्छा माँ, मनुष्य तो केवल ऊपर का ढाँचा ही है न? चैतन्य तुम्हारा ही है।

"माँ, आजकल के ब्राह्मसमाजी मीठा रस नहीं पाते! आँखें सूखी, मुँह सूखा! प्रेमभक्ति न होने से कुछ न हुआ!

"माँ, तुमसे कहा था, एक व्यक्ति को साथी बना दो, मेरे जैसे किसी को! इसीलिए राखाल को दिया है न?"

अधर के मकान पर हरिसंकीर्तन में

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर आए है। मनोहर साँई के कीर्तन की तैयारी हो रही है।

श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए अधर के बैठकघर मे अनेक भक्त तथा पड़ोसी आए है। सभी की इच्छा है कि श्रीरामकृष्ण कुछ कहे।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो के प्रति) – संसार और मुक्ति दोनो ही ईश्वर की इच्छा पर निर्भर है। उन्होने ही संसार मे अज्ञान बनाकर रखा है। फिर जिस समय वे अपनी इच्छा से पुकारेगे, उसी समय मुक्ति होगी। लड़का खेलने गया है, खाने के समय माँ बुला लेती है।

"जिस समय वे मुक्ति देगे उस समय वे साधुसंग करा देते है और फिर अपने को पाने के लिए व्याकुलता उत्पन्न कर देते है।"

पड़ोसी – महाराज, किस प्रकार व्याकुलता होती हैं?

श्रीरामकृष्ण – नौकरी छूट जाने पर किरानी को जिस प्रकार व्याकुलता होती है! वह जिस प्रकार रोज आफिस आफिस मे घूमता है और पूछता रहता है, 'साहब, कोई नौकरी की जगह खाली हुई?' व्याकुलता होने पर मनुष्य छटपटाता है – कैसे ईश्वर को पाऊँ!

"और यदि मूँछों पर हाथ फेरते हुए पैर पर पैर धरकर बैठे बैठे पान चबा रहा है – कोई चिन्ता नही, तो ऐसी स्थिति मे ईश्वर की प्राप्ति नही होती!"

पड़ोसी – साधुसंग होने पर क्या व्याकुलता हो सकती है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हो सकती है, परन्तु पाखण्डियो को नही होती। साधु का कमण्डल चारो धाम होकर आने पर भी कडुए का कडुआ ही रह जाता है!

अब कीर्तन शुरू हुआ है; गोस्वामीजी कलह-संवाद गा रहे है –

"श्रीमती कह रही है, 'सखि! प्राण जाता है, कृष्ण को ला दे!'

"सखी – 'राधे, कृष्णरूपी मेघ बरसता ही था; परन्तु तूने मान (प्रेमकोप –) रूपी आँधी से उस मेघ को उड़ा दिया। तू कृष्ण के सुख में सुखी नही है; नहीं तो मान क्यों करती?'

"श्रीमती – 'सखि, मान तो मेरा नही है। जिसका मान है उसी के साथ चला गया है।'

"ललिता श्रीमती की ओर से कुछ कह रही है।" 'सबने मिलकर प्रीत की ...

अब कीर्तन में गोस्वामी कह रहे हैं कि सखियाँ राधाकुण्ड के पास श्रीकृष्ण की खोज करने लगीं। उसके बाद यमुनातट पर श्रीकृष्ण का दर्शन, साथ में श्रीदाम, सुदाम, मधुमंगल। वृन्दा के साथ श्रीकृष्ण का वार्तालाप, श्रीकृष्ण का योगी का-सा भेस, जटिला-संवाद, राधा का भिक्षादान, राधा का हाथ देख योगी द्वारा गणना तथा संकट की भविष्यवाणी। कात्यायनी की पूजा में जाने की तैयारी।

कीर्तन समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – गोपियों ने कात्यायनी की पूजा की थी। सभी उस महामाया आद्याशक्ति के अधीन हैं। अवतार आदि तक उस माया का आश्रय लेकर ही लीला करते हैं; इसीलिए वे आद्याशक्ति की पूजा करते हैं। देखो न, राम सीता के लिए कितने रोये है। पंचभूतों के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रोते है।

"हिरण्याक्ष का वध कर वराह-अवतार कच्चे-बच्चे लेकर रह रहे थे। आत्मविस्मृत होकर उन्हें स्तनपान करा रहे थे! देवताओ ने परामर्श करके शिवजी को भेज दिया। शिवजी ने त्रिशूल के आघात से वराह का शरीर विनष्ट कर दिया; तब वे स्वधाम में पधारे। शिवजी ने पूछा था, 'तुम आत्मविस्मृत क्यों हो गये हो?' इस पर उन्होंने कहा था, 'मै बहुत अच्छा हूँ'!"

अधर के मकान से होकर अब श्रीरामकृष्ण राम के मकान पर जा रहे हैं।

(२)

रामचन्द्र दत्त के मकान पर

श्रीरामकृष्णदेव सिमुलिया मुहल्ले की मधु राय की गली में रामबाबू का मकान है। रामचन्द्र दत्त श्री रामकृष्णदेव के विशिष्ट भक्त है। वे डाक्टरी की शिक्षा प्राप्त कर मेडिकल कालेज में रसायनशास्त्र के सहकारी परीक्षक नियुक्त हुए थे और 'साइन्स असोसिएशन' में रसायनशास्त्र के अध्यापक भी थे। उन्होंने स्वोपार्जित धन से यह मकान बनवाया था। इस मकान में श्रीरामकृष्णदेव कुछ एक बार आये थे, इसीलिए यह मकान भक्तों के लिए आज तीर्थ के समान महान् पवित्र है। रामचन्द्र गुरुदेव की कृपा लाभ कर ज्ञानपूर्वक संसारधर्म पालन करने की चेष्टा करते थे। श्रीरामकृष्णदेव मुक्तकण्ठ से रामबाबू की प्रशंसा करते और कहते थे, – 'राम अपने मकान में भक्तों को स्थान देता है, कितनी सेवा करता है, उसका मकान भक्तों का एक अड्डा है।' नित्यगोपाल, लाटू, तारक आदि एक प्रकार से रामचन्द्र के घर के आदमी हो गये थे। इन्होंने उनके साथ बहुत दिनों तक एकत्र वास किया था। इसके सिवाय उनके मकान मे प्रतिदिन नारायण की पूजा और सेवा होती थी।

रामचन्द्र श्रीरामकृष्ण को वैशाख की पूर्णिमा को, जिस समय हिण्डोले का श्रृंगार होता है, इस मकान मे उनकी पूजा करने के लिए सर्वप्रथम ले आये थे। प्राय: प्रतिवर्ष आज के दिन वे उनका ले जाकर भक्तो से सम्मिलित हो महोत्सव मनाया करते थे। रामचन्द्र के प्यारे शिष्यवृन्द अब भी उस दिन उत्सव मनाते है।

आज रामचन्द्र के मकान में उत्सव है। श्रीरामकृष्ण आयेगे। आपके लिए रामचन्द्र ने श्रीमद्भगवत की कथा का प्रबन्ध किया है। छोटासा आँगन है, परन्तु उसी मे कैसा सुन्दर सजाया है। वेदी तैयार हुई है, उस पर कथक महोदय बैठे है। राजा हरिश्चन्द्र की कथा हो रही है। इसी समय बलराम और अधर के मकान से होकर श्रीरामकृष्ण यहाँ आ पहुँचे। रामचन्द्र ने आगे बढकर उनकी चरणरज को मस्तक मे धारण किया और वेदी के संम्मुख उनके लिए निदिष्ट आसन पर उन्हे लाकर बैठाया। चारो ओर भक्त और पास ही मास्टर बेठे है।

राजा हरिश्चन्द्र की कथा होने लगी –

"विश्वामित्र बोले, 'महाराज! तुमने मुझे ससागर पृथ्वी दान कर दी है, इसलिए अब इसके भीतर तुम्हारा स्थान नही है, किन्तु तुम काशीधाम मे रह सकते हो, वह महादेव का स्थान है। चलो, तुम्हे और तुम्हारी सहधर्मिणी शैब्या और तुम्हारे पुत्र को वहाँ पहुँचा दे। वही पर जाकर तुम प्रबन्ध करके मुझे दक्षिणा दे देना।' यह कहकर राजा को साथ ले विश्वामित्र काशीधाम की ओर चले। काशी मे आकर उन लोगो ने विश्वेश्वर के दर्शन किये।"

विश्वेश्वर-दर्शन की बात होते ही श्रीरामकृष्ण एकदम भावाविष्ट हो अस्पष्ट रूप से 'शिव' 'शिव' उच्चारण कर रहे है।

कथक महोदय कथा कहते गए –

"राजा हरिश्चन्द्र दक्षिणा नही दे पाए, इसलिए उन्होंने रानी शैब्या को बेच दिया। पुत्र रोहिताश्व भी शैब्या के साथ चला गया।"

कथक महोदय ने शेव्या के ब्राह्मण मालिक के यहाँ रोहिताश्व के फूल तोड़ने और उसे साँप के द्वारा काटे जाने की कथा कही। –

"उस अन्धकाराच्छन्न कालरात्रि मे सन्तान की मृत्यु हो गयी। उसका अन्तिम संस्कार करने के लिए कोई नही था। गृहस्वामी वृद्ध ब्राह्मण शय्या त्यागकर नही उठे। पुत्र के शव को गोद में लिए शैब्या अकेली ही श्मशान की ओर चल पड़ी। बीच बीच मे बादल गरज रहे थे और बिजली कड़क रही थी। एक एक बार घोर अन्धकार को चीरती हुई बिजली चमक दिखा जाती थी। भयभीत, शोकाकुल शैब्या रोती हुई चली जा रही थी।"

"पत्नी और पुत्र को बेचने पर भी दक्षिणा की राशि पूरी न होने पायी; इसलिए हरिश्चन्द्र ने स्वयं को एक चाण्डाल को बेच डाला था। वे श्मशान मे चाण्डाल बने बैठे

हैं – कर वसूल करने पर ही अग्निसंस्कार करने देंगे। कितने ही शव जल रहे हैं, कितने जलकर भस्मीभूत हो गए हैं। घोर अँधेरी रात में श्मशान कितना भयावना दिखायी दे रहा है! शैब्या उस स्थान पर आकर विलाप करने लगी।"

उस करुण क्रन्दन को सुनकर, ऐसा कौन है जो व्याकुल न हो, जिसका हृदय विदीर्ण न हो? सभी श्रोतागण रो पड़े।

श्रीरामकृष्ण क्या कर रहे हैं? वे स्थिर होकर कथा सुन रहे हैं – बिलकुल स्थिर हैं! केवल एक बार आँख के कोने में एक बूँद आँसू छलक उठा पर आपने उसे पोंछ डाला। आपने अधीर होकर रुदन क्यों नहीं किया?

अन्त में रोहिताश्व को जीवनदान, सब लोगों का विश्वेश्वरदर्शन और हरिश्चन्द्र का पुन: राज्यलाभ वर्णन कर कथक महोदय ने कथा समाप्त की। श्रीरामकृष्ण बहुत समय तक वेदी के सम्मुख बैठकर कथा सुनते रहे। कथा समाप्त होने पर बाहर के कमरे में जाकर बैठे। चारों ओर भक्तमण्डली बैठी है, कथक भी पास आकर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण कथक से बोले, "कुछ उद्धवसंवाद कहो।"

मुक्ति और भक्ति – गोपीप्रेम

कथक कहने लगे, "जब उद्धव वृन्दावन आए, गोपियाँ और ग्वालबाल उनके दर्शन के लिए व्याकुल हो दौड़कर उनके पास गए। सभी पूछने लगे, 'श्रीकृष्ण कैसे हैं? क्या वे हम लोगों को भूल गए? क्या वे कभी हम लोगों का स्मरण करते हैं?' यह कहकर कोई रोने लगा, कोई उन्हें साथ ले वृन्दावन के अनेक स्थानों को दिखलाने और कहने लगा, 'इस स्थान में श्रीकृष्ण ने गोवर्धन धारण किया था; यहाँ पर धेनुकासुर और वहाँ पर शकटासुर का वध किया था; इस मैदान में गौओं को चराते थे; इसी यमुना के तट पर वे विहार करते थे; यहाँ पर ग्वालबालों सहित क्रीड़ा करते थे; इस कुंज में गोपियों के साथ वार्तालाप करते थे।' उद्धव बोले, 'आप लोग कृष्ण के लिए इतने व्याकुल क्यों हो रहे हैं? वे तो सर्वभूतों में व्याप्त हैं। वे साक्षात् नारायण हैं! उनके सिवाय और कुछ नहीं है।' गोपियों ने कहा, 'हम यह सब नहीं समझ सकतीं। लिखना पढ़ना हमें नहीं मालूम। हम तो केवल अपने वृन्दावनविहारी कृष्ण को जानती हैं, जो यहाँ बहुत-कुछ लीला कर गए हैं।' उद्धव फिर बोले, 'वे साक्षात् नारायण हैं, उनकी चिन्ता करने से पुन: संसार में नहीं आना पड़ता, जीव मुक्त हो जाता है।' गोपियों ने कहा, 'हम मुक्ति आदि – ये सब बातें नहीं समझतीं। हम तो अपने प्राणवल्लभ कृष्ण को देखना चाहती हैं।' "

श्रीरामकृष्णदेव यह सब ध्यान से सुनते रहे और भाव में मग्न हो बोले, "गोपियों का कहना सत्य है।" यह कहकर वे अपने मधुर कण्ठ से गाने लगे। गाने का आशय यह है :–

"मैं मुक्ति देने में कातर नहीं होता, पर शुद्धा भक्ति देने में कातर होता हूँ। जो शुद्धा भक्ति प्राप्त कर लेते हैं वे सब से आगे हैं। वे पूज्य होकर त्रिलोकजयी होते हैं। सुनो चन्द्रावलि, भक्ति की बात करता हूँ – मुक्ति तो मिलती है, पर भक्ति कहाँ मिलती है? भक्ति के कारण मैं पाताल में बलिराजा का द्वारपाल होकर रहता हूँ। शुद्धा भक्ति एक वृन्दावन में है जिसे गोप-गोपियों के सिवाय दूसरा कोई नहीं जानता। भक्ति के कारण मैं नन्द के भवन में उन्हें पिता जानकर उनके जूते सिर पर ले चलता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण (कथक के प्रति) – गोपियों की भक्ति थी प्रेमाभक्ति – अव्यभिचारिणी भक्ति – निष्ठा-भक्ति। व्यभिचारिणी भक्ति किसे कहते हैं, जानते हो? ज्ञानमिश्रित भक्ति। जैसे कृष्ण ही सब हुए हैं – वे ही परब्रह्म हैं, वे ही राम, वे ही शिव, वे ही शक्ति हैं। पर प्रेमाभक्ति में उस ज्ञान का संयोग नहीं है। द्वारका में आकर हनुमान ने कहा, 'सीताराम के दर्शन करूँगा।' भगवान् रुक्मिणी से बोले, 'तुम सीता बनकर बैठो, अन्यथा हनुमान से रक्षा नहीं है।' पाण्डवों ने जब राजसूय यज्ञ किया, उस समय देश देश के नरेश युधिष्ठिर को सिंहासन पर बिठाकर प्रणाम करने लगे। विभीषण बोले, 'मैं एक नारायण को प्रणाम करूँगा, और दूसरे को नही!' यह सुनते ही भगवान् स्वयं भूमिष्ठ होकर युधिष्ठिर को प्रणाम करने लगे। तब विभीषण ने राजमुकुट धारण किए हुए भी युधिष्ठिर को साष्टांग प्रणाम किया।

"किस प्रकार, जानते हो? – जैसे घर की बहू अपने देवर, जेठ, ससुर और स्वामी सब की सेवा करती है। पैर धोने के लिए जल देती है, अँगौछा देती है, पीढ़ा रख देती है, परन्तु दूसरी तरह का सम्बन्ध एकमात्र स्वामी ही के साथ रहता है।

"इस प्रेमाभक्ति मे दो चीजे है। 'अहंता' और 'ममता'। यशोदा सोचती थीं, 'गोपाल को मैं न देखूँगी तो और कौन देखेगा? मेरे देखभाल न करने पर उसे रोग-व्याधि हो सकती है।' यशोदा नही जानती थी कि कृष्ण स्वयं भगवान् हैं। और 'ममता' – 'मेरा कृष्ण, मेरा गोपाल'। उद्धव बोले, 'माँ, तुम्हारे कृष्ण साक्षात् नारायण हैं, वे संसार के चिन्तामणि हैं। वे सामान्य वस्तु नहीं हैं।' यशोदा कहने लगी, 'अरे तुम्हारे चिन्तामणि कौन! मेरा गोपाल कैसा है, मैं पूछती हूँ। चिन्तामणि नहीं, मेरा गोपाल।'

"गोपियों की निष्ठा कैसी थी! मथुरा में द्वारपाल से अनुनयविनय कर वे सभा में आयी। द्वारपाल उन लोगों को कृष्ण के पास ले गया। कृष्ण को देख गोपियाँ मुख नीचा कर परस्पर कहने लगीं, 'यह पगड़ी बाँधे राजवेश में कौन है? इसके साथ वार्तालाप कर क्या अन्त में हम द्विचारिणी बनेंगी? हमारे मोहन मोरमुकुट-पीताम्बरधारी प्राणवल्लभ कहाँ हैं?' देखते हो इन लोगों की निष्ठा कैसी है! वृन्दावन का भाव ही दूसरा है। सुना है, द्वारका की तरफ लोग पार्थसखा श्रीकृष्ण की पूजा करते है – वे राधा को नहीं चाहते!"

गोपियों की निष्ठा-ज्ञानभक्ति और प्रेमाभक्ति

भक्त – कौन श्रेष्ठ है, ज्ञानमिश्रित भक्ति या प्रेमाभक्ति?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर के प्रति एकान्त अनुराग हुए बिना प्रेमाभक्ति का उदय नहीं होता। और 'ममत्व'-ज्ञान अर्थात् भगवान् मेरे अपने हैं, यह ज्ञान। तीन मित्र जंगल में जा रहे थे, सहसा एक बाघ सामने आ खड़ा हुआ! एक आदमी बोला, 'भाई, हम सब आज मरे।' दूसरा आदमी बोला, 'क्यों, मरेंगे क्यों? आओ, ईश्वर का स्मरण करें।' तीसरा आदमी बोला, 'नहीं, ईश्वर को कष्ट देकर क्या होगा? आओ, इसी पेड़ पर चढ़कर बैठें।'

"जिस आदमी ने कहा, 'हम लोग मरे' वह नहीं जानता था कि ईश्वर रक्षा करनेवाले हैं। जिसने कहा, 'आओ, ईश्वर का स्मरण करें' वह ज्ञानी था, वह जानता था कि ईश्वर सृष्टि, स्थिति, प्रलय के मूल कारण हैं। और जिसने कहा, 'भगवान् को कष्ट देकर क्या होगा, आओ, पेड़ पर चढ़ बैठें', उसके भीतर प्रेम उत्पन्न हुआ था – स्नेह-ममता का भाव आया था। तो प्रेम का स्वभाव ही यह है कि प्रेमी अपने को बड़ा समझता है और प्रेमास्पद को छोटा। वह देखता है, कहीं उसे कोई कष्ट न हो। उसकी यही इच्छा होती है कि जिससे प्रेम करें उसके पैर में एक काँटा भी न चुभे।"

श्रीरामकृष्णदेव तथा भक्तों को ऊपर ले जाकर अनेक प्रकार के मिष्टान्न आदि से रामबाबू ने उनकी सेवा की। भक्तों ने बड़े आनन्द से प्रसाद पाया।

□□□

परिच्छेद ३६

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

(१)

मनुष्य में ईश्वरदर्शन। नरेन्द्र से प्रथम भेंट

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में अपने कमरे में बैठे हैं। भक्तगण उनके दर्शन के लिए आ रहे हैं। आज ज्येष्ठ मास की कृष्णा चतुर्दशी, सावित्री-चतुर्दशी व्रत का दिन है। सोमवार, ४ जून, १८८३ ई.। आज रात को अमावस्या तिथि में फलहारिणी कालीपूजा होगी।

मास्टर कल रविवार से आए हैं। कल रात को कात्यायनीपूजा हुई थी। श्रीरामकृष्ण प्रेमाविष्ट हो नाट-मन्दिर में माता के सामने खड़े हो गाते हुए कह रहे थे, "माता, तुम्हीं व्रज की कात्यायनी हो। तुम्हीं स्वर्ग हो, तुम्हीं मर्त्य हो, तुम्हीं पाताल भी हो। तुम्हीं से हरि, ब्रह्मा और द्वादश गोपाल पैदा हुए हैं। दशमहाविद्याएँ और दशावतार भी तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं। अब की बार तुम्हें किसी प्रकार मुझे पार करना होगा।"

श्रीरामकृष्ण गा रहे थे और माँ से बातें कर रहे थे। प्रेम से बिलकुल मतवाले हो गए थे। मन्दिर से वे अपने कमरे में आकर तख्त पर बैठे।

रात के दूसरे पहर तक माँ का नामकीर्तन होता रहा।

सोमवार को सबेरे के समय बलराम और कुछ दूसरे भक्त आए। फलहारिणी कालीपूजा के उपलक्ष्य में त्रैलोक्यबाबू आदि भी सपरिवार आए हैं। सबेरे नौ बजे का समय है। श्रीरामकृष्णदेव प्रसन्नमुख, गंगा की ओर के गोल बरामदे में बैठे हैं। पास ही मास्टर बैठे हैं। राखाल लेटे हैं। आनन्द में श्रीरामकृष्ण ने राखाल का मस्तक अपनी गोद में उठा लिया है। आज कुछ दिनों से आप राखाल को साक्षात् गोपाल के रूप में देखते हैं।

त्रैलोक्य सामने से माँ काली के दर्शन को जा रहे हैं। साथ में नौकर उनके सिर पर छाता लगाये जा रहा है। श्रीरामकृष्ण राखाल से बोले, 'उठ रे, उठ'

श्रीरामकृष्ण बैठे हैं। त्रैलोक्य ने आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण (त्रैलोक्य से) – कल 'यात्रा' नहीं हुई?

त्रैलोक्य – जी नहीं, अब की बार 'यात्रा' की वैसी सुविधा नहीं हुई।

श्रीरामकृष्ण – तो इस बार जो हुआ सो हुआ। देखना, जिससे फिर ऐसा न होने पाए। जैसा नियम है वैसा ही हमेशा होना अच्छा है।

त्रैलोक्य यथोचित उत्तर देकर चले गए। कुछ देर बाद विष्णुमन्दिर के पुरोहित राम चटर्जी आए।

श्रीरामकृष्ण – राम, मैंने त्रैलोक्य से कहा, इस साल 'यात्रा' नहीं हुई, देखना जिससे आगे ऐसा न हो। तो क्या यह कहना ठीक हुआ?

राम – महाराज, उससे क्या हुआ! अच्छा ही तो कहा। जैसा नियम है उसी प्रकार हमेशा होना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (बलराम से) – अजी, आज तुम यहीं भोजन करो।

भोजन के कुछ पहले श्रीरामकृष्णदेव अपनी अवस्था के सम्बन्ध में भक्तों को बहुत बातें बताने लगे। राखाल, बलराम, मास्टर, रामलाल तथा और दो-एक भक्त बैठे थे।

श्रीरामकृष्ण – हाजरा मुझे उपदेश देता है कि तुम इन लड़कों के लिए इतनी चिन्ता क्यो करते हो! गाड़ी में बैठकर बलराम के मकान पर जा रहा था, उसी समय मन में बड़ी चिन्ता हुई। कहने लगा, 'माँ, हाजरा कहता है, नरेन्द्र आदि बालकों के लिए मैं इतनी चिन्ता क्यों करता हूँ; वह कहता है, ईश्वर की चिन्ता त्यागकर इन लड़कों की चिन्ता आप क्यों करते हैं?' मेरे यह कहते कहते अचानक माँ ने दिखलाया कि वे ही मनुष्य रूप में लीला करती हैं। शुद्ध आधार में उनका प्रकाश स्पष्ट होता है। इस दर्शन के बाद जब समाधि कुछ टूटी तो हाजरा के ऊपर बड़ा क्रोध हुआ। कहा, साले मेरा मन खराब कर दिया था। फिर सोचा, उस बेचारे का अपराध ही क्या है; वह यह कैसे जान सकता है?

"मैं इन लोगों को साक्षात् नारायण जानता हूँ। नरेन्द्र के साथ पहले भेंट हुई। देखा, देहबुद्धि नहीं है। जरा छाती को स्पर्श करते ही उसका बाह्य-ज्ञान लोप हो गया। होश आने पर कहने लगा, 'आपने यह क्या किया! मेरे तो माता-पिता हैं।' यदु मल्लिक के मकान में भी ऐसा ही हुआ था। क्रमशः उसे देखने के लिए व्याकुलता बढ़ने लगी, प्राण छटपटाने लगे। तब भोलानाथ* से कहा, 'क्यों जी, मेरा मन ऐसा क्यों होता है? नरेन्द्र नाम का एक कायस्थ लड़का है, उसके लिए ऐसा क्यों होता है?' भोलानाथ बोले, 'इस सम्बन्ध में महाभारत में लिखा है कि समाधिवान् पुरुष का मन जब नीचे उतरता है, तब सतोगुणी लोगों के साथ विलास करता है। सतोगुणी मनुष्य देखने से उसका मन शान्त होता है।' – यह बात सुनकर मेरे चित्त को शान्ति मिली। बीच बीच में नरेन्द्र को देखने के लिए मैं बैठा बैठा रोया करता था।"

---

* भोलानाथ मुखर्जी ठाकुरवाड़ी के मुन्शी थे, बाद में खजांची हुए थे।

(२)

श्रीरामकृष्ण का प्रेमोन्माद और रूपदर्शन

श्रीरामकृष्ण – ओह, कैसी अवस्था बीत गयी है! पहले जब ऐसी अवस्था हुई थी तो रातदिन कैसे बीत जाते थे, कह नहीं सकता। सब कहने लगे थे, पागल हो गया; इसीलिए इन लोगो ने शादी कर दी। उन्माद अवस्था थी। पहले स्त्री के बारे में चिन्ता हुई, बाद में सोचा कि वह भी इसी प्रकार रहेगी, खाएगी, पिएगी। ससुराल गया, वहाँ भी खूब संकीर्तन हुआ। नफर, दिगम्बर बनर्जी के पिता आदि सब लोग आये। खूब संकीर्तन होता था। कभी कभी सोचता था, क्या होगा। फिर कहता था, माँ, गाँव के जमीदार यदि मानें तो समझूँगा यह अवस्था सत्य है। और सचमुच वे भी आप ही आने लगे और बातचीत करने लगे।

पूर्वकथा – सुन्दरीपूजा – और कुमारीपूजा, रामलीला – दर्शन

"कैसी अवस्था बीत गयी है! किंचित् ही कारण से एकदम भगवान् की उद्दीपना होती थी। मैने सुन्दरी-पूजा की। चौदह वर्ष की लड़की थी। देखा साक्षात् माँ जगदम्बा! रुपये देकर मैने प्रणाम किया।

"रामलीला देखने के लिए गया तो सीता, राम, लक्ष्मण, हनुमान, विभीषण, सभी को साक्षात् प्रत्यक्ष देखा। तब जो जो बने थे उनकी पूजा करने लगा।

"कुमारी कन्याओ को बुलाकर उनकी पूजा करता – देखता साक्षात् माँ जगदम्बा।

"एक दिन बकुलवृक्ष के तले देखा, नीला वस्त्र पहने हुए एक स्त्री खड़ी है। वह वेश्या थी, पर मेरे मन मे एकदम सीता की उद्दीपना हो गयी। उस स्त्री को बिलकुल भूल गया और देखा साक्षात् सीतादेवी लंका से उद्धार पाकर राम के पास जा रही है। बहुत देर तक बाह्य-संज्ञाहीन हो समाधि-अवस्था मे रहा।

"और एक दिन कलकत्ते में किले के मैदान मे घूमने के लिए गया था। उस दिन 'बलून' (गुब्बारा) उड़नेवाला था। बहुतसे लोगो की भीड़ थी। अचानक एक अंग्रेज बालक की ओर दृष्टि गयी, वह पेड़ के सहारे त्रिभंग होकर खड़ा था। देखते ही श्रीकृष्ण की उद्दीपना हो समाधि हो गयी।

"शिऊड़ गाँव मे चरवाहो को भोजन कराया। सब के हाथ में मैने जलपान की सामग्री दी। देखा, साक्षात् व्रज के ग्वालबाल! उनसे जलपान लेकर मैं भी खाने लगा।

"प्राय: होश न रहता था। मथुरबाबू ने मुझे ले जाकर जानबाजार के मकान में कुछ दिन रखा। मै देखने लगा, साक्षात् माँ की दासी हो गया हूँ। घर की औरतें बिलकुल शरमाती नही थीं, जैसे छोटे छोटे बच्चो को देख कोई भी स्त्री लज्जा नही करती। रात को बाबू की कन्या को जमाई के पास पहुँचाने जाता।

"अब भी थोड़ी ही में उद्दीपना हो जाती है। राखाल जप करते समय ओठ हिलाता था। मैं उसे देखकर स्थिर नहीं रह सकता था, एकदम ईश्वर की उद्दीपना होती और विह्वल हो जाता।"

श्रीरामकृष्ण अपने प्रकृति-भाव की और भी कथाएँ कहने लगे। बोले, "मैंने एक कीर्तनिया को स्त्री-कीर्तनिया के ढंग दिखलाए थे। उसने कहा, 'आप बिलकुल ठीक कहते हैं। आपने यह सब कैसे सीखा?' " यह कहकर आप स्त्री-कीर्तनिया के ढंग का अनुकरण कर दिखलाने लगे। कोई भी अपनी हँसी न रोक सका।

(३)

श्रीरामकृष्ण 'अहेतुक कृपासिन्धु'

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। गाढ़ी नींद नही, तन्द्रा-सी है। श्री मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण अब भी लेटे हैं। मणिलाल बीच बीच में बातें करते हैं। श्रीरामकृष्ण अर्धनिद्रित अर्धजागृत अवस्था में हैं, वे किसी किसी बात का उत्तर दे देते हैं।

मणिलाल – शिवनाथ नित्यगोपाल की प्रशंसा करते है। कहते हैं, उनकी अच्छी अवस्था है।

श्रीरामकृष्ण अभी पूरी तरह से नहीं जागे। वे पूछते हैं, "हाजरा को वे लोग क्या कहते हैं?"

श्रीरामकृष्ण उठ बैठे। मणिलाल से भवनाथ की भक्ति के बारे मे कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अहा, उसका भाव कैसा सुन्दर है! गाना गाते आँखें आँसुओ से भर जाती हैं। हरीश को देखते ही उसे भाव हो गया। कहता है, ये लोग अच्छे हैं। हरीश घर छोड़ यहाँ कभी कभी रहता है न, इसीलिए।

मास्टर से प्रश्न कर रहे हैं, "अच्छा, भक्ति का कारण क्या है? भवनाथ आदि बालकों की उद्दीपना क्यों होती है?" मास्टर चुप हैं।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि बाहर से देखने में सभी मनुष्य एक ही तरह के होते हैं। पर किसी किसी में खोए का पूर भरा होता है। पकवान के भीतर उरद का पूर भी हो सकता है और खोए का भी, पर देखने में दोनों एक-से हैं। भगवान् को जानने की इच्छा, उन पर प्रेम और भक्ति, इसी का नाम खोए का पूर है।

अब आप भक्तों को अभय देते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – कोई सोचता है कि मुझे ज्ञानभक्ति न होगी, मैं शायद बद्धजीव हूँ। श्रीगुरु की कृपा होने पर कोई भय नहीं है। बकरियों के एक झुण्ड में बाघिन कूद पड़ी थी। कूदते समय बाघिन को बच्चा पैदा हो गया। बाघिन तो मर गयी, पर वह

बच्चा बकरियों के साथ पलने लगा। बकरियाँ घास खातीं तो वह भी घास खाता। बकरियाँ 'में में' करतीं तो वह भी करता। धीरे धीरे वह बच्चा बड़ा हो गया। एक दिन इन बकरियों के झुण्ड पर एक दूसरा बाघ झपटा। वह उस घास खानेवाले बाघ को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। दौड़कर उसने उसे पकड़ा तो वह 'में में' कर चिल्लाने लगा। उसे घसीटकर वह जल के पास ले गया और बोला, 'देख, जल में तू अपना मुँह देख। देख, मेरे ही समान तू भी है; और ले यह थोड़ासा मॉस है, इसे खा ले।' यह कहकर वह उसे बलपूर्वक खिलाने लगा। पर वह किसी तरह खाने को राजी न हुआ, 'में मे' चिल्लाता ही रहा। अन्त में रक्त का स्वाद पाकर वह खाने लगा। तब उस नये बाघ ने कहा, 'अब तूने समझा कि जो मैं हूँ वही तू भी है। अब आ, मेरे साथ जंगल को चल।'

"इसीलिए गुरु की कृपा होने पर फिर कोई भय नही। वे बतला देगे, तुम कौन हो, तुम्हारा स्वरूप क्या है।

"थोड़ा साधन करने पर गुरु सब बातें साफ साफ समझा देते है। तब मनुष्य स्वयं समझ सकता है, क्या सत् है, क्या असत्। ईश्वर ही सत्य और यह संसार अनित्य है।"

कपट साधना भी बुरी नहीं

"एक धीवर किसी दूसरे के बाग में रात के समय चुराकर मछलियॉ पकड़ रहा था। मालिक को इसकी टोह लग गयी और दूसरे लोगों की सहायतां से उसने उसे घेर लिया। मशाल जलाकर वे चोर को खोजने लगे। इधर वह धीवर शरीर में कुछ भस्म लगाए, एक पेड़ के नीचे साधु बनकर बैठ गया। उन लोगों ने बहुत ढूँढ़-तलाश की, पर केवल भभूत रमाए एक ध्यानमग्न साधु के सिवाय और किसी को न पाया। दूसरे दिन गाँव भर में खबर फैल गयी कि अमुक के बाग में एक बड़े महात्मा आए है। फिर क्या था, सब लोग फल, फूल, मिठाई आदि लेकर साधु के दर्शन को आए। बहुतसे रुपये-पैसे भी साधु के सामने पड़ने लगे। धीवर ने विचारा, आश्चर्य की बात है कि मैं सच्चा साधु नहीं हूँ, फिर भी मेरे ऊपर लोगों की इतनी भक्ति है! इसलिए यदि मैं हृदय से साधु हो जाऊँ तो अवश्य ही भगवान् मुझे मिलेंगे, इसमें सन्देह नहीं।

"कपट साधना से ही उसे इतना ज्ञान हुआ, सत्य साधना होने पर तो कोई बात ही नहीं। क्या सत्य है, क्या असत्य–साधना करने से तुम समझ सकोगे। ईश्वर ही सत्य हैं और सारा संसार अनित्य।"

एक भक्त चिन्ता कर रहे हैं, क्या संसार अनित्य है? धीवर तो संसार त्यागकर चला गया। फिर जो संसार में हैं उनका क्या होगा? उन लोगों को भी क्या त्याग करना होगा? श्रीरामकृष्ण अहेतुक कृपासिन्धु है, तत्काल कहते हैं, "यदि किसी आफिस के कर्मचारी को जेल जाना पड़े तो वह जेल में सजा काटेगा सही, पर जब जेल से मुक्त हो

जाएगा, तब क्या वह रास्ते मे नाचता फिरेगा? वह फिर किसी आफिस की नौकरी ढूँढ़ लेगा, वही पुराना काम करता रहेगा। इसी तरह गुरु की कृपा से ज्ञानलाभ होने पर मनुष्य संसार में भी जीवन्मुक्त होकर रह सकता है।''

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने सांसारिक मनुष्यों को अभय प्रदान किया।

(४)

श्रीरामकृष्ण और निराकारवाद। विश्वास ही सब कुछ है।

मणिलाल (श्रीरामकृष्ण से) – उपासना के समय उनका ध्यान किस जगह करेगे?

श्रीरामकृष्ण – हृदय तो खूब प्रसिद्ध स्थान है। वही उनका ध्यान करना।

मणिलाल निराकारवादी ब्राह्म है। श्रीरामकृष्ण उन्हे लक्ष्य कर कहते है, ''कबीर कहते थे –

'निर्गुण तो है पिता हमारा और सगुण महतारी।
काको निन्दौ काको बन्दौ दोनो पल्ले भारी।।'

''हलधारी दिन मे साकार भाव मे और रात को निराकार भाव मे रहता था। बात यह है कि चाहे जिस भाव का आश्रय करो, विश्वास पक्का होना चाहिए। चाहे साकार मे विश्वास करो चाहे निराकार मे, परन्तु वह ठीक ठीक होना चाहिए।

''शम्भु मल्लिक बागबाजार से पैदल अपने बाग मे आया करते थे। किसी ने कहा था, 'इतनी दूर है, गाड़ी से क्यो नही आते? रास्ते मे कोई विपत्ति हो सकती है।' उस समय शम्भु ने नाराज होकर कहा था, 'क्या मै भगवान् का नाम लेकर निकला हूँ, फिर मुझे विपत्ति'?

''विश्वास से ही सब कुछ होता है। मै कहता था यदि अमुक से भेट हो जाय या यदि अमुक खजांची मेरे साथ बात करे तो समझूँ कि मेरी यह अवस्था सत्य है। परन्तु जो मन मे आता, वही हो जाता था।''

मास्टर ने अंग्रेजी का न्यायशास्त्र पढ़ा था। उसमे लिखा है कि सबेरे के स्वप्न का सत्य होना लोगो के कुसंस्कार की ही उपज है। इसलिए उन्होने पूछा, ''अच्छा, कभी ऐसा भी हुआ है कि कोई घटना नही हुई?''

श्रीरामकृष्ण – ''नही, उस समय सब हो जाता था। ईश्वर का नाम लेकर जो विश्वास करता था, वही हो जाता था। (मणिलाल से) पर इसमे एक बात है। सरल और उदार हुए बिना यह विश्वास नही होता। जिसके शरीर की हड्डियाँ दिखायी देती है, जिसकी आँखे छोटी और घुसी हुई है, जो ऐंचाताना है, उसे सहज मे विश्वास नहीं होता। इसी प्रकार और भी कई लक्षण है।''

श्रीरामकृष्ण और सतीत्व धर्म

शाम हो गयी। दासी कमरे में धूनी दे गयी। मणिलाल आदि के चले जाने के बाद दो एक भक्त अभी बैठे हैं। कमरा शान्त और धूने से सुवासित है। श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर बैठे हुए जगन्माता का चिंतन कर रहे हैं। मास्टर और राखाल जमीन पर बैठे हैं।

थोड़ी देर बाद मथुरबाबू के घर की दासी भगवती ने आकर दूर से श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। आपने उसे बैठने के लिए कहा। भगवती बाबू की बहुत पुरानी दासी है। बहुत साल से बाबू के यहाँ रह रही है। श्रीरामकृष्ण उसे बहुत दिनों से जानते हैं। पहले पहल उसका स्वभाव अच्छा न था; पर श्रीरामकृष्ण दया के सागर, पतितपावन हैं, इसीलिए उससे पुरानी बातें कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – अब तो तेरी उम्र बहुत हुई है। जो रुपये कमाए है उनसे साधु-वैष्णवों को खिलाती है या नहीं?

भगवती (मुसकराकर) – यह भला कैसे कहूँ?

श्रीरामकृष्ण – काशी, वृन्दावन यह सब तो हो आयी?

भगवती (थोड़ा सकुचाती हुई) – कैसे बतलाऊँ? एक घाट बनवा दिया है उसमें पत्थर पर मेरा नाम लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – ऐसी बात!

भगवती – हाँ, नाम लिखा है, 'श्रीमती भगवती दासी।'

श्रीरामकृष्ण (मुसकराकर) – बहुत अच्छा।

भगवती ने साहस पाकर श्रीरामकृष्ण के चरण छूकर प्रणाम किया।

बिच्छू के काटने से जैसे कोई चौंक उठता है और अस्थिर हो खड़ा हो जाता है, वैसे ही श्रीरामकृष्ण अधीर हो, 'गोविन्द' 'गोविन्द' उच्चारण करते हुए खड़े हो गए। कमरे के कोने मे गंगाजल का एक मटका था – और अब भी है – हॉफते हाँफते, मानो घबराए हुए, उसी के पास गए और पैर के जिस स्थान को दासी ने छुआ था, उसे गंगाजल से धोने लगे।

दो-एक भक्त जो कमरे में थे, स्तब्ध और चकित हो एकटक यह दृश्य देख रहे हैं। दासी जीवन्मृत की तरह बैठी है। दयासिन्धु पतितपावन श्रीरामकृष्ण ने दासी से करुणा से सने हुए स्वर में कहा, "तुम लोग ऐसे ही प्रणाम करना।" यह कहकर फिर आसन पर बैठकर दासी को बहलाने की चेष्टा करते रहे। उन्होंने कहा, "कुछ गाते हैं, सुन।" यह कहकर उसे गाना सुनाने लगे। –

(१) (भावार्थ) – "मेरा मनमधुप श्यामापद-नीलकमल में मस्त हो गया। कामादि पुष्पो में जितने विषय-मधु थे सब तुच्छ हो गए। ..."

(२) (भावार्थ) – "श्यामा माँ के चरणरूपी आकाश में मन की पतंग उड़ रही थी। कलुष की कुवायु से वह चक्कर खाकर गिर पड़ी। ..."

(३) (भावार्थ) – "मन! अपने आप में रहो। किसी दूसरे के घर न जाओ। जो कुछ चाहोगे वह बैठे हुए ही पाओगे, अपने अन्त:पुर में जरा खोजो तो सही! ..."

□□

परिच्छेद ३७

श्रीरामकृष्ण का प्रथम प्रेमोन्माद

(१)

पूर्वकथा – देवेन्द्र ठाकुर, दीन मुखर्जी और कुँवरसिंह

आज अमावस्या, मंगलवार का दिन है, ५ जून १८८३ ई.। श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर में हैं। भक्त-समागम रविवार को विशेष होता है; आज अधिक लोग नहीं है। राखाल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। हाजरा भी हैं, श्रीरामकृष्ण के कमरे के सामने वाले बरामदे में अपना आसन लगाया है। मास्टर पिछले रविवार से यहाँ हैं।

कल सोमवार रात को कालीमन्दिर में कृष्णलीला पर नाटक हुआ था। श्रीरामकृष्ण ने कुछ देर तक देखा था। वैसे यह नाटक रविवार को होनेवाला था, पर उस दिन न हो पाया इसलिए कल सोमवार को हुआ।

दोपहर को भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण अपने प्रेमोन्माद की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – कैसी हालत बीत चुकी है! यहाँ भोजन न करता था, वराहनगर या दक्षिणेश्वर या आरियादह में किसी ब्राह्मण के घर चला जाता, और जाता भी देर में था। जाकर बैठ जाता था, पर बोलता कुछ नहीं। घर के लोग पूछते तो केवल कहता, 'मैं यहाँ खाऊँगा।' और कोई बात नही करता। आलमबाजार में राम चटर्जी के यहां जाता। कभी दक्षिणेश्वर में सावर्ण चौधरी के मकान पर जाता। उनके यहाँ खाया तो करता था, पर अच्छा नहीं लगता था; उसमें कैसी गन्ध आती थी!

"एक दिन हठ कर बैठा, देवेन्द्रनाथ ठाकुर के घर जाऊँगा। मथुरबाबू से कहा, 'देवेन्द्र ईश्वर का नाम लेते हैं, उनको देखना चाहता हूँ, मुझे ले चलोगे?' मथुरबाबू को अपनी मान-मर्यादा का बड़ा अभिमान था, वे अपनी गरज से किसी के मकान पर क्यों जाने लगे? आगापीछा करने लगे। बाद में बोले, 'अच्छा, देवेन्द्र और हम एक साथ पढ़ चुके हैं, चलिए, आपको ले चलेंगे।'

"एक दिन सुना कि दीन मुखर्जी नाम का एक भला आदमी बागबाजार के पुल के पास रहता है। भक्त है। मथुरबाबू को पकड़ा, दीन मुखर्जी के यहाँ जाऊँगा। मथुरबाबू क्या

करते, गाड़ी पर मुझे ले गए। छोटासा मकान और इधर एक बड़ी भारी गाड़ी पर एक बड़ा आदमी आया है; वह भी शरमा गयाऔर हम भी। फिर उसके लड़के का जनेऊ होनेवाला था। कहाँ बैठाए! हम लोग बाजू के कमरे में जाने लगे तो वह बोल उठा, 'वहाँ न जाइए, उस कमरे में औरतें हैं।' बड़ा असमंजस था। मथुरबाबू लौटते समय बोले, 'बाबा, तुम्हारी बात अब कभी न मानूँगा।' मैं हँसने लगा।

"कैसी अनोखी अवस्था थी! कुँवरसिंह ने साधुओ को भोजन कराना चाहा, मुझे भी न्योता दिया। जाकर देखा बहुतसे साधु आए हैं। मेरे बैठने पर साधुओ में से कोई कोई मेरा परिचय पूछने लगे – 'आप गिरी हैं या पुरी?' पर ज्योंही उन्होंने पूछा त्योंही मैं अलग जाकर बैठा। सोचा कि इतनी खबर काहे की? बाद को ज्योंही पत्तल बिछाकर भोजन के लिए बैठाया, किसी के कुछ कहने के पहले ही मैंने खाना शुरू कर दिया। साधुओं में से किसी किसी को कहते सुना, 'अरे यह क्या!'

(२)

साधु और अवतार में अन्तर

पाँच बजे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के बरामदे की सीढ़ी पर बैठे हैं। राखाल हाजरा और मास्टर पास बैठे हैं।

हाजरा का भाव है – 'सोऽहं – मैं ही ब्रह्म हूँ।'

श्रीरामकृष्ण (हाजरा से) – हाँ, यह सोचने से सब गड़बड़ मिट जाती है, – वे ही आस्तिक है, वे ही नास्तिक; वे ही भले हैं, वे ही बुरे; वे ही नित्यवस्तु हैं, वे ही अनित्य जगत्; जागृति और निद्रा उन्हीं की अवस्थाएँ हैं; फिर वे ही इन सारी अवस्थाओं से परे भी हैं।

"एक किसान को बुढ़ापे में एक लड़का हुआ था। लड़के को वह बहुत यत्न से पालता था। धीरे धीरे लड़का बड़ा हुआ। एक दिन जब किसान खेत में काम कर रहा था, किसी ने आकर उसे खबर दी कि तुम्हारा लड़का बहुत बीमार है – अब-तब हो रहा है। उसने घर में आकर देखा, लड़का मर गया है। स्त्री खूब रो रही है; पर किसान की आँखों में आँसू तक नहीं। उसकी स्त्री अपनी पड़ोसिनों के पास इसलिए और भी शोक करनें लगी कि ऐसा लड़का चला गया, पर इनकी आँखों में आँसू का नाम नहीं! बड़ी देर बाद किसान ने अपनी स्त्री को पुकारकर कहा, 'मैं क्यों नहीं रोता, जानती हो? मैंने कल स्वप्न में देखा कि राजा हो गया हूँ और सात लड़कों का बाप बना हूँ। स्वप्न में ही देखा कि वे लड़के रूप और गुण में अच्छे हैं। क्रमशः वे बड़े हुए और विद्या तथा धर्म उपार्जन करने लगे। इतने में ही नींद खुल गयी। अब सोच रहा हूँ कि तुम्हारे इस एक लड़के के लिए रोऊँ या अपने उन सात लड़कों के लिए?' ज्ञानियों के मत से स्वप्न की अवस्था जैसी सत्य है,

जाग्रत् अवस्था भी वैसी ही सत्य है।

"ईश्वर ही कर्ता हैं, उन्हीं की इच्छा से सब कुछ हो रहा है।"

हाजरा – पर यह समझना बड़ा कठिन है। भू-कैलास के साधु को कितना कष्ट दिया गया, जो एक तरह से उनकी मृत्यु का कारण हुआ। वे समाधि की हालत में मिले थे। होश में लाने के लिए लोगों ने उन्हें कभी जमीन में गाड़ा, कभी जल में डुबोया और कभी उनका शरीर दाग दिया। इस तरह उन्हें चैतन्य कराया। इन यन्त्रणाओं के कारण उनका शरीर छूट गया। लोगों ने उन्हें कष्ट भी दिया और इधर ईश्वर की इच्छा से उनकी मृत्यु भी हुई।

श्रीरामकृष्ण – जिसका जैसा कर्म है, उसका फल वह पाएगा। किन्तु ईश्वर की इच्छा से उन साधु का शरीर-त्याग हुआ। वैद्य बोतल के अन्दर मकरध्वज तैयार करते हैं। उसके चारों ओर मिट्टी लीपकर वे उसे आग में रख देते हैं। बोतल के अन्दर का सोना आग की गर्मी से और कई चीजों के साथ मिलकर मकरध्वज बन जाता है। तब वैद्य बोतल को उठाकर उसे धीरे धीरे तोड़ता है और उससे मकरध्वज निकालकर रख लेता है। उस समय बोतल रहे चाहे नष्ट हो जाए, उससे क्या? उसी तरह लोग सोचते हैं कि साधु मार डाले गए, पर शायद उनकी चीज बन चुकी होगी। भगवान् का लाभ होने के बाद शरीर रहे भी तो क्या, और जाय तो भी क्या?

"भू-कैलास के वे साधु समाधिस्थ थे। समाधि अनेक प्रकार की होती है। हृषीकेश के साधु के कथन से मेरी अवस्था मिल गयी थी। कभी शरीर में चींटी की तरह वायु चलती हुई जान पड़ती है; कभी बड़े वेग के साथ, जैसे बन्दर एक डाल से दूसरी डाल पर कूदते है; कभी मछली की तरह गति होती है। जिसको हो वही जान सकता है। जगत् का ख्याल जाता रहता है। मन के कुछ उतरने पर मैं कहता हूँ, 'माँ, मुझे अच्छा कर दो, मैं बातें करना चाहता हूँ।'

"ईश्वरकोटि जैसे अवतार आदि, न होने पर कोई समाधि से नहीं लौट सकता। जीवकोटि के कोई कोई साधना के बल से समाधिस्थ होते तो हैं; पर वे फिर नहीं लौटते। जब ईश्वर स्वयं मनुष्य होकर आते हैं, अवतार रूप में आते हैं और जीवों की मुक्ति की चाभी उनके हाथ में रहती है, तब वे समाधि के बाद लौटते हैं – लोगों के कल्याण के लिए।"

मास्टर (मन ही मन) – क्या श्रीरामकृष्ण के हाथ में जीवों की मुक्ति की चाभी है?

हाजरा – ईश्वर को सन्तुष्ट करने से सब कुछ हुआ। अवतार हों या न हों।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – हाँ, हाँ। विष्णुपुर में रजिस्टरी का बड़ा दफ्तर है, वहाँ रजिस्टरी हो जाने पर फिर 'गोघाट' में कोई बखेड़ा नहीं होता।

गुरुशिष्य-संवाद

शाम हुई। मन्दिर में आरती हो रही है। बारह शिवमन्दिरों तथा श्रीराधाकान्त के और माता भवतारिणी के मन्दिर में शंख घण्टा आदि मंगल-वाद्य बज रहे है। आरती समाप्त होने के कुछ समय बाद श्रीरामकृष्ण अपने कमरे से दक्षिण के बरामदे में आ बैठे। चारो ओर घना अन्धकार है, केवल मन्दिर में स्थान स्थान पर दीपक जल रहे है। गंगाजी के वक्ष पर आकाश की काली छाया पड़ी है। आज अमावस्या है। श्रीरामकृष्ण सहज ही भावमय हैं, आज भाव और भी गम्भीर हो रहा है। बीच बीच मे प्रणव उच्चारण कर रहे हैं और देवी का नाम ले रहे हैं। गर्मी का मौसम है, कमरे के भीतर गर्मी बहुत है। इसलिए बरामदे में आए है। किसी भक्त ने एक कीमती चटाई दी है। वही बरामदे में बिछायी गयी है। श्रीरामकृष्ण को सर्वदा माँ का ध्यान लगा रहता है। लेटे हुए आप मणि से धीरे धीरे बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – देखो, ईश्वर के दर्शन होते है। अमुक को दर्शन मिले है, परन्तु किसी से कहना मत। तुम्हें ईश्वर का रूप पसन्द है या निराकार-चिन्ता?

मणि - इस समय तो निराकार-चिन्ता कुछ अच्छी लगती है, पर यह भी कुछ कुछ समझ में आया है कि वे ही साकार हो इन अनेक रूपो मे विराजते हैं।

श्रीरामकृष्ण – देखो, मुझे गाड़ी पर बेलघरिया मे मोती शील की झील को ले चलोगे? वहाँ चारा फेक दो, मछलियाँ आकर उसे खाने लगेगी। अहा! मछलियो को खेलती हुई देखकर क्या आनन्द होता है, तुम्हे उद्दीपना होगी कि मानो सच्चिदानन्दरूपी सागर मे आत्मारूपी मछली खेल रही है। उसी तरह लम्बे-चौड़े मैदान में खड़े होने से ईश्वरीय भाव आ जाता है, जैसे किसी हण्डी मे रखी हुई मछली तालाब को पहुँच गयी हो।

"उनके दर्शन के लिए साधना चाहिए। मुझे कठोर साधनाएँ करनी पड़ी। बिल्ववृक्ष के नीचे तरह तरह की साधनाएँ कर चुका। वृक्ष के नीचे पड़ा रहता था, – यह कहते हुए कि माँ, दर्शन दो। रोते रोते आँसुओ की झड़ी लग जाती थी।

मणि – जब आप ही इतनी साधनाएँ कर चुके तब दूसरे लोग क्या एक ही क्षण मे सब कर लेंगे? मकान के चारो ओर उँगली फेर देने ही से क्या दीवाल बन जाएगी?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अमृत कहता है, एक आदमी के आग जलाने पर दस आदमी उसके ताप से लाभ उठाते है। एक बात और है, – नित्य को पहुँचकर लीला में रहना अच्छा है।

मणि – आपने तो कहा है कि लीला विलास के लिए है।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, लीला भी सत्य है। और देखो, जब यहाँ आओगे तब अपने साथ थोड़ा कुछ लेते आना। खुद नहीं कहना चाहिए, इससे अभिमान होता है। अधर सेन से भी कहता हूँ, एक पैसे का कुछ लेकर आना। भवनाथ से कहता हूँ कि एक पैसे का

पान लाना। भवनाथ की भक्ति कैसी है, देखी है तुमने? भवनाथ और नरेन्द्र मानो स्त्री और पुरुष है। भवनाथ नरेन्द्र का अनुगत है। नरेन्द्र को गाड़ी पर ले आना। कुछ खाने की चीज लाना। इससे बहुत भला होता है।

ज्ञानपथ और नास्तिकता

"ज्ञान और भक्ति – दोनो ही मार्ग है। भक्तिमार्ग मे आचार कुछ अधिक पालन करना पड़ता है। ज्ञानमार्ग मे यदि कोई अनाचार भी करे तो वह मिट जाता है। खूब आग जलाकर एक केले का पेड़ भी झोक दो, वह भी भस्म हो जाता है।

"ज्ञानी का मार्ग विचारमार्ग है। विचार करते करते कभी कभी नास्तिकपन भी आ सकता है। पर भगवान् को जानने के लिए भक्त की यदि हार्दिक इच्छा हो, तो नास्तिकता आने पर भी वह ईश्वरचिन्तन नही त्यागता। जिसके बाप-दादे किसानी करते आ रहे है, अतिवृष्टि और अनावृष्टि के कारण किसी साल फसल न होने पर भी वह खेती करता ही रहता है।"

श्रीरामकृष्ण लेटे लेटे बाते कर रहे है। बीच मे मणि से बोले, "मेरा पैर थोड़ा दर्द कर रहा है, जरा हाथ फेर दो।"

अहेतुक कृपासिन्धु गुरुदेव के कमलचरणो की सेवा करते हुए, मणि उनके श्रीमुख से वे अपूर्व तत्त्व सुन रहे है।

□□□

परिच्छेद ३८

दक्षिणेश्वर मन्दिर में

श्रीरामकृष्ण की समाधि। भक्तों के द्वारा श्रीचरण-पूजा

श्रीरामकृष्ण आज सन्ध्या-आरती के बाद दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में देवी की प्रतिमा के सम्मुख खड़े होकर दर्शन करते और चमर लेकर कुछ देर डुलाते रहे।

ग्रीष्म ऋतु है। ज्येष्ठ शुक्ला तृतीया तिथि है। शुक्रवार, ८ जून १८८३ ई.। आज शाम को राम, केदार चटर्जी और तारक श्रीरामकृष्ण के लिए फूल और मिठाई लिये कलकत्ते से गाड़ी पर आये हैं।

केदार की उम्र कोई पचीस वर्ष की होगी। बड़े भक्त है। ईश्वर की चर्चा सुनते ही उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो जाते है। पहले ब्राह्मसमाज में आते-जाते थे। फिर कर्ताभजा, नवरसिक आदि अनेक सम्प्रदायों से मिलकर अन्त में उन्होंने श्रीरामकृष्ण के चरणों में शरण ली है। सरकारी नौकरी में हिसाबनवीस का काम करते है। उनका घर काँचड़ापाड़ा के निकट हालीशहर गाँव में है।

तारक की उम्र चौबीस वर्ष की होगी। विवाह के कुछ दिन बाद उनके स्त्री की मृत्यु हो गयी। उनका मकान बारासात गाँव में है। उनके पिता एक उच्च कोटि के साधक थे, श्रीरामकृष्ण के दर्शन उन्होंने अनेक बार किये थे। तारक की माता की मृत्यु होने पर उनके पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया था।

तारक राम के मकान पर सर्वदा आते-जाते रहते हैं। उनके और नित्यगोपाल के साथ वे प्राय: श्रीरामकृष्णदेव के दर्शन करने के लिए आते हैं। इस समय भी किसी आफिस में काम करते हैं। परन्तु सर्वदा विरक्ति का भाव है।

श्रीरामकृष्ण ने कालीमन्दिर से निकलकर चबूतरे पर भूमिष्ठ हो माता को प्रणाम किया। उन्होंने देखा राम, मास्टर, केदार तारक आदि भक्त वहाँ खड़े हैं।

तारक को देखकर आप बड़े प्रसन्न हुए और उनकी ठुड्डी छूकर प्यार करने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर अपने कमरे में जमीन पर बैठे हैं। उनके दोनों पैर फैले हैं। राम और केदार ने उन चरणकमलों को पुष्पमालाओं से शोभित किया है। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं।

केदार का भाव नवरसिक समाज का है। वे श्रीरामकृष्ण के चरणों के अँगूठों को पकड़े हुए हैं। उनकी धारणा है कि इससे शक्ति का संचार होगा। श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हो कह रहे हैं, "माँ! अँगूठों को पकड़कर वह मेरा क्या कर सकेगा?"

केदार विनीत भाव से हाथ जोड़े बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केदार से भावावेश में) – कामिनी और कांचन पर तुम्हारा मन खिंचता है। मुँह से कहने से क्या होगा कि मेरा मन उधर नहीं है!

"आगे बढ़ चलो। चन्दन की लकड़ी के आगे और भी बहुतकुछ हैं, – चाँदी की खान – सोने की खान – फिर हीरे और माणिक। थोड़ीसी उद्दीपना हुई है, इससे यह मत सोचो कि सब कुछ हो गया।"

श्रीरामकृष्ण फिर अपनी माता से बातें कर रहे हैं। कहते हैं, "माँ! इसे हटा दो।"

केदार का कण्ठ सूख गया है। भयभीत हो राम से कहते हैं, "ये यह क्या कह रहे हैं?

राखाल को देखकर श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो रहे हैं। उन्हें पुकारकर कहते हैं, "मै यहाँ बहुत दिनों से आया हूँ। तू कब आया?"

क्या श्रीरामकृष्ण इशारे से कहते हैं कि वे भगवान् के अवतार हैं और राखाल उनके एक अन्तरंग पार्षद?

□□□

परिच्छेद ३९

मणिरामपुर तथा बेलघर के भक्तों के साथ

(१)

श्रीमुख-कथित चरितामृत

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में कभी खड़े होकर, कभी बैठकर भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आज रविवार, १० जून १८८३ ई., ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी है। दिन के दस बजे का समय होगा। राखाल, मास्टर, लाटू, किशोरी, रामलाल, हाजरा आदि अनेक व्यक्ति उपस्थित हैं।

श्रीरामकृष्ण स्वयं अपने चरित्र का वर्णन कर अपनी पूर्वकथा सुना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – उस देश में बचपन में मुझे स्त्री-पुरुष सभी चाहते थे। सभी मेरा गाना सुनते थे। फिर मैं लोगों की नकल उतार सकता था – लोग मेरा नकल उतारना देखते और सुनते थे। उनके घर की बहू-बेटियाँ मेरे लिए खाने की चीजें रख देती थीं। कोई मुझ पर अविश्वास न करता था। सभी घर के लड़के जैसा मानते थे।

"परन्तु मैं सुख पर लट्टू था। अच्छा सुखी घर देखकर आया-जाया करता था। जिस घर पर दु:ख-विपत्ति देखता था, वहाँ से भाग जाता था।

"लड़कों मे किसी को भला देखने पर उससे प्रेम करता था। और किसी किसी के साथ गहरी मित्रता जोड़ता था। परन्तु अब वे घोर संसारी बन गए हैं। अब उनमें से कोई कोई यहाँ पर आते हैं, आकर कहते हैं, 'वाह खूब! पाठशाला में भी जैसा देखा, यहाँ पर भी वैसा ही देख रहे हैं।'

"पाठशाला में हिसाब देखकर सिर चकराता था, परन्तु चित्र अच्छा खींच सकता था और अच्छी मूर्तियाँ गढ़ सकता था।

"जहाँ भी सदावर्त, धर्मशाला देखता था वहीं पर जाता था – जाकर बहुत देर तक खड़े देखता रहता था।

"कही पर रामायण या भागवत की कथा होने पर बैठकर सुनता था, परन्तु यदि कोई मुँह-हाथ बनाकर पढ़ता, तो उसकी नकल उतारता था और लोगों को सुनाता था।

"औरतों का चालचलन खूब समझ सकता था। उनकी बातें, स्वर आदि की नकल

उतारता था।

"बदचलन औरतों को पहचान सकता था। विधवा है – पर सिर पर सीधी माँग है और बड़ी लगन से शरीर पर तेल की मालिश कर रही है। लज्जा कम, बैठने का ढंग ही दूसरा है।

"रहने दो विषयी लोगों की बातें!"

रामलाल को गाना गाने के लिए कह रहे है। रामलाल गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "रणांगण में यह कौन मेघवर्ण नारी नाच रही है? मानो रुधिर-सरोवर में नवीन नलिनी तैर रही हो।"

अब रामलाल रावण-वध के बाद मन्दोदरी के विलाप का गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "हे कान्त, अबला के प्राणप्रिय, यह तुमने क्या किया! प्राणो का अन्त हुए बिना तो अब शान्ति नही मिलेगी! स्वर्णपुरी के सम्राट् होते हुए भी तुम आज धरती पर लेटे हो – यह देखकर भला तुम्हारी भार्या कैसे धीरज धर सकती है! स्वयं यमराज जहाँ दासत्व करे इतना बड़ा आधिपत्य स्वर्ग, मर्त्य, पाताल में और किसी का देखा गया है? जो इन्द्रादि की भी अधिश्वरी थी, वह तुम्हारी रानी आज संसार मे भिखारिन बन गयी! उन नवीन जटाधारी वनविहारी को मनुष्य समझने के कारण तुमने सब कुछ खो डाला। स्वयं ब्रह्मा और ईशान जिनके चरणो की अभिलाषा रखते है, उन राम को हे राजा, तुमने माना ही नही। तुमने तो सुना था कि उनके चरण-स्पर्श से पाषाण भी नारी बन जाता है।"

आखिर का गाना सुनते सुनते श्रीरामकृष्ण आँसू बहा रहे हैं और कह रहे हैं – "मैने झाऊतल्ले मे शौच जाते समय सुना था, नाव के माँझी नाव मे यही गाना गा रहे हैं। वहाँ जब तक बैठा रहा, केवल रो रहा था। लाग पकड़कर मुझे कमरे मे लाए थे।"

फिर गाना चलने लगा –

(भावार्थ) – "सुना है राम तारकब्रह्म है, जटाधारी राम मनुष्य नहीं हैं। हे पिताजी, क्या वंश का नाश करने के लिए उनकी सीता को चुराया है?"

अक्रूर श्रीकृष्ण को रथ पर बैठाकर मथुरा ले जा रहे है। यह देख गोपियों ने रथचक्रों को जकड़कर पकड़ लिया है और उनमें से कोई कोई रथचक्र के सामने लेट गयी हैं। वे अक्रूर पर दोषारोपण कर रही हैं। वे नहीं जानतीं कि श्रीकृष्ण अपनी ही इच्छा से जा रहे हैं।

(भावार्थ) – "रथचक्र को न पकड़ो, न पकड़ो। क्या रथ चक्र से चलता है? जिनके चक्र से जगत् चलता है वे हरि ही इस चक्र के चक्री है।"

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – अहा, गोपियों का यह कैसा प्रेम! श्रीमती राधिका ने अपने हाथ से श्रीकृष्ण का चित्र अंकित किया है, परन्तु पैर नहीं बनाया, कहीं वे वृन्दावन से मथुरा न भाग जाएँ!

"मैं इन सब गानों को बचपन में खूब गाता था। एक एक नाटक सारा का सारा गा

सकता था। कोई कहता था कि मै कालीयदमन नाटक-दल में था।"

एक भक्त नयी चद्दर ओढ़कर आए हैं। राखाल का बालक जैसा स्वभाव है – कैंची लाकर उनकी चद्दर के किनारे के सूतों को काटने जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बोले, "क्यों काटता है? रहने दे। शाल की तरह अच्छा दिखायी देता है। हाँ जी, इसका क्या दाम है?" उन दिनों विलायती चद्दरों का दाम कम था। भक्त ने कहा, "एक रुपया छः आना जोड़ी।" श्रीरामकृष्ण बोले, "क्या कहते हो! जोड़ी! एक रुपया छः आना जोड़ी!"

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण भक्त से कह रहे हैं, "जाओ, गंगा स्नान कर लो! अरे, इन्हें तेल दो तो थोड़ा"!

स्नान के बाद जब वे लौटे तो श्रीरामकृष्ण ने ताक पर से एक आम लेकर उन्हे दिया। कहा, "यह आम इन्हें देता हूँ। तीन डिग्रियाँ पास हैं ये! अच्छा, तुम्हारा भाई अब कैसा है?"

भक्त – हाँ, दवा तो ठीक हो रही है, अब असर ठीक हो तो ठीक है!

श्रीरामकृष्ण – उसके लिए किसी नौकरी की व्यवस्था कर सकते हो? बुरा क्या है, तुम मुखिया बनोगे!

भक्त – स्वस्थ होने पर सभी सुविधाएँ हो जाएँगी।

(२)

साधन-भजन करो और व्याकुल होओ

श्रीरामकृष्ण भोजन के उपरान्त छोटे तख्त पर जरा बैठे हैं – अभी विश्राम करने का समय नहीं हुआ था। भक्तों का समागम होने लगा। पहले मणिरामपुर से भक्तों का एक दल आकर उपस्थित हुआ। एक व्यक्ति पी. डब्ल्यू. डी. में काम करते थे। इस समय पेन्शन पाते हैं। एक भक्त उन्हें लेकर आए हैं। धीरे धीरे बेलघर से भक्तों का एक दल आया। श्री मणि मल्लिक आदि भक्तगण भी धीरे धीरे आ पहुँचे।

मणिरामपुर के भक्तों ने कहा, "आपके विश्राम में विघ्न हुआ।"

श्रीरामकृष्ण बोले, "नहीं, नहीं, यह तो रजोगुण की बातें हैं कि वे अब सोएँगे।"

चाणक मणिरामपुर का नाम सुनकर श्रीरामकृष्ण को अपने बचपन के मित्र श्रीराम का स्मरण हुआ। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "श्रीराम की दूकान तुम्हारे वहीं पर है। श्रीराम मेरे साथ पाठशाला में पढ़ता था। थोड़े दिन हुए यहाँ पर आया था।"

मणिरामपुर के भक्तगण कह रहे हैं, "दया करके हमें जरा बता दीजिए कि किस उपाय से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है।"

श्रीरामकृष्ण – थोड़ा साधन-भजन करना होता है। 'दूध में मक्खन है' केवल कहने से ही नहीं होता, दूध से दही बनाकर, मथन करके मक्खन उठाना पड़ता है। परन्तु बीच

बीच में जरा निर्जन मे रहना चाहिए।* कुछ दिन निर्जन में रहकर भक्ति प्राप्त करके उसके बाद फिर कहीं भी रहो। पैर में जूता पहनकर काँटेदार जंगल में भी आसानी से जाया जा सकता है।

"मुख्य बात है विश्वास। जैसा भाव वैसा लाभ, मूल बात है विश्वास। विश्वास हो जाने पर फिर भय नहीं होता।"

मणिरामपुर के भक्त – महाराज, गुरु क्या आवश्यक ही है?

श्रीरामकृष्ण – अनेकों के लिए आवश्यक है।† परन्तु गुरुवाक्य मे विश्वास करना पड़ता है। गुरु को ईश्वर मानना पड़ता है। तभी लाभ होता है। इसीलिए वैष्णव भक्त कहते है, – गुरु-कृष्ण-वैष्णव।

"उनका नाम सदा ही लेना चाहिए। कलि मे नाम का माहात्म्य है। प्राण अन्नगत है, इसीलिए योग नहीं होता। उनका नाम लेकर ताली बजाने से पापरूपी पक्षी भाग जाते है।

"सत्संग सदा ही आवश्यक है। गंगाजी के जितने ही निकट जाओगे, उतनी ही ठण्डी हवा पाओगे। आग के जितने ही निकट जाओगे उतनी ही गर्मी होगी।

"सुस्ती करने से कुछ नहीं होगा। जिनकी सांसारिक विषयभोग की इच्छा है, वे कहते है, 'होगा! कभी न कभी ईश्वर को प्राप्त कर लेंगे।'

"मैंने केशव सेन से कहा था, पुत्र को व्याकुल देखकर उसके पिता उसके बालिग होने के तीन वर्ष पहले ही उसका हिस्सा छोड़ देते है।

"माँ भोजन बना रही है, गोदी का बच्चा सो रहा है। माँ मुँह में चूसनी दे गयी है। जब चूसनी छोड़कर चीत्कार करके बच्चा रोता है, तब माँ हण्डी उतारकर बच्चे को गोदी मे लेकर स्तनपान कराती है। ये सब बातें मैने केशव सेन से कही थी।

"कहते हैं, कलियुग में एक दिन एक रात भर रोने से ईश्वर का दर्शन होता है।

"मन में अभिमान करो और कहो, 'तुमने मुझे पैदा किया है – दर्शन देना ही होगा!'

"गृहस्थी में रहो, अथवा कही भी रहो, ईश्वर मन को देखते है। विषयबुद्धिवाला मन मानो भीगी दियासलाई है, चाहे जितना रगड़ो कभी नहीं जलेगी। एकलव्य ने मिट्टी के बने द्रोण अर्थात् अपने गुरु की मूर्ति को सामने रखकर बाण चलाना सीखा था।

"कदम बढ़ाओ, – लकड़हारे ने आगे बढ़कर देखा था चन्दन की लकड़ी, चाँदी की खान, सोने की खान, और आगे बढ़कर देखा हीरा-मणि!

"जो लोग अज्ञानी हैं, वे मानो मिट्टी की दीवालवाले कमरे के भीतर हैं। भीतर भी

---

* योगी युंजीत सततमात्मानं रहसि स्थितः – गीता, ६.१०

† आचार्यवान् पुरुषो वेद। – छान्दोग्य उपनिषद् ६।१४।२

रोशनी नहीं है और बाहर की किसी चीज को भी देख नहीं सकते! ज्ञान प्राप्त करके जो लोग संसार में रहते हैं वे मानो काँच के बने कमरे के भीतर हैं। भीतर रोशनी, बाहर भी रोशनी; भीतर की चीजों को भी देख सकते हैं और बाहर की चीजों को भी!

ब्रह्म और जगन्माता एक हैं

"एक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वे परब्रह्म जब तक 'मैं-पन' को रखते हैं, तब तक दिखाते हैं कि वे आद्याशक्ति के रूप में सृष्टि, स्थिति व प्रलय कर रहे हैं।

"जो ब्रह्म हैं, वे ही आद्याशक्ति हैं। एक राजा ने कहा था कि उसे एक ही बात में ज्ञान देना होगा। योगी ने कहा, 'अच्छा, तुम एक ही बात में ज्ञान पाओगे।' थोड़ी देर बाद राजा के यहाँ अकस्मात् एक जादूगर आ पहुँचा। राजा ने देखा, वह आकर सिर्फ दो उँगलियों को घुमा रहा है, कह रहा है, 'राजा यह देख, यह देख।' राजा विस्मित होकर देख रहा है! थोड़ी ही देर में दो उँगलियों की जगह एक ही उँगली रह गयी है। जादूगर एक उँगली घुमाता हुआ कह रहा है, 'राजा, यह देख, यह देख।' अर्थात् ब्रह्म और आद्याशक्ति पहले-पहल दो समझे जाते हैं, परन्तु ब्रह्मज्ञान होने पर फिर दो नहीं रह जाते। अभेद! एक! एक! अद्वितीय! अद्वैत!"

(३)

माया तथा मुक्ति

बेलघर से गोविन्द मुखोपाध्याय आदि भक्तगण आए है। श्रीरामकृष्ण जिस दिन उनके मकान पर पधारे थे, उस दिन गायक का "जागो, जागो, जननि" यह गाना सुनकर समाधिस्थ हुए थे। गोविन्द उस गायक को भी लाए हैं। श्रीरामकृष्ण गायक को देख आनन्दित हुए हैं और कह रहे हैं, "तुम कुछ गाना गाओ।" गायक इस आशय के गीत गा रहे हैं –

(१) "दोष किसी का नहीं है, माँ! मैं अपने ही खोदे हुए कुएँ के जल में डूबकर मर रहा हूँ।"

(२) "रे यम! मुझे न छूना, मेरी जात बिगड़ गयी है। यदि पूछता है कि मेरी जात कैसी बिगड़ी तो सुन, – उस सत्यानासी काली ने मुझे संन्यासी बना दिया है।"

(३) "जागो, जागो, जननि! कितने ही दिनों से कुलकुण्डलिनी मूलाधार में सो रही है। माँ, अपना काम साधने के लिए मस्तक में चलो, जहाँ पर सहस्रदल-पद्म में परमशिव विराजमान हैं। षट्चक्र को भेदकर, हे चैतन्यरूपिणि, मन के दुःख को मिटा दो।"

श्रीरामकृष्ण – इस गीत में षट्चक्र-भेद की बात है। ईश्वर बाहर भी हैं, भीतर भी हैं। वे भीतर से मन में अनेक प्रकार की लहरें उत्पन्न कर रहे हैं। षट्चक्र का भेद होने पर

माया का राज्य छोड़, जीवात्मा परमात्मा के साथ एक हो जाता है। इसी का नाम है ईश्वरदर्शन।

"माया के रास्ता न छोड़ने पर ईश्वर का दर्शन नहीं होता। राम, लक्ष्मण और सीता एक साथ जा रहे हैं। सब से आगे राम, बीच में सीता और पीछे लक्ष्मण हैं। जिस प्रकार सीता के बीच में रहने से लक्ष्मण राम को नहीं देख सकते, उसी प्रकार बीच में माया के रहने से जीव ईश्वर का दर्शन नहीं कर सकता। (मणि मल्लिक के प्रति) परन्तु ईश्वर की कृपा होने पर माया दरवाजे से हट जाती है, जिस प्रकार दरवान लोग कहते हैं, 'साहब की आज्ञा हो तो इसे अन्दर जाने दूँ।'*

"दो मत हैं – वेदान्त मत और पुराण मत। वेदान्त मत में कहा है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है' अर्थात् जगत् भूल है, स्वप्न की तरह है; परन्तु पुराण मत या भक्तिशास्त्र कहता है कि ईश्वर ही चौबीस तत्त्व बनकर विद्यमान हैं। भीतर-बाहर उन्हीं की पूजा करो।

"जब तक उन्होंने 'मैं'-पन को रखा है, तब तक सभी हैं। फिर स्वप्नवत् कहने का उपाय नहीं है। नीचे आग जल रही है, इसीलिए बर्तन में दाल, चावल और आलू उबल रहे है, कूद रहे हैं और मानो कह रहे हैं, 'मैं हूँ' 'मैं कूद रहा हूँ'। यह शरीर मानो बर्तन है, मन-बुद्धि जल है, इन्द्रियों के विषय मानो दाल, चावल और आलू हैं, 'अहं' मानो उनका अभिमान है कि मैं उबल रहा हूँ और सच्चिदानन्द अग्नि हैं।

"इसीलिए भक्तिशास्त्र में इस संसार को 'मजे की कुटिया' कहा है। रामप्रसाद के गाने में है, 'यह संसार धोखे की टट्टी है।' इसीलिए एक ने जवाब दिया था, 'यह संसार मजे की कुटिया है।' 'काली का भक्त जीवन्मुक्त है, नित्यानन्दमय है।' भक्त देखता है, जो ईश्वर हैं, वे ही माया बने हैं, वे ही जीव-जगत् बने हैं। भक्त ईश्वर-माया-जीव-जगत् सब को एक देखता है। कोई कोई भक्त सभी कुछ राममय देखते हैं। राम ही सब बने हैं। कोई राधाकृष्णमय देखते हैं। कृष्ण ही ये चौबीस तत्त्व बने हुए हैं, जिस प्रकार हरा चश्मा पहनने पर सभी कुछ हरा हरा दिखायी देता है।

"भक्ति के मत में, शक्ति के प्रकाश की न्यूनाधिकता होती है। राम ही सब कुछ बने हुए हैं, परन्तु कहीं पर अधिक शक्ति है और कहीं पर कम। अवतार में उनका एक प्रकार का प्रकाश है और जीव में दूसरे प्रकार का। अवतार को भी देह और बुद्धि है। माया के कारण ही शरीर धारण कर सीता के लिए राम रोए थे। परन्तु अवतार जान-बूझकर अपनी आँखों पर पट्टी बाँधते हैं, जैसे लड़के चोर-चोर खेलते हैं और माँ के पुकारते ही खेल बन्द कर देते हैं। जीव की बात अलग है। जिस कपड़े से आँखों पर पट्टी बँधी हुई है, वह कपड़ा पीछे से आठ गाँठों से बड़ी मजबूती से बँधा हुआ है। अष्ट पाश! लज्जा,

---

* मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते। – गीता ७। १४

घृणा, भय, जाति, कुल, शील, शोक, जुगुप्सा (निन्दा) – ये आठ पाश हैं।* जब तक गुरु खोल नहीं देते, तब तक कुछ नहीं होता।"

(४)

सच्चे भक्त के लक्षण। व्याकुल होकर प्रार्थना करो। हठयोग : तथा राजयोग

बेलघर के भक्त – आप हम पर कृपा कीजिये।

श्रीरामकृष्ण – सभी के भीतर वे विद्यमान हैं, परन्तु गैस कम्पनी में अर्जी दो – तुम्हारे घर के साथ संयोग हो जाएगा।

"परन्तु व्याकुल होकर प्रार्थना करनी होगी। कहावत है, तीन प्रकार के प्रेम के आकर्षण एक साथ होने पर ईश्वर का दर्शन होता है, – सन्तान पर माता का प्रेम, सती स्त्री का स्वामी पर प्रेम और विषयी जीवों का विषय पर प्रेम।

"सच्चे भक्त के कुछ लक्षण हैं। वह गुरु का उपदेश सुनकर स्थिर हो जाता है; सँपेरे के संगीत को साधारण विषधर साँप स्थिर होकर सुनता है, परन्तु नाग नहीं। और दूसरा लक्षण, – सच्चे भक्त की धारणा-शक्ति होती है। केवल काँच पर चित्र खींचा नहीं जाता, किन्तु रसायनयुक्त काँच पर खींचा जाता है। जैसा फोटोग्राफ। भक्ति है वह रायायनिक द्रव्य।

"एक लक्षण और है। सच्चा भक्त जितेन्द्रिय होता है, कामजयी होता है। गोपियों में काम का संचार नहीं होता था।

"तुम लोग गृहस्थी में हो, रहो न, इससे साधन-भजन में और भी सुविधा है, मानो किले में से युद्ध करना। जिस समय शवसाधन करते हैं उस समय बीच बीच में शव मुँह खोलकर डराता है। इसलिए भुना हुआ चावल-चना रखना पड़ता है और उसके मुख में बीच बीच में देना पड़ता है। शव के शान्त होने पर निश्चिन्त होकर जप कर सकोगे। इसलिए घरवालों को शान्त रखना चाहिए। उनके खाने-पीने की व्यवस्था कर देनी पड़ती है, तब साधन-भजन की सुविधा होती है।

"जिनका भोग अभी कुछ बाकी है, वे गृहस्थी में रहकर ही ईश्वर का नाम लेंगे। नित्यानन्द कहा करते थे, 'मागुर माछेर झोल, युवती नारीर कोल, बोल हरि बोल!' – हरिनाम लेने से मागुर मछली की रसदार तरकारी तथा युवती नारी तुम्हें मिलेगी।

"सच्चे त्यागी की बात अलग है। मधुमक्खी फूल के अतिरिक्त और किसी पर भी नहीं बैठेगी। चातक की दृष्टि में सभी जल निःस्वाद हैं। वह दूसरे किसी भी जल को नही

---

* घृणा लज्जा भयं शंका जुगुप्सा चेति पंचमी।
कुलं शीलं तथा जातिरष्टो पाशाः प्रकीर्तिताः।। – कुलार्णवतन्त्र

पीएगा, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के लिए ही मुँह खोले रहेगा। सच्चा त्यागी अन्य कोई भी आनन्द नहीं लेगा, केवल ईश्वर का आनन्द। मधुमक्खी केवल फूल पर बैठती है। सच्चे त्यागी साधु मधुमक्खी की तरह होते है। गृही भक्त मानो साधारण मक्खियाँ हैं। मिठाई पर भी बैठती हैं और फिर सड़े घाव पर भी।

"तुम लोग इतना कष्ट करके यहाँ पर आए हो, तुम ईश्वर को ढूँढ़ते फिर रहे हो। अधिकांश लोग बगीचा देखकर ही सन्तुष्ट रहते हैं, मालिक की खोज बिरले ही लोग करते हैं। जगत् के सौन्दर्य को ही देखते हैं, इसके मालिक को नहीं ढूढ़ँते।"

श्रीरामकृष्ण (गानेवाले को दिखाकर) – इन्होंने षट्चक्र का गाना गाया। वह सब योग की बातें हैं। हठयोग और राजयोग। हठयोगी कुछ शारीरिक कसरतें करता है; सिद्धियाँ प्राप्त करना, लम्बी उम्र प्राप्त करना तथा अष्ट-सिद्धि प्राप्त करना, ये सब उद्देश्य हैं। राजयोग का उद्देश्य है भक्ति, प्रेम, ज्ञान, वैराग्य। राजयोग ही अच्छा है।

"वेदान्त की सप्तभूमि और योगशास्त्र के षट्चक्र आपस में बहुतकुछ मिलते-जुलते हैं। वेद की प्रथम तीन भूमियाँ और योगशास्त्र के मूलाधार, स्वाधिष्ठान तथा मणिपुर चक्र एक हैं। इन तीन भूमियों में – गुह्य, लिंग तथा नाभि में – मन का निवास है। जिस समय मन चौथी भूमि पर अर्थात् अनाहत पर उठता है, उस समय जीवात्मा का शिखा की तरह देदीप्यमान रूप में दर्शन होता है, और ज्योति का दर्शन होता है। साधक कह उठता है – 'यह क्या! यह क्या!'

"मन के पाँचवीं भूमि में उठने पर केवल ईश्वर की ही बात सुनने की इच्छा होती है। यहाँ पर विशुद्ध चक्र है। षष्ठ भूमि और आज्ञा चक्र एक ही हैं। वहाँ पर मन के जाने से ईश्वर का दर्शन होता है। परन्तु वह उसी प्रकार होता है जिस प्रकार लालटेन के भीतर रोशनी रहती है – छू नहीं सकते, क्योंकि बीच में काँच रहता है।

"जनक राजा पंचम भूमि पर से ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते थे। वे कभी पंचम भूमि पर और कभी षष्ठ भूमि पर रहते थे।

"षट्चक्रभेद के बाद सप्तम भूमि है। मन वहाँ जाने पर लीन हो जाता है। जीवात्मा परमात्मा एक हो जाते हैं; समाधि हो जाती है। देहबुद्धि चली जाती है, बाह्यज्ञान नहीं रहता, अनेकत्व का बोध नष्ट हो जाता है और विचार बन्द हो जाता है।

"त्रैलंग स्वामी ने कहा था, विचार करते समय ही अनेकता तथा विभिन्नता का बोध होता है। समाधि के बाद अन्त में इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है।

"परन्तु कुण्डलिनी न जागने पर चैतन्य प्राप्त नहीं होता।

ईश्वर-दर्शन के लक्षण

"जिसने ईश्वर को प्राप्त किया है, उसके कुछ लक्षण हैं। वह बालक की तरह,

उन्मत्त की तरह, जड़ की तरह, या पिशाच की तरह बन जाता है और उसे सच्चा अनुभव होता है कि 'मैं यन्त्र हूँ और वे यन्त्री हैं। वे ही कर्ता हैं, और सभी अकर्ता हैं।' जिस प्रकार सिक्खों ने कहा था, पत्ता हिल रहा है, वह भी ईश्वर की इच्छा है। राम की इच्छा से ही सब कुछ हो रहा है – यह ज्ञान होता है। जैसे जुलाहे ने कहा था, 'राम की इच्छा से ही कपड़े का दाम एक रुपया छ: आना है; राम की इच्छा से ही डकैती हुई; राम की इच्छा से ही डाकू पकडे गये; राम की इच्छा से ही पुलिसवाले मुझे ले गए और फिर राम की ही इच्छा से मुझे छोड़ दिया।''

सन्ध्या निकट थी, श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा भी विश्राम नहीं किया। भक्तों के साथ लगातार हरिकथा हो रही है। अब मणिरामपुर और बेलघर के तथा अन्य भक्तगण भूमिष्ठ होकर उन्हें प्रणाम कर देवालय में देवदर्शन के बाद अपने अपने स्थानों को लौटने लगे।

□□□

परिच्छेद ४०

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

(१)

गृहस्थाश्रम के सम्बन्ध में उपदेश

आज गंगापूजा, ज्येष्ठ शुक्ला दशमी, शुक्रवार का दिन है; तारीख १५ जून १८८३ ई.। भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में आए हैं। गंगापूजा के उपलक्ष्य में अधर और मास्टर को छुट्टी मिली है।

राखाल के पिता और पिता के ससुर आए हैं। पिता ने दूसरी बार विवाह किया है। ससुर महाशय श्रीरामकृष्ण का नाम बहुत दिनों से सुनते आ रहे हैं; वे साधक पुरुष हैं, श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आए हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें रुक-रुककर देख रहे हैं। भक्तगण जमीन पर बैठे हैं।

ससुर महाशय ने पूछा, "महाराज, क्या गृहस्थाश्रम में भगवान् का लाभ हो सकता है?"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – क्यों नहीं हो सकता? कीचड़ में रहनेवाली मछली की तरह रहो। वह कीचड़ मे रहती है, पर उसके शरीर में कीचड़ नहीं लगता। और असती स्त्री की तरह रहो जो घर का सारा कामकाज करती है. पर उसका मन अपने उपपति की ओर ही रहता है। ईश्वर से मन लगाए रखकर गृहस्थी का सब काम करो। परन्तु यह है बड़ा कठिन। मैंने ब्राह्मसमाजवालों से कहा था कि जिस कमरे में इमली का अचार और पानी का मटका है, यदि उसी कमरे में सन्निपात का रोगी भी रहे तो बीमारी किस तरह दूर हो? फिर इमली की याद आते ही मुँह में पानी भर आता है। पुरुषों के लिए स्त्रियाँ इमली के अचार की तरह हैं। और विषय की तृष्णा तो सदा लगी ही है; यही पानी का मटका है। इस तृष्णा का अन्त नहीं है। सन्निपात का रोगी कहता है कि मैं एक मटका पानी पीऊँगा! बड़ा कठिन है। संसार में बहुत कठिनाईयाँ है। जिधर जाओ उधर ही कोई न कोई बला आ खड़ी हो जाती है। और निर्जन स्थान न होने के कारण भगवान् की चिन्ता नहीं होती। *सोने को गलाकर गहना गढ़ाना है, तो यदि गलाते समय कोई दस बार बुलाए, तो सोना किस तरह गलेगा?* चावल छाँटते समय अकेले बैठकर छाँटना होता है। हर बार चावल

हाथ में लेकर देखना पड़ता है कि कैसा साफ हुआ। छाँटते समय यदि कोई दस बार बुलाये तो अच्छी तरह छाँटना कैसे हो सकता है?

तीव्र वैराग्य। पाप-पुण्य। संसारव्याधि की महौषधी संन्यास

एक भक्त – महाराज, फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – उपाय है। यदि तीव्र वैराग्य हो तो हो सकता है। जिसे मिथ्या समझते हो उसे हठपूर्वक उसी समय त्याग दो। जिस समय मैं बहुत बीमार था, गंगाप्रसाद सेन के पास लोग मुझे ले गए। गंगाप्रसाद ने कहा, 'यह औषधि खानी पड़ेगी पर जल नहीं पी सकते। हाँ, अनार का रस पी सकते हो।' सब लोगों ने सोचा कि बिना जल पिए मैं कैसे रह सकता हूँ। मैंने निश्चय किया कि अब जल न पीऊँगा। मैं 'परमहंस' हूँ। मैं बतख थोड़े ही हूँ, – मैं तो राजहंस हूँ दूध पिया करूँगा।

"कुछ काल निर्जन में रहना पड़ता है। खेल के समय पाला छू लेने पर फिर भय नही रहता। सोना हो जाने पर जहाँ जी चाहे रहो। निर्जन में रहकर यदि भक्ति मिली हो और भगवान् मिल चुके हों, तो फिर संसार में भी रह सकते हो। (राखाल के पिता के प्रति) इसीलिए तो लड़कों को यहाँ रहने के लिए कहता हूँ; क्योंकि यहाँ थोड़े दिन रहने पर भगवान् मे भक्ति होगी; उसके बाद सहज ही संसार में जाकर रह सकेंगे।"

एक भक्त – यदि ईश्वर ही सब कुछ करते हैं, तो फिर लोग भला और बुरा, पाप और पुण्य, यह सब क्यों कहते हैं? तब तो पाप भी उन्हीं की इच्छा से होता है!

राखाल के पिता के ससुर – उनकी इच्छा को हम कैसे समझें?

श्रीरामकृष्ण – पाप और पुण्य हैं, पर वे स्वयं निर्लिप्त हैं। वायु में सुगन्ध भी है और दुर्गन्ध भी, परन्तु वायु स्वयं निर्लिप्त है। ईश्वर की सृष्टि ऐसी ही है। भला-बुरा, सत-असत् – दोनों हैं। जैसे पेड़ों में कोई आम का पेड़ है, कोई कटहल का, कोई किसी और चीज का। देखो न, दुष्ट आदमियों की भी आवश्यकता है। जिस तालुके की प्रजा उद्दण्ड होती है, वहाँ एक दुष्ट आदमी भेजना पड़ता है, तब कहीं तालुके का ठीक शासन होता है। फिर गृहस्थाश्रम के सम्बन्ध में बात चली।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – बात यह है, संसार करने पर मन की शक्ति का अपव्यय होता है। इस अपव्यय से जो हानि होती है वह तभी पूरी हो सकती है जब कोई संन्यास ले। पिता प्रथम जन्मदाता है। उसके बाद द्वितीय जन्म उपनयन के समय होता है। एक बार फिर जन्म होता है, संन्यास के समय। कामिनी और कांचन – ये ही दो विघ्न हैं। स्त्री की आसक्ति पुरुष को ईश्वर के मार्ग से डिगा देती है। किस तरह पतन होता है, यह पुरुष नहीं जान सकता। किले के अन्दर जाते समय यह बिलकुल न जान सका कि ढालू रास्ते से जा रहा हूँ। जब किले के अन्दर गाड़ी पहुँची तो मालूम हुआ कि कितने नीचे आ

गया हूँ! स्त्रियाँ पुरुषों को कुछ नहीं समझने देतीं। कप्तान* कहता है, मेरी स्त्री ज्ञानी है! भूत जिस पर सवार होता है, वह नहीं जानता कि भूत सवार है, वह कहता है कि मैं आनन्द में हूँ। (सभी निस्तब्ध हैं।)

श्रीरामकृष्ण – संसार में केवल काम का ही नहीं, क्रोध का भी भय है। कामना के मार्ग में रुकावट होने से ही क्रोध पैदा हो जाता है।

मास्टर – भोजन करते समय मेरी थाली से बिल्ली कुछ खाना उठा लेने को बढ़ती है, मैं कुछ नहीं बोल सकता।

श्रीरामकृष्ण – क्यों! एक बार मारते क्यों नहीं? उसमें क्या दोष है? गृहस्थ को फुफकारना चाहिए, पर विष न उगलना चाहिए। किसी को हानि नहीं पहुँचानी चाहिए, पर शत्रुओं के हाथ से बचने के लिए क्रोध का आभास दिखलाना चाहिए; नहीं तो शत्रु आकर उसे हानि पहुँचाएँगे। पर त्यागी के लिए फुफकारने की भी आवश्यकता नहीं है।

एक भक्त – महाराज, संसार में रहकर भगवान् को पाना बड़ा ही कठिन देखता हूँ। कितने आदमी ऐसे हो सकते हैं? ऐसा तो कोई देखने में नहीं आता।

श्रीरामकृष्ण – क्यों नहीं होगा? उधर सुना है कि एक डिप्टी है। बड़ा अच्छा आदमी है। प्रतापसिंह उसका नाम है। दानशीलता, ईश्वर की भक्ति आदि बहुतसे गुण उसमे हैं। मुझे लेने के लिए आदमी भेजा था। ऐसे लोग भी तो है।

(२)

साधना का प्रयोजन। गुरुवाक्य में विश्वास। व्यास का विश्वास

श्रीरामकृष्ण – साधना की बड़ी आवश्यकता है। फिर क्यों नहीं होगा? यदि ठीक ठीक विश्वास हो, तो अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता। चाहिए गुरु के वचनों पर विश्वास।

"व्यासदेव यमुना के उस पार जाएँगे इतने में वहाँ गोपियाँ आयीं। वे भी पार जाएँगी, पर नाव नहीं मिलती। गोपियों ने कहा, 'महाराज, अब क्या किया जाय?' व्यासदेव ने कहा, 'अच्छा, तुम लोगों को पार किए देता हूँ; पर मुझे बड़ी भूख लगी है, तुम्हारे पास कुछ हैं?' गोपियों के पास दूध, दही, मक्खन आदि था सब कुछ उन्होंने खाया। गोपियों ने कहा, 'महाराज, अब पार जाने का क्या हुआ?' व्यासदेव तब किनारे पर जाकर खड़े हुए और कहने लगे, 'हे यमुने, यदि आज मैंने कुछ न खाया हो तो तुम्हारा जल दो भागों में बँट जाय' यह कहते ही जल अलग-अलग हो गया। गोपियाँ यह देखकर दंग रह गयीं; सोचने लगीं, इन्होंने अभी अभी तो इतनी चीजें खायी हैं, फिर भी कहते हैं,

* श्री विश्वनाथ उपाध्याय

'यदि आज मैने कुछ न खाया हो'

"यही दृढ़ विश्वास है। मैने नही – हृदय मे जो नारायण है उन्होंने खाया है।

"शंकराचार्य तो ब्रह्मज्ञानी थे, पर पहले उनमे भेदबुद्धि भी थी। वैसा विश्वास न था। चाण्डाल मॉस का बोझ लिए आ रहा था, वे गंगास्नान करके ही उठे थे कि चाण्डाल से स्पर्श हो गया। कह उठे, 'अरे! तूने मुझे छू लिया!' चाण्डाल ने कहा, 'महाराज, न आपने मुझे छुआ न मैने आपको! शुद्ध आत्मा – न वह शरीर है, न पंचभूत है, और न चौबीस तत्त्व है।' तब शंकर को ज्ञान हुआ।

"जड़भरत राजा रहुगण की पालकी ले जाते समय जब आत्मज्ञान की बाते करने लगे, तब राजा ने पालकी से नीचे उतरकर कहा, 'आप कौन है? जड़भरत ने कहा, 'नेति नेति – मै शुद्ध आत्मा हूँ।' उनका पक्का विश्वास था कि वे शुद्ध आत्मा है।

ज्ञानयोग और भक्तियोग

"सोऽहम्। मै शुद्ध आत्मा हूँ – यह ज्ञानियो का मत है। भक्त कहते है, यह सब भगवान् का ऐश्वर्य है। धनी का ऐश्वर्य न होने मे उसे कौन जान सकता है? पर यदि साधक की भक्ति देखकर ईश्वर कहेंगे कि जो मै हूँ, वही तू भी है, तब दूसरी बात है। राजा बैठे है, उस समय नौकर यदि सिंहासन पर जाकर बैठ जाय और कहे, 'राजा, जो तुम हो वही मै भी हूँ', तो लोग उसे पागल कहेंगे। पर यदि नौकर की सेवा से सन्तुष्ट हो राजा एक दिन यह कहे, 'आ जा, तू मेरे पास बैठ, इसमे कोई दोष नही, जो तू है वही मै भी हूँ।' और तब यदि वह जाकर बैठे तो उसमे कोई दोष नही है। एक साधारण जीव का यह कहना कि सोऽहम् – मै वही हूँ – अच्छा नहीं है। जल की ही तरंग होती है तरंग का जल थोड़े ही होता है।

"बात यह है कि मन स्थिर न होने से योग नही होता, तुम चाहे जिस राह से चलो। मन योगी के वश मे रहता है, योगी मन के वश मे नही।

'मन स्थिर होने पर वायु स्थिर होती है – उससे कुम्भक होता है। वह कुम्भक भक्तियोग से भी होता है, भक्ति से वायु स्थिर हो जाती है। 'मेरे निताई मस्त हाथी है!' 'मेरे निताई मस्त हाथी है!' यह कहते कहते जब भाव हो जाता है, तब वह मनुष्य पूरा वाक्य नही कह सकता, केवल 'हाथी है' 'हाथी है' कहता है। इसके बाद सिर्फ 'हा –' इतना ही! भाव से वायु स्थिर होती है, और उससे कुम्भक होता है।

"एक आदमी झाड़ू दे रहा था कि किसी ने आकर कहा, 'अजी, अमुक मर गया!' जो झाड़ू दे रहा था, उसका यदि वह अपना आदमी न हुआ, तो वह झाड़ू देता ही रहता है और बीच बीच मे कहता है, 'दुःख की बात है, वह आदमी मर गया! बड़ा अच्छा आदमी था।' इधर झाड़ू भी चल रहा है। परन्तु यदि कोई अपना हुआ तो झाड़ू उसके साथ

से छूट जाता है, और 'हाय!' कहकर वह बैठ जाता है। उस समय उसकी वायु स्थिर हो जाती है; कोई काम या विचार उससे फिर नहीं हो सकता। औरतों में नहीं देखा – यदि कोई निर्वाक् होकर कुछ देखे या सुने तो दूसरी औरतें उससे कहती हैं, 'क्यों, क्या तुझे भाव हुआ हैं?' यहाँ पर भी वायु स्थिर हो गयी है, इसी से निर्वाक् होकर मुँह खोले रहती है।

ज्ञानी के लक्षण। साधना-सिद्ध और नित्य-सिद्ध

"सोऽहम् सोऽहम् कहने से ही नही होता। ज्ञानी के लक्षण हैं। नरेन्द्र के नेत्र उभरे हुए है। इनके भी कपाल और नेत्र का लक्षण अच्छा है।

"फिर सब की एक-सी हालत नही होती। जीव चार प्रकार के कहे गए है – बद्ध, मुमुक्षु, मुक्त और नित्य। सभी को साधना करनी पड़ती है, यह बात भी नहीं है। नित्य-सिद्ध और साधना-सिद्ध, दो तरह के साधक है। कोई अनेक साधनाएँ करने पर ईश्वर को पाता है; कोई जन्म से ही सिद्ध है, जैसे प्रह्लाद। 'होमा' नाम की चिड़िया आकाश में रहती है। वहीं वह अण्डा देती है। अण्डा आकाश से गिरता है और गिरते ही गिरते वह फूट जाता है, और उससे बच्चा निकलकर गिरता है।वह इतने ऊँचे पर से गिरता है कि गिरते ही गिरते उसके पंख निकल आते हैं। जब वह पृथ्वी के पास आ जाता है तब देखता है कि जमीन से टकराते ही वह चूरचूर हो जाएगा। तब वह सीधे ऊपर उड़ जाता है – अपनी माँ के पास!

"प्रह्लाद आदि नित्य-सिद्ध भक्तों की साधना बाद में होती है।साधना के पहले ही उन्हे ईश्वर का लाभ होता है, जैसे लौकी, कुम्हड़े का पहले फल, और उसके बाद फूल होता है। (राखाल के पिता से) नीच वंश में भी यदि नित्य-सिद्ध जन्म ले तो वह वही होता है, दूसरा कुछ नहीं होता। चने के मैली जगह में गिरने पर भी चने का ही पेड़ होता है।

शक्ति का तारतम्य – विद्यासागर

"ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है, किसी को कम। कहीं पर एक दिया जल रहा है, कहीं पर एक मशाल। विद्यासागर की बात से जान लिया कि उनकी बुद्धि की पहुँच कितनी दूर है। जब मैंने शक्तिविशेष की बात कही, तब विद्यासागर ने कहा, 'महाराज, तो क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति दी है ओर किसी को कम?' मैंने भी कहा, 'फिर क्या? शक्ति की कमी-बेशी हुए बिना तुम्हारा इतना नाम क्यों है? तुम्हारी विद्या, तुम्हारी दया, यही सब सुनकर तो हम लोग आए हैं। तुम्हारे कोई दो सींग तो निकले नहीं हैं!' विद्यासागर की इतनी विद्या और इतना नाम होते हुए भी उन्होंने ऐसी कच्ची बात कह दी! बात यह है कि जाल में पहले-पहल बड़ी मछलियाँ पड़ती हैं; रोहू, कातल आदि। उसके बाद मछुआ पैर से कीचड़ को घोंट देता है। तब तरह तरह की छोटी छोटी मछलियाँ

निकल आती हैं, और तुरन्त फँस जाती हैं। ईश्वर को न जानने से थोड़ी ही देर में भीतर से छोटी छोटी मछलियाँ (कच्ची बातें) निकल पड़ती हैं! केवल पण्डित होने से क्या होगा?"

□□□

परिच्छेद ४१

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

(१)

तान्त्रिक भक्त तथा संसार। निर्लिप्त को भी भय है

श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद दक्षिणेश्वर मन्दिर के अपने कमरे में थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। अधर तथा मास्टर ने आकर प्रणाम किया। एक तान्त्रिक भक्त भी आए हैं। राखाल, हाजरा, रामलाल आदि आजकल श्रीरामकृष्ण के पास रहते हैं। आज रविवार है, १७ जून १८८३ ई.।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – गृहस्थाश्रम में होगा क्यों नही? परन्तु बहुत कठिन है। जनक आदि ज्ञान प्राप्त करने के बाद गृहस्थाश्रम में आए थे। परन्तु फिर भी भय है! निष्काम गृहस्थ को भी भय है! भैरवी को देखकर जनक ने मुँह नीचा कर लिया। स्त्री के दर्शन से संकोच हुआ था। भैरवी ने कहाँ, 'जनक! मैं देखती हूँ कि तुम्हें अभी ज्ञान नहीं हुआ। तुममें अभी भी स्त्रीपुरुष-बुद्धि विद्यमान है।'

"कितना ही सयाना क्यों न हो, काजल की कोठरी में रहने पर शरीर पर कुछ न कुछ काला दाग लगेगा ही।

"मैंने देखा है, गृहस्थ भक्त जिस समय शुद्धवस्त्र पहनकर पूजा करते हैं उस समय उनका अच्छा भाव रहता है। यहाँ तक कि जलपान करने तक वही भाव रहता है। उसके बाद अपनी वही मूर्ति; फिर से रज, तम।

"सत्त्वगुण से भक्ति होती है। किन्तु भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज, भक्ति का तम है। भक्ति का सत्त्व विशुद्ध है; इसकी प्राप्ति होने पर, ईश्वर को छोड़ और किसी में भी मन नहीं लगता। देह की रक्षा हो सके, केवल इतना ही शरीर की ओर ध्यान रहता है।

परमहंस त्रिगुणातीत होते हैं

"परमहंस तीनों गुणों से अतीत होते है।* उनमें तीन गुण हैं और फिर नहीं भी हैं।

---

* मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते।। – गीता, १४। २६

ठीक बालक जैसा, किसी गुण के अधीन नहीं है। इसलिए परमहंस छोटे छोटे बच्चों को अपने पास आने देते है, जिससे उनके स्वभाव को अपना सकें।

"परमहंस संचय नहीं कर सकते। यह अवस्था गृहस्थों के लिए नही है। उन्हें अपने घरवालों के लिए संचय करना पड़ता है।"

तान्त्रिक भक्त – क्या परमहंस को पाप-पुण्य का बोध रहता है?

श्रीरामकृष्ण – केशव सेन ने यह बात पूछी थी। मैंने कहा, 'और अधिक कहने पर तुम्हारा दल-बल नहीं रहेगा।' केशव ने कहा, 'तो फिर रहने दीजिए, महाराज।'

"पाप-पुण्य क्या है, जानते हो? परमहंस-अवस्था में अनुभव होता है कि वे ही सुबुद्धि देते है, वे ही कुबुद्धि देते है। फल क्या मीठे, कड़ुए नही होते? किसी पेड़ में मीठा फल, किसी मे कड़ुआ या खट्टा फल। उन्होने मीठे आम का वृक्ष भी बनाया है और फिर खट्टे फल का वृक्ष भी!"

तान्त्रिक भक्त – जी हाँ, पहाड़ पर गुलाब की खेती दिखायी देती है। जहाँ तक दृष्टि जाती है केवल गुलाब ही गुलाब का खेत!

श्रीरामकृष्ण – परमहंस देखता है, यह सब उनकी माया का ऐश्वर्य है, सत्-असत्, भला-बुरा, पाप-पुण्य यह सब समझना बहुत दूर की बात है। उस अवस्था मै दल-बल नहीं रहता।

कर्मफल। पाप-पुण्य

तान्त्रिक भक्त – तो फिर कर्मफल है?

श्रीरामकृष्ण – वह भी है। अच्छा कर्म करने पर सुफल और बुरा कर्म करने पर कुफल मिलता है। मिर्च खाने पर तीखा तो लगेगा ही! यह सब उनकी लीला है, खेल है।

तान्त्रिक भक्त – हमारे लिए क्या उपाय है? कर्म का फल तो है न?

श्रीरामकृष्ण – होने दो, परन्तु उनके भक्तों की बात अलग है।

यह कहकर आप गाने लगे –

(भावार्थ) – "रे मन! तुम खेती का काम नहीं जानते हो! ऐसी मनुष्यदेहरूपी जमीन पड़ी ही रह गयी! यदि तुम खेती करते तो इसमे सोना फल सकता था। पहले तुम कालीनाम का घेरा लगा लो, फसल नष्ट न होगी। वह तो मुक्तकेशी का पक्का घेरा है, उसके पास यम भी नहीं आता। गुरु का दिया हुआ बीज बोकर भक्ति का जल सींच देना। हे मन, यदि तुम अकेले न कर सको, तो रामप्रसाद को साथ ले लेना।"

फिर गा रहे हैं –

(भावार्थ) – " 'यम के आने का रास्ता बन्द हो गया। मेरे मन का सन्देह मिट गया। मेरे घर के नौ दरवाजों पर चार शिव पहरेदार हैं। एक ही स्तम्भ पर घर है, जो तीन रस्सियों

से बँधा हुआ है। सहस्रदल-कमल पर श्रीनाथ अभय देते हुए बैठे है।'

"काशी मे ब्राह्मण मरे या वेश्या – सभी शिव होगे।

"जब हरिनाम से, कालीनाम से, रामनाम से, ऑखो मे ऑसू भर आते है, तब सन्ध्या-कवच आदि की कुछ भी आवश्यकता नही रह जाती। कर्म का त्याग हो जाता है। कर्म का फल स्पर्श नही करता।"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "चिन्तन करने पर भाव का उदय होता है। जैसा भाव, वैसी ही प्राप्ति होती है – विश्वास ही मूल बात है। यदि चित्त काली के चरणरूपी अमृत-सरोवर मे डूबा रहता है, नो फिर पूजा-होम, यज्ञ आदि का कुछ भी महत्त्व नही है।"

श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे है –

(भावार्थ) – "'जो त्रिसन्ध्या मे काली का नाम लेता है, क्या वह पूजा-सन्ध्यादि चाहता है? सन्ध्या स्वयं उसकी खोज मे फिरती रहती है, पर उससे मिल नही पाती! यदि 'काली काली' कहते हुए मेरे प्राण निकल जाए, तो फिर गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची आदि की कौन परवाह करता है!'

"ईश्वर मे मग्न हो जाने पर फिर असद्बुद्धि, पापबुद्धि नही रह जाती।"

तान्त्रिक भक्त – आपने कहा है 'विद्या का मै' रहता है।

श्रीरामकृष्ण – 'विद्या का मै', 'भक्त मै', 'दास मै', 'भला मै' रहता है। 'बदमाश मै' चला जाता है। (हँसी)

तान्त्रिक भक्त – जी महाराज, हमारे अनेक मन्देह मिट गए।

श्रीरामकृष्ण – आत्मा का साक्षात्कार होने पर सब सन्देह मिट जाते है।*

भक्ति का तम। सन्देह। अष्टसिद्धि

"भक्ति का तम लाओ। कहो, – जब मैने राम का नाम लिया, काली का नाम लिया, तब यह कैसे सम्भव है कि मेरा बन्धन रहे, मेरा कर्मफल रहे?"

श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "मॉ, यदि मै 'दुर्गा दुर्गा' कहता हआ मरू, तो हे शंकरी, देखूँगा कि अन्त मे इस दीन का तुम कैसे उद्धार नही करती! मां! गो-ब्राह्मण की, भ्रूण की तथा नारी की हत्या, सुरापान आदि पापो की रत्तीभर परवाह न कर मै ब्रह्मपद प्राप्त कर सकता हूँ।"

श्रीरामकृष्ण फिर कहते है – "विश्वास, विश्वास, विश्वास! गुरु ने कह दिया है, 'राम ही सब कुछ बनकर विराजमान है। वही राम घट-घट मे लेटा।' कुत्ता रोटी खाता जा

---

* भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे।। – मुण्डक उपनिषद, २। २। ८

रहा है। भक्त कहता है, 'राम! ठहरो, ठहरो, रोटी में घी लगा दूँ।' गुरुवाक्य में ऐसा विश्वास!

"भुक्कड़ों को विश्वास नहीं होता। सदा ही सन्देह! आत्मा का साक्षात्कार हुए बिना सब सन्देह दूर नहीं होते।

"शुद्ध भक्ति, जिसमें कोई कामना न हो, ऐसी भक्ति द्वारा उन्हें शीघ्र प्राप्त किया जा सकता है।

"अणिमा आदि सिद्धियाँ – ये सब कामनाएँ हैं। कृष्ण ने अर्जुन से कहा है, 'भाई, अणिमा आदि सिद्धियों में से एक के भी रहते ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। शक्ति को थोड़ा बढ़ा भर सकती हैं वे।"

तान्त्रिक भक्त – महाराज, तान्त्रिक क्रिया आजकल सफल क्यों नहीं होती?

श्रीरामकृष्ण – सर्वांगीण नहीं होती और भक्तिपूर्वक भी नही की जाती, इसीलिए सफल नहीं होती।

अब श्रीरामकृष्ण उपदेश समाप्त कर रहे है। कह रहे हैं – "भक्ति ही सार है। सच्चे भक्त को कोई भय, कोई चिन्ता नहीं। माँ सब कुछ जानती है। बिल्ली चूहा पकड़ती है एक प्रकार से, परन्तु अपने बच्चे को पकड़ती है दूसरे प्रकार से।'

□□□

परिच्छेद ४२

पानीहाटी महोत्सव में

(१)

कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण पानीहाटी के महोत्सव में राजपथ पर बहुत लोगों से घिरे हुए संकीर्तनदल के बीच में नृत्य कर रहे हैं। दिन का एक बजा है। आज सोमवार, ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी तिथि है। तारीख १८ जून १८८३ ई.।

संकीर्तन के बीच में श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए चारों ओर लोग कतार बाँधकर खड़े है। श्रीरामकृष्ण प्रेम में मतवाले हो नाच रहे हैं। कोई कोई सोच रहे हैं कि क्या श्रीगौरांग फिर प्रकट हुए है! चारों ओर हरि-ध्वनि सागर की तरंगों के समान उमड़ रही है। चारो ओर से लोग फूल बरसा रहे हैं और बतासे लुटा रहे हैं।

श्री नवद्वीप गोस्वामी संकीर्तन करते हुए राघव पण्डित के मन्दिर की ओर आ रहे थे कि एकाएक श्रीरामकृष्ण दौड़कर उनसे आ मिले और नाचने लगे।

यह राघव पण्डित का 'चिउड़े का महोत्सव' है। शुक्लपक्ष की त्रयोदशी तिथि पर प्रतिवर्ष महोत्सव होता है। इस महोत्सव को पहले दास रघुनाथ ने किया था। उसके बाद राघव पण्डित प्रतिवर्ष करते थे। दास रघुनाथ से नित्यानन्द ने कहा था, "अरे, तू घर से केवल भाग-भागकर आता है, और हमसे छिपाकर प्रेम का स्वाद लेता रहता है! हमें पता तक नहीं लगने देता! आज तुझे दण्ड दूँगा; तू चिउड़े का महोत्सव करके भक्तों की सेवा कर।" श्रीरामकृष्ण प्राय: प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं, आज भी यहाँ राम आदि भक्तों के साथ आनेवाले थे। राम सबेरे मास्टर के साथ कलकत्ते से दक्षिणेश्वर आये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर वहीं उत्तरवाले बरामदे में उन्होंने प्रसाद पाया। राम कलकत्ते से जिस गाड़ी पर आये थे, उसी पर श्रीरामकृष्ण पानीहाटी आये। राखाल, मास्टर, राम, भवनाथ तथा और भी दो-एक भक्त उनके साथ थे।

गाड़ी मैगजीन रोड से होकर चानक के बड़े रास्ते पर आयी। जाते जाते श्रीरामकृष्ण बालक भक्तों से विनोद करने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव-स्थल पर गाड़ी पहुँचते ही राम आदि भक्त यह देखकर विस्मित हुए कि श्रीरामकृष्ण जो अभी गाड़ी में विनोद कर रहे थे, एकाएक अकेले ही उतरकर बड़े वेग से दौड़ रहे हैं। बहुत ढूँढ़ने पर उन्होंने देखा कि वे नवद्वीप गोस्वामी के संकीर्तन के दल में नृत्य कर रहे हैं और बीच बीच में समाधिस्थ भी हो रहे हैं। समाधि की दशा में कहीं वे गिर न पड़ें, इसलिए नवद्वीप गोस्वामी उन्हें बड़े यत्न से सम्हाल रहे हैं। चारों ओर भक्तगण हरि-ध्वनि कर उनके चरणों पर फूल और बतासे चढ़ा रहे हैं और एक बार उनके दर्शन पाने के लिए धक्कमधक्का कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण अर्धबाह्य दशा में नृत्य कर रहे हैं। फिर बाह्य दशा में आकर वे गाने लगे –

(भावार्थ) – "हरि का नाम लेते ही जिनकी आँखों से आँसुओं की झड़ी लग जाती है, वे दोनों भाई आये हैं; जो स्वयं नाचकर जगत् को नचाते हैं, वे दोनों भाई आये हैं जो स्वयं रोकर जगत् को रुलाते हैं, और जो मार खाकर भी प्रेम की याचना करते हैं, वे आये हैं"!

श्रीरामकृष्ण के साथ सब उन्मत्त हो नाच रहे हैं, और अनुभव कर रहे हैं कि गौरांग और निताई हमारे सामने नाच रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे –

(भावार्थ) – "गौरांग के प्रेम के हिलोरों से नवद्वीप डाँवाडोल हो रहा है।"

संकीर्तन की तरंग राघव के मन्दिर की ओर बढ़ रही है। वहाँ परिक्रमा और नृत्य आदि करने के बाद श्रीविग्रह को प्रणाम कर वह तरंगायित जनसंघ गंगातट पर अवस्थित श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर की ओर बढ़ रहा है।

संकीर्तनकारों में से कुछ ही लोग श्रीराधाकृष्ण के मन्दिर में घुस पाये हैं। अधिकांश लोग दरवाजे से ही एक दूसरे को ढकेलते हुए झाँक रहे है।

श्रीरामकृष्ण श्रीराधाकृष्ण के आँगन में फिर नाच रहे हैं। कीर्तनानन्द में बिलकुल मस्त हैं! बीच बीच में समाधिस्थ हो रहे हैं और चारों ओर से फूल-बतासे चरणों पर पड़ रहे हैं। आँगन के भीतर बारम्बार हरि-ध्वनि हो रही है। वही ध्वनि सड़क पर आते ही हजारों कण्ठों से उच्चारित होने लगी। गंगा पर नावों से आने-जानेवाले लोग चकित होकर इस सागर-गर्जन के समान उठती हुई ध्वनि को सुनने लगे और वे स्वयं भी 'हरिबोल' 'हरिबोल' कहने लगे।

पानीहाटी के महोत्सव में एकत्रित हजारों नर-नारी सोच रहे है कि इन महापुरुष के भीतर निश्चित ही श्रीगौरांग का आविर्भाव हुआ है। दो-एक आदमी यह विचार कर रहे हैं कि शायद ये ही साक्षात् गौरांग हों।

छोटेसे आँगन में बहुतसे लोग एकत्रित हुए हैं। भक्तगण बड़े यत्न से श्रीरामकृष्ण

को बाहर लाये।

श्रीरामकृष्ण श्री मणि सेन की बैठक मे आकर बैठे। इन्ही सेन परिवारवालो की ओर से पानीहाटी मे श्रीराधाकृष्ण की सेवा होती है। वे ही प्रतिवर्ष महोत्सव का आयोजन करते है और श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देते है।

श्रीरामकृष्ण के कुछ विश्राम करने के बाद मणि सेन और उनके गुरुदेव नवद्वीप गोस्वामी ने उनको अलग ले जाकर प्रसाद लाकर भोजन कराया। कुछ देर बाद राम, राखाल, मास्टर, भवनाथ आदि भक्त एक दूसरे कमरे मे बिठाये गये। भक्तवत्सल श्रीरामकृष्ण स्वयं खड़े हो आनन्द करते हुए उनको खिला रहे है।

(२)

श्रीगौरांग का महाभाव, प्रेम और तीन अवस्थाएँ।

दोपहर का समय है। राखाल, राम आदि भक्तो के साथ श्रीरामकृष्ण मणि सेन की बैठक मे विराजमान है। नवद्वीप गोस्वामी भोजन करके श्रीरामकृष्ण के पास आ बैठे है।

मणि सेन ने श्रीरामकृष्ण को गाड़ी का किराया देना चाहा। श्रीरामकृष्ण बैठक मे एक कोच पर बैठै है, "और कहते है गाड़ी का किराया वे लोग (राम आदि) क्यो लेगे? वे तो पैसा कमाते है।"

अब श्रीरामकृष्ण नवद्वीप गोस्वामी से ईश्वरी प्रसंग करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (नवद्वीप से) – भक्ति के परिपक्व होने पर भाव होता है, फिर महाभाव, फिर प्रेम, फिर वस्तु (ईश्वर) का लाभ होता है।

"गौरांग को महाभाव और प्रेम हुआ था।

"इस प्रेम के होने पर मनुष्य जगत् को तो भूल ही जाता है, बल्कि अपना शरीर, जो इतना प्रिय है, उसकी भी सुधि नही रहती। गौरांग को यह प्रेम हुआ था। समुद्र को देखते ही यमुना समझकर वे उसमे कूद पड़े!

"जीवो को महाभाव या प्रेम नही होता, उनको भाव तक ही होता है। फिर गौरांग को तीन अवस्थाएँ होती थी।"

नवद्वीप – जी हाँ। अन्तर्दशा, अर्धबाह्य दशा और बाह्य दशा।

श्रीरामकृष्ण – अन्तर्दशा मे वे समाधिस्थ रहते थे, अर्धबाह्य दशा मे केवल नृत्य कर सकते थे, और बाह्य दशा मे नामसंकीर्तन करते थे।

नवद्वीप ने अपने लड़के को लाकर श्रीरामकृष्ण से परिचित करा दिया। वे तरुण है – शास्त्र का अध्ययन करते है। उन्होन श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

नवद्वीप – यह घर मे शास्त्र पढ़ता है। इस देश मे वेद एक प्रकार से अप्राप्य ही थे। मैक्समूलर ने उन्हे छपवाया, इसी से तो लोग अब उनको पढ़ सकते है।

पाण्डित्य और शास्त्र

श्रीरामकृष्ण – अधिक शास्त्र पढ़ने से और भी हानि होती है।

"शास्त्र का सार जान लेना चाहिए। फिर ग्रन्थ की क्या आवश्यकता है?

"शास्त्र का सार जान लेने पर डुबकी लगानी चाहिए – ईश्वर का लाभ करने के लिए।

"मुझे माँ ने बतला दिया है कि वेदान्त का सार है – 'ब्रह्म सत्य और जगत् मिथ्या।' गीता का सार क्या है? दस बार 'गीता' शब्द कहने से जो हो वही – अर्थात् त्यागी, त्यागी।

नवद्वीप – ठीक 'त्यागी' नहीं बनता, 'तागी' होता है। फिर उसका भी अर्थ वही है। 'तग्' धातु और 'घञ्' प्रत्यय= ताग उस पर 'इन्' प्रत्यय लगाने पर 'तागी' बनता है। 'त्यागी' का अर्थ जो है, 'तागी' का भी वही है।

श्रीरामकृष्ण – गीता का सार यही है कि हे जीव, सब त्यागकर भगवान का लाभ करने के लिए साधना करो।

नवद्वीप – त्याग की ओर तो मन नहीं जाता!

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग गोस्वामी हो, तुम्हारे यहाँ देवसेवा होती है, – तुम्हारे संसार-त्याग करने पर काम नहीं चलेगा। ऐसा करने से देवसेवा कौन करेगा? तुम लोग मन से त्याग करना।

"ईश्वर ही ने लोकशिक्षा के लिए तुम लोगों को संसार में रखा है। तुम हजार संकल्प करो, त्याग नहीं कर सकोगे। उन्होने तुम्हे ऐसी प्रकृति दी है कि तुम्हें संसार का कामकाज करना ही पड़ेगा।

"श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा – 'युद्ध नहीं करूँगा' यह तुम क्या कह रहे हो? इच्छा करने ही से तुम युद्ध से निवृत्त न हो सकोगे। तुम्हारी प्रकृति तुमसे युद्ध करायेगी।"

श्रीकृष्ण अर्जुन से बातें कर रहे हैं – यह कहते ही श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हो रहे हैं। बात ही बात में सब अंग स्थिर हो गये। आँखें एकटक हो गयी। साँस चल रही है कि नहीं – जान नहीं पड़ता।

नवद्वीप गोस्वामी, उनके लड़के और भक्तगण निर्वाक् हो यह दृश्य देख रहे हैं।

कुछ प्रकृतिस्थ हो श्रीरामकृष्ण नवद्वीप से कहते हैं –

"योग और भोग। तुम लोग गोस्वामी वंश के हो, तुम लोगों के लिए दोनों हैं।

"अब केवल प्रार्थना, हार्दिक प्रार्थना करो कि हे ईश्वर, तुम्हारी इस भुवनमोहिनी माया के ऐश्वर्य को मैं नहीं चाहता, – मैं तुम्हें चाहता हूँ।

"ईश्वर तो सब प्राणियों में हैं। फिर भक्त किसे कहते हैं? जो ईश्वर में रहता है, जिसका मन, प्राण, अन्तरात्मा – सब कुछ उसमें लीन हो गया है।"

अब श्रीरामकृष्ण सहज दशा में आ गये है। नवद्वीप से कहते हैं –

"मुझे यह जो अवस्था (समाधि-अवस्था) होती है, इसे कोई कोई रोग कहते हैं। इस पर मेरा कहना यह है कि जिसके चैतन्य से जगत् चैतन्यमय है उसकी चिन्ता कर कोई अचैतन्य कैसे हो सकता है?"

मणि सेन अभ्यागत ब्राह्मणो और वैष्णवो को बिदा कर रहे है – उनकी मर्यादा के अनुसार किसी को एक रुपया, किसी को दो रुपये बिदाई देते है। श्रीरामकृष्ण को पॉच रुपये देने आये। आप बोले, "मुझे रुपये न लेने चाहिए।" तो भी मणि सेन नही मानते। तब श्रीरामकृष्ण ने कहा, "यदि रुपये दोगे तो तुम्हे तुम्हारे गुरु की शपथ है।" मणि सेन इतने पर भी देने आये। तब श्रीरामकृष्ण ने अधीर होकर मास्टर से कहा, "क्यो जी, लेना चाहिए?" मास्टर ने बड़ी आपत्ति करते हुए कहा, "जी नही! किसी हालत मे न ले!"

मणि सेन के घरवालों ने तब आम और मिठाई खरीदने के नाम पर राखाल के हाथ मे रुपये दिए।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मैने गुरु की शपथ दी है – मै अब मुक्त हूँ। राखाल ने रुपये लिए है – अब वह जाने!

श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ गाड़ी पर बैठे – दक्षिणेश्वर लौट जाएँगे।

निराकार ध्यान और श्रीरामकृष्ण

मार्ग मे मोती शील का मन्दिर है। श्रीरामकृष्ण बहुत दिनो से मास्टर से कहते आए है कि एक साथ आकर इस मन्दिर की झील को देखेगे – यह सिखलाने के लिए कि निराकार ध्यान कैसे करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण को खूब सर्दी हुई है, तथापि भक्तो के साथ मन्दिर देखने के लिए गाड़ी से उतरे।

मन्दिर मे श्रीगौरांग की पूजा होती है। अभी सन्ध्या होने मे कुछ देर है। श्रीरामकृष्ण ने भक्तो के साथ गौरांग-मूर्ति के सम्मुख भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया।

अब मन्दिर के पूर्व की ओर जो झील है, उसके घाट पर आकर झील का पानी और मछलियो को देख रहे है। कोई इन मछलियो की हिंसा नही करता। कुछ चारा फेकने पर बड़ी बड़ी मछलियॉ झुण्ड के झुण्ड सामने आकर खाने लगती है – फिर निर्भय होकर आनन्द से पानी मे घूमती-फिरती है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कहते है, "यह देखो कैसी मछलियॉ है! चिदानन्द-सागर मे इन मछलियो की तरह आनन्द से विचरण करो।"

परिच्छेद ४३

बलराम के मकान पर

आत्मदर्शन का उपाय। नित्यलीला-योग

श्रीरामकृष्ण ने आज कलकत्ते मे बलराम के मकान पर शुभागमन किया है। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल भी हैं। श्रीरामकृष्ण भावमग्न हुए है। आज ज्येष्ठ कृष्ण पंचमी, सोमवार, २५ जून १८८३, ई.। समय दिन के पाँच बजे का होगा।

श्रीरामकृष्ण (भाव के आवेश मे) – देखो, अन्तर से पुकारने पर अपने स्वरूप को देखा जाता है, परन्तु विषयभोग की वासना जितनी रहती है, उतनी ही बाधा होती है।

मास्टर – जी, आप जैसा कहते है, डुबकी लगाना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण (आनन्दित होकर) – बहुत ठीक।

सभी चुप है; श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – देखो सभी को आत्मदर्शन हो सकता है।

मास्टर – जी, परन्तु ईश्वर कर्ता है; वे अपनी इच्छानुसार भिन्न भिन्न प्रकार से लीला कर रहे है। किसी को चैतन्य दे रहे है, किसी को अज्ञानी बनाकर रखा है।

श्रीरामकृष्ण – नही, उनसे व्याकुल होकर प्रार्थना करनी पड़ती है। आन्तरिक होने पर वे प्रार्थना अवश्य सुनेंगे।

एक भक्त – जी हाँ, 'मै' है, इसलिए प्रार्थना करनी होगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – लीला के सहारे नित्य में जाना होता है – जिस प्रकार सीढ़ी पकड़-पकड़कर छत पर चढ़ना होता है। नित्यदर्शन के बाद नित्य से लीला मे आकर रहना होता है, भक्ति-भक्त लेकर। यही मेरा परिपक्व मत है।

"उनके अनेक रूप, अनेक लीलाएँ है। ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, जगत्-लीला। वे मानव बनकर, अवतार होकर युग युग मे आते है – प्रेम-भक्ति सिखाने के लिए। देखो न चैतन्यदेव को। अवतार द्वारा ही उनके प्रेम तथा भक्ति का आस्वादन किया जा सकता है। उनकी अनन्त लीलाएँ हैं – परन्तु मुझे आवश्यकता है प्रेम तथा भक्ति की। मुझे तो सिर्फ दूध चाहिए। गाय के स्तनों से ही दूध आता है। अवतार गाय के स्तन हैं।"

क्या श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि वे अवतीर्ण हुए हैं, उनका दर्शन करने से ही ईश्वर का दर्शन होता है? चैतन्यदेव का उल्लेख कर क्या श्रीरामकृष्ण अपनी ओर संकेत कर रहे है?

□□□

परिच्छेद ४४

दक्षिणेश्वर में

जे. एस. मिल और श्रीरामकृष्ण। मानव की सीमाबद्धता

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में शिवमन्दिर की सीढ़ी पर बैठै हैं। ज्येष्ठ मास, १८८३, ई. (जून, १८८३)। खूब गर्मी पड़ रही है। थोड़ी देर बाद सन्ध्या होगी। बर्फ आदि लेकर मास्टर आए और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर उनके चरणों के पास शिवमन्दिर की सीढ़ी पर बैठे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – मणि मल्लिक की नातिन का स्वामी आया था। उसने किसी पुस्तक* मे पढ़ा है, ईश्वर वैसे ज्ञानी, सर्वज्ञ नहीं जान पड़ते। नहीं तो इतना दु:ख क्यों? और यह जो जीव की मौत होती है, उन्हें एक बार मे मार डालना ही अच्छा होता, धीरे धीरे अनेक कष्ट देकर मारना क्यों? जिसने पुस्तक लिखी है, उसने कहा है कि यदि वह होता तो इससे बढ़िया सृष्टि कर सकता था!

मास्टर विस्मित होकर श्रीरामकृष्ण की बातें सुन रहे है और चुप बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं –

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – उन्हें क्या समझा जा सकता है जी? मैं भी कभी उन्हें अच्छा मानता हूँ और कभी बुरा। अपनी महामाया के भीतर हमें रखा है। कभी वह होश में लाते हैं, तो कभी बेहोश कर देते हैं। एक बार अज्ञान दूर हो जाता है, दूसरी बार फिर आकर घेर लेता है। तालाब का जल काई से ढँका हुआ है। पत्थर फेंकने पर कुछ जल दिखायी देता है, फिर थोड़ी देर बाद काई नाचते नाचते आकर उस जल को भी ढँक लेती है।

"जब तक देहबुद्धि है, तभी तक सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु, रोग-शोक हैं। ये सब देह के है, आत्मा के नहीं। देह की मृत्यु के बाद सम्भव है वे अच्छे स्थान पर ले जायें – जिस प्रकार प्रसव-वेदना के बाद सन्तान की प्राप्ति! आत्मज्ञान होने पर सुख-दु:ख, जन्म-मृत्यु स्वप्न जैसे लगते हैं।

"हम क्या समझेंगे? क्या एक सेर के लोटे में दस सेर दूध आ सकता है? नमक

---

* John Stuart Mill's Autobiography

का पुतला समुद्र नापने जाकर फिर खबर नहीं देता। गलकर उसी मे मिल जाता है।"

सन्ध्या हुई, मन्दिरों में आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे छोटे तख्त पर बैठकर जगज्जननी का चिन्तन कर रहे हैं। राखाल, लाटू, रामलाल, किशोरी गुप्त आदि भक्तगण उपस्थित हैं। मास्टर आज रात को ठहरेंगे। कमरे के उत्तर की ओर एक छोटे बरामदे में श्रीरामकृष्ण एक भक्त के साथ एकान्त में बातें कर रहे हैं। कह रहे हैं, "भोर में तथा उत्तर-रात्रि में ध्यान करना अच्छा है और प्रतिदिन सन्ध्या के बाद।" किस प्रकार ध्यान करना चाहिए, साकार ध्यान, अरूप ध्यान, यह सब बता रहे हैं।

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे में बैठ गए। रात के नौ बजे का समय होगा। मास्टर पास बैठे हैं, राखाल आदि बीच बीच में कमरे के भीतर आ-जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – देखो, यहाँ पर जो लोग आएँगे, उन सभी का सन्देह मिट जाएगा; क्या कहते हो?

मास्टर – जी हॉं।

उसी समय गंगा मे काफी दूरी पर माँझी अपनी नाव खेता हुआ गाना गा रहा था। गीत की वह ध्वनि मधुर अनाहत ध्वनि की तरह अनन्त आकाश के बीच में से होकर मानो गंगा के विशाल वक्ष को स्पर्श करती हुई श्रीरामकृष्ण के कानों में प्रविष्ट हुई। श्रीरामकृष्ण उसी समय भावाविष्ट हो गए! सारे शरीर के रोगटे खड़े हो उठे। श्रीरामकृष्ण मास्टर का हाथ पकड़कर कह रहे हैं, "देखो, देखो, मुझे रोमांच हो रहा है। मेरे शरीर पर हाथ रखकर देखो।" प्रेम से आविष्ट उनके उस रोमांचपूर्ण शरीर को छूकर वे विस्मित हो गये। 'पुलकपूरित अंग!' उपनिषद् में कहा गया है कि वे विश्व में आकाश में 'ओतप्रोत' होकर विद्यमान हैं। क्या वे ही शब्द के रूप में श्रीरामकृष्ण को स्पर्श कर रहे है? क्या यही शब्दब्रह्म है?*

थोड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – जो लोग यहाँ पर आते है, उनके शुभ संस्कार है; क्या कहते हो?

मास्टर – जी, हाँ।

श्रीरामकृष्ण – अधर के वैसे संस्कार थे।

मास्टर – इसमें क्या कहना है!

श्रीरामकृष्ण – सरल होने पर ईश्वर शीघ्र प्राप्त होते हैं। फिर दो पथ हैं, – सत् और असत्, सत् पथ से जाना चाहिए।

मास्टर – जी हाँ, धागे में यदि रेशा निकला हो तो वह सुई के भीतर नहीं जा

---

* एतस्मिन् नु खलु अक्षरे गार्गि आकाश ओतश्च प्रोतश्च। – बृहदारण्यक उपनिषद्, ३-८-११
शब्दः खे पौरुषं नृषु। – गीता, ७। ८

सकता।

श्रीरामकृष्ण – कौर के साथ मुँह में केश चले जाने पर सब का सब थूककर फेक देना पड़ता है।

मास्टर – परन्तु जैसे आप कहते है, जिन्होंने ईश्वर का दर्शन किया हैं, असत्-संग उनका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता; प्रखर अग्नि मे केले का पेड तक जल जाता है!

□□□

परिच्छेद ४५

अधर के मकान पर

श्रीरामकृष्ण कलकत्ते के बेनेटोला मे अधर के मकान पर पधारे है। आषाढ़ शुक्ला दशमी, १४ जुलाई १८८३, शनिवार। अधर श्रीरामकृष्ण को राजनारायण का चण्डी-संगीत सुनाएँगे। राखाल, मास्टर आदि साथ है। मन्दिर के बरामदे मे गाना हो रहा है। राजनारायण गाने लगे –

(भावार्थ) – "अभय पद मे प्राणो को सौप दिया है, फिर मुझे यम का क्या भय है? अपने सिर की शिखा मे कालीनाम का महामन्त्र बॉध लिया है। मै इस संसाररूपी बाजार मे अपने शरीर को बेचकर श्रीदुर्गानाम खरीद लाया हूँ। काली-नामरूपी कल्पतरु को हृदय मे बो दिया है। अब यम के आने पर हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसलिए बैठा हूँ।देह मे छः दुर्जन है, उन्हे भगा दिया है। मै जय दुर्गा, श्रीदुर्गा कहकर रवाना होने के लिए बैठा हूँ।"

श्रीरामकृष्ण थोड़ा सुनकर भावाविष्ट हो खड़े हो गए और मण्डली के साथ सम्मिलित होकर गाने लगे।

श्रीरामकृष्ण पद जोड़ रहे है – "ओ मॉ, रखो मॉ!" पद जोडते जोड़ते एकदम समाधिस्थ! बाह्यज्ञानशून्य, निस्पन्द होकर खड़े है गायक फिर गा रहे है –

(भावार्थ) – "यह किसकी कामिनी रणांगण को आलोकित कर रही है? मानो इसकी देहकान्ति के सामने जलधर बादल हार मानता है और दन्तपंक्ति मानो बिजली की चमक है!"

श्रीरामकृष्ण फिर समाधिस्थ हुए।

गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण अधर के बैठकघर मे जाकर भक्तो के साथ बैठ गए। ईश्वरीय चर्चा हो रही है। इस प्रकार भी वार्तालाप हो रहा है कि कोई कोई भक्त मानो 'अन्तःसार फल्गु नदी' है, ऊपर भाव का कोई प्रकाश नही!

परिच्छेद ४६

भक्तों के साथ

(१)

कलकत्ते की राह पर

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर से गाड़ी पर कलकत्ते की ओर जा रहे है। साथ मे रामलाल और दो-एक भक्त है। फाटक मे निकलते ही आपने देखा कि मणि हाथ मे चार फजली आम लिए हुए पैदल आ रहे है। मणि को देखकर गाड़ी को रोकने के लिए कहा। मणि ने गाड़ी पर सिर टेककर प्रणाम किया।

आज शनिवार, २१ जुलाई १८८३ ई., आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा है। दिन के चार बजे है। श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर जाएँगे, उसके बाद यदु मल्लिक के घर और फिर खेलात घोष के यहाँ जाएँगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से हँसते हुए) – तुम भी आओ न, हम अधर के यहां जा रहे है।

मणि – 'जैसी आपकी आज्ञा' कहकर गाड़ी पर बैठ गये।

मणि – अंग्रेजी पढ़े-लिखे है, इसी से संस्कार नही मानते थे पर कुछ दिन हुए श्रीरामकृष्ण के पास यह स्वीकार कर गए थे कि अधर के संस्कार थे, इसी से वे उनकी इतनी भक्ति करते है। घर लौटकर विचार करने पर मास्टर ने देखा कि संस्कार के बारे मे अभी तक उनको पूर्ण विश्वास नही हुआ। यही कहने के लिए आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आए है। श्रीरामकृष्ण बाते करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, अधर को तुम कैसा समझते हो?

मणि – उनमे बहुत अनुराग है।

श्रीरामकृष्ण – अधर भी तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करता है।

मणि – कुछ देर तक चुप रहे, फिर पूर्वजन्म के संस्कार की बात उठायी।

ईश्वर के कार्य समझना असम्भव है

मणि – मुझे 'पूर्वजन्म' और 'संस्कार' आदि पर उतना विश्वास नही है; क्या इससे मेरी भक्ति में कोई बाधा आएगी?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर की सृष्टि मे सब कुछ हो सकता है – यह विश्वास ही पर्याप्त है। मै जो सोचता हूँ वही सत्य है, और सब का मत मिथ्या है – ऐसा भाव मन मे न आने देना। बाकी ईश्वर ही समझा देगे।

"ईश्वर के कार्यो को मनुष्य क्या समझेगा? उनके कार्य अनन्त है! इसलिए मै इनको समझने का थोड़ा भी प्रयत्न नही करता। मैने सुन रखा है कि उनकी सृष्टि मे सब कुछ हो सकता है। इसीलिए मै इन सब बातो की चिन्ता न कर केवल ईश्वर ही की चिन्ता करता हूँ। हनुमान से पूछा गया था, आज कौनसी तिथि है, हनुमान ने कहा था, मै तिथि, नक्षत्र आदि नही जानता, केवल एक राम की चिन्ता करता हूँ।

"ईश्वर के कार्य क्या समझ मे आ सकते है? वे तो पास ही है – पर यह समझना कितना कठिन है! बलराम कृष्ण को भगवान् नही जानते थे।"

मणि – जी हाँ! जैसे आपने भीष्मदेव की बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, हाँ! क्या कहा था, कहो तो!

मणि – भीष्मदेव शरशय्या पर पड़े रो रहे थे। पाण्डवो ने श्रीकृष्ण से कहा, 'भाई, यह कैसा आश्चर्य है! पितामह इतने ज्ञानी होकर भी मृत्यु का विचार कर रो रहे है।' श्रीकृष्ण ने कहा, 'उनसे पूछो न, क्यो रोते है।' भीष्मदेव बोले, 'मै यह विचार कर रोता हूँ कि भगवान् के कार्य को कुछ भी न समझ सका। हे कृष्ण, तुम इन पाण्डवो के साथ साथ फिरते हो, पग पग पर इनकी रक्षा करते हो, फिर भी इनकी विपद् का अन्त नही!'

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर ने अपनी माया से सब कुछ ढक रखा है – कुछ जानने नही देते। कामिनी और कांचन ही माया है। इस माया को हटाकर जो ईश्वर के दर्शन करता है, वही उन्हे देख पाता है। एक आदमी को समझाते समय मुझे ईश्वर ने एक अद्भुत दृश्य दिखलाया। अचानक सामने देखा उस देश का एक तालाब, और एक आदमी ने काई हटाकर उससे जल पी लिया। जल स्फटिक की तरह साफ था। इससे यह सूचित हुआ कि वह सच्चिदानन्द मायारूपी काई से ढका हुआ है, – जो काई हटाकर जल पीता है, वही पाता है।

"सुनो, तुमसे बड़ी गूढ़ बाते कहता हूँ। झाउओ के तले बैठे हुए देखा कि चोर दरवाजे का-सा एक दरवाजा सामने है। कोठरी के अन्दर क्या है, यह मुझे दिखायी नही पडा। मै एक नहरनी से छेद करने लगा, पर कर न सका। मै छेदता रहा, पर वह बार बार भर जाता था। परन्तु एक बार इतना बड़ा छेद बना!"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण चुप रहे। फिर बोलने लगे – "ये सब बड़ी ऊँची बाते है। यह देखो, कोई मानो मेरा मुँह दबा देता है।

'योनि मे ईश्वर का वास प्रत्यक्ष देखा था! – कुत्ता और कुत्तिया के समागम के समय देखा था।

"ईश्वर के चैतन्य से जगत् चैतन्यमय है। कभी कभी देखता हूँ कि छोटी छोटी मछलियों में वही चैतन्य खेल रहा है।"

गाड़ी शोभाबाजार के चौराहे पर से दरमाहट्टा के निकट पहुँची। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं –

"कभी कभी देखता हूँ कि वर्षा में जिस प्रकार पृथ्वी जल से ओतप्रोत रहती है, उसी प्रकार इस चैतन्य से जगत् ओतप्रोत है।

"इतना सब दिखलायी तो पड़ता है, पर मुझे अभिमान नहीं होता।"

मणि (सहास्य) – आपका अभिमान कैसा!

श्रीरामकृष्ण – शपथ खाकर कहता हूँ, थोड़ा भी अभिमान नहीं होता।

मणि – ग्रीस देश मे सुकरात नाम का एक आदमी था। यह दैववाणी हुई थी कि सब लोगों में वही ज्ञानी है। उसे आश्चर्य हुआ। बहुत देर तक निर्जन में चिन्ता करने पर उसे भेद मालूम हुआ। तब उसने अपने मित्रों से कहा, 'केवल मुझे ही मालूम हुआ है कि मैं कुछ नहीं जानता; पर दूसरे सब लोग कहते हैं कि हमें खूब ज्ञान हुआ है। परन्तु वास्तव में सभी अज्ञान है।'

श्रीरामकृष्ण – मैं कभी कभी सोचता हूँ कि मै जानता ही क्या हूँ कि इतने लोग यहाँ आते हैं! वैष्णवचरण बड़ा पण्डित था। वह कहता था कि नुम जो कुछ कहते हो वह सब शास्त्रों में पाया जाता है। तो फिर तुम्हारे पास क्यों आता हूँ? तुम्हारे मुँह से वही सब सुनने के लिए।

मणि – आपकी सब बातें शास्त्र से मिलता हैं। नवद्वीप गोस्वामी भी उस दिन पानीहाटी में यही बात कहते थे। आपने कहा कि 'गीता' 'गीता' बार बार कहने से 'त्यागी' 'त्यागी' हो जाता है। वास्तव में 'तागी' होता है, परन्तु नवद्वीप गोस्वामी ने कहा कि 'तागी' और 'त्यागी' दोनों का एक ही अर्थ है; 'तग्' एक धातु है, उसी से 'तागी' बनता है।

श्रीरामकृष्ण – मेरे साथ क्या दूसरों का कुछ मिलता-जुलता है ? किसी पण्डित या साधु का?

मणि – आपको ईश्वर ने स्वयं अपने हाथों से बनाया है। और दूसरों को मशीन में डालकर। – जैसे नियम के अनुसार सृष्टि होती है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य, रामलाल आदि से) – अरे, कहता क्या है!

श्रीरामकृष्ण की हँसी रुकती ही नहीं। अन्त में उन्होंने कहा, "शपथ खाता हूँ, मुझे तनिक भी अभिमान नहीं होता।"

मणि – विद्या से एक लाभ होता है। उससे यह मालूम हो जाता है कि मैं कुछ नहीं जानता, और मैं कुछ नहीं हूँ।

श्रीरामकृष्ण – ठीक है, ठीक है। मै कुछ नहीं हूँ मैं कुछ नहीं हूँ! अच्छा, अंग्रेजी

ज्योतिष पर तुम्हे विश्वास है?

मणि – उन लोगो के नियम के अनुसार नये आविष्कार हो सकते है; यूरेनस (Uranus) ग्रह की अनियमित चाल देखकर उन्होने दूरबीन से पता लगाकर देखा कि एक नया ग्रह (Neptune) चमक रहा है। फिर उससे ग्रहण की गणना भी हो सकती है।

श्रीरामकृष्ण - हॉ, सो तो होती है।

गाड़ी चल रही है – प्राय: अधर के मकान के पास आ गयी है। श्रीरामकृष्ण मणि से कहते है, "सत्य मे रहना, तभी ईश्वर मिलेगे।"

मणि – एक और बात आपने नवद्वीप गोस्वामी से कही थी – 'हे ईश्वर, मै तुम्ही को चाहता हूँ। देखना, अपनी भुवनमोहिनी माया के ऐश्वर्य से मुझे मुग्ध न करना। मै तुम्ही को चाहता हूँ।'

श्रीरामकृष्ण – हॉ, यह दिल से कहना होगा।

(२)

अधर सेन के मकान पर, कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान पर आए है। बैठकखाने मे रामलाल, मास्टर, अधर तथा कुछ और भक्त आपके पास बैठे हुए है। मुहल्ले के दो-चार लोग श्रीरामकृष्ण को देखने आए है। राखाल के पिता कलकत्ते मे रहते है – राखाल वहीं है।

श्रीरामकृष्ण (अधर के प्रति) - क्यो, राखाल को खबर नही दी?

अधर – जी, उन्हे खबर दी है।

राखाल के लिए श्रीरामकृष्ण को व्यग्र देखकर अधर ने राखाल को लिवा लाने के लिए एक आदमी के साथ अपनी गाडी भिजवा दी।

अधर श्रीरामकृष्ण के पास आ बैठे। आप के दर्शन के लिए अधर आज व्याकुल हो रहे थे। आज आपके यहॉ आने के बारे मे पहले से कुछ निश्चित नही था। ईश्वर की इच्छा से ही आप आ पहुँचे है।

अधर – बहुत दिन हुए आप नही आए थे। मैने आज आपको पुकारा था, – यहॉ तक कि ऑखो से ऑसू भी गिरे थे।

श्रीरामकृष्ण (प्रसन्न होकर हॅसते हुए) – क्या कहते हो!

शाम हुई। बैठकखाने मे बत्ती जलायी गयी। श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़कर जगज्जननी को प्रणाम कर मन ही मन शायद मूलमन्त्र का जाप किया। अब मधुर स्वर से नाम-उच्चारण कर रहे है – 'गोविन्द! गोविन्द! सच्चिदानन्द! हरि बोल! हरि बोल!' आप इतना मधुर नाम-उच्चारण कर रहे है कि मानो मधु बरस रहा है! भक्तगण निर्वाक् होकर उस नामसुधा का पान कर रहे है।

रामलाल गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "हे माँ हरमोहिनी, तूने संसार को भुलावे मे डाल रखा है। मूलाधार महाकमल मे तू वीणावादन करती हुई चित्तविनोदन करती है। महामन्त्र का अवलम्बन कर तू शरीररूपी यन्त्र के सुषुम्नादि तीन तारो मे तीन गुणो के अनुसार तीन ग्रामो मे संचरण करती है। मूलाधारचक्र मे तू भैरव राग के रूप मे अवस्थित है; स्वाधिष्ठानचक्र के षड्‌दल कमल मे तू श्री राग तथा मणिपूरचक्र मे मल्हार राग है। तू वसन्त राग के रूप मे हृदयस्थ अनाहतचक्र मे प्रकाशित होती है। तू विशुद्धचक्र मे हिण्डोल तथा आज्ञाचक्र मे कर्णाटक राग है। तान-मान-लय-सुर के सहित तू मन्द्र-मध्य-तार इन तीन सप्तको का भेदन करती है। हे महामाया, तूने मोहपाश के द्वारा सब को अनायास बाँध लिया है। तत्त्वाकाश मे तू मानो स्थिर सौदामिनी की तरह विराजमान है। 'नन्दकुमार' कहता है कि तेरे तत्त्व का निश्चय नही किया जा सकता। तीन गुणो के द्वारा तूने जीव की दृष्टि को आच्छादित कर रखा है।"

रामलाल ने फिर गाया –

(भावार्थ) – "हे भवानी, मैने तुम्हारा भयहर नाम सुना है, इसीलिए तो अब मैंने तुम पर अपना भार सौप दिया है। अब तुम मुझे तारो या न तारो! माँ, तुम ब्रह्माण्डजननी हो, ब्रह्माण्डव्यापिनी हो। तुम काली हो या राधिका – यह कौन जाने! हे जननी, तुम घट घट में विराजमान हो। मूलाधारचक्र के चतुर्दल कमल मे तुम कुलकुण्डलिनी के रूप मे विद्यमान हो। तुम्ही सुषुम्ना मार्ग से ऊपर उठती हुई स्वाधिष्ठानचक्र के षड्‌दल तथा मणिपूरचक्र के दशदल कमल मे पहुँचती हो। हे कमलकामिनी, तुम ऊर्ध्वोर्ध्व कमलों मे निवास करती हो। हृदयस्थित अनाहतचक्र के द्वादशदल कमल को अपने पादपद्म के द्वारा प्रस्फुटित कर तुम हृदय के अज्ञानतिमिर का विनाश करती हो। इसके ऊपर कण्ठस्थित विशुद्धचक्र मे धूम्रवर्ण षोडशदल कमल है। इस कमल के मध्यभाग मे जो आकाश है, वह यदि अवरुद्ध हो जाय तो सर्वत्र आकाश ही रह जाता है। इसके ऊपर ललाट में अवस्थित आज्ञाचक्र के द्विदल कमल मे पहुँचकर मन आबद्ध हो जाता है – वह वहीं रहकर मजा देखना चाहता है, और ऊपर नहीं उठना चाहता। इससे ऊपर मस्तक में सहस्रारचक्र है। वहाँ अत्यन्त मनोहर सहस्रदल कमल है, जिसमें परमशिव स्वयं विराजमान हैं। हे शिवानी, तुम वहीं शिव के निकट जा विराजो! हे माँ, तुम आद्याशक्ति हो। योगी तथा मुनिगण तुम्हारा नगेन्द्रनन्दिनी उमा के रूप में ध्यान करते है। तुम शिव की शक्ति हो। तुम मेरी वासनाओं का हरण करो ताकि मुझे फिर इस भवसागर में पतित न होना पड़े। माँ, तुम्हीं पंचतत्त्व हो, फिर तुम तत्त्वों के अतीत हो। तुम्हें कौन जान सकता है! हे माँ, संसार में भक्तों के हेतु तुम साकार बनी हो, परन्तु पंचेन्द्रियाँ पंचतत्त्व में विलीन हो जाने पर तुम्हारे निराकार स्वरूप का ही अनुभव होता है।"

रामलाल जिस समय गा रहे थे – 'इसके ऊपर कण्ठस्थित विशुद्धचक्र में धूम्रवर्ण षोडशदल कमल है। इस कमल के मध्यभाग में जो आकाश है वह यदि अवरुद्ध हो जाय तो सर्वत्र आकाश ही रह जाता है' – उस समय श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा –

"यह सुनो, इसी का नाम है निराकार सच्चिदानन्द-दर्शन। विशुद्धचक्र का भेदन होने पर 'सर्वत्र आकाश ही रह जाता है।' "

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – इस मायामय जीव-जगत् के पार हो जाने पर तब कहीं नित्य स्वरूप मे पहुँचा जा सकता है। नादभेद होने पर ही समाधि लगती है। ओंकार-साधना करते करते नादभेद होता है और समाधि लगती है।

अधर ने फलमिष्टान्न आदि के द्वारा श्रीरामकृष्ण की सेवा की। श्रीरामकृष्ण ने कहा, "आज यदु मल्लिक के यहाँ जाना पड़ेगा।"

(३)

यदु मल्लिक के मकान पर

श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के मकान पर आए। कृष्णा प्रतिपदा है। चाँदनी रात है।

जिस कमरे में सिंहवाहिनी देवी की नित्यसेवा होती है उस कमरे में श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उपस्थित हुए। सचन्दन पुष्पों और मालाओं द्वारा पूजित और विभूषित होकर देवी ने अपूर्व शोभा धारण की है। सामने पुजारी बैठे हुए हैं। प्रतिमा के सम्मुख दीप जल रहा है। सहचरों में से एक को श्रीरामकृष्ण ने रुपया चढ़ाकर प्रणाम करने कहा, क्योंकि देवता के दर्शन के लिए आने पर कुछ प्रणामी चढ़ानी चाहिए।

श्रीरामकृष्ण सिंहवाहिनी के सामने हाथ जोड़कर खड़े हैं। आपके पीछे भक्तगण हाथ जोड़कर खड़ें हैं। श्रीरामकृष्ण बड़ी देर तक दर्शन कर रहे हैं।

क्या आश्चर्य है! दर्शन करते हुए आप सहसा समाधिमग्न हो गए! पत्थर की मूर्ति की तरह निःस्तब्ध खड़े हैं! नेत्र निष्पलक हैं।

काफी समय के बाद आपने लम्बी साँस छोड़ी। समाधि छूटी। नशे में मस्त हुए-से कह रहे हैं – "माँ चलता हूँ!" परन्तु चल नहीं पाते – उसी प्रकार खड़े हैं।

फिर रामलाल से कहा, "तुम वह गाना गाओ – तभी मैं ठीक होऊँगा।"

रामलाल गाने लगे – "हे माँ हरमोहिनी, तूने संसार को भुलावे में डाल रखा है।"

गीत समाप्त हुआ। अब श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठकखाने की ओर आ रहे हैं। चलते हुए बीच बीच में कहते हैं – "माँ, मेरे हृदय में रहो, माँ।"

यदु मल्लिक अपने लोगों के साथ बैठकखाने में बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण भावावस्था में ही हैं। आकर गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "हे माँ, तुम आनन्दमयी होते हुए मुझे निरानन्द मत करना।"

गीत समाप्त होने पर भावोन्मत्त होकर यदु से कहते है, "क्यो बाबू, क्या गाऊँ? 'माँ, आमिकि आटाशे छेले' – यह गाना गाऊँ?" यह कहकर आप गाने लगे –

(भावार्थ) – "माँ, क्या मै तेरा अठवाँसा* बालक हूँ? तेरे आँखे तरेरने से मै नही डरता। शिव जिन्हे अपने हृदयकमल पर धारण करते है वे तेरे आरक्त चरण मेरी सम्पदा है। . ."

भाव का किंचित उपशम होने पर श्रीरामकृष्ण कहते है, "माँ का प्रसाद खाऊँगा।" तब आपको सिंहवाहिनी का प्रसाद ला दिया गया।

यदु मल्लिक बैठे है। पास ही कुछ मित्र बैठे हुए है, कुछ खुशामद करनेवाले मुसाहब भी है।

यदु मल्लिक की ओर मुँह कर श्रीरामकृष्ण कुर्सी पर बैठे है और हँसते हुए बातचीत कर रहे है। श्रीरामकृष्ण के साथ आये हुए भक्तो मे से कोई कोई बाजू के कमरे मे है। मास्टर तथा और दो-एक भक्त श्रीरामकृष्ण के पास ही बैठे है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अच्छा, तुम मुसाहब क्यो रखते हो?

यदु (सहास्य) – मुसाहब रखने मे क्या हर्ज है। क्या तुम उद्धार नही करोगे?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – शराब की बोतलो के आगे गंगा भी हार मानती है।

यदु ने श्रीरामकृष्ण के सम्मुख घर मे चण्डी-गान का आयोजन करने का वचन दिया था। बहुत दिन बीत गये, पर चण्डी-गान नही हुआ।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, चण्डी-गान का क्या हुआ?

यदु – कई तरह के काम-काज थे, इसीलिए इतने दिन नही हो पाया।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! मर्द आदमी की एक जबान चाहिए! 'पुरुष की बात, हाथी का दाँत।' मर्द की जबान एक चाहिए – क्यो, ठीक है न?

यदु (सहास्य) – सो तो ठीक है।

श्रीरामकृष्ण – तुम बड़े हिसाबी आदमी हो। बहुत हिसाब करके काम करते हो। ब्राह्मण की गाय – खाये कम, गोबर ज्यादा करे, और धर-धर दूध दे! (सब हँसते है।)

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण यदु से कहते है, "समझ गया। तुम रामजीवनपुर की सिल के जैसे हो – आधी गरम, आधी ठण्डी। तुम्हारा मन ईश्वर की भी ओर है, और संसार की भी ओर।

श्रीरामकृष्ण ने एक-दो भक्तो के साथ यदु के मकान पर फल, मिष्टान्न, खीर आदि प्रसाद ग्रहण किया। अब आप खेलात घोष के यहाँ जायेगे।

---

* आठ महीने मे जन्म लेनेवाला बच्चा दुर्बल और भीरु होता है।

(४)

खेलात घोष के मकान पर

श्रीरामकृष्ण खेलात घोष के मकान में प्रवेश कर रहे हैं। रात के दस बजे होंगे। मकान और बड़ा आँगन चन्द्र के प्रकाश से आलोकित हो रहा है। भीतर प्रवेश करते हुए श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट हो गए। साथ में रामलाल, मास्टर तथा और भी एक-दो भक्त हैं। मकान बहुत बड़ा और पक्का है। दुमँजले पर पहुँचने पर बरामदे से दक्षिण की ओर बहुत लम्बा जाकर, फिर पूर्व की ओर मुडकर फिर उत्तर की ओर लम्बा रास्ता चलकर मकान के भीतरी हिस्से में पहुँचने पर ऐसा मालूम होने लगा कि मानो घर में कोई नहीं है – बड़े बड़े कमरे और सामने लम्बा बरामदा – सब खाली पड़ा है।

श्रीरामकृष्ण को उत्तर-पूर्व ओर के एक कमरे में बैठाया गया। आप अब भी भावमग्न हैं। घर के जिन भक्त ने आपको बुला लाया है, उन्होंने आकर स्वागत किया। ये वैष्णव हैं। देह पर तिलक की छाप है और हाथ में जपमाला की गोमुखी। ये प्रौढ़ हैं। खेलात घोष के सम्बन्धी हैं। ये बीच बीच में दक्षिणेश्वर जाकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन कर आते हैं। परन्तु किसी किसी वैष्णव का भाव अत्यन्त संकीर्ण होता है। वे शाक्तो या ज्ञानियों की बड़ी निन्दा किया करते हैं। श्रीरामकृष्ण अब वार्तालाप कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण का सर्वधर्मसमन्वय

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – मेरा धर्म ठीक है और दूसरों का गलत – यह मत अच्छा नहीं। ईश्वर एक ही हैं, दो नहीं। उन्हीं को भिन्न भिन्न व्यक्ति भिन्न भिन्न नामों से पुकारते हैं। कोई कहता है गाड तो कोई अल्लाह, कोई कहता है कृष्ण, कोई शिव तो कोई ब्रह्म। जैसे तालाब में जल है। एक घाट पर लोग उसे कहते हैं, 'जल', दूसरे घाट पर कहते हैं 'वाटर', और तीसरे घाट पर 'पानी'। हिन्दू कहते हैं 'जल', ख्रिश्चन कहते हैं 'वाटर' और मुसलमान 'पानी' – परन्तु वस्तु एक ही है। मत तो पथ हैं। एक-एक धर्ममत एक-एक पथ है जो ईश्वर की ओर ले जाता है। जैसे नदियाँ नाना दिशाओं से आकर सागर में मिल जाती हैं।

"वेद, पुराण, तन्त्र – सब का प्रतिपाद्य विषय वही एक सच्चिदानन्द है। वेदों में सच्चिदानन्द ब्रह्म, पुराणों में सच्चिदानन्द कृष्ण, तन्त्रों में सच्चिदानन्द शिव कहा है। सच्चिदानन्द ब्रह्म, सच्चिदानन्द कृष्ण, सच्चिदानन्द शिव – एक ही हैं।"

सब चुप हैं।

वैष्णव भक्त -- महाराज, ईश्वर का चिन्तन भला क्यों करें?

जीवन्मुक्त।उत्तम भक्त।ईश्वरदर्शन के लक्षण

श्रीरामकृष्ण – यह बोध यदि रहे तो फिर वह जीवनमुक्त ही है। परन्तु सब में यह विश्वास नहीं होता, केवल मुँह से कहते है। ईश्वर है, उन्ही की इच्छा से सब कुछ हो रहा है – यह विषयासक्त लोग सुन भर लेते है, इस पर विश्वास नहीं रखते।

"विषयासक्त लोगो का ईश्वर कैसा होता है, जानते हो? जैसे माँ-काकी का झगड़ा सुनकर बच्चे भी झगड़ते हुए कहते है, मेरे ईश्वर है।

"क्या सभी लोग ईश्वर की धारणा कर सकते हैं? उन्होंने भले आदमी भी बनाए हैं और बुरे आदमी भी, भक्त भी बनाए हैं और अभक्त भी, विश्वासी भी बनाए हैं और अविश्वासी भी। उनकी लीला में सर्वत्र विविधता है। उनकी शक्ति कहीं अधिक प्रकाशित है तो कहीं कम। सूर्य का तेज मिट्टी की अपेक्षा जल मे अधिक प्रकाशित होता है, फिर जल की अपेक्षा दर्पण में अधिक प्रकाशित होता है।

"फिर भक्तों के बीच अलग अलग श्रेणियाँ हैं – उत्तम भक्त, मध्यम भक्त, अधम भक्त। गीता में ये सब बातें है।"

वैष्णव भक्त – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – अधम भक्त कहता है, – ईश्वर बहुत दूर आकाश में है। मध्यम भक्त कहता है, – ईश्वर सर्वभूतों में चेतना के रूप मे, प्राण के रूप में विद्यमान हैं उत्तम भक्त कहता है, – ईश्वर स्वयं ही सब कुछ हुए हैं; जो भी कुछ दीख पड़ता है वह उन्हीं का एक एक रूप है; वे ही माया, जीव, जगत् आदि बने हैं; उनके सिवा दूसरा कुछ भी नही है।

वैष्णव भक्त – क्या ऐसी अवस्था किसी को प्राप्त होती है?

श्रीरामकृष्ण – उनके दर्शन हुए बिना ऐसी अवस्था नही हो सकती। परन्तु दर्शन हुए है या नही इसके लक्षण हैं। दर्शन होने पर मनुष्य कभी उन्मत्तवत् हो जाता है – हँसता, रोता, नाचता, गाता है। फिर कभी बालकवत् हो जाता है – पाँच साल के बच्चे जैसी अवस्था! सरल, उदार, अहंकार नहीं, किसी चीज पर आसक्ति नहीं, किसी गुण का वशीभूत नहीं, सदा आनन्दमय अवस्था है! कभी वह पिशाचवत् बन जाता है – शुचि-अशुचि का भेद नहीं रहता, आचार अनाचार सब एक हो जाता है। फिर कभी वह जड़वत् हो जाता है – मानो कुछ देखकर स्तब्ध हो गया है! इसी से किसी भी प्रकार का कर्म, किसी भी प्रकार की चेष्टा नहीं कर सकता।

क्या श्रीरामकृष्ण स्वयं की ही अवस्थाओं की ओर संकेत कर रहे हैं ?

श्रीरामकृष्ण (वैष्णव भक्त से) – 'तुम और तुम्हारा' – यह ज्ञान है; 'मैं और मेरा' – यह अज्ञान।

"हे ईश्वर, तुम कर्ता हो, मै अकर्ता' – यही ज्ञान है। 'हे ईश्वर, सब कुछ तुम्हारा है; देह, मन, घर, परिवार, जीव, जगत् – यह सब तुम्हारा ही है, मेरा कुछ नही' – इसी का नाम ज्ञान है।

"जो अज्ञानी है, वही कहता है कि ईश्वर 'वहाँ' – बहुत दूर है। जो ज्ञानी है, वह जानता है कि ईश्वर 'यहाँ' – अत्यन्त निकट, हृदय के बीच अन्तर्यामी के रूप में विराजमान हैं, फिर उन्होंने स्वयं भिन्न भिन्न रूप भी धारण किये है।"

□□□

परिच्छेद ४७

ब्रह्मतत्त्व तथा आद्याशक्ति

(१)

पण्डित पद्मलोचन। विद्यासागर

आषाढ़ की कृष्णा तृतीया तिथि है, २२ जुलाई १८८३ ई.। आज रविवार है। भक्त लोग अवसर पाकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए फिर आए हैं। अधर, राखाल और मास्टर कलकत्ते से एक गाड़ी पर दिन के एक-दो बजे दक्षिणेश्वर पहुँचे। श्रीरामकृष्ण भोजन के बाद थोड़ी देर आराम कर चुके हैं। कमरे में मणि मल्लिक आदि भक्त भी बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर उत्तर की ओर मुँह किए बैठे हैं। भक्त लोग जमीन पर – कोई चटाई और कोई आसन पर – बैठे हैं। सभी महापुरुष की आनन्दमूर्ति को एकटक देख रहे हैं। कमरे के पास ही, पश्चिम की ओर गंगाजी दक्षिणवाहिनी होकर बही जा रही हैं। वर्षा-ऋतु के कारण स्रोत बड़ा प्रबल है, मानो गंगाजी सागर-संगम पर पहुँचने के लिए बड़ी व्यग्र हों, केवल राह में क्षण भर के लिए महापुरुष के ध्यान-मन्दिर के दर्शन और स्पर्श करती हुई जा रही है।

श्री मणि मल्लिक पुराने ब्राह्मभक्त हैं। उनकी उम्र साठ-पैंसठ वर्ष की है। कुछ दिन हुए वे काशीजी गए थे। आज श्रीरामकृष्ण से मिलने आए हैं और उनसे काशी-दर्शन का वर्णन कर रहे हैं।

मणि मल्लिक – एक और साधु को देखा। वे कहते हैं कि इन्द्रिय-संयम के बिना कुछ नहीं होगा। सिर्फ ईश्वर की रट लगाने से क्या होगा?

श्रीरामकृष्ण – इन लोगों का मत यह है कि पहले साधना चाहिए – शम, दम, तितिक्षा चाहिए। ये निर्वाण के लिए चेष्टा कर रहे हैं। ये वेदान्ती हैं, सदैव विचार करते हैं, 'ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या' बड़ा कठिन मार्ग है। यदि जगत् मिथ्या हुआ तो तुम भी मिथ्या हुए जो कह रहे हैं वे स्वयं मिथ्या हैं, उनकी बातें भी स्वप्नवत् हैं। बड़ी दूर की बात है।

"यह कैसा है जानते हो? जैसे कपूर जलाने पर कुछ भी शेष नहीं रहता, लकड़ी

जलाने पर राख तो बाकी रह जाती है। अन्तिम विचार के बाद समाधि होती है। तब 'मै' 'तुम' 'जगत्' इन सब का कोई पता ही नही रहता।

"पद्मलोचन बड़ा ज्ञानी था, परन्तु मै 'माँ माँ' कहकर प्रार्थना करता था, तो भी मुझे खूब मानता था, वह बर्दवानराज का सभापण्डित था। कलकत्ते मे आया था – कामारहाटी के पास एक बाग मे रहता था। पण्डित को देखने की मेरी इच्छा हुई। मैने हृदय को यह जानने के लिए भेजा कि पण्डित को अभिमान है या नही। सुना कि अभिमान नही है। मुझसे उसकी भेट हुई। वह तो इतना ज्ञानी और पण्डित था, परन्तु मेरे मुँह से रामप्रसाद के गाने सुनकर रो पड़ा! बाते करके ऐसा सुख मुझे कही और नही मिला उसने मुझसे कहा, 'भक्तो का संग करने की कामना त्याग दो, नही तो तरह तरह के लोग है, वे तुमको गिरा देगे'। वैष्णवचरण के गुरु उत्सवानन्द से उसने पत्र-व्यवहार करके विचार किया था, मुझसे कहा, 'आप भी जरा सुनिये'। एक सभा मे विचार हुआ था – शिव बड़े है या ब्रह्मा। अन्त मे पण्डितो ने पद्मलोचन से पूछा। पद्मलोचन ऐसा सरल था कि उसने कहा, 'मेरे चौदह पुरखो मे से किसी ने न तो शिव को देखा और न ब्रह्मा को ही'। 'कामिनी-कांचन का त्याग' सुनकर एक दिन उसने मुझसे कहा, 'उन सब का त्याग क्यो कर रहे हो? यह रुपया है, वह मिट्टी है, – यह भेदबुद्धि तो अज्ञान से पैदा होती है' मै क्या कह सकता था, बोला, 'क्या मालूम, पर मुझे रुपया-पैसा आदि रुचता ही नही।'

विद्यासागर की दया। भीतर सोना छिपा है।

"एक पण्डित को बड़ा अभिमान था। वह ईश्वर का रूप नही मानता था। परन्तु ईश्वर का कार्य कौन समझे? वे आद्याशक्ति के रूप मे उसके सामने प्रकट हुए। पण्डित बडी देर तक बेहोश रहा। जरा होश सम्हालने पर लगातार 'का, का, का' (अर्थात्, काली) की रट लगाता रहा।

भक्त – महाराज, आपने विद्यासागर को देखा है? कैसा देखा?

श्रीरामकृष्ण – विद्यासागर के पाण्डित्य है, दया है, परन्तु अन्तर्दृष्टि नही है। भीतर सोना दबा पड़ा है, यदि इसकी खबर उसे होती तो इतना बाहरी काम जो वह कर रहा है, वह सब घट जाता और अन्त मे एकदम त्याग हो जाता। भीतर, हृदय मे ईश्वर है यह बात जानने पर उन्ही के ध्यान और चिन्तन मे मन लग जाता। किसी किसी को बहुत दिन तक निष्काम कर्म करते करते अन्त मे वैराग्य होता है और मन उधर मुड जाता है – ईश्वर से लग जाता है।

"जैसा काम ईश्वर विद्यासागर कर रहा है वह बहुत अच्छा है। दया बहुत अच्छी है। दया और माया मे बड़ा अन्तर है। दया अच्छी है, माया अच्छी नही। माया का अर्थ है आत्मीयो से प्रेम – अपनी स्त्री, पुत्र, भाई, बहन, भतीजा, भानजा, माँ, बाप इन्हीं से

प्रेम। दया अर्थात् सब प्राणियों से समान प्रेम''।

(२)

ब्रह्म त्रिगुणातीत है।'मुँह से नहीं बताया जा सकता'।

मास्टर – क्या दया भी एक बन्धन है?

श्रीरामकृष्ण – वह तो बहुत दूर की बात ठहरी। दया सतोगुण से होती है। सतोगुण से पालन, रजोगुण से सृष्टि और तमोगुण से संहार होता है, परन्तु ब्रह्म सत्त्व, रज, तम इन तीनों गुणों से परे है – प्रकृति से परे है।

''जहाँ यथार्थ तत्त्व है वहाँ तक गुणों की पहुँच नहीं। जैसे चोर-डाकू किसी ठीक जगह पर नही जा सकते; वे डरते हैं कि कहीं पकड़े न जायें। सत्व, रज, तम ये तीनों गुण डाकू है। एक कहानी सुनाता हूँ, सुनो –

''एक आदमी जंगल की राह से जा रहा था कि तीन डाकुओं ने उसे पकड़ा। उन्होंने उसका सब कुछ छीन लिया। एक डाकू ने कहा, 'अब इसे जीवित रखने से क्या लाभ?' यह कहकर वह तलवार से उसे काटने आया। तब दूसरे डाकू ने कहा, 'नहीं जी, काटने से क्या होगा? इसके हाथ-पैर बाँधकर यही छोड़ दो'। वैसा करके डाकू उसे वहीं छोड़कर चले गये। थोड़ी देर बाद उनमें से एक लौट आया और बोला, 'ओह! तुम्हें चोट लगी? आओ, मैं तुम्हारा बन्धन खोल देता हूँ' उसे मुक्त कर डाकू ने कहा, 'आओ मेरे साथ, तुम्हें सड़क पर पहुँचा दूँ' बड़ी देर में सड़क पर पहुँचकर उसने कहा, 'इस रास्ते से चले जाओ, वह तुम्हारा मकान दिखता हैं'। तब उस आदमी ने डाकू से कहा, 'भाई, आपने बड़ा उपकार किया; अब आप भी चलिये मेरे मकान तक; आइये' डाकू ने कहा, 'नहीं मैं वहाँ नहीं आ सकता; पुलिस को खबर लग जाएगी'

''यह संसार ही जंगल है। इसमें सत्त्व, रज, तम ये तीन डाकू रहते हैं – ये जीवों का तत्त्वज्ञान छीन लेते हैं। तमोगुण मारना चाहता है; रजोगुण संसार में फँसाता है; पर सतोगुण रज और तम से बचाता है। सत्त्वगुण का आश्रय मिलने पर काम, क्रोध आदि तमोगुण से रक्षा होती है। फिर सतोगुण जीवों का संसारबन्धन तोड़ देता है। पर सतोगुण भी डाकू है – वह तत्त्वज्ञान नहीं दे सकता। हाँ, वह जीव को उस परमधाम में जाने की राह तक पहुँचा देता है और कहता है, 'वह देखो, तुम्हारा मकान वह दीख रहा है!' जहाँ ब्रह्मज्ञान है, वहाँ से सतोगुण भी बहुत दूर है।

''ब्रह्म क्या है, यह मुँह से नहीं बताया जा सकता। जिसे उसका ज्ञान होता है वह फिर खबर नहीं दे सकता। लोग कहते हैं कि कालेपानी में जाने पर जहाज फिर नहीं लौटता।

''चार मित्रों ने घूमते-फिरते हुए ऊँची दीवार से घिरी एक जगह देखी। भीतर क्या

है यह देखने के लिए सभी बहुत ललचाये। एक दीवार पर चढ़ गया। झाँककर उसने जो देखा तो दंग रह गया, और 'हा हा हा हा' करते हुए भीतर कूद पड़ा। फिर कोई खबर नही दी। इस तरह जो चढ़ा वही 'हा हा हा हा' करते हुए कूद गया! फिर खबर कौन दे?

"जडभरत, दत्तात्रेय – ये ब्रह्मदर्शन के बाद फिर खबर नही दे सके। ब्रह्मज्ञान के उपरान्त, समाधि होने से फिर 'अहं' नही रहता। इसीलिए रामप्रसाद ने कहा है, 'यदि अकेले सम्भव न हो तो मन, रामप्रसाद को साथ ले।' मन का लय होना चाहिए, फिर 'रामप्रसाद' का अर्थात् अहं-तत्त्व का भी, लय होना चाहिए। तब कही वह ब्रह्मज्ञान मिल सकता है।"

एक भक्त – महाराज, क्या शुकदेव को ज्ञान नही हुआ था?

श्रीरामकृष्ण – कितने कहते हैं कि शुकदेव ने ब्रह्मसमुद्र को देखा और छुआ भर था, उसमें पैठकर गोता नही लगाया। इसीलिए लौटकर उतना उपदेश दे सके। कोई कहता है, ब्रह्मज्ञान के बाद वे लौट आए थे – लोकशिक्षा देने के लिए। परीक्षित् को भागवत सुनाना था और कितनी ही लोकशिक्षा देनी थी – इसीलिए ईश्वर ने उनके सम्पूर्ण अहं-तत्त्व का लय नही किया। एकमात्र 'विद्या का अहं' रख छोडा था।

केशव को शिक्षा – 'दल (साम्प्रदायिकता) अच्छा नहीं'

एक भक्त – क्या ब्रह्मज्ञान होने के बाद सम्प्रदाय आदि चलाया जा सकता है?

श्रीरामकृष्ण – केशव सेन से ब्रह्मज्ञान की चर्चा हो रही थी। केशव ने कहा, आगे कहिए। मैने कहा, और आगे कहने मे सम्प्रदाय आदि नही रहेगा। इस पर केशव ने कहा, तो फिर रहने दीजिए। (सब हँसे।) तो भी मैंने कहा, 'मैं' और 'मेरा' यह कहना अज्ञान है। 'मै कर्ता हूँ, यह स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति, मान, प्रतिष्ठा – यह सब मेरा है' यह विचार बिना अज्ञान के नही होता। तब केशव ने कहा, महाराज, 'अहं' को त्याग देने से तो फिर कुछ रहता ही नही। मैंने कहा, केशव, मै तुमसे पूरा 'अहं' त्यागने को नही कहता हूँ, तुम 'कच्चा अहं' छोड़ दो। 'मै कर्ता हूँ', 'यह स्त्री और पुत्र मेरा है', 'मै गुरु हूँ' – इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है – इसी को छोड़ दो। इसे छोड़कर 'पक्का अहं' बनाए रखो। 'मै ईश्वर का दास हूँ, उनका भक्त हूँ, मै अकर्ता हूँ और वे ही कर्ता है' – ऐसा सोचते रहो।

एक भक्त – क्या 'पक्का अहं' सम्प्रदाय बना सकता है?

श्रीरामकृष्ण – मैने केशव सेन से कहा, 'मै सम्प्रदाय का नेता हूँ, मैने सम्प्रदाय बनाया है, मै लोगो को शिक्षा दे रहा हूँ' – इस तरह का अभिमान 'कच्चा अहं' है। किसी मत का प्रचार करना बडा कठिन काम है। वह ईश्वर की आज्ञा बिना नही हो सकता। ईश्वर का आदेश होना चाहिए। शुकदेव को भागवत की कथा सुनाने के लिए आदेश मिला था।

यदि ईश्वर का साक्षात्कार होने के बाद किसी को आदेश मिले और तब यदि वह प्रचार का बीड़ा उठाए – लोगों को शिक्षा दे, तो कोई हानि नहीं। उसका अहं 'कच्चा अहं' नहीं, 'पक्का अहं' है।

"मैने केशव से कहा था, 'कच्चा अहं' छोड़ दो। 'दास अहं' 'भक्त का अहं' – इसमे कोई दोष नहीं। तुम सम्प्रदाय की चिन्ता कर रहे हो, पर तुम्हारे सम्प्रदाय से लोग अलग होते जा रहे हैं। केशव ने कहा, महाराज, तीन वर्ष हमारे सम्प्रदाय में रहकर फिर दूसरे सम्प्रदाय मे चला गया और जाते समय उलटे गालियाँ दे गया। मैंने कहा, तुम लक्षणों का विचार क्यो नही करते? क्या चाहे जिसको चेला बना लेने से ही काम हो जाता है!

"केशव से मैंने और भी कहा था कि तुम आद्याशक्ति को मानो। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है – जो ब्रह्म है वे ही शक्ति है। जब तक 'मै देह हूँ' यह बोध रहता है, तब तक दो अलग अलग प्रतीत होते है। कहने के समय दो आ ही जाते है। केशव ने काली (शक्ति) को मान लिया था।

"एक दिन केशव अपने शिष्यों के साथ आया। मैने कहा, मै तुम्हारा लेक्चर सुनूँगा। उसने चाँदनी मे बैठकर लेक्चर दिया। फिर घाट पर आकर बहुत-कुछ बातचीत की। मैने कहा, जो भगवान् है वे ही दूसरे रूप मे भक्त है, फिर वे ही एक दूसरे रूप मे भागवत है। तुम लोग कहो, भागवत-भक्त-भगवान्। केशव ने और साथ ही भक्तो ने भी कहा, भागवत-भक्त-भगवान्। फिर जब मैंने कहा, कहो, गुरु-कृष्ण-वैष्णव, तब केशव ने कहा, महाराज, अभी इतनी दूर बढ़ना ठीक नही। लोग मुझे कट्टर कहेंगे।

माया का खेल देख श्रीरामकृष्ण की मूर्च्छा

"त्रिगुणातीत होना बड़ा कठिन है। ईश्वरलाभ किए बिना वह सम्भव नहीं। जीव माया के राज्य मे रहता है। यही माया ईश्वर को जानने नही देती। इसी माया ने मनुष्य को अज्ञानी बना रखा है। हृदय एक बछड़ा लाया था। एक दिन मैंने देखा कि उसे उसने बाग में बाँध दिया है, चारा चुगाने के लिए। मैने पूछा, 'हृदय, तू रोज उसे वहाँ क्यो बाँध रखता है?' हृदय ने कहा, 'मामा, बछड़े को घर भेजूँगा। बड़ा होने पर वह हल मे जोता जाएगा।' ज्योंही उसने यह कहा, मैं मूर्च्छित हो गिर पड़ा। सोचा, कैसा माया का खेल है! कहाँ तो कामारपुकुर सिहोड़ और कहाँ कलकत्ता! यह बछड़ा उतना रास्ता चलकर जाएगा, वहाँ बढ़ता रहेगा, फिर कितने दिन बाद हल खींचेगा! इसी का नाम संसार है – इसी का माया है।"

"बड़ी देर बाद मेरी मूर्च्छा टूटी थी।"

(३)

समाधि में

श्रीरामकृष्ण प्राय: रातदिन समाधिस्थ रहते हैं – उनका बाहरी ज्ञान नहीं के बराबर होता है, केवल बीच बीच में भक्तों के साथ ईश्वरीय प्रसंग और संकीर्तन करते हैं। करीब तीन-चार बजे मास्टर ने देखा कि वे अपने छोटे तख्त पर बैठे हैं – भावाविष्ट हैं। थोड़ी देर बाद जगन्माता से बाते करते हैं।

माता से वार्तालाप करते हुए एक बार उन्होंने कहा, "माँ, उसे एक कला भर शक्ति क्यो दी?" थोड़ी देर चुप रहने के बाद फिर कहते हैं, "माँ, समझ गया, एक कला ही पर्याप्त होगी। उसी से तेरा काम हो जाएगा – जीवशिक्षण होगा।"

क्या श्रीरामकृष्ण इसी तरह अपने अन्तरंग भक्तों में शक्तिसंचार कर रहे हैं? क्या यह सब तैयारी इसीलिए हो रही है कि आगे चलकर वे जीवों को शिक्षा देंगे?

मास्टर के अलावा कमरे में राखाल भी बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण अब भी भावमग्न हैं, राखाल से कहते हैं, "तू नाराज हो गया था? मैंने तुझे क्यों नाराज किया, इसका कारण है; दवा अपना ठीक असर करेगी समझकर। पेट मे तिल्ली अधिक बढ़ जाने पर मदार के पत्ते आदि लगाने पड़ते है।"

कुछ देर बाद कहते है, "हाजरा को देखा, शुष्क काष्ठवत् है। तब यहाँ रहता क्यों है? इसका कारण है, जटिला कुटिला* के रहने से लीला की पुष्टि होती है।

(मास्टर के प्रति) "ईश्वर का रूप मानना पड़ता है। जगद्धात्री रूप का अर्थ जानते हो? जिन्होने जगत् को धारण कर रखा है – उनके धारण न करने से, उनके पालन न करने से जगत् नष्टभ्रष्ट हो जाय। मनरूपी हाथी को जो वश में कर सकता है, उसी के हृदय में जगद्धात्री उदित होती है।"

राखाल – मन मतवाला हाथी है।

श्रीरामकृष्ण – सिहवाहिनी का सिह इसीलिए हाथी को दबाये हुए है।

सन्ध्यासमय मन्दिर में आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण भी अपने कमरे में ईश्वर का नाम ले रहे हैं। कमरे मे धूनी दी गयी। श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़कर छोटे तख्त पर बैठे हैं – माता का चिन्तन कर रहे हैं। बेलघरिया के गोविन्द मुकर्जी और उनके कुछ मित्रों ने आकर उनको प्रणाम किया और जमीन पर बैठे। मास्टर और राखाल भी बैठे हैं।

बाहर चाँद निकला हुआ है। जगत् चुपचाप हँस रहा है। कमरे के भीतर सब लोग

---

* श्रीराधा की सास और ननद – आयान घोष की माता और बहन।

चुपचाप बैठे श्रीरामकृष्ण की शान्त मूर्ति देख रहे हैं। आप भावमग्न हैं। कुछ देर बाद बातें की। अब भी भावाविष्ट हैं।

श्यामारूप। उत्तम भक्त। विचारपथ

श्रीरामकृष्ण (भावमग्न) – तुम लोगों को कोई शंका हो तो पूछो। मैं समाधान करता हूँ।

गोविन्द तथा अन्यान्य भक्त लोग सोचने लगे।

गोविन्द – महाराज, श्यामारूप क्यों हुआ?

श्रीरामकृष्ण – वह तो सिर्फ दूर से वैसा दिखता है। पास जाने पर कोई रंग ही नहीं! तालाब का पानी दूर से काला दिखता है। पास जाकर हाथ से उठाकर देखो, कोई रंग नहीं। आकाश दूर से नीले रंग का दिखता है। पास के आकाश को देखो, कोई रंग नहीं। ईश्वर के जितने ही समीप जाओगे उतनी ही धारणा होगी कि उनके नाम-रूप नहीं। कुछ दूर हट आने से फिर वही 'मेरी श्यामा माता'। जैसे घासफूल का रंग।

"श्यामा पुरुष है या प्रकृति? किसी भक्त ने पूजा की थी। कोई दर्शन करने आया तो उनसे देवी के गले में जनेऊ देखकर कहा, 'तुमने माता के गले में जनेऊ पहनाया है!' भक्त ने कहा, 'भाई, तुम्हीं ने माता को पहचाना है। मैं अब तक नहीं पहचान सका कि वे पुरुष है या प्रकृति! इसीलिए जनेऊ पहना दिया था।'

"जो श्यामा हैं वे ही ब्रह्म हैं। जिनका रूप है वे ही रूपहीन भी हैं। जो सगुण हैं वे ही निर्गुण हैं। ब्रह्म ही शक्ति है और शक्ति ही ब्रह्म। दोनों में कोई भेद नहीं। एक सच्चिदानन्दमय है और दूसरी सच्चिदानन्दमयी।"

गोविन्द – योगमाया क्यों कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण – योगमाया अर्थात् पुरुष-प्रकृति का योग। जो कुछ देखते हो वह सब पुरुष-प्रकृति का योग है। शिव-काली की मूर्ति में शिव के ऊपर काली खड़ी हैं। शिव शव की भाँति पड़े हैं, काली शिव की ओर देख रही हैं, – यह सब पुरुष-प्रकृति का योग है। पुरुष निष्क्रिय है, इसीलिए शिव शव हो रहे हैं। पुरुष के योग से प्रकृति सब काम करती है - सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती है।

"राधाकृष्ण की युगलमूर्ति का भी यही अभिप्राय है। इसी योग के लिए वक्रभाव है। और यही योग दिखाने के लिए श्रीकृष्ण की नाक में मुक्ता और श्रीमती की नाक में नीलम है। श्रीमती का रंग गोरा, मुक्ता जैसा उज्ज्वल है। श्रीकृष्ण का रंग साँवला है, इसीलिए श्रीमती नीलम धारण करती है। फिर श्रीकृष्ण के वस्त्र पीले और श्रीमती के नीले हैं।

"उत्तम भक्त कौन है? जो ब्रह्मज्ञान के बाद देखता है कि ईश्वर ही जीव, जगत् और चौबीस तत्त्व हुए हैं। पहले 'नेति नेति' (यह नहीं, यह नहीं) करके विचार करते हुए छत पर पहुँचना पडता है। फिर वही आदमी देखता है कि छत जिन चीजों – ईंट, चूने और सुरखी – से बनी है, सीढ़ी भी उन्हीं से बनी है। तब वह देखता है कि ब्रह्म ही जीव, जगत और सब कुछ है।

"केवल शुष्क विचार! मैं उस पर थूकता हूँ। (आप जमीन पर थूकते हैं।)

"क्यों विचार कर शुष्क बना रहूँगा! जब तक 'मैं' और 'तुम' है, तब तक प्रार्थना है कि ईश्वर के चरणकमलों में शुद्धा भक्ति बनी रहे।

(गोविन्द से) "कभी कहता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो और 'मैं' ही 'तुम' हूँ। फिर कभी 'तुम्हीं तुम हो' – ऐसा हो जाता है! इस समय अपने अहं को ढूँढ़ नहीं पाता।

"शक्ति का ही अवतार होता है। एक मत से राम और कृष्ण चिदानन्द समुद्र की दो लहरें हैं।

"अद्वैतज्ञान के बाद चैतन्य होता है। तब मनुष्य देखता है कि ईश्वर ही सब प्राणियों में चैतन्य रूप से विद्यमान हैं। चैतन्यलाभ के बाद आनन्द होता है – 'अद्वैत-चैतन्य-नित्यानन्द'।*

(मास्टर से) "और तुमसे कहता हूँ – ईश्वर के रूप पर अविश्वास मत करना। यह विश्वास करना कि ईश्वर के रूप हैं, फिर जो रूप तुम्हें पसन्द हो उसी का ध्यान करना।

(गोविन्द से) "बात यह है कि जब तक भोग-वासना बनी रहती है, तब तक ईश्वर को जानने या उनके दर्शन करने के लिए प्राण व्याकुल नहीं होते। बच्चा खेल में मग्न रहता है। मिठाई देकर बहलाओ तो थोड़ीसी खा लेगा। जब उसे न खेल अच्छा लगता है न मिठाई, तब वह कहता है, 'माँ के पास जाऊँगा।' फिर वह मिठाई नहीं चाहता। अगर कोई आदमी, जिसे उसने न कभी देखा है और न पहचानता है, आकर कहे, 'आ, तुझे माँ के पास ले चलूँ', तो वह उसके साथ चला जाएगा। जो कोई उसे गोद में बिठाकर ले जायगा, वह उसी के साथ जाएगा।

"संसार के भोग समाप्त हो जाने के बाद ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होते हैं। उस समय केवल एक चिन्ता रहती है कि किस तरह उन्हें पाऊँ। उस समय जो जैसा बताता है, मनुष्य वैसा ही करने लगता है।"

मास्टर (स्वगत) – भोगवासना समाप्त हो चुकने के बाद ही ईश्वर के लिए प्राण व्याकुल होते हैं।

---

* पन्द्रहवीं शताब्दी में नदिया में तीन महापुरुष भी इन्हीं नामों के हुए थे। उनमें श्रीचैतन्य भगवान् के अवतार समझे जाते है। शेष दो उनके पार्षद थे।

(४)

समाधि में जगन्माता के साथ वार्तालाप

एक दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मे अपने कमरे के दक्षिणपूर्ववाले बरामदे की सीढ़ी पर बैठै है। साथ मे राखाल, मास्टर तथा हाजरा है। श्रीरामकृष्ण हॅसी हॅसी मे बचपन की अनेक बाते कह रहे है।

सायंकाल हुआ। श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न है। अपने कमरे मे छोटे तख्त पर बैठे जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे है। कह रहे है, "मॉ, तू इतना झमेला क्यो करती है? मॉ, क्या मै वहॉ पर जाऊॅ? यदि तू ले जाएगी तो जाऊॅगा।"

श्रीरामकृष्ण का किसी भक्त के घर पर जाना तय हुआ था। क्या वे इसीलिए जगन्माता की आज्ञा के लिए इस प्रकार कह रहे है?

जगन्माता के साथ श्रीरामकृष्ण फिर वार्तालाप कर रहे है। सम्भव है अब किसी अन्तरंग भक्त के लिए प्रार्थना कर रहे है। कह रहे है, "मॉ, उसे शुद्ध बना दो। अच्छा मॉ, उसे एक कला क्यो दी?"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप है। फिर कह रहे है, "ओफ! समझा। इसी से तेरा काम होगा।" सोलह कलाओ मे से एक कला शक्ति द्वारा तेरा काम अर्थात् लोकशिक्षा होगी – क्या श्रीरामकृष्ण यही कह रहे है?

अब भावविभोर स्थिति मे मास्टर आदि से आद्याशक्ति तथा अवतार-तत्त्व के सम्बन्ध मे कह रहे है –

"जो ब्रह्म है, वही शक्ति है। मै उन्ही को मॉ कहकर पुकारता हूॅ। जब वे निष्क्रिय रहते है तब उन्हे ब्रह्म कहते है, और जब वे सृष्टि, स्थिति, संहार कार्य करते है, तब उन्हे शक्ति कहते हैं। जिस प्रकार स्थिर जल और हिलता-डुलता जल। शक्ति की लीला मे ही अवतार होते है। अवतार प्रेम [illegible] अवतार [illegible] हैं। दूध स्तन से ही मिलता है। मनुष्य [illegible] व अवतार [illegible] हैं।"

कोई कोई भक्त सोच रहे हैं, क्या श्रीरामकृष्ण अवतार [illegible] चैतन्यदेव, ईसा?

□□□

परिच्छेद ४८

बलराम के मकान पर

ईश्वरदर्शन की बात। जीवन का उद्देश्य

एक दिन, १८ अगस्त १८८३ ई., शनिवार को तीसरे पहर श्रीरामकृष्ण बलराम के घर आए है। आप अवतार-तत्त्व समझा रहे है।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो के प्रति) – अवतार लोकशिक्षा के लिए भक्ति और भक्त लेकर रहते है। मानो छत पर चढ़कर सीढ़ी से आते-जाते रहना। जब तक ज्ञान नही होता, जब तक सभी वासनाएँ नष्ट नही होती, तब तक दूसरे लोग छत पर चढ़ने के लिए भक्तिपथ पर रहेगे। सब वासनाएँ मिट जाने पर ही छत पर पहुँचा जाता है। दुकानदार का हिसाब जब तक नही मिलता, तब तक वह नही सोता। खाते का हिसाब ठीक करके ही सोता है!

(मास्टर के प्रति) "मनुष्य यदि डुबकी लगाए तो अवश्य सफल होगा। डुबकी लगाने पर सफलता निश्चित है।

"अच्छा, केशव सेन, शिवनाथ, – ये लोग जो उपासना करते है, वह तुम्हे कैसी लगती है?"

मास्टर – जी, जैसा आप कहते है, – वे बगीचे का ही वर्णन करते है, परन्तु बगीचे के मालिक के दर्शन करने की बात बहुत कम कहते है। प्राय: बगीचे के वर्णन से ही प्रारम्भ और उसी मे समाप्ति हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण – ठीक। बगीचे के मालिक की खोज करना और उनसे बातचीत करना, यही असल काम है। ईश्वर का दर्शन ही जीवन का उद्देश्य है।*

बलराम के घर से अब अधर के घर पधारे है। सायंकाल के बाद अधर के बैठकघर मे नाम-संकीर्तन और नृत्य कर रहे है; कीर्तनकार वैष्णवचरण गाना गा रहे है। अधर, मास्टर, राखाल आदि उपस्थित है।

कीर्तन के बाद श्रीरामकृष्ण भाव मे विभोर होकर बैठे है। राखाल से कह रहे है, "यहाँ का जल श्रावण मास का जल नही है। श्रावण मास का जल काफी तेजी के साथ

---

* आत्मा वा अरे द्रष्टव्य: श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य:। बृहदारण्यक उपनिषद् २।४।५

आता है और फिर निकल जाता है। यहाँ पर पाताल से निकले हुए स्वयम्भू शिव हैं, स्थापित किए हुए शिव नहीं हैं। तू क्रोध में दक्षिणेश्वर से चला आया; मैंने माँ से कहा, 'माँ, इसके अपराध पर ध्यान न देना।'†

क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं? स्वयम्भू शिव हैं?

फिर भावविभोर होकर अधर से कह रहे हैं – "भैया, तुमने जो नाम लिया था, उसी का ध्यान करो।" ऐसा कहकर अधर की जिव्हा अपनी उँगली से छूकर उस पर न जाने क्या लिख दिया। क्या यही अधर की दीक्षा हुई?

परिच्छेद ४९

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

(१)

वेदान्तवादियों का मत। माया अथवा दया?

आज रविवार का दिन है। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा, १९ अगस्त १८८३ ई.। अभी कुछ ही देर पहले देवी का भोग लगा और आरती हुई। अब मन्दिर बन्द हो गया है। श्रीरामकृष्ण देवी का प्रसाद पाने के बाद कुछ आराम कर रहे थे। विश्राम के बाद – अभी दोपहर का समय ही है – वे अपने कमरे में तख्त पर बैठे हुए हैं। इसी समय मास्टर ने आकर उन्हें प्रणाम किया। थोड़ी देर बाद उनके साथ वेदान्त-सम्बन्धी चर्चा होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – देखो, 'अष्टावक्र-संहिता' में आत्मज्ञान की बातें हैं। आत्मज्ञानी कहते हैं, 'सोऽहम्' अर्थात् मैं ही वह परमात्मा हूँ। यह वेदान्तवादी संन्यासियों का मत है। सांसारिक व्यक्तियों के लिए यह मत ठीक नहीं है। सब कुछ किया जा रहा है, फिर भी 'मैं ही वह निष्क्रिय परमात्मा हूँ' यह कैसे हो सकता है? वेदान्तवादी कहते है कि आत्मा निर्लिप्त है। सुख-दुःख, पाप-पुण्य – ये सब आत्मा का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते; परन्तु देहाभिमानी व्यक्तियों को कष्ट दे सकते हैं। धुआँ दीवार को मैला करता है, पर आकाश का कुछ नहीं कर सकता। कृष्णकिशोर ज्ञानियों की तरह कहा करता था कि मैं 'ख' अर्थात् आकाशवत् हूँ। वह परम भक्त था; उसके मुँह में यह बात भले ही शोभा दे, पर सब के मुँह में यह शोभा नहीं देती।

"पर 'मैं मुक्त हूँ' यह अभिमान बड़ा अच्छा है। 'मैं मुक्त हूँ' कहते रहने से कहनेवाला मुक्त हो जाता है। और 'मैं बद्ध हूँ' कहते रहने से कहनेवाला बद्ध ही रह जाता है। जो केवल यह कहता है कि 'मैं पापी हूँ' वही सचमुच गिरता है। कहते यही रहना चाहिए – 'मैंने उनका नाम लिया है, अब मेरे पाप कहाँ? मेरा बन्धन कैसा?'

---

* हृदय श्रीरामकृष्णदेव के भानजे थे और १८८१ ई. तक कालीमन्दिर में रहकर लगभग २३ वर्ष तक इनकी सेवा की थी। उनका जन्मस्थान हुगली जिले के अन्तर्गत सिहोड़ ग्राम में था। श्रीरामकृष्ण का जन्मस्थान कामारपुकुर, यहाँ से दो कोस दूर है। ६२ वर्ष की अवस्था में हृदय का देहावसान हुआ।

"देखो, मेरा चित्त बड़ा अप्रसन्न हो रहा है। हृदय ने चिट्ठी लिखी है कि वह बहुत बीमार है। यह क्या है – माया या दया?"*

मास्टर भी क्या कहें – मौन रह गये।

श्रीरामकृष्ण – माया किसे कहते हैं, पता है? माता-पिता, भाई-बहन, स्त्री-पुत्र, भानजे-भानजी, भतीजे-भतीजी आदि आत्मीयजनों के प्रति प्रेम – यही माया है। और प्राणिमात्र से प्रेम का नाम दया है। मुझे यह क्या हुई – माया या दया! हृदय ने मेरे लिए बहुत-कुछ किया था – बड़ी सेवा की थी – अपने हाथों मेरा मैला तक साफ किया था; पर अन्त में उसने उतना ही कष्ट भी दिया था। वह इतना अधिक कष्ट देता था, कि एक बार मैं बाँध पर जाकर गंगा में डूबकर देहत्याग करने तक को तैयार हो गया था। पर फिर भी उसने मेरा बहुत-कुछ किया था। इस समय यदि उसे कुछ रुपये मिल जाते, तो मेरा चित्त स्थिर हो जाता। पर मैं किस बाबू से कहूँ! कौन कहता फिरे!

(२)

'मृण्मयी आधार में चिन्मयी देवी' – विष्णुपुर में मृण्मयी का दर्शन

लगभग दो या तीन बजे होंगे। इसी समय भक्तवीर अधर सेन तथा बलराम आ पहुँचे और भूमिष्ठ हो प्रणाम कर बैठ गए। उन्होंने पूछा, "आपकी तबीयत कैसी है?" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "हाँ, शरीर तो अच्छा ही है, पर मेरे मन में थोड़ी व्यथा हो रही है।" इस अवसर पर हृदय की तकलीफ के सम्बन्ध में कोई बात ही नहीं उठायी।

बड़ा बाजार (कलकत्ते) के मल्लिक-घराने की सिहवाहिनी देवी की चर्चा छिड़ी।

श्रीरामकृष्ण – मैं भी सिंहवाहिनी के दर्शन करने गया था। चासाधोबीपाड़ा के एक मल्लिक के यहाँ देवी विराजमान थीं। मकान टूटा-फूटा था, क्योंकि मालिक गरीब हो गये थे। कहीं कबूतर की विष्ठा पड़ी थी, कहीं काई जम गयी थी, और कहीं छत से सुरखी और रेत ही झर-झरकर गिर रही थी। दूसरे मल्लिक घरानेवालों के मकान में जो श्री देखी वह श्री इसमें नहीं थी।

(मास्टर से) – "अच्छा, इसका क्या अर्थ है, बतलाओ तो सही।"

मास्टर चुप्पी साधे बैठे रहे।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि जिसके कर्म का जैसा भोग है, उसे वैसा ही भोगना पड़ता है। संस्कार, प्रारब्ध आदि बातें माननी ही पड़ती हैं।

"उस टूटे-फूटे मकान में भी मैंने देखा कि सिंहवाहिनी का चेहरा जगमगा रहा है! आविर्भाव मानना ही पड़ता है।

"मैं एक बार विष्णुपुर गया था। वहाँ राजासाहब के अच्छे अच्छे मन्दिर आदि हैं। वहाँ मृण्मयी नाम की भगवती की एक मूर्ति है। मन्दिर के पास ही कृष्णबाँध, लालबाँध

नाम के बड़े बड़े तालाब हैं। तालाब में मुझे उबटन के मसाले की *गन्ध मिली! भला ऐसा* क्यों हुआ? मुझे तो मालूम भी नहीं था कि स्त्रियाँ जब मृण्मयी देवी के दर्शन के लिए जाती हैं तो उन्हें वे वह मसाला चढ़ाती हैं! तालाब के पास मेरी भाव-समाधि हो गयी। उस समय तक विग्रह नहीं देखा था – भावावेश में मुझे वही पर मृण्मयी देवी के दर्शन हुए – कटि तक।"

भक्त का सुख-दुःख

इसी बीच में दूसरे भक्त आ जुटे और काबुल के विद्रोह तथा लड़ाई की बातें होने लगीं। किसी एक ने कहा कि याकूब खाँ (काबुल के अमीर) राजसिंहासन से उतार दिये गये हैं। श्रीरामकृष्णदेव को सम्बोधन करके उन्होंने कहा कि याकूब खाँ भी ईश्वर का एक बड़ा भक्त है।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि सुख-दु:ख देह के धर्म है। कविकंकण-चण्डी मे लिखा है कि कालूवीर को कैद की सजा हुई थी और उसकी छाती पर पत्थर रखा गया था। कालूवीर भगवती का वरपुत्र था फिर भी उसे यह दु:ख भोगना पड़ा। देहधारण करने से ही सुख-दु:ख का भोग करना पड़ता है।

"श्रीमन्त भी तो बड़ा भक्त था। उसकी माँ खुल्लना को भगवती कितना अधिक चाहती थी! पर देखो, उस श्रीमन्त पर कितनी विपत्ति पडी! यहाँ तक कि वह श्मशान मे काट डालने के लिए ले जाया गया।"

"एक लकड़हारा परम भक्त था। उसे भगवती के साक्षात् दर्शन हुए, उन्होंने उसे खूब चाहा और उस पर अत्यन्त कृपा की, परन्तु इतने पर भी उसका लकड़हारे का काम नही छूटा! उसे पहले की तरह लकड़ी काटकर ही रोटी कमानी पड़ी। कारागार मे देवकी को चतुर्भुज शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी भगवान् के दर्शन हुए, पर तो भी उनका कारावास नहीं छूटा।"

मास्टर – केवल कारावास ही क्यो? शरीर ही तो सारे अनर्थ का मूल है। उसी को छूट जाना चाहिए था।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि प्रारब्ध कर्मो का भोग होता ही है। जब तक वह हैं, तब तक देहधारण करना ही पड़ेगा। एक काने आदमी ने गंगास्नान किया। उसके सारे पाप तो छूट गए, पर कानापन दूर नहीं हुआ! (सभी हँसे।) उसे अपना पूर्वजन्म का फल भोगना था, वही वह भोगता रहा।

मास्टर - जो बाण एक बार छोड़ा जा चुका उस पर फिर किसी तरह का वश नहीं रहता।

श्रीरामकृष्ण – देह का सुख-दु:ख चाहे जो कुछ हो, पर भक्त को ज्ञान-भक्ति का

ऐश्वर्य रहता है। वह ऐश्वर्य कभी नष्ट नहीं होता। देखो, पाण्डवों पर कितनी विपत्ति पड़ी, पर इतने पर भी उनका चैतन्य एक बार भी नष्ट नहीं हुआ। उनकी तरह ज्ञानी, उनकी तरह भक्त कहाँ मिल सकते हैं?

(३)

कप्तान और नरेन्द्र का आगमन

इसी समय नरेन्द्र और विश्वनाथ उपाध्याय आये। विश्वनाथ नेपालराजा के वकील थे – राजप्रतिनिधि थे। श्रीरामकृष्ण इन्हें कप्तान कहा करते थे। नरेन्द्र की आयु लगभग इक्कीस वर्ष की है – इस समय वे बी. ए. में पढ़ते हैं। बीच बीच में, विशेषत: रविवार को दर्शन के लिए आ जाते हैं।

जब वे प्रणाम करके बैठ गए तो श्रीरामकृष्णदेव ने नरेन्द्र से गाना गाने के लिए कहा। कमरे के पश्चिम ओर एक तम्बूरा लटका हुआ था। यन्त्रों का सुर मिलाया जाने लगा। सब लोग एकाग्र होकर गवैये की ओर देखने लगे कि कब गाना आरम्भ होता है।

श्रीरामकृष्ण (नरेन्द्र से) – देख, यह अब वैसा नहीं बजता।

कप्तान – यह पूर्ण होकर बैठा है, इसी से इसमें शब्द नहीं होता! (सब हँसे।) पूर्णकुम्भ है!

श्रीरामकृष्ण (कप्तान से) – पर नारदादि कैसे बोले?

कप्तान – उन्होंने दूसरों के दु:ख से कातर होकर उपदेश दिए थे।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, नारद, शुकदेव आदि समाधि के बाद नीचे उतर आए थे। दया के कारण, दूसरों के हित की दृष्टि से उन्होंने उपदेश दिए थे।

नरेन्द्र ने गाना शुरू किया। गाने का आशय इस प्रकार था – "सत्य-शिव-सुन्दर का रूप हृदय-मन्दिर में चमक रहा है। उसे देख-देखकर हम उस रूप के समुद्र में डूब जायेंगे। वह दिन कब होगा? हे नाथ, जब अनन्त ज्ञान के रूप में तुम हमारे हृदय में प्रवेश करोगे, तब हमारा अस्थिर मन निर्वाक् होकर तुम्हारे चरणों मे शरण लेगा। आनन्द और अमृतत्व के रूप मे जब तुम हमारे हृदयाकाश में उदित होगे, तब चन्द्रोदय में जैसे चकोर उमंग से खेलता फिरता है, वैसे हम भी, नाथ, तुम्हारे प्रकाशित होने पर आनन्द मनाएगे।" इत्यादि।

'आनन्द और अमृतत्व के रूप में' ये शब्द सुनते ही श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि मे मग्न हो गए। आप हाथ बाँधे पूर्व की ओर मुँह किए बैठे हैं। देह सरल और निश्चल है। आनन्दमयी के रूपसमुद्र में आप डूब गए हैं। बाह्यज्ञान बिलकुल नहीं है। साँस–अत्यन्त मन्द चल रही है। नेत्र पलकहीन हैं। आप चित्रवत् बैठे हैं। मानो इस राज्य को छोड़ कहीं और चले गये हैं।

(४)

सच्चिदानन्द-लाभ का उपाय। ज्ञानी और भक्त में अन्तर

समाधि टूटी। इसी बीच में नरेन्द्र उन्हें समाधिस्थ देखकर कमरे से बाहर पूर्ववाले बरामदे में चले गए हैं। वहाँ हाजरा महाशय एक कम्बल के आसन पर हरिनाम की माला हाथ में लिए बैठे हैं। नरेन्द्र उनसे बातें कर रहे हैं। इधर कमरा दर्शकों से भरा है। समाधि-भंग के बाद श्रीरामकृष्ण ने भक्तों की ओर दृष्टि डाली तो देखा कि नरेन्द्र वहाँ नहीं हैं। तम्बूरा सूना पड़ा है। सब भक्त उनकी ओर उत्सुक होकर देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – आग लगा गया है, अब चाहे वह रहे या न रहे!

(कप्तान आदि से) "चिदानन्द का आरोप करो तो तुम्हें भी आनन्द मिलेगा। चिदानन्द तो है ही, – केवल आवरण और विक्षेप है।* विषय पर आसक्ति जितनी घटेगी, उतनी ही ईश्वर पर रुचि बढ़ेगी।

कप्तान – कलकत्ते के घर की ओर जितना ही बढ़ोगे, वाराणसी से उतनी ही दूर होते जाओगे।

श्रीरामकृष्ण – श्रीमती (राधिका) कृष्ण की ओर जितना बढ़ती थीं उतनी ही कृष्ण की देहगन्ध उन्हें मिलती जाती थी। मनुष्य जितना ही ईश्वर के पास जाता है उतनी हीं उसकी उन पर भाव-भक्ति होती जाती है। नदी जितनी ही समुद्र के समीप होती है उतना ही उसमें ज्वार-भाटा होता है।

"ज्ञानी के भीतर मानो गंगा एक-सी बहती रहती है। उसके लिए सभी स्वप्नवत् है। वह सदा स्व-स्वरूप में स्थित रहता है। पर भक्त की गंगा एक गति से नहीं बहती। भक्त कभी हँसता, कभी रोता है; कभी नाचता और कभी गाता है। भक्त ईश्वर के साथ विलास करना चाहता है – वह कभी तैरता है, कभी डूबता है और कभी फिर ऊपर आता है – जैसे बर्फ का टुकड़ा पानी मे कभी ऊपर और कभी नीचे आता-जाता रहता है' (हँसी)

ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं

"ज्ञानी ब्रह्म को जानना चाहता है। भक्त के लिए भगवान् – सर्वशक्तिमान् षड़ैश्वर्यपूर्ण भगवान् हैं। परन्तु वास्तव में ब्रह्म और शक्ति अभिन्न हैं। जो सच्चिदानन्दमय है वे ही सच्चिदानन्दमयी हैं। जैसे मणि और उसकी ज्योति। मणि की ज्योति कहने से ही मणि का बोध होता है और मणि कहने से ही उसकी ज्योति का। बिना मणि को सोचे उसकी ज्योति की धारणा नहीं हो सकती, वैसे ही बिना मणि की ज्योति को सोचे मणि को भी सोचा नहीं जा सकता।

---

* अर्थात वह ढक गया है और उसकी जगह दूसरी चीज का आभास हो रहा है।

"एक ही सच्चिदानन्द का शक्ति के भेद से उपाधिभेद होता है। इसलिए उनके विविध रूप होते हैं। 'तारा, वह तो तुम्हीं हो।' जहाँ कही कार्य (सृष्टि, स्थिति, प्रलय) हैं वहीं शक्ति है। परन्तु जल स्थिर रहने पर भी जल है और हिलोरें, बुलबुले आदि उठने पर भी जल ही है। सच्चिदानन्द ही आद्याशक्ति हैं – जो सृष्टि, स्थिति, प्रलय करती हैं। जैसे कप्तान जब कोई काम नही करते तब भी वही हैं, जब पूजा करते हैं तब भी वही हैं, और जब वे लाटसाहब के पास जाते हैं तब भी वही हैं, केवल उपाधि का भेद है।"

कप्तान – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – मैंने यही बात केशव सेन से कही थी।

कप्तान – केशव सेन भ्रष्टाचार, स्वेच्छाचार हैं; वे बाबू हैं, साधु नहीं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तो से) – कप्तान मुझे केशव सेन के यहाँ जाने को मना करता है।

कप्तान – महाराज, आप तो जाएँगे ही, भला उस पर मै क्या करूँ?

श्रीरामकृष्ण (नाराज होकर) – तुम लाटसाहब के पास रुपये के लिए जा सकते हो, और मै केशव सेन के पास नहीं जा सकता? वह तो ईश्वरचिन्तन करता है, हरि का नाम लेता है। इधर तुम्ही तो कहते हो, 'ईश्वर ही अपनी माया से जीव और जगत् हुए हैं।'

(५)

ज्ञानयोग और भक्तियोग का समन्वय

यह कहकर श्रीरामकृष्ण एकाएक कमरे से उत्तर-पूर्ववाले बरामदे में चले गये। कप्तान और अन्य भक्त कमरे मे ही बैठे उनकी प्रतीक्षा करने लगे। मास्टर भी उनके साथ बरामदे मे आये। बरामदे में नरेन्द्र हाजरा से बातें कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जानते थे कि हाजरा को शुष्क ज्ञानविचार बड़ा प्यारा है; वे कहा करते हैं, 'जगत् स्वप्नवत् है, पूजा और चढ़ावा आदि सब मन का भ्रम है, केवल अपने यथार्थ रूप की चिन्ता करना ही हमारा लक्ष्य है, और मै ही वह परमात्मा हूँ – सोऽहम्।'

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – तुम लोगों की क्या बातचीत हो रही है?

नरेन्द्र (हँसते हुए) – कितनी लम्बी लम्बी बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – किन्तु शुद्ध ज्ञान और शुद्धा भक्ति एक ही है। शुद्ध ज्ञान जहाँ ले जाता है वहीं शुद्धा भक्ति भी ले जाती है। भक्ति का मार्ग बड़ा सरल है।

नरेन्द्र – 'ज्ञानविचार का और प्रयोजन नहीं माँ, अब मुझे पागल बना दो!' (मास्टर से) देखिये, हैमिल्टन की एक किताब में मैंने पढ़ा – 'A learned ignorance is the end of Philosophy and beginning of Religion.'

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इसका अर्थ क्या है?

नरेन्द्र – दर्शनशास्त्रों का पठन समाप्त होने पर मनुष्य पण्डितमूर्ख बन बैठता है; और 'धर्म धर्म' करने लगता है। तब धर्म का आरम्भ होता है।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – थैंक यू, थैंक यू (धन्यवाद, धन्यवाद)। (सब लोग हँसे।)

(६)

नरेन्द्र के अनेक गुण

थोड़ी देर में सन्ध्या होते देखकर अधिकांश लोग अपने अपने घर लौटे। नरेन्द्र ने भी बिदा ली।

दिन ढलने लगा। सन्ध्या होने ही वाली है। देवस्थान में चारों ओर बत्तियाँ जलाने का प्रबन्ध होने लगा। कालीमन्दिर और विष्णुमन्दिर के पुजारी गंगाजी में अर्धनिमग्न होकर अन्तरबाह्य शुद्धि कर रहे हैं – शीघ्र ही आरती करनी होगी तथा देवताओं को रात्रिकालीन नैवेद्य चढ़ाना होगा। दक्षिणेश्वर ग्राम के निवासी युवकगण बगीचे में टहलने आए हुए हैं – किसी के हाथ में छड़ी है, तो कोई मित्रों के साथ घूम रहा हैं। वे लोग गंगा के किनारे पुश्ते पर टहल रहे हैं तथा पुष्पों की सुगन्ध से भरे निर्मल सन्ध्या-समीरण का आनन्द लेते हुए श्रावण की गंगा के तरंगमय प्रवाह को देख रहे हैं। उनमें से जो कुछ चिन्तनशील हैं वे पंचवटी की निर्जन भूमि में अकेले टहल रहे हैं। भगवान् श्रीरामकृष्ण भी पश्चिमवाले बरामदे से थोड़ी देर के लिए गंगादर्शन करने लगे।

सन्ध्या हुई। नौकर बत्तियाँ जला गया। दासी ने श्रीरामकृष्ण के कमरे में दीप जलाकर धूनी दी। बारह शिवमन्दिरों में आरती होते ही विष्णु तथा काली के मन्दिर में आरती होने लगी। घण्टा, घड़ियाल आदि का मधुर गम्भीर नाद उठने लगा - मन्दिर के निकट ही बहती हुई गंगा का कलकलनिनाद तो गूँज ही रहा था।

श्रावण की कृष्णा प्रतिपदा है। थोड़ी ही देर में चाँद निकला। विशाल प्रांगण तथा उद्यान के वृक्ष धीरे धीरे चन्द्रकिरण से आप्लावित हो गए। ज्योत्स्ना के स्पर्श से भागीरथी का जल मानो प्रफुल्लित होकर बह रहा है।

सन्ध्या होते ही श्रीरामकृष्ण जगन्माता को प्रणाम करके तालियाँ बजाते हुए हरिध्वनि करने लगे। कमरे में बहुतसे देवदेवियों की तस्वीरें थीं – जैसे ध्रुव और प्रह्लाद का, राजाराम की, कालीमाता की, राधाकृष्ण की – आपने सभी देवताओं को उनके नाम ले-लेकर प्रणाम किया। फिर कहने लगे, 'ब्रह्म-आत्मा भगवान् भागवत-भक्त-भगवान्, ब्रह्म-शक्ति, शक्ति-ब्रह्म, वेद-पुराण-तन्त्र, गीता-गायत्री, मैं शरणागत हूँ, शरणागत हूँ, नाहं नाहं (मैं नहीं, मैं नहीं), तू ही, तू ही, मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री हो', इत्यादि।

नामोच्चारण के बाद श्रीरामकृष्ण हाथ जोड़कर जगन्माता का चिन्तन करने लगे।

सन्ध्या समय दो-चार भक्त बगीचे में गंगा के किनारे टहल रहे थे। आरती के बाद वे एक-एक करके श्रीरामकृष्ण के कमरे में इकट्ठे होने लगे।

श्रीरामकृष्ण तख्त पर बैठे हैं। मास्टर, अधर, किशोरी आदि नीचे, उनके सामने बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों से) – नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल ये सब नित्यसिद्ध और ईश्वरकोटि के हैं। इनकी जो शिक्षा होती है वह बिना प्रयोजन के ही होती है। तुम देखते नहीं, नरेन्द्र किसी की 'केयर' (परवाह) नहीं करते? मेरे साथ वह कप्तान की गाड़ी पर जा रहा था। कप्तान ने उसे अच्छी जगह पर बैठने को कहा, परन्तु उसने उस तरफ देखा तक नहीं। वह मेरा ही मुँह नहीं ताकता। फिर जितना जानता है उतना प्रकट नहीं करता – कहीं मैं लोगों से कहता न फिरूँ कि नरेन्द्र इतना विद्वान् है। उसके माया-मोह नहीं हैं – मानो कोई बन्धन ही नही है। बड़ा अच्छा आधार है। एक ही आधार में बहुत से गुण रखता है – गाने-बजाने, लिखने-पढ़ने सब में बहुत प्रवीण है। इधर जितेन्द्रिय भी है – कहता है, विवाह नहीं करूँगा! नरेन्द्र और भवनाथ इन दोनों में बड़ा मेल है – जैसा स्वामी-स्त्री में होता है। नरेन्द्र यहाँ ज्यादा नहीं आता। यह अच्छा है। ज्यादा आने से मैं विव्हल हो जाता हूँ।

□□□

परिच्छेद ५०

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

मणिमोहन को शिक्षा, ब्रह्मज्ञान के लक्षण। ध्यानयोग

श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे मसहरी के भीतर ध्यान कर रहे हैं। रात के सात-आठ बजे होंगे। मास्टर और उनके एक मित्र हरिबाबू जमीन पर बैठे हैं। आज सोमवार, तारीख २० अगस्त १८८३ ई. है।

आजकल हाजरा महाशय यहाँ रहते हैं। राखाल भी प्राय: रहा करते हैं - और कभी कभी अधर के यहाँ रहते हैं। नरेन्द्र, भवनाथ, अधर, बलराम, राम, मनोमोहन, मास्टर आदि प्राय: प्रति सप्ताह आया करते हैं।

हृदय ने श्रीरामकृष्ण की बड़ी सेवा की थी। वे घर पर बीमार हैं, यह सुनकर श्रीरामकृष्ण बहुत चिन्तित हुए हैं। इसीलिए एक भक्त ने राम चटर्जी के हाथ आज दस रुपये भेजे हैं – हृदय को भेजने के लिए। देने के समय श्रीरामकृष्ण वहाँ उपस्थित नहीं थे। वही भक्त एक लोटा भी लाए हैं। श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था, "यहाँ के लिए एक लोटा लाना; भक्त लोग पानी पीएँगे।"

मास्टर के मित्र हरिबाबू को लगभग ग्यारह वर्ष हुए, पत्नीवियोग हुआ है। फिर उन्होंने विवाह नहीं किया। उनके मातापिता, भाई-बहन, सभी हैं। उन पर उनका बड़ा स्नेह हैं, और उनकी सेवा वे करते हें। उनकी आयु अट्ठाईस-उनतीस वर्ष होगी। भक्तों के आते ही श्रीरामकृष्ण मसहरी से बाहर आए। मास्टर आदि ने उनको भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मसहरी उठा दी गयी। आप छोटे तख्त पर बैठकर बातें करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – मसहरी के भीतर ध्यान कर रहा था। फिर सोचा कि यह तो केवल एक रूप की कल्पना ही है।इसीलिए फिर अच्छा न लगा। अच्छा होता यदि ईश्वर बिजली की चमक की तरह अपने आपको झट से प्रकट करते। फिर मैंने सोचा, कौन ध्यान करनेवाला है, और ध्यान करूँ ही किसका?

मास्टर – जी हाँ। आपने कह दिया है कि ईश्वर ही जीव और जगत् आदि सब कुछ हुए हैं। जो ध्यान कर रहा है वह भी तो ईश्वर ही है।

श्रीरामकृष्ण – फिर बिना ईश्वर के कराए तो कुछ होनेवाला नहीं। वे अगर ध्यान

कराए, तो ध्यान होगा। इस पर तुम्हारा क्या मत है?

मास्टर – जी, आप के भीतर 'अहं' का भाव नहीं है, इसीलिए ऐसा प्रतीत हो रहा है। जहाँ 'अहं' नहीं रहता वहाँ ऐसा ही हुआ करता है।

श्रीरामकृष्ण – पर 'मै दास हूँ, सेवक हूँ' – इतना अहंभाव रहना अच्छा है। जहाँ यह बोध रहता है कि मैं ही सब कुछ कर रहा हूँ वहाँ 'मैं दास हूँ और तुम प्रभु हो' – यह भाव बहुत अच्छा है। जब सभी कुछ किया जा रहा है, तो सेव्यसेवक-भाव से रहना ही अच्छा है।

मास्टर सदा परब्रह्म के स्वरूप का चिन्तन करते हैं। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनको लक्ष्य करके फिर कह रहे हैं –

"ब्रह्म आकाश की तरह हैं। उनमें कोई विकार नही है। जैसे आग के कोई रंग नहीं है। पर हाँ, अपनी शक्ति के द्वारा वे विविध आकार के हुए है। सत्त्व, रज, तम – ये तीन गुण शक्ति हो के गुण हैं। आग में यदि सफेद रंग डाल दो, तो वह सफेद दिखेगी। यदि लाल रंग डाल दो, तो वह लाल दिखेगी। यदि काला रंग डाल दो, तो वह काली दिखेगी। ब्रह्म सत्त्व, रज और तम – इन तीनो गुणों से परे है। वे यथार्थ में क्या हैं, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। वे वाक्य से परे है। 'नेति नेति' (ब्रह्म यह नही, वह नहीं) करके विचार करते हुए जो बाकी रह जाता है, और जहाँ आनन्द है, वही ब्रह्म हैं।

"एक लड़की का पति आया है। वह अपने बराबरी के युवकों के साथ बाहरवाले कमरे मे बैठा है। इधर वह लड़की और उसकी सहेलियाँ खिड़की से देख रही हैं। सहेलियाँ उसके पति को नहीं पहचानती। वे उस लड़की से पूछ रही है, 'क्या वह तेरा पति है?' लड़की मुसकराकर कहती है, – 'नहीं।' एक दूसरे युवक को दिखलाकर वे पूछती है, 'क्या वह तेरा पति है?' वह फिर कहती है – 'नहीं।' एक तीसरे युवक को दिखाकर वे फिर पूछती है, 'क्या वह तेरा पति है?' वह फिर कहती है – 'नहीं।' अन्त मे उसके पति की ओर इशारा करके उन्होंने पूछा, 'क्या वह तेरा पति है?' तब उसने 'हाँ' या 'नही' कुछ नही कहा; केवल मुसकरायी और चुप्पी साध ली! तब सहेलियों ने समझा कि वही इसका पति है। जहाँ ठीक ब्रह्मज्ञान होता है, वहाँ सब चुप हो जाते हैं।

सत्संग। गृहस्थ के कर्तव्य

(मास्टर से) "अच्छा, मैं बकता क्यों हूँ?"

मास्टर – जैसा आपने कहा कि पके हुए घी में अगर कच्ची पूड़ी छोड़ दी जाय, तो फिर आवाज होने लगती है। आप बोलते हैं भक्तों का चैतन्य कराने के लिए।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से हाजरा महाशय की चर्चा करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छे मनुष्य का स्वभाव कैसा है, मालूम है? वह किसी को दुःख

नहीं देता – किसी को झमेले में नहीं डालता। किसी-किसी का ऐसा स्वभाव है कि कहीं न्यौता खाने गया हो तो शायद कह दिया – मैं अलग बैठूँगा! ईश्वर पर यथार्थ भक्ति रहने से ताल के विरुद्ध पैर नहीं पड़ते – मनुष्य किसी को झूठमूठ कष्ट नहीं देता।

"दुष्ट लोगों का संग करना अच्छा नहीं। उनसे अलग रहना पड़ता है। अपने को उनसे बचाकर चलना पड़ता है। (मास्टर से) तुम्हारा क्या मत है?"

मास्टर – जी, दुष्टों के संग रहने से मन बहुत गिर जाता है। हाँ, जैसा आपने कहा, वीरों की बात दूसरी है।

श्रीरामकृष्ण – कैसे?

मास्टर – कम आग में थोड़ीसी लकड़ी डाल दो तो वह बुझ जाती है। पर धधकती हुई आग में केले का पेड़ भी झोंक देने से आग का कुछ नहीं बिगड़ता। वह पेड़ ही जलकर भस्म हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर के मित्र हरिबाबू की बात पूछ रहे हैं।

मास्टर – ये आपके दर्शन करने आये हैं। ये बहुत दिनों से विपत्नीक हैं।

श्रीरामकृष्ण (हरिबाबू से) – तुम क्या काम करते हो?

मास्टर ने उनकी ओर से कहा, "ऐसा कुछ नहीं करते, पर अपने माता-पिता, भाई-बहन आदि की बड़ी सेवा करते हैं।"

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – यह क्या है! तुम तो 'कुम्हड़ा काटनेवाले जेठजी' बने! तुम न संसारी हुए, न हरिभक्त। यह अच्छा नही। किसी किसी परिवार में एक पुरुष होता है, जो रातदिन लड़के-बच्चों से घिरा रहता है। वह बाहरवाले कमरे में बैठकर खाली तम्बाकू पिया करता है। निकम्मा ही बैठा रहता है। हॉ, कभी कभी अन्दर जाकर कुम्हड़ा काट देता है! स्त्रियों के लिए कुम्हड़ा काटना मना है। इसीलिए वे लड़कों से कहती हैं, 'जेठजी को यहॉ बुला लाओ, वे कुम्हड़ा काट देंगे।' तब वह कुम्हड़े के दो टुकड़े कर देता है! बस, यही तक मर्द का व्यवहार है। इसलिए उसका नाम 'कुम्हड़ा काटनेवाले जेठजी' पड़ा है।

"तुम यह भी करो, वह भी करो। ईश्वर के चरणकमलों में मन रखकर संसार का कामकाज करो। और जब अकेले रहो तब भक्तिशास्त्र पढ़ा करो – जैसे श्रीमद्भागवत या चैतन्यचरितामृत आदि।"

रात के लगभग दस बजे हैं। अभी कालीमन्दिर बन्द नहीं हुआ है। मास्टर ने राम चटर्जी के साथ जाकर पहले राधाकान्त के मन्दिर में और फिर कालीमाता के मन्दिर में प्रणाम किया। चाँद निकला था। श्रावण की कृष्णा द्वितीया थी। आँगन और मन्दिरों के शीर्ष बड़े सुन्दर दिखते थे।

श्रीरामकृष्ण के कमरे में लौटकर मास्टर ने देखा कि वे भोजन करने बैठ रहे हैं। वे दक्षिण की ओर मुँह करके बैठे। थोड़ा सूजी का पायस और एक-दो पतली पूड़ियां – बस यही भोजन था। थोड़ी देर बाद मास्टर और उनके मित्र ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदा ली। वे उसी दिन कलकत्ते लौट जाएँगे।

□□□

गुरुशिष्य-संवाद – गुह्य कथा

(१)

ब्रह्मज्ञान और अभेदबुद्धि। अवतार क्यों होते हैं

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में उस छोटे तख्त पर बैठे मणि से गुह्य बातें कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हैं। आज शुक्रवार, ७ सितम्बर १८८३ ई. है। भाद्र की शुक्ला षष्ठी तिथि है। रात के लगभग साढ़े सात बजे हैं।

श्रीरामकृष्ण – उस दिन कलकत्ते गया। गाड़ी पर जाते जाते देखा; सभी निम्नदृष्टि हैं। सभी को अपने पेट की चिन्ता लगी हुई थी। सभी अपना पेट पालने के लिए दौड़ रहे थे। सभी का मन कामिनी-कांचन पर था। हाँ, दो-एक को देखा कि वे ऊर्ध्वदृष्टि हैं - ईश्वर की ओर उनका मन है।

मणि – आजकल पेट की चिन्ता और भी बढ़ गयी है। अंग्रेजों का अनुकरण करने मे लगे हुए लोगो का मन विलास की ओर अधिक मुड़ गया है। इसीलिए अभावों की वृद्धि हुई है।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर के विषय मे उनका कैसा मत है?

मणि – वे निराकारवादी है।

सब भूतों में एक चैतन्य दर्शन

श्रीरामकृष्ण – हमारे यहाँ भी वह मत है।

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे। अब श्रीरामकृष्ण अपनी ब्रह्मज्ञानदशा का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैंने एक दिन देखा कि एक ही चैतन्य सर्वत्र है - कहीं भेद नहीं है। पहले (ईश्वर ने) दिखाया कि बहुतसे मनुष्य और जीव-जन्तु हैं – उनमें बाबू लोग हैं, अंग्रेज और मुसलमान हैं, मैं स्वयं हूँ, मेहतर है, कुत्ता है, फिर एक दाढ़ीवाला मुसलमान है – उसके हाथ में एक छोटी थाली है, जिसमें भात है। उस छोटी थाली का भात वह सब के मुँह में थोड़ा थोड़ा दे गया। मैंने भी थोड़ासा चखा।

"एक दूसरे दिन दिखाया कि विष्ठा-मूत्र, अन्न-व्यंजन, तरह तरह की खाने की चीजें पड़ी हुई हैं। एकाएक भीतर से जीवात्मा ने निकलकर आग की लौ की तरह सब चीजों को चखा, – मानो जीभ हिलाते हुए सभी चीजों का एक बार स्वाद ले लिया, विष्ठा, मूत्र, सब कुछ चखा। इससे (ईश्वर ने) दिखा दिया कि सब एक है– अभेद हैं।

"फिर एक बार दिखाया कि यहाँ के* अनेक भक्त हैं – पार्षद – अपने जन। ज्योंही आरती का शंख और घण्टा बज उठता, मैं कोठी की छत पर चढ़कर व्याकुल हो चिल्लाकर कहता, 'अरे, तुम लोग कौन कहाँ हो? आओ, तुम्हें देखने के लिए मेरे प्राण छटपटा रहे हैं।'

"अच्छा, मेरे इन दर्शनों के बारे में तुम्हें क्या मालूम होता है?"

मणि – आप ईश्वर के विलास का स्थान हैं। मैंने यही समझा है कि आप यन्त्र हैं और वे यन्त्री (चलानेवाले) हैं। दूसरों को उन्होंने मानो साँचे में डालकर तैयार किया है, परन्तु आपको स्वयं के हाथों से गढ़ा है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, हाजरा कहता है कि ईश्वर के दर्शन के बाद षड़ैश्वर्य मिलते हैं।

मणि – जो शुद्धा भक्ति चाहते हैं वे ईश्वर के ऐश्वर्य की इच्छा नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण – शायद हाजरा पूर्वजन्म में गरीब था, इसीलिए उसे ऐश्वर्य देखने की उतनी तीव्र इच्छा है। हाल में हाजरा ने कहा है – 'क्या मैं रसोइया ब्राह्मणों से बातचीत करता हूँ!' फिर कहता है – 'मै खजांनची से कहकर तुम्हें वे सब चीजे दिला दूँगा!'

(मणि का उच्च हास्य)

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – वह ये सब बातें कहता रहता है और मैं चुप रह जाता हूँ।

मणि – आप तो बहुत बार कह चुके हैं कि शुद्ध भक्त ऐश्वर्य देखना नहीं चाहता। वह ईश्वर को गोपाल रूप में देखना चाहता है। पहले ईश्वर चुम्बक-पत्थर और ईश्वर भक्त सुई होते हैं; फिर तो भक्त ही चुम्बक-पत्थर और ईश्वर सुई बन जाते हैं – अर्थात् भक्त के पास ईश्वर छोटे हो जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – जैसे ठीक उदय के समय का सूर्य। अनायास ही देखा जा सकता है, वह आँखों को झुलसाता नहीं, बल्कि उनको तृप्त कर देता है। भक्त के लिए भगवान् का भाव कोमल हो जाता है – वे अपना ऐश्वर्य छोड़ भक्तों के पास आ जाते हैं।

---

* गुरुभाव से श्रीरामकृष्ण अपने लिए 'मै' या 'हम' शब्द का प्रयोग साधारण दशा में कदाचित् करते थे। किसी और ढंग से वह भाव वे सूचित करते थे। जैसे – 'मेरे पास' न कहकर 'यहाँ' कहते थे। 'मेरा' न कहकर 'यहाँ का' अथवा अपना शरीर दिखाकर 'इसका' कहते थे। हाँ, जगन्माता के सन्तान-भाव से वे 'मै' या 'हम' शब्द का व्यवहार करते थे। भावावस्था में गुरुभाव के अर्थ में भी इन शब्दों का प्रयोग वे करते थे।

फिर दोनों चुप रहे।

मणि – मैं सोचता हूँ, क्यों ये दर्शन सत्य नहीं होंगे? यदि ये मिथ्या हुए तो यह संसार और भी मिथ्या ठहरा, क्योकि देखने का साधन, मन तो एक ही है। फिर वे दर्शन शुद्ध मन से होते हैं और सांसारिक पदार्थ इसी अशुद्ध मन से देखे जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – इस बार देखता हूँ कि तुम्हें खूब अनित्य का बोध हुआ है। अच्छा, कहो, हाजरा कैसा है?

मणि – वह है एक तरह का आदमी। (श्रीरामकृष्ण हँसे।)

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, मुझसे तथा किसी और से कुछ मिलता जुलता है?

मणि – जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण – किसी परमहंस से?

मणि – जी नहीं। आपकी तुलना नहीं है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – तुमने 'अनचीन्हा पेड़' सुना है?

मणि – जी नही।

श्रीरामकृष्ण – वह है एक प्रकार का पेड़ जिसे कोई देखकर पहचान नहीं सकता।

मणि – जी, आपको भी पहचानना कठिन है। आपको जो जितना समझेगा वह उतना ही उन्नत होगा।

मणि शान्त होकर विचार कर रहे हैं, – श्रीरामकृष्ण ने जो 'उदय के समय का सूर्य', 'अनचीन्हा पेड़' आदि बातें कहीं, क्या यही अवतार के लक्षण हैं? क्या इसी का नाम नरलीला है? क्या श्रीरामकृष्ण अवतार हैं? क्या इसीलिए वे पार्षदों को देखने के लिए व्याकुल होकर कोठी की छत पर चढ़कर पुकारते थे कि अरे, तुम लोग कौन कहाँ हो, आओ!

□□

परिच्छेद ५२

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

(१)

सच्ची चालाकी कौनसी है?

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिरवाले अपने कमरे में प्रसन्नतापूर्वक बैठे हुए भक्तों के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। आपका भोजन हो चुका है, दिन के एक या दो बजे होंगे।

आज रविवार है, ९ सितम्बर १८८३, भादों की शुक्ला सप्तमी। कमरे में राखाल, मास्टर और रतन बैठे हुए हैं। रामलाल, राम चटर्जी और हाजरा भी एक-एक करके आते और आसन ग्रहण करते हैं। रतन यदु मल्लिक के बगीचे की देखभाल करते हैं। वे श्रीरामकृष्ण की भक्ति करते हैं, तथा कभी कभी उनके दर्शन कर जाया करते हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हीं से बातचीत कर रहे हैं। रतन कह रहे हैं, यदु मल्लिक के कलकत्तेवाले मकान में नीलकण्ठ का नाटक होगा।

रतन – आपको जाना होगा। उन लोगों ने कहला भेजा है अमुक दिन नाटक होगा।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा है, मेरी भी जाने की इच्छा है। अहा नीलकण्ठ कैसे भक्तिपूर्वक गाता है!

एक भक्त – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – गाना गाते हुए वह आँसुओ से तर हो जाता है। (रतन से) सोचता हूँ रात को वहीं रह जाऊँगा।

रतन – अच्छा तो है।

राम चटर्जी आदि ने खड़ाऊँ की चोरीवाली बात पूछी।

रतन – यदुबाबू के गृहदेवता की सोने की खड़ाऊँ चोरी गयी है। इसके कारण घर में बड़ा हो-हल्ला मचा हुआ है। थाली चलायी जाएगी।* सब बैठे रहेंगे, जिसने लिया है, उसकी ओर थाली चली जाएगी!

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – किस तरह थाली चलती है? अपने आप चलती है?

---

* यह एक तरह का टोना है।

रतन – नहीं, हाथ से दबायी हुई रहती है।

भक्त – हाथ ही की कोई कारीगरी होगी – हाथ की चालाकी।

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – जिस चालाकी से लोग ईश्वर को पाते हैं, वही चालाकी चालाकी है। 'सा चातुरी चातुरी!'

(२)

तान्त्रिक साधना और श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव

बातचीत हो रही है, इसी समय कुछ बंगाली सज्जन कमरे में आए और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उन्होंने आसन ग्रहण किया। उनमें एक व्यक्ति श्रीरामकृष्ण के पहले के परिचित हैं। ये लोग तन्त्र के मत से साधना करते है – पंच-मकार साधन। श्रीरामकृष्ण अन्तर्यामी है, उनका सम्पूर्ण भाव समझ गए। उनमें एक आदमी धर्म के नाम से पापाचरण भी करता है, यह बात श्रीरामकृष्ण सुन चुके है। उसने किसी बड़े आदमी के भाई की विधवा के साथ अवैध प्रेम कर लिया है और धर्म का नाम लेकर उसके साथ पंच-मकार की साधना करता है, यह भी श्रीरामकृष्ण सुन चुके हैं।

श्रीरामकृष्ण का सन्तान-भाव है। वे हरएक नारी को माता समझते हैं – वेश्या को भी; और स्त्रियों को भगवती का एक-एक रूप समझते हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – अचलानन्द कहाँ है? उस दिन कालीकिंकर आया था – और एक जन था। (मास्टर आदि से) अचलानन्द और उसके शिष्यों का और ही भाव है। मेरा सन्तान-भाव है।

आए हुए बाबू लोग चुपचाप बैठे हुए हैं, कुछ बोलते नहीं।

श्रीरामकृष्ण – मेरा सन्तान-भाव है। अचलानन्द यहाँ आकर कभी कभी रहता था। खूब शराब पीता था। मेरा सन्तान-भाव है, यह सुनकर अन्त में उसने हठ पकड़ा। कहने लगा – 'स्त्री को लेकर वीरभाव की साधना तुम क्यों नही मानोगे? शिव की रेख भी नहीं मानोगे? स्वयं शिवजी ने तन्त्र लिखा है। उसमें सब भावों की साधना है, वीरभाव की भी है।'

मैंने कहा, 'मैं क्या जानूँ जी! मुझे वह सब अच्छा नहीं लगता – मेरा सन्तान-भाव है।'

आगन्तुक सज्जन चुप हैं, कुछ बात नहीं निकल ही है।

"अचलानन्द अपने बच्चों की खबर नही लेता था। मुझसे कहता था, 'बच्चों को ईश्वर देखेंगे – यह सब ईश्वर की इच्छा है।' मैं सुनकर चुप हो जाता था। बात यह है कि लड़कों की देखरेख कौन करे? लड़के-बाले, घर-द्वार सब छोड़ दिया यह कहीं रुपये

कमाने का साधन न बन बैठे, क्योंकि, लोग सोचेंगे, इसने तो सब कुछ त्याग कर दिया है, और इस तरह बहुतसा धन देने लगेंगे।

"मुकदमा जीतूँगा, खूब धन होगा, मुकदमा जिता दूँगा, जायदाद दिला दूँगा, क्या इसीलिए साधना है? ये सब बड़ी ही नीच प्रकृति की बातें हैं।"

"रुपये से भोजन-पान होता है, रहने की जगह होती है, देवताओं की सेवा होती है, साधुओं का सत्कार होता है, सामने कोई गरीब आ गया तो उसका उपकार हो जाता है, ये सब रुपये के सदुपयोग हैं। रुपये ऐश्वर्य का भोग करने के लिए नहीं हैं, न देहसुख के लिए है, न लोकसम्मान के लिए।"

"विभूतियो के लिए लोग तन्त्र के मत से पंच-मकार की साधना करते है। परन्तु उनकी बुद्धि कितनी हीन है! कृष्ण ने अर्जुन से कहा है – भाई! अष्टसिद्धियो मे किसी एक के रहने पर तुम्हारी शक्ति तो थोड़ी बढ़ सकती है, परन्तु तुम मुझे न पाओगे। विभूति के रहते माया दूर नही होती। माया से फिर अहंकार होता है। कैसी हीन बुद्धि है, घृणास्पद स्थान से तीन घूँट कारणवारि (शराब) पीकर लाभ क्या हुआ? – मुकदमा जीतना।"

श्रीरामकृष्ण तथा हठयोग

"शरीर, रुपया, यह सब अनित्य है। इसके लिए इतना हठ क्यो? हठयोगियों की दशा देखो न! शरीर किसी तरह दीर्घायु हो, बस इसी ओर ध्यान लगा रहता है। ईश्वर की ओर लक्ष नही है। नेति-धौति बस पेट साफ कर रहे है! नल लगाकर दूध ग्रहण कर रहे है।

"एक सुनार था। उसकी जीभ उलटकर तालू पर चढ़ गयी थी। तब जड़-समाधि की तरह उसकी अवस्था हो गयी। फिर वह हिलता-डुलता न था। बहुत दिनों तक उसी अवस्था में रहा। लोग आकर उसकी पूजा करते थे। कुछ साल बाद एकाएक उसकी जीभ सीधी हो गयी। तब उसे पहले की तरह चेतना हो गयी। फिर वही सुनार का काम करने लगा! (सब हँसते हैं।)

"वे सब शरीर के कर्म हैं। उससे प्राय: ईश्वर के साथ कोई सम्बन्ध नही रहता। शालग्राम का भाई – (उसका लड़का वंशलोचन का व्यवसाय करता था)– बयासी तरह के आसन जानता था। वह योग-समाधि की भी बहुतसी बातें कहता था। परन्तु भीतर ही भीतर उसका कामिनी-कांचन में मन था। दीवान मदन भट्ट की कुछ हजार रुपयों की एक नोट पड़ी थी, रुपयों की लालच से वह उसे झट निगल गया। बाद में फिर किसी तरह निकाल लेता। परन्तु नोट उससे वसूल हो गयी। अन्त में तीन साल के लिए वह जेल भेजा गया। मैं सरल भाव से सोचता था, शायद उसकी आध्यात्मिक उन्नति बहुत हो चुकी है, सच कहता हूँ – रामदुहाई!"

श्रीरामकृष्ण तथा कामिनी-कांचन

"यहाँ सींती का महेन्द्र पाल पाँच रुपये दे गया था, रामलाल के पास। उसके चले जाने के बाद रामलाल ने मुझसे कहा। मैंने पूछा, क्यों दिया? रामलाल ने कहा, यहाँ के खर्च के लिए दिया है। तब याद आया, दूधवाले को कुछ देना है; हो न हो, इन्हीं रुपयों से कुछ दे दिया जाय। परन्तु यह क्या आश्चर्य! मैं रात को सोया हुआ था, एकाएक उठ पड़ा। छाती के भीतर मानो कोई बिल्ली की तरह खरोंचने लगा। तब रामलाल के पास जाकर मैंने कहा, किसे दिया है? – तेरी चाची को? रामलाल ने कहा, नहीं, आपके लिए। तब मैंने कहा, नहीं, रुपये जाकर अभी वापस दे आ, नहीं तो मुझे शान्ति न होगी।

"रामलाल सुबह को उठकर जब रुपये वापस दे आया, तब तबीयत ठीक हुई!"

"उस देश की भगवतिया तेलिन कर्ताभजा दल की है। वे सब औरत लेकर साधना किया करते हैं। एक पुरुष के हुए बिना स्त्री की साधना होगी ही नहीं। उस पुरुष को 'रागकृष्ण' कहते हैं। तीन बार स्त्री से पूछा जाता है, तूने कृष्ण को पाया? वह स्त्री तीनों बार कहती है, पाया।

"भगवतिया शूद्र है, तेलिन है, परन्तु सब उसके पास जाकर उसके पैरों की धूल लेते थे, उसे नमस्कार करते थे। तब जमींदार को इस पर बड़ा क्रोध आ गया। मैंने उसे देखा है। जमींदार ने उसके पास एक बदमाश भेज दिया। उससे वह फँस गयी और उसके गर्भ रहा।"

"एक दिन एक बड़ा आदमी आया था। मुझसे कहा, 'महाराज, इस मुकदमे में ऐसा कर दीजिये कि मै जीत जाऊँ। आपका नाम सुनकर आया हूँ।' मैने कहा, 'भाई, वह मैं नही हूँ। तुम्हारी भूल हुई। वह अचलानन्द है।'

"ईश्वर पर जिसकी सच्ची भक्ति है, वह शरीर, रुपया आदि की थोड़ी भी परवाह नही करता। वह सोचता है, देहसुख के लिए, लोकसम्मान के लिए, रुपयों के लिए, क्या जप और तप करूँ? ये सब अनित्य हैं, चार दिन के लिए हैं।"

आये हुए सब बाबू लोग उठे। उन्होंने नमस्कार करके कहा, 'तो हम चलें।' वे चले गए। श्रीरामकृष्ण मुसकरा रहे हैं और मास्टर से कह रहे हैं – "चोर धर्म की बात नहीं सुनते।' (सब हँसते हैं।

(४)

विश्वास चाहिए

श्रीरामकृष्ण (मणि से सहास्य) - अच्छा, नरेन्द्र कैसा है?

मणि – जी, बहुत अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण – देखो, उसकी जैसी विद्या है, वैसी ही बुद्धि भी है। और गाना-बजाना भी जानता है। इधर जितेन्द्रिय भी है; कहता है, विवाह न करूँगा।

मणि – आपने कहा है, जो पाप पाप सोचता रहता है, वह पापी हो जाता है, फिर वह उठ नहीं सकता। मैं ईश्वर की सन्तान हूँ, यह विश्वास यदि हुआ तो बहुत शीघ्रता से उन्नति होती है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, विश्वास चाहिए।

"कृष्णकिशोर का कैसा विश्वास है। कहता था, 'मैं एक बार उनका नाम ले चुका, अब मुझमें पाप कहाँ रह गया? मैं शुद्ध और निर्मल हो गया हूँ।' हलधारी ने कहा था, 'अजामिल फिर नारायण की तपस्या करने गया था; तपस्या न करने पर क्या उनकी कृपा होती है? – केवल एक बार नारायण कहने से क्या होगा?' यह बात सुनकर कृष्णकिशोर को इतना क्रोध आया कि बगीचे में फूल तोड़ने आया था – उसने हलधारी की ओर फिर एक दृष्टि भी नहीं फेरी।

"हलधारी का बाप बड़ा भक्त था। स्नान करते हुए कमरभर पानी में जब वह मन्त्र पढ़ता था, – 'रक्तवर्णं चतुर्मुखम्' आदि कहते हुए ध्यान करता था, – तब उसकी आँखों से अनर्गल प्रेमाश्रु बह चलते थे।

"एक दिन एँड़ेदा के घाट पर एक साधु आया। बात हुई, हम लोग भी देखने जाएँगे। हलधारी ने कहा, 'उस पंचभूतों के गिलाफ को देखकर क्या होगा?' इसके बाद कृष्णकिशोर ने यह बात सुनकर कहा था, 'क्या! साधु के दर्शन से क्या होगा ऐसी बात भी उसके मुँह से निकली! जो लोग कृष्ण का नाम लेते हैं या रामनाम का जप करते हैं, उनकी देह चिन्मय होती है और वे सब चिन्मय देखते हैं – चिन्मय शाम, चिन्मय धाम!' उसने कहा था, 'एक बार कृष्ण या राम का नाम लेने पर सौ बार के सन्ध्या करने का फल होता है।' जब उसके एक लड़के की मृत्यु होने लगी तब मरते समय राम का नाम लेकर उसने देह छोड़ी थी। कृष्णकिशोर कहता था, 'उसने राम का नाम लिया है, उसे अब क्या चिन्ता है?' परन्तु कभी कभी रो पड़ता था। पुत्र का शोक!

"वृन्दावन में उसे प्यास लगी थी। मोची से उसने कहा, 'तू शिव का नाम ले।' उसने शिव का नाम लेकर पानी भर दिया – उस तरह का आचारी ब्राह्मण होकर भी उसने वह पानी पी लिया कितना बड़ा विश्वास है।

"विश्वास नहीं है, और पूजा, जप, सन्ध्यादि कर्म करता है, इससे कुछ नहीं होगा! क्यों जी?"

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – गंगा के घाट में नहाने के लिए लोग आते हैं। मैंने देखा है, उस समय दुनिया भर की बातें करते हैं। किसी की विधवा बुआ कह रही है – "बहू,

मेरे बिना रहे दुर्गापूजा नहीं होती। मैं न रहूँ तो 'श्री'मूर्ति भी सुडौल न हो! घर में शादी-ब्याह कुछ हुआ तो सब काम मुझे ही करना पड़ता है, नहीं तो अधूरा रह जाय। फूलशय्या का बन्दोबस्त, कत्थे के बगीचे की तैयारी सब मैं ही करती हूँ।"

मणि – जी, इनका भी क्या दोष – क्या लेकर रहें।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – छत पर ठाकुरजी के लिए घर बनाया है। नारायण की पूजा हो रही है। पूजा का नैवेद्य, चन्दन यह सब तैयार किया जा रहा है। परन्तु ईश्वर की बात कहीं एक भी नहीं होती। क्या पकाना चाहिए, – आज बाजार में कोई अच्छी चीज नही मिली, कल अमुक व्यंजन अच्छा बना था, – वह लड़का मेरा चचेरा भाई है, – क्यो रे, तेरी वह नौकरी है न? – और मैं अब कैसी हूँ! – मेरा हरि चल बसा!' बस यही सब बातें होती हैं!

"देखो भला, ठाकुरजी की पूजा के समय ये सब दुनिया भर की बातें!"

मणि – जी, अधिक संख्या ऐसे ही लोगों की है। आप जैसा कहते है, ईश्वर पर जिसका अनुराग है, उसे अधिक दिनों तक पूजा और सन्ध्या थोड़े ही करनी पड़ती है!

(३)

चिन्मय रूप। ज्ञान और विज्ञान। 'ईश्वर ही वस्तु है'

श्रीरामकृष्ण एकान्त में मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं।

मणि – अच्छा, वही अगर सब कुछ हुए है, तो इस तरह के अनेक भाव क्यों दीख पड़ते हैं?

श्रीरामकृष्ण – विभु के स्वरूप से वे सर्वभूतों में है परन्तु शक्ति की विशेषता है। कहीं तो उनकी विद्याशक्ति है और कहीं अविद्याशक्ति. कहीं ज्यादा शक्ति है और कही कम। देखो न, आदमियों के भीतर ठग-चोर भी हैं और बाघ जैसे भयानक प्रकृतिवाले भी हैं। मै कहता हूँ, ठगनारायण हैं, बाघनारायण है।

मणि – (सहास्य) – जी, उन्हें तो दूर ही से नमस्कार करना चाहिए। बाघनारायण के पास जाकर अगर कोई उन्हे भर बाँह भेंटने लगे, तब तो वे उसे कलेवा ही कर जाएँ।

श्रीरामकृष्ण – वे और उनकी शक्ति – ब्रह्म और शक्ति – इसके सिवाय और कुछ नहीं है। नारद ने रामचन्द्रजी से स्तव करते हुए कहा – हे राम, तुम्हीं शिव हो, सीता भगवती हैं; तुम ब्रह्मा हो, सीता ब्रह्माणी हैं; तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी है; तुम नारायण हो, सीता लक्ष्मी; पुरुषवाचक जो कुछ हैं, सब तुम्हीं हो, स्त्रीवाचक जो कुछ है, सब सीता।

मणि – और चिन्मय रूप?

श्रीरामकृष्ण कुछ देर बाद विचार करने लगे। फिर धीमे स्वर में कहा, "वह किस

तरह है बताऊँ – जैसे पानी का...। ये सब बातें साधना करने पर समझ में आती हैं।

"रूप पर विश्वास करना। जब ब्रह्मज्ञान होता है, अभेदता तब होती है। ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्ति। अग्नि को सोचने पर साथ ही उसकी दाहिका शक्ति को भी सोचना पड़ता है; और दाहिका शक्ति को सोचने पर अग्नि को भी सोचना पड़ता है; जैसे दूध और दूध की धवलता, जल और उसकी हिमशक्ति।

"परन्तु ब्रह्मज्ञान के बाद भी अवस्था है। ज्ञान के बाद विज्ञान है। जिसे ज्ञान है, जिसे बोध हो गया, उसमें अज्ञान भी है। शत पुत्रों के शोक से वशिष्ठ को भी रोना पड़ा था। लक्ष्मण के पूछने पर राम ने कहा, भाई, ज्ञान और अज्ञान के पार जाओ; जिसे ज्ञान है, उसे अज्ञान भी है। पैर मे अगर कॉटा चुभ जाय, तो एक दूसरा काँटा लेकर वह निकाल दिया जाता है, फिर उसके साथ दूसरा काँटा भी फेंक दिया जाता है।"

मणि – क्या अज्ञान और ज्ञान दोनो फेंक दिये जाते हैं?

श्रीरामकृष्ण – हॉ, इसीलिए विज्ञान की आवश्यकता है।

"देखो न, जिसे उजाले का ज्ञान है, उसे ॲधेरे का भी है; जिसे सुख का बोध है, उसे दु:ख का भी है; जिसे पुण्य का विचार है, उसे पाप का भी है; जिसे भले का स्मरण है, उसे बुरे का भी है; जिसे शुचिता का अनुभव है, उसे अशुचिता का भी है; जिसे 'अंह' का ध्यान है, उसे 'तुम' का भी है!"

"विज्ञान – अर्थात् उन्हे विशेष रूप से जानना। लकड़ी मे आग है, इस बोध – इस विश्वास – का नाम है ज्ञान, और उस आग से खाना पकाना, खाना खाकर हृष्ट-पुष्ट होना, इसका नाम है विज्ञान। ईश्वर हैं, हृदय मे यह बोध होना इसका नाम है ज्ञान और उनके साथ वार्तालाप, उन्हे लेकर आनन्द करना – चाहे जिस भाव से हो, दास्य या सख्य या वात्सल्य या मधुर से – इसका नाम है विज्ञान। जीव और यह प्रपंच वे ही हुए है, इसके दर्शन करने का नाम है विज्ञान। एक विशेष मत के अनुसार कहा जाता है कि दर्शन हो नही सकते, कौन किसके दर्शन करे? वह तो अपने ही स्वरूप के दर्शन करता है। कालेपानी में जहाज जब चला जाता है, तब लौट नही सकता, लौटकर खबर नहीं दे सकता।"

मणि – जैसा आप कहते हैं, मानूमेण्ट के ऊपर चढ़ जाने पर फिर नीचे की खबर नहीं रहती कि गाड़ी, घोड़े, मेम, साहब, घर-द्वार, दूकाने, आफिस कहाँ है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, आजकल कालीमन्दिर मैं नहीं जाया करता, कुछ अपराध तो न होगा? नरेन्द्र कहता था, ये अब भी कालीमन्दिर जाया करते हैं?

मणि – जी, आपकी नयी नयी अवस्थाएँ हुआ करती है। आपका भला अपराध क्या है!

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, हृदय के लिए उन लोगो ने सेन से कहा था, 'हृदय बहुत

बीमार है, उसके लिए आप दो धोतियाँ और दो कमीज लेते आइयेगा, हम लोग उसके गाँव में भेज देंगे।'' सेन बस दो ही रुपये लाया! यह भला क्या है? इतना धन है और यह दान! कहो जी!

मणि – जी, मेरी समझ में तो यह आता है कि जिसे ईश्वर की जिज्ञासा है, ज्ञानलाभ जिसका उद्देश्य है, वह कभी ऐसा नहीं कर सकता।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

परिच्छेद ५३

अधर के मकान पर ईशान आदि भक्तों के संग में

(१)

बालक का विश्वास। अछूत जाति और शंकराचार्य।

साधु का हृदय

श्रीरामकृष्ण ने कलकत्ते में अधर के मकान पर शुभागमन किया है। आप अधर के बैठकघर मे बैठे हैं। दिन के तीसरे पहर का समय है। राखाल, अधर, मास्टर, ईशान आदि तथा अनेक पड़ोसी भी उपस्थित हैं।

श्री ईशानचन्द्र मुखोपाध्याय को श्रीरामकृष्ण प्यार करते थे। वे अकाउण्टेण्ट जनरल के आफिस में सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। पेन्शन लेने के बाद वे दान-ध्यान, धर्म-कर्म करते रहते थे और बीच बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते थे। मछुआबाजार स्ट्रीट में उनके मकान पर श्रीरामकृष्ण ने एक दिन आकर नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ भोजन किया था और लगभग पूरे दिन रहे थे। उस उपलक्ष्य में ईशान ने अनेक लोगों को भी आमन्त्रित किया था।

श्री नरेन्द्र आनेवाले थे, परन्तु आ न सके। ईशान पेन्शन लेने के बाद श्रीरामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर में सर्वदा जाया करते हैं, और भाटपाड़ा में गंगातट पर निर्जन में बीच बीच में ईश्वरचिन्तन करते हैं। इस समय उनके मन में भाटपाड़ा में गायत्री का पुरश्चरण करने की इच्छा थी।

आज शनिवार, २२ सितम्बर १८८३ ई. है।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति) – अपनी वह कहानी कहो तो – बालक ने पत्र भेजा था।

ईशान (हँसकर) – एक बालक ने सुना कि ईश्वर ने हमें पैदा किया है। इसलिए उसने अपनी प्रार्थना जताने के लिए ईश्वर के नाम पर एक पत्र लिखकर लेटर बक्स में डाल दिया। पता लिखा था – स्वर्ग! (सभी हँसे।)

श्रीरामकृष्ण (हँसते हुए) – देखा! इसी बालक की तरह विश्वास चाहिए।* तब होता है। (ईशान के प्रति) और वह कर्मत्याग की कहानी सुनाओ तो।

ईशान – भगवान् की प्राप्ति होने पर सन्ध्या आदि कर्मों का त्याग हो जाता है। गंगा के तट पर सभी सन्ध्योपासना कर रहे हैं, एक व्यक्ति नही कर रहा है। उससे पूछने पर उसने कहा "मुझे अशौच हुआ है, सन्ध्योपासना करने की मनाई है। मृताशौच तथा जन्माशौच, दोनों ही हुए हैं। अविद्यारूपी माता की मृत्यु हुई है और आत्माराम का जन्म हुआ है।"†

श्रीरामकृष्ण – अच्छा वह कहानी सुनाना, – जिसमें कहा है कि आत्मज्ञान होने पर जातिभेद नहीं रह जाता।

ईशान – वाराणसी में गंगास्नान करके शंकराचार्य घाट की सीढ़ी पर चढ़ रहे थे – उस समय कुत्ते पालनेवाले एक चाण्डाल को सामने बिलकुल पास ही देखकर बोले, "यह क्या, तूने मूझे छू लिया!" चाण्डाल बोला, "महाराज, तुमने भी मुझे नही छुआ और मैंने भी तुम्हें नही छुआ। आत्मा सभी के अन्तर्यामी और निर्लिप्त हैं। शराब में पड़ा हुआ सूर्य का प्रतिबिम्ब और गंगाजल में पड़ा हुआ सूर्य का प्रतिबिम्ब, क्या इन दोनों में भेद है?

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – और वह समन्वय की कथा कैसी है? सभी मतों से उन्हे प्राप्त किया जा सकता है।

ईशान (हँसकर) – हरि और हर में एक ही धातु 'हृ' है। केवल प्रत्यय का भेद है। जो हरि है, वही हर हैं। विश्वास भर रहना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) अच्छा वह कंहानी – साधु का हृदय सब से बड़ा है।

ईशान (हँसकर) – सब से बड़ी है पृथ्वी, उससे बड़ा है समुद्र, उससे बड़ा है आकाश। परन्तु भगवान् विष्णु ने एक पैर से स्वर्ग, मर्त्य, पाताल – त्रिभुवन पर अधिकार कर लिया था। पर उस विष्णु का पद साधु के हृदय में है! इसलिए साधु का हृदय सब से बड़ा है।

इन सब बातों को सुनकर भक्तगण आनन्दित हो रहे हैं।

---

* "The kingdom of heaven is revealed unto babes but is hidden from the wise and the pruden." – Bible

† मृता मोहमयी माता जातो बोधमयः सुतः। सूतकद्वयसम्प्रातौ कथं सन्ध्यामुपास्महे।।
हृदाकाशे चिदादित्यः सदा भासति भाम्सति। नास्तमेति न चोदेति कथं सन्ध्यामुपास्महे।।
– मैत्रैयी उपनिषद २। १३, १४

(२)

आद्याशक्ति की उपासना से ही ब्रह्म की उपासना होती है – ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है

ईशान भाटपाड़ा मे गायत्री का पुरश्चरण करेगे। गायत्री ब्रह्ममन्त्र है। विषयबुद्धि बिलकुल लुप्त हुए बिना ब्रह्मज्ञान नही होता। परन्तु कलियुग मे अन्नगत प्राण है – विषयबुद्धि छूटती नही। रूप, रस, गन्ध, शब्द, स्पर्श – मन सदा इन्ही विषयो को लेकर रहता है। इसलिए श्रीरामकृष्ण कहते है, 'कलि मे वेद का मत नही चलता। जो ब्रह्म है, वे ही शक्ति है। शक्ति की उपासना करने से ही ब्रह्म की उपासना होती है। जिस समय वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय करते है, उस समय उन्हे शक्ति कहते है। दो अलग अलग नही – एक ही है।'

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति) – क्यो 'नेति नेति' करके भटक रहे हो? ब्रह्म के सम्बन्ध मे कुछ भी नही कहा जा सकता। केवल कहा जा सकता है, 'अस्तिमात्रम्*' 'केवल: राम:'।

"हम जो कुछ देख रहे है, सोच रहे है, सभी उस आद्याशक्ति का, उस चित्शक्ति का ही ऐश्वर्य है – सृजन, पालन, संहार, जीव, जगत्, फिर ध्यान, ध्याता; भक्ति, प्रेम, – सब उन्ही का ऐश्वर्य है।"

"परन्तु ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है। लंका से लौटने के बाद हनुमान ने राम की स्तुति की थी। कहा था, 'हे राम, तुम्ही परब्रह्म हो और सीता तुम्हारी शक्ति है। परन्तु तुम दोनो अभिन्न हो, जिस प्रकार सर्प और उसकी टेढ़ी गति, – साँप जैसी गति को सोचना हो तो साँप को सोचना होगा, और साँप को सोचने पर साँप की गति को भी सोचना पड़ता है। दूध का विचार करने पर दूध के रंग का – धवलत्व का विचार करना पड़ता है, और दूध की तरह सफेद अर्थात् धवलत्व को सोचने पर दूध का स्मरण लाना पड़ता है। जल की शीतलता का चिन्तन करते ही जल का स्मरण आता है और फिर जल के चिन्तन के साथ ही, जल की शीतलता का भी चिन्तन करना पड़ता है।"

"इस आद्याशक्ति या महामाया ने ब्रह्म को आवृत्त कर रखा है। आवरण हट जाते ही 'मै जो था, वही बन गया।' 'मै ही तुम, तुम ही मै हूँ!'

"जब तक आवरण है, तब तक वेदान्तवादी की 'सोऽहम्' अर्थात् 'मै ही परब्रह्म हूँ' यह बात नही चलती। जल की ही तरंग है, तरंग का जल नही कहलाता। जब तक

---

* नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा। अस्तीत्येवोपलब्धस्य तत्त्वभाव: प्रसीदति।।
– कठ उपनिषद, २। ३-१२-१३

आवरण है, तब तक 'माँ माँ' कहकर पुकारना अच्छा है। तुम माँ हो, मैं तुम्हारी सन्तान हूँ। तुम प्रभु हो, मैं तुम्हारा दास हूँ। सेव्यसेवक-भाव अच्छा है। इसी दासभाव से फिर सभी भाव आते हैं – शान्त, सख्य आदि। मालिक यदि नौकर से प्यार करता है, तो उसे बुलाकर कहता है, 'आ, मेरे पास बैठ, तू जो है, मै भी वही हूँ;' परन्तु नौकर यदि अपनी इच्छा से मालिक के पास बैठने जाय तो क्या मालिक नाराज न होंगे?

आद्याशक्ति तथा अवतार-लीला। वेद, पुराण एवं तन्त्रों का समन्वय

"अवतार-लीला – ये सब चित्शक्ति के ऐश्वर्य हैं। जो ब्रह्म है, वे ही फिर राम, कृष्ण तथा शिव हैं।"

ईशान – हरि और हर, एक ही धातु है, केवल प्रत्यय का भेद है। (सभी हँसे पड़े।)

श्रीरामकृष्ण – हाँ, एक के अतिरिक्त दो कुछ भी नहीं है। वेद में कहा है – ॐ सच्चिदानन्दं ब्रह्म; पुराण में कहा है – ॐ सच्चिदानन्दः कृष्णः और तन्त्र में कहा है – ॐ सच्चिदानन्दः शिवः।

"उस चित्शक्ति ने महामाया के रूप में सभी को अज्ञानी बना रखा है। अध्यात्मरामायण में है, राम के दर्शन जितने ऋषियों ने किए वे सभी एक बात कहते थे, – 'हे राम, हमें अपनी भुवनमोहिनी माया द्वारा मुग्ध न करो।' "*

ईशान – यह माया क्या है?

श्रीरामकृष्ण – जो कुछ देखते हो, सुनते हो, सोचते हो, सभी माया है। एक बात में कहना हो तो, कामिनी-कांचन ही माया का आवरण है।

"पान खाना, तम्बाकू पीना, तेल मालिश करना – इनमें दोष नहीं है। केवल इन्हीं का त्याग करने से क्या होगा? कामिनीकांचन के त्याग की आवश्यकता है। वही त्याग है! गृहस्थ लोग बीच बीच में निर्जन स्थान में जाकर साधन-भजन कर भक्ती प्राप्त करके मन से त्याग करें। संन्यासी बाहर भीतर दोनों ओर से त्याग करें।

"केशव सेन से मैंने कहा था, 'जिस कमरे में जल का घड़ा और इमली का अचार है उसी कमरे में यदि सन्निपात का रोगी रहे तो भला वह कैसे अच्छा हो सकता है? बीच बीच में निर्जन स्थान में जाना ही चाहिए।' "

एक भक्त – महाराज, नवविधान ब्राह्मसमाज किस प्रकार है – मानो खिचड़ी जैसा!

श्रीरामकृष्ण – कोई कोई कहते हैं आधुनिक। मैं सोचता हूँ, क्या ब्राह्मसमाजवालों का ईश्वर दूसरा है? कहते है नवविधान नया विधान; सो होगा। जिस प्रकार छः दर्शन हैं, षड्दर्शन, उसी प्रकार एक और कुछ होगा।

---

* अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः। – गीता, ५। १५

"परन्तु निराकारवादियों की भूल क्या है जानते हो? भूल यह है कि वे कहते हैं, 'ईश्वर निराकार हैं, और बाकी सारे मत गलत हैं।' "

"मैं जानता हूँ, वे साकार निराकार दोनों ही हैं, और भी कितने प्रकार के बन सकते हैं! वे सब कुछ बन सकते हैं।"

(ईशान के प्रति) – "वही चित्शक्ति, वही महामाया चौबीस तत्त्व बनी हुई है। मैं ध्यान कर रहा था, ध्यान करते करते मन चला गया। रसके के घर में। रसके मेहतर है। मन से कहा, 'अरे, रह, वहीं पर रह'। माँ ने दिखा दिया, उसके घर में जो लोग घूम रहे हैं, वे बाहर का आवरण मात्र हैं, भीतर वही एक कुलकुण्डलिनी, एक षट्चक्र है।

"वह आद्याशक्ति स्त्री है या पुरुष? मैंने उस देश में देखा, लाहाओ के घर पर कालीपूजा हो रही है। माँ के गले में जनेऊ दिया है। एक व्यक्ति ने पूछा, 'माँ को जनेऊ क्यों है?' जिसके घर में पूजा है उसने कहा, 'भाई, तूने माँ को ठीक पहचाना है, परन्तु मैं तो कुछ भी नहीं जानता कि माँ पुरुष है या स्त्री!'

"इस प्रकार कहा जाता है कि महामाया शिव को निगल गयी। माँ के भीतर षट्चक्र का ज्ञान होने पर शिव माँ की जाँघ में से निकल आए। फिर शिव ने तन्त्रों की रचना की।"

"उस चित्शक्ति के, इस महामाया के शरणागत होना चाहिए।"

ईशान – आप कृपा कीजिए।

'डुबकी लगाओ'। गुरु का प्रयोजन। शास्त्राध्ययन

श्रीरामकृष्ण – सरल भाव से कहो, 'हे ईश्वर, दर्शन दो' और रोओ और कहो, 'हे ईश्वर, कामिनी-कांचन से मन को हटा दो।'

"और डुबकी लगाओ। ऊपर ऊपर बहने से या तैरने से क्या रत्न मिलता है? डुबकी लगानी पड़ती है।"

"गुरु से पता लेना चाहिए। एक व्यक्ति बाणलिंग शिव की खोज कर रहा था। किसी ने कह दिया, 'अमुक नदी के किनारे जाओ, वहाँ पर एक वृक्ष देखोगे, उस वृक्ष के पास एक भँवर है। वहाँ पर डुबकी लगानी होगी, तब बाणलिंग शिव मिलेगा।' इसीलिए गुरु से पता जान लेना चाहिए।"

ईशान – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – सच्चिदानंद ही गुरु के रूप में आते हैं। मनुष्य गुरु से यदि कोई दीक्षा लेता है, तो उन्हें मनुष्य मानने से कुछ नहीं होगा। उन्हें साक्षात् ईश्वर मानना होगा, तभी मन्त्र पर विश्वास होगा। विश्वास हुआ कि सब कुछ हो गया! शूद्र एकलव्य ने मिट्टी के द्रोणाचार्य बनाकर वन में बाण चलाना सीखा था। मिट्टी के द्रोण की पूजा करता था –

साक्षात् द्रोणाचार्य मानकर। इसी से वह धनुर्विद्या में सिद्ध हो गया!

"और तुम ब्राह्मण-पण्डितों को लेकर अधिक झमेला न किया करो। उन्हें चिन्ता है दो पैसे पाने की!"

"मैंने देखा है, ब्राह्मण स्वस्त्ययन करने आया है; चण्डीपाठ या और कुछ पाठ कर रहा है – पर आधे पन्ने वैसे ही उलटता जा रहा है। (सभी हँस पड़े।)

"अपनी हत्या एक छोटी नहरनी से भी हो सकती है। दूसरों को मारने के लिए ढाल-तलवार चाहिए। – शास्त्रग्रन्थादि का यही हेतु है।"

"बहुतसे शास्त्रों की भी कोई आवश्यकता नहीं है। यदि विवेक न हो तो केवल पाण्डित्य से कुछ नहीं होता, षट्शास्त्र पढ़कर भी कुछ नही होता। निर्जन में, एकान्त में, गुप्त रूप से रो-रोकर उन्हें पुकारो, वे ही सब कुछ कर देंगे।"

श्रीरामकृष्ण ने सुना है, ईशान भाटपाड़ा में पुरश्चरण करने के लिए गंगा के तट पर कुटिया बना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (व्यग्र भाव से ईशान के प्रति) – क्यों जी, क्या कुटिया बन गयी? जानते हो, ये सब काम लोगों से जितने छिपे रहें, उतना ही अच्छा है। जो लोग सतोगुणी हैं, वे ध्यान करते हैं मन में, कोने में, वन में; कभी तो मच्छरदानी के भीतर ही बैठे ध्यान करते हैं।

हाजरा महाशय को ईशान बीच बीच में भाटपाड़ा ले जाते हैं। हाजरा महाशय छूतधर्मी की तरह आचरण करते हैं। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें वैसा करने से मना किया था।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति) – और देखो, अधिक छूतधर्म का आचरण मत करो। एक साधु को बड़ी प्यास लगी थी। भिश्ती जल लेकर जा रहा था; उसने साधु को जल देना चाहा। साधु ने कहा, 'क्या तुम्हारी मशक साफ है?' भिश्ती बोला, 'महाराज, मेरी मशक खूब साफ है! परन्तु आपकी मशक के भीतर मल-मूत्र आदि अनेक प्रकार के मैल हैं। इसलिए कहता हूँ, मेरी मशक से जल पीजिए, इससे दोष न लगेगा।' आपकी मशक अर्थात् आपकी देह, आपका पेट।

"और उनके नाम पर विश्वास रखो। तो फिर तीर्थ आदि की भी आवश्यकता न होगी।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण भाव मे विभोर होकर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "यदि 'काली काली' कहते हुए मेरे शरीर का अन्त हो तो गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची आदि कौन चाहता है? जो तीनों समय काली का नाम लेता है, वह क्या पूजा-सन्ध्या चाहता है? सन्ध्या स्वयं उसकी खोज में रहकर भी पता नही पाती। कालीनाम के इतने गुण है कि कौन उसका पार पा सकता है। उन गुणों को देवाधिदेव महादेव पंचमुखों से गाते हैं। दया, व्रत, दान आदि और किसी में भी मन नहीं जाता, मदन

का यज्ञ-याग ब्रह्ममयी के पादपद्म में है।''

ईशान सब सुनकर चुप होकर बैठे हैं।

बालक के समान विश्वास। जनक के समान, पहले साधन फिर संसार में ईश्वर लाभ।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति) – और भी सन्देह हो तो पूछ लो।

ईशान – जी, आपने जो कहा है – विश्वास!

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ठीक विश्वास के द्वारा ही उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। और पूरा विश्वास करने पर और भी शीघ्र प्रगति होती है। गौ यदि चुन-चुनकर खाती है तो दूध कम देती है, सभी प्रकार के घास-पत्ते खाने पर वह अधिक दूध देती है।

''राजकृष्ण बनर्जी के लड़के ने एक कहानी सुनायी थी कि एक व्यक्ति को आदेश हुआ कि इस भेड़ में ही तू अपना इष्ट देखना। उसने इसी पर विश्वास किया। सर्वभूतों में वे ही विराजमान हैं।''

''गुरु ने भक्त से कह दिया कि राम ही घट घट में विराजमान हैं। भक्त का उसी समय विश्वास हो गया! जब देखा एक कुत्ता मुँह में रोटी लेकर भाग रहा है, तो भक्त घी का पात्र हाथ में लेकर पीछे पीछे दौड़ता है और कहता है, 'राम, थोड़ा ठहरो, रोटी में घी तो लगा दूँ!'

''अहा! कृष्णकिशोर का क्या ही विश्वास था! कहा करता था, 'ॐ कृष्ण ॐ राम' इस मन्त्र का उच्चारण करने पर करोड़ों सन्ध्या-वन्दन का फल होता है।''

''फिर मुझे कृष्णकिशोर कान में कहा करता था, 'कहना नहीं किसी से; मुझे सन्ध्या-पूजा अच्छी नहीं लगती।''

''मुझे भी वैसा ही होता है। माँ दिखा देती हैं कि वे ही सब कुछ बनी हुई हैं। शौच के बाद मैदान से आ रहा था पंचवटी की ओर, देखा साथ साथ एक कुत्ता आ रहा है; तब पंचवटी के पास आकर थोड़ी देर खड़ा रहा; सोचा, शायद माँ इसके द्वारा कुछ कहलाए!

''इसलिए जैसा तुमने कहा, विश्वास से ही सब कुछ मिलता है।''

ईशान – परन्तु हम तो गृहस्थाश्रम में हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्या हानि है! उनकी कृपा होने पर असम्भव भी सम्भव हो जाता है। रामप्रसाद ने गाना गाया था, यह संसार धोखे की टट्टी है। उसका उत्तर किसी दूसरे ने एक दूसरे गाने में दिया था -

(भावार्थ) – '''यह संसार आनन्द की कुटिया है। मैं खाता, पीता और आनन्द करता हूँ। जनक राजा बड़े तेजस्वी थे, उन्हें किस बात की कमी थी, वे तो दोनों ओर संभाले रखकर आनन्द से दूध पीते थे।'

''परन्तु पहले निर्जन में गुप्त रूप से साधन-भजन करके ईश्वर को प्राप्त करने के

बाद संसार मे रहने से मनुष्य 'जनक राजा' बन सकता है। नही तो कैसे होगा?

"देखो न, कार्तिक, गणेश, लक्ष्मी, सरस्वती सभी विद्यमान है, परन्तु शिव कभी समाधिस्थ, तो कभी 'राम राम' कहते हुए नृत्य कर रहे है।"

□□□

परिच्छेद ५४

दक्षिणेश्वर में राम आदि भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ बैठे हैं। राखाल, मास्टर, राम, हाजरा आदि भक्तगण उपस्थित हैं। हाजरा महाशय बाहर के बरामदे में बैठे हैं। आज रविवार, २३ सितम्बर १८८३, भाद्रपदी कृष्ण सप्तमी है।

नित्यगोपाल, तारक आदि भक्तगण राम के घर पर रहते हैं। उन्होंने उन्हें आदर-सत्कार के साथ रखा है।

राखाल बीच बीच में अधर सेन के मकान पर जाया करते हैं। नित्यगोपाल सदा ही भाव में विभोर रहते हैं। तारक की भी स्थिति अन्तर्मुखी है। आजकल वे लोगों से विशेष वार्तालाप नहीं करते।

श्रीरामकृष्ण अब नरेन्द्र की बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (एक भक्त के प्रति) – आजकल नरेन्द्र तुम्हें भी 'लाईक' (like – पसन्द) नहीं करता। (मास्टर के प्रति) अधर के घर पर नरेन्द्र नहीं आया?

"एक साथ ही नरेन्द्र में कितने गुण हैं। गाने-बजाने में, लिखने-पढ़ने में, सभी में प्रवीण है। उस दिन यहाँ से कप्तान की गाड़ी से जा रहा था। गाड़ी में कप्तान भी बैठे थे। उन्होंने उससे अपने पास बैठने के लिए कितना कहा। पर नरेन्द्र अलग ही जाकर बैठा; कप्तान की ओर ताककर देखा तक नहीं।

"केवल पाण्डित्य से क्या होगा? साधन-भजन चाहिए, इन्देश का गौरी पण्डित विद्वान् था और साधक भी। शक्ति-साधक। माँ के भाव में कभी कभी पागल हो जाता था। बीच बीच में कह उठता था, 'हा रे रे रे, निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम्।' उस समय सब पण्डित निष्प्रभ हो जाते थे। मैं भी भावाविष्ट हो जाता था। मेरा भोजन देखकर पूछता, 'तुमने भैरवी लेकर साधना की है?'

"एक कर्ताभजा सम्प्रदाय के पण्डित ने निराकार की व्याख्या करते हुए कहा, 'निराकार अर्थात् नीर का आकार!' यह व्याख्या सुनकर गौरी बहुत क्रुद्ध हुआ।

"पहले-पहल कट्टर शाक्त था; तुलसी का पत्ता दो लकड़ियों के सहारे उठाता था – छूता न था! (सभी हँसे।) इसके बाद घर गया। घर से लौट आने के पश्चात् फिर वैसा नहीं करता था।

"मैंने कालीमन्दिर के सामने एक तुलसी का पौधा लगाया था। पर कुछ समय में वह सूख गया। कहते हैं, जहाँ पर बकरों की बलि होती है, वहाँ पर तुलसी नहीं रहती।"

"गौरी सभी बातों की सुन्दर व्याख्या करता था। रावण के दस शिरों के बारे में कहता था, दस इन्द्रियाँ! तमोगुण को कुम्भकर्ण, रजोगुण को रावण और सतोगुण को विभीषण कहता था। इसीलिए विभीषण ने राम को प्राप्त किया था।"

श्रीरामकृष्ण मध्याह्न के भोजन के बाद थोड़ी देर विश्राम कर रहे हैं। कलकत्ते से राम, तारक (शिवानन्द) आदि भक्तगण आकर उपस्थित हुए। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर वे जमीन पर बैठ गए। मास्टर भी जमीन पर बैठे हैं। राम कह रहे हैं, "हम लोग मृदंग बजाना सीख रहे हैं।"

श्रीरामकृष्ण (राम के प्रति) – नित्यगोपाल ने भी कुछ सीखा है?

राम – जी नहीं, वह कुछ ऐसा ही मामूली बजा सकता है।

श्रीराकृष्ण – और तारक?

राम – वह अच्छा बजा सकेगा।

श्रीरामकृष्ण – तो फिर वह मुँह उतना नीचा किए न रहेगा। किसी दूसरी ओर मन अधिक लगा देने पर फिर ईश्वर पर उतना नहीं रह जाता।

राम – मैं समझता हूँ, मैं जो सीख रहा हूँ, वह केवल संकीर्तन के लिए है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – सुना है तुमने गाना सीखा है?

मास्टर (हँसकर) – जी नही, यों ही ऊँ आँ करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम वह गाना जानते हो? जानते हो? जानते हो तो गाओ न। 'आर काज नाइ ज्ञानविचारे, दे माँ पागल करे।'*

देखो, यही मेरा असली भाव है।"

हाजरा को उपदेश – घृणा व निन्दा छोड़ दो

हाजरा महाशय कभी कभी किसी के सम्बन्ध में घृणा प्रकट करते थे।

श्रीरामकृष्ण (राम आदि भक्तो के प्रति) – कामारपुकुर में किसी मकान पर मैं अक्सर जाया करता था। उस घर के लड़के मेरी ही बराबरी के थे, वे लड़के उस दिन यहाँ आए थे और दो-तीन दिन रहे भी। हाजरा की तरह उनकी माँ सब से घृणा करती थी। अन्त मे उसके पैर में न जाने क्या हो गया। पैर सड़ने लगा। कमरे में इतनी दुर्गन्ध हुई कि लोग अन्दर तक नहीं जा सकते थे।

"इसीलिए मैंने हाजरा से यह बात कही और उसे चेतावनी दे दी कि किसी की निन्दा न करो।"

---

* 'अब मुझे ज्ञान-विचार से काम नहीं है, हे माँ, मुझे तू पागल बना दे।'

दिन के चार बजे का समय हुआ। श्रीरामकृष्ण मुँह-हाथ धोने के लिए झाऊतल्ले की ओर गए। उनके कमरे के दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में दरी बिछायी गयी। श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से लौटकर उस पर बैठे। राम आदि उपस्थित हैं। अधर सेन जाति के सुनार हैं। उनके घर राखाल ने अन्नग्रहण कर लिया, इसलिए रामबाबू ने कुछ कहा है। अधर परम भक्त हैं। यही बातें हो रही हैं।

एक भक्त हँसी हँसी में सुनारों में से किसी किसी के स्वभाव का वर्णन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं – स्वयं कोई राय प्रकट नहीं कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण की कर्मत्याग की स्थिति। जगन्माता के साथ वार्तालाप

सायंकाल हुआ। आँगन में उत्तर-पश्चिम के कोने में श्रीरामकृष्ण खड़े हैं, वे समाधिस्थ हैं।

काफी देर बाद उनका मन बाह्य जगत् में लौटा। श्रीरामकृष्ण की कैसी अद्भुत स्थिति है! आजकल प्राय: समाधिमग्न रहते हैं। थोड़े ही उद्दीपन से बाह्यज्ञानशून्य हो जाते हैं। जब भक्तगण आते हैं, तब थोड़ा वार्तालाप करते है; अन्यथा सदा ही अन्तर्मुख रहते हैं। अब पूजा, जप आदि नहीं कर सकते।

समाधि भंग होने के बाद खड़े खड़े ही जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं। कह रहे हैं, "माँ! पूजा गयी, जप गया। देखना माँ! कहीं जड़ न बना डालना। सेव्यसेवक-भाव में रखना माँ, जिससे बात कर सकू, तुम्हारा नाम-गुण – संकीर्तन और गान कर सकू। और शरीर में थोड़ा बल दो माँ! जिससे थोड़ा चलफिर सकूँ, जहाँ पर तुम्हारी कथा होती हो, जहाँ पर तुम्हारे भक्तगण हों, उन सब स्थानों में जा सकूँ।"

श्रीरामकृष्ण ने आज प्रात:काल कालीमन्दिर में जाकर जगन्माता के श्रीचरणकमलों पर पुष्पांजलि अर्पण की है। वे फिर जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, 'माँ! आज सबेरे चरणों में दो फूल चढ़ाए। सोचा, अच्छा हुआ, फिर बाह्य पूजा की ओर मन जा रहा है! पर माँ, फिर ऐसा क्यों हुआ? फिर जड़ की तरह क्यों बना डाल रही हो?"

भाद्रपद कृष्णा सप्तमी। अभी तक चन्द्रमा का उदय नहीं हुआ। रात्रि तमसाच्छन्न है। श्रीरामकृष्ण अभी भावाविष्ट हैं, इसी स्थिति में अपने कमरे के छोटे तख्त पर बैठे। फिर जगन्माता के साथ बात कर रहे हैं।

अब सम्भवत: भक्तों के सम्बन्ध में माँ से कुछ कह रहे हैं। ईशान मुखोपाध्याय की बात कह रहे हैं। ईशान ने कहा था, 'मैं भाटपाड़ा में जाकर गायत्री का पुरश्चरण करूँगा।' श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा था कि कलियुग में वेदमत नहीं चलता; जीव अन्नगतप्राण है, आयु कम है, देहबुद्धि, विषयबुद्धि सम्पूर्ण नष्ट नहीं होती। इसीलिए ईशान को मातृभाव

से तन्त्रमत के अनुसार साधना करने का उपदेश दिया था, और ईशान से कहा था, 'जो ब्रह्म है, वहीं माँ, वही आद्याशक्ति है।'

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर कह रहे है, "फिर गायत्री का पुरश्चरण! इस छत पर से उस छत पर कूदना! किसने उससे ऐसी बात कही है? अपने ही मन से कर रहा है। अच्छा, थोड़ा पुरश्चण करेगा।"

(मास्टर के प्रति) – "अच्छा, मुझे यह सब क्या वायु के विकार से होता है अथवा भाव से?"

मास्टर विस्मित होकर देख रहे है कि श्रीरामकृष्ण जगन्माता के साथ इस प्रकार बातचीत कर रहे है। वे विस्मित होकर देख रहे है, ईश्वर हमारे अति निकट, बाहर तथा भीतर है। अत्यन्त निकट हुए बिना श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे उनके साथ बातचीत कैसे कर रहे है?

□□□

परिच्छेद ५५

मास्टर के प्रति उपदेश

(१)

पण्डित और साधु में अन्तर। कलियुग में नारदीय भक्ति

आज बुधवार है, भाद्रपद की कृष्णा दशमी, २६ सितम्बर, १८८३ ई.। बुधवार को भक्तो का समागम कम होता है, क्योकि सब अपने काम मे लगे रहते है। प्राय: रविवार को समय मिलने पर भक्तगण श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते है। मास्टर को स्कूल से आज डेढ़ बजे छुट्टी मिल गयी है। तीन बजे वे दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर मे श्रीरामकृष्ण के पास पहुँचे। इस समय श्रीरामकृष्ण के पास प्राय: राखाल और लाटू रहते है। आज दो घण्टे पहले किशोरी आए हुए है। कमरे के भीतर श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर बैठे हुए है। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने कुशल-प्रश्न पूछकर नरेन्द्र की बात चलायी।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – क्यो जी, क्या नरेन्द्र से भेट हुई थी? (सहास्य) नरेन्द्र ने कहा है, 'वे अब भी कालीमन्दिर जाया करते है, जब ठीक ज्ञान हो जाएगा तब फिर वे कालीमन्दिर मे नही जाएँगे।'

"कभी कभी वह यहाँ आता है, इसलिए उसके घरवाले बहुत नाराज है। उस दिन यहाँ गाड़ी पर चढ़कर आया था। गाड़ी का किराया सुरेन्द्र ने दिया था। इस पर नरेन्द्र की बुआ सुरेन्द्र के यहाँ लड़ने गयी थी।"

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की बात कहते हुए उठे। बातचीत करते हुए उत्तर-पूर्ववाले बरामदे मे जाकर खड़े हुए। वहाँ हाजरा, किशोरी, राखाल आदि भक्तगण है। तीसरे पहर का समय है।

श्रीरामकृष्ण - वाह, तुम तो आज खूब आ गए! क्यो, स्कूल नही है क्या?

मास्टर – आज डेढ़ बजे छुट्टी हो गयी थी।

श्रीरामकृष्ण – इतनी जल्दी क्यो?

मास्टर – विद्यासागर स्कूल देखने गए थे। स्कूल विद्यासागर का है, इसीलिए उनके आने पर लड़को को आनन्द मनाने के लिए छुट्टी दी जाती है।

श्रीरामकृष्ण – विद्यासागर सच बात क्यों नहीं कहता?

"सत्य बोलता रहे और परायी स्त्री को माता जाने, इन दो बातों से अगर राम न मिलें, तो तुलसीदास कहते हैं, मेरी बातों को झूठ समझो। सत्यनिष्ठ रहने से ही ईश्वर मिलते हैं। विद्यासागर ने उस दिन कहा था यहाँ आऊँगा, परन्तु फिर न आया।"

"पण्डित और साधु में बड़ा अन्तर है। जो केवल पण्डित है, उसका मन कामिनी-कांचन पर है। साधु का मन श्रीभगवान् के पादपद्मों में रहता है। पण्डित कहता कुछ है और करता कुछ है। साधु की बात जाने दो। जिनका मन ईश्वर के चरणारविन्दों में लगा रहता है, उनके कर्म और उनकी बातें और ही होती हैं। काशी में मैंने एक नानकपन्थी लड़का साधु देखा था। उसकी आयु तुम्हारे इतनी होगी। मुझे 'प्रेमी साधु' कहता था। काशी में उनका मठ है। एक दिन मुझे वहाँ न्यौता देकर ले गया। महन्त को देखा जैसे एक गृहिणी। उससे मैंने पूछा, 'उपाय क्या है?' उसने कहा, 'कलियुग में नारदीय भक्ति चाहिए।' पाठ कर रहा था, पाठ के समाप्त होने पर कहा – 'जले विष्णु: स्थले विष्णुर्विष्णु: पर्वतमस्तके। सर्वं विष्णुमयं जगत्।' सब के अन्त में कहा, 'शान्ति:! शान्ति:! प्रशान्ति:!'

कलियुग में वेदमत नहीं

"एक दिन उसने गीतापाठ किया। हठ और दृढ़ता भी ऐसी कि विषयी आदमियों की ओर होकर न पढ़ता था। मेरी ओर होकर उसने पढ़ा। मथुरबाबू भी थे। उनकी ओर पीठ फेरकर पढ़ने लगा। उसी नानकपन्थी साधु ने कहा था, 'उपाय है नारदीय भक्ति'।"

मास्टर – वे साधु क्या वेदान्तवादी नहीं हैं?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, वे लोग वेदान्तवादी है, परन्तु भक्तिमार्ग भी मानते है। बात यह है कि अब कलिकाल मे वेदमत नहीं चलता। एक ने कहा था, 'मैं गायत्री का पुरश्चरण करूँगा।' मैंने कहा, 'क्यों? – कलि के लिए तो तन्त्रोक्त मत है। क्या तन्त्रोक्त मत से पुरश्चरण नहीं होता?'

"वैदिक कर्म बड़ा कठिन है। तिस पर फिर दासत्व करना। ऐसा भी लिखा है कि बारह साल या इसी तरह कुछ दिन दासता करते रहने पर मनुष्य दास ही बन जाता है। इतने दिनों तक जिनकी दासता की, उन्हीं की सत्ता उसमें आ जाती है। उनका रज, तम, जीवहिंसा, विलास, ये सब आ जाते हैं – उनकी सेवा करते हुए। केवल दासता ही नहीं, ऊपर से पेन्शन भी खाता है!

"एक वेदान्ती साधु आया था। मेघ देखकर नाचता था। आँधी और पानी देखकर उसे बड़ा आनन्द मिलता था। उसके ध्यान के समय अगर कोई उसके पास जाता था तो वह बहुत नाराज होता था। एक दिन मैं गया। जाने पर वह बहुत ही उकताया। वह सदा

विचार करता था, 'ब्रह्म सत्य हैं, संसार मिथ्या।' माया के कारण अनेक रूप दिखायी दे रहे हैं, इसी विचार से वह रोशनी के झाड़ की कलम लिए फिरता था। झाड़ की कलम से देखो तो कितने ही रंग दीख पड़ते है, परन्तु वास्तव में रंग कोई भी नहीं हैं। उसी तरह ब्रह्म के सिवाय और कुछ भी नहीं हैं, परन्तु माया और अहंकार के कारण अनेक रूप दिखायी दे रहे हैं। किसी चीज को वह एक बार से अधिक न देखता था, जिससे कहीं माया न लग जाय आसक्ति न हो जाय। नहाते समय पक्षी को उड़ते हुए देखकर वह विचार करता था। हम दोनों एक साथ जंगल जाते थे। उसने जब यह सुना कि तालाब मुसलमानों का है तब उसमें से जल नहीं लिया। हलधारी ने उससे व्याकरण के प्रश्न किए; वह व्याकरण जानता था। व्यंजनवर्णों की बात हुई। तीन दिन यहाँ ठहरा था। एक दिन गंगाजी के किनारे पर शहनाई की आवाज सुनकर उसने कहा, जिसे ब्रह्मदर्शन होता है उसे इस तरह की आवाज सुनकर समाधि हो जाती है।''

(२)

दक्षिणेश्वर में गुरू श्रीरामकृष्ण। परमहंस-अवस्था

श्रीरामकृष्ण साधुओ की बात कहते हुए परमहंस की अवस्था बतलाने लगे। वही बालक की-सी चाल। मुँह पर हँसी जैसे एकदम फूट-फूटकर निकल रही है। कमर मे कपड़ा नही, दिगम्बर; आँखें आनन्दसागर में तैरती हुई। श्रीरामकृष्ण फिर छोटे तख्त पर जा बैठे, फिर वही मन को मुग्ध कर देनेवाली बाते होने लगी।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – मैने न्यांगटा (तोतापुरी) से वेदान्त सुना था। 'ब्रह्म सत्य है, संसार मिथ्या है।' बाजीगर आकर कितने ही तमाशे दिखाता है, आम के पौधे में आम भी लग जाता है। परन्तु है यह सब तमाशा। तमाशा दिखानेवाला बाजीगर ही सत्य है।

मणि – जीवन जैसे एक लम्बी नींद है! इतना ही समझता हूँ कि सब ठीक ठीक नही देख रहा हूँ। जिस मन से मैं आकाश को नहीं समझता, उसी मन से संसार को देख रहा हूँ न? अतएव देखना किस तरह से ठीक होगा?

श्रीरामकृष्ण – एक तरह और है। आकाश को हम लोग ठीक नहीं देख रहे, जान पड़ता है वह जमीन से मिला हुआ है। अतएव आदमी सत्य कैसे देखे? भीतर विकार जो है।

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से गाने लगे।

(भावार्थ) – ''हे शंकरि यह कैसा विकार है? तुम्हारी कृपा-औषधि मिलने पर ही यह दूर होगा। ... ''

''विकार तो है ही। देखो न, संसारी जीव आपस में लड़ते हैं, परन्तु जिस आधार पर लड़ते हैं वह बेजड़ है। लड़ाई भी कैसी! तेरा यह हो, तेरा वह हो। कितनी चिल्लाहट

और गालीगलौज!''

मणि – मैंने किशोरी से कहा था, छूँछे सन्दूक में है कुछ भी नही, परन्तु आदमी खीचातानी कर रहे हैं, रुपये हैं, यह समझकर।

''अच्छा, यह देह ही तो कुल अनर्थों का कारण है। यही सब देखकर ज्ञानी सोचते हैं, इस गिलाफ को छोड़ें तो जी बचे।''

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर की ओर जा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्यों? इस संसार को धोखे की टट्टी कहा है तो इसे आनन्द की कुटिया भी तो कहा है! देह रही भी तो क्या? संसार आनन्द की कुटिया भी तो हो सकता है।

मणि – निरवच्छिन्न आनन्द यहाँ कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ठीक है।

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर के सामने आए। माता को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। मणि ने भी प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर के सामने चबूतरे पर बिना किसी आसन के कालीमाता की ओर मुँह किए बैठे हुए हैं। केवल लाल धारीदार धोती पहने हैं। उसका कुछ हिस्सा पीठ पर पड़ा है और कुछ कन्धे पर। पीछे नाटमन्दिर का एक स्तम्भ है। पास ही मणि बैठे हैं।

मणि – यही अगर हुआ तो देहधारण की फिर क्या आवश्यकता है? देख तो यह रहा हूँ कि कुछ कर्मों का भोग करने के लिए ही देह धारण करना होता है। वह क्या कर रहा है वही जाने। बीच में हम लोग पिस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – चना अगर विष्ठा पर पड़ जाए तो भी उससे चने का ही पौधा निकलता है।

मणि – फिर भी अष्ट-बन्धन तो हैं ही।

सच्चिदानन्दही गुरु उनकी कृपा से ही मुक्ति

श्रीरामकृष्ण – अष्ट बन्धन नहीं, अष्टपाश हैं तो इससे क्या? उनकी कृपा होने पर एक क्षण में अष्टपाश छूट सकते हैं, जिस तरह कि हजार साल के अँधेरे कमरे में दीपक ले जाने पर एक क्षण में अँधेरा दूर हो जाता है, थोड़ा थोड़ा करके नहीं जाता। बाजीगर का एक खेल तुमने देखा है? कितनी ही गाँठ लगी रस्सी का एक छोर वह एक जगह बाँध देता है और दूसरा छोर अपने हाथ से पकड़े रहता है। उसने रस्सी को हिलाया नहीं कि सब ग्रन्थियाँ एक साथ खुल गयीं। परन्तु दूसरा आदमी चाहे लाख उपाय करे, उसे खोल नहीं सकता। श्रीगुरु की कृपा से सब ग्रन्थियाँ एक क्षण में ही खुल जाती हैं।

''अच्छा, केशव सेन इतना बदल कैसे गया? – बताओ तो। परन्तु यहाँ खूब

आता था। यहीं से नमस्कार करना सीखा था। एक दिन मैंने कहा, साधुओं को इस तरह से नमस्कार नहीं करना चाहिए। एक दिन ईशान के साथ मैं गाड़ी पर कलकत्ता जा रहा था। उसने मुझसे केशव सेन की सब बातें सुनीं। हरीश अच्छा कहता है – यहाँ से सब चेक पास करा लेने होंगे, तब बैंक में रुपये मिलेंगे।" (सब हँसते हैं।)

मणि निर्वाक् रहकर सब बातें सुन रहे हैं। उन्होंने समझा, गुरु के रूप में सच्चिदानंद स्वयं चेक पास करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – विचार न करना। उन्हें कौन जान सकता है? न्यांगटा कहता था, मैंने सुन रखा है, उन्हीं के एक अंश से यह ब्रह्माण्ड बना है।

"हाजरा में बड़ी विचारबुद्धि है। वह हिसाब करता है, इतने में संसार हुआ और इतना बाकी रह गया! उसका हिसाब सुनकर मेरा माथा ठनकने लगता है। मैं जानता हूँ, मैं कुछ नहीं जानता। कभी तो उन्हें अच्छा सोचता हूँ और कभी उन्हें बुरा मानता हूँ। उनको मैं क्या समझूँगा?"

मणि – जी हाँ, क्या कोई उन्हें समझ सकता है? जिसकी जैसी बुद्धि है, उतनी ही से वह सोचता है, मैं सब कुछ समझ गया। आप जैसा कहते हैं, एक चींटी चीनी के पहाड़ के पास गयी थी, उसका जब एक ही दाने से पेट भर गया तब उसने कहा, अब की बार आऊँगी तो पहाड़ का पहाड़ उठा ले जाऊँगी!

क्या ईश्वर को जाना जा सकता है? उपाय – शरणागति

श्रीरामकृष्ण – उन्हें कौन जान सकता है? मैं जानने की चेष्टा भी नहीं करता। मैं केवल माँ कहकर पुकारता हूँ। माँ चाहे जो करें। उनकी इच्छा होगी तो वे समझाएँगी और न इच्छा होगी तो न समझाएँगी। इससे क्या है? मेरा स्वभाव बिल्ली के बच्चे की तरह है। बिल्ली का बच्चा केवल 'मिऊँ मिऊँ' करके पुकारता है। इसके बाद उसकी माँ जहाँ रखती है वहीं रहता है। कभी कण्डौरे में रखती है और कभी बाबूसाहब के बिस्तरे पर। छोटा बच्चा बस माँ को ही चाहता है। माता का कितना ऐश्वर्य है, वह नहीं जानता। जानना भी नहीं चाहता। वह जानता है, मेरे माँ है, मुझे क्या चिन्ता है? नौकरानी का लड़का भी जानता है, मेरे माँ है। बाबू के लड़के के साथ अगर लड़ाई हो जाती है तो वह कहता है, 'मैं अपनी माँ से कह दूँगा। मेरे माँ है कि नहीं?' मेरा भी सन्तान-भाव है।

श्रीरामकृष्ण अकस्मात् अपने को दिखाकर, अपनी छाती में हाथ लगाकर, मणि से कहते हैं – "अच्छा, इसमें कुछ है – तुम क्या कहते हो?"

मणि निर्वाक् भाव से श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। शायद सोच रहे हैं – श्रीरामकृष्ण के हृदय में साक्षात् जगन्माता हैं। क्या जीवों के कल्याण के लिए माँ स्वयं देह धारण कर आयी हुई हैं?

(३)

साकार-निराकार। कर्तव्यबुद्धि

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में कालीमन्दर के सामने चबूतरे पर बैठे हैं। कालीप्रतिमा में जगन्माता के दर्शन कर रहे हैं। पास ही मास्टर आदि भक्तगण बैठे हैं।

थोड़ी देर पहले श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "ईश्वर के सम्बन्ध में अनुमान आदि लगाना व्यर्थ है। उनका ऐश्वर्य अनन्त है। बेचारा मनुष्य मुँह से क्या प्रकट कर सकेगा! एक चींटी ने चीनी के पहाड़ के पास जाकर चीनी का एक कण खाया। उसका पेट भर गया। तब वह सोचने लगी, 'अब की बार आऊँगी तो पूरे पहाड़ को अपने बिल में उठा ले जाऊँगी!'

"उन्हें क्या समझा जा सकता है? इसीलिए मेरा बिल्ली के बच्चे का-सा भाव है। माँ जहाँ भी रख दे, मैं कुछ नहीं जानता। छोटे बच्चे नहीं जानते, माँ का कितना ऐश्वर्य है!"

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर के चबूतरे पर बैठे स्तुति कर रहे हैं, – "ओ माँ! ओ माँ ओंकाररूपिणि! माँ! ये लोग कितना सब वर्णन करते हैं, माँ! – कुछ समझ नहीं सकता! कुछ नहीं जानता हूँ, माँ! शरणागत! शरणागत! केवल यही करो माँ! जिससे तुम्हारे श्रीचरणकमलों में शुद्धा भक्ति हो! अब और अपनी भुवनमोहिनी माया में मोहित न करो माँ! शरणागत! शरणागत!"

मन्दिर में आरती हो गयी। श्रीरामकृष्ण कमरे में छोटे तख्त पर बैठे हैं। महेन्द्र जमीन पर बैठे हैं।

महेन्द्र पहले-पहल श्री केशव सेन के ब्राह्मसमाज में हमेशा जाया करते थे। श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के बाद फिर वहाँ नहीं जाते हैं। श्रीरामकृष्ण सदा जगन्माता के साथ वार्तालाप करते हैं यह देखकर वे बड़े विस्मित हुए हैं और उनकी सर्वधर्मसमन्वय की बात सुनकर तथा ईश्वर के लिए उनकी व्याकुलता को देखकर वे मुग्ध हो गए हैं।

महेन्द्र लगभग दो वर्ष से श्रीरामकृष्ण के पास आया-जाया करते हैं और उनका दर्शन तथा कृपा प्राप्त कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें तथा अन्य भक्तों से सदा ही कहते हैं, "ईश्वर निराकार और फिर साकार भी हैं। भक्त के लिए वे देह धारण करते हैं।" जो लोग निराकारवादी हैं उनसे वे कहते हैं, "तुम्हारा जो विश्वास है उसे ही रखो। परन्तु यह जान लेना कि उनके लिए सभी कुछ सम्भव है। साकार और निराकार ही क्या, वे और भी बहुत कुछ बन सकते हैं।"

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति) - तुमने तो एक को पकड़ लिया है – निराकार!

महेन्द्र – जी हाँ, परन्तु जैसा कि आप कहते हैं, सभी सम्भव है। साकार भी सम्भव है।

श्रीरामकृष्ण – बहुत अच्छा, और यह भी जानो कि वे चैतन्य रूप में चराचर विश्व में व्याप्त हैं।

महेन्द्र – मैं समझता हूँ कि वे चेतन के भी चेतयिता हैं।

श्रीरामकृष्ण – अब उसी भाव में रहो। खींचतान करके भाव बदलने की आवश्यकता नहीं है। धीरे धीरे जान सकोगे कि वह चेतनता उन्हीं की चेतनता है। वे ही चैतन्यस्वरूप हैं।

"अच्छा, तुम्हारा धन-दौलत पर मोह है?"

महेन्द्र – जी नहीं! परन्तु हाँ, इतना अवश्य सोचता हूँ कि निश्चिन्त होने के लिए – निश्चिन्त होकर भगवान् का चिन्तन करने के लिए धन की आवश्यकता होती है।

श्रीरामकृष्ण – वह तो होगी ही!

महेन्द्र – क्या यह लोभ है? मैं तो ऐसा नहीं समझता।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ठीक है। नहीं तो तुम्हारे बच्चों को कौन देखेगा?

"यदि तुम्हें 'मैं अकर्ता हूँ' यह ज्ञान हो जाए तो फिर तुम्हारे लड़कों का क्या होगा?"

महेन्द्र – सुना है, कर्तव्य का बोध रहते ज्ञान नहीं होता। कर्तव्य मानो प्रखर सूर्य है।

श्रीरामकृष्ण – अब उसी भाव में रहो। इसके बाद जब यह कर्तव्यबुद्धि स्वयं ही चली जाएगी तब फिर दूसरी बात है।

सभी थोड़ी देर चुप रहे।

महेन्द्र – केवल थोड़ा ही ज्ञानलाभ होने से तो संसार और भी कष्टप्रद है। यह तो ऐसा होता है मानो होशसहित मृत्यु। जैसे – हैजा!

श्रीरामकृष्ण – राम! राम!

सम्भवत: इस कथन से महेन्द्र का तात्पर्य यह है कि मृत्यु के समय होश रहने पर अत्यधिक यन्त्रणा का अनुभव होता है, जैसे हैजे में होता है। थोड़े ज्ञानवाले का सांसारिक जीवन बड़ा दु:खमय होता है; क्योंकि वह यह समझ गया है कि संसार भ्रमात्मक है। अविद्या का संसार मानो दावाग्नि के सदृश है। सम्भव है इसीलिए श्रीरामकृष्ण 'राम! राम!' कह रहे हैं!

महेन्द्र – और दूसरी श्रेणी के लोग, जो पूर्ण अज्ञानी हैं, वे मानो मियादी बुखार से पीड़ित हैं। वे मृत्यु के समय बेहोश हो जाते हैं और इससे उन्हें मृत्यु की यन्त्रणा का अनुभव नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण – देखो न, धन रहने से भी क्या! जयगोपाल सेन कितने धनी हैं, परन्तु हैं दु:खी, लड़के उन्हें उतना नहीं मानते।

महेन्द्र – संसार में क्या केवल निर्धनता ही दु:ख है? इसके अतिरिक्त छ: रिपु भी हैं और फिर उनके ऊपर रोग-शोक।

श्रीरामकृष्ण – फिर मान-मर्यादा, लोकमान्य बनने की इच्छा।

"अच्छा, मेरा क्या भाव है?"

महेन्द्र – नींद खुल जाने पर मनुष्य का जो भाव होता है वही। उसे स्वयं का होश आ जाता है। ईश्वर के साथ सदा योग है।

श्रीरामकृष्ण – तुम मुझे स्वप्न में देखते हो?

महेन्द्र – हाँ, कई बार!

श्रीरामकृष्ण – कैसा? कुछ उपदेश देते देखते हो?

महेन्द्र चुप रह गए।

श्रीरामकृष्ण – जब जब मै तुम्हें शिक्षा देता दिखायी दूँ तो यही समझो कि स्वयं सच्चिदानन्द ही यह कार्य कर रहे है।

इसके बाद महेन्द्र ने स्वप्न में जो कुछ देखा था सभी कह सुनाया। श्रीरामकृष्ण ने मन लगाकर सभी सुना।

श्रीरामकृष्ण (महेन्द्र के प्रति) – यह सब बहुत अच्छा है। तुम और तर्क-विचार न लाओ! तुम लोग शाक्त हो!

□□□

परिच्छेद ५६

अधर के मकान पर दुर्गापूजा-महोत्सव में

(१)

जगन्माता के साथ वार्तालाप

श्री अधर के मकान पर नवमी-पूजा के दिन दालान में श्रीरामकृष्ण खड़े हैं। सन्ध्या के बाद श्रीदुर्गामाई की आरती देख रहे है। अधर के घर पर दुर्गापूजा का महोत्सव है। इसलिए वे श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रित करके लाए हैं।

आज बुधवार है। १० अक्टूबर १८८३ ई.। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ पधारे हैं। उनमें बलराम के पिता तथा अधर के मित्र स्कूल-इन्स्पेक्टर सारदाबाबू भी आए हैं। अधर ने पूजा के उपलक्ष्य में पड़ोसी तथा आत्मीयजनों को भी निमन्त्रण दिया है। वे भी आए हैं।

श्रीरामकृष्ण संध्या की आरती देखकर भावविभोर होकर पूजा के दालान में खड़े हैं। भावाविष्ट होकर माँ को गाना सुना रहे हैं।

अधर गृही भक्त हैं। और भी अनेक गृही भक्त उपस्थित हैं। वे सब त्रितापों से तापित हैं। सम्भव है इसीलिए श्रीरामकृष्ण सभी के मंगल के लिए जगन्माता की स्तुति कर रहे हैं।

(संगीत का भावार्थ) – "हे तारिणि! मुझे तारो। अब की बार शीघ्र तारो। हे माँ, जीवगण यम से भयभीत हो गए हैं। हे जगज्जननि! संसार को पालनेवाली! लोगों को मोहनेवाली जगज्जननि! तुमने यशोदा की कोख में जन्म लेकर हरि की लीला में सहायता की थी; तुमने वृन्दावन में राधा बन व्रजवल्लभ के साथ विहार किया। रास रचकर रसमयी तुमने रासलीला का प्रकाश किया। हे माँ, तुम गिरिजा हो, गोपतनया हो, गोविन्द की मनमोहिनी हो, तुम सद्गति देनेवाली गंगा हो। हे गौरि, सारा विश्व तुम्हारा गुणगान गाता है। हे शिवे! हे सनातनि! सदानन्दमयी सर्वस्वरूपिणि! हे निर्गुणे, हे सगुणे! हे सदाशिव की प्रिये! तुम्हारी महिमा को कौन जानता है!"

श्रीरामकृष्ण अधर के मकान के दुमँजले पर बैठकघर में बैठे हैं। कमरे में अनेक आमन्त्रित व्यक्ति आए हैं।

बलराम के पिता और सारदाबाबू आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण अभी भी भावविभोर है। आमन्त्रित व्यक्तियों को सम्बोधित कर कह रहे हैं, "मैंने भोजन कर लिया है; अब तुम लोग भी भोजन करो।"

अधर की पूजा और नैवेद्य को माँ ने ग्रहण किया है; क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण जगन्माता के आवेश में आकर कह रहे हैं, 'मैंने खा लिया है; अब तुम लोग भी प्रसाद पाओ'?

श्रीरामकृष्ण भावाविष्ट होकर जगन्माता से कह रहे हैं, "माँ! मैं खाऊँ? या तुम खाओगी? माँ, कारणानन्दरूपिणी।"

क्या श्रीरामकृष्ण जगन्माता को और अपने को एक ही देख रहे हैं! जो माँ हैं, क्या वही स्वयं लोकशिक्षा के लिए पुत्र के रूप मे अवतीर्ण हुई हैं? क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण भाव के आवेश में कह रहे हैं, मैंने भोजन कर लिया है?

इसी प्रकार भाव के आवेश में देह के बीच षट्चक्र और उसमें माँ को देख रहे हैं। इसलिए फिर भावविभोर होकर गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "हे माँ हरमोहिनी, तूने संसार को भुलावे में डाल रखा है। मूलाधार महाकमल मे तू वीणावादन करती हुई चित्तविनोदन करती है। महामन्त्र का अवलम्बन कर तू शरीररूपी यन्त्र के सुषुम्नादि तीन तारों में तीन गुणो के अनुसार तीन ग्रामों में संचरण करती है। मूलाधारचक्र में तू भैरव राग के रूप मे अवस्थित है; स्वाधिष्ठानचक्र के षड्दल कमल में तू श्री राग तथा मणिपूरचक्र मे मल्हार राग है। तू वसन्त राग के रूप में हृदयस्थ अनाहतचक्र मे प्रकाशित होती है। तू विशुद्धचक्र में हिण्डोल तथा आज्ञाचक्र में कर्णाटक राग है। तान-मान-लय-सुर के सहित तू मन्द्र-मध्य-तार इन तीन सप्तकों का भेदन करती है। हे महामाया, तूने मोहपाश के द्वारा सब को अनायास बाँध लिया है। तत्त्वाकाश में तू मानो स्थिर सौदामिनी की तरह विराजमान है। 'नन्दकुमार' कहता है कि तेरे तत्त्व का निश्चय नही किया जा सकता। तीन गुणो के द्वारा तूने जीव की दृष्टि को आच्छादित कर रखा है।"

(भावार्थ) – "माँ के गूढ़ तत्त्वों को सोचते सोचते प्राणो पर आ बीती। जिसके नाम से कालभय नष्ट होता है, जिसके चरणों के नीचे महाकाल है, उसका काला रूप क्यो हुआ? काले रूप अनेक हैं, पर यह बड़ा आश्चर्यजनक काला रूप है, जिसे हृदय के बीच में रखने पर हृदयरूपी पद्म आलोकित हो जाता है। रूप मे काली है, नाम में काली है, काले से भी अधिक काली है। जिसने इस रूप को देखा है, वह मोहित हो गया है, उसे दूसरा रूप अच्छा नहीं लगता। 'प्रसाद' आश्चर्य के साथ कहता है कि ऐसी लड़की कहाँ थी, जिसे बिना देखे, केवल कान से जिसका नाम सुनकर ही मन जाकर उससे लिप्त हो गया!"

अभया की शरण में जाने से सभी भय दूर हो जाते हैं, सम्भव है इसीलिए वे भक्तों को अभयदान दे रहे हैं और गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "मैंने अभय पद में प्राणों को सौंप दिया है" इत्यादि।

श्री सारदाबाबू पुत्रशोक से अत्यन्त व्यथित हैं। इसलिए उनके मित्र अधर उन्हें श्रीरामकृष्ण के पास लाये हैं। वे गौरांग के भक्त हैं। उन्हें देखकर श्रीरामकृष्ण में श्रीगौरांग का उद्दीपन हुआ है। श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "मेरा अंग क्यों गौर हुआ?" इत्यादि।

अब श्रीगौरांग के भाव में आविष्ट हो गाना गा रहे हैं। कह रहे हैं, सारदाबाबू यह गाना बहुत चाहते हैं।

(भावार्थ) – "भावनिधि गौरांग का भाव होगा नहीं तो क्या? भाव में हँसते हैं, रोते हैं, नाचते हैं, गाते हैं।वन देखकर वृन्दावन समझते हैं। गंगा देख उसे यमुना मान लेते हैं। गौरांग सिसक-सिसककर रो रहे हैं। यद्यपि वे बाहर 'गोर' हैं तथापि भीतर वे 'कृष्ण' हैं।

(भावार्थ) – "माँ! पड़ोसी लोग हल्ला मचाते हैं। मुझे गौरकलंकिनी कहते हैं? क्या यह कहने की बात है? कहाँ कहूँगी? ओ प्यारी सखि, लज्जा से मरी जाती हूँ। एक दिन श्रीवास के मकान में कीर्तन की धूम मची हुई थी; गौररूपी चन्द्रमा श्रीवास के आँगन पर लोटपोट हो रहा था। मैं एक कोने में खड़ी थी। एक ओर छिपी हुई थी। मैं बेहोश हो गयी। श्रीवास की धर्मपत्नी मुझे होश में लायी। एक दिन गौर नगरकीर्तन कर रहे थे; चाण्डाल, यवन आदि भी गौर के साथ थे। वे 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहते हुए नदिया के बाजारों में से चले जा रहे थे। मैंने उनके साथ जाकर दो रक्तिम चरणों के दर्शन किए थे। एक दिन गंगातट पर घाट पर गौरांग प्रभु खड़े थे। मानो चन्द्र और सूर्य दोनो ही गौर के अंग मे प्रकट हुए थे। गौर के रूप को देखकर शाक्त और शैव भूल गए। एकाएक मेरा घड़ा गिर पड़ा! दुष्ट ननदिया ने देख लिया था।"

बलराम के पिता वैष्णव हैं; सम्भव है इसीलिए अब श्रीरामकृष्ण गोपियों के दिव्य प्रेम का गाना गा रहे हैं।

(भावार्थ) – "सखि! श्याम को पा न सकी, तो फिर किस सुख से घर पर रहूँ? यदि श्याम मेरे सिर के केश होते तो हे सखि, मैं उसमें बकुल फूल पिरोकर यत्न के साथ वेणी बाँध लेती। श्याम यदि मेरे हाथ के कंगन होते, तो सदा बाँहों में लगे रहते। सखि, मैं कंगन हिलाकर, बाँह हिलाकर चली जाती। हे सखि! मैं श्यामरूपी कंगन को हाथ में पहनकर सड़कों पर से चली जाती। जिस समय श्याम अपनी बाँसुरी बजाता है, तो मै यमुना में जल लेने आती हूँ। मैं भटकी हुई हरिणी की तरह इधर-उधर ताकती रहती हूँ।"

(२)

सर्वधर्म-समन्वय और श्रीरामकृष्ण

बलराम के पिता की उड़ीसा प्रान्त में भद्रक आदि कई स्थानों में जमीदारी है और

वृन्दावन, पुरी, भद्रक आदि अनेक स्थानों में उनकी देवसेवा और अतिथिशालाएँ भी हैं। वे वृद्धावस्था में श्रीवृन्दावन में भगवान् श्यामसुन्दर के कुंज में उनकी सेवा में लगे रहते थे।

बलराम के पिताजी पुराने मत के वैष्णव हैं। अनेक वैष्णव भक्त, शाक्त, शैव और वेदान्तवादियों के साथ सहानुभूति नहीं रखते हैं; कोई कोई उनसे द्वेष भी करते हैं। परन्तु श्रीरामकृष्ण इस प्रकार की संकीर्णता पसन्द नहीं करते। उनका कहना है कि व्याकुलता रहने पर सभी पथों तथा सभी मतों से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। अनेक वैष्णव भक्त बाहर से तो जप-जाप, पूजा-पाठ आदि करते हैं, परन्तु भगवान् को प्राप्त करने के लिए उनमें व्याकुलता नही है। सम्भव है इसीलिए श्रीरामकृष्ण बलराम के पिताजी को उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर के प्रति) – सोचा, क्यों एकांगी बनूँ? मैंने भी वृन्दावन में वैष्णव वैरागी का भेष ग्रहण किया था। उस भाव में तीन दिन रहा। फिर दक्षिणेश्वर में राम-मन्त्र लिया था। लम्बा तिलक, गले में कण्ठी; फिर थोड़े दिनों के बाद सब कुछ हटा दिया।

"एक आदमी के पास एक बर्तन था। लोग उसके पास कपड़ा रँगवाने के लिए जाते थे। बर्तन में एक रंग तैयार रहता। परन्तु जिसे जिस रंग की आवश्यकता होती, उस बर्तन में कपड़ा डुबाने से वह उसी रंग का हो जाता। यह देखकर एक व्यक्ति विस्मित होकर रंगवाले से कहता है कि तुम स्वयं जिस रंग से रंगे हो वही रंग मुझे दो!"

क्या इस उदाहरण द्वारा श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि सभी धर्मों के लोग उनके पास आएँगे और आत्मज्ञान प्राप्त करेंगे?

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं, "एक वृक्ष पर एक गिरगिट था! एक व्यक्ति ने देखा हरा, दूसरे ने देखा काला और तीसरे ने पीला, इस प्रकार अलग अलग व्यक्ति अलग अलग रंग देख गए। बाद में वे आपस में विवाद कर रहे हैं। एक कहता है, वह जन्तु हरे रंग का है। दूसरा कहता है, नहीं लाल रंग का, कोई कहता है पीला, और इस प्रकार आपस में सब झगड़ रहे हैं। उस समय वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति बैठा था, सब मिलकर उसके पास गए। उसने कहा, 'मैं इस वृक्ष के नीचे रातदिन रहता हूँ, मैं जानता हूँ, यह बहुरुपिया है। क्षण क्षण में रंग बदलता है, और फिर कभी कभी इसके कोई रंग नहीं रहता।' "

क्या श्रीरामकृष्ण यही कह रहे हैं कि ईश्वर सगुण है, भिन्न भिन्न रूप धारण करता है और फिर निर्गुण है, कोई रूप नहीं, वाक्य मन से परे है? और वे स्वयं भक्तियोग, ज्ञानयोग आदि सभी पथों से ईश्वर के माधुर्य का रस पीते हैं?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता के प्रति) – और अधिक पुस्तकें न पढ़ो, परन्तु भक्तिशास्त्र का अध्ययन करो, जैसे श्रीचैतन्यचरितामृत।

राधाकृष्णलीला का अर्थ। रस और रसिक

"असल बात यह है कि उनसे प्रेम करना चाहिए, उनके माधुर्य का आस्वादन करना चाहिए। वे रस हैं और भक्त रसिक; भक्त उस रस का पान करते हैं। वे पद्म हैं और भक्त भौंरा, भक्त पद्म का मधु पीता है।

"भक्त जिस प्रकार भगवान् के बिना नहीं रह सकता, भगवान् भी भक्त के बिना नहीं रह सकते! उस समय भक्त रस बन जाता है और भगवान् बनते हैं रसिक; भक्त बनता है पद्म और भगवान् बनते हैं भौंरा! वे अपने माधुर्य का आस्वादन करने के लिए दो बने हैं, इसीलिए राधाकृष्ण-लीला हुई।

"तीर्थ, गले में माला, नियम, ये सब पहले-पहल करने पड़ते हैं। वस्तु की प्राप्ति हो जाने पर, भगवान् का दर्शन हो जाने पर बाहर का आडम्बर धीरे धीरे कम होता जाता है। उस समय उनका नाम लेकर रहना और स्मरण-मनन करना।

"सोलह रुपयों के पैसे अनेक होते हैं, परन्तु जब सोलह रुपये इकट्ठे किए जाते हैं, तो उतने अधिक नहीं दीखते। फिर उनके बदले में जब गिन्नी * बनायी तो कितना कम हो गया! फिर उसे बदलकर यदि छोटासा हीरा लाओ तो लोगों को पता तक नहीं लगता।

गले में माला, नियम आदि न रहने से वैष्णवगण आक्षेप करते हैं, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं कि ईश्वरदर्शन के बाद माला, दीक्षा आदि का बन्धन उतना नहीं रह जाता? वस्तु प्राप्त होने पर बाहर का काम कम हो जाता है।

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता के प्रति) – "कर्ताभजा सम्प्रदायवाले कहते हैं कि भक्त चार प्रकार के होते हैं। प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्ध का सिद्ध। प्रवर्तक तिलक लगाते हैं, गले में माला धारण करते हैं और नियम पालन करते हैं। साधक – इनका उतना बाहरका आडम्बर नहीं रहता; उदाहरणार्थ, बाउल। सिद्ध – जिसका स्थिर विश्वास है कि ईश्वर हैं। सिद्ध के सिद्ध जैसे चैतन्यदेव, उन्होने ईश्वर का दर्शन किया है और सदा उनसे वार्तालाप करते हैं। सिद्ध के सिद्ध को ही वे लोग साई कहते हैं। साईं के बाद और कुछ नहीं रह जाता।

"साधक भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। सात्त्विक साधना गुप्त रूप से होती है। इस प्रकार का साधक साधन-भजन को छिपाता है। देखने से वह साधारण लोगों की तरह जान पड़ता है। मच्छरदानी के भीतर बैठा ध्यान करता है।

"राजसिक साधक बाहर का आडम्बर रखता है, गले में जपमाला, भेष, गेरुआ वस्त्र, रेशमी वस्त्र, सोने के दानेवाली जपमाला, मानो साइनबोर्ड लगाकर बैठना!"

वैष्णव भक्तों की वेदान्तमत पर अथवा शाक्तमत पर उतनी श्रद्धा नहीं है।

* उस समय एक गिन्नी का मूल्य सोलह रुपये था।

श्रीरामकृष्ण बलराम के पिता को उस प्रकार के संकीर्ण भाव को त्यागने का उपदेश कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि के प्रति) – जो भी धर्म हो, जो भी मत हो, सभी उसी एक ईश्वर को पुकार रहे है। इसलिए किसी धर्म अथवा मत के प्रति अश्रद्धा या घृणा नही करनी चाहिए। वेद उन्हे ही कह रहे हैं, सच्चिदानन्द ब्रह्म, भागवत आदि पुराण उन्हें ही कह रहे है, सच्चिदानन्द कृष्ण, और तन्त्र कह रहे हैं, सच्चिदानन्द शिव। वही एक सच्चिदानन्द हैं।

"वैष्णवो के अनेक सम्प्रदाय हैं। वेद जिन्हें ब्रह्म कहते है, वैष्णवों का एक दल उन्हें अलख-निरंजन कहता है। अलख अर्थात् जिन्हें लक्ष्य नही किया जा सकता, इन्द्रियों द्वारा देखा नही जा मकता। वे कहते हैं, राधा व कृष्ण अलख के दो बुलबुले हैं।

"वेदान्तमत में अवतार नही है। वेदान्तवादी कहते हैं, राम, कृष्ण – ये सच्चिदानन्दरूपी समुद्र की दो लहरें हैं।

"एक के अतिरिक्त दो तो नहीं हैं, चाहे जिस नाम से कोई ईश्वर को पुकारे, यदि वह पुकार हार्दिक हो तो वह उसके पास अवश्य ही पहुँचेगी। व्याकुलता रहनी चाहिए।"

श्रीरामकृष्ण भाव में विभोर होकर भक्तों से ये सब बातें कह रहे हैं। अब प्रकृतिस्थ हुए है और कह रहे हैं, "तुम बलराम के पिता हो?"

सभी थोड़ी देर चुपचाप बैठे हैं, बलराम के वृद्ध पिता चुपचाप हरिनाम की माला जप रहे है।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर आदि के प्रति) – अच्छा, ये लोग इतना जप करते हैं, इतना तीर्थ करते है, फिर भी इनकी प्रगति क्यों नहीं होती? मानो अठारह मास का इनका एक वर्ष होता है।

"हरीश से कहा, 'यदि व्याकुलता न रहे, तो फिर वाराणसी जाने की क्या आवश्यकता? व्याकुलता रहने पर यहीं पर वाराणसी है।"

"इतना तीर्थ, इतना जप करते हैं, फिर भी कुछ क्यों नहीं होता? व्याकुलता नहीं है। व्याकुल होकर उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देते हैं।"

"नाटक के प्रारम्भ में रंगभूमि पर बड़ी गड़बड़ी मची रहती है। उस समय श्रीकृष्ण का दर्शन नहीं होता। उसके बाद नारद ऋषि जिस समय व्याकुल होकर वृन्दावन में आकर वीणा बजाते हुए पुकारते हैं और कहते हैं, 'प्राण हे, गोविन्द मम जीवन' – उस समय कृष्ण और ठहर नहीं सकते, गोपालों के साथ सामने आ जाते हैं।"

परिच्छेद ५७

दक्षिणेश्वर में कार्तिकी पूर्णिमा

(१)

श्रीरामकृष्ण की अद्भुत स्थिति – नित्य-लीलायोग

आज मंगलवार, १६ अक्टूबर १८८३ ई.। बलराम के पिता दूसरे भक्तों के साथ उपस्थित हैं। बलराम के पिता परम वैष्णव हैं। हाथ में हरिनाम की माला रहती है, सदा जप करते रहते हैं।

कट्टर वैष्णवगण अन्य सम्प्रदाय के लोगों को उतना पसन्द नहीं करते। बलराम के पिता बीच बीच में श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते हैं, उनका उन वैष्णवों का-सा भाव नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – जिनका उदार भाव है वे सभी देवताओं को मानते हैं, – कृष्ण, काली, शिव, राम आदि।

बलराम के पिता – हाँ, जिस प्रकार एक पति, अलग अलग पोशाक में।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु निष्ठाभक्ति एक चीज है। गोपियाँ जब मथुरा में गयीं तो पगड़ी पहने हुए कृष्ण को देखकर उन्होंने घूँघट काढ़ लिया और कहा, 'यह कौन है! हमारे पीतवस्त्रधारी, मोहनचूड़ावाले श्रीकृष्ण कहाँ हैं?'

"हनुमान की भी निष्ठाभक्ति है। द्वापर युग में द्वारका में जब आए तो कृष्ण ने रुक्मिणी से कहा, 'हनुमान रामरूप न देखने से सन्तुष्ट न होगा।' इसलिए रामरूप में उन्हें दर्शन दिया!

"कौन जाने भाई, मेरी यही एक स्थिति है। मैं केवल नित्य से लीला में उतर आता हूँ और फिर लीला से नित्य में चला जाता हूँ।

"नित्य में पहुँचने का नाम है ब्रह्मज्ञान। बड़ा कठिन है। विषयबुद्धि एकदम नष्ट हुए बिना कुछ नहीं होता। हिमालय के घर जब भगवती ने जन्म लिया तो पिता को अनेक रूपों में दर्शन दिया। हिमालय ने उनसे कहा, 'मैं ब्रह्मदर्शन की इच्छा करता हूँ।' तब भगवती ने कहा, 'पिताजी, यदि वैसी इच्छा हो तो सत्संग करना पड़ेगा। संसार से अलग होकर बीच बीच में निर्जन में साधुसंग कीजिए।'

"उस एक से ही अनेक हुए हैं – नित्य से ही लीला है। एक ऐसी अवस्था है जिसमें 'अनेक' का बोध नहीं रहता और न 'एक' का ही; क्योंकि 'एक' के रहते ही 'अनेक' आ जाता है। वे तो उपमाओं से रहित हैं – उन्हें उपमा देकर समझाने का उपाय नहीं है! अन्धकार और प्रकाश के मध्य में हैं। हम जिस प्रकाश को देखते हैं, ब्रह्म वह प्रकाश नहीं है – ब्रह्म यह जड़ आलोक नहीं है।*

"फिर जब वे मेरे मन की अवस्था को बदल देते हैं – जिस समय लीला में मन को उतार लाते हैं – तब देखता हूँ ईश्वर, माया, जीव, जगत् – वे सब कुछ बने हुए हैं।

ईश्वर ही कर्ता

"फिर कभी वे दिखाते है कि उन्होंने इस सब जीव-जगत् को बनाया है – जैसे मालिक और उसका बगीचा।

"वे कर्ता हैं और उन्ही का यह सब जीव-जगत् है, इसी का नाम है ज्ञान। और 'मैं करनेवाला हूँ', 'मै गुरु हूँ', 'मै पिता हूँ', इसी का नाम है अज्ञान। फिर मेरे हैं ये सब घर-द्वार, परिवार, धन, जन आदि – इसी का नाम है अज्ञान।"

बलराम के पिता – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – जब तक यह बुद्धि नहीं होती कि 'ईश्वर, तुम्हीं कर्ता हो' तब तक बारम्बार लौटकर आना ही होगा, बारम्बार जन्म लेना पड़ेगा। फिर जब यह ज्ञान हो जाएगा कि तुम्हीं कर्ता हो, तब जन्म नही होगा।

"जब तक 'तू ही, तू ही' न करोगे तब तक छुटकारा नही। आना-जाना, पुनर्जन्म होगा ही – मुक्ति न होगी। और 'मेरा मेरा' कहने से भी क्या होगा? बाबू का मुनीम कहता है, 'यह हमारा बगीचा है, हमारी खाट, हमारी कुर्सी है।' परन्तु बाबू जब उसे नौकरी से निकाल देते है तो अपनी आम की लकड़ी की छोटीसी सन्दूकची तक ले जाने का उसे अधिकार नहीं रहता।

"'मैं और मेरा' ने सत्य को छिपा रखा है – जानने नहीं देता!

अद्वैतज्ञान तथा चैतन्यदर्शन

"अद्वैत का ज्ञान हुए बिना चैतन्य का दर्शन नहीं होता। चैतन्य का दर्शन होने पर तब नित्यानन्द होता है। परमहंसस्थिति में यही नित्यानन्द है।

"वेदान्तमत में अवतार नहीं है। इस मत में चैतन्यदेव अद्वैत के एक बुलबुला हैं।

"चैतन्य का दर्शन कैसा? दियासलाई जलाने से अँधेरे कमरे मे जिस प्रकार एकाएक रोशनी हो जाती है।

---

* ब्रह्म यह जड़ आलोक नहीं है – "तत् ज्योतिषां ज्योतिः।" "तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यत् आत्मविदो विदुः।" – मुण्डक उपनिषद्, २।२।९

भक्तिमत में अवतार मानते हैं। कर्ताभजा सम्प्रदाय की एक स्त्री मेरी स्थिति को देखकर कह गयी, 'बाबा, भीतर वस्तुप्राप्ति हुई है उतना नाचना-कूदना नहीं, अंगूर के फल को रुई पर यत्न से रखना होता है। पेट में बच्चा होने पर सास अपनी बहु का धीरे धीरे काम बन्द करा देती है। भगवान् के दर्शन का लक्षण है, धीरे धीरे कर्मत्याग होना। यह मनुष्य (श्रीरामकृष्ण) 'नर रत्न' है।'

"मेरे खाते समय वह कहती थी, 'बाबा, तुम खा रहे हो या किसी को खिला रहे हो?'

"इस 'अहं' ज्ञान ने ही आवरण बनाकर रखा है। नरेन्द्र ने कहा था, यह 'मैं' जितना जाएगा, 'उनका मैं' उतना ही आएगा। केदार कहता है, घड़े के भीतर जितनी ही अधिक मिट्टी रहेगी" अन्दर उतना ही जल कम रहेगा।

"कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, 'भाई, अष्टसिद्धियों में से एक भी सिद्धि के रहते तक मुझे न पाओगे। उससे थोड़ीसी शक्ति अवश्य मिल जाती है, पर बस केवल इतना ही। गुटिकासिद्धि, झाड़-फूक, दवा देना इत्यादी से लोगों का कुछ थोड़ा-बहुत उपकार भर हो जाता है, क्यों है न यही?

"इसीलिए माँ से मैंने केवल शुद्धा भक्ति माँगी थी! सिद्धि नहीं माँगी।"

बलराम के पिता, वेणी पाल, मास्टर, मणि मल्लिक आदि से यह बात कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गए। बाह्यज्ञानशून्य होकर चित्र की तरह बैठे हैं।

समाधि भंग हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे है –

(भावार्थ) – "सखि! जिसके लिए पागल बनी उसे कहाँ पा सकी?"

अब आपने रामलाल से गाना गाने के लिए कहा। वे गा रहे हैं। पहले ही गौरांग का संन्यास –

(भावार्थ) – "केशवभारती की कुटिया में मैंने क्या देखा – असाधारण ज्योतिवाली श्रीगौरांग की मूर्ति, जिसकी दोनों आँखों से शत धाराओं से प्रेमवारि बह रहा है। गौर पागल हाथी की तरह प्रेम के आवेश में आकर नाचते हैं, गाते हैं; कभी भूमि पर लोटते हैं। आँसू बह रहे हैं। वे रोते हैं और हरिनाम उच्चारण करते हैं, उनका सिंह जैसा उच्च स्वर आकाश को भी भेद रहा है। फिर वे दाँतों में तिनका लेकर हाथ जोड़कर द्वार द्वार पर दास्यभाव द्वारा मुक्ति की प्रार्थना कर रहे हैं।"

चैतन्यदेव के इस 'पागल' प्रेमोन्माद-स्थिति के वर्णन के बाद श्रीरामकृष्ण के कहने पर रामलाल फिर गोपियों की उन्माद स्थिति का गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "रथचक्र को न पकड़ो, न पकड़ो, क्या रथ चक्र से चलता है? उस चक्र के चक्री हरि हैं, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

(भावार्थ) – "श्यामरूपी चन्द्र का दर्शन कर नवीन बादल की कहाँ गिनती है? हाथ में बंसरी और ओठों पर मुसकान लिये वह अपने रूप से जगत् को आलोकित कर रहा है।"

(२)

अछूतों की समस्या – अस्पृश्य जाति की हरिनाम से शुद्धि

हरिभक्ति होने पर फिर जाति का विचार नही रहता। श्रीरामकृष्ण मणि मल्लिक से कह रहे हैं, "तुम तुलसीदास की वह बात कहो तो।"

मणि मल्लिक – चातक की प्यास से छाती फटी जाती है – गंगा, यमुना, सरयू आदि कितनी नदियाँ और तालाब है, परन्तु वह कोई भी जल नही पीता, केवल स्वाति नक्षत्र की वर्षा के जल के लिए ही मुँह खोले रहता है!

श्रीरामकृष्ण – अर्थात् उनके चरणकमलों में भक्ति ही सार है शेष सब मिथ्या।

मणि मल्लिक – तुलसीदास की एक और बात – स्पर्शमणि से लगते ही, अष्टधातु सोना बन जाती है। उसी प्रकार सभी जातियाँ – चमार, चाण्डाल तक हरिनाम लेने पर शुद्ध हो जाती है। और वैसे तो 'बिना हरिनाम चार जात चमार!'

श्रीरामकृष्ण – जिस चमड़े की खाल छूनी भी नहीं चाहिए, उसी को पका लेने के बाद फिर देवमन्दिर में भी ले जाते हैं!

"ईश्वर के नाम से मनुष्य पवित्र होता है। इसीलिए नामसंकीर्तन का अभ्यास करना चाहिए। मैंने यदु मल्लिक की माँ से कहा था, 'जब मृत्यु आएगी, तब यही संसार की चिन्ता होगी। परिवार, लड़के-लड़कियों की चिन्ता, मृत्युपत्र की चिन्ता – यही सब चिन्ताएँ आएँगी; भगवान् की चिन्ता न आयगी। उपाय है उनके नाम का जप करना, नाम-कीर्तन का अभ्यास करना। यदि अभ्यास रहा, तो मृत्यु के समय में उन्ही का नाम मुँह में आयगा। बिल्ली के पकड़ने पर चिड़िया की 'च्याँ, च्याँ' बोली ही निकलेगी। उस समय वह 'राम राम' 'हरे कृष्ण' न बोलेगी।'

"मृत्युसमय के लिए तैयार होना अच्छा है। अन्तिम दिनों में निर्जन में जाकर केवल ईश्वर का चिन्तन तथा उनका नाम जपना। हाथी को नहलाकर यदि हाथीखाने में ले जाया जाए तो फिर वह अपनी देह में मिट्टी–कीचड़ नहीं लगा सकता।"

बलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणी पाल ये अब वृद्ध हो गए हैं; क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनके कल्याण के लिए ये सब उपदेश दे रहे हैं?

श्रीरामकृष्ण फिर भक्तों को सम्बोधित करके बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – एकान्त में उनका चिन्तन और नामस्मरण करने के लिए क्यों कहता हूँ? संसार में रातदिन रहने पर अशान्ति होती है। देखो न, एक गज जमीन के लिए भाई

भाई में मारकाट होती है।

"सिक्खों का कहना है कि जमीन, स्त्री और धन – इन्ही तीनों के लिए इतनी गड़बड़ तथा अशान्ति होती है।

"तुम लोग संसार में हो तो इसमें भय क्या है? राम ने जब संसार छोड़ने की बात कही, तो दशरथ चिन्तित होकर वशिष्ठ की शरण में गए। वशिष्ठ ने राम से कहा, 'राम, तुम क्यों संसार को छोड़ोगे? मेरे साथ विचार करो, क्या संसार ईश्वर से अलग है? क्या छोड़ोगे और क्या ग्रहण करोगे? उनके अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वे ईश्वर, माया, जीव, जगत् सभी रूप में प्रकट हो रहे हैं।' "

बलराम के पिता – बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण – साधना के समय यह संसार धोखे की टट्टी है, फिर ज्ञान प्राप्त करने के बाद, उनके दर्शन के बाद, वही संसार – 'आनन्द की कुटिया' है।

अवतार-पुरुष में ईश्वर का दर्शन। अवतार चैतन्यदेव

"वैष्णव-ग्रन्थ में कहा है, 'विश्वास से कृष्ण मिलते हैं, वे तर्क से बहुत दूर हैं।' केवल विश्वास!

"कृष्णकिशोर का क्या ही विश्वास है! वृन्दानव में कुएँ से एक नीच जाति के पुरुष ने जल निकाला; कृष्णकिशोर ने उससे कहा, 'तू बोल शिव;' उसके शिवनाम लेते ही उसने जल पी लिया। वह कहता था, 'ईश्वर का नाम लिया है, फिर भी धन आदि खर्च करके प्रायश्चित्त करना होगा? कैसी विड़म्बना है!'

"कृष्णकिशोर यह देखकर आश्चर्यचकित हो गया कि लोग अपने शारीरिक रोगों से छुटकारा पाने के लिए भगवान् को तुलसीदल चढ़ा रहे हैं।

"साधुदर्शन की बात पर हलधारी ने कहा था, 'और क्या देखने जाऊँ – पंचभूतों का पिंजरा!' कृष्णकिशोर ने क्रुद्ध होकर कहा, 'ऐसी बात हलधारी ने कही है!' क्या वह नहीं जानता कि साधुओं की देह चिन्मय होती है!'

"कालीबाड़ी के घाट पर हमसे कहा था, 'तुम लोग आशीर्वाद दो कि राम राम कहते मेरे दिन कट जाएँ!'

"मैं कृष्णकिशोर के मकान पर जब जाता था, तब मुझे देखते ही वह नाचने लगता था!"

"श्रीरामचन्द्र ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, जहाँ पर ऊर्जित भक्ति देखोगे, जानो कि वहीं पर मैं हूँ।'

"जैसे चैतन्यदेव; प्रेम से हँसते है, रोते है, नाचते हैं, गाते हैं। चैतन्यदेव अवतार है – उनके रूप में ईश्वर अवतीर्ण हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "भावनिधि श्रीगौरांग का भाव तो होगा ही रे' वे भावविभोर होकर हँसते है, रोते है, नाचते है, गाते है' सिसक-सिसककर रोते है।"

(३)

चित्तशुद्धि के बाद ईश्वरदर्शन

बलराम के पिता, मणि मल्लिक, वेणी पाल आदि बिदा ले रहे है।

सायंकाल के बाद कंसारीपाड़ा की हरिसभा के भक्तगण आए है। उनके साथ श्रीरामकृष्ण मतवाले हाथी की तरह नृत्य कर रहे है। नृत्य के बाद भावविभोर होकर कह रहे है, "मै कुछ दूर अपने आप ही जाऊँगा।"

किशोरी भावावस्था मे चरणसेवा करने जा रहे है। श्रीरामकृष्ण ने किसी को छूने नही दिया।

सन्ध्या के बाद ईशान आए है। श्रीरामकृष्ण बैठे हैं – भावविभोर। थोड़ी देर बाद ईशान के साथ बात कर रहे है, ईशान की इच्छा है, गायत्री का पुरश्चरण करेगे।

श्रीरामकृष्ण (ईशान के प्रति) – तुम्हारे मन मे जो है, वैसा ही करो, मन मे और सन्देह तो नही रहा?

ईशान – मैने एक प्रकार प्रायश्चित्त की तरह संकल्प किया था।

श्रीरामकृष्ण – इस पथ मे (तन्त्रमाग मे) क्या यह नही होता? जो ब्रह्म है, वही शक्ति काली है। 'काली ही ब्रह्म है यह मर्म जानकर मैने धर्माधर्म सब छोड़ दिया है।'

ईशान – चण्डी-स्तोत्र मे है, ब्रह्म ही आद्याशक्ति है। ब्रह्म और शक्ति अभिन्न है।

श्रीरामकृष्ण – यह मुँह से कहने से ही नही होगा। जब धारणा होगी तब ठीक होगा।

"साधना के बाद चित्तशुद्धि होने पर यथार्थ ज्ञान होगा कि वे ही कर्ता है। वे ही मन-प्राण-बुद्धिरूप है। मै केवल यन्त्ररूप हूँ' 'तुम कीचड़ मे हाथी को फँसा देते हो, लंगड़े से पहाड़ लँघवाते हो!'

"चित्तशुद्धि होने पर समझ मे आएगा, पुरश्चरण आदि कर्म वे ही करवाते है। 'उनका काम वे ही करते है; लोग कहते है, मै करता हूँ।'

"उनके दर्शन होने पर सभी सन्देह मिट जाते है। उस समय अनुकूल हवा बहती है। अनुकूल हवा बहने पर जिस प्रकार नाव का माँझी पाल उठाकर पतवार पकड़कर बैठा रहता है और तम्बाकू पीता है, उसी प्रकार भक्त निश्चिन्त हो जाता है।"

ईशान के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ एकान्त में बात कर रहे हैं; पूछ रहे हैं, "नरेन्द्र, राखाल, अधर, हाजरा, ये लोग तुम्हें कैसे लगते हैं, सरल हैं या नहीं? और मैं तुम्हें कैसा लगता हूँ?" मास्टर कह रहे हैं, "आप सरल हैं, फिर गम्भीर भी! आपको समझना बहुत कठिन है!" श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।

□□□

परिच्छेद ५८

सिंदुरियापाटी में ब्राह्मभक्तों के प्रति उपदेश

(१)

समाधि में

कार्तिक की कृष्णा एकादशी है, सोमवार, २६ नवम्बर १८८३ ई.। श्री मणिलाल मल्लिक के मकान मे सिन्दूरिया-पट्टी ब्राह्मसमाज का अधिवेशन हुआ करता है। मकान चितपुर रास्ते पर है। समाज का अधिवेशन राजपथ के पास ही दुमॅजले के सभागृह मे हुआ करता है। आज समाज की वार्षिकी है, इसीलिए मणिलाल महोत्सव मना रहे है।

उपासनागृह आज आनन्दपूर्ण है, बाहर और भीतर हरे हरे पल्लवो, नाना प्रकार के फूलो और पुष्पमालाओ से सुशोभित हो रहा है। कमरे मे भक्तगण बैठे हुए उपासना कब शुरू होगी इसकी प्रतीक्षा कर रहे है। कमरे के भीतर सब को जगह नही मिल पायी है, कई लोग पश्चिम ओरवाले छत पर टहल रहे है या जगह जगह पर रखी सुन्दर कुर्सियो पर बैठे है। बीच बीच मे गृहस्वामी तथा उनके स्वजन आकर मधुर शब्दो से अभ्यागत भक्तो का स्वागत कर रहे है। शाम के पहले से ही ब्राह्मभक्तगण आने लगे है। उन्हे आज एक विशेष उत्साह है - वहॉ आज श्रीरामकृष्णदेव का शुभागमन होगा। केशव विजय, शिवनाथ आदि ब्राह्मसाज के भक्त नेताओ को श्रीरामकृष्णदेव बहुत प्यार करते थे। यही कारण है कि ब्राह्मभक्तां के वे इतने प्यारे हो गए थे। वे भगवत्प्रेम मे मस्त रहते है, उनका प्रेम, उनका प्रांजल विश्वास, ईश्वर के साथ बालक की तरह उनकी बातचीत, ईश्वर के लिए उनका व्याकुल होकर रोना, माता मानकर स्त्री-जाति की पूजा, उनका विषयप्रसंग-वर्जन, तैलधारावत् सदा ही ईश्वर-प्रसंग करते रहना, उनका सर्वधर्म-समन्वय और अन्य धर्मो के प्रति लेशमात्र भी द्वेषभाव का न रहना, भगवद्भक्ता के लिए उनका रोना, इन सब कारणो से ब्राह्मभक्तो का चित्त उनकी ओर आकर्षित हो चुका था, इसीलिए आज कितने ही भक्त बहुत दूर से उनके दर्शन के लिए आए हुए है।

शिवनाथ और सत्यभाषण

उपासना के पूर्व श्रीरामकृष्ण विजयकृष्ण गोस्वामी और दूसरे ब्राह्मभक्तो के साथ

प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। समाजगृह में दीप जल चुका है, अब शीघ्र ही उपासना शुरू होगी।

श्रीरामकृष्ण बोले, "क्योंजी, क्या शिवनाथ न आएगा?" एक ब्राह्मभक्त ने कहा, "जी नहीं, आज उनको कई काम हैं आ न सकेंगे।"

श्रीरामकृष्ण – शिवनाथ को देखने से मुझे बड़ा आनन्द होता है। मानो भक्तिरस में डूबा हुआ है। और जिसे बहुत लोग मानते-जानते हैं उसमें ईश्वर की कुछ शक्ति अवश्य रहती है। परन्तु शिवनाथ में एक बहुत बड़ा दोष है – उसकी बात का कोई निश्चय नहीं रहता। मुझसे उसने कहा था, एक बार वहाँ (दक्षिणेश्वर) जाएँगे, परन्तु फिर नहीं आया और न कोई खबर ही भेजी; यह अच्छा नहीं है। एक यह भी कहा है कि सत्य बोलना कलिकाल की तपस्या है। दृढ़ता के साथ सत्य को पकड़े रहने से ईश्वरलाभ होता है। सत्य की दृढ़ता के न रहने से क्रमश: सब नष्ट हो जाता है। यही सोचकर मैं अगर कभी कह डालता हूँ, मुझे शौच को जाना है, फिर शौच को जाने की आवश्यकता न भी रहे, तो भी एक बार गड़वा लेकर झाऊतल्ले की ओर जाता हूँ। यही भय लगा रहता है कि कहीं सत्य की दृढ़ता न खो जाए। इस अवस्था के बाद हाथ में फूल लेकर माँ से मैंने कहा था, 'माँ, यह लो तुम अपना ज्ञान, यह लो अपना अज्ञान, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ; यह लो अपना भला, यह लो अपना बुरा, मुझे शुद्धा भक्ति दो माँ; यह लो अपना पुण्य, यह लो अपना पाप, मुझे शुद्धा भक्ति दो।' जब यह सब मैंने कहा था, तब यह बात नहीं कह सका कि माँ, यह लो अपना सत्य, यह लो अपना असत्य। माँ को सब कुछ तो दे सका, परन्तु सत्य न दे सका।

ब्राह्मसमाज की पद्धति के अनुसार उपासना होने लगी। आचार्यजी वेदी पर बैठ गए। उद्बोधन-मन्त्र के बाद आचार्यजी परब्रह्म को लक्ष्य करके वेदोक्त महामन्त्रों का उच्चारण करने लगे। ब्राह्मभक्तगण स्वर मिलाकर प्राचीन आर्यऋषियों के मुख से निकले हुए, उनकी पवित्र रसनाओं द्वारा उच्चारित नामों का कीर्तन करने लगे; कहने लगे – "सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म, आनन्दरूपममृतं यद्विभाति, शान्तम् शिवमद्वैतम् शुद्धम-पापविद्धम्।" प्रणवसंयुक्त यह ध्वनि भक्तों के हृदयाकाश में प्रतिध्वनित होने लगी। अनेकों के अन्तस्तल में वासना का निर्वाण-सा हो गया। चित्त बहुत-कुछ स्थिर और ध्यानोन्मुख होने लगा। सब की आँखें मुँदी हुई हैं – थोड़ी देर के लिए सब कोई वेदोक्त सगुण ब्रह्म का चिन्तन करने लगे।

श्रीरामकृष्णदेव भावमग्न हैं। नि:स्पन्द, स्थिरदृष्टि, निर्वाक्, चित्रपुत्तलिका की तरह बैठे हुए हैं। आत्मापक्षी न जाने कहाँ आनन्दपूर्वक विहार कर रहा है, शरीर शून्य मन्दिर-सा पड़ा हुआ है।

समाधि के कुछ समय बाद श्रीरामकृष्णदेव आँखें खोलकर चारों ओर देख रहे हैं।

देखा, सभा के सभी मनुष्य आँखे बन्द किए हुए है। तब श्रीरामकृष्णदेव 'ब्रह्म' 'ब्रह्म' कहकर एकाएक खड़े हो गए। उपासना के बाद ब्राह्मभक्त-मण्डली मृदंग और करताल लेकर संकीर्तन करने लगी। प्रेम और आनंद मे मग्न होकर श्रीरामकृष्ण भी उनके साथ मिल गए और नृत्य करने लगे। सब लोग मुग्ध होकर वह नृत्य देख रहे है। विजय और दूसरे भक्त भी उन्हे घेरकर नाच रहे है। कितने लोग तो यह दृश्य देखकर ही कीर्तन का आनन्द लेते हुए संसार को भूल गए – नामामृत पीकर थोड़ी देर के लिए विषय का आनन्द भूल गए – विषयसुख का स्वाद कटु जान पड़ने लगा।

कीर्तन हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण क्या कहते है, यह सुनने के लिए सब लोग उन्हे घेरकर बैठे।

(२)

गृहस्थों के प्रति उपदेश

ब्राह्मभक्त-मण्डली को सम्बोधित करके श्रीरामकृष्ण ने कहा – "निर्लिप्त होकर संसार मे रहना कठिन है। प्रताप ने कहा था, 'महाराज, हमारा वह मत है जो राजर्षि जनक का था, जनक निर्लिप्त होकर संसार मे रहते थे, वैसा ही हम लोग भी करेगे।' मैने कहा, 'सोचने ही से क्या कोई जनक हो सकता है? राजर्षि जनक को कितनी तपस्या करने के बाद ज्ञानलाभ हुआ था! नतमस्तक और ऊर्ध्वपद होकर उग्र तपस्या मे कितना काल व्यतीत करने के बाद वे संसार मे लौटे थे!'

"परन्तु क्या संसारियो के लिए उपाय नही है? – हॉ, अवश्य है। कुछ दिन एकान्त मे साधना करनी पड़ती है, तब भक्ति हाती है, तब ज्ञान होता है, इसके बाद जाकर संसार मे रहो, फिर कोई दोष नही। जब निर्जन मे साधना करोगे, उस समय संसार से बिलकुल अलग रहो, तब स्त्री, पुत्र, कन्या, माता, पिता, भाई, बहन, आत्मीय, कुटुम्ब कोई भी पास न रहे, निर्जन मे साधना करते समय सोचो, हमारे कोई नही है, ईश्वर ही हमारे सर्वस्व है। और रो-रोकर उनके पास ज्ञान और भक्ति की प्रार्थना करो।

"यदि कहो, कितने दिन संसार छोड़कर निर्जन मे रहे? तो इसके लिए यदि एक दिन भी इस तरह रह सको तो वह अच्छा, तीन दिन रहो तो और अच्छा है, अथवा बारह दिन, महीनेभर तीन महीने, सालभर – जो जितने दिन रह सके। ज्ञान-भक्ति प्राप्त करके ससार मे रहने से फिर अधिक भय नही रहता।

"हाथो मे तेल लगाकर कटहल काटने से फिर हाथो मे उसका दूध नही चिपकता। छुई-छुऔवल खेलो तो पार छू लेने से फिर डर नही रहता। एक बार पारस पत्थर को छूकर सोना बन जाओ, फिर हजार वर्ष तक मिट्टी के नीचे गड़े रहने पर भी जब मिट्टी से निकाले जाओगे, तो सोना का सोना ही रहोगे।

"मन दूध की तरह है। उस मन को अगर संसाररूपी जल में रखो तो दूध पानी से मिल जायगा; इसीलिए दूध को निर्जन में दही बनाकर उससे मक्खन निकाला जाता है। जब निर्जन में साधना करके मनरूपी दूध से ज्ञानभक्ति-रूपी मक्खन निकाला गया, तब वह मक्खन अनायास ही संसार-रूपी पानी में रखा जा सकता है। वह मक्खन कभी संसार-रूपी जल से मिल नही सकता – संसार जल पर निर्लिप्त होकर उतराता रहता है।"

(३)

श्रीयुत विजयकृष्ण गोस्वामी की निर्जन में साधना

श्रीयुत विजय अभी अभी गया से लौटे है। वहाँ बहुत दिनों तक निर्जन मे रहकर वे साधुओ से मिलते रहे थे। इस समय उन्होने भगवा धारण कर लिया है। उनकी अवस्था बड़ी ही सुन्दर है, जान पड़ता है, सदा ही अन्तर्मुख रहते है। श्रीरामकृष्णदेव के पास सिर झुकाए हुए है, जैसे मग्न होकर कुछ सोचते हों।

विजय को देखते ही श्रीरामकृष्णदेव ने कहा, "विजय, क्या तुमने घर ढूँढ लिया?

"देखो, दो साधु विचरण करते हुए एक शहर मे आ पहुँचे। आश्चर्यचकित होकर उनमे से एक शहर, बाजार, दूकानें और इमारते देख रहा था, इसी समय दूसरे से उसकी भेट हो गयी। तब दूसरे साधु ने कहा, 'तुम दंग होकर शहर देख रहे हो; तुम्हारा डेरा-डण्डा कहाँ है?' पहले साधु ने कहा, 'मै पहले घर की खोज करके, डेरा-डण्डा रख, ताला लगाकर, निश्चिन्त होकर निकला हूँ, अब शहर का रंग-ढंग देख रहा हूँ।' इसीलिए तुमसे मै पूछ रहा हूँ, क्या तुमने घर ढूँढ़ लिया? (मास्टर आदि मे) देखो, इतने दिनो तक विजय का फौआरा दबा हुआ था, अब खुल गया है।

निष्काम कर्म। संन्यासी के लिए वासनात्याग

(विजय से) – "देखो, शिवनाथ बड़ी उलझन मे है। अखबार मे लिखना पड़ता है, और भी बहुतसे काम उसे करने पड़ते हैं। विषयकर्म ही से अशान्ति होती है, कितनी चिन्ताएँ आ इकट्ठी होती हैं।

"श्रीमद्भागवत में है, अवधूत ने चौबीस गुरुओ मे चील को भी एक गुरू बनाया था। एक जगह धीवर मछली मार रहे थे, एक चील झपटकर एक मछली ले गयी, परन्तु मछली को देखकर करीब एक हजार कौए उसके पीछे लग गए, और साथ ही काँव-काँव करके बड़ा हल्ला मचाना शुरू कर दिया। मछली को लेकर चील जिस तरफ जाती, कौए भी उसके पीछे पीछे उसी तरफ जाते। चील दक्षिण की ओर गयी, तब कौए भी उसी ओर गये। जब वह उत्तर की तरफ गयी, तब वे भी उसी ओर गये। इसी तरह पूर्व और पश्चिम

की ओर भी चील चक्कर काटने लगी। अन्त में, घबराहट के मारे उसके चक्कर लगाते हुए मछली उससे छूटकर जमीन पर गीर पड़ी। तब वे कौए चील को छोड़ मछली की ओर उड़े। चील तब निश्चिन्त होकर एक पेड़ की ड़ाल पर जा बैठी। बैठी हुयी सोचने लगी, 'कुल बखेड़े की जड़ यही मछली थी; अब वह मेरे पास नहीं है इसीलिए मैं निश्चिन्त हूँ।'

"अवधूत ने चील से यह शिक्षा प्राप्त की कि जब तक मछली साथ रहेगी अर्थात् वासना रहेगी, तब तक कर्म भी रहेगा, और कर्म के कारण चिन्ता और अशान्ति भी रहेगी। वासना का त्याग होने से ही कर्मों का क्षय हो जाता है और शान्ति मिलती है।

"परन्तु निष्काम कर्म अच्छा है। उससे अशान्ति नहीं होती। पर निष्काम कर्म करना बड़ा कठिन है। मनुष्य सोचता है कि मैं निष्काम कर्म कर रहा हूँ परन्तु कहाँ से कामना निकल पड़ती है, यह समझ में नहीं आता। यदि पहले की साधना अधिक हो तो उसके बल से कोई कोई निष्काम कर्म कर सकते हैं। ईश्वरदर्शन के बाद निष्काम कर्म अनायास ही किए जा सकते है। ईश्वरदर्शन के बाद प्राय: कर्म छूट जाते हैं। दो-एक मनुष्य (नारदादि) लोकशिक्षा के लिए कर्म करते हैं।

संन्यासी को संचय न करना चाहिए। प्रेम के फलस्वरूप कर्मत्याग

"अवधूत की एक आचार्या और थी – मधुमक्खी। मधुमक्खी बड़े परिश्रम से कितने ही दिनों मे मधु-संचय करती है, परन्तु उस मधु का भोग वह स्वयं नहीं कर पाती। छत्ता कोई दूसरा ही आकर तोड़ ले जाता है। मधुमक्खी से अवधूत को यह शिक्षा मिली कि संचय न करना चाहिए। साधु-सन्तों को सोलहो आने ईश्वर पर अवलम्बित रहना चाहिए। उन्हे संचय न करना चाहिए।

"यह संसारियों के लिए नही है। संसारी को संसार का भरणपोषण करना पड़ता है। इसीलिए उन्हें संचय की आवश्यकता होती है। पक्षी और सन्त संचयी नहीं होते, परन्तु चिड़ियाँ बच्चे देने पर संचय करती हैं - चोंच में दबाकर बच्चे के लिए खाना ले आती हैं।

"देखो विजय, साधु के साथ अगर बोरिया-बधना रहे – कपड़े की पन्द्रह गिरहवाली गठरी रहे, तो उस पर विश्वास न करना। मैंने बटतल्ले में ऐसे साधु देखे थे। दो-तीन बैठे हुए थे, कोई दाल के कंकड़ चुन रहा था, कोई कपड़ा सी रहा था और कोई बड़े आदमी के घर के भण्डारे की गप्प लड़ा रहा था, 'अरे उस बाबू ने लाखों रुपये खर्च किए, साधुओं को खूब खिलाया – पूड़ी, जलेबी, पेड़ा, बरफी, मालपुआ, बहुतसी चीजें तैयार करायीं'।" (सब हँसते हैं।)

विजय – जी हाँ, गया में इस तरह के साधु मुझे भी देखने को मिले हैं। गया के साधु लोटावाले होते हैं। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति) – ईश्वर पर जब प्रेम हो जाता है तब कर्म आप ही आप छूट जाते हैं। ईश्वर जिनसे कर्म कराते हैं, वे करते रहें। अब तुम्हारा समय हो गया है; अब सब छोड़कर तुम कहो, 'मन! तू देख और मैं देखूँ, कोई दूसरा न देखे'।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण उस अतुलनीय कण्ठ से माधुरी बरसाते हुए गाने लगे –

(भावार्थ) – "आदरणीय श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में धारण करो। मन! तू देख और मैं देखूँ; कोई दूसरा न देखने पाए। कामादि को धोखा देकर, मन! आ, निर्जन में उसे देखें, साथ रसना को भी रखेंगे ताकि वह 'माँ माँ' कहकर पुकारती रहे! कुमन्त्रणाएँ देनेवाली जितनी कुरुचियाँ हैं उन्हें पास भी न फटकने देना। ज्ञाननयन को पहरेदार रखो, वह सतर्क रहे।"

श्रीरामकृष्ण (विजय के प्रति) भगवान् की शरण में जाकर अब लज्जा, भय, यह सब छोडो। मैं अगर भगवत्कीर्तन में नाचूँ तो लोग मुझे क्या कहेंगे, यह सब भाव छोड़ो।

"लज्जा, घृणा और भय, इन तीनों में किसी के रहते ईश्वर नहीं मिलते। लज्जा, घृणा, भय, जाति-अभिमान, गुप्त रखने की इच्छा, ये सब पाश हैं। इन सब के चले जाने से जीव की मुक्ति होती है।

"पाशों में जो बँधा हुआ है वह जीव है और उनसे जो मुक्त है वह शिव है। भगवत्प्रेम दुर्लभ वस्तु है। पहले-पहल, पति के प्रति पत्नी की जैसी निष्ठा होती है वैसी ही यदि ईश्वर के प्रति हो तो ही भक्ति होती है। शुद्धा भक्ति का होना बड़ा कठिन है। भक्ति द्वारा मन और प्राण ईश्वर में लय हो जाते हैं।

"इसके बाद भाव होता है। भाव में मनुष्य निर्वाक् हो जाता है। वायु स्थिर हो जाती है। कुम्भक आप ही आप होता है। जैसे बन्दूक दागते समय गोली चलानेवाला मनुष्य निर्वाक् हो जाता है और उसकी वायु स्थिर हो जाती है।

"प्रेम का होना बड़ी दूर की बात है। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। ईश्वर पर जब प्रेम होता है, तब बाहर की चीजें भूल जाती हैं। संसार भूल जाता है। अपना शरीर जो इतना प्यारा है, वह भी भूल जाता है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्णदेव फिर गाने लगे –

(भावार्थ) – "नहीं मालूम, कब वह दिन होगा जब हरिनाम कहते हुए मेरी आँखों से धारा बह चलेगी, संसार-वासना दूर हो जाएगी, शरीर पुलकित हो जाएगा!"

(४)

भाव, कुम्भक तथा ईश्वरदर्शन

ऐसी बातचीत हो रही है, ठीक इस समय कुछ और निमन्त्रित ब्राह्मभक्त आकर उपस्थित हुए। उनमें कुछ तो पण्डित थे और कुछ उच्चपदाधिकारी राजकर्मचारी। उनमें

एक श्री रजनीनाथ राय भी थे।

श्रीरामकृष्ण कहते है, "भाव के होने पर वायु स्थिर हो जाती है। अर्जुन ने जब लक्ष्यभेद किया, तब उनकी दृष्टि मछली की ऑख पर ही थी – किसी दूसरी ओर नही। यहॉ तक कि ऑख के सिवाय कोई दूसरा अंग उन्हे दीख ही नही पडा। ऐसी अवस्था मे वायु स्थिर होती है, कुम्भक होता है।

"ईश्वरदर्शन का एक लक्षण यह है कि भीतर से महावायु घरघराती हुई सिर की ओर जाती है, तब समाधि होती है, भगवान् के दर्शन होते है।

कोरा पाण्डित्य मिथ्या है। ऐश्वर्य, वैभव, मान, पद सब मिथ्या है।

"जो पण्डित मात्र है किन्तु ईश्वर पर जिनकी भक्ति नही है उनकी बाते उलझनदार होती है। सामाध्यायी नाम के एक पण्डित ने कहा था, 'ईश्वर नीरस है, तुम लोग अपनी भक्ति और प्रेम के द्वारा उसे सरस कर लो।' जिन्हे वेदो ने 'रसस्वरूप' कहा है, उन्हे नीरस बतलाता है। इससे ज्ञात होता है कि वह मनुष्य नही जानता ईश्वर कौनसी वस्तु है, इसीलिए उसकी बाते इतनी उलझनदार हैं।

' एक ने कहा था, मेरे मामा के यहॉ घोड़ो की एक बडी गोशाला है! उसकी इस बात से समझना चाहिए कि घोड़ा एक भी नही है, क्योकि घोडे कभी गोशाला मे नही रहते। (सब हॅसते है।)

"किसी को ऐश्वर्य का – वैभव, सम्मान, पद आदि का – अहंकार होता है। यह सब दो दिन के लिए है। साथ कुछ भी न जाएगा। एक गीत में है –

(गीत का आशय) – 'ए मन सोच ले, कोई किसी का नही है। तू इस संसार मे वृथा ही मारा मारा फिरता है। मायाजाल मे फॅसकर दक्षिणाकाली को भूल न जाना। जिसके लिए तू इतना सोचता है, क्या वह तेरे साथ भी जाएगा? तेरी वही प्रेयसी, जब तू मर जाएगा तब तेरी लाश से अमंगल की शंका करके घर मे पानी का छिड़काव करगी। यह सोचना कि मुझे लोग मालिक जो कहते है, वह सिर्फ दो ही दिन के लिए है। जब कालाकाल के मालिक आ जाते है तब पहले के वही मालिक श्मशानघाट मे फेक दिये जाते है।'

"और धन का अहंकार भी न करना चाहिए। अगर कहो, मै धनी हूँ। तो धनी भी एक-एक से बढ़कर है। सन्ध्या के बाद जब जुगनू उड़ता है, तब वह सोचता है, इस संसार को प्रकाश मै दे रहा हूँ। परन्तु तारे ज्यो ही उगते है कि उसका अहंकार चला जाता है। तब तारे सोचने लगे, हमी लोग संसार को प्रकाश देते है। कुछ देर बाद चन्द्रोदय हुआ। नब तारे लज्जा से म्लान हो गये। चन्द्रदेव सोचने लगे। मेरे ही आलोक से संसार हॅस रहा है, संसार को प्रकाश मै देता हूँ। देखते ही देखते सूर्य उगे, चन्द्र मलिन होकर ऐसे छिपे

कि फिर दीख भी न पड़े।

"धनी मनुष्य अगर यह सब सोचे तो धन का अहंकार न हो।"

उत्सव के कारण मणिलाल ने खान-पान का बहुत बड़ा आयोजन किया था। उन्होंने यत्नपूर्वक श्रीरामकृष्ण और समवेत भक्तमण्डली को भोजन कराया। जब सब लोग घर लौटे, तब रात बहुत हो गयी थी, परन्तु किसी को कोई कष्ट नहीं हुआ।

□□□

परिच्छेद ५९

केशव सेन के मकान पर

(१)

कमल-कुटीर के सामने - पश्यति तव पन्थानम्

कार्तिक की कृष्णा चतुर्दशी, २८ नवम्बर १८८३, दिन बुधवार है। आज एक भक्त* कमल-कुटीर (Lily Cottage) के पूर्ववाले रास्ते पर टहल रहे हैं; जैसे व्याकुल हो किसी की प्रतीक्षा कर रहे हो।

कमल-कुटीर के उत्तर की तरफ मंगलबाड़ी है। वहाँ बहुतसे ब्राह्मभक्त रहते हैं। कमल-कुटीर में केशव रहते हैं। उनकी पीड़ा बढ़ गयी है। कितने ही लोग कहते हैं, अब की बार शायद वे न बचेंगे।

श्रीरामकृष्ण केशव को बहुत प्यार करते है, आज इन्हें देखने के लिए आनेवाले हैं। वे दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर से आ रहे है। इसीलिए भक्तलोग उनकी बाट जोह रहे हैं।

कमल-कुटीर सर्क्यूलर रोड के पश्चिम ओर है। इसीलिए भक्त महोदय रास्ते में ही टहल रहे हैं। वे दो बजे दिन से प्रतीक्षा कर रहे है। कितने ही लोग जाते हैं, वे उन्हें देख भर लेते हैं।

रास्ते के पूर्व ओर विक्टोरिया कालेज है। यहाँ केशव के समाज की बहुतसी ब्राह्म महिलाएँ ओर उनकी कन्याएँ पढ़ती है। रास्ते से कालेज का बहुतसा भाग दिखायी पड़ता है। कालेज के उत्तर की ओर एक बड़ा उद्यानगृह है, उसमें कोई अंग्रेज सज्जन रहते हैं। भक्त महोदय बड़ी देर से देख रहे हैं कि उनके यहाँ कोई विपत्ति आयी है। थोड़ी देर बाद काले कपड़े पहने कोचवान मृतदेह ले जानेवाली गाड़ी ले आए। करीब डेढ़-दो घण्टों से यह सब तैयारी चल रही है।

यह मर्त्यधाम छोड़कर कोई चला गया है इसीलिए यह तैयारी हो रही थी। भक्त सोच रहे हैं – कहाँ? देह को त्यागकर मनुष्य कहाँ जाता है?

उत्तर से दक्षिण की और कितनी ही गाड़ियाँ आ रही हैं। भक्त एक एक बार देख

---

* ग्रन्थकार स्वयं

रहे हैं – वे आ रहे हैं या नहीं।

शाम हो आयी, पाँच बज गए। इसी समय श्रीरामकृष्ण की गाड़ी भी आ पहुँची। साथ लाटू तथा दो-एक भक्त और भी है। राखाल भी आये हैं।

केशव के घर के आदमी आकर श्रीरामकृष्ण को अपने साथ ऊपर ले गए। बैठकखाने के दक्षिण ओरवाले बरामदे में एक पलंग रखा हुआ था। उसी पर श्रीरामकृष्ण को उन्होंने बैठाया।

(२)

समाधिस्थ श्रीरामकृष्ण। जगन्माता के साथ वार्तालाप

श्रीरामकृष्ण बड़ी देर से बैठे हुए हैं। आप केशव को देखने के लिए अधीर हो रहे हैं। केशव के शिष्यगण विनीत भाव से कह रहे हैं कि वे अभी थोड़ा विश्राम कर रहे हैं, थोड़ी ही देर में आनेवाले हैं।

केशव की पीड़ा इतनी बढ़ी हुई है कि दशा संकटापन्न हो रही है। इसीलिए उनकी शिष्यमण्डली और घरवाले इतनी सावधानी से काम कर रहे हैं। परन्तु श्रीरामकृष्ण केशव को देखने के लिए उत्तरोत्तर अधीर हो रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (केशव के शिष्यों से) – क्यों जी, उनके आने की क्या आवश्यकता है? मै ही क्यों न भीतर चला जाऊँ?

प्रसन्न (विनयपूर्वक) – अब वे थोड़ी ही देर मे आते हैं।

श्रीरामकृष्ण – जाओ, तुम्ही लोग ऐसा कर रहे हो। मैं भीतर जाता हूँ।

प्रसन्न – श्रीरामकृष्ण को बातों मे बहलाने के इरादे से केशव की बाते कह रहे है।

प्रसन्न – उनकी अवस्था एक दूसरे ही प्रकार की हो गयी है। आपकी ही तरह माँ के साथ बातचीत करते हैं। माँ जो कुछ कहती हैं, उसे सुनकर कभी हंसते हैं और कभी रोते हैं।

केशव जगन्माता के साथ बातचीत करते हैं, हँसते हैं, रोते हैं, यह सुनते ही श्रीरामकृष्ण भावावेश में आ गए। देखते ही देखते समाधिस्थ हो गये।

श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हैं। जाड़े का समय है, हरी बनात का कुर्ता पहने हुए हैं। ऊपर से एक शाल डाले हुए हैं। उन्नत देह, दृष्टि स्थिर हो रही है। बिलकुल ही मग्न हैं। बड़ी देर तक यह अवस्था रही। समाधि छूटती ही नहीं।

सन्ध्या हो आयी। श्रीरामकृष्ण कुछ प्रकृतिस्थ हुए। पास के बैठकखाने में दीप जलाया जा चुका है। श्रीरामकृष्ण को उसी कमरे में बिठाने की चेष्टा की जा रही है।

बड़ी कठिनाई से लोग उन्हें बैठकखाने के कमरे में ले गए।

कमरे में बहुतसी चीजें हैं – कोच, टेबिल, कुर्सी, गैसबत्ती आदि। श्रीरामकृष्ण को

लोगो ने एक कोच पर ले जाकर बैठाया।

कोच पर बैठते ही श्रीरामकृष्ण फिर बाह्यज्ञान-रहित भावाविष्ट हो गये।

कोच पर दृष्टि डालकर आवेश मे मानो कुछ कह रहे है, – "पहले इन सब चीजो की आवश्यकता थी, अब क्या आवश्यकता है?" (राखाल को देखकर) "राखाल, तू भी आया है?"

जगन्माता के साथ वार्तालाप

कहते ही कहते फिर न जाने क्या देख रहे है। कहते है – "यह लो, माँ आ गयी। और अब बनारसी साड़ी पहनकर क्या दिखलाती हो! माँ, गोलमाल न करो, बैठो – बैठो भी।"

श्रीरामकृष्ण पर महाभाव का नशा चढा हुआ है। कमरे मे प्रकाश भर रहा है। ब्राह्मभक्त चारो ओर से घेरे हुए है। लाटू, राखाल, मास्टर आदि पास बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण भावावस्था मे आप ही आप कह रहे है –

"देह और आत्मा। देह बनी है और बिगड़ भी जाएगी आत्मा अमर है। जैसे सुपारी – पकी सुपारी छिलके मे अलग रहती है, कच्ची अवस्था मे फल और छिलके को अलग अलग करना बड़ा कठिन है। उनके दर्शन करने पर, उन्हे प्राप्त करने पर देहबुद्धि दूर हो जाती है। तब समझ मे आ जाता है कि आत्मा पृथक् है और देह भी।"

केशव कमरे मे आ रहे है। पूर्व ओर के द्वार से आ रहे है। जिन लोगो ने उन्हे ब्राह्मसमाज-मन्दिर मे अथवा टाउन-हाल मे देखा था, वे उनकी अस्थि- चर्मावशिष्ट मूर्ति देखकर चकित हो गए। केशव खड़े नही हो सकते, दीवार के सहारे आगे बढ़ रहे है। बहुत कष्ट करके कोच के सामने आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण इतने ही मे कोच से उतरकर नीचे बैठे। केशव श्रीरामकृष्ण के दर्शन पाकर भूमिष्ठ हो बड़ी देर तक उन्हे प्रणाम करते रहे। प्रणाम करके उठकर बैठ गए. श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश मे है। आप ही आप कुछ कह रहे है। श्रीरामकृष्ण माता के साथ बातचीत कर रहे है।

(३)

ब्रह्म और शक्ति अभेद। नरलीला। सिद्ध और साधक में भेद

अब केशव ने उच्च स्वर से कहा, "मै आया – मै आया।" यह कहकर उन्होने श्रीरामकृष्ण का बायाँ हाथ पकड़ लिया और उसी हाथ पर अपना हाथ फेरने लगे। श्रीरामकृष्ण भावावेश मे पूरे मतवाले हो गये है, आप ही आप कितनी ही बाते कर रहे है। भक्तगण निर्वाक् होकर सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – जब तक उपाधि है, तभी तक अनेक का बोध हो सकता है, जैसे केशव, प्रसन्न, अमृत – ये सब। पूर्ण ज्ञान होने पर एकमात्र चैतन्य का ही बोध होता है।

"पूर्ण ज्ञान होने पर मनुष्य देखता है, वही एकमात्र चैतन्य यह जीव-प्रपंच, ये चौबीसो तत्त्व बने है।

"परन्तु शक्ति की विशेषता पायी जाती है। यह सच है कि सब कुछ वे ही बने है, परन्तु कही तो उनकी शक्ति का प्रकाश अधिक है और कही कम।

"विद्यासागर ने कहा था, क्या ईश्वर ने किसी को अधिक शक्ति और किसी को कम शक्ति दी है मैने कहा, अगर ऐसा न होता तो एक आदमी पचास आदमियो को हराता कैसे – और तुम्हे ही फिर क्यो हम लोग देखने आते?

"वे जिस आधार मे अपनी लीला का विकास दिखलाते है, वहाँ शक्ति की विशेषता रहती है।

"जमीदार सब जगह पर रहते है। परन्तु उन्हे लोग किसी खास बैठकखाने मे अक्सर बैठते हुए देखते है। ईश्वर का बैठकखाना भक्तो का हृदय है। वहाँ अपनी लीला दिखाना उन्हे अधिक पसन्द है। वहाँ उनकी विशेष शक्ति अवतीर्ण होती है।

"इसका लक्षण क्या है? जहाँ कार्य की अधिकता है वहां शक्ति का विशेष प्रकाश है।

"यह आद्याशक्ति और परब्रह्म दोनो अभेद है। एक को छोड़ दूसरे का चिन्तन नही किया जा सकता। जैसे ज्योति और मणि। मणि को छोड़ मणि की ज्योति के बारे मे सोचा नही जा सकता और न ज्योति को अलग करके मणि के बारे मे ही सोचा जा सकता है। जैसे सर्प और उसकी वक्रगति। न सर्प को छोड उसकी तिर्यग्-गनि सोची जा सकती है और न तिर्यग्-गति को छोड़ सर्प को।

सिद्ध और साधक मे भेद

"आद्याशक्ति ने ही इस जीव-प्रपंच, इस चतुर्विंशति तत्त्व का स्वरूप धारण किया है – अनुलोम और विलोम। राखाल, नरेन्द्र तथा और और लड़को के लिए क्यो मै इतना सोच विचार किया करता हूँ? हाजरा ने कहा, तुम उन लोगो के लिए इतना सोचते क्यो हो, ईश्वर-चिन्तन फिर कब करोगे (केशव तथा दूसरो का मुसकराना)

"तब मुझे बड़ी चिन्ता हुई। मैने कहा, माँ यह क्या हुआ! हाजरा कहता है, उन लोगो के लिए क्यो सोचते रहते हो? फिर मैने भोलानाथ से पूछा। उसने कहा, इसका उदाहरण महाभारत मे है। समाधिस्थ मनुष्य समाधि से उतरकर ठहरे कहाँ? वह इसीलिये सतोगुणी मनुष्यो को लेकर रहता है। महाभारत का यह उदाहरण जब मिला तब जी मे जी आया। (सब हँसते है।)

"हाजरा का दोष नहीं है। साधक अ ग्स्था में सम्पूर्ण मन 'नेत्ति' 'नेति' करके उन्हें दे देना पड़ता है। सिद्ध-अवस्था की बात दूसरी है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर अनुलोम और विलोम एक से प्रतीत होते हैं। मट्ठा अल ग करने पर जब मक्खन मिलता है तब जान पड़ता है कि मट्ठे का ही मक्खन है और मक्खन का ही मट्ठा। तब ठीक ठीक समझ में आता है कि सब कुछ वे ही हुए हैं। कहीं उनका अधिक प्रकाश है, कहीं कम।

"भावसमुद्र उमड़ने पर स्थल में भी एक बाँस पानी हो जाता है। पहले नदी से होकर समुद्र में जाते समय बहुत-कुछ चक्कर लगाकर जाना पड़ता है, ओर जब बाढ़ आती है तब सूखी जमीन पर भी एक बाँस पानी हो जाता है। तब नाव सीधे चलाकर लोग जगह पर पहुँच जाते हैं। फिर चक्कर मारकर नहीं जाना पड़ता। इसी तरह धान कट जाने पर मेंड़ से चक्कर काटकर नहीं आना पड़ता। सीधे एक रास्ते से निकल जाओ।

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर सभी वस्तुओं में उनके दर्शन होते हैं। मनुष्य के भीतर उनका अधिक प्रकाश है। मनुष्यों में सतोगुणी भक्तों में उनका और अधिक प्रकाश रहता है – जिनमें कामिनी और कांचन के भोग की बिलकुल ही इच्छा नहीं रहती। (सब स्तब्ध हैं।) समाधिस्थ मनुष्य जब उतरता है तब भला वह कहाँ ठहरे? – किस पर अपना मन रमाये? कामिनी और कांचन का त्याग करनेवाले सतोगुणी शुद्ध भक्तों की आवश्यकता उन्हें इसीलिए होती है। नहीं तो फिर वे क्या लेकर रहे?

"जो ब्रह्म हैं, वे ही आद्याशक्ति भी हैं। जब वे निष्क्रिय हैं, तब उन्हें ब्रह्म कहते हैं, पुरुष कहते हैं। जब सृष्टि, स्थिति, प्रलय ये सब करते हैं, तब उन्हें शक्ति कहते हैं, प्रकृति कहते हैं। पुरुष और प्रकृति। जो पुरुष हैं, वे ही प्रकृति भी हैं। आनन्दमय और आनन्दमयी।

"जिसे पुरुष-ज्ञान है, उसे स्त्री-ज्ञान भी है। जिसे पिता का बोध है, उसे माता का भी बोध है। (केशव हँसते हैं।)

"जिसे अँधेरे का ज्ञान है, उसे उजाले का भी ज्ञान है। जिसे रात का ज्ञान है, उसे दिन का भी ज्ञान है। जिसे सुख का ज्ञान है, उसे दु:ख का भी। यह बात समझे"?

केशव (सहास्य) – जी हाँ, समझा।

श्रीरामकृष्ण – माँ! कौनसी माँ! जगत् की माँ - जिन्होने जगत् की सृष्टि की; जो उसका पालन कर रही हैं; जो अपनी सन्तानों की सदा रक्षा करती हैं; और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष – जो जो कुछ चाहता है, उसे वही देती हैं। जो उनकी यथार्थ सन्तान है, वह उन्हें छोड़कर नहीं रह सकती। उसकी माता ही सब कुछ जानती हैं। वह तो बस खाता है, खेलता है, और घूमता है। इसके सिवाय वह और कुछ नहीं जानता।

केशव – जी हाँ।

(४)

ब्राह्मसमाज और ईश्वर का ऐश्वर्य-वर्णन। त्रिगुणातीत भक्त

वार्तालाप करते हुए श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हो गए है। केशव के साथ हॅसते हुए बातचीत कर रहे है। कमरे भर के लोग एकाग्र चित्त से उनकी सब बाते सुनते और उन्हे देखते है। सभी निर्वाक् हैं कि 'तुम कैसे हो' आदि व्यावहारिक बाते तो होती ही नही, केवल भगवत्-प्रसंग छिड़ा हुआ है।

श्रीरामकृष्ण (केशव से) – ब्राह्मभक्त इतनी महिमा क्यो गाया करते है? 'हे ईश्वर, तुमने चन्द्र की सृष्टि की, सूर्य को पैदा किया, नक्षत्र बनाए' – इन सब बातो की क्या आवश्यकता है? बहुतसे लोग बगीचे की ही प्रशंसा करते है, पर मालिक से कितने लोग मिलना चाहते है? बगीचा बडा है या मालिक?

"शराब पी चुकने पर कलाल की दूकान मे कितने मन शराब है, इसकी जॉच-पडताल से हमारा क्या काम? हमारा तो मतलब एक ही बोतल से निकल जाता है।

"नरेन्द्र को देखकर मैने कभी नही पूछा, तेरे पिता का क्या नाम है? तेरे पिता की कितनी कोठियॉ है?

"कारण जानते हो? मनुष्य स्वयं ऐश्वर्य का आदर करता है, इसलिए वह समझता है कि ईश्वर भी उसका आदर करते है। सोचता है, उनके ऐश्वर्य की प्रशंसा करने पर वे प्रसन्न होगे। शम्भु ने कहा था, 'अब तो इस समय यही आशीर्वाद दीजिये जिससे यह ऐश्वर्य उनके पादपद्मो मे अर्पित करके मरूँ।' मैने कहा, 'यह तुम्हारे लिए ही ऐश्वर्य है, उन्हे तुम क्या दे सकते हो। उनके लिए यह सब काठ और मिट्टी के बराबर है।'

"जब विष्णुघर के कुल गहने चुरा लिए गए तब मै और मथुरबाबू, दोनो श्रीठाकुरजी को देखने के लिए गए। मथुरबाबू ने कहा, 'चलो महाराज, तुममे कोई शक्ति नही है। तुम्हारी देह से कुल गहने निकाल लिये गये और तुम कुछ न कर सके!' मैने उससे कहा, 'यह तुम्हारी कैसी बात है। तुम जिसके सामने गहने गहने चिल्लाते हो, उनके लिए ये सब मिट्टी के ढेले है। लक्ष्मी जिनकी शक्ति है, क्या वे तुम्हारे चोरी गए इन कुछ रुपयो के लिए परेशान होगे! ऐसी बात नही कहनी चाहिए।'

"क्या ईश्वर ऐश्वर्य के भी वश है? वे तो भक्ति के वश है। जानते हो, वे क्या चाहते है? वे रुपया नही चाहते – भाव, प्रेम, भक्ति, विवेक, वैराग्य यह सब चाहते है।

"जिसका जैसा भाव होता है, वह ईश्वर को वैसा ही देखता है। जो तमोगुणी भक्त है, वह देखता है कि माँ बकरा खाती है वह बकरे की बलि भी देता है। रजोगुणी भक्त नाना प्रकार के व्यंजन और अन्न-पकवान चढ़ाता है। सतोगुणी भक्त की पूजा मे आडम्बर

नहीं होता। उसकी पूजा लोग समझ भी नही पाते। फूल नही मिलते तो वह बिल्वपत्र और गंगाजल से ही पूजा कर लेता है। थोड़ेसे चावलों या दो बताशो का ही भोग लगा देता है। कभी कभी खीर पकाकर ही ठाकुरजी को निवेदित कर देता है।

"एक और है – त्रिगुणातील भक्त। उसका स्वभाव बालकों जैसा होता है। ईश्वर का नाम लेना ही उसकी पूजा है। वह बस उनका नाम ही जपता रहता है।"

(५)

केशव के साथ वार्तालाप। ईश्वर के अस्पताल में आत्मा की रोगचिकित्सा

श्रीरामकृष्ण (केशव के प्रति सहास्य) – तुम्हें बीमारी हुई इसका अर्थ है। शरीर के भीतर कितने ही भावों का उदयास्त हो चुका है; इसीलिए ऐसा हुआ है। जब भाव होता है तब कुछ समझ में नही आता, बहुत दिनों के बाद शरीर पर झोंका लगता हैं। मैंने देखा है, बड़ा जहाज जब गंगा से चला जाता है, तब कुछ भी मालूम नहीं होता, परन्तु थोड़ी ही देर बाद देखा कि किनारो पर लहरे जोरों से थपेड़े जमा रही हैं, और पानी में उथल-पुथल मच जाती है। कभी कभी तो किनारों का कुछ अंश भी धँसकर पानी में गिर जाता है।

"किसी कुटिया में घुसकर हाथी उसे हिला-डुलाकर तहस-नहस कर देता है। भावरूपी हाथी जब देहरूपी कमरे में घुसता है, तो उसे डाँवाडोल कर देता है।

"इससे क्या होता है, जानते हो? आग लगने पर कुछ चीजों को वह जलाकर खाक कर देती है; एक महा ऊधम मचा देती है। ज्ञानाग्नि पहले काम, क्रोध आदि रिपुओं को जलाती है, फिर अहंबुद्धि को। इसके बाद एक बहुत बड़ी उथल-पुथल मचा देती है।

"तुम सोचते हो कि बस, सब मामला तय है। परन्तु जब तक रोग की कुछ कसर रहेगी, तब तक वे तुम्हें नही छोड़ सकते। अगर तुम अस्पताल में नाम लिखाओं तो फिर तुम्हें चले आने का अधिकार नही है। जब तक रोग में कोई त्रुटि पायी जाएगी, तब तक डाक्टर साहब तुम्हें आने नहीं देगे। तुमने नाम क्यो लिखाया?" (सब हँसते हैं।)

केशव अस्पताल की बात सुनकर बार बार हँस रहे हैं। हँसी रोक नहीं सकते; रह-रहकर फिर हँसे रहे हैं। श्रीरामकृष्ण पुन: वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (केशव से) – हृदू कहता था, न तो मैने ऐसा भाव देखा है, और न ऐसा रोग! उस समय मैं बहुत बीमार था। क्षण क्षण में दस्त होते थे और बहुत अधिक मात्रा में। सिर पर जान पड़ता था दो लाख चींटियाँ काट रहीं हैं। परन्तु ईश्वरीय प्रसंग दिनरात जारी रहता था! नाटागढ़ का राम कविराज देखने के लिए आया। उसने देखा कि मैं बैठा हुआ विचार कर रहा हूँ। तब उसने कहा, 'क्या यह पागल है? दो हाड़ लेकर विचार कर रहा है!'

(केशव से) – 'उसकी इच्छा। माँ, सब तुम्हारी ही इच्छा है।'

" 'ऐ तारा, तुम इच्छामयी हो, सब तुम्हारी ही इच्छा है। माँ, कर्म तुम्हारे हैं, करती भी तुम्हीं हो, परन्तु मनुष्य कहते हैं, मैं करता हूँ।'

"सर्दी लगाने के उद्देश्य से माली बसरा-गुलाब को छाँटकर उसकी जड़ खोल देता है। सर्दी लगने से पेड़ अच्छी तरह उगता है। शायद इसीलिए वह तुम्हारी जड़ खोल रही है। (श्रीरामकृष्ण और केशव हँसते है।) जान पड़ता है, अगली बार एक बड़ी घटना होनेवाली है।

"जब कभी तुम बीमार पड़ जाते हो तब मुझे बड़ी घबराहट होती है। पहली बार भी जब तुम बीमार पड़े थे, तब रात के पिछिले पहर मैं रोया करता था। कहता था, माँ, केशव को अगर कुछ हो गया तो फिर किससे बातचीत करूँगा! तब कलकत्ता आने पर मैने सिद्धेश्वरी को नारियल और चीनी चढ़ायी थी। माँ के पास मनौती मानी थी जिससे बीमारी अच्छी हो जाए।"

केशव पर श्रीरामकृष्ण के इस अकृत्रिम स्नेह और उनके लिए उनकी व्याकुलता की बात को लोग निर्वाक् होकर सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु इस बार उतना नही हुआ। मै सच कहूँगा। हाँ, दो-तीन दिन कुछ थोड़ा कलेजा मसोसा करता था।

केशव जिस पूर्ववाले द्वार से बैठकखाने मे आए थे उसी द्वार के पास केशव की पूजनीय माता खड़ी है। वही से उमानाथ जरा ऊँचे स्वर मे श्रीरामकृष्ण से कह रहे है, "माँ आपको प्रणाम कर रही है।"

श्रीरामकृष्ण हँसने लगे। उमानाथ कहते है, "माँ कह रही है, ऐसा आशीर्वाद दीजिए जिससे केशव की बीमारी अच्छी हो जाय।" श्रीरामकृष्ण ने कहा, "माँ आनन्दमयी को पुकारो, दु:ख वही दूर कर सकती है।" श्रीरामकृष्ण केशव से कहने लगे –

"घर के भीतर इतना न रहा करो। पुत्र-कन्याओ के बीच मे रहने से और डूबोगे, ईश्वरीय चर्चा होने पर और अच्छे रहोगे।"

गम्भीर भाव से ये बातें कहकर श्रीरामकृष्ण फिर बालक की तरह हँसने लगे। केशव से कह रहे हैं, "देखूँ, तुम्हारा हाथ देखूँ।" बालक की तरह हाथ लेकर मानो तौल रहे हैं। अन्त में कहने लगे, "नहीं, तुम्हारा हाथ हलका है, खलों का हाथ भारी होता हैं।" (लोग हँसते हैं।)

उमानाथ दरवाजे से फिर कहने लगे, "माँ कह रही हैं – केशव को आशीर्वाद दीजिए।"

श्रीरामकृष्ण (गम्भीर स्वरों में) – मेरी क्या शक्ति है! वे ही आशीर्वाद देंगी। 'माँ, अपना काम तुम करती हो, लोग कहते हैं, मैं कर रहा हूँ।'

"ईश्वर दो बार हँसते हैं। एक बार उस समय हँसते है जब दो भाई जमीन बाँटते हैं, और रस्सी से नापकर कहते हैं, 'इस ओर की मेरी है और उस ओर की तुम्हारी।' ईश्वर यह सोचकर हँसते हैं कि संसार तो है मेरा और ये लोग थोड़ीसी मिट्टी लेकर इस ओर की मेरी, उस ओर की तुम्हारी कर रहे हैं।

"फिर ईश्वर एक बार और हँसते है। बच्चे की बीमारी बढ़ी हुई है। उसकी माँ रो रही है। वैद्य आकर कह रहा है, 'डरने की क्या बात है, माँ! मै अच्छा कर दूँगा।' वैद्य नही जानता कि ईश्वर यदि मारना चाहे तो किसकी शक्ति है जो अच्छा कर सके?" (सब स्तब्ध हो रहे)

ठीक इसी समय केशव बड़ी देर तक खाँसते रहे। वह खाँसी रुकती ही न थी। खाँसने की आवाज से सब को कष्ट हो रहा है। बड़ी देर तक बहुत कुछ कष्ट झेलते रहने के बाद खाँसी कुछ बन्द हुई। केशव मे अब और नही रहा जाता। श्रीरामकृष्ण को उन्होने भूमिष्ट हो प्रणाम किया। प्रणाम करके बड़े कष्ट से दीवार टेक-टेककर उसी द्वार से अपने कमरे मे फिर चले गये।

(६)

ब्राह्मसमाज और वेदोल्लिखित देवता। गुरुपन नीच बुद्धि

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके जाएंगे। केशव के बड़े लडके उनके पास आकर बैठे।

अमृत ने कहा, "यह केशव का बडा लड़का है। आप आशीर्वाद दीजिये। यह क्या! सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दीजिए।'

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "मुझे आशीर्वाद न देना चाहिए।" यह कहकर मुसकराते हुए बच्चे की देह पर हाथ फेरने लगे।

अमृत (हँसते हुए) – अच्छा, तो देह पर हाथ फेरिये। (सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण अमृत आदि ब्राह्मभक्तो से केशव की बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (अमृत आदि से) – बीमारी अच्छी हो – ये सब बातें मै नहीं कह सकता। यह शक्ति मै माँ से चाहता भी नही। मैं माँ से यही कहता हूँ, माँ, मुझे शुद्ध भक्ति दो।

'ये (केशव) क्या कुछ कम आदमी है? जो लोग रुपये चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं और साधु भी। दयानन्द को देखा, वे बगीचे में ठहरे हुए थे। 'केशव सेन – केशव सेन' कहकर छटपटा रहे थे कि कब केशव आए। उस दिन शायद केशव के वहाँ आने की बात थी।

"दयानन्द बंगला भाषा को कहते थे – 'गौड़ाण्ड भाषा।'

"ये (केशव) शायद होम और देवता नहीं मानते थे। इसीलिए वे कहते थे, 'ईश्वर ने इतनी चीजें तो तैयार की, और देवता नहीं तैयार कर सके?' "

श्रीरामकृष्ण केशव के शिष्यों से केशव की प्रशंसा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – केशव ही हीनबुद्धि नही है। इन्होने बहुतो से कहा है, 'जो कुछ सन्देह हो, वहाँ * जाकर पूछ लो।' मेरा भी यही स्वभाव है। मैं कहता हूँ, ये कोटि गुण और बढ़े। मै मान लेकर क्या करूँगा?

"ये बड़े आदमी हैं। जो लोग धन चाहते हैं, वे भी इन्हें मानते हैं ओर साधु भी मानते है।"

श्रीरामकृष्ण कुछ मिष्टान्न ग्रहण करके अब गाड़ी पर चढ़नेवाले हैं। ब्राह्मभक्त उन्हे चढ़ाने के लिए जा रहे हैं।

जीने से उतरते समय श्रीरामकृष्ण ने देखा, नीचे उजाला नही है। तब अमृत आदि भक्तों से उन्होंने कहा, "इन सब स्थानों मे अच्छा प्रकाश चाहिए, नही तो गरीबी आ घेरती है। ऐसा अब फिर कभी न हो।"

श्रीरामकृष्ण एक-दो भक्तो को साथ लेकर उसी रात को कालीमन्दिर की ओर चल पड़े।

(७)

जयगोपाल सेन के घर में शुभागमन।

केशव को देखकर दक्षिणेश्वर लौटते समय रात में सात बजे के बाद श्रीरामकृष्ण माथाघसागली में श्रीजयगोपाल के घर पर आए।

भक्तगण न जाने क्या विचार कर रहे है। वे सोच रहे हैं, 'श्रीरामकृष्ण दिनरात ईश्वरप्रेम मे मस्त रहते हैं। विवाह तो किया है, परन्तु धर्मपत्नी से सांसारिक कोई सम्बन्ध नही रखते; बल्कि उन पर भक्ति रखते है, उनकी पूजा करते है, उनके साथ केवल ईश्वरीय प्रसंग किया करते हैं; सदा भगवद्गीत गाते, परमात्मा की पूजा करते तथा ध्यान करते हैं; किसी से कोई मायिक सम्बन्ध रखते ही नहीं। उनके लिए ईश्वर ही यथार्थ वस्तु हैं और शेष सब असार पदार्थ। रुपया, धातुद्रव्य, लोटा, कटोरा यह कुछ छू भी नहीं सकते। स्त्रियों को भी नहीं छू सकते। अगर कभी छू लेते हैं तो जहाँ छू जाता है वहाँ सींगी मछली के काँटे के चुभ जाने के समान पीड़ा होने लगती है। रुपया या सोना अगर हाथ पर रख दिया जाता है तो कलाई मुरक जाती है, अवस्था विकृत हो जाती है, साँस रुक जाती है।

* श्रीरामकृष्ण के पास

जब वह धातु हटा ली जाती है, तब वे अपनी सच्ची अवस्था को प्राप्त होते हैं – तब उनकी साँस फिर चलने लगती है।'

भक्तगण कितनी ही बातों का विचार कर रहे हैं 'क्या संसार छोड़ देना होगा? पढ़ाई-लिखाई करने की जब अब क्या आवश्यकता है? यदि विवाह ही न किया जाय तो फिर नौकरी क्यों करनी पड़ेगी? क्या माता-पिता को छोड़ देना होगा? मैंने तो विवाह कर लिया है, मेरे सन्तान भी हो चुकी है; मुझे तो परिवार का पालन-पोषण करना होगा; मेरा क्या हाल होगा? मेरी भी इच्छा होती है कि म दिनरात ईश्वर के प्रेम मैं मग्न रहूँ! श्रीरामकृष्ण को देख मुझे लगता है कि मैं क्या कर रहा हूँ! ये तो दिनरात तेल की धार के सदृश निरन्तर ईश्वरचिन्तन कर रहे हैं, और मैं दिनरात विषयचिन्ता करता हुआ घूम रहा हूँ। एकमात्र इनके दर्शन ही मेघ से घिरे हुए आकाश में बीच बीच में चमक जानेवाली विद्युत्-ज्योति के समान हैं। अब इस जीवन समस्या को कैसे सुलझाया जाय?

'इन्होंने तो स्वयं कर दिखाया! फिर अब भी सन्देह क्यों?

' क्या संसार सचमुच बालू की भीत की तरह क्षणभंगुर है? मैं इसे छोड़ क्यों नहीं पा रहा हूँ? शायद मुझमे शक्ति कम है। यदि ईश्वर पर वैसा तीव्र प्रेम हो जाय तो फिर कोई हिसाब नहीं रह जाता। जब गंगा में बाढ़ आकर पानी वेग से बहने लगता है तब कौन रोक सकता है? जिस प्रेम का उदय होने के कारण श्रीगौरांग कौपीन धारण कर संन्यासी बन गये, जिस प्रेम के कारण ईसा मसीह अन्य सब चिन्ताएँ भूलकर वनवासी हुए शरीर छोड़ दिया, जिस प्रेम के कारण राजवैभव त्यागकर बुद्धदेव वैरागी बने उस प्रेम का एक बिन्दु भी यदि प्राप्त हो जाय तो यह अनित्य संसार कहाँ पड़ा रह जाय!

'अच्छा, जो दुर्बल हैं, जिनमें प्रेम उदित नहीं हुआ, जो संसारी जीव हैं, जिनके पैर माया की जंजीर से बँधे हुए हैं, उनका क्या उपाय हो? जो हो, मैं इन प्रेममय वैरागी महापुरुष का संग न छोड़ूँगा। देखूँ, ये क्या कहते हैं।'

भक्तगण इसी प्रकार की कल्पनाएँ कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण जयगोपाल के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं, सामने जयगोपाल उनके आत्मीय तथा पड़ोसी आदि हैं। एक पड़ोसी वार्तालाप करने के लिए पहले ही से तैयार थे। वही अग्रणी होकर कुछ पूछने लगे। जयगोपाल के भाई वैकुण्ठ भी हैं।

गृहस्थाश्रम तथा श्रीरामकृष्ण

वैकुण्ठ – हम संसारी मनुष्य हैं, हमारे लिए कुछ कहिए।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर को जानकर. एक हाथ उनके पैरों पर रखकर दूसरे हाथ से संसार का काम करो।

वैकुण्ठ – महाराज, संसार क्या मिथ्या है?

श्रीरामकृष्ण – जब तक उनका ज्ञान नहीं होता, तब तक मिथ्या है। तब मनुष्य उन्हें भूलकर 'मेरा मेरा' कहता रहता है – माया में फँसकर, कामिनी-कांचन में मुग्ध होकर और भी डूब जाता है। माया में मनुष्य ऐसा अज्ञानी हो जाता है कि भागने का रास्ता रहने पर भी नहीं भाग सकता। एक गाना है –

(भावार्थ) – " 'महामाया की कैसी विचित्र माया है! कैसे भ्रम में उन्होंने डाल रखा है! उनकी माया में ब्रह्मा और विष्णु भी अचेत हो रहे हैं, तो जीव बेचारा भला क्या जान सकता है? मछली जाल में पकड़ी जाती है, परन्तु आने-जाने की राह रहने पर भी वह उससे भाग नहीं सकती। रेशम के कीड़े रेशम की गोटियाँ बनाते हैं; वे चाहें तो उसे काटकर उससे निकल सकते हैं, परन्तु महामाया के प्रभाव से वे इस तरह बद्ध हैं कि अपनी बनायी हुई गोटियों में ही अपनी जान दे देते हैं।'

"तुम लोग तो स्वयं भी देख रहे हो कि संसार अनित्य है। देखो न, कितने आदमी आए और गए। कितने पैदा हुए और कितनों ने देह छोड़ी। संसार अभी अभी तो है और थोड़ी ही देर में नहीं! अनित्य! जिन्हें लेकर इतना 'मेरा' 'मेरा' कर रहे हो, आँखें बन्द करते ही कहीं कुछ नहीं है। है कोई नहीं, फिर भी नाती की बाँह पकड़े बैठे हैं – उसके लिए वाराणसी नहीं जा सकते! कहते है – मेरे लाल का क्या होगा? आने जाने की राह है, फिर भी मछली भाग नहीं सकती। रेशम के कीड़े अपनी बनायी गोटियों में ही अपनी जान दे देते हैं। इस प्रकार का संसार मिथ्या है, अनित्य है।"

पड़ोसी – महाराज, एक हाथ ईश्वर में और दूसरा संसार में क्यों रखें? अगर संसार अनित्य है, तो एक हाथ भी संसार में क्यों रखें?

श्रीरामकृष्ण – उन्हें जानकर संसार में रहने से संसार अनित्य नहीं रह जाता। एक गाना सुनो।

(गीत का मर्म) – "ऐ मन, तू खेती का काम नहीं जानता। ऐसी मनुष्यदेहरूपी जमीन पड़ी ही रह गयी! अगर तू काश्तकारी करता तो इसमें सोना फल सकता था। पहले तू उसमें कालीनाम का घेरा लगा दे, इस तरह फसल नष्ट न हो सकेगी। वह मुक्तकेशी का बड़ा ही दृढ़ घेरा है, उसके पास यम की भी हिम्मत नहीं जो कदम बढ़ा सके। आज या शताब्दी भर के बाद यह जमीन बेदखल हो जाएगी, क्या यह तू नहीं जानता? अतएव अब तू लगन लगाकर उसे जोतकर फसल क्यों नहीं तैयार कर लेता? गुरुप्रदत्त बीज डालकर भक्तिवारि से खेत सींचता जा। अगर तू अकेला यह काम न कर सके तो 'रामप्रसाद' को भी अपने साथ ले ले।"

गृहस्थाश्रम में ईश्वरलाभ। उपाय

श्रीरामकृष्ण – गाना सुना? 'कालीनाम का घेरा लगा दो, इससे फसल नष्ट न होगी।' ईश्वर की शरण में जाओ, सब कुछ पाओगे। 'वह मुक्तकेशी माँ का बड़ा ही मजबूत घेरा है, उसके अन्दर यमराज पैर नहीं बढ़ा सकते।' बड़ा ही मजबूत घेरा है। उन्हें अगर प्राप्त कर सको तो फिर संसार असार न प्रतीत होगा। जिसने उन्हें जान लिया है, वह देखता है, जीव-जगत् सब वही बने हैं! बच्चों को खिलाओ तो यह जानकर कि गोपाल को खिला रहे हो। पिता और माता को ईश्वर और जगन्माता देखो और उनकी सेवा करो। उन्हें जानकर संसार में रहने से ब्याही हुई स्त्री से फिर सांसारिक सम्बन्ध नहीं रह जाता। दोनो ही भक्त हो जाते हैं, केवल ईश्वरीय बातचीत करते हैं, ईश्वरीय प्रसंग लेकर रहते हैं, तथा भक्तों की सेवा करते है। सर्वभूतों में वे हैं, अतएव दोनों उन्हीं की सेवा करते हैं।

पड़ोसी – महाराज, ऐसे स्त्री-पुरुष दीख क्यों नहीं पड़ते?

श्रीरामकृष्ण – दीख पड़ते हैं, परन्तु बहुत कम। विषयी मनुष्य उन्हें पहचान नहीं पाते। परन्तु ऐसा तभी होता है, जब दोनों ही भले हों। जब दोनों ही ईश्वरप्रेम-प्राप्त हों तभी ऐसा हो सकता है। इसके लिए परमात्मा की विशेष कृपा चाहिए। नही तो सदा ही अनमेल रहता है! एक को अलग हो जाना पड़ता है। अगर मेल न हुआ तो बड़ा कष्ट होता है। स्त्री दिनरात कोसती रहती है, 'बाबूजी ने क्यों यहाँ मेरा विवाह किया? न मुझे ही कुछ खाने को मिला, न बच्चों को ही; न मुझे ही कुछ पहनने को मिला, न बच्चो को ही मैं कुछ पहना सकी। एक गहना भी तो नहीं है! तुमने मुझे क्या सुख में रखा है! आँखें मूँदकर ईश्वर ईश्वर कर रहे हैं। यह सब पागलपन छोड़ो।'

भक्त – ये सब बाधाएँ तो हैं ही, ऊपर से कभी कभी यह भी होता है कि लड़के कहना ही नहीं मानते। इस पर और भी कितनी ही आपदाएँ हैं। महाराज, तो फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – संसार में रहकर साधना करना बड़ा कठिन है। बड़ी बाधाएँ है। ये सब तुम्हें बतलाने की जरूरत नहीं है – रोग, शोक, दारिद्र, उम्र पर पत्नी से अनबन, लड़के आवारा, मूर्ख और गँवार।

"परन्तु उपाय है। कभी कभी एकान्त में जाकर उनसे प्रार्थना करनी पड़ती है, उन्हें पाने के लिए चेष्टा करनी पड़ती है।"

पड़ोसी – घर से निकल जाना होगा?

श्रीरामकृष्ण – एकदम नहीं। जब अवकाश हो तब निर्जन में जाकर एक-दो दिन रहो – परन्तु संसार से कोई सम्बन्ध न रहे, किसी विषयी मनुष्य के साथ किसी सांसारिक

विषय की चर्चा न करनी पड़े। या तो निर्जन में रहो या सत्संग करो।

पड़ोसी – सत्संग के लिए साधु-महात्मा की पहचान कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण – जिनका मन, जिनका जीवन, जिनकी अन्तरात्मा ईश्वर में लीन हो गयी है, वही महात्मा हैं। जिन्होंने कामिनी और कांचन का त्याग कर दिया है, वही महात्मा हैं। जो महात्मा हैं, वे स्त्रियों को संसार की दृष्टि से नहीं देखते। यदि स्त्रियों के पास वे कभी जाते हैं तो उन्हें मातृवत् देखते हैं और उनकी पूजा करते हैं। साधु-महात्मा सदा ईश्वर का ही चिन्तन करते हैं। ईश्वरीय प्रसंग के सिवाय और कोई बात उनके मुँह से नहीं निकलती। और सर्वभूतों में ईश्वर का ही वास है यह जानकर वे सब की सेवा करते हैं। संक्षेप में यही साधुओं के लक्षण हैं।

पड़ोसी – क्या बराबर एकान्त में रहना होगा?

श्रीरामकृष्ण – फुटपाथ के पेड़ तुमने देखे हैं? जब तक वे पौधे रहते हैं तब तक चारों ओर से उन्हें घेर रखना पड़ता है। नहीं तो बकरे और चौपाये उन्हें चर जाते हैं। जब पेड़ मोटे हो जाते हैं तब उन्हें घेरने की जरूरत नहीं रहती। तब हाथी बाँध देने पर भी पेड़ नहीं टूट सकता। तैयार पेड़ अगर बना ले सको तो फिर क्या चिन्ता है – क्या भय है? विवेक लाभ करने की चेष्टा पहले करो। तेल लगाकर कटहल काटो, उससे दूध नहीं चिपक सकता।

पड़ोसी – विवेक किसे कहते है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर सत् है और सब असत् – इस विचार का नाम विवेक है। सत् का अर्थ नित्य, और असत् का अनित्य है। जिसे विवेक हो गया है वह जानता है, ईश्वर ही वस्तु है, और सब अवस्तु है। विवेक के उदय होने पर ईश्वर को जानने की इच्छा होती है। असत् को प्यार करने पर – जैसे देहसुख, लोकसम्मान, धन इन्हें प्यार करने पर – सत्स्वरूप ईश्वर को जानने की इच्छा नही होती। सत्-असत् विचार के आने पर ईश्वर की ढूँढ़-तलाश की ओर मन जाता है।

"सुनो यह एक गाना सुनो। –

(भावार्थ) – " 'मन आ घूमने चलें। काली-कल्पतरु के नीचे, ऐ मन, चारों फल तुझे पड़े हुए मिलेगे। प्रवृत्ति और निवृत्ति तेरी स्त्रियाँ हैं; उनमें से निवृत्ति को अपने साथ लेना। उसके आत्मज विवेक से तत्त्व की बातें पूछ लेना। शुचि-अशुचि को लेकर दिव्य घर में तू कब सोयेगा? उन दोनों सौतों में जब प्रीति होगी, तभी तू श्यामा माँ को पाएगा। तेरे पिता माता ये जो अहंकार और अविद्या हैं, इन्हें दूर कर देना। अगर कभी मोहगर्त में तू खिंचकर गिर जाय तो धैर्य का खूँटा पकड़े रहना। धर्माधर्मरूपी दोनों बकरों को एक तुच्छ खूँटे में बाँध रखना। अगर ये निषेध न मानें तो ज्ञान-खड्ग लेकर इनकी बलि दे देना। पहली पत्नी की सन्तान को दूर से समझा देना। अगर यह तेरे प्रबोध-वाक्यों पर

ध्यान न दे तो उसे ज्ञान-सिन्धु में डुबा देना। 'प्रसाद' कहता है, इस तरह का जब तू बन जाएगा, तभी तू काल के पास उत्तर दे सकेगा और ऐ प्यारे, तभी तू सच्चा मन बन सकेगा।'

"मन में निवृत्ति के आने पर विवेक होता है। विवेक के होने पर ही तत्त्व की बात हृदय में पैदा होती है। तभी कालीकल्पतरु के नीचे घूमने के लिए मन जाना चाहता है। उस पेड़ के नीचे जाने पर, ईश्वर के पास जाने पर, चारों फल – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष – पड़े हुए मिलेंगे, अनायास मिल जाएँगे। उन्हें पा जाने पर, धर्म, अर्थ, काम जो कुछ संसारियों को चाहिए, वह भी मिलता है – अगर कोई चाहे।

पड़ोसी – तो फिर संसार को माया क्यों कहते हैं?

विशिष्टाद्वैतवाद और श्रीरामकृष्ण।

श्रीरामकृष्ण – जब तक ईश्वर नहीं मिलते तब तक 'नेति' 'नेति' करके त्याग करना पड़ता है। उन्हें जिन लोगों ने पा लिया है, वे जानते हैं कि वे ही सब-कुछ हुए हैं। तब बोध हो जाता है – ईश्वर ही माया और जीव-जगत् हैं। जीव-जगत् भी वही हैं। अगर किसी बेल का खोपड़ा, गूदा और बीज अलग कर दिए जाए, और कोई कहे, देखो तो जरा बेल तौल में कितना था, तो क्या तुम खोपड़ा और बीज अलग करके सिर्फ गूदा तौल पर रखोगे या तौलते समय खोपड़ा और बीज भी साथ ले लोगे? एक साथ लेने पर ही तुम कह सकोगे, बेल तौल में कितना था। खोपड़ा मानो संसार है, और बीज मानो जीव। विचार के समय तुमने जीव और संसार को अनात्मा कहा था, अवस्तु कहा था। विचार करते समय गूदा ही सार, तथा खोपड़ा और बीज असार जान पड़े थे। विचार हो जाने पर, सब मिलकर एक जान पड़ता है। और यह प्रतीत होता है कि जिस सत्ता का गूदा है, उसी से बेल का खोपड़ा और बीज भी तैयार हुआ है। बेल को समझने चलो तो सब कुछ समझ मे आ जाता है।

"अनुलोम और विलोम। मट्ठे ही का मक्खन है और मक्खन ही का मट्ठा। अगर मट्ठा तैयार हो गया हो तो मक्खन भी हो गया है। यदि मक्खन हो गया हो तो मट्ठा भी हो गया है। आत्मा अगर रहे तो अनात्मा भी है।

"जिनकी नित्यता है, लीला भी उन्हीं की है। जिनकी लीला है, उन्हीं की नित्यता भी है। जो ईश्वर के रूप से प्रकट होते हैं, वही जीव-जगत् भी हुए है। जिसने जान लिया है, वह देखता है कि वही सब कुछ हुए हैं – बाप, माँ, बच्चा, पड़ोसी, जीव-जन्तु, भला-बुरा, शुद्ध-अशुद्ध सब कुछ।"

पापबोध

पड़ोसी – तो पाप-पुण्य नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – है भी और नहीं भी है। वे यदि अहंतत्व रख देते हैं तो भेदबुद्धि भी रख देते हैं, पाप-पुण्य का ज्ञान भी रख देते हैं। वे एक-दो मनुष्यों का अहंकार बिलकुल पोंछ डालते हैं – वे पाप-पुण्य, भले-बुरे के परे चले जाते हैं। ईश्वरदर्शन जब तक नहीं होता तब तक भेदबुद्धि और भले-बुरे का ज्ञान रहता ही है, तुम मुँह से कह सकते हो, 'हमारे लिए पाप और पुण्य बराबर हैं, वे जैसा कराते हैं वैसा ही करता हूँ', परन्तु हृदय से यही जानते हो कि यह सब एक कहावत मात्र है; बुरा काम करने से छाती धड़कने लगेगी। ईश्वरदर्शन के बाद भी अगर उनकी इच्छा होती है तो वे 'दास मैं ' रख देते हैं। उस अवस्था में भक्त कहता हैं, मैं दास हूँ, तुम प्रभु हो। ईश्वरीय प्रसंग, ईश्वरीय कर्म, ये सब उस भक्त को रुचिकर होते है; ईश्वर-विमुख मनुष्य उसे अच्छा नहीं लगता; उसको ईश्वरीय कर्मों के सिवा दूसरे कार्य नहीं सुहाते। इतने ही से बात सिद्ध हो जाती है कि ऐसे भक्तों में भी वे भेदबुद्धि रख छोड़ते हैं।

पड़ोसी – महाराज, आप कहते हैं ईश्वर को जानकर संसार करो। क्या उन्हें कोई जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण – उन्हें इन्द्रियों द्वारा अथवा इस मन के द्वारा कोई जान नहीं सकता। जिस मन में विषय-वासना नहीं उस शुद्ध मन के द्वारा ही मनुष्य उन्हें जान सकता है।

पड़ोसी – ईश्वर को कौन जान सकता है?

श्रीरामकृष्ण – ठीक-ठीक उन्हें कौन जान सकता है? हमारे लिए जितना जानने की जरूरत है, उतना होने ही से हो गया। हमें कुएँभर पानी की क्या जरूरत है? हमारे लिए तो लोटाभर पानी पर्याप्त है। एक चींटी चीनी के पहाड़ के पास गयी थी। सब पहाड़ लेकर भला क्या करेगी? उसके छकने के लिए तो दो-एक दाने ही बहुत हैं।

पड़ोसी – हमें जैसा विकार है, इससे लोटाभर पानी से क्या होता है? इच्छा होती है, ईश्वर को सोलहों आने समझ लें।

संसारविकार की दवा – 'मामेकं शरणं व्रज'

श्रीरामकृष्ण – यह ठीक है; परन्तु विकार की दवा भी तो है।

पड़ोसी – महाराज, वह कौनसी दवा है?

श्रीरामकृष्ण – साधुओं का संग, उनका नामगुण-कीर्तन, उनसे सर्वदा प्रार्थना करना। मैंने कहा था – माँ, मैं ज्ञान नहीं चाहता; यह लो अपना ज्ञान और यह लो अपना अज्ञान; माँ, मुझे अपने चरणकमलों में केवल शुद्धा भक्ति दो। मैं और कुछ नही चाहता।

"जैसा रोग होता है, उसकी दवा भी वैसी ही होती है। गीता में उन्होंने कहा है, 'हे अर्जुन, तुम मेरी शरण लो, तुम्हें मैं सब तरह के पापों से मुक्त कर दूँगा।' उनकी शरण में जाओ; वे सुबुद्धि देंगे, वे सब भार ले लेंगे। तब सब तरह के विकार दूर हट जाएंगे।

इस बुद्धि से क्या कोई उन्हें समझ सकता है? सेर भर के लोटे में क्या कभी चार सेर दूध रह सकता है? और बिना उनके समझाए क्या उन्हें कोई समझ सकता है? इसीलिए कहता हूँ उनकी शरण में जाओ – उनकी जो इच्छा हो, वे करें। वे इच्छामय हैं। मनुष्य की क्या शक्ति है?"

□□□

परिच्छेद ६०

दक्षिणेश्वर में भक्तों के साथ

(१)

भक्तियोग, समाधितत्त्व, और महाप्रभु की अवस्थाएँ। हठयोग और राजयोग

९ दिसम्बर १८८३, रविवार अगहन शुक्ला दशमी, दिन के दो बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के उसी छोटे तख्त पर बैठे हुए भक्तों के साथ भगवच्चर्चा कर रहे हैं। अधर, मनोमोहन, ठनठनिया के शिवचन्द्र, राखाल, मास्टर, हरीश आदि कितने ही भक्त बैठे हुए है। हाजरा भी उस समय वही रहते थे। श्रीरामकृष्ण महाप्रभु की अवस्था का वर्णन कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (भक्तों के प्रति) – चैतन्यदेव को तीन अवस्थाएँ होती थी। बाह्यदशा, – तब, स्थूल और सूक्ष्म में उनका मन रहता था। अर्धबाह्यदशा, – तब कारण-शरीर में, कारणानन्द मे चला जाता था। अन्तर्दशा, – तब महाकारण में मन लीन हो जाता था।

"वेदान्त के पंचकोष के साथ इसका यथार्थ मेल है। स्थूल-शरीर अर्थात् अन्नमय और प्राणमय कोष। सूक्ष्म-शरीर अर्थात् मनोमय और विज्ञानमय कोष। कारण – शरीर अर्थात् आनन्दमय कोष। महाकारण पंचकोषो से परे है। महाकारण में जब मन लीन होता था तब वे समाधि-मग्न हो जाते थे। इसी का नाम निर्विकल्प अथवा जड़-समाधि है।

"चैतन्यदेव को जब बाह्यदशा होती थी तब वे नामसंकीर्तन करते थे। अर्धबाह्यदशा मे भक्तों के साथ नृत्य करते थे। अन्तर्दशा में समाधिस्थ हो जाते थे।

मास्टर (स्वगत) – क्या श्रीरामकृष्ण इस प्रकार अपनी स्वयं की अवस्थाओं की ओर ही संकेत कर रहे हैं? चैतन्यदेव की भी ऐसी ही अवस्थाएँ होती थीं!

श्रीरामकृष्ण – श्रीचैतन्य भक्ति के अवतार थे। वे जीवों को भक्ति की शिक्षा देने के लिए आए थे। उन पर भक्ति हुई तो सब कुछ हो गया। फिर हठयोग की कोई आवश्यकता नहीं।

एक भक्त – जी, हठयोग कैसा है?

श्रीरामकृष्ण – हठयोग में शरीर की ओर मन ज्यादा देना पड़ता है। अन्तर-प्रक्षालन

के लिए हठयोगी बाँस की नली पर गुदा-स्थापन करता है। लिंग के द्वारा दूध-घी खींचता रहता है। जिह्वा-सिद्धि का अभ्यास करता है। आसन साधकर कभी कभी शून्य पर चढ़ जाता है। ये सब कार्य वायु के हैं। तमाशा दिखाते हुए किसी ने तालु के अन्दर जीभ घुसेड़ दी थी। बस, उसका शरीर स्थिर हो गया। लोगों ने सोचा, यह मर गया। कितने ही वर्ष वह कब्र में मिट्टी के नीचे पड़ा रहा। कालान्तर में वह कब्र धँस गयी। तब एकाएक उसे चेत हुआ। चेतना के होते ही वह चिल्ला उठा – यह देखो कलाबाजी! यह देखो गिरहबाजी! (सब हँसते हैं।) यह सब साँस की करामात है।

"वेदान्तवादी हठयोग नहीं मानते।

"हठयोग और राजयोग। राजयोग में मन के द्वारा योग होता है। भक्ति के द्वारा, विचार के द्वारा भी योग होता है। यही योग अच्छा है। हठयोग अच्छा नहीं, क्योंकि कलि में प्राण अन्न के अधीन है।"

(२)

श्रीरामकृष्ण की तपस्या। श्रीरामकृष्ण के अन्तरंग भक्त और भविष्यत् महातीर्थ। मूर्तिदर्शन

श्रीरामकृष्ण नौबतखाने की बगलवाली राह पर खड़े हुए देख रहे हैं – मणि नौबतखाने के बरामदे में एक ओर बैठे हुए घेरे की आड़ मे किसी गहन चिन्ता में डूबे हुए हैं। क्या वे ईश्वर का चिन्तन कर रहे है? श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर गए थे। मुँह धोकर वही जाकर खड़े हुए।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, यहाँ बैठे हुए हो! तुम्हारा काम जल्दी होगा। कुछ ही दिन करने से कोई कहेगा – 'यह, यह करो।'

चौककर वे श्रीरामकृष्ण की ओर ताकते रह गये। अभी तक आसन भी नही छोड़ा।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा समय हो आया है। जब तक अण्डो के फोड़ने का समय नही होता, तब तक चिड़िया अण्डे नही फोड़ती। जो मार्ग तुम्हें बतलाया गया है, वही तुम्हारे लिए ठीक है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने फिर से मार्ग बतला दिया।

श्रीरामकृष्ण – यह नहीं कि सभी को तपस्या अधिक करनी पड़े। परन्तु मुझे तो बड़ा ही कष्ट उठाना पड़ा था। मिट्टी के टीले पर सिर रखकर पड़ा रहता था। न जाने कहाँ दिन पार हो जाता था। केवल 'माँ, माँ' कहकर पुकारता था और रोता था।

मणि श्रीरामकृष्ण के पास लगभग दो साल से आ रहे हैं। वे अंग्रेजी पढ़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कभी कभी उन्हें इंग्लिश-मैन कहकर पुकारते थे। उन्होंने कालेज में अध्ययन किया है। विवाह भी किया है।

केशव और दूसरे पण्डितों के व्याख्यान सुनने और अंग्रेजी दर्शन और विज्ञान पढ़ने में उनका खूब जी लगता है। परन्तु जब से वे श्रीरामकृष्ण के पास आए, तब से यूरोपीय पण्डितों के ग्रन्थ और अंग्रेजी अथवा दूसरी भाषाओं के व्याख्यान उन्हें अलोने जान पड़ने लगे। अब दिनरात केवल श्रीरामकृष्ण को देखना और उन्हीं की बातें सुनना चाहते हैं।

आजकल श्रीरामकृष्ण की एक बात वे सदा सोचते रहते हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा हैं, 'साधना करने से मनुष्य ईश्वर को देख सकता है।' उन्होने यह भी कहा है, 'ईश्वरदर्शन ही मनुष्यजीवन का उद्देश्य है।'

श्रीरामकृष्ण – कुछ दिन करने से ही कोई कहेगा – 'यह, यह करो।' तुम एकादशी का व्रत करना। तुम लोग अपने आदमी हो, आत्मीय हो। नहीं तो तुम इतना क्यों आओगे? कीर्तन सुनते सुनते राखाल को मैंने देखा था, वह व्रजमण्डल के भीतर था। नरेन्द्र का स्थान बहुत ऊँचा है। और हीरानन्द। उसका कैसा बालकों का – सा भाव है! उसका भाव कैसा मधुर है! उसे भी देखने को जी चाहता है।

"मैंने श्रीगौरांग के सांगोपांगों को देखा था; भाव मे नहीं, इन्हीं आँखों से! पहले ऐसी अवस्था थी कि सादी दृष्टि से सब दर्शन होते थे! अब तो भाव में होते हैं।

"सादी दृष्टि से श्रीगौरांग के सब सांगोपांगों को देखा था। उसमें शायद तुम्हें भी देखा था। और शायद बलराम को भी।

"किसी को देखकर झट उठकर क्यों खड़ा हो जाता हूँ, जानते हो? आत्मीयों को दीर्घकाल के बाद देखने से ऐसा ही होता है।

"माँ से रो-रोकर कहता था, माँ, भक्तों के लिए मेरा जी निकल रहा है; उन्हें शीघ्र मेरे पास ला दे। जो कुछ मैं सोचता था, वही होता था।

"पंचवटी में मैंने तुलसीकानन बनाया था, जप-ध्यान करने के लिए। बड़ी इच्छा हुई कि चारों ओर से बाँस की कमानियों का घेरा लगा दूँ। इसके बाद ही देखा, ज्वार में बहकर कुछ कमानियों का गट्ठा और कुछ रस्सी ठीक पंचवटी के सामने आकर लग गयी है। ठाकुरबाड़ी में एक कहार रहता था। आनन्द से नाचते हुए उसने आकर यह खबर सुनायी।

"जब यह अवस्था हुई तब और पूजा न कर सका। कहा माँ, मुझे कौन देखेगा? माँ, मुझमें ऐसी शक्ति नहीं है कि अपना भार खुद ले सकूँ। और तुम्हारी बात सुनने को जी चाहता है; भक्तों को खिलाने की इच्छा होती है; सामने पड़ जाने पर किसी को कुछ देने को भी इच्छा होती है। माँ, यह सब किस तरह होगा? माँ, तुम एक बड़ा आदमी मेरी सहायता के लिए दो। इसीलिए तो मथुरबाबू ने इतनी सेवा की!

"और भी कहा था, माँ, मेरे तो सब सन्तान होगी नहीं, परन्तु इच्छा होती है कि एक शुद्ध भक्त बालक सदा मेरे साथ रहे। इसी तरह का एक बालक मुझे दो। इसीलिए तो

राखाल आया। जो जो आत्मीय हैं, उनमें कोई अंश है और कोई कला।''

श्रीरामकृष्ण फिर पंचवटी की ओर जा रहे है। केवल मास्टर साथ हैं, और कोई नही। श्रीरामकृष्ण प्रसन्नतापूर्वक उनसे विविध वार्तालाप कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – देखो, मैंने एक दिन कालीमन्दिर से पंचवटी तक एक अद्भुत मूर्ति देखी! इस पर तुम्हारा विश्वास होता है?

मास्टर आश्चर्य में आकर निर्वाक् हो रहे।

वे पंचवटी की शाखा से दो-चार पत्ते तोड़कर अपनी जेब में रख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – यह डाल गिर गयी है, देखते हो? मै इसके नीचे बैठता था।

मास्टर – मैं इसकी एक छोटीसी डाल तोड़ ले गया हूँ। उसे घर में रख दिया है।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – क्यों?

मास्टर – देखने से आनन्द होता है। सब समाप्त हो जाने पर यही जगह महातीर्थ होगी।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – किस तरह का तीर्थ? क्या पानीहाटी की तरह का?

पानीहाटी में बड़े समारोह के साथ राघव पण्डित का महोत्सव होता है। श्रीरामकृष्ण प्राय: हर साल यह महोत्सव देखने जाया करते है और संकीर्तन के बीच में प्रेम और आनन्द से नृत्य किया करते हैं, मानो भक्तों की पुकार सुनकर श्रीगौरांग स्थिर नहीं रह सकते – संकीर्तन में स्वयं जाकर अपनी प्रेममूर्ति के दर्शन कराते हैं।

(३)

हरिकथा-प्रसंग

सन्ध्या हो गयी। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में छोटे तख्त पर बैठे हुए जगन्माता का चिन्तन कर रहे हैं। क्रमश: मन्दिर में देवताओं की आरती होने लगी। शंख और घण्टे बजने लगे। मास्टर आज रात को यही रहेंगे।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से 'भक्तमाल' पढ़कर सुनाने के लिए कहा। मास्टर पढ़ रहे हैं।*

''जयमल नाम के एक शुद्धचित्त राजा थे। भगवान् श्रीकृष्ण पर उनकी अचल प्रीति थी। नवधा भक्ति के यजन में वे इतने दृढनिष्ठ थे कि पत्थर पर खिंची हुई रेखा की तरह उसका ऱ्हास न हो पाता था। वे जिस विग्रह का पूजन करते थे उसका नाम श्यामलसुन्दर था। श्यामलसुन्दर को छोड़ वे और अन्य किसी देवी-देवता को मानो जानते ही न थे उन्हीं पर उनका चित्त लगा रहता था। सदा दृढ़ नियमों से वे दस दण्ड दिन चढ़ते तक उस

---

* यह बंगला का भक्तमाल है। छन्दोबद्ध है। यहाँ इसका हिन्दी अनुवाद दिया गया है।

मूर्ति की पूजा किया करते थे। अपने पूजन में वे इतने दृढ़निश्चय थे कि चाहे राज्य और धन का नाश हो जाए, चाहे वज्रपात हो, तथापि पूजा के समय किसी दूसरी ओर ध्यान न देते थे।

"इस बात की खबर उनके एक दूसरे प्रतिस्पर्धी राजा के पास पहुँची। उसने सोचा, यह तो शत्रु को पराजित करने का एक उत्तम उपाय हाथ आया। जिस समय राजा जयमल पूजन के लिए बैठे थे उसी समय उसने उनके राज्य पर आक्रमण कर युद्ध की घोषणा कर दी। राजा की आज्ञा बिना सेना युद्ध नहीं कर सकती। अत: राजा जयमल की सेना उनकी आज्ञा की राह देखती रही। तब तक शत्रुओं ने उनका किला घेर लिया। तथापि इन्होंने उस समय युद्ध की ओर ध्यान ही नहीं दिया, निरुद्वेग होकर पूजन करते रहे। इनकी माता सिर पटकती हुई पास आकर उच्च स्वर से रोदन करने लगी। विलाप करते हुए उसने कहा कि अब जल्दी उठो, नहीं तो सब कुछ चला जाएगा; तुम तो ऐसे हो कि तुम्हारा इधर ध्यान ही नहीं है – शत्रु चढ़ आया – अब किला तोड़ना ही चाहता है। महाराज जयमल ने कहा, 'माता! तुम क्यों दु:ख कर रही हो? जिसने यह राज-पाट दिया है, वह अगर छीन ले तो हमारा इसमें क्या! और अगर वह हमारी रक्षा करे, तो वह शक्ति किसमें है जो हमसे ले सके? अतएव हम लोगों का उद्यम तो व्यर्थ ही है।'

"इधर श्यामलसुन्दर ने घोड़े पर सवार हो अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध की तैयारी कर दी। अकेले ही भक्त के शत्रुओं का संहार करके घोड़े को अपने मन्दिर के पास बाँधकर श्यामलसुन्दर जहाँ के तहाँ हो रहे।

"पूजा-अर्चना समाप्त होने पर राजा जयमल बाहर आकर देखते है कि सामने उनका घोड़ा पसीने से तर हो हाँफता खड़ा है। वे पूछने लगे, 'मेरे घोड़े पर कौन सवार हुआ और इसे यहाँ बाँध गया?' सभी कहने लगे कि यह तो हम कुछ भी नही जानते। राजा के मन मे सन्देह हुआ और यही सोचते हुए वे सेनासहित युद्धभूमि की ओर बढ़े। जाकर उन्होने देखा कि सारी शत्रुसेना रणभूमि में लोट रही है - केवल शत्रुपक्ष का राजा भर बचा है। विस्मित होकर राजा जयमल इसका कारण पूछने लगे। इतने में वह प्रतिस्पर्धी राजा उनके समीप आया और हाथ जोड़कर विनती करने लगा। वह बोला, 'आपके एक सिपाही ने अकेले ही इतना आश्चर्यजनक युद्ध किया कि उनके सामने कोई टिक न सका। वह अवश्य ही त्रिलोकविजयी है। महाराज, मैं आपका धन या राज्य नहीं चाहता। बल्कि आप चलकर मेरा भी राज्य ले लें। परन्तु मुझे आप इतना बताइये कि वह साँवला सिपाही कौन था? केवल एक बार दर्शन देकर उसने मेरा मन हर लिया है।"

"जयमल को समझने में देर न लगी कि यह सब श्यामलसुन्दरजी का ही खेल है। यह मर्म जानते ही प्रतिद्वन्द्वी राजा जयमल के चरण पकड़कर स्तव करने लगे और कहने लगे कि जिनके कारण मुझ पर कृष्ण की कृपा हुई उन आपके चरणों में मैं शरण लेता हूँ

– कृपा कीजिए कि वह श्यामल सिपाही मेरा स्वीकार करे।''

पाठ समाप्त होने के बाद श्रीरामकृष्ण मास्टर के साथ बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – इन बातों पर तुम्हारा विश्वास होता है? – घोड़े पर सवार होकर उन्होंने सेनानाश किया था; इन सब बातों पर?

मास्टर – भक्त ने व्याकुल होकर उन्हें पुकारा था। इस पर विश्वास होता है। श्रीभगवान् को उसने ठीक ठीक सवार करते देखा था या नहीं, यह सब समझ में नहीं आता। वे सवार होकर आ सकते हैं, परन्तु उन लोगों ने उन्हें ठीक ठीक देखा था या नहीं, इस पर विश्वास नहीं जमता।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – पुस्तक में भक्तों की अच्छी कथाए लिखी हैं, परन्तु हैं सब एक ही ढर्रे की। जिनका दूसरा मत है, उनकी निन्दा लिखी है।

दूसरे दिन सुबह को बगीचे में खड़े हुए श्रीरामकृष्ण वार्तालाप कर रहे हैं। मणि कहते हैं, ''तो मैं यहाँ आकर रहूँगा।''

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम लोग जो इतना आया करते हो, इसके क्या मानी है? साधु को लोग ज्यादा से ज्यादा एक बार आकर देख जाते हैं। तुम इतना आते हो – इसके क्या मानी है?

मणि तो चकित हो गये। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही इस प्रश्न का उत्तर देने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – अन्तरंग न होते तो क्या आते? अन्तरंग अर्थात् आत्मीय, अपना आदमी – जैसे पिता, पुत्र, भाई, बहन। सब बातें मैं नहीं कहता। नहीं तो फिर क्यों आओगे?

''शुकदेव ब्रह्मज्ञान पाने के लिए जनक के पास गए थे। जनक ने कहा, 'पहले दक्षिणा दो।' शुकदेव ने कहा, 'जब तक उपदेश नहीं मिल जाता, तब तक कैसे दक्षिणा दूँ?' जनक ने हँसते हुए कहा, 'तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाने पर फिर गुरु और शिष्य का भेद थोड़े ही रह जाएगा? इसीलिए हमने पहले दक्षिणा की बात कही'।''

(४)

सेवक की विचारतरंगें

शुक्लपक्ष है। चाँद निकला है। मणि कालीमन्दिर के उद्यान के रास्ते पर टहल रहे हैं। रास्ते के एक ओर श्रीरामकृष्ण का कमरा, नौबतखाना, बकुलतला और पंचवटी है – दूसरी ओर ज्योत्स्नापूर्ण भागीरथी बह रही हैं।

मणि मन ही मन कह रहे हैं – ''क्या सचमुच ही ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं? श्रीरामकृष्ण तो ऐसा कहते हैं। उन्होंने कहा कि थोड़ी साधना करते ही कोई आकर बता देगा, 'ऐसा ऐसा करो।' अर्थात् उन्होंने थोड़ी साधना करने के लिए कहा। अच्छा, मेरा

तो विवाह हो चुका है, लड़के-बच्चे भी हुए हैं, क्या इतने पर भी ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है? (थोड़ा सोचकर) अवश्य ही किया जा सकता है, नहीं तो ये वैसा क्यों कहते? उनकी कृपा होने से क्यों न होगा?

"सामने यह जगत् दिखायी दे रहा है – ये सूर्य, चन्द्र, तारे, जीव, चौबीस तत्त्व – ये सब कैसे उत्पन्न हुए, इनका करतार कौन है, मैं, उनका कौन हूँ, यह न जानने पर जीवन ही व्यर्थ है।

"श्रीरामकृष्ण पुरुषश्रेष्ठ हैं। ऐसे महापुरुष मैंने जीवन में आज तक नहीं देखे। इन्होंने अवश्य ही ईश्वर को देखा है। अन्यथा, ये 'माँ माँ' कहते हुए दिनरात किसके साथ बातचीत करते रहते हैं! अन्यथा, ईश्वर पर इनका इतना प्रेम कैसे हो सकता है! इतना प्रेम कि एकदम बाह्यज्ञानरहित हो जाते हैं! समाधिमग्न जड़वत् हो जाते हैं! फिर कभी प्रेम में मतवाले होकर हँसते, रोते नाचते और गाते हैं।"

परिच्छेद ६१

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ

(१)

अध्यात्मरामायण

आज अगहन की पूर्णिमा और संक्रान्ति हैं। दिन शुक्रवार १४ दिसम्बर १८८३। दिन के नौ बजे होगे। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दरवाजे के पास दक्षिण-पूर्व के बरामदे मे खड़े हैं। पास ही रामलाल खड़े हैं। राखाल और लाटू भी कही इधर-उधर पास ही थे। मणि ने आकर भूमिष्ठ हो प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा "आ गए, अच्छा हुआ। आज दिन भी अच्छा है।" मणि कुछ दिन श्रीरामकृष्ण के पास रहेंगे। साधना करेगे। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, "थोड़ी साधना करते ही कोई आकर तुम्हे बता देगा, ऐसा ऐसा करो।"

श्रीरामकृष्ण ने इनसे कहा है, "यहाँ अतिथिशाला का अन्न तुम्हारे लिए रोज खाना उचित नही। यह साधुओ और कंगालो के लिए है। तुम अपना भोजन पकाने के लिए एक आदमी ले आना।" इसीलिए उनके साथ एक आदमी भी आया है।

उनका भोजन कहाँ पकाया जाएगा, इसकी व्यवस्था कर दी गयी। वे दूध पीएँगे, इसके लिए श्रीरामकृष्ण ने रामलाल को अहीर से कह देने को कहा।

रामलाल 'अध्यात्मरामायण' पढ़ रहे है और श्रीरामकृष्ण सुन रहे है। मणि भी बैठे हुए सुन रहे हैं –

'श्रीरामचन्द्रजी सीताजी से विवाह करके अयोध्या लौट रहे हैं। रास्ते में परशुराम से भेंट हुई। श्रीरामचन्द्र ने शिव का धनुष्य तोड़ डाला है, यह सुनकर परशुराम रास्ते में बड़ा गुलगपाड़ा मचाने लगे। मारे भय के दशरथ के होश ही उड़ गए। परशुराम ने एक दूसरा धनुष राम को देकर उस पर उन्हे गुण चढ़ा देने के लिए कहा। राम ने कुछ मुसकराकर बायें हाथ से धनुष्य लेकर गुण चढ़ाकर उसमे टंकार किया। शरासन में शरयोजना करके परशुराम से उन्होंने कहा, अब यह बाण कहाँ छोड़ूँ – कहो। परशुराम का दर्प चूर्ण हो गया। वे श्रीरामचन्द्र को परब्रह्म कहकर उनकी स्तुति करने लगे।"

परशुराम की स्तुति सुनते ही सुनते श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। रह-रहकर,

'राम राम' नाम का मधुर स्वर मे उच्चारण कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण (रामलाल से) – जरा गुह-निषाद की कथा तो सुनाओ। रामलाल 'भक्तमाल' से सुनाते रहे –

"श्रीरामचन्द्र जब पिता की सत्यरक्षा के लिए वन गए थे, तब उन्हे देखकर निषादराज को बड़ा आश्चर्य हुआ। उनके नेत्रो से अश्रु की धारा बहने लगी; गला रुँध आया और वे काठ की बनी पुतली की तरह नि·स्पन्द होकर अनिमेष दृष्टि से एकटक देखते रहे। धीरे धीरे उन्होने श्रीरामचन्द्र के पास जाकर कहा, 'आप हमारे घर चले।' श्रीरामचन्द्र उन्हे मित्र कहकर भर बाँह भेटे। निषाद ने आत्मसमर्पण करते हुए कहा, 'आप मेरे मित्र हुए तो मै भी आपको अपने प्राणो के साथ अपनी देह समर्पित करता हूँ। आप ही मेरे प्राण, धन, राज्य है, आप ही मेरी भक्ति, मुक्ति है, आप मेरे सर्वस्व है। आपके चरणो मे मै देहसमर्पण करता हूँ।'

"श्रीरामचन्द्र चौदह साल वन मे रहेगे और जटा-वल्कल धारण करेगे, यह सुनकर निषादराज ने भी जटा-वल्कल धारण कर लिया। फल-मूल छोडकर अन्य कोई भोजन उन्होने नही किया। चौदह साल के बाद भी श्रीरामचन्द्र नही आ रहे है यह देखकर गुह अग्निप्रवेश करने जा रहे थे। इसी समय हनुमानजी ने आकर संवाद दिया। संवाद पाकर गुह आनन्दसागर मे मग्न हो गए। श्रीरामचन्द्र और सीतामाई पुष्पक विमान पर आकर उपस्थित हो गए।

तीव्र वैराग्य तथा संसारत्याग

"भक्तवत्सल रामचन्द्र ने प्रिय भक्त गुह को देखते ही दृढ आलिगन मे बाँध हृदय से लगा लिया। दोनो की देह आँसुओ से तर हो गयी। निषादराज गुह धन्य हो गए। चारो ओर उनका जयजयकार होने लगा।"

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण थोडा आराम कर रहे है। मास्टर पास बैठे हुए है। इसी समय श्याम डाक्टर तथा और भी कुछ आदमी आए। श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गए और बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – बात यह नही कि कर्म बराबर करते ही जाना पडे। ईश्वरलाभ हो जाने पर कर्म फिर नही रह जाते। फल होने पर फूल आप ही झड़ जाते है।

"जिसे ईश्वरप्राप्ति हो जाती है उसके लिए सन्ध्यादि कर्म नही रह जाते। सन्ध्या गायत्री मे लीन हो जाती है, तब गायत्री जपने से ही काम हो जाता है। और गायत्री का लय ओकार मे हो जाता है, तब गायत्री जपने की भी आवश्यकता नही रह जाती। तब केवल 'ॐ' कहने से ही हो जाता है। सन्ध्यादि कर्म कब तक है। – जब तक हरिनाम या रामनाम मे पुलक न हो, अश्रुधारा न बहे। धन के लिए या मुकदमा जीतने के लिए पूजा आदि कर्म

करना अच्छा नहीं।''

एक भक्त – धन की चेष्टा तो, मैं देखता हूँ, सभी करते हैं। केशव सेन को ही देखिये, किस तरह महाराजा के साथ उन्होंने अपनी लड़की का विवाह किया।

श्रीरामकृष्ण – केशव की बात दूसरी है। जो यथार्थ भक्त है वह अगर चेष्टा न भी करे तो भी ईश्वर उसके लिए सब कुछ जुटा देते हैं। जो ठीक ठीक राजा का लड़का है वह मुशाहरा पाता है। वकील आदि की बात मैं नहीं कहता – जो मेहनत करके, दूसरों की दासता करके रुपया कमाते हैं। मैं कहता हूँ, ठीक राजा का लड़का। जिसे कोई कामना नहीं है वह रुपया-पैसा नही चाहता; रुपया उसके पास आप ही आता है। गीता में है – यदृच्छालाभ।

"जो सद्ब्राह्मण है, जिसे कोई कामना नही है, वह चमार के यहाँ का भी सीधा ले सकता है। 'यदृच्छालाभ'। वह कामना नहीं करता, उसके पास प्राप्ति आप ही आती है।''

एक भक्त – अच्छा महाराज, संसार में किस तरह रहना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण – पाँकाल मछली की तरह रहना चाहिए। संसार से दूर निर्जन में जाकर कभी कभी ईश्वरचिन्तन करने पर उनमें भक्ति होती है। तब निर्लिप्त होकर संसार में रह सकोगे। पॉकाल मछली कीच के भीतर रहती है, फिर भी कीच उसकी देह में नहीं लगता। इस तरह का आदमी अनासक्त होकर संसार में रहता है।

श्रीरामकृष्ण देख रहे हैं, मणि एकाग्र चित्त से उनकी सब बातें सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि को देखकर) – तीव्र वैराग्य होने से लोग ईश्वर को पाते हैं। जिसे तीव्र वैराग्य होता है, उसे जान पड़ता है, संसार दावाग्नि की तरह है - जल रहा है! वह स्त्री और पुत्र को कुएँ के सदृश देखता है। इस तरह का वैराग्य जब होता है तब घर-द्वार आप ही छूट जाता है। केवल अनासक्त होकर संसार में रहना उसके लिए पर्याप्त नही है। कामिनी-कांचन यही माया है। माया को अगर पहचान सको तो वह आप लज्जा से भाग खड़ी होगी। एक आदमी बाघ की खाल ओढ़कर भय दिखा रहा है। जिसे भय दिखा रहा है उसने कहा, मैं तुझे पहचानता हूँ, तू तो 'हिरुआ' है। तब वह हँसकर चला गया – और किसी दूसरे को भय दिखाने लगा।

"जितनी स्त्रियाँ हैं सब शक्तिरूपिणी हैं। वही आदिशक्ति स्त्री का रूप धारण किए हुए है। अध्यात्मरामायण में है – नारदादि राम का स्तव करते हैं, 'हे राम, जितने पुरुष हैं सब आप हैं और प्रकृति के जितने रूप हैं सब सीता हैं। तुम इन्द्र हो, सीता इन्द्राणी; तुम शिव हो, सीता शिवानी; तुम नर हो, सीता नारी; अधिक और क्या कहूँ – जहाँ पुरुष है वहाँ तुम हो, जहाँ स्त्रियाँ हैं वहाँ सीता।'

त्याग और प्रारब्ध। वामाचार-साधन का निषेध

(भक्तों से) "मन में लाने से ही त्याग नहीं किया जा सकता। प्रारब्ध, संस्कार ये सभी हैं। एक राजा से किसी योगी ने कहा, 'तुम मेरे पास बैठकर परमात्मा का चिन्तन करो।' राजा ने उत्तर दिया, 'यह मुझसे न होगा। मैं यहाँ रह सकता हूँ; परन्तु मुझे अब भी भोग करना है। इस वन में अगर रहूँगा तो आश्चर्य नहीं कि इस वन में भी एक राज्य हो जाए। मेरा भोग अभी बाकी है।'

"नटवर पाँजा जब बच्चा था, इस बगीचे में जानवर चराता था। परन्तु उसके भाग्य में बहुत बड़ा भोग था; इसीलिए तो इस समय अण्डी का कारखाना खोलकर इतना रुपया इकट्ठा किया है। आलमबाजार में अण्डी का रोजगार खूब चला रहा है।

"एक मत में है, स्त्री लेकर साधना करना। 'कर्ताभजा' सम्प्रदाय की स्त्रियों के बीच में एक बार एक आदमी मुझे ले गया था। वे सब मेरे पास आकर बैठ गयीं। मैं जब उन्हें 'माँ माँ' कहने लगा तब वे आपस में कहने लगीं, ये प्रवर्तक हैं, अभी 'घाट' की पहचान इनको नहीं हुई! उन लोगों के मत में कच्ची अवस्था को प्रवर्तक कहते हैं, उसके बाद साधक, उसके बाद सिद्ध और फिर सिद्ध का सिद्ध।

"एक स्त्री वैष्णवचरण के पास जाकर बैठी। वैष्णवचरण से पूछने पर उन्होंने कहा, इसका बालिका-भाव है।

"स्त्री-भाव से शीघ्र पतन होता है। मातृभाव शुद्ध भाव है।"

काँसारीपाड़ा के भक्तगण उठ पडे। कहा, तो अब हम लोग चलें; कालीमाई तथा और देवों के दर्शन करेंगे।

(२)

श्रीरामकृष्ण और प्रतिमापूजा। व्याकुलता और ईश्वरलाभ

मणि पंचवटी और कालीमन्दिर के विभिन्न स्थानों में अकेले घूम रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा है, 'थोड़ी साधना करने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं।' क्या मणि यही सोच रहे हैं?

फिर श्रीरामकृष्ण ने तीव्र वैराग्य की बात कही और कहा कि माया को पहचान लेने पर वह भाग खड़ी होती है। मणि यही सब सोच रहे हैं।

पिछला पहर है, साढ़े तीन बजे का समय होगा। मणि फिर आकर श्रीरामकृष्ण के कमरे में बैठे हैं। ब्राउटन इन्स्टिट्यूशन से एक शिक्षक कुछ छात्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आए हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे वार्तालाप कर रहे हैं। शिक्षक महाशय बीच बीच में एक एक प्रश्न कर रहे हैं। बातचीत मूर्तिपूजन के सम्बन्ध में हो रही है।

श्रीरामकृष्ण (शिक्षक से) – मूर्तिपूजन में दोष क्या है? वेदान्त में हैं, जहाँ 'अस्ति, भाति और प्रिय' है, वहीं उनका प्रकाश है, इसलिए उनके सिवाय और किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं है।

"और देखो, छोटी छोटी लड़कियाँ कितने दिन गुड़िया लेकर खेलती हैं? जितने दिन तक उनका विवाह नहीं होता और जितने दिन तक वे पति-सहवास नहीं करतीं। विवाह हो जाने पर गुड़ियाँ-गुड्डों को उठाकर सन्दूक में रख देती हैं। ईश्वरलाभ हो जाने पर फिर मूर्तिपूजन की क्या आवश्यकता है?"

मणि की ओर देखकर श्रीरामकृष्ण कहते हैं – "अनुराग होने पर ईश्वर मिलते हैं। खूब व्याकुलता होनी चाहिए। खूब व्याकुलता होने पर सम्पूर्ण मन उन्हें अर्पित हो जाता है।

"एक आदमी के एक लड़की थी। बहुत कम आयु में लड़की विधवा हो गयी थी। पति का मुख उसने कभी न देखा था। दूसरी स्त्रियों के पतियों को आते-जाते वह देखती थी। उसने एक दिन कहा, 'पिताजी, मेरा पति कहाँ है?' उसके पिता ने कहा, 'गोविन्दजी तेरे पति हैं। उन्हें पुकारने पर वे तुझे दर्शन देंगे।' यह सुनकर वह लड़की द्वार बन्द करके गोविन्द को पुकारती और रोती थी। वह कहती थी – 'गोविन्द! तुम आओ, मुझे दर्शन दो, तुम क्यों नहीं आते?' छोटी लड़की का यह रोना सुनकर गोविन्दजी स्थिर न रह सके। उसे उन्होंने दर्शन दिए।

"बालक जैसा विश्वास। बालक माँ को देखने के लिए जिस तरह व्याकुल होता है वैसी व्याकुलता चाहिए। इस व्याकुलता के होने पर समझना चाहिए कि अरुणोदय हुआ। इसके बाद सूर्योदय होगा ही। इस व्याकुलता के बाद ही ईश्वरदर्शन होता है।

"जटिल बालक की कथा आती है। वह पाठशाला जाता था। कुछ जंगल की राह से पाठशाला जाना पड़ता था; इसलिए वह डरता था। उसने अपनी माँ से यह कहा। माता ने कहा, 'डर क्या है? तू मधुसूदन को पुकारना।' बच्चे ने पूछा, 'मधुसूदन कौन है?' माता ने कहा, 'मधुसूदन तेरे दादा होते हैं।' जब अकेले में जाते समय वह डरा, तब एक आवाज लगायी – 'मधुसूदन दादा!' कहीं कोई न आया। तब वह, 'कहाँ हो मधुसूदन दादा! जल्दी आओ, मुझे बड़ा डर लग रहा है' कहकर जोर जोर से पुकारते हुए रोने लगा। मधुसूदन न रह सके। आकर कहा, 'यह हैं हम, तुझे भय क्या है?' यह कहकर उसे साथ लेकर वे पाठशाला के रास्ते तक छोड़ आए, और कहा, 'तू जब बुलाएगा तभी मैं दौड़ा जाऊँगा, भय क्या है?' यही बालक का विश्वास है! यही व्याकुलता है!

"एक ब्राह्मण के यहाँ भगवान् की सेवा होती थी। एक दिन किसी काम से उसे किसी दूसरी जगह जाना पड़ा। वह अपने छोटे बच्चे से कह गया, 'आज श्रीठाकुरजी का भोग लगाना, उन्हें खिलाना।' बच्चे ने ठाकुरजी का भोग लगाया, परन्तु ठाकुरजी चुपचाप

बैठे ही रहे। न बोले और न कुछ खाया ही। बच्चे ने बड़ी देर तक बैठे बैठे देखा कि ठाकुरजी नहीं उठते। उसे दृढ़ विश्वास था कि ठाकुरजी आकर आसन पर बैठकर भोजन करेंगे। वह बार बार कहने लगा, 'ठाकुरजी, आओ, भोग पा लो, बड़ी देर हो गयी अब और मुझसे बैठा नहीं जाता।' ठाकुरजी क्यों उत्तर देने लगे? तब बच्चे ने रोना शुरू कर दिया; कहने लगा, 'ठाकुरजी, पिताजी तुम्हें खिलाने के लिए कह गए हैं, तुम क्यों नहीं आओगे? क्यों मेरे पास नहीं खाओगे?' व्याकुल होकर ज्यों ही कुछ देर तक वह रोया कि ठाकुरजी हँसते हँसते आकर हाजिर हो गए और आसन पर बैठकर भोग पाने लगे। ठाकुरजी को खिलाकर जब वह ठाकुरघर से निकला, तब घरवालों ने कहा, 'भोग हो गया तो वह सब उतार ले आ।' बच्चे ने कहा, 'हाँ, हो गया; ठाकुरजी ने सब भोग खा लिया।' उन लोगों ने कहा, 'अरे, यह तू क्या कहता है!' बच्चे ने सरलतापूर्वक कहा, क्यों खा तो गए हैं ठाकुरजी सब।' तब घरवालों ने ठाकुरघर में जाकर देखा तो छक्के छूट गए।''

सन्ध्या होने को अभी देर है। श्रीरामकृष्ण नौबतखाने के दक्षिण ओर खड़े हुए मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं। सामने गंगा है। जाड़े का समय है। श्रीरामकृष्ण ऊनी कपड़ा पहने हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – पंचवटीवाले घर में सोओगे?

मणि – क्या ये लोग नौबतखाने के ऊपर का कमरा न देंगे?

श्रीरामकृष्ण खजांची से मणि की बात कहेंगे। रहने के लिए एक कमरा ठीक कर देंगे। मणि को नौबतखाने के ऊपर का कमरा पसन्द आया है। वे हैं भी कविता प्रिय मनुष्य। नौबतखाने से आकाश, गंगा, चाँदनी, फूलों के पेड़ ये सब दीख पड़ते हैं।

श्रीरामकृष्ण – देंगे क्यों नही? मैं पंचवटीवाला घर इसलिए कह रहा हूँ कि वहाँ बहुत रामनाम और ईश्वरचिन्तन किया गया है।

(३)

जीवन का अन्तिम लक्ष्य - ईश्वर से प्रेम

श्रीरामकृष्ण के कमरे में धूप दिया गया है। उसी छोटे तख्त पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण ईश्वरचिन्तन कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हुए है। राखाल, लाटू, रामलाल ये भी कमरे के अन्दर है।

श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं, – ''बात है उन पर भक्ति करना – उन्हें प्यार करना।'' फिर उन्होंने रामलाल से गाने के लिए कहा। रामलाल मधुर कण्ठ से गाने लगे। श्रीरामकृष्ण हर गाने का पहला चरण कह दे रहे हैं।

[illegible] के कहने पर रामलाल पहले श्रीगौरांग का संन्यास गा रहे हैं।
[illegible] कैसी अपूर्वज्योति गौरांगमूर्ति देखी!

उनके दोनो नेत्रो मे शत धाराओ से होकर प्रेम बह रहा है। मत्त मातंग के सदृश श्रीगौरांग कभी तो प्रेमावेश मे नाचते हुए गाते है, कभी धूल मे लोटते है, कभी ऑसुओ मे बहते है। वे रोते हुए हरि को पुकार रहे है। उनका उच्च स्वर स्वर्ग और मत्यलोक को भी हिला रहा है। कभी वे दॉतो मे तृण दबाकर, हाथ जोड़, बार बार दासता से मुक्त कर देने के लिए परमात्मा से प्रार्थना कर रहे है। अपने घुँघराले बालो को मुँड़ाकर उन्होने योगी का वेश धारण किया है। उनकी भक्ति और प्रेमावेश को देखकर जी रो उठता है। जीवो के दुःख से दुःखी होकर, सर्वस्व त्यागकर वे प्रेम प्रदान करने के लिए आए है। 'प्रेमदास' की यही अभिलाषा है कि वह श्रीचैतन्यदेव के चरणो का दास होकर उनके साथ दर दर घूमे।''

रामलाल ने फिर एक गाना गाया। इसमे श्रीगौरांगदेव की माता शची का विलाप है।

इसके बाद श्रीरामकृष्ण के आदेशानुसार रामलाल ने कुछ और गाने गाए।

श्रीरामकृष्ण रामलाल से फिर 'गौरांग और नित्यानंद' वाला गाना गाने के लिए कह रहे है। इस बार रामलाल के साथ श्रीरामकृष्ण भी गा रहे है।

(भावार्थ) – ''हे प्रभु श्रीगौरांग और नित्यानन्द, तुम दोनो भाई बड़े ही दयालु हो! यही सुनकर मै यहाँ आया हूँ। मैं काशी गया था। वहाँ विश्वेश्वरजी ने मुझसे कहा है, वे परब्रह्म इस समय शचीदेवी के घर मे है। हे परब्रह्म! मैने तुम्हे पहचान लिया है। मै कितनी ही जगह गया, परन्तु इस तरह के दयासागर और कही मेरी दृष्टि मे नही पड़े। तुम दोनो व्रजमण्डल मे कृष्ण बलराम थे। अब नदिया मे आकर श्रीगौरांग और नित्यानन्द हुए हो! तुम्हारी व्रज की क्रीडा थी दौड़धूप और अब यह नदिया मे तुम्हारी क्रीड़ा है धूल मे लोटपोट हो जाना। व्रज मे तुम्हारी क्रीडा जोर जोर की किलकारियाँ थी और आज नदिया मे तुम्हारी क्रीड़ा है, हरिनाम-कीर्तन। तुम्हारे सब और अंग तो छिप गए है, परन्तु दोनो बंकिम नेत्र अब भी है। तुम्हारा पतितपावन नाम सुनकर मेरे हृदय मे बहुत बड़ा भरोसा हो गया है। मै बड़ी आशा से यहाँ दौड़ा हुआ आया हूं। तुम अपने चरणो की शीतल छाया मे मुझे स्थान दो। जगाई और मधाई जैसे पाखण्डी भी तर गए है, प्रभो, यही भरोसा मुझे भी है। मैने सुना है, तुम दोनो चाण्डालो को भी हृदय से लगा लेते हो, हृदय से लगाकर हरिनाम-कीर्तन करते हो।''

निर्जन में भक्तों की साधना

रात बहुत हो चुकी है। नौबतखाने के ऊपरवाले कमरे मे मणि अकेले बैठे हुए है। आज अगहन की पूर्णिमा है। आकाश, गंगा, कालीमन्दिर, मन्दिरो के शिखर, उद्यानपथ, पंचवटी – सभी चन्द्रलोक से आलोकित है। मणि एकाकी श्रीरामकृष्ण का चिन्तन कर रहे है।

रात के करीब तीन बज गए। मणि उठे और उत्तराभिमुख हो पंचवटी की ओर जाने लगे। श्रीरामकृष्ण ने पंचवटी की बात कही है। नौबतखाना अब अच्छा नहीं लग रहा है। मणि ने पंचवटीवाले घर में रहने का निश्चय किया।

चारों ओर नीरवता है। रात के ग्यारह बजे गंगा में ज्वार आया था। बीच बीच में पानी की आवाज सुनायी दे रही है। मणि पंचवटी की ओर बढ़ने लगे। इतने में उन्हें दूर से एक आवाज सुनायी पड़ी। मानो कोई पंचवटी के वृक्षमण्डप के भीतर से आर्त स्वर से पुकार रहा है – 'कहाँ हो दादा मधुसूदन!'

आज पूर्णिमा होने के कारण वटवृक्ष की शाखा-प्रशाखाओं को भेदकर चन्द्र की किरणें प्रकाशित हो रहीं हैं।

कुछ और अग्रसर होकर मणि ने दूर से देखा कि पंचवटी में श्रीरामकृष्ण के एक भक्त बैठे हुए निर्जन में एकाकी पुकार रहे हैं – 'कहाँ हो दादा मधुसूदन!' मणि निःस्तब्ध हो देखते रहे।

□□□

परिच्छेद ६२

दक्षिणेश्वर में अंतरंग भक्तों के साथ

प्रह्लादचरित्र-श्रवण तथा भावावेश। स्त्रीसंग-निन्दा

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर में उसी पूर्वपरिचित कमरें में फर्श पर बैठे हुए प्रल्हाद-चरित्र सुन रहे हैं। दिन के आठ बजे होंगे। रामलाल 'भक्तमाल' ग्रन्थ से प्रह्लाद-चरित्र पढ़ रहे हैं।

आज शनिवार, अगहन की कृष्णा प्रतिपदा है, १५ दिसम्बर १८८३ ई.। मणि दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण की पदच्छाया में ही रहते हैं। वे भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए प्रल्हाद-चरित्र सुन रहे हैं। कमरे में राखाल, लाटू, हरीश भी हैं, – कोई बैठे हुए सुन रहे हैं, कोई आना-जाना कर रहे हैं। हाजरा बरामदे में हैं।

श्रीरामकृष्ण प्रह्लाद-चरित्र की कथा सुनते सुनते भावावेश में आ रहे हैं। जब हिरण्यकशिपु का वध हुआ, तब नृसिंह की रुद्र मूर्ति देख और उनका सिंहनाद सुनकर ब्रह्मादि देवताओं ने प्रलय की आशंका से प्रह्लाद को ही उनके पास भेज दिया। प्रह्लाद बालक की तरह स्तव कर रहे है। भक्तवत्सल नृसिंह बड़े प्रेम से प्रह्लाद की देह पर जीभ फिरा रहे हैं। 'अहा! भक्त पर कैसा प्यार है।' कहते हुए श्रीरामकृष्ण भावसमाधि में लीन हो गए। देह निःस्पन्द हो गयी है, आँखो की कोरों में प्रेमाश्रु दिखायी पड़ रहे है। भाव का उपशम हो जाने पर श्रीरामकृष्ण उसी छोटे तख्त पर जा बैठे। मणि फर्श पर उनके चरणों के पास बैठे। श्रीरामकृष्ण उनसे बातचीत कर रहे हैं। ईश्वर के मार्ग पर रहकर जो लोग स्त्रीसंग करते हैं, उनके प्रति श्रीरामकृष्ण घृणा और क्रोध प्रकट कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – लाज भी नहीं आती – लड़के हो गए फिर भी स्त्रीसंग! घृणा भी नही होती, – पशुओं का-सा व्यवहार! लार, खून, मल, मूत्र – इन पर घृणा भी नहीं होती! जो ईश्वर के पादपद्मों की चिन्ता करता है, उसे परम सुन्दरी स्त्री भी चिताभस्म के समान जान पड़ती हैं। जो शरीर नही रहेगा, जिसके भीतर कृमि, क्लेद, श्लेष्मा – सब तरह की नापाक चीजें भरी हुई हैं, उसी को लेकर आनन्द! लज्जा भी नहीं आती!

मणि चुपचाप सिर झुकाए हुए हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे – "उनके प्रेम का एक बिन्दु भी यदि किसी को मिल गया तो कामिनी-कांचन अत्यन्त तुच्छ जान पड़ते हैं। जब मिश्री का शरबत मिल जाता है, तब गुड़ का शरबत नहीं सुहाता। व्याकुल होकर

उनसे प्रार्थना करने पर, उनके नामगुण का सदा कीर्तन करने पर, क्रमश: उन पर वैसा ही प्यार हो जाता है।''

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो कमरे के भीतर नाचते हुए टहलने और गाने लगे –

(भावार्थ) – ''सुरधुनी के तट पर कौन हरिनाम ले रहा है? शायद प्रेमदाता नित्यानन्द आए हैं। उनके बिना प्राण कैसे शीतल हों?''

करीब दस बजे होंगे। रामलाल ने कालीमन्दिर की नित्यपूजा समाप्त कर दी है। श्रीरामकृष्ण माता के दर्शन करने के लिए कालीमन्दिर जा रहे हैं। साथ मणि भी हैं। मन्दिर में प्रवेश कर श्रीरामकृष्ण आसन पर बैठ गए। माता के चरणों पर दो-एक फूल उन्होंने अर्पित किए। अपने मस्तक पर फूल रखकर ध्यान कर रहे हैं। अब गीत गाकर माता की स्तुति करने लगे –

''हे शंकरि, मैंने सुना है तुम्हारा नाम भवहरा भी है। इसीलिए माँ, मैंने तुम्हें अपना भार दे दिया है, – तुम तारो चाहे न तारो।' ...

श्रीरामकृष्ण कालीमन्दिर से लौटकर अपने कमरे के दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में बैठे। दिन के दस बजे का समय होगा। अब भी देवताओं का भोग या भोग-आरती नहीं हुई। माता काली और श्रीराधाकान्त के प्रसादी फल-मूल आदि से कुछ लेकर श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा जलपान किया। राखाल आदि भक्तो को भी थोड़ा थोड़ा प्रसाद मिल चुका है।

श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए राखाल स्माइल की 'सेल्फ-हेल्प? (Smile's Self-help) पढ़ रहे हैं – लार्ड अर्स्किन (Lord Erskine) के सम्बन्ध में।

श्रीरामकृष्ण (मास्टर से) – इसमें क्या लिखा है?

मास्टर – साहब फल की आकांक्षा न करके कर्तव्य-कर्म करते थे – यही लिखा है। निष्काम-कर्म।

श्रीरामकृष्ण – तब तो अच्छा है। परन्तु पूर्ण ज्ञान का लक्षण है कि एक भी पुस्तक साथ न रहेगी। जैसे शुकदेव – उनका सब कुछ जिह्वा पर।

''पुस्तकों और शास्त्रों में शक्कर के साथ बालू भी मिली हुई है। साधु शक्कर भर का हिस्सा ले लेता है, बालू छोड़ देता है। साधु सार पदार्थ लेता है।''

शुकदेवादि का नाम लेकर क्या ठाकुर अपनी अवस्था समझाना चाहते है?

वैष्णवचरण कीर्तनिया (कीर्तन गानेवाले) आये हुए हैं; उन्होंने 'सुबोल-मिलन' नाम का कीर्तन गाकर सुनाया।

कुछ देर बाद रामलाल ने थाली में श्रीरामकृष्ण के लिए प्रसाद ला दिया। प्रसाद पाकर श्रीरामकृष्ण थोड़ा विश्राम करने लगे।

रात में मणि नौबतखाने में सोये। श्रीमाताजी जब श्रीरामकृष्ण की सेवा के लिए आती थीं तब इसी नौबतखाने में रहती थीं। कुछ मास हुए वे कामारपुकुर गयी हैं।

परिच्छेद ६३

ईश्वरदर्शन के उपाय

(१)

श्रीरामकृष्ण मणि के साथ पश्चिमवाले गोल बरामदे में बैठे हैं। सामने दक्षिणवाहिनी भागीरथी है। पास ही कनेर, बेला, जूही, गुलाब, कृष्णचूड़ा आदि अनेक प्रकार के फूले हुए पेड़ हैं। दिन के दस बजे होंगे।

आज रविवार, अगहन की कृष्णा द्वितीया है – १६ दिसम्बर १८८३।

श्रीरामकृष्ण मणि को देख रहे हैं और गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "माँ तारा, मुझे तारना होगा, मैं शरणागत हूँ। पिंजड़े के पक्षी जैसी मेरी दशा हो रही है। मैंने असंख्य अपराध किए हैं। मैं ज्ञानहीन हूँ। मैं माया में मोहित हुआ व्यर्थ भटकता फिर रहा हूँ। बछड़ा खो जाने पर गाय की जो दशा होती है, वही दशा मेरी भी है।"

सीता की तरह व्याकुलता

श्रीरामकृष्ण – क्यों? – पिंजड़े की चिड़िया की तरह क्यों होगे? छि:!"

कहते ही कहते भावावेश में आ गए। शरीर, मन. सब स्थिर है; आँखों से धारा बह चली है।

कुछ देर बाद कह रहे हैं, "माँ, सीता की तरह कर दो। बिलकुल सब भूल गयी हैं – देह का ख्याल नहीं; हाथ, पैर, स्तन, योनि – किसी का होश नहीं! एकमात्र चिन्ता – 'राम कहाँ!' "

किस तरह व्याकुल होने पर ईश्वरलाभ होता है, मणि को इसकी शिक्षा देने के लिए ही मानो श्रीरामकृष्ण के मन में सीता का उद्दीपन हुआ था। सीता राममयजीविता थीं, – श्रीरामचन्द्र की चिन्ता में ही वे पागल हो रही थीं, – इतनी प्रिय वस्तु जो देह है उसे भी वे भूल गयी थीं!

दिन के तीसरे प्रहर के चार बजे का समय है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ उसी कमरे में बैठे हुए हैं। जनाई के मुखर्जीबाबू आए हुए हैं, – ये श्री प्राणकृष्ण के आत्मीय हैं। उनके

साथ एक शास्त्रज्ञ ब्राह्म मित्र हैं। मणि, राखाल, लाटू, हरीश, योगीन्द्रादि भक्त भी हैं।

योगीन्द्र दक्षिणेश्वर के सावर्ण चौधरियों के यहाँ के हैं। ये आजकल प्राय: रोज दिन ढलने पर श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने आते हैं और रात को चले जाते हैं। योगीन्द्र ने अभी विवाह नहीं किया।

मुखर्जी (प्रणाम करके) – आपके दर्शन से बड़ा आनन्द हुआ।

श्रीरामकृष्ण – वे सभी के भीतर हैं, वही सोना सब के भीतर है, कहीं प्रकाश अधिक है। संसार में उस सोने पर बहुत मिट्टी पड़ी रहती है।

मुखर्जी (सहास्य) – महाराज, ऐहिक और पारमार्थिक में अन्तर क्या है?

श्रीरामकृष्ण – साधना के समय 'नेति' 'नेति' करके त्याग करना पड़ता है। उन्हे पा लेने पर समझ में आता है, सब कुछ वही हुए हैं।

"जब श्रीरामचन्द्र को वैराग्य हुआ, तब दशरथ को बड़ी चिन्ता हुई। वे वशिष्ठजी की शरण में गए, जिससे राम संसार का त्याग न करें। वशिष्ठजी ने श्रीरामचन्द्र के पास जाकर देखा, वे विमनस्क हुए बैठे हैं – अन्तर तीव्र वैराग्य से भरा हुआ है। वशिष्ठजी ने कहा, 'राम, तुम संसार का त्याग क्यों करोगे? संसार क्या कोई उनसे अलग वस्तु है? मेरे साथ विचार करो।' राम ने देखा, संसार भी उसी परब्रह्म से हुआ है, इसलिए चुपचाप बैठे रहे।

"जैसे जिस चीज से मट्ठा होता है, उसी से मक्खन भी होता है। अतएव मट्ठे का ही मक्खन और मक्खन का ही मट्ठा कहना चाहिए। बड़ी कठिनाइयो से मक्खन उठा लेने पर (अर्थात् ब्रह्मज्ञान होने पर) देखोगे, मक्खन रहने से मट्ठा भी है; जहाँ मक्खन है वहीं मट्ठा है। ब्रह्म है, इस ज्ञान के रहने से जीव, जगत्, चतुर्विंशति तत्त्व भी हैं।

"ब्रह्म क्या वस्तु है, यह कोई मुँह से नहीं कह सकता। सब वस्तुएँ जूठी हो गयी हैं, (अर्थात् मुँह से कही जा चुकी हैं) परन्तु ब्रह्म क्या है, यह कोई मुँह से नहीं कह सका, इसीलिए वह जूठा नही हुआ। यह बात मैंने विद्यासागर से कही थी। विद्यासागर सुनकर बड़े प्रसन्न हुए।

"विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते भी यह ब्रह्मज्ञान नहीं होता। कामिनी-कांचन का भाव जब मन में बिलकुल न रहेगा, तब होगा। पार्वतीजी ने पर्वतराज से कहा, 'पिताजी, अगर आप ब्रह्मज्ञान चाहते हैं तो साधुओं का संग कीजिए।'"

क्या श्रीरामकृष्ण के कहने का तात्पर्य यही है कि मनुष्य चाहे संसारी हो या संन्यासी, कामिनी-कांचन में मग्न रहने पर उसे ब्रह्मज्ञान नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण फिर मुखर्जी से कह रहे हैं –

"तुम्हारे धन-सम्पत्ति है फिर भी तुम ईश्वर को भी पुकारते हो, यह बहुत अच्छा है। गीता में है – जो लोग योगभ्रष्ट हो जाते हैं वही भक्त होकर धनी के घर जन्म लेते हैं।"

मुखर्जी (अपने मित्र से सहास्य) – "शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते।"

श्रीरामकृष्ण – वे चाहे तो ज्ञानी को संसार में भी रख सकते हैं। उन्हीं की इच्छा से यह जीव-प्रपंच हुआ है। वे इच्छामय हैं।

मुखर्जी (सहास्य) – उनकी फिर कैसी इच्छा? क्या उन्हें भी कोई अभाव है?

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – इसमें दोष ही क्या है? पानी स्थिर रहे तो भी वह पानी है और जीव-जगत क्या मिथ्या है? तरंगें उठने पर भी वह पानी ही है।

"साँप चुपचाप कुण्डली बाँधकर बैठा रहे, तो भी वह साँप है और तिर्यग्-गति हो, टेढ़ा-मेढ़ा रेंगने से भी वह साँप ही है।

"बाबू जब चुपचाप बैठे रहते हैं, तब वे जो मनुष्य हैं, वही मनुष्य वे उस समय भी हैं जब वे काम करते हैं।

"जीव-प्रपंच को अलग कैसे कर सकते हो? इस तरह वजन तो घट जाएगा! बेल के बीज और खोपड़ा निकाल देने से पूरे बेल का वजन ठीक नहीं उतरता।

"ब्रह्म निर्लिप्त है। सुगन्ध और दुर्गन्ध वायु से मिलती है, परन्तु वायु निर्लिप्त है। ब्रह्म और शक्ति अभेद है। उसी आद्याशक्ति से जीव-प्रपंच बना है।"

मुखर्जी – योगभ्रष्ट क्यों होते हैं?

श्रीरामकृष्ण – कहते हैं न 'जब मै गर्भ में था तब योग में था, पृथ्वी पर गिरते ही मिट्टी खायी। धाई ने तो मेरा नार काटा; पर यह माया की बेड़ी कैसे काटूँ?'

"कामिनी-कांचन ही माया है। मन से इन दोनो के जाते ही योग होता है। आत्मा – परमात्मा – चुम्बक पत्थर है, जीवात्मा एक सूई है – उनके खींच लेने ही से योग हो गया। परन्तु सूई में अगर मिट्टी लगी हुई हो, तो चुम्बक नहीं खींचता – मिट्टी साफ कर देने से फिर खींचता है। कामिनी-कांचन मिट्टी है, इसे साफ करना चाहिए।"

मुखर्जी – यह किस तरह साफ हो?

श्रीरामकृष्ण – उनके लिए व्याकुल होकर रोओ। वही जल मिट्टी पर गिरने से मिट्टी धुल जाएगी। जब खूब साफ हो जाएगी तब चुम्बक खींच लेगा। योग तभी होगा।

मुखर्जी – अहा! कैसी बात है!

श्रीरामकृष्ण – उनके लिए रो सकने पर उनके दर्शन होते है – समाधि होती है। योग में सिद्ध होने से ही समाधि होती है। रोने से कुम्भक आप ही आप होता है। – उसके बाद समाधि।

"एक उपाय और है – ध्यान। सहस्रार कमल (मस्तक) में विशेष रूप से शिव का अधिष्ठान है – उसका ध्यान। शरीर आधार है और मन-बुद्धि जल। इस पानी पर उस सच्चिदानन्द सूर्य का बिम्ब गिरता है! उसी बिम्बसूर्य का ध्यान करते करते उनकी कृपा से यथार्थ सूर्य के भी दर्शन होते हैं।

साधुसंग करो और आम-मुखतारी दे दो

"परन्तु संसारी मनुष्यों के लिए तो सदा ही साधुसंग की आवश्यकता है। यह सभी के लिए आवश्यक है; संन्यासियों के लिए भी। परन्तु संसारियों के लिए यह विशेषकर आवश्यक है। उन्हें रोग लगा ही हुआ है – कामिनी-कांचन में सदा ही रहना पड़ता है।"

मुखर्जी – जी हाँ, रोग लगा ही हुआ है।

श्रीरामकृष्ण – उन्हें आम-मुखतारी दे दो – वे जो चाहे सो करें। तुम बिल्ली के बच्चे की तरह उन्हें पुकारते भर रहो – व्याकुल होकर। उसकी माँ उसे चाहे जहाँ रखे – वह कुछ भी नहीं जानता; – कभी बिस्तर पर रखती है तो कभी रसोईघर में!

मुखर्जी – गीता आदि शास्त्र पढ़ना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण – केवल पढ़ने-सुनने से क्या होगा? किसी ने दूध का नाम मात्र सुना है, किसी ने दूध देखा है और किसी ने दूध पिया है। ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं और उनसे वार्तालाप भी किया जा सकता है।

"पहले प्रवर्तक है – वह पढ़ता-सुनता है। उसके बाद साधक हैं, – उन्हें पुकारता है, ध्यान-चिन्तन और नामगुण-कीर्तन करता है। इसके बाद सिद्ध – उसे हृदय में उनका अनुभव हुआ है, उनके दर्शन हुए हैं। इसके बाद है सिद्ध का सिद्ध – जैसे चैतन्यदेव की अवस्था – कभी वात्सल्य और कभी मधुर भाव।"

मणि, राखाल, योगीन्द्र, लाटू आदि भक्तगण ये सब देवदुर्लभ तत्त्वपूर्ण कथाएँ आश्चर्यचकित होकर सुन रहे हैं।

अब मुखर्जी और उनके साथवाले विदा होंगे। वे सब प्रणाम करके उठ खड़े हुए। श्रीरामकृष्ण भी, शायद उन्हें सम्मान दिखाने के उद्देश्य से खड़े हो गये।

मुखर्जी (सहास्य) – आपके लिए उठना और बैठना!

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – उठने और बैठने में हानि क्या है? पानी स्थिर होने पर भी पानी है और हिलने-डुलने पर भी पानी ही है। आँधी में जूठी पत्तल, हवा चाहे जिस ओर उड़ा ले जाय। मैं यन्त्र हूँ, वे यन्त्री हैं।

(२)

श्रीरामकृष्ण का दर्शन और वेदान्ततत्त्वों की गूढ़ व्याख्या

जनाई के मुखर्जी चले गए। मणि सोच रहे हैं, वेदान्तदर्शन के मत से सब स्वप्नवत् है। तो क्या जीव, जगत्, मैं – यह सब मिथ्या है?

मणि ने थोड़ा-बहुत वेदान्त पढ़ा है। फिर जिनके विचार मानो वेदान्त की ही अस्फुट प्रतिध्वनि है, उन कान्ट, हेगेल आदि जर्मन पण्डितों के भी कुछ ग्रन्थ पढ़े हैं।

परन्तु श्रीरामकृष्ण ने दुर्बल मानव की तरह विचार के द्वारा ज्ञान प्राप्त नहीं किया है, उन्हें तो स्वयं जगज्जननी ने सब कुछ दर्शन करा दिया है। मणि इसी के बारे में सोच रहे हैं।

कुछ ही देर बाद श्रीरामकृष्ण मणि के साथ अकेले पश्चिमवाले गोल बरामदे मे बातचीत कर रहे है। सामने गंगाजी कलकल नाद करती हुई दक्षिण की ओर बह रही हैं। शीत ऋतु है। नैऋत्य दिशा में सूर्यनारायण अभी भी दिखायी दे रहे है। जिनका जीवन वेदमय है, जिनके श्रीमुख से निकली वाणी वेदान्तवाक्य है, जिनके श्रीमुख से स्वयं भगवान् ही बोलते हैं, जिनके वचनरूपी अमृत से वेद, वेदान्त, श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थो का निर्माण हुआ है, वही अहेतुककृपासिन्धु पुरुष गुरुरूप धारण कर वार्तालाप कर रहे हैं।

मणि – क्या संसार मिथ्या है?

श्रीरामकृष्ण – मिथ्या क्यों है? वह सब विचार की बात है।

"पहले-पहल 'नेति' 'नेति' विचार करते समय, वे न जीव है, न जगत् है, न चौबीस तत्त्व हैं, ऐसा हो जाता है, – यह सब स्वप्नवत् हो जाता है। इसके बाद अनुलोम विलोम होता है, तब वही जीव-जगत् हुए है, यह ज्ञान हो जाता है।

"तुम एक-एक करके सीढ़ियों से छत पर गए। परन्तु जब तक तुम्हें छत का ज्ञान है, तब तक सीढ़ियों का ज्ञान भी है। जिसे ऊँचे का ज्ञान है उसे नीचे का भी ज्ञान है।

"फिर छत पर चढ़कर तुमने देखा, जिस चीज से छत बनी हुई है – ईंट, चूना, मसाला – उसी चीज से सीढ़ियाँ भी बनी हैं।

"और जैसे बेल की बात कही थी।

"जिसका 'अटल' है, उसका 'टल' भी है।

" 'मैं' नहीं जाने का। 'मैं-घट' जब तक है, तब तक जीव-प्रपंच भी है। उन्हें प्राप्त कर लेने पर देखा जाता है, जीव-प्रपंच वही हुए हैं। – केवल विचार से ही नहीं होता।

"शिव की दो अवस्थाएं हैं। जब वे समाधिस्थ हैं – महायोग मे बैठे हुए हैं – तब आत्माराम है। फिर जब उस अवस्था से उतर आते हैं – थोड़ासा 'मैं' रहता है – तब 'राम राम' कहकर नृत्य करते हैं।"

क्या शिव की अवस्था का वर्णन कर श्रीरामकृष्ण अपनी ही अवस्था सूचित कर रहे हैं?

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण जगन्माता का नाम और उनका चिन्तन कर रहे हैं। भक्तगण भी निर्जन में जाकर अपना अपना ध्यान-जप करने लगे। इधर कालीमाई के मन्दिर में, श्रीराधाकान्तजी के मन्दिर में और बारहों शिवालयों में आरती होने लगी।

आज कृष्णपक्ष की द्वितीया है। सन्ध्या के कुछ समय बाद चन्द्रोदय हुआ। वह चाँदनी, मन्दिरशीर्ष, चारों ओर के पेड़-पौधे और मन्दिर के पश्चिम ओर भागीरथी के वक्ष:स्थल पर पड़कर अपूर्व शोभा धारण कर रही है। इस समय उसी पूर्वपरिचित कमरे

में श्रीरामकृष्ण बैठे हुए हैं। फर्श पर मणि बैठे हुए हैं। शाम होते होते वेदान्त के सम्बन्ध की जो बात मणि ने उठायी थी उसी के बारे में श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – संसार मिथ्या क्यों होने लगा? यह सब विचार की बात है। उनके दर्शन हो जाने पर ही समझ में आता है कि जीव-प्रपंच सब वही हुए हैं।

"मुझे माँ ने कालीमन्दिर में दिखलाया कि माँ ही सब कुछ हुई हैं। दिखाया, सब चिन्मय है। प्रतिमा चिन्मय है! वेदी चिन्मय है! अर्घ्यपात्र चिन्मय है! चौखट, संगमर्मर पत्थर – सब कुछ चिन्मय है!

"मन्दिर के भीतर मैंने देखा, सब मानो रस से सराबोर हैं – सच्चिदानन्द-रस से।

"कालीमन्दिर के सामने एक दुष्ट आदमी को देखा – परन्तु उसके भीतर भी उनकी शक्ति जाज्वल्यमान देखी!

"इसीलिए तो मैंने बिल्ली को उनके भोग की पूड़ियाँ खिलायी थीं। देखा, माँ ही सब कुछ हुई हैं। - बिल्ली भी। तब खजांची ने मथुरबाबू को लिखा कि भट्टाचार्य महाशय भोग की पूड़ियाँ बिल्लियों को खिलाते हैं। मथुरबाबू मेरी अवस्था समझते थे। चिट्ठी के उत्तर में उन्होंने लिखा, 'वे जो कुछ करें, उसमें कुछ बाधा न देना।'

"उन्हें पा जाने पर यह सब ठीक ठीक दीख पड़ता है; वही जीव, जगत्, चौबीसों तत्त्व – यह सब हुए हैं।

"परन्तु, यदि वे 'मैं' को बिलकुल मिटा दें, तब क्या होता है, यह मुँह से नहीं कहा जा सकता। जैसे रामप्रसाद ने कहा है – 'तब तुम अच्छी हो या मैं अच्छा हूँ यह तुम्हीं समझोगी।'

"वह अवस्था भी मुझे कभी कभी होती है।

"विचार करने से एक तरह का दर्शन होता है और जब वे दिखा देते हैं तब एक दूसरे तरह का।"

□□□

परिच्छेद ६४

जीवनोद्देश्य – ईश्वरदर्शन

दूसरे दिन सोमवार, १७ दिसम्बर १८८३, सबेरे आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण उसी कमरे में बैठे हुए हैं। राखाल, लाटू आदि भक्त भी हैं। मणि फर्श पर बैठे हैं। मधु डाक्टर भी आये हुए हैं। वे श्रीरामकृष्ण के पास उसी छोटी खाट पर बैठे है। मधु डाक्टर वयोवृद्ध हैं – श्रीरामकृष्ण को कोई बीमारी होने पर प्राय: ये आकर देख जाया करते हैं। स्वभाव के बड़े रसिक हैं।

श्रीरामकृष्ण – बात है सच्चिदानन्द पर प्रेम। कैसा प्रेम? – ईश्वर को किस तरह प्यार करना चाहिए? गौरी पण्डित कहता था, राम को जानना हो तो सीता की तरह होना चाहिए। भगवान् को जानने के लिए भगवती की तरह होना चाहिए। भगवती ने शिव के लिए जैसी कठोर तपस्या की थी, वैसी ही तपस्या करनी चाहिए। पुरुष को जानने का अभिप्राय हो तो प्रकृतिभाव का आश्रय लेना पड़ता है – सखीभाव, दासीभाव, मातृभाव।

"मैंने सीतामूर्ति के दर्शन किए थे। देखा, सब मन राम में ही लगा हुआ है। योनि, हाथ, पैर, कपड़े-लत्ते, किसी पर दृष्टि नहीं है। मानो जीवन ही राममय है – राम के बिना रहे, राम को बिना पाए, जी नही सकती।"

मणि – जी हाँ, जैसे पगली!

श्रीरामकृष्ण – उन्मादिनी! – अहा! ईश्वर को प्राप्त करना हो तो पागल होना पड़ता है।

"कामिनी-कांचन पर मन के रहने से नहीं होता। कामिनी के साथ रमण - इसमें क्या सुख है? ईश्वरदर्शन होने पर रमण सुख से करोड़गुना आनन्द होता है। गौरी कहता था, महाभाव होने पर शरीर के सब छिद्र – रोमकूप भी – महायोनि हो जाते हैं। एक-एक छिद्र में आत्मा के साथ आत्मा का रमण-सुख होता है!

"व्याकुल होकर उन्हें पुकारना चाहिए। गुरु के श्रीमुख से सुन लेना चाहिए कि वे क्या करने से मिलेंगे।

"गुरु तभी मार्ग बतला सकेंगे जब वे स्वयं पूर्णज्ञानी होंगे। पूर्णज्ञान होने पर वासना चली जाती है। पाँच वर्ष के बालक का-सा स्वभाव हो जाता है। दत्तात्रेय और जड़भरत, ये बालस्वभाव के थे।"

मणि – जी हाँ, इनके बारे में लोगों को ज्ञात है, पर इनके अलावा और भी कितने ही ज्ञानी इनकी तरह के हो गए होंगे।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ज्ञानी की सब वासना चली जाती है। – जो कुछ रह जाती है, उसमें कोई हानि नहीं होती। पारस पत्थर के छू जाने पर तलवार सोने की हो जाती है, फिर उस तलवार से हिंसा का काम नहीं होता। इसी तरह ज्ञानी में कामक्रोध का आकार मात्र रहता है, – नाममात्र – उससे कोई अनर्थ नहीं होता।

मणि – आप जैसा कहा करते हैं, ज्ञानी तीनों गुणों से परे हो जाता है। सत्त्व, रज, और तम – किसी गुण के वश में वह नहीं रहता। ये तीनों गुण डकैत हैं।

श्रीरामकृष्ण – इस बात की धारणा करनी चाहिए।

मणि – पूर्णज्ञानी संसार में शायद तीन-चार मनुष्यों से अधिक न होंगे।

श्रीरामकृष्ण – क्यों? पश्चिम के मठों में तो बहुत से साधुसंन्यासी दीख पड़ते हैं।

मणि – जी, इस तरह का संन्यासी तो मैं भी हो जाऊँ!

इस बात पर श्रीरामकृष्ण कुछ देर तक मणि की ओर देखते रहे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – क्या? सब त्यागकर?

मणि – माया के बिना गए क्या होगा? माया को जीत न पाया तो केवल संन्यासी होकर क्या होगा?

सब लोग कुछ समय तक चुप रहे।

त्रिगुणातीत भक्त बालक के समान

मणि – अच्छा त्रिगुणातीत भक्ति किसे कहते हैं?

श्रीरामकृष्ण – उस भक्ति के होने पर भक्त सब चिन्मय देखता है। चिन्मय श्याम, चिन्मय धाम – भक्त भी चिन्मय – सब चिन्मय! ऐसी भक्ति कम लोगों की होती है।

डाक्टर मधु (सहास्य) – त्रिगुणातीत भक्ति, अर्थात् भक्त किसी गुण के वश नहीं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ, जैसे पाँच साल का लड़का – किसी गुण के वश नहीं।

दोपहर को, भोजन के बाद, श्रीरामकृष्ण थोड़ा विश्राम कर रहे हैं। श्री मणिलाल मल्लिक ने आकर प्रणाम किया; फिर जमीन पर बैठ गए। मणि भी जमीन पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण लेटे लेटे ही मणि मल्लिक के साथ बीच बीच में एक एक बात कह रहे हैं।

मणि मल्लिक – आप केशव सेन को देखने गए थे?

श्रीरामकृष्ण – हाँ। अब वे कैसे हैं?

मणि मल्लिक – रोग कुछ घटता हुआ नहीं दीख पड़ता।

श्रीरामकृष्ण – मैंने देखा, बड़ा राजसिक है। मुझे बड़ी देर तक बैठा रखा, तब भेंट

हुई।

श्रीरामकृष्ण उठकर बैठ गए और भक्तों के साथ बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – मैं 'राम राम' कहकर पागल हो गया था। संन्यासी के देवता रामलला को लेकर घूमता फिरता था – उसे नहलाता था, खिलाता था, सुलाता था। जहाँ कहीं जाता, साथ ले जाता था। 'रामलला' 'रामलला' कहकर पागल हो गया था।

□□□

परिच्छेद ६५

भक्तों के साथ

(१)

श्रीकृष्णभक्ति

श्रीरामकृष्ण सदा ही समाधिमग्न रहते हैं; केवल राखाल आदि भक्तों की शिक्षा के लिए उन्हें लेकर व्यस्त रहते हैं – जिससे उन्हें चैतन्य प्राप्त हो।

वे अपने कमरे के पश्चिमवाले बरामदे में बैठे हैं। प्रात:काल का समय, मंगलवार, १८ दिसम्बर १८८३ ई.। स्वर्गीय देवेन्द्रनाथ ठाकुर की भक्ति और वैराग्य की बात पर वे उनकी प्रशंसा कर रहे हैं। राखाल आदि बालक भक्तों से वे कह रहे हैं, – "वे सज्जन व्यक्ति है। परन्तु जो गृहस्थाश्रम में प्रवेश न कर बचपन से ही शुकदेव आदि की तरह दिनरात ईश्वर का चिन्तन करते हैं, कौमार अवस्था में वैराग्यवान् हैं, वे धन्य हैं।

"गृहस्थ की कोई न कोई कामना-वासना रहती ही है, यद्यपि उसमें कभी कभी भक्ति – अच्छी भक्ति – दिखायी देती है। मथुरबाबू न जाने किस एक मुकदमे में फँस गए थे; मन्दिर में माँ काली के पास आकर मुझसे कहते हैं, 'बाबा, माँ को यह अर्घ्य दीजिए न!' मैंने उदार मन से दिया। परन्तु कैसा विश्वास है कि मेरे देने से ही ठीक होगा।

"रति की माँ की इधर कितनी भक्ति है! अक्सर आकर कितनी सेवा-टहल करती है! रति की माँ वैष्णव है। कुछ दिनों के बाद ज्योंही देखा कि मैं माँ काली का प्रसाद खाता हूँ – त्योंही उसने आना बन्द कर दिया। कैसा एकांगी दृष्टिकोण है। लोगों को पहले-पहल देखने से पहचाना नहीं जाता।"

श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर पूर्व की ओर के दरवाजे के पास बैठे हैं। जाड़े का समय। बदन पर एक ऊनी चद्दर है। एकाएक सूर्य देखते ही समाधिमग्न हो गये। आँखें स्थिर! बाहर का कुछ भी ज्ञान नहीं।

क्या यही गायत्रीमन्त्र की सार्थकता है – 'तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि'?

बहुत देर बाद समाधि भंग हुई। राखाल, हाजरा, मास्टर आदि पास बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति) – समाधि या भाव-अवस्था की प्रेरणा प्रेम से ही होती है। श्यामबाजार में नटवर गोस्वामी के मकान पर कीर्तन हो रहा था – श्रीकृष्ण और

गोपियों का दर्शन कर मैं समाधिमग्न हो गया! ऐसा लगा कि मेरा लिंगशरीर (सूक्ष्मशरीर) श्रीकृष्ण के पैरों के पीछे पीछे जा रहा है।

"जोड़ासाँकू हरिसभा में उसी प्रकार कीर्तन के समय समाधिस्थ होकर बाह्यशून्य हो गया था। उस दिन देहत्याग की सम्भावना थी!"

श्रीरामकृष्ण स्नान करने गए। स्नान के बाद उसी गोपीप्रेम की ही बात कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि आदि के प्रति) – "गोपियों के केवल उस आकर्षण को लेना चाहिए। इस प्रकार के गाने गाया करो –

(भावार्थ) – "सखि, वह वन कितनी दूर है, जहाँ मेरे श्यामसुन्दर है। मैं तो और चल नहीं सकती।"

(भावार्थ) – "सखि, जिस घर में कृष्णनाम लेना कठिन है उस घर मे तो मैं किसी भी तरह नहीं जाऊँगी!"

(२)

यदु मल्लिक के मकान पर

श्रीरामकृष्ण ने राखाल के लिए सिद्धेश्वरी के नाम पर कच्चे नारियल और चीनी की मन्नत की है। मणि से कह रहे हैं, "तुम नारियल और चीनी का दाम दोगे।"

दोपहर के बाद श्रीरामकृष्ण राखाल, मणि आदि के साथ कलकत्ते के श्री सिद्धेश्वरी-मन्दिर की ओर गाड़ी पर सवार होकर आ रहे हैं। रास्ते में सिमुलियाबाजार से कच्चा नारियल और चीनी खरीदी गयी।

मन्दिर में आकर भक्तों से कह रहे हैं, "एक नारियल फोड़कर चीनी मिलाकर माँ को अर्पण करो।"

जिस समय मन्दिर में आ पहुँचे, उस समय पुजारी लोग मित्रों के साथ माँ काली के सामने ताश खेल रहे थे। यह देखकर श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं, "देखो, ऐसे स्थानों में भी ताश! यहाँ पर तो ईश्वर का चिन्तन करना चाहिए!"

अब श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के घर पर पधारे हैं। उनके पास अनेक बाबू लोग बैठे हुए हैं।

यदुबाबू कह रहे है, "पधारिए, पधारिए।" आपस में कुशल प्रश्न के बाद श्रीरामकृष्ण बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण (हँसकर) – तुम इतने चापलूसों को क्यों रखते हो?

यदु (हँसते हुए) – इसलिए कि आप उनका उद्धार करें। (सभी हँसने लगे।)

श्रीरामकृष्ण – चापलूस लोग समझते हैं कि बाबू उन्हें खुले हाथ धन दे देंगे; परन्तु बाबू से धन निकालना बड़ा कठिन काम है। एक सियार एक बैल को देख उसका फिर साथ

न छोड़े। बैल चरता फिरता है, सियार भी साथ साथ है। सियार ने समझा कि बैल का जो अण्डकोष लटक रहा है, वह कभी न कभी गिरेगा और उसे वह खायेगा! बैल कभी सोता है तो वह भी उसके पास ही लेटकर सो जाता है और जब बैल उठकर घूम-फिरकर चरता है तो वह भी साथ साथ रहता है। कितनेही दिन इसी प्रकार बीते, परन्तु वह कोष न गिरा, तब सियार निराश होकर चला गया! (सभी हँसने लगे।) इन चापलूसों की ऐसी ही दशा है!

यदुबाबू और उनकी माँ ने श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों को जलपान कराया।

□□□

परिच्छेद ६६

बिल्ववृक्ष और पंचवटी के नीचे

(१)

निराकार साधना

श्रीरामकृष्ण बेल के पेड़ के पास खड़े हुए मणि से बातचीत कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे।

आज बुधवार है, १९ दिसम्बर १८८३ अगहन की कृष्णापंचमी है।

इस बेल के पेड़ के नीचे श्रीरामकृष्ण ने साधना की थी। यह स्थान अत्यन्त निर्जन है। इसके उत्तर तरफ बारूदखाना और चारदीवार है। पश्चिम तरफ झाऊ के पेड़, जो हवा के झोकों से हृदय में उदासीनता भर देनेवाली सनसनाहट पैदा करते हैं। आगे हैं भागीरथी। दक्षिण की ओर पंचवटी दिखायी पड़ रही है। चारों ओर इतने पेड़-पत्ते हैं कि देवालय पूर्ण तरह से दिखायी नही आते।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – पर कामि·ी-कांचन का त्याग किये बिना कुछ होने का नहीं।

मणि – क्यो? वशिष्ठदेव ने तो श्रीरामचन्द्र से कहा था – राम, संसार अगर ईश्वर से अलग हो तो संसार का त्याग कर सकते हो।'

श्रीरामकृष्ण (जरा हँसकर) – वह रावणवध के लिए कहा था। इसीलिए राम को संसार में रहना पड़ा और विवाह भी करना पड़ा।

मणि काठ की मूर्ति की तरह चुपचाप खड़े रहे।

श्रीरामकृष्ण यह कहकर अपने कमरे में लौट जाने के लिए पंचवटी की ओर जाने लगे।

मणि – साधना करने पर क्या ज्ञान और भक्ति दोनों ही नहीं हो सकते?

श्रीरामकृष्ण – भक्ति लेकर रहने पर दोनों ही होते हैं। जरूरत होने पर वही ब्रह्मज्ञान देते हैं। खूब ऊँचा आधार हुआ तो एक साथ दोनों हो सकते हैं। ईश्वरकोटियों का होता है, – जैसे चैतन्यदेव का। जीवकोटियों की अलग बात है।

"आलोक (ज्योति) पाँच प्रकार के हैं। दीपक का प्रकाश, भिन्न भिन्न प्रकार की अग्नि का प्रकाश, चन्द्रमा का प्रकाश, सूर्य का प्रकाश तथा चन्द्र और सूर्य का सम्मिलित प्रकाश। भक्ति है चन्द्रमा और ज्ञान है सूर्य।

"कभी कभी आकाश में सूर्यास्त होने से पहले ही चन्द्र का उदय हो जाता है, अवतार आदि में भक्तिरूपी चन्द्रमा तथा ज्ञानरूपी सूर्य एकाधार में देखे जाते हैं।

"क्या इच्छा करने से ही सभी को एक ही समय ज्ञान और भक्ति दोनों प्राप्त होते हैं? आधारों की भी विशेषता है। कोई बाँस अधिक पोला रहता है और कोई कम पोला। सभी आधारों में ईश्वर की धारणा थोड़े ही होती है। सेर भर के लोटे में क्या दो सेर दूध आ सकता है?

मणि – क्यों, उनकी कृपा से यदि वे कृपा करें तब तो सूई के छेद से ऊँट भी पार हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु कृपा क्या यों ही होती है? भिखारी यदि एक पैसा माँगे तो दिया जा सकता है। परन्तु एकदम यदि रेल का भाड़ा माँग बैठे तो?

मणि चुपचाप खड़े हैं, श्रीरामकृष्ण भी चुप हैं। एकाएक बोल उठे, "हाँ, अवश्य, किसी किसी पर उनकी कृपा होने से हो सकता है, दोनों बातें हो सकती हैं।"

पंचवटी के नीचे आप मणि से फिर वार्तालाप करने लगे। दस बजे का समय होगा।

मणि – अच्छा, क्या निराकार की साधना नहीं होती?

श्रीरामकृष्ण – होती क्यों नही? वह रास्ता बड़ा कठिन है। पहले के ऋषि कठिन तपस्या करके तब कहीं ब्रह्मवस्तु का अनुभव कर पाते थे। ऋषियों को कितनी मेहनत करनी पड़ती थी – अपनी कुटिया से सुबह को निकल जाते थे। दिनभर तपस्या करके सन्ध्या के बाद लौटते थे। तब आकर कुछ फल-मूल खाते थे।

"इस साधना में विषयबुद्धि का लेशमात्र रहते सफलता न होगी। रूप, रस, गन्ध, स्पर्श – ये सब विषय मन में जब बिलकुल न रह जाएँ, तब मन शुद्ध होता है। वह शुद्ध मन जो कुछ है, शुद्ध आत्मा भी वही है। मन में कामिनी-कांचन बिलकुल न रह जाएँ।

"तब एक और अवस्था होती है – 'ईश्वर ही कर्ता हैं, मैं अकर्ता हूँ।' 'मेरे बिना काम नहीं चल सकता' ऐसा भाव तब बिलकुल नहीं रहता – सुख में भी और दुःख में भी।

"किसी मठ के साधु को दुष्टों ने मारा था। मार खाकर वह बेहोश हो गया। चेतना आने पर जब उससे पूछा गया, 'तुम्हें कौन दूध पिला रहा है?' तब उसने कहा था, 'जिन्होंने मुझे मारा था वे ही मुझे अब दूध पिला रहे हैं।' "

मणि – जी हाँ, यह जानता हूँ।

स्थित-समाधि और उन्मना-समाधि

श्रीरामकृष्ण – नहीं, सिर्फ जानने से ही न होगा, – धारणा भी होनी चाहीए।

"विषयचिन्तन मन को समाधिस्थ नहीं होने देता। विषयबुद्धि का पूरी तरह त्याग होने पर स्थित-समाधि हो जाती है। मेरी देह स्थित-समाधि में छूट सकती है, परन्तु मुझमें भक्ति और भक्तों के साथ कुछ रहने की वासना है। इसीलिए देह पर भी कुछ दृष्टि है।

"एक और है – उन्मना-समाधि। फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना। यह तुम समझे?"

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – फैले हुए मन को एकाएक समेट लेना, यह समाधि देर तक नहीं रहती। विषय-वासनाएँ आकर समाधिभंग कर देती है - योगी का योग भंग हो जाता है।

"उस देश मे दीवार के भीतर बिल में नेवला रहता है। बिल में जब रहता है, खूब आराम से रहता है। कोई कोई उसकी पूँछ में ईंट बाँध देते हैं; तब ईंट के कारण वह बिल से निकल पड़ता है। जब जब वह बिल के भीतर जाकर आराम से बैठने की चेष्टा करता है, तब तब ईंट के प्रभाव से बिल से निकल आना पड़ता है। विषयवासना भी ऐसी ही है, योगी को योगभ्रष्ट कर देती है।

"विषयी मनुष्यों की कभी कभी समाधि की अवस्था हो सकती है। सूर्योदय होने पर कमल खिल जाता है, परन्तु सूर्य मेघों से ढक जाने पर फिर वह मुँद जाता है। विषय मेघ हैं।"

प्रणाम करके मणि बेलतला की ओर जा रहे हैं।

बेलतला से लौटने में दोपहर हो गयी। विलम्ब देखकर श्रीरामकृष्ण बेलतला की ओर आ रहे हैं। मणि दरी, आसन, जल का लोटा लेकर लौट रहे हैं। पंचवटी के पास श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति) – मैं जा रहा था, तुम्हें खोजने के लिए। सोचा दिन इतना चढ़ आया, कहीं दीवार फाँदकर भाग तो नहीं गया! तुम्हारी आँखें उस समय जिस प्रकार देखी थीं उससे सोचा, कहीं नारायण शास्त्री की तरह भाग तो नहीं गया! उसके बाद फिर सोचा, नहीं, वह भागेगा नहीं, वह काफी सोच-समझकर काम करता है।

(२)

भीष्मदेव की कथा। योग कब सिद्ध होता है

फिर रात को श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातें कर रहे हैं। राखाल, लाटू, हरीश आदि हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि के प्रति) – अच्छा कोई कोई कृष्णलीला की आध्यात्मिक

व्याख्या करते हैं। तुम्हारी क्या राय है?

मणि – विभिन्न मतों के रहने से भी क्या हानि है? भीष्मदेव की कहानी आपने कही है। शरशय्या पर देहत्याग के समय उन्होंने कहा था, 'मैं रो क्यों रहा हूँ? वेदना के लिए नहीं। पर जब सोचता हूँ कि साक्षात् नारायण अर्जुन के सारथि बने थे, परन्तु फिर भी पाण्डवों को इतनी विपत्तियाँ झेलनी पड़ीं, तब लगता है कि उनकी लीला कुछ भी समझ नहीं सका, इसीलिए रो रहा हूँ।'

"फिर हनुमान की कथा आपने सुनायी है। हनुमान कहा करते थे, 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र आदि कुछ भी नहीं जानता, मैं केवल एक राम का चिन्तन करता हूँ।'

"आपने तो कहा है, दो चीजों के सिवाय और कुछ भी नहीं है, ब्रह्म और शक्ति। और आपने यह भी कहा है, ज्ञान (ब्रह्मज्ञान) होने पर वे दोनों एक ही जान पड़ते हैं। 'एकमेवाद्वितीयम्।'

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ठीक! वस्तु प्राप्त करना है सौ काँटेदार जंगल में से जाकर लो या अच्छे रास्ते से जाकर लो।

"अनेकानेक मत अवश्य हैं। नागा * कहा करता था, मतमतान्तर के कारण साधुसेवा न हुई। एक स्थान पर भण्डारा हो रहा था। अनेक साधु-सम्प्रदाय थे! सभी कहते हैं हमारी सेवा पहले हो, उसके बाद दूसरे सम्प्रदायों की। कुछ भी निश्चित न हो सका। अन्त में सभी चले गए और वेश्याओं को खिलाया गया!"

मणि – तोतापुरी महान् व्यक्ति थे।

श्रीरामकृष्ण – हाजरा कहते हैं मामूली। नही भाई, वादविवाद से कोई काम नही, सभी कहते हैं, 'मेरी घड़ी ठीक चल रही है।'

"देखो, नारायण शास्त्री को प्रबल वैराग्य हुआ था। उतना बड़ा पण्डित – स्त्री को छोड़कर लापता हो गया। मन से कामिनी-कांचन का सम्पूर्ण त्याग करने से तब योग सिद्ध होता है। किसी किसी में योगी के लक्षण दिखते हैं।

"तुम्हें षट्चक्र के बारे में कुछ बता दूँ। योगी षट्चक्र को भेद कर उनकी कृपा से उनका दर्शन करते हैं। षट्चक्र सुना है न?"

मणि – वेदान्त मत में सप्तभूमि।

श्रीरामकृष्ण – वेदान्त-मत नहीं, वेद-मत! षट्चक्र क्या है जानते हो? सूक्ष्म देह के भीतर ये सब पद्म हैं – योगीगण उन्हें देख सकते हें। जैसे मोम के बने वृक्ष के फल, पत्ते।

मणि – जी हाँ, योगीगण देख सकते हैं। एक पुस्तक में लिखा है – एक प्रकार की

---

* तोतापुरी

काँच होती है, जिसके भीतर से देखने पर बहुत छोटी चीजें भी बड़ी दिखती हैं। इसी प्रकार योग द्वारा वे सब सूक्ष्म पद्म देखे जाते हैं।

श्रीरामकृष्ण ने पंचवटी के कमरे में रहने के लिए कहा है। मणि उसी कमरे में रात बिताते हैं। प्रात:काल उस कमरे में अकेले गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "हे गौर, मैं साधन-भजनहीन हूँ। मैं हीन-दीन हूँ, मुझे छूकर पवित्र कर दो! हे गौर, तुम्हारे श्रीचरणों का लाभ होगा, इसी आशा में मेरे दिन बीत गये। हे गौर, तुम्हारे श्रीचरण तो अभी तक नहीं पा सका!"

एकाएक खिड़की की ओर ताककर देखते हैं, श्रीरामकृष्ण खड़े है। "मैं हीन-दीन हूँ, मुझे छूकर पवित्र कर दो" यह वाक्य सुनकर श्रीरामकृष्ण की आँखो में आँसू आ गए।

फिर दुसरा गाना हो रहा है –

(भावार्थ) – "मैं शंख का कुण्डल पहनकर गेरुआ वस्त्र पहनूँगी। मैं योगिनी के वेष में उसी देश में जाऊँगी जहाँ मेरे निर्दय हरि हैं।"

श्रीरामकृष्ण राखाल के साथ घूम रहे हैं।

(३)

'डुबकी लगाओ'

शुक्रवार, २१ दिसम्बर १८८३। प्रात:काल श्रीरामकृष्ण अकेले बेल के पेड़ के नीचे मणि के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। साधना के सम्बन्ध में अनेक गुप्त बातें तथा कामिनी-कांचन के त्याग की बातें हो रही हैं। फिर कभी कभी मन ही गुरु बन जाता है – ये सब बातें बता रहे हैं।

भोजन के बाद पंचवटी में आए हैं – वे सुन्दर पीताम्बर धारण किए हुए हैं। पंचवटी में दो-तीन वैष्णव बाबाजी आए हैं – एक बाउल साधु भी हैं।

तीसरे पहर एक नानकपन्थी साधु आए हैं। हरीश, राखाल भी हैं। साधु निराकारवादी हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें साकार का भी चिन्तन करने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण साधु से कह रहे हैं, "डुबकी लगाओ; ऊपर ऊपर तैरने से रत्न नहीं मिलते। ईश्वर निराकार हैं तथा साकार भी; साकार का चिन्तन करने से शीघ्र भक्ति प्राप्त होती है। तब फिर निराकार का चिन्तन किया जा सकता है। – जिस प्रकार चिट्ठी को पढ़कर फेंक देते हैं, और उसके बाद उसमें लिखे अनुसार काम करते हैं।"

परिच्छेद ६७

दक्षिणेश्वर में बलराम के पिता आदि के साथ

(१)

'बढ़े चलो।' अवतार-तत्व

शनिवार, २२ दिसम्बर १८८३ ई., सबेरे नौ बजे का समय होगा। बलराम के पिता आए हैं। राखाल, हरीश, मास्टर, लाटू यहाँ पर निवास कर रहे हैं। श्यामपुकुर के देवेन्द्र घोष आए हैं। श्रीरामकृष्ण दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में भक्तों के साथ बैठे हैं।

एक भक्त पूछ रहे हैं – भक्ति कैसे हो?

श्रीरामकृष्ण (बलराम के पिता आदि भक्तों के प्रति) – बढ़े चलो। सात फाटकों के बाद राजा विराजमान हैं। सब फाटक पार हो जाने पर ही तो राजा को देख सकोगे।

"मैंने चानक में अन्नपूर्णा की स्थापना के समय द्वारकाबाबू से कहा था, बड़े तालाब में गम्भीर जल में बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं। बंसी में लगाकर चारा डालो, उसकी सुगन्ध से बड़ी बड़ी मछलियाँ आ जाएगी। कभी कभी उछल-कूद भी करेंगी। प्रेमभक्ति मानो चारा!

"ईश्वर नरलीला करते हैं। मनुष्य रूप में वे अवतीर्ण होते हैं, जिस प्रकार श्रीकृष्ण, श्रीरामचन्द्र, श्रीचैतन्यदेव। मैंने केशव सेन से कहा था कि मनुष्य में ईश्वर का अधिक प्रकाश है। मैदान में छोटे छोटे गड्ढे रहते हैं; उन गड्ढों के भीतर मछली, केकड़े रहते हैं। मछली, केकड़े खोजना हो तो उन गड्ढों के भीतर खोजना होता है। ईश्वर को खोजना हो तो अवतारों के भीतर खोजना चाहिए।

"उस साढ़े तीन हाथ की मानवदेह में जगन्माता अवतीर्ण होती हैं। गीत में कहा है –

(भावार्थ) – " 'श्यामा माँ ने कैसी कल बनायी है। साढ़े तीन हाथ की कल के भीतर कितने ही तमाशे दिखा रही है। स्वयं कल के भीतर रहकर वह रस्सी पकड़कर उसे घूमाती है। कल कहती है कि मैं अपने आप ही घूम रही हूँ। वह नहीं जानती कि उसे कौन घूमा रहा है।'

'परन्तु ईश्वर को जानना हो, अवतार को पहचानना हो तो साधना की आवश्यकता है। तालाब में बड़ी बड़ी मछलियाँ हैं, उनके लिए चारा डालना पड़ता है। दूध में मक्खन

है, उसे मन्थन करना पड़ता है। राई में तेल है, उसे पेरना पड़ता है। मेहदी से हाथ लाल होता है, उसे पीसना पड़ता है।'

भक्त (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – अच्छा, वे साकार हैं या निराकार?

श्रीरामकृष्ण – ठहरो, पहले कलकत्ता तो जाओ, तभी तो जानोगे कि कहाँ है किले का मैदान, कहाँ एशियाटिक सोसायटी है और कहाँ बंगाल बैंक है।

"खड़दा ब्राह्मण-मुहल्ले में जाने के लिए पहले तो खड़दा पहुँचना ही होगा!

"निराकार साधना होगी क्यों नहीं? परन्तु बड़ी कठिन है। कामिनी-कांचन का त्याग हुए बिना नहीं होता! बाहर त्याग, फिर भीतर त्याग! विषयबुद्धि का लवलेश रहते काम नहीं बनेगा।

"साकार की साधना सरल है – परन्तु उतनी सरल भी नहीं है।

"निराकार साधना, ज्ञानयोग की साधना की चर्चा भक्तों के पास नहीं करनी चाहिए। बड़ी कठिनाई से उसे थोड़ीसी भक्ति प्राप्त हो रही है; उसके पास यह कहने से कि सब कुछ स्वप्नतुल्य है, उसकी भक्ति की हानि होती है।

"कबीरदास निराकारवादी थे। शिव, काली, कृष्ण को नहीं मानते थे। वे कहते थे, काली चावल-केला खाती है, कृष्ण गोपियों के हथेली बजाने पर बन्दर की तरह नाचते थे। (सभी हँस पड़े।)

"निराकार साधक मानो पहले दशभुजा का दर्शन करते हैं, उसके बाद चतुर्भुज का, उसके बाद द्विभुज गोपाल का और अन्त में अखण्ड ज्योति का दर्शन कर उसी में लीन होते हैं।

"कहा जाता है, दत्तात्रेय, जड़भरत ब्रह्मदर्शन के बाद नहीं लौटे।

"कहते हैं कि शुकदेव ने उस ब्रह्मसमुद्र की एक बूँद मात्र का आस्वादन किया था। समुद्र की तरंगों की उछल-कूद देखी थी, गर्जना सुनी थी, परन्तु समुद्र में डूबे न थे।

"एक ब्रह्मचारी ने कहा था, बद्रीकेदार के उस पार जाने से शरीर नहीं रहता। उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान के बाद फिर शरीर नहीं रहता। इक्कीस दिनों में मृत्यु हो जाती है।

"दीवाल के उस पार अनन्त मैदान है। चार मित्रों ने दीवाल के उस पार क्या है, यह देखने की चेष्टा की। एक-एक व्यक्ति दीवाल पर चढ़ता है; उस मैदान को देखकर 'हो हो' करके हँसता हुआ दूसरी ओर कूद जाता है। तीन व्यक्तियों ने कोई खबर न दी। सिर्फ एक ने खबर दी। ब्रह्मज्ञान के बाद भी उसका शरीर रहा, लोकशिक्षा के लिए – जैसे अवतार आदि का।

"हिमालय के घर में पार्वती ने जन्मग्रहण किया, और अपने अनेक रूप पिता को दिखाने लगीं। हिमालय ने कहा, 'बेटी, ये सब रूप तो देखे। परन्तु तुम्हारा एक ब्रह्मस्वरूप है – उसे एकबार दिखा दो।' पार्वती ने कहा, 'पिताजी, यदि तुम ब्रह्मज्ञान

चाहते हो तो संसार छोड़कर सत्संग करना पड़ेगा।'

"पर हिमालय किसी भी तरह संसार नहीं छोड़ते थे। तब पार्वतीजी ने एक बार अपना ब्रह्मस्वरूप दिखाया। देखते ही गिरिराज एकदम मूर्छित हो गए।

भक्तियोग

"यह जो कुछ कहा, सब तर्क-विचार की बाते हैं। 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' यही विचार है। सब स्वप्न की तरह है बड़ा कठिन मार्ग है। इस पथ में उनकी लीला स्वप्न जैसी मिथ्या बन जाती है। फिर 'मैं' भी उड़ जाता है। इस पथ में अवतार भी नहीं माना जाता। बड़ा कठिन है। ये सब विचार की बातें भक्तों को अधिक सुननी नहीं चाहिए।

"इसीलिए ईश्वर अवतीर्ण होकर भक्ति का उपदेश देते हैं – शरणागत होने के लिए कहते हैं। भक्ति से, उनकी कृपा से सभी कुछ हो जाता है – ज्ञान, विज्ञान सब कुछ होता है।

"वे लीला कर रहे हैं – वे भक्त के अधीन हैं। 'माँ भक्त की भक्तिरूपी रस्सी से स्वयं बँधी हुई हैं।'

"ईश्वर कभी चुम्बक बनते हैं, भक्त सूई होता है। फिर कभी भक्त चुम्बक और वे सूई होते हैं। भक्त उन्हें खींच लेते हैं – वे भक्तवत्सल, भक्ताधीन हैं।

"एक मत यह है कि यशोदा तथा अन्य गोपीगण पूर्वजन्म में निराकारवादी थीं। उससे उनकी तृप्ति न हुई, इसीलिए उन्होंने वृन्दावनलीला में श्रीकृष्ण को लेकर आनन्द किया। श्रीकृष्ण ने एक दिन कहा, 'तुम्हें नित्यधाम का दर्शन कराऊँगा, चलो, यमुना में स्नान करने चलें!' ज्योंही उन्होंने डुबकी लगायी – एकदम गोलोक का दर्शन! फिर उसके बाद अखण्ड ज्योति का दर्शन! तब यशोदा बोलीं, 'कृष्ण, ये सब और अधिक देखना नहीं चाहती, अब तेरे उसी मानवरूप का दर्शन करूँगी, तुझे गोदी में लूँगी, खिलाऊँगी!!'

"इसीलिए अवतार में उनका अधिक प्रकाश है। अवतार का शरीर रहते उनकी पूजा-सेवा करनी चाहिए। 'वह जो कोठरी के भीतर चोर-कोठरी है, भोर होते ही वह उसमें छिप जाएगा रे।'

"अवतार को सभी लोग नहीं पहचान सकते। देहधारण करने पर रोग, शोक, क्षुधा, तृष्णा सभी कुछ होता है, ऐसा लगता है मानो वे हमारी ही तरह हैं! राम सीता के शोध में रोये थे - 'पंचभूत के फन्दे में पड़कर ब्रह्म भी रोते हैं।'

"पुराण में कहा है, हिरण्याक्ष-वध के बाद वराह-अवतार बच्चों को लेकर रहने लगे – उन्हें स्तनपान करा रहे थे। (सभी हँसे।) स्वधाम में जाने का नाम तक नहीं। अन्त में शिव ने आकर त्रिशूल द्वारा उनके शरीर का विनाश किया, तब वे हँसते हुए स्वधाम में पधारे।"

(२)

गोपियों का प्रेम

तीसरा प्रहर है। भवनाथ आए हैं। कमरे में राखाल, मास्टर, हरीश आदि हैं।

श्रीरामकृष्ण (भवनाथ के प्रति) – अवतार पर प्रेम होने से ही हो गया। अहा, गोपियों का कैसा प्रेम था!

यह कहकर आप गोपियों के भाव में गाना गा रहे हैं –

(१) (भावार्थ) – "श्याम तुम प्राणों के प्राण हो ...।"

(२) (भावार्थ) – "सखि, मैं घर बिलकुल नहीं जाऊँगी ...।"

(३) (भावार्थ) – "उस दिन, जिस समय तुम वन जा रहे थे, मैं द्वार पर खड़ी थी। प्रिय, इच्छा होती है, गोपाल बनकर तुम्हारा भार अपने सिर पर उठा लूँ! ..."

श्रीरामकृष्ण – रास के बीच में जिस समय श्रीकृष्ण छिप गए, गोपिकाएँ एकदम पागल बन गयीं। एक वृक्ष को देखकर कहती हैं, 'तुम कोई तपस्वी होगे! श्रीकृष्ण को तुमने अवश्य ही देखा होगा! नहीं तो समाधिमग्न होकर क्यों खड़े हो?' तृणों से ढकी हुई पृथ्वी को देखकर कहती हैं, 'हे पृथ्वी, तुमने अवश्य ही उनके दर्शन किये हैं; नही तो तुम्हारे रोंगटे क्यों खड़े हुए हैं? अवश्य ही तुमने उनके स्पर्शसुख का उपभोग किया होगा! फिर माधवीलता को देखकर कहती हैं, 'हे माधवी, मुझे माधव ला दे!' गोपियों का कैसा प्रेमोन्माद है!

"जब अक्रूर आए और श्रीकृष्ण तथा बलराम मथुरा जाने के लिए रथ पर बैठे, तो गोपीगण रथ के पहिये पकड़कर कहने लगीं, 'जाने नहीं देंगे।' "

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण फिर गाना गा रहे हैं –

(भावार्थ) – "रथचक्र को न पकड़ो, न पकड़ो, क्या रथ चक्र से चलता है? इस चक्र के चक्री हरि हैं, जिनके चक्र से जगत् चलता है।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – ' "क्या रथ चक्र से चलता है' – ये बातें मुझे बहुत ही हृदयस्पर्शी लगती हैं। 'जिस चक्र से ब्रह्माण्ड घूमता है!' रथी की आज्ञा से सारथि चलता है!' "

परिच्छेद ६८

दक्षिणेश्वर में गुरुरूपी श्रीरामकृष्ण

(१)

समाधि में। ईश्वरदर्शन और परमहंस-अवस्था

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे के दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे में राखाल, लाटू, मणि, हरीश आदि भक्तो के साथ बैठे हुए हैं। दिन के नौ बजे का समय होगा। रविवार, २३ दिसम्बर १८८३। अगहन की कृष्णा नवमी है।

मणि को गुरुदेव के यहाँ रहते आज दस दिन पूरे हो जाएंगे।

श्री मनोमोहन कोन्नगर से आज सुबह आए हैं। श्रीरामकृष्ण के दर्शन और कुछ विश्राम करके आप कलकत्ता जाएंगे। हाजरा भी श्रीरामकृष्ण के पास बैठे है। नीलकण्ठ के देश के एक वैष्णव आज श्रीरामकृष्ण को गाना सुना रहे है। वैष्णव ने पहले नीलकण्ठ का गाना गाया –

(भावार्थ) – "श्रीगौरांग की सुन्दर देह तप्त-कांचन के समान है। वे नव-नटवर ही हो रहे है। परन्तु वे इस बार दूसरे ही स्वरूप से, अपने पहले के चिन्हों को छिपाकर नदिया में अवतीर्ण हुए है। कलिकाल का घोर अन्धकार दूर करने के लिए तथा उन्नत और उज्ज्वल प्रेमरस प्रकट करने के लिए तुम इस बार श्रीकृष्णावतार की नीली देह को महाभाव-स्वरूपिणी श्रीराधा की तप्त-कांचन जैसी उज्ज्वल देह से ढककर आए हो। तुम महाभाव में समारूढ़ हो, सात्त्विकादि तुममे लीन हो जाते है। उस भावास्वाद के लिए तुम जंगलों मे रोते फिरते हो। इससे प्रेम की बाढ़ हो आती है। तुम नवीन संन्यासी हो, अच्छे तीर्थों की खोज मे रहते हो, कभी तुम नीलाचल और कभी वाराणसी जाते हो, अयाचको को भी तुम प्रेम का दान करते हो, तुम्हारे इस कार्य में जातिभेद नहीं है।"

एक दूसरा गाना उन्होंने मानसपूजा के सम्बन्ध में गाया।

श्रीरामकृष्ण (हाजरा के प्रति) – यह गाना कैसा कैसा लगा।

हाजरा – यह साधक का नही है, – ज्ञानदीपक, ज्ञानप्रतिमा!

श्रीरामकृष्ण – मुझे तो कैसा कैसा लगा!

"पहले के गाने कैसे ठीक ठीक होते थे! पंचवटी में नागा के पास मैंने एक गाना

गाया था – 'जीवनसंग्राम के लिए तू तैयार हो जा, लड़ाई का सामान लेकर काल तेरे घर में प्रवेश कर रहा है।' एक और गाना – 'ऐ श्यामा, दोष किसी का नहीं है, मैं अपने ही हाथों द्वारा खोदे हुए गढ़े के पानी में डूबता हूँ।'

"नागा इतना ज्ञानी था, परन्तु इनका अर्थ बिना समझे ही रोने लगा था।

"इन सब गानों में कैसी यथार्थ बात हैं – नरकान्तकारी श्रीकान्त की चिन्ता करो, फिर तुम्हें भयंकर काल का भी भय न रह जाएगा।'

श्रीरामकृष्ण और विशिष्ट द्वैतवाद

"पद्मलोचन मेरे मुँह से रामप्रसाद का गाना सुनकर रोने लगा। पर था वह कितना विद्वान्!"

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण कुछ विश्राम कर रहे हैं। जमीन पर मणि बैठे हुए हैं। नौबतखाने में शहनाई का वाद्य सुनते हुए श्रीरामकृष्ण आनन्द कर रहे हैं।

फिर मणि को समझाने लगे, ब्रह्म ही जीव-जगत् हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – किसी ने कहा, अमुक स्थान पर हरिनाम नहीं है। उसके कहते ही मैंने देखा, वही सब जीव हुए हैं। मानो पानी के असंख्य बुलबुले – असंख्य जलबिम्ब!

"उस देश से बर्दवान आते आते दौड़कर एक बार मैदान की ओर चला गया – यह देखने के लिए कि यहाँ के जीव किस तरह खाते हैं और रहते हैं! जाकर देखा, मैदान में चींटियाँ रेंग रही हैं! सभी जगह चैतन्यमय है!"

हाजरा कमरे में आकर जमीन पर बैठ गए।

श्रीरामकृष्ण – अनेक प्रकार के फूल – तह के तह पँखुड़ियाँ – यह भी देखा! – छोटा बिम्ब और बड़ा बिम्ब।

ईश्वरीय रूप-दर्शन की ये सब बातें कहते कहते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो रहे हैं। कह रहे हैं, "मैं हुआ हूँ! मैं आया हूँ!"

यह बात कहकर ही एकदम समाधिस्थ हो गए। सब कुछ स्थिर हो गया।

बड़ी देर तक समाधि के आनन्द में मग्न रह लेने पर कुछ होश आ रहा है।

अब बालक की तरह हँस रहे हैं, हँस-हँसकर कमरे में टहल रहे हैं।

अद्भुत दर्शन के बाद आँखों से जैसे आनन्द-ज्योति निकलती है, श्रीरामकृष्ण की आँखों का भाव वैसा ही हो गया। सहास्य मुख, शून्य दृष्टि।

श्रीरामकृष्ण टहलते हुए कह रहे हैं –

"बटतल्ले के परमहंस को देखा था, इसी तरह हँसकर चल रहा था! – वही स्वरूप मेरा भी हो गया क्या?"

इस तरह टहलकर श्रीरामकृष्ण अपने छोटे तख्त पर जा बैठे और जगन्माता से

बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "खैर, मैं जानना भी नहीं चाहता! माँ, तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति बनी रहे।"

(मणि से) – "क्षोभ और वासना के जाने से ही यह अवस्था होती है।"

फिर माँ से कहने लगे – "माँ, पूजा तो तुमने उठा दी, परन्तु देखो, मेरी सब वासनाएँ चली न जाएँ! माँ, परमहंस तो बालक है – बालक को माँ चाहिए या नहीं? इसलिए तुम मेरी माँ हो, मै तुम्हारा बच्चा। माँ का बच्चा माँ को छोड़कर कैसे रहे?"

श्रीरामकृष्ण ऐसे स्वर से बातचीत कर रहे हैं कि पत्थर भी पिघल जाय। फिर माँ से कह रहे हैं – "केवल अद्वैत ज्ञान! थू थू! जब तक 'मैं' रखा है, तब तक 'तुम' हो। परमहंस तो बालक है; बालक को माँ चाहिए या नही?"

मणि आश्चर्यचकित होकर श्रीरामकृष्ण की यह देवदुर्लभ अवस्था देख रहे हैं। वे सोच रहे हैं – 'श्रीरामकृष्ण अहेतुक दयासिन्धु हैं। मुझमें विश्वास उत्पन्न हो, चैतन्य जागृत हो और जीवों को शिक्षा प्राप्त हो, इसीलिए गुरुरूपी श्रीरामकृष्ण की यह परमहंस अवस्था है!'

मणि और भी सोचते हैं – 'श्रीरामकृष्ण कहते हैं, अद्वैत – चैतन्य – नित्यानन्द। अद्वैतज्ञान होने पर चैतन्य प्राप्त होता है, तभी नित्यानन्द का लाभ होता है। श्रीरामकृष्ण की केवल अद्वैतज्ञान की नहीं – नित्यानन्द की अवस्था है। जगदम्बा के प्रेम में सदा विभोर हैं – मतवाले से!'

हाजरा श्रीरामकृष्ण की यह अवस्था देख हाथ जोड़कर कहने लगे – "धन्य है! धन्य है!"

श्रीरामकृष्ण हाजरा से कह रहे हैं – "तुम्हें विश्वास कहाँ है? तुम तो यहाँ उसी तरह हो जैसे जटिला और कुटिला व्रज में थीं, – लीला की पुष्टि के लिए।"

तीसरा प्रहर हुआ। मणि अकेले देवालय के निकट निर्जन में टहल रहे हैं और श्रीरामकृष्ण की इस अद्भुत अवस्था के बारे में सोच रहे हैं। सोच रहे हैं – 'श्रीरामकृष्ण ने ऐसा क्यों कहा कि क्षोभ और वासना के जाने से ही यह अवस्था होती है? ये गुरुरूपी श्रीरामकृष्ण कौन हैं? क्या भगवान् स्वयं ही हमारे लिए देहधारण कर आए हैं? श्रीरामकृष्ण तो कहते हैं कि ईश्वरकोटि-अवतार आदि के अलावा दूसरा कोई जड़समाधि, निर्विकल्प समाधि से लौट नहीं आ सकता'

परिच्छेद ६९

जगद्गुरु श्रीरामकृष्ण

(१)

गूढ़ बातें

आहुस्त्वामृषय: सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यास: स्वयं चैव ब्रवीषि मे।। (गीता १०।१३)

दूसरे दिन श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले में मणि के साथ एकान्त मे बातचीत कर रहे हैं। सोमवार, २४ दिसम्बर १८८३। अगहन की कृष्णा दशमी। सुबह के आठ बजे होंगे।

आज मणि का प्रभु के सत्संग में वास करने का ग्यारहवाँ दिन है। शीत ऋतु है। पूर्व गगन मे सूर्यनारायण अभी अभी उदित हुए हैं। झाऊतल्ले के पश्चिम ओर गंगाजी बह रही है। इस समय वे उत्तरवाहिनी हैं। ज्वार आयी है। चारों ओर वृक्ष और लताएँ हैं। थोड़ी ही दूर पर श्रीरामकृष्ण की साधना का स्थान – वह बिल्ववृक्ष – दिखायी दे रहा है। श्रीरामकृष्ण पूर्वाभिमुख हो वार्तालाप कर रहे है। मणि उत्तराभिमुख हो विनयपूर्वक सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की दाहिनी ओर पंचवटी और हंस-पुष्करिणी है। सूर्य के प्रकाश में मानो जग बिहँस रहा है। श्रीरामकृष्ण ब्रह्मज्ञान की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – निराकार भी सत्य है और साकार भी सत्य है।

"नागा उपदेश देता था; सच्चिदानन्द ब्रह्म कैसे हैं – जैसे अनन्त सागर है, ऊपर-नीचे, दाहिने-बायें, पानी ही पानी है। वह कारणसलिल है – स्थिर पानी है। कार्य के होने पर उसमें तरंगें उठने लगीं। सृष्टि, स्थिति और प्रलय यही कार्य है।

"फिर कहता था, विचार जहाँ पहुँचकर रुक जाय, वही ब्रह्म है। जैसे कपूर जलाने पर उसका सर्वांश जल जाता है, जरा भी राख नहीं रह जाती।

"ब्रह्म मन और वचन के परे हैं। नमक का पुतला समुद्र की थाह लेने गया था। लौटकर उसने खबर नहीं दी। समुद्र में गल गया।

"ऋषियों ने राम से कहा था, – 'राम, भरद्वाजादि तुम्हें अवतार कह सकते हैं, परन्तु हम लोग नहीं कहते। हम लोग शब्दब्रह्म की उपासना करते हैं। हम मनुष्य-स्वरूप

को नहीं चाहते।' राम कुछ हँसकर प्रसन्न हो उनकी पूजा लेकर चले गए।

"परन्तु नित्यता जिनकी है, लीला भी उन्हीं की है। जैसे छत और सीढ़ियाँ।

"ईश्वरलीला, देवलीला, नरलीला, जगत्-लीला। नरलीला में ही अवतार होता है। नरलीला कैसी है, जानते हो? जैसे बड़ी छत का पानी नल से जोर-शोर से गिर रहा हो। वही सच्चिदानन्द हैं - उन्हीं की शक्ति एक रास्ते से - नल के भीतर से आ रही है। केवल भरद्वाजादि बारह ऋषियों ने ही राम को पहचाना था कि ये अवतारी पुरुष हैं। अवतारी पुरुषों को सभी पहचान नहीं सकते।"

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – वे अवतीर्ण होकर भक्ति की शिक्षा देते हैं। अच्छा, मुझे तुम क्या समझते हो?

"मेरे पिता गया गए थे। वहाँ रघुवीर ने स्वप्न दिखलाया, मैं तेरा पुत्र बनकर जन्म लूँगा। पिता ने स्वप्न देखकर कहा, देव, मैं दरिद्र ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हारी सेवा कैसे करूँगा? रघुवीर ने कहा, सेवा हो जाएगी।

"दीदी – हृदय की माँ – पुष्प-चन्दन लेकर मेरे पैर पूजती थी। एक दिन उसके सिर पर पैर रखकर (मैंने) कहा, तेरी वाराणसी में ही मृत्यु होगी।

"मथुर बाबू ने कहा, 'बाबा, तुम्हारे भीतर और कुछ नहीं है, वही ईश्वर हैं। देह तो आवरण मात्र है, जैसे बाहर कद्दू का आकार है, परन्तु भीतर गूदा, बीज, कुछ भी नहीं है। तुम्हें देखा, मानो घूँघट डालकर कोई चला जा रहा है।'

"पहले ही से मुझे सब दिखा दिया जाता है। बटतल्ले में मैंने गौरांग के संकीर्तन का दल देखा था। उसमें शायद बलराम को देखा था और तुम्हें भी शायद देखा था।

"मैंने गौरांग का भाव जानना चाहा था। उसने दिखाया, उस देश में – श्यामबाजार में। पेड़ पर और चारदीवार पर आदमी ही आदमी – दिनरात साथ साथ आदमी! सात दिन शौच के लिए जाना भी मुश्किल हो गया! तब मैंने कहा, माँ, बस, अब रहने दो। इसीलिए अब भाव शान्त है।

"एक बार और आना होगा। इसीलिए पार्षदों को सब ज्ञान मैं नहीं देता। (हँसते हुए) तुम्हें अगर सब ज्ञान दे दें, तो फिर तुम लोग सहज ही मेरे पास क्यों आओगे?

"तुम्हें मैं पहचान गया, तुम्हारा चैतन्य-भागवत पढ़ना सुनकर। तुम अपने आदमी हो। एक ही सत्ता है, जैसे पिता और पुत्र। यहाँ सब आ रहे हैं, जैसे कल्मी की बेल, – एक जगह पकड़कर खींचने से सब आ जाता है। परस्पर सब आत्मीय हैं, जैसे भाई भाई। राखाल, हरीश आदि जगन्नाथ-दर्शन के लिए पुरी गए हैं, और तुम भी गए हो, तो क्या कभी ठहराव अलग अलग हो सकता है?

"जब तक तुम भूले हुए थे, अब अपने को पहचान सकोगे। वे गुरु के रूप में आकर जता देते हैं।

"नागे ने बाघ और बकरी की कहानी कही थी। एक बाघिन बकरियों के झुण्ड पर टूट पड़ी। किसी बहेलिये ने दूर से उसे देखकर मार डाला। उसके पेट में बच्चा था, वह पैदा हो गया। वह बच्चा बकरियों के बीच में बढ़ने लगा। पहले बच्चा बकरियों का दूध पीता था। इसके बाद जब कुछ बड़ा हुआ तब घास चरने लगा और बकरियों की तरह 'में में' करने लगा। धीरे धीरे वह बहुत बड़ा हो गया पर तब भी वह घास ही चरता और 'में में' करता। कोई जानवर जब आक्रमण करता, तब बकरों की तरह डरकर भागता! एक दिन एक भयंकर बाघ बकरियों पर टूट पड़ा। उसने आश्चर्य में आकर देखा, उनमें एक बाघ भी घास चर रहा है और उसे देखकर बकरियों के साथ साथ वह भी दौड़कर भागा। तब बकरियों से कुछ छेड़छाड़ न करके घास चरनेवाले उस बाघ को ही उसने पकड़ा। वह 'में में' करने लगा और भागने की कोशिश करता गया। तब बाघ उसे पानी के किनारे खींचकर ले गया और उससे कहा, 'इस पानी में अपना मुँह देख। हण्डी की तरह मेरा मुँह जितना बड़ा है, उतना ही बड़ा तेरा भी है।' फिर उसके मुँह में थोड़ासा माँस खोंस दिया। पहले वह किसी तरह खाता ही न था, फिर कुछ स्वाद पाकर खाने लगा। तब बाघ ने कहा, 'तू बकरियों के बीच में था और उन्हीं की तरह घास खाता था! धिक्कार है तुझे' तब उसे बड़ी लज्जा हुई।

"घास खाना है कामिनी-कांचन लेकर रहना। बकरियों की तरह 'में में' करना और भागना है – सामान्य जीवों की तरह आचरण करना। बाघ के साथ जाना है – गुरु, जिन्होंने ज्ञान की आँखें खोल दीं, उनकी शरणागत होना, उन्हें ही आत्मीय समझना। अपना सच्चा मुँह देखना है – अपने स्वरूप को पहचानना।"

श्रीरामकृष्ण खड़े हो गए। चारों ओर सन्नाटा है। सिर्फ झाऊ के पेड़ों की सनसनाहट और गंगाजी की कलकल-ध्वनि सुन पड़ रही है। वे रेलिंग पार करके पंचवटी के भीतर से अपने कमरे की ओर मणि से बातचीत करते हुए जा रहे हैं। मणि मन्त्रमुग्ध की तरह पीछे पीछे जा रहे हैं।

पंचवटी में आकर, जहाँ उसकी एक डाल टूटी पड़ी है, वहीं खड़े होकर, पूर्वास्य हो, बरगद के मूल पर बँधे हुए चबूतरे पर सिर टेककर प्रणाम किया। यह स्थान उनकी साधना का स्थान है। यहाँ पर उन्होंने व्याकुल होकर किनना क्रन्दन किया है कितने ही ईश्वरी रूपों के दर्शन किए हैं, और माता के साथ कितनी बातें की हैं! क्या इसीलिए जब वे यहाँ आते हैं तो प्रणाम करते हैं?"

बकुलतल्ला होकर वे नौबतखाने के निकट आए। मणि साथ ही हैं।

नौबतखाने के पास आकर हाजरा को देखा। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं – "अधिक न खाते जाना और बाह्य शुद्धि की ओर इतना ध्यान देना छोड़ दो। जिन्हें बेकार यह धुन सवार रहती है उन्हें ज्ञान नहीं होता। आचार उतना ही चाहिए जितने की जरूरत

हैं। बहुत ज्यादा अच्छा नहीं।" श्रीरामकृष्ण ने अपने कमरे में पहुँचकर आसन ग्रहण किया।

(२)

प्रेमाभक्ति और श्रीवृन्दावनलीला। अवतार तथा नरलीला

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं। बड़े दिन की छुट्टी लग गयी है। कलकत्ते से सुरेन्द्र, राम आदि भक्तगण धीरे धीरे आ रहे हैं।

दिन के एक बजे का समय होगा। मणि अकेले झाऊतल्ले में टहल रहे हैं। इसी समय रेलिंग के पास खड़े होकर हरीश उच्च स्वर से मणि को पुकारकर कह रहे हैं – "आपको बुलाते हैं, शिव संहिता पढ़ी जायए।"

शिवसंहिता में योग की बातें हैं – षट्चक्रों की बात है।

मणि श्रीरामकृष्ण के कमरे में आकर प्रणाम करके बैठे। श्रीरामकृष्ण छोटे तख्त पर तथा भक्तगण जमीन पर बैठे हुए हैं। इस समय शिवसंहिता का पाठ नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण स्वयं ही बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – गोपियों की प्रेमाभक्ति थी। प्रेमाभक्ति में दो बातें रहती हैं। – 'अहंता' और 'ममता'। यदि मैं श्रीकृष्ण की सेवा न करूँ तो उनकी तबीयत बिगड़ जाएगी – यह अहंता है। इसमें ईश्वरबोध नहीं रहता।

"ममता है 'मेरा मेरा' करना। गोपियों की ममता इतनी बढ़ी हुई थी कि कहीं पैरों में जरासी चोट न लग जाय, इसलिए उनका सूक्ष्मशरीर श्रीकृष्ण के श्रीचरणों के नीचे रहता था।

"यशोदा ने कहा, 'तुम्हारे चिन्तामणि श्रीकृष्ण को मैं नहीं जानती। – मेरा तो वह गोपाल ही है।' उधर गोपियाँ भी कहती हैं, 'कहाँ हैं मेरे प्राणवल्लभ – हृदयवल्लभ' ईश्वरबोध उनमें नहीं था।

"जैसे छोटे छोटे लड़के, मैंने देखा है, कहते हैं, 'मेरे बाबा'। यदि कोई कहता है, 'नहीं, तेरे बाबा नहीं हैं' तो वे कहते हैं, 'क्यों नहीं – मेरे बाबा तो हैं।'

"नरलीला करते समय अवतारी पुरुषों को ठीक आदमी की तरह आचरण करना पड़ता है, – इसीलिए उन्हें पहचानना मुश्किल हो जाता है। नररूप धारण किया है तो प्राकृत नरों की तरह ही आचरण करेंगे। वही भूख-प्यास, रोग-शोक, वही भय – सब प्राकृत मनुष्यों की तरह। श्रीरामचन्द्र सीताजी के वियोग में रोए थे। गोपाल ने नन्द की जूतियाँ सिर पर ढोयी थीं – पीढ़ा ढोया था।

"थियेटर में साधु बनते हैं तो साधुओं का-सा ही व्यवहार करते हैं – जो राजा बनता है, उसकी तरह व्यवहार नहीं करते। जो कुछ बनते हैं वैसा ही अभिनय भी करते हैं।

"कोई बहुरुपिया साधु बना था, – त्यागी साधु। श्वॉग उसने ठीक बनाकर दिखलाया था, इसलिए बाबुओ ने उसे एक रुपया देना चाहा। उसने न लिया, 'ऊँहूँ' कहकर चला गया। देह और हाथ-पैर धोकर अपने सहज स्वरूप मे जब आया तब उसने रुपया मॉगा। बाबुओं ने कहा, 'अभी तो तुमने कहा, रुपया न लेगे और चले गए, अब रुपया लेने कैसे आए?' उसने कहा, 'तब मै साधु बना हुआ था, उस समय रुपया कैसे ले सकता था!'

"इसी तरह ईश्वर जब मनुष्य बनते है, तब ठीक मनुष्य की तरह व्यवहार करते है।

"वृन्दावन जाने पर कितने ही लीला के स्थान दीख पड़ते है।"

सुरेन्द्र – हम लोग छुट्टी मे गए थे। वहॉ मॅगते इतने है कि 'पैसा दीजिए', 'पैसा दीजिए' की रट लगा देते है। 'दीजिए' 'दीजिए' करने लगे - पण्डे भी और दूसरे भी। उनसे मैने कहा, हम कल कलकत्ता जाएंगे; यह कहकर उसी दिन वहॉ से नौ-दो-ग्यारह!

श्रीरामकृष्ण – यह क्या है? कल जाएँगे कहकर आज ही भागना! छि:!

सुरेन्द्र (लज्जित होकर) – उन लोगो मे भी कही कही साधुओ को देखा था। निर्जन मे बैठे हुए साधन-भजन कर रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – साधुओ को कुछ दिया?

सुरेन्द्र – जी नही।

श्रीरामकृष्ण – यह अच्छा काम नही किया। साधु-भक्तो को कुछ दिया जाता है। जिनके पास धन है, उन्हे उस तरह के आदमी को सामने पड़ने पर कुछ देना चाहिए।

"मै भी वृन्दावन गया था, मथुरबाबू के साथ। ज्योंही मथुरा का ध्रुवघाट मैने देखा कि उसी समय दर्शन हुआ, वसुदेव श्रीकृष्ण को गोद मे लेकर यमुना पार कर रहे है।

"फिर शाम को यमुना के तट पर टहल रहा था। बालू पर छोटे छोटे झोपड़े थे, बेर के पेड़ बहुत थे। गोधूलि का समय था, गौएँ चरागाह से लौट रही थी। देखा, उतरकर यमुना पार कर रही है। इसके बाद कुछ चरवाहे गौओ को लेकर पार होने लगे। ज्योही यह देखा कि 'कृष्ण कहॉ है?' कहकर बेहोश हो गया।

"श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड के दर्शन करने की इच्छा हुई थी। पालकी पर मुझे मथुरबाबू ने भेज दिया। रास्ता बहुत दूर है। पालकी के भीतर पूड़ियॉ और जलेबियॉ रख दी गयी थी। मैदान पार करते समय यह सोचकर रोने लगा, 'वे सब स्थान तो है, पर कृष्ण, तू ही नही है! – यह वही भूमि है जहॉ तू गौएँ चराता था।

"हृदय रास्ते मे साथ साथ पीछे आ रहा था। मेरी ऑखो से ऑसुओ की धारा बह रही थी। कहारों को खड़े होने के लिए भी न कह सका।

"श्यामकुण्ड और राधाकुण्ड मे जाकर देखा, साधुओ ने एक एक झोपड़ी-सी बना रखी है, – उसी के भीतर पीठ फेरकर साधन-भजन कर रहे है। पीठ इसलिए फेर बैठे है

कि कहीं लोगों पर उनकी दृष्टि न जाए। द्वादशवन देखने लायक है।

बाँकेबिहारी को देखकर मुझे भाव हो गया था; मैं उन्हें पकड़ने चला था। गोविन्दजी को दुबारा देखने की इच्छा नहीं हुई। मथुरा में जाकर राखाल-कृष्ण का स्वप्न देखा था। हृदय और मथुरबाबू ने भी देखा था।"

(सुरेन्द्र से) – "तुम्हारे योग भी है और भोग भी है।

"ब्रह्मर्षि, देवर्षि और राजर्षि। ब्रह्मर्षि जैसे शुकदेव – एक भी पुस्तक पास नहीं है। देवर्षि जैसे नारद। राजर्षि जैसे जनक – निष्काम कर्म करते हैं।

"देवीभक्त धर्म और मोक्ष दोनों पाता है तथा अर्थ और काम का भी भोग करता है।

"तुम्हें एक दिन मैंने देवीपुत्र देखा था। तुम्हारे दोनों हैं, योग और भोग। नहीं तो तुम्हारा चेहरा सूखा हुआ होता।

"सर्वत्यागी का चेहरा सूखा हुआ होता है। एक देवीभक्त को घाट पर मैंने देखा था। भोजन करते हुए ही वह देवीपूजा कर रहा था। उसका सन्तान-भाव था।

"परन्तु अधिक धन होना अच्छा नहीं। यदु मल्लिक को इस समय देखा, डूब गया है। अधिक धन हो गया है न।

"नवीन नियोगी के भी योग-भोग दोनों हैं। दुर्गापूजा के समय मैंने देखा, पिता-पुत्र दोनों चँवर डुला रहे थे।"

सुरेन्द्र – अच्छा महाराज, ध्यान क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – स्मरण-मनन तो है न?

सुरेन्द्र – जी हाँ, 'माँ माँ' कहता हुआ सो जाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – बहुत अच्छा है, स्मरण-मनन रहने से ही हुआ।

श्रीरामकृष्ण ने सुरेन्द्र का भार ले लिया है; अब उन्हें चिन्ता किस बात की?

(३)

श्रीरामकृष्ण और योगशिक्षा। शिवसंहिता

सन्ध्या के बाद श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। मणि भी भक्तों के साथ जमीन पर बैठे हैं। योग के सम्बन्ध में, षट्चक्रों के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। ये सब बातें शिवसंहिता में हैं।

श्रीरामकृष्ण – इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना – सुषुम्ना के भीतर सब पद्म हैं – सभी चिन्मय। जैसे मोम का पेड़, – डाल, पत्ते, फल, – सब मोम के। मूलाधार पद्म में कुण्डलिनी-शक्ति है। वह पद्म चतुर्दल है। जो आद्याशक्ति हैं, वही कुण्डलिनी के रूप में सब की देह में विराजमान हैं – जैसे सोता हुआ साँप कुण्डलाकार पड़ा रहता है। 'प्रसुप्तभुजगाकारा आधारपद्मवासिनी।' (मणि से) भक्तियोग से कुलकुण्डलिनी शीघ्र

जागृत होती है। इसके बिना जागृत हुए ईश्वर के दर्शन नहीं होते। तुम एकाग्रता के साथ निर्जन में गाया करना --

" 'जागो माँ कुलकुण्डलिनी! तुम नित्यानन्द-स्वरूपिणी!
प्रसुप्तभुजगाकारा आधारपद्मवासिनी!'

"गाना गाकर ही रामप्रसाद सिद्ध हुए थे। व्याकुल होकर गाना गाने पर ईश्वरदर्शन होते हैं।"

मणि – जी हाँ, यह सब एक बार करने से ही मन का खेद मिट जाता है।

श्रीरामकृष्ण – अहा! खेद मिट जाता है – सत्य है।

"योग के सम्बन्ध की दो-चार बातें तुम्हें बतला देनी चाहिए।

गुरु ही सब करते हैं। नरेन्द्र स्वतः सिद्ध

"बात यह है कि अण्डे के भीतर बच्चा जब तक बड़ा नहीं हो जाता तब तक चिड़िया उसे नहीं फोड़ती।

"परन्तु कुछ साधना करनी चाहिए। गुरु ही सब कुछ करते हैं, परन्तु अन्त में कुछ साधना भी करा लेते हैं। बड़े पेड़ को काटते समय जब लगभग काटना समाप्त हो जाता है तो कुछ हटकर खड़ा हुआ जाता है। पेड़ फिर आप ही हरहराकर टूट जाता है।

"जब नाली काटकर पानी लाया जाता है, और जब वह समय आता है कि थोड़ासा ही काटने से नहर के साथ नाली का योग हो जाय, तब नाली काटनेवाला कुछ हटकर खड़ा हो जाता है। तब मिट्टी भीगकर धँस जाती है और नहर का पानी हरहराकर नाली मे घुस पड़ता है।

"अहंकार, उपाधि, इन सब का त्याग होने के साथ ही ईश्वर के दर्शन होते हैं। मैं पण्डित हूँ, मैं अमुक का पुत्र हूँ, मैं धनी हूँ, मैं मानी हूँ, इन सब उपाधियों को त्याग देने से ही ईश्वर के दर्शन होते हैं।

"ईश्वर ही सत्य हैं और सब अनित्य – संसार अनित्य है – इसे विवेक कहते हैं। विवेक के हुए बिना उपदेशों का ग्रहण नहीं होता।

"साधना करते करते ही उनकी कृपा से लोग सिद्ध होते हैं। कुछ परिश्रम भी करना चाहिए। इसके बाद दर्शन और आनन्द।

'अमुक स्थान पर सोने का घड़ा गड़ा हुआ है, यह सुनते ही मनुष्य दौड़ पड़ता है और खोदने लग जाता है। खोदते खोदते सिर से पसीना निकल जाता है। बहुत देर तक खोदने के बाद कहीं कुदार में ठनकार आती है। तब कुदार फेंककर वह देखने लगता है कि घड़ा निकला या नहीं? घड़ा अगर दीख पड़ा तब तो उसके आनन्द का पारावार नहीं रह जाता – वह नाचने लगता है।

"घड़ा बाहर लाकर उसमें से मुहरें निकालकर वह गिनता है। तब कितना आनन्द होता है! दर्शन, स्पर्श और सम्भोग – क्यों?"

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप हो रहे। फिर कहने लगे –

"जो मेरे अपने आदमी हैं, उन्हें डाँटने पर भी वे आएँगे।

"अहा! नरेन्द्र का कैसा स्वभाव है! माँ काली को पहले उसके जी में जो आता था वही कहता था। मैंने चिढ़कर एक दिन कहा था 'मूर्ख, तू अब यहाँ न आना।' तब वह धीरे धीरे जाकर कुछ काम करने लगा। जो अपना आदमी है, उसको तिरस्कार करने पर भी वह नाराज नहीं होता – क्यों?"

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – नरेन्द्र स्वत:सिद्ध है। निराकार पर उसकी निष्ठा है।

मणि (सहास्य) – जब आता है तब एक महाभारत रच लाता है।

श्रीरामकृष्ण आनन्द से हँसते हुए कहते हैं – "हाँ सच हैं।"

(४)

दूसरे दिन मंगलवार, २५ दिसम्बर, कृष्णपक्ष की एकादशी है। दिन के ग्यारह बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण ने अभी भोजन नहीं किया। मणि और राखाल आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के कमरे में बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – एकादशी करना अच्छा है। इससे मन बहुत पवित्र होता है और ईश्वर पर भक्ति होती है, समझे?

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – धान की लाही और दूध – यही खाओगे, क्यों?

□□□

परिच्छेद ७०

रामचन्द्र दत्त के बगीचे में

आज बुधवार है, २६ दिसम्बर १८८३ ई.। श्रीरामकृष्ण रामबाबू का नया बगीचा देखने जा रहे हैं।

रामबाबू श्रीरामकृष्ण को साक्षात् अवतार जानकर उनकी पूजा करते हैं। वे प्राय: दक्षिणेश्वर में आते हैं और श्रीरामकृष्ण के दर्शन तथा उनकी पूजा करते हैं। सुरेन्द्र के बगीचे के पास उन्होंने नया बगीचा तैयार किया है। इसी बगीचे को देखने के लिए श्रीरामकृष्ण जा रहे हैं।

गाड़ी में मणिलाल मल्लिक, मास्टर तथा अन्य दो-एक भक्त हैं। मणिलाल मल्लिक ब्राह्म समाज के है। ब्राह्म भक्तगण अवतार नहीं मानते हैं।

श्रीरामकृष्ण (मणिलाल के प्रति) – उनका ध्यान करना हो तो पहले उनके उपाधिशून्य स्वरूप का ध्यान करने की चेष्टा करनी चाहिए। वे उपाधियों से शून्य, वाक्य और मन से परे हैं। परन्तु इस ध्यान द्वारा सिद्धि प्राप्त करना बहुत ही कठिन है।

"वे मनुष्य में अवतीर्ण होते है, उस समय ध्यान करने की विशेष सुविधा होती है। मनुष्य के बीच में नारायण है। देह आवरण है मानो लालटेन के भीतर बत्ती जल रही है, या मानो काँच में से भीतर की बहुमूल्य वस्तुएँ दिखायी दे रही हैं।"

गाड़ी से उतरकर श्रीरामकृष्ण बगीचे में पहुँचे। राम तथा अन्य भक्तों के साथ पहले तुलसी-कानन देखने के लिए जा रहे हैं।

तुलसी-कानन देखकर श्रीरामकृष्ण खड़े होकर कह रहे हैं, "वाह, सुन्दर स्थान है यह! यहाँ पर ईश्वर का चिन्तन अच्छा होता है।"

श्रीरामकृष्ण अब तालाब के दक्षिणवाले कमरे में आकर बैठे। रामबाबू ने थाली में अनार, सन्तरा तथा कुछ मिठाई लाकर उन्हें दी। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्द करते हुए फल आदि ग्रहण कर रहे हैं।

कुछ देर बाद सारे बगीचे में घूम रहे हैं।

अब पास ही सुरेन्द्र के बगीचे में जा रहे हैं। थोड़ी देर पैदल जाकर गाड़ी में बैठेंगे। गाड़ी से सुरेन्द्र के बगीचे में जाएँगे।

भक्तों के साथ पैदल जाते हुए श्रीरामकृष्ण ने देखा कि पासवाले बगीचे में एक वृक्ष

के नीचे एक साधु अकेले खटिया पर बैठे हैं। देखते ही वे साधु के पास पहुँचे और आनन्द के साथ उनसे हिन्दी में वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण (साधु के प्रति) – आप किस सम्प्रदाय के हैं – गिरि या पुरी कोई उपाधि है क्या?

साधु – लोग मुझे परमहंस कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, अच्छा। शिवोऽहम् – यह अच्छा है। परन्तु एक बात है। यह सृष्टि, स्थिति और प्रलय सभी कुछ हो रहा है, उन्हीं की शक्ति से। यह आद्याशक्ति और ब्रह्म अभिन्न हैं। ब्रह्म को छोड़कर शक्ति नहीं होती। जिस प्रकार जल को छोड़कर लहर नहीं होती, वाद्य को छोड़कर वादन नहीं होता।

"जब तक उन्होंने इस लीला में रखा है, तब तक द्वैत ज्ञान होता है। शक्ति को मानने से ही ब्रह्म को मानना पड़ता है; जिस प्रकार रात्रि का ज्ञान रहने से ही दिन का ज्ञान होता है! ज्ञान की समझ रहने से ही अज्ञान की समझ होती है।

"और एक स्थिति में वे दिखाते हैं कि ब्रह्म, ज्ञान तथा अज्ञान से परे हैं, मुँह से कुछ कहा नहीं जाता। जो है सो है।"

इस प्रकार कुछ वार्तालाप होने के बाद श्रीरामकृष्ण गाड़ी की ओर जा रहे हैं। साधु भी उन्हें गाड़ी तक पहुँचा देने के लिए साथ साथ आ रहे हैं। मानो श्रीरामकृष्ण उनके कितने दिनों के परिचित हैं, साधु की बाँह में बाँह डालकर वे गाड़ी की ओर जा रहे हैं।

साधु उन्हें गाड़ी पर चढ़ाकर अपने स्थान पर आ गए।

अब श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के बगीचे में आए हैं। भक्तों के साथ बैठकर साधु की ही बात शुरू की!

श्रीरामकृष्ण – ये साधु अच्छे हैं। (राम के प्रति) जब तुम आओगे तो इस साधु को दक्षिणेश्वर के बगीचे में ले आना।

"ये साधु बहुत अच्छे हैं। एक गाने में कहा है – सरल हुए बिना सरल को पहचाना नहीं जाता।

"निराकारवादी – अच्छा ही है। वे ही निराकार और साकार हुए हैं, – और भी कितने ही कुछ हैं। जिनका नित्य है, उन्हीं की लीला है। वही जो वाणी व मन से परे हैं, नाना रूप धारण करके अवतीर्ण होकर काम कर रहे हैं। उसी 'ॐ' से 'ॐ शिव' 'ॐ काली' व 'ॐ कृष्ण' हुए हैं। निमन्त्रण में मालिक ने एक छोटे लड़के को भेज दिया है – उसका कितना मान है, क्योंकि वह अमुक का नाती या पोता है।"

सुरेन्द्र के बगीचे में भी कुछ जलपान करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर की ओर भक्तों के साथ जा रहे हैं।

□□□

परिच्छेद ७१

ईशान मुखोपाध्याय के मकान पर

(१)

कर्मयोग। क्या चिरकाल तक कर्म करना पड़ेगा?

दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनायी दे रहा है। उसी के साथ प्रभाती-राग से मन्दिर की शहनाई बज रही है। श्रीरामकृष्ण उठकर मधुर स्वर से नामोच्चारण कर रहे हैं। कमरे में जिन जिन देवियों और देवताओ के चित्र टँगे हुए थे, एक-एक करके उन्हें प्रणाम किया। फिर पश्चिमवाले गोल बरामदे में जाकर भागीरथी के दर्शन किए और प्रणाम किया। भक्तों में भी कोई कोई वहाँ हैं। उन लोगों ने प्रात:कृत्य समाप्त करके क्रमश: श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

राखाल श्रीरामकृष्ण के साथ इस समय यहीं हैं। बाबूराम पिछली रात को आए हैं। मणि श्रीरामकृष्ण के पास आज चौदह दिन से हैं।

आज बृहस्पतिवार है, अगहन की कृष्णा त्रयोदशी, २७ दिसम्बर १८८३ ई.। आज सबेरे ही स्नानादि समाप्त करके श्रीरामकृष्ण कलकत्ता जाने की तैयारी कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण ने मणि को बुलाकर कहा, ''आज ईशान के यहाँ जाने के लिए कह गए हैं। बाबूराम जाएगा और तुम भी हमारे साथ चलना।'' मणि जाने के लिए तैयार होने लगे।

जाड़े का समय है। सुबह आठ बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए नौबतखाने के पास गाड़ी आकर खड़ी हुई। चारों ओर फूल के पेड़ हैं, सामने भागीरथी। सब दिशाएँ प्रसन्न जान पड़ती हैं। श्रीरामकृष्ण ने देवताओं के चित्रों के पास खड़े होकर प्रणाम किया। फिर माता का नाम लेते हुए यात्रा करने के लिए गाड़ी पर बैठ गए। साथ बाबूराम और मणि हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की बनात, बनात की बनी हुई कान ढकनेवाली टोपी और मसाले की थैली साथ ले ली है, क्योंकि जाड़े का समय है, सन्ध्या होने पर श्रीरामकृष्ण बनात ओढ़ेंगे।

श्रीरामकृष्ण का मुखमण्डल प्रसन्न है। सब रास्ता आनन्द से पार कर रहे हैं। दिन के नौ बजे होंगे। गाड़ी कलकत्ते में आकर श्यामबाजार से होकर मछुआ-बाजार में आकर

खड़ी हुई। मणि ईशान का घर जानते थे। चौराहे पर गाड़ी फिराकर ईशान के घर के सामने खड़ी करने के लिए कहा।

ईशान आत्मीयों के साथ आदरपूर्वक सहास्यमुख श्रीरामकृष्ण की अभ्यर्थना कर उन्हें नीचेवाले बैठकखाने में ले गए। श्रीरामकृष्ण ने भक्तों के साथ आसन ग्रहण किया।

कुशल-प्रश्न हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण ईशान के पुत्र श्रीश के साथ बातचीत करने लगे। श्रीश एम. ए., बी. एल. पास करके अलीपुर में वकालत कर रहे हैं। एण्ट्रेंस और एफ. ए. की परीक्षाओं में विश्वविद्यालय में उनका प्रथम स्थान आया था। इस समय उनकी आयु लगभग तीस वर्ष की होगी। जैसा पाण्डित्य है, वैसा ही विनय भी है। लोग उन्हें देखकर यह समझ लेते हैं कि ये कुछ नहीं जानते। हाथ जोड़कर श्रीश ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। मणि ने श्रीरामकृष्ण को उनका परिचय दिया और कहा, "ऐसी शान्त प्रकृति का मनुष्य दीख नहीं पड़ता।"

श्रीरामकृष्ण (श्रीश के प्रति) – क्यों जी, तुम क्या करते हो?

श्रीश – जी, मैं अलीपुर जा रहा हूँ, वकालत करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण (मणि से) – ऐसा आदमी और वकालत!

(श्रीश से) – "अच्छा, तुम्हें कुछ पूछना है? – संसार में अनासक्त होकर रहना, क्यों?"

श्रीश – परन्तु कार्य के निर्वाह के लिए संसार में कितने ही अनुचित काम करने पड़ते हैं। कोई पापकर्म कर रहा है, कोई पुण्यकर्म। यह सब क्या पहले के कर्मों का फल है? क्या यह करते ही रहना होगा?

श्रीरामकृष्ण – कर्म कब तक है? – जब तक उन्हें प्राप्त न कर सको। उन्हें प्राप्त कर लेने पर सब चले जाते हैं। तब पापपुण्य के पार जाया जाता है।

"फल आ जाने पर फूल चला जाता है। फूल दीख पड़ता है फल होने के लिए।

"सन्ध्यादि कर्म कितने दिन के लिए? – जितने दिन तक ईश्वर का नामस्मरण करते हुए रोमांच न हो आए, ऑखों मे आँसू न आ जाएँ। ये सब अवस्थाएँ ईश्वर-प्राप्ति के लक्षण है, ईश्वर पर शुद्धा-भक्ति प्राप्त करने के लक्षण हैं।

"उन्हें जान लेने पर मनुष्य पाप और पुण्य दोनों के परे चला जाता है। रामप्रसाद ने कहा है, भुक्ति और मुक्ति को मै मस्तक पर धारण करता हूँ; और काली ब्रह्म है, यह मर्म जानकर धर्माधर्म को मैंने छोड़ ही दिया है।

"उनकी ओर जितना बढ़ोगे, उतना ही वे कर्म घटा देंगे। गृहस्थ की बहू गर्भवती होने पर उसकी सास धीरे धीरे उसका काम घटा देती है। जब दसवाँ महीना होता है, तब बिलकुल काम घटा दिया जाता है। बच्चा हो जाने पर वह उसी को लेकर व्यस्त रहती है, उसी को लेकर आनन्द करती है।"

श्रीश – संसार में रहते हुए उनकी ओर जाना बड़ा कठिन है।

अभ्यास-योग और निर्जन में साधना

श्रीरामकृष्ण – क्यों? अभ्यास-योग है। उस देश में बढ़ई की औरतें चिउड़ा बेचती हैं। वे कितनी ओर ध्यान देकर कितने काम सम्हालती हैं, सुनो। एक तो ढेंकी चल रही है, हाथ से वह धान सरका रही है, और एक हाथ से बच्चे को गोद में लेकर दूध पिला रही है। ऊपर के जो खरीदार आते हैं, उनसे मोल-तोल कर रही है, इधर ढेंकी का काम भी चल रहा है। खरीदार से कहती है, 'तो तुम्हारे ऊपर जो बाकी पैसे हैं, वे सब दे जाना, तब और चीज ले जाना।' देखो, लड़के को दूध पिलाना, ढेंकी चल रही है उसमें धान सरकाना और कूटे हुए धान निकालना, और इधर खरीदार के साथ बातचीत करना, ये सब एक साथ कर रही है। इसे ही अभ्यास-योग कहते हैं; परन्तु उसका पन्द्रह आना मन ढेंकी पर लगा हुआ है; क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि ढेंकी हाथ पर गिर जाय; और एक आना मन लड़के को दूध पिलाने और खरीदार से बातचीत करने में है। इसी तरह जो लोग संसार में हैं उन्हें पन्द्रह आना मन ईश्वर को देना चाहिए। न देने से सर्वनाश हो जाएगा – काल के हाथ पड़ना होगा। और एक आने से दूसरे काम करो।

"ज्ञान हो जाने पर संसार में रहा जा सकता है, परन्तु पहले तो ज्ञानलाभ करना चाहिए। संसार-रूपी जल में मन-रूपी दूध रखने पर दोनों मिल जाएँगे। इसलिए मन-रूपी दूध का दही बनाकर निर्जन में उसे मथकर, उससे मक्खन निकालकर, तब उसे संसार-रूपी पानी में रखना चाहिए। इससे यह स्पष्ट है कि साधना चाहिए। पहली अवस्था में निर्जन में रहना जरूरी है। पीपल का पेड़ जब छोटा रहता है, तब उसके चारों ओर घेरा लगाना पड़ता हैं; नहीं तो बकरे और गौएँ उसे चर जाती हैं। परन्तु उसकी पेड़ी मोटी हो जाने पर घेरा खोल दिया जा सकता है। तब तो हाथी बाँध देने पर भी उस पेड़ का कुछ नहीं बिगड़ता।

"इसीलिए प्रथम अवस्था में कभी कभी निर्जन में जाना पड़ता है। साधना आवश्यक है। भात खाओगे – बैठे बैठे कह रहे हो लकड़ी में आग है और उसी आग से चावल पकता है। इस तरह कहने से ही क्या भात तैयार हो जाएगा? एक और लकड़ी ले आकर दोनों को रगड़ना चाहिए; आग तभी तैयार होगी।

"भंग खाने से नशा होता है, आनन्द होता है। न तुमने खाया, न कुछ किया – बैठे बैठे केवल 'भंग भंग' कर रहे हो! क्या इससे कभी नशा या आनन्द होता है?

मनुष्यजीवन का उद्देश्य – 'दूध पियो'

"पढ़ना-लिखना चाहे लाख सीखो, ईश्वर पर भक्ति हुए बिना – उन्हें प्राप्त करने की इच्छा हुए बिना – सब मिथ्या है। केवल पण्डित है, परन्तु यदि विवेक-वैराग्य नहीं

है, तो उसकी दृष्टि कामिनी-कांचन पर अवश्य रहेगी। गीध बहुत ऊँचे उड़ते हैं, परन्तु उनकी दृष्टि मरघट पर ही रहती है।

"जिस विद्या के प्राप्त करने पर मनुष्य उन्हें पा सकता है, वही यथार्थ विद्या है, और सब मिथ्या है। अच्छा, ईश्वर के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या धारणा है?"

श्रीश – जी, इतना बोध हुआ है कि कोई एक ज्ञानमय पुरुष हैं। उनकी सृष्टि देखने पर उनके ज्ञान का परिचय मिलता है। एक बात कहता हूँ – जिन देशों में जाड़ा ज्यादा होता है, वहाँ मछलियों और दूसरे जल-जन्तुओं को बचा रखने के लिए ईश्वर ने यह कुशलता दिखायी है कि जितना ही अधिक जाड़ा पड़ता है उतना ही पानी सिमटता जाता है, परन्तु आश्चर्य यह है कि बर्फ बनने से पहले ही पानी कुछ हलका हो जाता है, और उस समय पानी का फैलाव ज्यादा हो जाता है। तालाब के पानी में वहाँ जाड़े में मछलियाँ अनायास ही रह सकती हैं। पानी के ऊपरी हिस्से में बर्फ जम गयी है, परन्तु नीचे के हिस्से में ज्यों का त्यों पानी बना रहता है। अगर खूब ठण्डी हवा चलती है, तो वह हवा बर्फ पर ही लगती है, नीचे का पानी गरम रहता है।

श्रीरामकृष्ण – वे हैं यह बात संसार देखने से ही मालूम हो जाती है। परन्तु उनके सम्बन्ध में कुछ सुनना एक बात है, उन्हें देखना और बात, और उनसे वार्तालाप करना और बात है। किसी ने दूध की बात सुनी है, किसी ने दूध देखा है, और किसी ने दूध पिया है! आनन्द तो देखने से होगा, पर पीने से देह सबल होगी, तभी तो लोग हृष्टपुष्ट होंगे। ईश्वर के दर्शन जब होंगे, तभी तो शान्ति होगी। जब उनसे वार्तालाप होगा, तभी तो आनन्द होगा और शक्ति बढ़ेगी।

मुमुक्षुत्व समयसापेक्ष

श्रीश – उन्हें पुकारने का अवसर मिलता ही नहीं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – यह ठीक है; समय हुए बिना कुछ नहीं होता। किसी लड़के ने सोने के पहले अपनी माँ से कहा था, 'माँ, जब मुझे टट्टी की इच्छा हो, तब उठा देना।' उसकी माँ ने कहा, 'बेटा, टट्टी की इच्छा तुम्हें स्वयं उठाएगी, मुझे उठाना न होगा।'

"जिसे जो कुछ देना चाहिए, यह उनका पहले से ही ठीक किया हुआ है। घर की एक पुरखिन अपनी बहुओं को एक बर्तन से नापकर चावल बनाने के लिए देती थी, पर उतना चावल उन लोगों के लिए कम पड़ता था। एक दिन वह नापनेवाला बर्तन फूट गया; इससे बहुएँ बहुत खुश हुईं। पर उस पुरखिन ने कहा, 'तुम्हारे नाचने-कूदने या खुशी मनाने से क्या हुआ; मैं चावल अपनी मुट्ठी से नाप सकती हूँ, मुझे अन्दाज मालूम है!'

(श्रीश से) – "क्या करोगे, पूछते हो? उनके श्रीचरणों में सब कुछ समर्पित कर

दो, उन्हें आम मुखत्यारी दे दो! वे जो कुछ अच्छा समझें, करें। बड़े आदमी पर अगर भार दे दिया जाय, तो वह कभी बुराई नहीं कर सकता।

"साधना की भी आवश्यकता है। परन्तु साधक दो तरह के होते हैं। एक तरह के साधकों का स्वभाव बन्दर के बच्चे जैसा होता है, दूसरे तरह के साधक का बिल्ली के बच्चे जैसा। बन्दर का बच्चा किसी तरह खुद अपनी माँ को पकड़े रहता है। इसी तरह कोई साधक सोचते हैं, हमें इतना जप करना चाहिए, इतनी देर तक ध्यान करना चाहिए, इतनी तपस्या करनी चाहिए, तब कहीं ईश्वर मिलेंगे। इस तरह के साधक अपने प्रयत्न से ईश्वर-प्राप्ति की आशा रखते हैं।

"परन्तु बिल्ली का बच्चा खुद अपनी माँ को नहीं पकड़ सकता। वह पड़ा हुआ बस 'मीऊँ मीऊँ' करके पुकारता है। उसकी माँ चाहे जो करे। उसकी माँ कभी उसे बिस्तर पर ले जाती है, कभी छत पर लकड़ी की आड़ में रख देती है, और कभी उसे मुँह में दबाकर यहाँ-वहाँ रखती फिरती है। वह स्वयं अपनी माँ को पकड़ना नहीं जानता। इसी तरह कोई कोई साधक स्वयं हिसाब करके साधन-भजन नहीं कर सकते कि इतना जप करूँगा, इतना ध्यान करूँगा। वह केवल व्याकुल होकर रो-रोकर उन्हें पुकारता है। उसका रोना सुनकर वे फिर रह नहीं सकते। आकर दर्शन देते हैं।"

(२)

ईश्वर कर्ता हैं, तथापि कर्मों के लिए जीव उत्तरदायी है।

दिन चढ़ आया है। घर के मालिक ने भोजन के लिए घर में कच्ची रसोई का सामान तैयार कराया है। वे बड़े व्यस्त हैं। वे घर के भीतर जाकर भोजन का प्रबन्ध कर रहे हैं।

दिन बहुत हो गया है, इसीलिए श्रीरामकृष्ण भोजन के लिए जल्दी कर रहे हैं। वे उसी कमरे में टहल रहे हैं। मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। कभी कभी केशव कीर्तनिया से वार्तालाप कर रहे हैं।

केशव कीर्तनिया – वही करण और वही कारण हैं; दुर्योधन ने कहा था, 'त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन, यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।'

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – हाँ, वही सब कराते हैं; यह ठीक है। कर्ता वही हैं, मनुष्य तो यन्त्र-स्वरूप है।

"और यह भी ठीक है कि कर्मफल भी है। मिर्च खाने पर पेट जलता रहेगा। पाप करने से उसका फल अवश्य भोगना होगा।

"जिसे सिद्धि हो गयी है, जिसने ईश्वर को पा लिया है, वह फिर पाप नहीं कर सकता। उसके पैर बेताल नहीं पड़ते। जिसका सधा हुआ गला है, उसके स्वर में सा रे ग म बिगड़ने नहीं पाता।"

भोजन तैयार है। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ मकान के भीतर गए और उन्होंने आसन ग्रहण किया। ब्राह्मण का मकान है व्यंजन कई तरह के तैयार कराये गए हैं, ऊपर से अनेक प्रकार की मिठाइयाँ भी लायी गयी हैं।

दिन के तीन बजे का समय होगा। भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण ईशान के बैठकखाने में आकर बैठे। पास में श्रीश और मास्टर बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण श्रीश के साथ फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा क्या भाव है? सोऽहं या सेव्य-सेवक?

"संसारियों के लिए सेव्य-सेवक का भाव बहुत अच्छा है। सब सांसारिक काम तो कर रहे हैं, ऐसी अवस्था में 'मैं वही हूँ' यह भाव कैसे आ सकता है? जो कहता है, 'मै वही हूँ', उसके लिए तो संसार स्वप्नवत् है; उसका अपना शरीर और मन भी स्वप्नवत् है, उसका 'मैं' भी स्वप्नवत् है; अतएव संसार का काम वह नहीं कर सकता। इसीलिए सेव्य-सेवक भाव, दास-भाव बहुत अच्छा है।

"दास-भाव हनुमान का था। श्रीराम से हनुमान ने कहा था 'राम, कभी तो मैं सोचता हूँ, तुम पूर्ण हो – मैं अंश हूँ, तुम प्रभु हो – मैं दास हूँ, और जब तत्त्व का ज्ञान हो जाता है, तब देखता हूँ, मैं ही तुम हूँ, और तुम्हीं मैं हो।'

"तत्त्वज्ञान के समय सोऽहम् हो सकता है, परन्तु वह दूर की बात है।"

श्रीश – जी हाँ, दास-भाव से आदमी निश्चिन्त हो सकता है। प्रभु पर सब कुछ निर्भर है। कुत्ता बड़ा स्वामिभक्त है, इसीलिए स्वामी पर सब भार देकर वह निश्चिन्त रहता है।

साकार निराकार – नाममाहात्म्य

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, तुम्हें साकार ज्यादा पसन्द है या निराकार? बात यह है कि जो निराकार है, वही साकार भी है। भक्त की आँखों को वे साकार रूप से दर्शन देते हैं। जैसे अनन्त जलराशि, महासमुद्र, जिसका न ओर है न छोर; उसी जल मे कहीं कही बर्फ जम गयी है; ज्यादा ठण्डक पहुँचने पर पानी जमकर बर्फ हो जाता है। उसी तरह भक्ति-हिम द्वारा साकार रूप के दर्शन होते हैं। फिर जिस तरह सूर्योदय होने पर बर्फ गल जाती है – ज्यों का त्यों पानी हो जाता है, उसी तरह ज्ञानमार्ग या विचार-मार्ग से होकर जाने पर साकार रूप के दर्शन नहीं होते, फिर तो सब निराकार ही निराकार दीख पड़ता है। ज्ञान-सूर्योदय होने पर साकार बर्फ गल जाती है।

"परन्तु देखो, जिसकी निराकार सत्ता है, उसी की साकार भी है।"

शाम होने को है। श्रीरामकृष्ण उठे। अब दक्षिणेश्वर को लौटनेवाले हैं। बैठकखाने के दक्षिण ओर जो बरामदा है, उसी पर खड़े होकर ईशान से बातचीत कर रहे हैं। वहीं

कोई कह रहे हैं, "यह तो मैं नहीं देखता कि ईश्वर का नाम लेने से प्रत्येक समय फल होता है।"

ईशान ने कहा, "यह क्या? बट का बीज कितना छोटा होता है, परन्तु उसके भीतर कितना बड़ा पेड़ छिपा रहता है पर वह पेड़ देर से दिखायी देता है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ हाँ, फल देर से होता है।

ईशान का मकान उनके ससुर स्वर्गीय श्री क्षेत्रनाथ चटर्जी के मकान के पूर्व ओर है। दोनों मकानों में आने-जाने का रास्ता है। श्रीरामकृष्ण चटर्जी महाशय के मकान के फाटक के पास आकर खड़े हुए। ईशान अपने बन्धु-बान्धवों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण को गाड़ी पर चढ़ाने के लिए आए है।

श्रीरामकृष्ण ईशान से कह रहे है, "तुम संसार में ठीक 'पाँकाल' मछली की तरह हो। वह रहती तो है तालाब के बीच मे, पर उसकी देह मे कीच छू नहीं जाती।

"माया के इस संसार में विद्या और अविद्या दोनों ही हैं। परमहंस वह है, जो हंस की तरह दूध और पानी के एक साथ रहने पर भी पानी छोड़कर दूध निकाल लेता है; चींटी की तरह बालू और चीनी के मिले रहने पर भी बालू में से चीनी निकाल ले सकता है।"

(३)

समन्वय और निष्ठा भक्ति। अपराध और ईश्वर-कोटि

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण भक्त रामचन्द्र के घर आए हुए है। यहाँ से होकर दक्षिणेश्वर जाएँगे।

रामचन्द्र के बैठकखाने को आलोकित करते हुए भक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। श्री महेन्द्र गोस्वामी से बातचीत कर रहे है। गोस्वामीजी उसी मोहल्ले मे रहते है। श्रीरामकृष्ण इन्हें प्यार करते हैं। जब श्रीरामकृष्ण रामचन्द्र के यहाँ आते है तब गोस्वामीजी आकर इनसे मिल जाया करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – वैष्णव, शाक्त सब के पहुँचने की जगह एक है; परन्तु मार्ग और और हैं। जो सच्चे वैष्णव हैं, वे शक्ति की निन्दा नहीं करते।

गोस्वामी (सहास्य) – हर-पार्वती हमारे माँ बाप हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – Thank You (थैंक यू) – माँ बाप है।

गोस्वामी – इसके सिवाय किसी की निन्दा करने से, खास कर वैष्णवों की निन्दा से, अपराध होता है – वैष्णवापराध। सब अपराधों की क्षमा है, परन्तु वैष्णवापराध की क्षमा नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – अपराध सब को नहीं होता। जो ईश्वरकोटि हैं, उनको अपराध नहीं होता। जैसे श्रीचैतन्यसदृश अवतारी पुरुषों को।

"बच्चा अगर बाप का हाथ पकड़कर चलता हो, तो वह गड्ढे में गिर सकता है, परन्तु अगर बाप बच्चे का हाथ पकड़े हुए हो तो बच्चा कभी नहीं गिर सकता।

"सुनो, मैंने माँ से शुद्धा-भक्ति की प्रार्थना की थी। माँ से कहा था, 'यह लो अपना धर्म, यह लो अपना अधर्म; मुझे शुद्धा-भक्ति दो। यह लो अपनी शुचि, यह लो अपनी अशुचि, मुझे शुद्धा-भक्ति दो। माँ, यह लो अपना पाप यह लो अपना पुण्य, मुझे शुद्धा-भक्ति दो।' "

गोस्वामी – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – सब भक्तो को नमस्कार करना। परन्तु 'निष्ठाभक्ति' भी है। सब को प्रणाम तो करना, परन्तु हृदय का उमड़ता हुआ प्यार एक ही पर हो। इसी का नाम निष्ठा है।

"राम-रूप के सिवाय और कोई रूप हनुमान को न भाता था। गोपियों की इतनी निष्ठा थी कि उन्होंने द्वारका में पगड़ीवाले श्रीकृष्ण को देखना ही न चाहा।

"स्त्री अपने देवर-जेठ आदि को पैर धोने के लिए पानी और बैठने को आसन आदि देकर सेवा करती है; परन्तु पति की जैसी सेवा करती है, वैसी वह किसी दूसरे की नही करती। पति के साथ उसका सम्बन्ध कुछ दूसरा है।"

रामचन्द्र ने कुछ मिठाइयाँ देकर श्रीरामकृष्ण की पूजा की।

अब वे दक्षिणेश्वर जानेवाले हैं। मणि से उन्होने बनात लेकर शरीर ढक लिया और टोपी पहन ली। अब भक्तों के साथ वे गाड़ी पर चढ़ने लगे। रामचन्द्र आदि भक्त उन्हें चढ़ा रहे है, मणि भी गाड़ी पर बैठे, वे भी दक्षिणेश्वर लौट जाएँगे।

□□□

परिच्छेद ७२

दक्षिणेश्वर में राखाल, राम, केदार प्रभृति के साथ

ब्रह्मज्ञान के सम्बन्ध में वार्तालाप

(१)

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठ रहे है। कालीमाता के दर्शन के लिए कालीघाट जाएँगे। श्री अधर सेन के घर होकर जायेंगे वहाँ से अधर भी साथ जायेंगे। आज शनिवार, अमावस्या है २९ दिसम्बर, १८८३। दिन के एक बजे का समय होगा।

गाड़ी उनके कमरे के उत्तर के तरफ के बरामदे के पास आकर खड़ी है। मणि गाड़ी के द्वार के पास आकर खड़े हुए।

मणि (श्रीरामकृष्ण से) – क्या मै भी चलूँ?

श्रीरामकृष्ण – क्यो?

मणि – एक बार कलकत्ते के मकान से होकर आता।

श्रीरामकृष्ण (चिन्तित होकर) – फिर जाओगे? क्यों? यहाँ अच्छे तो हो।

मणि घर लौटेगे, कुछ घण्टो के लिए; परन्तु श्रीरामकृष्ण की इसके लिए सम्मति नही है।

(२)

आज रविवार, ३० दिसम्बर, पूस की शुक्ला प्रतिपदा है। दिन के तीन बजे होगे। मणि पेड़ के नीचे अकेले टहल रहे हैं। एक भक्त ने आकर कहा, "प्रभु बुलाते हैं।" कमरे मे श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। मणि ने जाकर प्रणाम किया और जमीन पर भक्तो के बीच बैठ गए।

कलकत्ते से राम, केदार आदि भक्त आये हुए हैं। उनके साथ एक वेदान्तवादी साधु भी आए हैं। श्रीरामकृष्ण जिस दिन रामचन्द्र का बगीचा देखने गए थे उस दिन उस साधु से भेंट हुई थी। साधु पासवाले बगीचे मे एक पेड के नीचे अकेले एक चारपाई पर बैठे हुए थे। राम आज श्रीरामकृष्ण की आज्ञा से उस साधु को अपने साथ लेते आए हैं। साधु ने भी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने की इच्छा प्रकट की थी।

श्रीरामकृष्ण उस साधु के साथ आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रहे हैं। उन्होंने अपने पास छोटे तख्त पर साधु को बैठाया है। बातचीत हिन्दी में हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – यह सब तुम्हें कैसा जान पड़ता है?

साधु – यह सब स्वप्नवत् है।

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्म सत्य और संसार मिथ्या, यही न? अच्छा जी, ब्रह्म कैसा है?

साधु – शब्द ही ब्रह्म है। अनाहत शब्द।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु शब्द का प्रतिपाद्य भी तो एक है। क्यों जी?

साधु – वही वाच्य है और वही वाचक भी है।

यह बात सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए। चित्रवत् स्थिर बैठे हुए हैं। साधु और भक्तगण आश्चर्यचकित होकर श्रीरामकृष्ण की यह समाधि-अवस्था देख रहे हैं। केदार साधु से कह रहे हैं, "यह देखिए, इसे समाधि कहते हैं"।

साधु ने ग्रन्थों में ही समाधि की बात पढ़ी थी। समाधि कैसे होती है, यह उन्होंने कभी नहीं देखा था।

श्रीरामकृष्ण धीरे धीरे अपनी प्राकृत अवस्था में आ रहे हैं। अभी जगन्माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। कहते हैं – "माँ, अच्छा हो जाऊँ, बेहोश न कर देना। साधु के साथ सच्चिदानन्द की बातें करूँगा। सच्चिदानन्द की बातें करते हुए आनन्द मनाऊँगा।"

साधु निर्वाक् होकर देख रहे हैं और ये सब बातें सुन रहे हैं। अब श्रीरामकृष्ण साधु से बातचीत करने लगे। कहते हैं – अब तुम 'सोऽहम्' उड़ा दो। अब 'हम और तुम' लेकर विलास करें।

जब तक 'हम' और 'तुम' यह भाव है, तब तक माँ भी हैं। आओ, उन्हें लेकर आनन्द किया जाय। श्रीरामकृष्ण के कथन का शायद यही मर्म है।

कुछ देर इस तरह बातचीत हो जाने के बाद श्रीरामकृष्ण पंचवटी में टहलने चले गए। राम, केदार, मास्टर आदि उनके साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण (सहास्य) – साधु को तुमने कैसा देखा।

केदार – उसका शुष्क ज्ञान है। अभी उसने हण्डी चढ़ायी भर है – अभी चावल नहीं चढ़ाए गए।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ठीक है, परन्तु है त्यागी। जिसने संसार को त्याग दिया है, वह बहुत-कुछ आगे बढ़ गया है।

"साधु अभी प्रवर्तक है। उन्हें अगर कोई प्राप्त न कर सका, तो उसका कुछ भी नहीं हुआ। जब उनके प्रेम में मस्त हुआ जाता है, तब और कुछ नहीं सुहाता। तब तो – 'आदरणीय श्यामा माँ को बड़े यत्न से हृदय में धारण किए रहो। मन तू देख और मैं देखूँ, और कोई न देखने पाए।' "

केदार श्रीरामकृष्ण के भाव के अनुरूप एक गीत गाते हैं –

(भावार्थ) – "सखि, मन की बात कैसे कहूँ? कहने की मनाई है। दर्द को समझनेवाले के बिना प्राण कैसे बच सकेंगे! जो मन का मीत होता है वह देखते ही पहचान मे आ जाता है। वह विरला ही होता है।..."

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में लौट आए है। चार बजे का समय है – कालीमन्दिर खुल गया। श्रीरामकृष्ण साधु को लेकर कालीमन्दिर जा रहे है। मणि भी साथ हैं।

कालीमन्दिर में प्रवेश कर श्रीरामकृष्ण भक्तिपूर्वक माता को प्रणाम कर रहे है। साधु भी हाथ जोड़कर सिर झुका माता को बारम्बार प्रणाम कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, दर्शन कैसे हुए?

साधु (भक्तिभाव से) – काली प्रधान है।

श्रीरामकृष्ण – काली और ब्रह्म दोनो अभेद है। क्यों जी?

साधु – जब तक बहिर्मुख है तब तक काली को मानना होगा। जब तक बहिर्मुख है तब तक भले बुरे दोनो भाव है – तब तक एक प्रिय और दुसरा त्याज्य, यह भाव है ही।

"देखिये न, नाम और रूप ये सब तो मिथ्या ही है, परन्तु जब तक मै बहिर्मुख हूँ तब तक मुझे स्त्रियो को त्याज्य समझना चाहिए। और उपदेश के लिए 'यह अच्छा है, यह बुरा है' यह भाव रखना चाहिए – नही तो भ्रष्टाचार फैलेगा।"

श्रीरामकृष्ण साधु के साथ बातचीत करते हुए कमरे मे लौटे।

श्रीरामकृष्ण – देखा, साधु ने कालीमन्दिर मे प्रणाम किया।

मणि – जी हाँ।

(३)

दूसरे दिन सोमवार, ३१ दिसम्बर है। दिन का तीसरा पहर, चार बजे का समय होगा। श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ कमरे में बैठे हुए है। बलराम, मणि, राखाल, लाटू, हरीश आदि भक्त भी हैं। श्रीरामकृष्ण मणि और बलराम से कह रहे है –

"हलधारी का ज्ञानियों जैसा भाव था। वह अध्यात्मरामायण, उपनिषद् – यही सब दिनरात पढ़ता था। इधर साकार की बातों से मुँह फेरता था। मैंने जब कंगालों के भोजन कर जाने पर उनकी पत्तलों से थोड़ा थोड़ा अन्न लेकर खाया, तब उसने कहा, 'तेरे लड़कों का विवाह कैसे होगा?' मैंने कहा, 'क्यों रे साला, मेरे लड़के-बच्चे भी होंगे! आग लगे तेरे गीता और वेदान्त पढ़ने में!' देखो न, इधर तो कहता है – संसार मिथ्या है और फिर विष्णुमन्दिर में नाक सिंकोड़कर ध्यान!"

शाम हो गयी है। बलराम आदि भक्त कलकत्ता चले गये हैं। श्रीरामकृष्ण अपने

कमरे में बैठे हुए माता का चिन्तन कर रहे हैं। कुछ देर बाद मन्दिर में आरती का मधुर शब्द सुनायी पड़ने लगा।

रात के आठ बज चुके हैं। श्रीरामकृष्ण भाव में आकर मधुर स्वर से माता के साथ वार्तालाप कर रहे हैं। मणि जमीन पर बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण मधुर कण्ठ से नामोच्चारण कर रहे हैं – "हरि ॐ! हरि ॐ! हरि ॐ!"

माँ से कह रहे हैं – "माँ! ब्रह्मज्ञान देकर मुझे बेहोश न कर रखना। मैं ब्रह्मज्ञान नहीं चाहता माँ! मैं आनन्द करूँगा! विलास करूँगा!"

फिर कहते हैं – "माँ, मैं वेदान्त नहीं जानता – जानना भी नहीं चाहता! माँ, तुझे पाने पर वेद-वेदान्त कितने नीचे पड़े रहते हैं!"

"अरे कृष्ण! मैं तुझे कहूँगा, 'यह ले – खा ले – बच्चे!' कृष्ण! कहूँगा, 'तू मेरे ही लिए देहधारण करके आया है।' "

□□□

परिच्छेद ७३

ईश्वर-दर्शन के उपाय

(१)

श्रीरामकृष्ण तथा तान्त्रिक भक्त

आज पौष शुक्ला चतुर्थी है; २ जनवरी १८८४। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ दक्षिणेश्वर के कालीमन्दिर में निवास कर रहे हैं। आजकल राखाल, लाटू, हरीश, रामलाल, मास्टर दक्षिणेश्वर में निवास कर रहे हैं।

दिन के तीन बजे का समय होगा – श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए मणि बेलतला से उनके कमरे की ओर आ रहे हैं। वे एक तान्त्रिक भक्त के साथ पश्चिम के बरामदे में बैठे हैं।

मणि ने आकर भूमि पर माथा टेककर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने उन्हें अपने पास बैठने के लिए कहा। सम्भव है, तान्त्रिक भक्त के साथ वार्तालाप करते करते उन्हें भी उपदेश देंगे। श्री महिम चक्रवर्ती ने तान्त्रिक भक्त को श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने के लिए भेजा है। भक्त गेरुआ वस्त्र धारण किये हैं।

श्रीरामकृष्ण – (तान्त्रिक भक्त के प्रति) – ये सब तान्त्रिक साधना के अंग हैं; कपाल-पात्र में सुधा का पान करना! उस सुधा को कारणवारि कहते हैं, है न?

तान्त्रिक – जी हाँ!

श्रीरामकृष्ण – ग्यारह पात्र, न?

तान्त्रिक – तीन तोला भर! शव-साधना के लिए।

श्रीरामकृष्ण – पर मैं तो सुरा छू तक नहीं सकता।

तान्त्रिक – आपका सहजानन्द है, यह आनन्द होने पर और फिर क्या चाहिए!

श्रीरामकृष्ण - फिर देखो, मुझे जप-तप भी अच्छे नहीं लगते। सदा स्मरण-मनन रहता है। अच्छा, षट्चक्र क्या चीज है?

तान्त्रिक – जी, वह सब अनेक तीर्थों की तरह है। प्रत्येक चक्र में शिव शक्ति विराजमान हैं, वे आँखो से देखे नहीं जाते, शरीर काटने पर भी नहीं मिलते।

मणि चुपचाप सब सुन रहे हैं, उनकी ओर देखकर श्रीरामकृष्ण तान्त्रिक भक्त से पूछ रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (तान्त्रिक के प्रति) – अच्छा, बीजमन्त्र पाये बिना क्या कुछ सिद्ध होता है?

तान्त्रिक – होता है, विश्वास द्वारा – गुरुवाक्य पर विश्वास!

श्रीरामकृष्ण – (मणि की ओर इशारा करके) – विश्वास!

तान्त्रिक भक्त के चले जाने पर ब्राह्म समाज के श्री जयगोपाल सेन आये। श्रीरामकृष्ण उनके साथ वार्तालाप कर रहे है। राखाल, मणि आदि भक्तगण पास बैठे है। तीसरे पहर का समय है।

श्रीरामकृष्ण – (जयगोपाल के प्रति) – किसी से, किसी मत से विद्वेष नही करना चाहिए। निराकारवादी, साकारवादी, सभी उन्ही की ओर जा रहे हैं; ज्ञानी, योगी, भक्त सभी उन्हे खोज रहे है। ज्ञानमार्ग के लोग कहते है, ब्रह्म; योगीगण कहते हैं आत्मा, परमात्मा, भक्तगण कहते है, भगवान; फिर यह भी है, नित्यदेव नित्यदास।

जयगोपाल – कैसे जानूँ कि सभी पथ सत्य हैं?

श्रीरामकृष्ण – किसी एक पथ से ठीक-ठीक जा सकने पर उनके पास पहुँचा जा सकता है, उस समय सभी पथों का पता भी जाना जा सकता है। जैसे एक बार किसी तरह यदि छत पर उठना सम्भव हो सके, तो लकड़ी की सीढ़ी से भी उतरा जा सकता है, पक्की सीढ़ी से भी, एक बॉस के सहारे भी और एक रस्सी के द्वारा भी।

"उनकी कृपा होने पर भक्त सब कुछ जान सकता है। उन्हे एक बार प्राप्त करने पर सब कुछ जान सकोगे। एक बार किसी भी तरह बड़े बाबू के साथ साक्षात्कार करना चाहिए, उनसे बातचीत करनी चाहिए – तब बाबू स्वयं ही बता देगे कि उनके कितने बगीचे, तालाब, या कम्पनी के कागज़ हैं।"

ईश्वर-दर्शन के उपाय

जयगोपाल – उनकी कृपा कैसे होती है?

श्रीरामकृष्ण – सदा उनके नाम व गुणों का कीर्तन करना चाहिए, जहाँ तक सम्भव हो सांसारिक चिन्तन का त्याग करना चाहिए। तुम खेती करने के लिए अनेक कष्ट से खेत में जल ला रहे हो, परन्तु खेत की मेंड़ पर के एक छेद में से सब जल बाहर निकल जा रहा है। तब तो नाली काटकर जल लाना व्यर्थ हुआ, वृथा श्रम ही हुआ।

"चित्तशुद्धि होने पर, विषय-भोग की आसक्ति दूर हो जाने पर व्याकुलता आयेगी। तुम्हारी प्रार्थना ईश्वर के पास पहुँचेगी। टेलिग्राफ का तार टूटा रहने पर अथवा उसमें अन्य कोई दोष रहने पर तार का समाचार नहीं पहुँचेगा।

"मैं व्याकुल होकर एकान्त में रोता था। 'कहाँ हो नारायण' कह कर रोता था। रोते-रोते बाह्य ज्ञान लुप्त हो जाता था। मैं महावायु में लीन हो जाता था।

"योग कैसे होता है? टेलिग्राफ का तार टूटा न रहने पर या उसमें कोई दोष न रहने पर होता है। विषयों के प्रति आसक्ति का एकदम त्याग।

"किसी प्रकार की कामना-वासना नहीं रखनी चाहिए। कामना-वासना रहने पर उसे सकाम भक्ति कहते हैं, निष्काम भक्ति को अहेतुकी भक्ति कहते हैं। तुम प्यार करो या न करो फिर भी मैं तुम्हें प्यार करता हूँ – इसीका नाम है अहेतुक प्रेम!

"बात यह है, – उनसे प्रेम करना। प्रेम गहरा होने पर दर्शन होता है। पति पर सती का आकर्षण, सन्तान पर माँ का आकर्षण और विषयप्रिय व्यक्ति का सांसारिक विषयों के प्रति आकर्षण – ये तीन आकर्षण यदि एक ही साथ हो तो ईश्वर का दर्शन होता है।"

जयगोपाल विषयप्रिय व्यक्ति है, क्या इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन्हीं के योग्य ये सब उपदेश दे रहे हैं?

ज्ञान-पथ और विचार-पथ। भक्तियोग और ब्रह्मज्ञान

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में बैठे हुए हैं। रात के आठ बजे होंगे। आज पूस की शुक्ला पञ्चमी है; बुधवार, २ जनवरी, १८८४। कमरे में राखाल और मणि हैं। श्रीरामकृष्ण के साथ रहने का मणि का आज इक्कीसवाँ दिन है।

श्रीरामकृष्ण ने मणि को तर्क-विचार करने से मना किया है।

श्रीरामकृष्ण – (राखाल से) – ज्यादा तर्क-विचार करना अच्छा नहीं। पहले ईश्वर है, फिर ससार। उन्हें पा लेने पर उनके संसार के सम्बन्ध में भी ज्ञान हो जाता है।

(मणि और राखाल से) "यदु मल्लिक से बातचीत करने पर उसके कितने मकान है, कितने बगीचे हैं, कम्पनी के कागजात कितने हैं – यह सब समझ में आ जाता है।

"इसीलिए तो ऋषियों ने वाल्मीकि को 'मरा-मरा' जपने के लिए उपदेश दिया था। इसका एक विशेष अर्थ है। 'म' का अर्थ है ईश्वर और 'रा' का अर्थ संसार, – पहले ईश्वर, फिर संसार।

"कृष्णकिशोर ने कहा था, 'मरा-मरा' शुद्ध मन्त्र है; क्योंकि वह ऋषि का दिया हुआ है। 'म' अर्थात् ईश्वर और 'रा' अर्थात् संसार।

"इसीलिए वाल्मीकि की तरह पहले सब कुछ छोड़कर निर्जन में व्याकुल हो रो-रोकर ईश्वर को पुकारना चाहिए। पहले आवश्यक है ईश्वर-दर्शन। उसके बाद है तर्क-विचार – शास्त्र और संसार के सम्बन्ध में।

(मणि के प्रति) "इसीलिए तुमसे कहता हूँ, अब और अधिक तर्क-विचार न करना। यही बात कहने के लिए मैं झाऊतल्ले से उठकर आया हूँ। ज्यादा तर्कविचार करने

पर अन्त में हानि होती है। अन्त में हाजरा की तरह हो जाओगे। मैं रात में अकेला रास्ते पर रो-रोकर टहलता और कहता था, 'माँ, मेरी विचार-बुद्धि पर वज्रप्रहार कर दो।'

"कहो, अब तो तर्क-विचार न करोगे?"

मणि – जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण – भक्ति से ही सब कुछ प्राप्त होता है। जो लोग ब्रह्मज्ञान चाहते हैं, यदि वे भक्तिमार्ग पकड़े रहें, तो उन्हें ब्रह्मज्ञान भी हो जाता है।

"उनकी दया रहने पर क्या कभी ज्ञान का अभाव भी होता है? उस देश में (कामारपुकुर में) धान नापते हैं। जब राशि चुक जाती है, तब एक आदमी और धान ठेल देता है, इस तरह राशि फिर तैयार हो जाती है। माँ ही ज्ञान की राशि पूरी करती जाती हैं।

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर पण्डितगण सब घास-पात की तरह जान पड़ते हैं। पद्मलोचन ने कहा था, तुम्हारे साथ अछूतों के घर की सभा में भी जाऊँगा, इसमें भला हर्ज ही क्या है? – तुम्हारे साथ चमार के यहाँ भी जाकर मै भोजन कर सकता हूँ।

"भक्ति के द्वारा सब मिलते है। उन्हें प्यार कर सकने पर फिर किसी चीज का अभाव नहीं रह जाता। माता भगवती के पास कार्तिकेय और गणेश बैठे हुए थे। उनके गले में मणियों की माला पड़ी थी। माता ने कहा, जो पहले इस ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करके आ जायगा, उसी को मैं यह माला दे दूँगी। कार्तिक उसी समय फौरन ही मयूर पर चढ़कर चल दिये। गणेश ने धीरे-धीरे माता की परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम किया। गणेश जानते थे, माता के भीतर ही ब्रह्माण्ड है। माँ ने प्रसन्न होकर गणेश को हार पहना दिया। बड़ी देर बाद कार्तिक ने आकर देखा कि उनके दादा हार पहने हुए बैठे थे।

"मैंने माँ से रो-रोकर कहा था, 'माँ! वेद-वेदान्त में क्या है, मुझे बता दो, – पुराण-तन्त्रों में क्या है, मुझे बता दो।'

"उन्होंने मुझे सब कुछ बता दिया है – कितनी बातें दिखायी हैं।

"सच्चिदानन्द गुरु को रोज प्रात:काल पुकारते हो न?"

मणि – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – गुरु कर्णधार हैं। फिर देखा, 'मैं' एक अलग हूँ, 'तुम' एक अलग। फिर कूदा और मछली बन गया। देखा कि सच्चिदानन्द-समुद्र में आनन्दपूर्वक विचर रहा हूँ।

"ये सब बड़ी ही गुह्य कथाएँ हैं। तर्क-विचार करके क्या समझोगे? वे जब दिखा देते हैं, तब सब प्राप्त होता है, किसी वस्तु का अभाव नहीं रहता।"

शुक्रवार, ४ जनवरी १८८४ ई.। दिन के चार बजे के समय श्रीरामकृष्ण पंचवटी में बैठे है। मुख पर हँसी है और साथ हैं मणि, हरिपद आदि। हरिपद के साथ स्व. आनन्द चॅटर्जी के बारे में बातें हो रही हैं और घोषपाड़ा के साधन-भजन की बातें।

धीरे-धीरे श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आकर बैठे हैं। मणि, हरिपद, राखाल आदि भक्तगण भी उनके साथ रहते हैं। मणि अधिक समय बेलतला में रहते हैं।

साधनाकाल में श्रीरामकृष्ण के दर्शन

श्रीरामकृष्ण – एक दिन दिखाया चारों ओर शिव और शक्ति! शिव और शक्ति का रमण! मनुष्यों, जीव-जन्तुओं, वृक्षों और लताओं – सभी मे वही शिव और शक्ति – पुरुष और प्रकृति – सर्वत्र इन्हीं का रमण।

"दूसरे दिन दिखाया कि नर-मुण्डों की राशि लगी हुई है! – पर्वताकार – और कहीं कुछ नहीं! उनके बीच में मैं अकेला बैठा हुआ हूँ।

"और एक बार दिखाया, महासमुद्र, मैं नमक का पुतला होकर उसकी थाह लेने जा रहा हूँ! थाह लेते समय श्रीगुरुकृपा से पत्थर बन गया! देखा, एक जहाज़ आ रहा है, बस उमड़ पड़ा! – श्रीगुरुदेव कर्णधार थे।"

श्रीरामकृष्ण – (मणि के प्रति) – और अधिक विचार न करो। उससे अन्त में हानि होती है। उन्हें बुलाते समय किसी एक भाव का सहारा लेना पड़ता है – सखीभाव, दासीभाव, सन्तानभाव या वीरभाव।

"मेरा सन्तानभाव है। इस भाव को देखने पर मायादेवी रास्ता छोड़ देती हैं – शर्म से!

"वीरभाव बहुत कठिन है। शाक्त तथा वैष्णव बाउलों का है। उस भाव में स्थिर रहना बहुत कठिन है। फिर हैं – शान्त, दास्य, सख्य और वात्सल्य तथा मधुरभाव। मधुरभाव में – शान्त, दास्य, सख्य और वात्सल्य – सब हैं। (मणि के प्रति) तुम्हें कौन भाव अच्छा लगता है?"

मणि – सभी भाव अच्छे लगते हैं।

श्रीरामकृष्ण – सब भाव सिद्ध स्थिति में अच्छे लगते हैं। उस स्थिति में काम की गन्ध तक नही रहेगी। वैष्णव-शास्त्र में चण्डीदास तथा धोबिन की कथा है – उनके प्रेम में काम की गन्ध तक न थी।

"इस स्थिति में प्रकृतिभाव होता है।

"अपने को पुरुष मानने की बुद्धि नहीं रहती। मीराबाई के स्त्री होने के कारण रूप गोस्वामीजी उनसे मिलना नहीं चाहते थे। मीराबाई ने कहला भेजा, 'श्रीकृष्ण ही एकमात्र पुरुष है; वृन्दावन में सभी लोग उस पुरुष की दासियाँ हैं।' क्या गोस्वामीजी को पुरुषत्व का अभिमान करना उचित था?

सायंकाल के बाद मणि फिर श्रीरामकृष्ण के चरणों के पास बैठे हैं। समाचार आया है कि श्री केशव सेन की अस्वस्थता बढ़ गयी है। उन्हीं के सम्बन्ध में वार्तालाप के

सिलसिले में ब्राह्म समाज की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मणि के प्रति) – हाँ, जी, उनके यहाँ क्या केवल व्याख्यान ही होते हैं, या ध्यान भी? वे अपनी प्रार्थना को शायद कहते हैं 'उपासना'।

"केशव ने पहले ईसाई धर्म, ईसाई मत का बहुत चिन्तन किया था – उस समय तथा उससे पूर्व वे देवेन्द्र ठाकुर के यहाँ थे।"

मणि – केशव बाबू यदि पहले-पहल यहाँ आये होते, तो समाजसंस्कार पर माथापच्ची न करते। जातिभेद को उठा देना, विधवा विवाह, असवर्ण विवाह, स्त्री-शिक्षा आदि सामाजिक कामों में उतने व्यस्त न होते।

श्रीरामकृष्ण – केशव अब काली मानते हैं – चिन्मयी काली – आद्याशक्ति। और माँ माँ कहकर उनके नामगुणों का कीर्तन करते हैं। अच्छा, क्या ब्राह्म समाज बाद में सिर्फ सामाजिक संस्कार की ही एक संस्था बन जायगा?

मणि – इस देश की जमीन वैसी नहीं है। जो ठीक है वही यहाँ पर जड़ पा सकेगा।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, सनातन धर्म, ऋषिलोग जो कुछ कह गये हैं वही रह जायगा। तथापि ब्राह्म समाज और उसी प्रकार के सम्प्रदाय भी कुछ-कुछ रहेंगे। सभी ईश्वर की इच्छा से हो रहे हैं, जा रहे हैं।

दोपहर के बाद कलकत्ते से कुछ भक्त आये हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को अनेक गीत सुनाये थे। उनमें से एक गीत का भावार्थ यह है – 'माँ, तुमने हमारे मुँह में लाल चुसनी देकर भुला रखा है; हम जब चुसनी फेंककर चिल्लाकर रोयेंगे तब तुम हमारे पास अवश्य ही दौड़कर आओगी।'

श्रीरामकृष्ण – (मणि के प्रति) – उन्होंने लाल चुसनी का नया ही गाना गाया।

मणि – जी, आपने केशव सेन से इस लाल चुसनी की बात कही थी।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, और चिदाकाश की बात – और भी कई बातें हुआ करती थीं – और बड़ा आनन्द होता था। गाना – नृत्य सब होता था।

□□□

परिच्छेद ७४

मणि के प्रति उपदेश

(१)

कामिनी-काञ्चन-त्याग

श्रीरामकृष्ण दोपहर का भोजन कर चुके है। एक बजे का समय होगा। शनिवार, ५ जनवरी १८८४ ई.। मणि को श्रीरामकृष्ण के साथ रहते हुए आज २३ वॉ दिन है।

मणि भोजन करके नौबतखाने मे थे, वही से किसी को नाम लेकर पुकारते हुए सुना। बाहर आकर उन्होने देखा कि घर के उत्तरवाले लम्बे बरामदे से श्रीरामकृष्ण स्वयं उन्हे पुकार रहे थे। मणि ने आकर उन्हं प्रणाम किया।

दक्षिण के बरामदे मे श्रीरामकृष्ण मणि से वार्तालाप कर रहे है।

श्रीराम्कृष्ण – तुम लोग किस तरह ध्यान करते हो? – मै तो बेल के नीचे कितने ही रूप साफ साफ देखता था। एक दिन देखा, सामने रुपये, दुशाला, एक थाल, सन्देश और दो औरते! तब मैने मन से पूछा, मन! तू इनमे से कुछ चाहता है? – फिर सन्देशो को देखा, विष्ठा है! औरतो मे एक बुलाक पहने हुए थी। उनका भीतर बाहर सब मुझे दीख पड़ता था – आँते-मल-मूत्र-हाड़-मांस-खून! मन ने कुछ न चाहा।

"मन उन्ही के पाद-पद्मो मे लगा रहा। निक्तीं (कॉटेवाला तराजू) के नीचे भी कॉटा होता है और ऊपर भी। मन नीचेवाला कॉटा है। मुझे सदा ही भय लगा रहता था कि कही ऐसा न हो कि ऊपरवाले कॉटे से (ईश्वर से) मन विमुख हो जाय। तिस पर एक आदमी सदा ही हाथ मे त्रिशूल लिये मेरे पास बैठा रहता था। उसने डराया, कहा, नीचेवाला कॉटा ऊपरवाले कॉटे से इधर-उधर झुका नही कि यही त्रिशूल भोक दूँगा।

"बात यह है कि कामिनी-कांचन का त्याग हुए बिना कुछ होने का नही। मैने तीन त्याग किये थे – जमीन, जोरू और रुपया। भगवान रघुवीर के नाम की जमीन रजिस्ट्री कराने के लिए मुझे उस देश मे (कामारपुकुर मे) जाना पड़ा था। मुझसे दस्तखत करने के लिए कहा गया। मैने दस्तखत नही किये। मुझे यह ख्याल था ही नही कि यह मेरी जमीन है। रजिस्ट्री आफिसवालो ने केशव सेन का गुरु समझकर मेरा खूब आदर किया था। आम ला दिये, परन्तु घर ले जाने का अख्तियार था ही नहीं, क्योकि संन्यासी को संचय नही

करना चाहिए।

"त्याग के बिना कोई कैसे उन्हें पा सकता है? अगर एक वस्तु के उपर दूसरी वस्तु रखी हो, तो पहली वस्तु को बिना हटाये दूसरी वस्तु कैसे मिल सकती है?

"निष्काम होकर उन्हें पुकारना चाहिए। परन्तु सकाम भजन करते करते भी निष्काम भजन होता है। ध्रुव ने राज्य के लिए तपस्या की थी, परन्तु उन्होंने ईश्वर को प्राप्त किया था। उन्होंने कहा था, अगर कोई काँच के लिए आकर कांचन पा जाय तो उसे क्यों छोड़े?

दया-दान आदि और श्रीरामकृष्ण। श्रीचैतन्य देव का दान

"सत्त्वगुण के पाने पर मनुष्य ईश्वर को पाता है। संसारी मनुष्यों के दानादि कर्म प्राय: सकाम ही होते हैं। यह अच्छा नहीं। निष्काम कर्म करना ही अच्छा है। परन्तु निष्काम भाव से करना है बड़ा कठिन।

"ईश्वर से भेंट होने पर क्या उनसे यह प्रार्थना करोगे कि मैं कुछ तालाब खुदवाऊँगा? या रास्ता, घाट, दवाखाना और अस्पताल बनवाऊँगा? क्या उनसे कहोगे, हे ईश्वर, मुझे ऐसा वर दीजिये कि मैं यही सब करूँ? उनका दर्शन होने पर ये सब वासनाएँ एक ओर पड़ी रहती हैं।

"परन्तु इसलिए क्या दया और दान के कर्म ही न करना चाहिए?

"नहीं, यह बात नही। आँखों के आगे दु:ख और विपत्ति देखकर धन के रहते सहायता आवश्यक करनी चाहिए। ऐसे समय ज्ञानी कहता है, 'दे, इसे कुछ दे।' परन्तु भीतर ही भीतर 'मैं क्या कर सकता हूँ – कर्ता ईश्वर ही हैं, अन्य सब अकर्ता हैं' – ऐसा बोध उसे होता रहता है।

"महापुरुषगण जीवों के दु:ख से दु:खी होकर उन्हें ईश्वर का मार्ग बतला जाते हैं। शंकराचार्य ने जीवों की शिक्षा के लिए 'विद्या का अहं' रखा था।

"अन्नदान की अपेक्षा ज्ञानदान और भक्तिदान अधिक ऊँचा है। चैतन्यदेव ने इसीलिए चाण्डालों तक में भक्ति का वितरण किया था। देह का सुख और दु:ख तो लगा ही है। यहाँ आम खाने के लिए आये हो, आम खा जाओ। आवश्यकता ज्ञान और भक्ति की है। ईश्वर ही वस्तु है, और सब अवस्तु।

क्या स्वाधीन इच्छा (Free Will) है? श्रीरामकृष्ण का सिद्धान्त

"सब कुछ वे ही कर रहे हैं। अगर यह कहो कि सब कुछ उनके मत्थे मढ़कर फिर तो मनुष्य खूब पाप कर सकता है, तो यह ठीक न होगा; क्योंकि जिसने यह समझा है कि ईश्वर ही कर्ता है और जीव अकर्ता, उसका पैर कभी बेताल नहीं पड़ सकता।

"इंग्लिशमैन जिसे स्वाधीन इच्छा (Free Will) कहते हैं, वह उन्हींने दे रखी है।

"जिन लोगो ने उन्हें नहीं पाया, उनमें अगर इस स्वाधीन इच्छा का बोध न होता

तो उनसे पाप की वृद्धि हो सकती थी। अपने दोषों से मैं पाप कर रहा हूँ – *यह ज्ञान अगर* उन्होंने न दिया होता तो पाप की और भी वृद्धि होती।

"जिन्होंने उन्हें पा लिया है, वे जानते हैं स्वाधीन इच्छा नाममात्र की है। वास्तव मे वे ही यन्त्री है, मैं केवल यन्त्र हूँ; वे इंजिनियर है, मै गाड़ी!"

(२)

दिन का पिछला पहर हैं। चार बजे का समय होगा। पंचवटीवाले कमरे में श्रीयुत राखाल तथा और भी दो-एक भक्त मणि का कीर्तन सुन रहे हैं।

गाना सुनकर राखाल को भावावेश हो गया है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण पंचवटी में आये। उनके साथ बाबूराम और हरीश है।

राखाल – इन्होंने कीर्तन सुनाकर हम लोगों को खूब प्रसन्न किया।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में गा रहे हैं – 'ऐ सखि, कृष्ण का नाम सुनकर मेरे जी मे जी आ गया।' श्रीरामकृष्ण ने कहा, यही सब गाना चाहिए – 'सब सखि मिलि बैठल।' फिर कहा – बात यही है कि भक्ति और भक्तो को लेकर रहना चाहिए।

"श्रीकृष्ण के मथुरा जाने पर यशोदा राधिका के पास गयी थी। राधिका उस समय ध्यान मे थी। फिर उन्होने यशोदा से कहा, मै आदिशक्ति हूँ। तुम मुझसे वरयाचना करो। यशोदा ने कहा – वर और क्या दोगी, – यही कहो जिससे मन, वचन और कर्मों से उनकी सेवा कर सकूँ – इन्हीं आँखों से उनके भक्तों के दर्शन हों – इस मन से उनका ध्यान और उनका चिन्तन हो और वाणी से उनके नाम और गुणों का कीर्तन हो।

"परन्तु जिनकी भक्ति दृढ़ हो गयी है, उनके लिए भक्तों का संग न होने पर भी कुछ हर्ज नही है। कभी कभी तो भक्तों से विरक्ति भी हो जाती है। बहुत चिकनी दीवाल पर से चूनाकारी धस जाती है। अर्थात् वे जिनके अन्तर-बाहर सर्वत्र है, उन्ही की यह अवस्था है।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से लौटकर पंचवटी के नीचे मणि से फिर कह रहे है – "तुम्हारी आवाज स्त्रियों जैसी है। तुम इस तरह के गानों का अभ्यास कर सकते हो? – (भावार्थ) सखि, वह बन कितनी दूर है जहाँ मेरे श्यामसुन्दर हैं?

(बाबूराम की ओर देखकर मणि से) "देखो, जो अपने आदमी हैं, वे पराये हो जाते हैं, – रामलाल तथा और सब लोग अब जैसे कोई दूसरे हों। फिर जो लोग दूसरे हैं, वे अपने हो जाते हैं। देखो न, बाबूराम से कहता हूँ, जंगल जा, हाथ-मुँह धो। अब तो भक्त ही अपने आत्मीय हैं।"

मणि – जी हाँ।

चित्‌शक्ति और चिदात्मा

श्रीरामकृष्ण – (पंचवटी की ओर देखकर) – इस पंचवटी में मैं बैठता था – ऐसा भी समय आया कि मुझे उन्माद हो गया! वह समय भी बीत गया! काल ही ब्रह्म है। जो काल के साथ रमण करती है, वही काली है – आद्याशक्ति अटल को टाल देती हैं।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे।

(भावार्थ) 'तुम्हारा भाव क्या है, यह सोचते हुए यहाँ तो प्राण ही निकलने पर आ गये! जिनके नाम से काल भी दूर हट जाता है, जिनके पैरों के नीचे महाकाल पड़े हुए है, उनका स्वरूप काला क्यों हुआ?'

श्रीरामकृष्ण – आज शनिवार है, आज काली गन्दिर जाना।

बकुल के पेड़ के नीचे आकर श्रीरामकृष्ण मणि से कह रहे हैं – "चिदात्मा और चित्-शक्ति। चिदात्मा पुरुष हैं और चित्-शक्ति प्रकृति। चिदात्मा श्रीकृष्ण हैं और चित्-शक्ति श्रीराधा। भक्तगण उसी चित्-शक्ति के एक-एक स्वरूप हैं। वे सखी-भाव या दासभाव को लेकर रहेंगे। यही असली बात है।"

.सन्ध्या हो जाने पर श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर गये। मणि माता का स्मरण कर रहे है, यह देखकर श्रीरामकृष्ण प्रसन्न हुए।

सब देवालयों में आरती हो गयी। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में तख्त पर बैठे हुए माता का स्मरण कर रहे हैं। जमीन पर सिर्फ मणि बैठे है। श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये हैं।

कुछ देर बाद वे समाधि से उतरने लगे; परन्तु फिर भी अभी भाव पूर्ण मात्रा मे हैं। श्रीरामकृष्ण माँ से बातचीत कर रहे हैं, जैसे छोटा बच्चा माॅ से दुलार करते हुए बातचीत करता है। माॅ से करुण स्वर में कह रहे है – "माँ, क्यों तूने वह रूप नहीं दिखाया – वही भुवन-मोहन रूप! कितना मैंने तुझसे कहा। परन्तु कहने से तू सुनेगी काहे को? – तू इच्छामयी जो है।"

श्रीरामकृष्ण ने माँ से ऐसे स्वर में ये बातें कहीं कि जिसे सुनकर पत्थर भी पिघलकर पानी हो जाय!

श्रीरामकृष्ण फिर माँ से बातचीत कर रहे हैं –

"माँ! विश्वास चाहिए! यह साला तर्क-विचार दूर हो जाय! – उसका भरोसा क्या? वह तो जरा-सी बात से बदल जाता है! विश्वास चाहिए – गुरुवाक्य में विश्वास – बालक जैसा विश्वास! – माँ ने कहा, वहाँ भूत है – तो उसने ठीक समझ रखा है कि वहाँ भूत है! माँ ने कहा, वहाँ हौआ है! तो इसीको उसने ठीक समझ रखा है। माँ ने कहा, वह तेरा दादा है, तो समझ लिया कि बस सोलहों आने दादा है! विश्वास चाहिए!

"परन्तु माँ उन्ही का क्या दोष है। वे क्या करेगे। विचार एक बार तो कर लेना चाहिए! देखो न, अभी उस दिन इतना समझाकर कहा, परन्तु कुछ न हुआ – आज बिलकुल . ."

श्रीरामकृष्ण माँ के पास करुणापूर्ण गद्गद स्वर से रोते हुए प्रार्थना कर रहे है। क्या आश्चर्य है! भक्तो के लिए माँ के पास रो रहे है – "माँ, तुम्हारे पास जो लोग आते है उनका मनोरथ पूर्ण करो! – सब त्याग न करना, माँ! अच्छा, अन्त मे जैसा तुम्हे समझ पड़े करना!

"माँ, संसार मे अगर रखना तो एक एक बार दर्शन देना। नही तो कैसे रहेगे? एक एक बार दर्शन दिये बिना उत्साह कैसे होगा, माँ! – इसके बाद अन्त मे चाहे जो करना।"

श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश मे है। उसी अवस्था में एकाएक मणि से कह रहे है – "देखो तुमने जो कुछ विचार किया वह बहुत हो गया है। अब बस करो। कहो, अब तो विचार नही करोगे?"

मणि हाथ जोड़कर कह रहे है "जी नही, अब नही करूँगा।"

श्रीरामकृष्ण – बहुत हो चुका! – तुम्हारे आते ही तो मैने तुम्हे बतला दिया था – तुम्हारा आध्यात्मिक ध्येय। मै यह सब तो जानता हूँ।

मणि – (हाथ जोडकर) – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारा ध्येय, तुम कौन हो, तुम्हारा अन्दर और बाहर, तुम्हारी पहले की बाते, आगे तुम्हारा क्या होगा यह सब मै तो जानता हूँ।

मणि – (हाथ जोड़े हुए) – जी हाँ

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे लड़के हुए है, सुनकर तुम्हे फटकारा था – अब जाकर घर मे रहो – उन्हे दिखाना कि तुम उनके अपने आदमी हो, परन्तु भीतर से समझे रहना, तुम भी उनके अपने नही हो और वे भी तुम्हारे अपने नही।

मणि चुपचाप बैठे है। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे –

"अपने पिता को सन्तुष्ट रखना। अब उड़ना सीखा है तो भी उनसे प्रेम रखना। तुम अपने पिता को साष्टांग प्रणाम कर सकोगे न?

मणि – (हाथ जोड़े हुए) – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हे और क्या कहूँ, तुम तो सब जानते हो – सब समझ गये हो। (मणि चुपचाप बैठे है।)

श्रीरामकृष्ण – सब समझ गये हो न?

मणि – जी हाँ, कुछ कुछ समझा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – नही, तुम्हारी समझ में बहुत कुछ आता है। राखाल यहाँ है, इससे उसके पिता को सन्तोष है।

मणि हाथ जोड़े चुपचाप बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं – तुम जो कुछ सोच रहे हो, वह भी हो जायगा।

श्रीरामकृष्ण अब अपनी साधारण दशा में आ गये हैं। कमरे में राखाल और रामलाल बैठे हैं। रामलाल से उन्होंने गाने के लिए कहा। रामलाल ने दो गाने गाये।

श्रीरामकृष्ण – माँ और जननी। जो संसार के रूप में सर्वव्यापिनी हैं वे माँ हैं, और जो जन्मस्थान हैं वे जननी। माँ कहते ही मुझे समाधि हो जाती थी। – माँ कहते हुए मानो जगज्जननी को आकर्षित कर लेता था! जैसे धीवर जाल फेंकते हैं, फिर बड़ी देर बाद जाल खींचते रहते हैं। फिर उसमें बड़ी-बड़ी मछलियाँ आ जाती हैं।

गौरी पण्डित का कथन। काली और श्रीगौरांग एक हैं।

"गौरी ने कहा था, काली और श्रीगौरांग को एक समझने पर ज्ञान पक्का होगा। जो ब्रह्म हैं, वही शक्ति काली है, वही नर के स्वरूप में श्रीगौरांग हैं।"

श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पाकर रामलाल ने फिर गाना शुरू किया। गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण ने मणि से कहा – "जो नित्य हैं, उन्हीं की लीला है – भक्तों के लिए। उन्हें जब नररूप में देख लेंगे तभी तो भक्त उन्हें प्यार कर सकेंगे? तभी तो उन्हें भाई, बहन, माँ, बाप और सन्तान की तरह प्यार कर सकेंगे? वे भक्तों की प्रीति के कारण छोटे होकर लीला करने के लिए आते हैं।"

□□□

परिच्छेद ७५

ईश्वर-दर्शन के लिए व्याकुलता

(१)

दक्षिणेश्वर में राखाल, लादू, मास्टर, महिमा आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर-मन्दिर में अपने उसी कमरे मे हैं। दिन के तीन बजे होंगे। आज शनिवार है, ता. २ फरवरी १८८४।

एक दिन श्रीरामकृष्ण भावावेश मे झाऊतल्ले की ओर जा रहे थे। साथ में किसी के न रहने के कारण रेलिंग के पास गिर गये। इससे उनके बायें हाथकी हड्डी हट गयी और गहरी चोट आ गयी। मास्टर कलकत्ते से चोट मे बाँधने का सामान लेने गये हैं।

श्रीयुत राखाल, महिमाचरण, हाजरा आदि भक्त कमरे में बैठे हैं। मास्टर ने आकर भूमिष्ठ हो श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – क्यो जी, तुम्हें कौनसी बीमारी हुई थी? अब तो अच्छे हो न?

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – (महिमाचरण से) – क्यों जी, यहाँ का भाव है, 'तुम यन्त्री हो – मैं यन्त्र हूँ।' फिर भी इस तरह क्यों हुआ?

श्रीरामकृष्ण खाट पर बैठे है। महिमाचरण अपने तीर्थ-दर्शन की बातें कह रहे हैं। श्रीरामकृष्ण सुन रहे हैं। बारह वर्ष पहले का तीर्थ-दर्शन।

महिमाचरण – काशी, सिकरौल में एक बगीचे में मैंने एक ब्रह्मचारी देखा। उसने कहा, इस बगीचे में मैं बीस साल से हूँ। परन्तु किसका बगीचा है, वह नहीं जानता था। मुझसे पूछा, क्यों बाबू, नौकरी करते हो? मैंने कहा – नहीं। तब उसने कहा, तो क्या परिव्राजक हो?

"नर्मदा-तट पर एक साधू देखा था। अन्तर में गायत्री का जप कर रहे थे, शरीर पुलकायमान हो रहा था! और वे इस तरह प्रणव और गायत्री का उच्चारण कर रहे थे कि सुननेवालों को भी रोमांच हो रहा था।"

श्रीरामकृष्ण का बालकों का सा स्वभाव है – भूख लगी है; मास्टर से कह रहे हैं, "क्यों कुछ लाये हो?" राखाल को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये।

समाधि छूट रही है। प्रकृतिस्थ होने के लिए श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – 'मैं जलेबी खाऊँगा', 'मैं जल पिऊँगा।'

बालस्वभाव श्रीरामकृष्ण जगन्माता से रोकर कह रहे हैं – 'ब्रह्ममयी! मुझे ऐसा क्यों कर दिया? मेरे हाथ में बड़ा दर्द हो रहा है!' (राखाल, महिमाचरण, हाजरा आदि के प्रति) – 'मेरा दर्द अच्छा हो जायगा?' भक्तगण, छोटे लड़के को जिस तरह लोग समझाते हैं, उसी तरह कहने लगे – 'अच्छा क्यों न होगा?'

श्रीरामकृष्ण – (राखाल से) – यद्यपि तू शरीर-रक्षा के लिए है, तथापि तेरा दोष नहीं, क्योंकि तू रहने पर भी रेलिंग तक तो जाता नहीं।

श्रीरामकृष्ण फिर भावाविष्ट हो गये। भावावेश में ही कह रहे हैं – 'ॐ, ॐ, ॐ, – माँ, मैं क्या कह रहा हूँ! माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान देकर बेहोश न करना। मैं तेरा बच्चा जो हूँ! – डरता हूँ – मुझे माँ चाहिए। ब्रह्मज्ञान को मेरा कोटि कोटि नमस्कार! वह जिसे देना हो उसे दो। आनन्दमयी! – आनन्दमयी!'

श्रीरामकृष्ण उच्च स्वर से आनन्दमयी, आनन्दमयी कहकर रो रहे हैं और कह रहे हैं – 'इसीलिए तो मुझे दुःख है कि तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते, घर में चोरी हो जाय।'

श्रीरामकृष्ण फिर माँ से कह रहे हैं – 'माँ, मैंने क्या अन्याय किया है? – क्या मैं कुछ करता हूँ, माँ! तू ही तो सब कुछ करती है। मैं यन्त्र हूँ, तू यन्त्री। (राखाल के प्रति हँसते हुए) देखना, तू कहीं गिर न जाना, अभिमानवश स्वयं को कहीं ठगना नहीं।'

श्रीरामकृष्ण माँ से फिर कह रहे हैं – "माँ, चोट लग जाने से मैं रोता हूँ? – नहीं। मैं तो इसलिए रोता हूँ कि 'तुम जैसी माँ के रहते, मेरे जागते, घर में चोरी हो।' "

(२)

ईश्वर को किस प्रकार पुकारना चाहिए। व्याकुल होओ।

श्रीरामकृष्ण बच्चे की तरह फिर हँस रहे हैं और बातचीत कर रहे हैं – जैसे बालक ज्यादा बीमार पड़ने पर भी कभी कभी हँसी-खेल की ओर चला जाता है। श्रीरामकृष्ण महिमा आदि भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – सच्चिदानन्द को प्राप्त नहीं किया तो कुछ न हुआ, भाई।

"विवेक और वैराग्य के सदृश और दूसरी चीज नहीं है।

"संसारियों का अनुराग क्षणिक है। तभी तक है जब तक तपे हुए तवे पर पानी रहता है! – कभी शायद एक फूल को देखकर कह दिया – अहा! ईश्वर की कैसी विचित्र सृष्टि है!

"व्याकुलता चाहिए। जब लड़का सम्पत्ति का अपना हिस्सा अलग कर देने के लिए अपने माँ-बाप को परेशान करने लगता है तब माँ-बाप दोनो आपस मे सलाह करके लड़के का हिस्सा तुरन्त दे देते है। व्याकुल होने से ईश्वर जरूर सुनेगे। जब उन्होने हमे पैदा किया है, तब सम्पत्ति मे हमारा भी हिस्सा है। वे अपने बाप, अपनी माँ है – उन पर अपना जोर चल सकता है। हम उनसे कह सकते है, 'मुझे दर्शन दो, नही तो गले मे छुरी मार लूँगा।' "

किस तरह माँ को पुकारना चाहिए, श्रीरामकृष्ण बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण – मै माँ को इस तरह पुकारता था – माँ आनन्दमयी, तुम्हे दर्शन देना होगा।

"फिर कभी कहता था – हे दीनानाथ! जगन्नाथ! मै जगत् से अलग थोड़े ही हूँ? मै ज्ञानहीन हूँ, भक्तिहीन हूँ, साधनहीन हूँ, मै कुछ भी नही जानता – कृपा करके दर्शन देना होगा।"

श्रीरामकृष्ण अत्यन्त करुण स्वर मे गाने के ढंग पर बतला रहे है, किस तरह उन्हे पुकारना चाहिए। वह करुण स्वर सुनकर भक्तो का हृदय द्रवीभूत हो रहा है, महिमाचरण की आँखो से धारा बह रही हे।

महिमाचरण को देखकर श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हे – "मन! जिस तरह पुकारना चाहिए, उसी तरह तुम पुकारो तो सही, फिर देखो, कैसे श्यामा रह सकती है।"

(३)

सदसद्-विचार

कुछ भक्त शिवपुर से आये है। वे लोग इतना दूर से कष्ट उठाकर आये है, श्रीरामकृष्ण और अधिक चुप न रह सके। चुना हुई बाते उनसे कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (शिवपुर के भक्तो से) – ईश्वर ही सत्य है, और सब अनित्य। बाबू और बगीचा। ईश्वर और उनका ऐश्वर्य। लोग बगीचा ही देख लेने है, पर बाबू को कितने लोग देखना चाहते है?

भक्त – अच्छा, फिर उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – सदसद्-विचार। वे ही सत्य है और सब अनित्य, इसका सर्वदा विचार करना, और व्याकुल होकर उन्हे पुकारना।

भक्त – जी, समय कहाँ है?

श्रीरामकृष्ण – जिन्हे समय है वे ध्यान-भजन करेगे।

"जो लोग बिलकुल कुछ न कर सके वे दोनो समय भक्तिपूर्वक दो बार प्रणाम करे। वे भी तो अन्तर्यामी है, वे समझते है कि ये क्या करते है। तुम्हे कितने ही काम है। तुम्हे

पुकारने का समय नहीं, तो उन्हें आममुख्तारी दे दो; परन्तु अगर उन्हें पा न सके, उनके दर्शन न कर सके, तो कुछ न हुआ।"

एक भक्त – आपको देखना और ईश्वर को देखना बराबर है।

श्रीरामकृष्ण – यह बात अब फिर न कहो। गंगा की ही तरंग है, परन्तु तरंगों की गंगा नहीं। मैं इतना बड़ा आदमी हूँ, मैं अमुक हूँ – यह सब अहंकार बिना गये उन्हें कोई पा नहीं सकता। 'मैं' रूपी मेंड़ को भक्ति के आँसुओं से भिगोकर बराबर जमीन बना दो।

संसार क्यों है? भोग के अन्त में व्याकुलता तथा ईश्वरलाभ

भक्त – संसार में क्यों उन्होंने रखा है?

श्रीरामकृष्ण – सृष्टि के लिए रखा है, उनकी इच्छा। उनकी माया। कामिनी-कांचन देकर उन्होंने रखा है।

भक्त – क्यों भुलाकर रखा है? क्या उनकी यह इच्छा है?

श्रीरामकृष्ण – वे अगर ईश्वरीय आनन्द एक बार दे दें तो फिर कोई संसार में ही न रहे – फिर सृष्टि ही न चले!

"चावल की आढ़त में बड़ी-बड़ी गोदामों में चावल रहता है। चावल का पता कहीं चूहों को ना लग जाय इस डर से दूकानदार गोदाम के सामने एक ओर गुड़ मिलाकर लावे (खीलें) रख देता है। मीठा लगने से चूहे रात भर वही खाते रहते हैं। चावल की खोज के लिए उतावले होते ही नहीं।

"परन्तु देखो, सेर भर चावल के १४ सेर लावे होते हैं। कामिनी-कांचन के आनन्द से ईश्वर का आनन्द कितना अधिक है! उनके स्वरूप का चिन्तन करने से रम्भा और तिलोत्तमा का रूप चिता की भस्म के समान जान पड़ता है।"

भक्त – उन्हें पाने के लिए व्याकुलता क्यों नहीं होती?

श्रीरामकृष्ण – भोग का अन्त हुए बिना व्याकुलता नहीं होती। कामिनी-कांचन की भोग-वासना जितनी है, उनकी तृप्ति हुए बिना जगन्माता की याद नहीं आती। बच्चा जब खेल में लगा रहता है तब वह माँ को नहीं चाहता। खेल समाप्त हो जाने पर वह कहता है – अम्मा के पास जाऊँगा। हृदय का लड़का कबूतर लेकर खेल रहा था, 'आ-ती-ती' करके कबूतर को बुला रहा था। जब उसे खेल से तृप्ति हो गयी तब उसने रोना शुरू कर दिया। तब एक बिना पहचान के आदमी ने आकर कहा – 'आ, तुझे तेरी माँ के पास ले चलूँ।' वह उसी के कन्धे पर चढ़कर चला गया, अनायास ही।

"जो नित्य-सिद्ध है, उन्हे संसार में नहीं घुसना पड़ता। जन्म से ही उनकी भोग-वासना मिट गयी है।"

पाँच बजे का समय है। मधु डाक्टर आये हैं। श्रीरामकृष्ण के हाथ में पटरियाँ

बाँधेगे। श्रीरामकृष्ण बालक की तरह हँस रहे है और कहते है, ऐहिक और पारत्रिक के मधूसूदन!

मधु – (सहास्य) – केवल नाम का बोझ ढो रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कोई नाम कम थोड़े ही है? उनमे और उनके नाम मे कोई भेद नही है। सत्यभामा जब तुला पर स्वर्ण, मणि और मुक्ताएँ रखकर श्रीकृष्ण को तौल रही थी तब वजन पूरा न हुआ। जब रुक्मिणी ने तुलसी पर कृष्ण-नाम लिखकर एक ओर रख दिया तब वजन पूरा उतरा।

अब डाक्टर पटरियाँ बाँधेगे, जमीन पर बिस्तरा लगाया गया, श्रीरामकृष्ण हँसते हुए बिस्तर पर आकर लेटे गाने के ढंग से कह रहे है – ''राधिका की यह दशम दशा है। वृन्दा कहती है, अभी न जाने क्या क्या होगा!''

चारो ओर भक्तगण बैठे है। श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे है – 'सब सखि मिलि बैठल सरोवर-कूले।' श्रीरामकृष्ण भी हँस रहे है और भक्तगण भी हँस रहे है। बैंडेज बाँधना समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण कह रहे है –

''कलकत्ते के डाक्टरो पर मेरा उतना विश्वास नही होता। शम्भू को विकार की अवस्था थी, डाक्टर (सर्वाधिकारी) कहता था, यह कुछ नही है, दवा की नशा है! उसके बाद ही शम्भू की देह छूट गयी।''

(४)

मुख्य बात – अहैतुकी भक्ति। अपने स्वरूप को जानो।

सन्ध्या के पश्चात् श्रीमन्दिर मे आरती हो गयी। कुछ देर बाद कलकत्ते से अधर आये। भूमिष्ठ हो उन्होने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। कमरे मे महिमाचरण, राखाल और मास्टर है। हाजरा महाशय भी बीच-बीच मे आते है।

अधर – आप कैसे है?

श्रीरामकृष्ण – (स्नेह-भरे शब्दो मे) – यह देखो, हाथ मे लगकर क्या हुआ है। (सहास्य) है और कैसे!

अधर जमीन पर भक्तो के साथ बैठे है। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे है – ''तुम एक बार इस पर हाथ तो फेर दो।''

अधर छोटी खाट की उत्तर ओर बैठकर श्रीरामकृष्ण की चरण-सेवा कर रहे है। श्रीरामकृष्ण फिर महिमाचरण से बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा के प्रति) – अहैतुकी भक्ति – तुम इसे अगर साध्य कर सको तो अच्छा हो।

'' 'मुक्ति, मान, रुपया, रोग अच्छा होना, कुछ नही चाहता, – मै बस तुम्हे ही

चाहता हूँ!' इसे अहैतुकी भक्ति कहते हैं। बाबू के पास कितने ही लोग आते हैं – अनेक कामनाएँ करते हैं, परन्तु यदि कोई ऐसा आदमी आता है जो कुछ नहीं चाहता, और केवल प्यार करने के लिए ही बाबू के पास आता है तो बाबू भी उसे प्यार करते हैं।

"प्रह्लाद की भक्ति अहैतुकी है। ईश्वर पर उनका शुद्ध और निष्काम प्यार है।"

महिमाचरण चुपचाप सुन रहे हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कह रहे हैं।

"अच्छा, तुम्हारा भाव जैसा है उसी तरह की बातें कहता हूँ, सुनो –

(महिमा के प्रति) "वेदान्त के मत से अपने स्वरूप को पहचानना चाहिए, परन्तु अहं का बिना त्याग किये नही होता। अहं एक लाठी की तरह है – मानो पानी को उसने दो भागों में अलग कर रखा है। 'मैं' अलग और 'तुम' अलग।

"समाधि की अवस्था में इस अहं के चले जाने पर ब्रह्म की साक्षात् अनुभूति होती है।

"मैं महिमाचरण चक्रवर्ती हूँ, मैं विद्वान हूँ, इसी 'मैं' का त्याग करना होगा। विद्या के 'मैं' में दोष नहीं है। शंकराचार्य ने लोगों को शिक्षा देने के लिए विद्या का 'मैं' रखा था।

"स्त्रियों के सम्बन्ध में खूब सावधान रहे बिना ब्रह्मज्ञान नही होता इसीलिए गृहस्थी में उसकी प्राप्ति कठिन बात है। चाहे जितने बुद्धिमान क्यों न बनो, काजल की कोठरी में रहने से स्याही जरूर लग जायगी। युवतियो के साथ निष्काम मन में भी कामना की उत्पत्ति हो सकती है।

"परन्तु जो ज्ञान के पथ पर है उसके लिए अपनी पत्नी के साथ भोग कर लेना इतने दोष की बात नही – जैसे मल और मूत्र त्याग; वैसे ही यह भी – और जैसे शौच की बाद में हमें याद भी नहीं रहती।

"छेने की मिठाई कभी खा ही ली!" महिमाचरण हँसते हैं।

संन्यासियों के कठिन नियम और श्रीरामकृष्ण

"संसारियों के लिए भोग उतने दोष की बात नहीं।

"पर संन्यासी के लिए इसमें बड़ा दोष है। संन्यासी को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। संन्यासी के लिए स्त्रीप्रसंग, थूककर चाटने के बराबर है।

"स्त्रियों के बीच में बैठकर संन्यासी को बातचीत न करनी चाहिए। चाहे स्त्री भक्त ही क्यों न हो, जितेन्द्रिय होने पर भी वार्तालाप न करना चाहिए।

"संन्यासी कामिनी-कांचन दोनों का त्याग करें – जैसे स्त्रियों का चित्र उन्हें न देखना चाहिए वैसे ही कांचन-रुपया भी न छूना चाहिए। रुपया पास रहने से भी बुराई है। हिसाब किताब, दुश्चिन्ता, रुपये का अहंकार, लोगों पर क्रोध आदि रुपया रहने से ही होता है। सूर्य दीख पड़ता था, बादलों ने आकर उसे घेर लिया।

"इसीलिए तो मारवाड़ी ने जब हृदय के पास रुपये जमा करने की इच्छा प्रकट की, तब मैंने कहा, 'यह बात न होगी, रुपये पास रहने से ही बादल उठेंगे।'

"संन्यासी के लिए ऐसा कठोर नियम क्यों है? उसके मंगल के लिए भी है और लोगों की शिक्षा के लिए भी। संन्यासी यद्यपि स्वयं निर्लिप्त हो – जितेन्द्रिय हो, तथापि लोगों को शिक्षा देने के लिए उसे कामिनी-कांचन का इस तरह त्याग करना चाहिए।

"संन्यासी का सोलहों आना त्याग देखकर ही दूसरे लोगों को साहस होगा। तभी वे कामिनी-कांचन छोड़ने की चेष्टा करेगे।

"त्याग की यह शिक्षा यदि संन्यासी न देगा तो कौन देगा?

"उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर संसार में रहा जा सकता है। जैसे मक्खन उठाकर पानी में डाल रखना। जनक ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर संसार में रहे थे।

"जनक दो तलवारें चलाते थे – ज्ञान की और कर्म की। संन्यासी कर्मों का त्याग करता है। इसलिए उसके पास एक ही तलवार है – ज्ञान की। जनक की तरह का ज्ञानी संसार-पेड़ के नीचे का फल भी खा सकता है और ऊपर का भी। साधु-सेवा, अतिथि-सत्कार, ये सब कर सकता है। मैंने माँ से कहा था, 'माँ, मैं सूखा साधु न होऊँगा।'

"ब्रह्मज्ञान-लाभ के पश्चात् खानपान का भी विचार नहीं रहता। ब्रह्मज्ञानी ऋषि ब्रह्मानन्द के बाद कुछ भी खा सकते थे – शूकरमांस तक।

चार आश्रम, योगतत्त्व और श्रीरामकृष्ण

(महिमाचरण से) "संक्षेप में योग दो प्रकार के हैं, कर्मो के द्वारा योग और मन के द्वारा योग।

"ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और संन्यास – इनमें से प्रथम तीनों में कर्म करना पड़ता हैं। संन्यासी को दण्ड-कमण्डल और भिक्षापात्र लेने पड़ते हैं। संन्यासी चाहे कभी कभी नित्यकर्म कर ले, परन्तु उसके मन में कभी आसक्ति नहीं होती। उसे उन कर्मों का ज्ञान नहीं रहता। कोई कोई संन्यासी कुछ कुछ नित्यकर्म करते है, परन्तु वह होता है लोकशिक्षा के लिए। गृहस्थ अथवा दूसरे आदमी यदि निष्काम कर्म कर सकें तो उन कर्मों के द्वारा उनका ईश्वर से योग हो जाता है।

"परमहंस अवस्था में – जैसी शुकदेव आदि की थी – कर्म सब छूट जाते हैं; पूजा, जप, तर्पण, सन्ध्या, ये सब कर्म। इस अवस्था में केवल मन का योग होता है। बाहर के काम कभी कभी वह इच्छापूर्वक करता है – लोकशिक्षा के लिए। परन्तु वह सदा ही स्मरण और मनन किया करता है।"

(५)

स्तवपाठ

बातचीत में रात के आठ बज गये। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण को शास्त्रों से कुछ स्तव आदि सुनाने के लिए कह रहे हैं। महिमाचरण एक पुस्तक लेकर उत्तरगीता के आरम्भ में ही परब्रह्म सम्बन्धी जो श्लोक हैं वही सुनाने लगे – 'यदेकं निष्कलं ब्रह्म व्योमातीतं निरंजनम्। अप्रतर्क्यमविज्ञेयं विनाशोत्पत्तिवर्जितम्।'

फिर तृतीय अध्याय का सातवाँ श्लोक पढ़ते हैं – 'अग्निर्देवो द्विजातीनां मुनीनां हृदि दैवतम्। प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिनाम्।' अर्थात् ब्राह्मणों के देवता अग्नि हैं, मुनियों के देवता हृदय में हैं, स्वल्पबुद्धि मनुष्यों के लिए प्रतिमा ही देवता हैं और समदर्शी महायोगियों के लिए देवता सर्वत्र है।

'सर्वत्र समदर्शिनाम्' – इस अंश का उच्चारण होते ही श्रीरामकृष्ण एकाएक आसन छोड़कर खड़े हो गये और समाधिमग्न हो गये। हाथ में वही लकड़ी और बैण्डेज बँधा हुआ है। भक्तगण चुपचाप इस सर्वदर्शी महायोगी की अवस्था देख रहे हैं।

बड़ी देर तक इस तरह खड़े रहने के बाद श्रीरामकृष्ण प्रकृतिस्थ हुए। फिर उन्होंने आसन ग्रहण किया। महिमाचरण को अब हरिभक्तिवाले श्लोक पढ़ने के लिए कह रहे हैं।

महिमाचरण – ('नारदपंचरात्र'से) –

> "अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
> नान्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।
> आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।
> नाराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।।
> विरम विरम ब्रह्मन् किं तपस्यासु वत्स।
> व्रज व्रज द्विज शीघ्रं शङ्करं ज्ञानसिन्धुम्।।
> लभ लभ हरिभक्तिं वैष्णवोक्तां सुपक्वाम्।
> भवनिगडनिबन्धच्छेदनी कर्तरीं च।।"

श्रीरामकृष्ण – अहा! अहा!

भाण्ड और ब्रह्माण्ड। तुम ही चिदानन्द, नाहं, नाहं

श्लोकों को सुनकर श्रीरामकृष्ण फिर भावावेश में आने लगे। बड़ी मुश्किल से उन्होंने भाव रोका। अब यतिपंचक का पाठ हो रहा है –

"यस्यामिदं कल्पितमिन्द्रजालं।
चराचरं भाति मनोविलासम्।।
सच्चित्सुखैकं जगदात्मरूपं।
सा काशिकाहं निजबोधरूप:।।"

'सा काशिकाहं निजबोधरूप:' यह सुनते ही श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कह रहे है – जो कुछ भाण्ड में है वही ब्रह्माण्ड मे है।

अब पाठ हो रहा है निर्वाणषट्कम् से –

"ॐ मनोबुद्ध्यहंकारचित्तानि नाहं,
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायु,
श्चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्।।"

जितनी बार महिमाचरण कह रहे है – 'चिदानन्दरूप: शिवोऽहं शिवोऽहम्', उतनी ही बार श्रीरामकृष्ण कह रहे है – नाहं, नाहं – तुम, तुम – चिदानन्द हो।

महिमाचरण जीवन्मुक्ति-गीता से कुछ श्लोक पढ़कर षट्चक्रवर्णन पढ़ रहे है। उन्होंने स्वयं काशी मे योगी की योगावस्था मे मृत्यु देखी थी, यह बात उन्होने कही।

अब व भूचरी और खेचरी मुद्रा का वर्णन कर रहे है। साथ ही शाम्भवी विद्या का भी। शाम्भवी यह कि मनुष्य जहाँ-तहाँ जाया करता है, उसका कोई उद्देश्य नही है।

महिमा – राम-गीता मे बड़ी अच्छी अच्छी बाते है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम राम-गीता, राम-गीता कर रहे हो, तो तुम घोर वेदान्ती हो! साधु महात्मा यहाँ कितना पढ़ते थे।

महिमाचरण, प्रणव शब्द कैसा है, यही पढ़ रहे है – 'तेलधारमविच्छिन्नं दीर्घघण्टानिनादवत्।' फिर समाधि के लक्षण कह रहे है –

"ऊर्ध्वपूर्ण अध:पूर्ण मध्यपूर्ण यदात्मकम्।
सर्वपूर्ण स आत्मेति समाधिस्थस्य लक्षणम्।।"

अधर और महिमाचरण प्रणाम करके बिदा हुए।

(६)

श्रीरामकृष्ण की बालक जैसी अवस्था

दूसरे दिन रविवार है, ३ फरवरी १८८४। दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए है। कलकत्ते से राम, सुरेन्द्र आदि भक्त उनके चोट लगने का हाल पाकर चिन्तित हो, आये है। मास्टर भी पास बैठे है। श्रीरामकृष्ण के हाथ मे लकड़ी

बँधी हुई है। भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – ऐसी अवस्था में माँ ने रखा है कि छिपाने की मजाल नहीं, बालक जैसी अवस्था।

"राखाल मेरी अवस्था नहीं समझता। कहीं कोई देखकर निन्दा न करे, इसलिए टूटे हाथ को कपड़े से छिपा देता है। मधु डाक्टर को अलग ले जाकर सब बातें कह रहा था। तब चिल्लाकर मैंने कहा, कहाँ हो मधूसूदन, देखो आकर मेरा हाथ टूट गया है।

"मथुर बाबू और उनकी पत्नी जिस घर में सोते थे, उसी में मैं भी सोता था। वे ठीक बच्चे के समान मेरी देखभाल करते थे। तब मेरी उन्माद-अवस्था थी। मथुर बाबू कहते थे, 'बाबा, क्या हम लोगों की कोई बातचीत तुम्हारे कान तक पहुँचती है?' मैं कहता था, 'हाँ पहुँचती है।'

"मथुर बाबू की पत्नी ने उन पर (मथुर बाबू पर) सन्देह करके कहा था, 'अगर कही जाना तो भट्टाचार्य महाशय को साथ ले जाना।' वे एक जगह गये, मुझे मकान में नीचे बैठा दिया। फिर आध घण्टे बाद आकर कहा, 'चलो बाबा, चलें, गाड़ी पर बैठो चलकर।' घर आकर उनकी पत्नी ने पूछा तो मैंने ठीक येही सब बातें सुना दी। मैंने कहा, 'सुनो, एक मकान में हम लोग गये थे, उन्होंने मुझे नीचे बैठा दिया था, आप ऊपर गये थे, आध घण्टे के बाद आकर कहा, चलो बाबा, चलें!' उनकी पत्नी ने, इससे जो कुछ समझना था, समझ लिया।

"मथुर का एक हिस्सेदार यहाँ के पेड़ों के फल और गोभियाँ गाड़ी में लादकर घर भेज देता था। दूसरे हिस्सेदारों ने जब पूछा, तब मैंने यही बात बता दी।"

□□□

परिच्छेद ७६

ईश्वर ही एक मात्र सत्य है।

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में राखाल, मास्टर, मणिलाल आदि के साथ

श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद कुछ विश्राम कर रहे हैं। जमीन पर मणि मल्लिक बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण के हाथ में अब भी तख्ती बँधी हुई है। मास्टर आकर प्रणाम करके जमीन पर बैठ गये। आज रविवार है, दि. २४ फरवरी १८८४।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – किस तरह आये?

मास्टर – जी, आलमबाजार तक किराये की गाड़ी पर आया, वहाँ से पैदल।

मणिलाल – ओह! बिलकुल पसीने-पसीने हो गये है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – इसलिए सोचता हूँ कि मेरे सब अनुभव सिर्फ मस्तिष्क के ही खयाल नहीं हैं; नहीं तो ये सब इतने 'इंग्लिशमैन' (अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोग) इतनी तकलीफ करके क्यों आते हैं'

श्रीरामकृष्ण अपने स्वास्थ के बारे में बोल रहे हैं, हाथ टूटने की बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – मैं इसके लिए कभी कभी अधीर हो जाता हूँ। – इसे दिखाता हूँ, फिर उसे दिखाता हूँ, और पूछता हूँ, क्यों जी, क्या यह अच्छा हो जायगा?

"राखाल चिढ़ता है, मेरी अवस्था समझता तो है नहीं। कभी कभी दिल में आता है, यहाँ से जाय, तो चला जाय – परन्तु फिर माँ से कहता हूँ, माँ कहाँ जायगा? – कहाँ जलने-मरने जाय?

"मेरी बालक जैसी अधीर अवस्था आज नयी थोड़े ही है? मथुर बाबू को नाड़ी दिखाता था, पूछता, क्यों जी, मुझे कोई बीमारी हो गयी है?

"अच्छा, तो फिर ईश्वर पर निष्ठा कहाँ रही? जब मैं उस देश को* जा रहा था, तब बैलगाड़ी के पास डाकुओं की तरह लाठी लिये हुए कुछ आदमी आये। मैं देवताओं के नाम लेने लगा। परन्तु कभी कहता था राम राम, कभी दुर्गा दुर्गा, कभी ॐ तत् सत् –

---

* उनकी जन्मभूमि कामारपुकुर को

इसलिए कि किसी के नाम का असर तो इन डाकुओं पर पड़ेगा ही!

(मास्टर से) "अच्छा, मुझमें इतनी अधीरता क्यों है?"

मास्टर – आप सदा ही समाधिस्थ हैं। भक्तों के लिए सिर्फ थोड़ासा मन शरीर पर रखा है। इसीलिए शरीर-रक्षा के निमित्त कभी कभी अधीर होते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ; थोड़ा-सा मन शरीर पर है। भक्ति और भक्तों को लेकर रहने के लिए।

मणिलाल मल्लिक प्रदर्शनी की बात कह रहे हैं।

यशोदा कृष्ण को गोद में लिये हैं – बड़ी सुन्दर मूर्ति है, यह सुनकर श्रीरामकृष्ण की आँखों में आँसू आ गये! उस वात्सल्यरस की प्रतिमा यशोदा की बात सुनकर श्रीरामकृष्ण की उद्दीपना होने लगी, रो रहे हैं।

मणिलाल – आपका जी अच्छा नहीं, नहीं तो आप भी एक बार जाकर देख आते – किले के मैदान की प्रदर्शनी।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर आदि से) – मैं जाऊँ तो भी सब कुछ मुझे देखने को न मिलेगा। कोई एक चीज देखने ही से बेहोश हो जाऊँगा – और चीजें फिर देखने को रह जायेगी। चिड़ियाखाना दिखाने के लिए ले गये थे। सिंह देखकर ही समाधि हो गयी। ईश्वरी भगवती के वाहन को देखकर ईश्वरी उद्दीपना हुई। तब फिर दूसरे जानवरों को कौन देखता है, सिंह देखकर ही लौट आया। इसलिए यदु मल्लिक की माँ ने एक बार कहा था, इनको प्रदर्शनी ले चलो, – फिर उसने कहा, नहीं रहने दो।

मणि मल्लिक पुराने ब्राह्मसमाजी हैं। उम्र पैंसठ की होगी। श्रीरामकृष्ण उन्हींके भावों में बातचीत करते हुए, उपदेश दे रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – जयनारायण पण्डित बड़ा उदार था। जाकर मैंने देखा, उसका भाव बड़ा अच्छा है। लड़के बूट पहने हुए थे। उसने खुद कहा, मैं काशी जाऊँगा। जो कुछ कहा, अन्त में वही किया। काशी में रहा और उसकी देह भी वहीं छूटी।

"उम्र होने पर इस तरह चले जाकर ईश्वर-चिन्तन करना अच्छा है, क्यों?"

मणिलाल – जी हाँ। संसार की अड़चनों से जी ऊब जाता है।

श्रीरामकृष्ण – गौरी फूलदल देकर अपनी स्त्री की पूजा करता था। सभी स्त्रियाँ भगवती की एक एक मूर्ति हैं।

(मणिलाल से) "अपनी वह बात जरा इन लोगों से भी तो कहो।"

मणिलाल – (सहास्य) – नाव पर चढ़कर कुछ लोग गंगा पार कर रहे थे। उनमें एक पण्डित अपनी विद्या का खूब परिचय दे रहा था। 'मैंने अनेक शास्त्र पढ़े हैं – वेद – वेदान्त – षड्दर्शन।' एक से उसने पूछा, 'वेदान्त क्या है, जानते हो?' उसने कहा, 'जी नहीं'। 'फिर तुम सांख्य-पतञ्जलि जानते हो?' उसने कहा – 'जी नहीं'। 'दर्शन आदि कुछ

भी नही पढ़ा?' 'जी नहीं।'

"पण्डितजी बड़े गर्व से बातचीत कर रहे है, दूसरा चुपचाप बैठा है कि इतने मे जोरों की आँधी आयी – नाव डूबने लगी। उस आदमी ने पूछा, 'पण्डितजी, आप तैरना जानते हैं?' पण्डितजी ने कहा, 'नही।' उसने कहा, मैने दर्शन-फर्शन तो नहीं पढ़ा पर तैरना जानता हूँ!' "

ईश्वर ही वस्तु और सब अवस्तु। लक्ष्य-भेद

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अनेकानेक शास्त्रों के ज्ञान से क्या होगा? भवनदी किस तरह पार की जाती है, यही जानना आवश्यक है। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु।

"लक्ष्य-भेद के समय द्रोणाचार्य ने अर्जुन से पूछा था, 'तुम क्या देख रहे हो? – क्या तुम इन राजाओं को देख रहे हो?' अर्जुन ने कहा – 'नही।' 'मुझे देख रहे हो?' 'नही।' 'पेड़ देख रहे हो?' 'नही।' 'पेड़ पर पक्षी देख रहे हो?' 'नही।' 'तो क्या देख रहे हो?' 'बस पक्षी की आँख, जिसे भेदना है।'

"जो केवल पक्षी की आँख देखता है, वही लक्ष्य-भेद कर सकता है।

"जो देखता है, ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु है, वही चतुर है। अन्य खबरो से हमे क्या काम है? हनुमान ने कहा था, 'मै तिथि और नक्षत्र, यह सब कुछ नही जानता। मै तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ।'

(मास्टर से) "यहाँ के लिए पंखे मोल ले दो।

(मणिलाल से) "ए जी, तुम एक बार इनके (मास्टर के) बाप के पास जाना। भक्त को देखकर उद्दीपना होगी।"

(२)

मणिलाल आदि को उपदेश। नरलीला

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हैं। मणिलाल आदि भक्तगण जमीन पर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण की मधुर बातें सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – "इस हाथ के टूटने के बाद से एक बड़ी विचित्र अवस्था हो रही है। केवल नर-लीला अच्छी लगती है।

"नित्य और लीला। नित्य – अर्थात् वही अखण्ड सच्चिदानन्द।

"लीला – ईश्वर-लीला, देव-लीला, नर-लीला, संसार-लीला।

"वैष्णवचरण कहता था कि नर-लीला पर विश्वास होने से पूर्ण ज्ञान हो जाता है। तब उसकी बात मैं न सुनता था। अब देखता हूँ, ठीक है। वैष्णवचरण मनुष्य की तस्वीरें देखकर जिनमे कोमल भाव, प्रेम-भाव पाता था, उन्हें पसन्द करता था।

(मणि से) "ईश्वर ही मनुष्य बनकर लीला कर रहे हैं – वे ही मणि मल्लिक हुए हैं। सिक्ख लोग शिक्षा देते हैं कि तू ही सच्चिदानन्द है। कभी कभी मनुष्य अपने सत्य स्वरूप की झलक पा जाता है और आश्चर्य से चकित हो निर्वाक् रह जाता है। ऐसे समय में वह आनन्द-समुद्र में तैरने लगता है। एकाएक आत्मियों को देखकर जैसा होता है। (मास्टर से) उसी दिन गाड़ी पर आते हुए बाबूराम को देखकर जैसा हुआ था। शिव, जब अपना स्वरूप देखते है, तब 'मैं क्या हूँ' कहकर नृत्य करते हैं।

"अध्यात्म-रामायण में वही बात है। नारद कहते हैं, हे राम, जितने पुरुष हैं, सब तुम हो और जितनी स्त्रियाँ हैं, सब सीता।

"रामलीला में जिन जिन लोगों ने भाग लिया था उन्हें देखकर मुझे यही जान पड़ा कि इन सब रूपों में एकमात्र नारायण की ही सत्ता है। असल और नकल दोनों बराबर जान पड़े।

"कुमारी पूजा क्यों करते हैं? सब स्त्रियाँ भगवती की एक-एक मूर्ति हैं। शुद्धात्मा कुमारी में भगवती का अधिक प्रकाश है!

(मास्टर से) "तकलीफ होने पर क्यों मैं अधीर हो जाता हूँ? मुझे बच्चे के स्वभाव में रखा है। बालक का सब अवलम्ब माँ पर है।

"दासी का लड़का बाबू के लड़के से लड़ाई करते समय कहता है, 'मैं अपनी माँ से कह दूँगा!'

"राधाबाजार में मुझे फोटो उतरवाने के लिए ले गये थे। उस दिन राजेन्द्र मित्र के घर जाने की बात थी। सुना था, केशव सेन और दूसरे लोग भी जायेंगे। कुछ बातें कहने के लिए सोच रखी थीं। राधाबाजार जाकर सब भूल गया। तब मैने कहा, माँ, तू कहेगी! – मैं भला क्या कहूँगा!

"मेरा ज्ञानियों जैसा स्वभाव नहीं है। ज्ञानी अपने को बड़ा देखता है, कहता है, मुझे फिर रोग कैसे?

"कुँवरसिंह ने कहा, 'आप अब भी देह की चिन्ता में रहते हैं।'

"मेरा यह स्वभाव है – मेरी माँ सब जानती हैं। राजेन्द्र मित्र के यहाँ वे ही (माँ) बातचीत करेंगी। वही बात बात है। सरस्वती के ज्ञान की एक किरण से एक हजार पण्डित दाँत में उँगली दबा लेते हैं।

"भक्त की अवस्था में – विज्ञानी की अवस्था में मुझे रखा है; इसीलिए राखाल आदि से मजाक किया करता हूँ। ज्ञानी की अवस्था में रखने से यह बात न होती!

"इस अवस्था में देखता हूँ, माँ ही सब कुछ हुई हैं! सब जगह उन्हीं को देखता हूँ।

"काली-मण्डप में देखा, दुष्ट मनुष्य में भी एवं भागवत पण्डित के भाई में भी माँ का ही प्रकाश है।

"रामलाल की माँ को डाटने के लिए गया तो सही, पर फिर हो न सका। देखा उन्हीं का एक रूप है। माँ को कुमारी के भीतर देखता हूँ, इसलिए कुमारी-पूजन करता हूँ।

"मेरी स्त्री पैरों पर हाथ फेरती है, फिर मैं उसे नमस्कार करता हूँ।

"तुम लोग मेरे पैर छूकर नमस्कार करते हो, – हृदय अगर रहता तो किसकी मजाल थी, जो पैरों में हाथ लगाता! – वह किसी को पैर छूने ही न देता!

"इस अवस्था में रखा है, इसीलिए नमस्कार के बदले नमस्कार करना पड़ता है।

"देखो, दुष्ट आदमी तक को अलग करने की जगह नही है। तुलसी सूखी हो, छोटी हो, श्रीठाकुरजी की सेवा मे लग ही जाती है।"

□□□

परिच्छेद ७७

गृहस्थ तथा संन्यासियों के नियम

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में नरेन्द्र आदि भक्तों के साथ

"श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर में, अपनी उसी छोटी खाट पर बैठे हुए गाना सुन रहे हैं। ब्राह्मसमाज के श्री त्रैलोक्य सान्याल गा रहे है। आज रविवार है, २ मार्च १८८४। जमीन पर भक्तगण बैठे हुए गाना सुन रहे हैं। – नरेन्द्र, सुरेन्द्र मित्र, मास्टर, त्रैलोक्य आदि कितने ही भक्त बैठे है।

श्रीयुत नरेन्द्र के पिता-बड़ी अदालत के वकील थे। उनका देहान्त हो जाने पर उनके परिवार को इस समय बड़ी तकलीफ है, यहां तक कि कभी-कभी फाका भी करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण का शरीर, जब से हाथ टूटा, अब तक अच्छा नहीं हुआ। हाथ में बहुत दिनों तक तख्ती बँधी थी।

त्रैलोक्य माता का संगीत गा रहे हैं। गाते हुए, कह रहे है, माँ, अपनी गोदी में लेकर, आँचल से ढककर मुझे अपनी छाती से लगा रखो।

(संगीत का भाव)

"माँ, मैं तेरे हृदय में छिपा रहूँगा। तेरे मुँह की ओर ताकताककर, माँ-माँ कहकर पुकारूँगा। चिदानन्द-रस में डूबकर महायोग की निद्रा के आवेश में निर्निमेष नयनों से, तेरी दृष्टि पर दृष्टि जमाये हुए, तेरा रूप देखूँ। संसार का तमाशा देखकर और सुनकर भय से हृदय काँप उठता है। मुझे अपने स्नेह के आँचल से ढककर तुम हृदय से लगा लो, फिर कभी अलग न करना।"

गाना सुनते हुए श्रीरामकृष्ण की आँखों से प्रेम के आँसू टपक रहे हैं। भाव में गद्गद कण्ठ से कह रहे हैं – अहा! कैसा भाव है!

त्रैलोक्य फिर गा रहे हैं – (भाव)

(१) "हरे! तुम अपने भक्तों की लाज रखनेवाले हो। तुम मेरी मनोकामना पूर्ण करो। ऐ ईश्वर! तुम भक्तों के सम्मान हो। बिना तुम्हारे और कौन रक्षा कर सकता है?

प्राणपति, प्राणाधार तुम्हीं हो। मै तो तुम्हारा गुलाम हूँ।''

(२) ''तुम्हारे चरणो को सार समझकर, जाति-पाँति का विचार छोड़ लाज और भय को भी मैंने तिलांजलि दे दी। अब रास्ते का बटोही होकर मैं कहाँ जाऊँ? अब तो तुम्हारे लिए मै कलंक-भागी हो चुका; तुम्हें मैं प्यार करता हूँ, इसलिए लोग मेरी कितनी निन्दा करते है। अब मेरी शर्म और भ्रम सब तुम्हारा ही है। चाहे तुम मेरी रक्षा करो और चाहे न करो, उत्तरदायित्व और भार तुम्ही पर है। परन्तु यह सोच लेना कि दास का मान तुम्हारा ही मान है। तुम मेरे हृदय के स्वामी हो, तुम्हारे ही मान से मेरा भी मान है, अतएव जैसी तुम्हारी रुचि हो, वही करो।''

(३) ''घर से बाहर निकालकर अगर तुमने मुझे अपने प्रेम में फँसाया है तो मुझे अपने श्रीचरणो मे जगह भी तो दो। ऐ प्राणप्यारे, सदा ही मुझे अपना प्रेममधु पिलाते रहो। जो तुम्हारे प्रेम का दास है, उसका परित्राण करो।''

श्रीरामकृष्ण की आँखों से प्रेम की धारा बह रही है। वे जमीन पर आकर बैठे और रामप्रसाद के भावों मे गाने लगे –

''यश, अपयश, कुरस, सुरस सब तुम्हारे ही रस हैं। माँ, रसेश्वरि! रस में रहकर रसभंग क्यों करती हो?''

त्रैलोक्य से कह रहे है – 'अहा! तुम्हारे गाने कैसे है! तुम्हारे गाने बहुत ठीक हैं। केवल वही जो समुद्र को गया है, वहाँ का जल ला सकता है।' त्रैलोक्य फिर गाते हैं –

''हरि, तुम्हीं नाचते हो, तुम्ही गाते हो और तुम्हीं ताल ताल पर हथेली बजाते हो। मनुष्य तो एक पुतला मात्र है, वृथा ही वह 'मेरा मेरा' कहता है। जैसे कठपुतली के खिलौने हैं, वैसा ही जीवों का जीवन भी है। मनुष्य यदि तुम्हारे रास्ते पर चलता है, तो वह देवता बन जाता है। देहयन्त्र में यन्त्रीस्वरूप तुम्ही हो, आत्म-रथ में तुम्हीं रथी हो, जीव तो अपनी स्वाधीनता के फल से केवल पापों का भोग करता है। तुम सब के मूलाधार हो, तुम प्राणों के प्राण और हृदय के स्वामी हो, तुम अपने पुण्य के बल से असाधु को भी साधु बना देते हो।'' गाना समाप्त हुआ। श्रीरामकृष्ण अब बातचीत कर रहे हैं।

नित्यलीला योग। पूर्ण ज्ञान अथवा विज्ञान

श्रीरामकृष्ण – (त्रैलोक्य और दूसरे भक्तों स) – हरि ही सेव्य हैं और हरि ही सेवक हैं – यह भाव पूर्ण ज्ञान का लक्षण है। पहले नेति-नेति करने पर, ईश्वर ही सत्य हैं और सब मिथ्या है, यह बोध होता है। इसके बाद वह देखता है, ईश्वर ही सब कुछ हुए हैं – ईश्वर ही माया, जीव, जगत्, यह सब हुए हैं। अनुलोम हो जाने पर फिर विलोम होता है। यह पुराणों का मत है। जैसे एक बेल में गूदा, बीज और खोपड़ा है। खोपड़ा और बीज निकाल देने पर गूदा रह जाता है; परन्तु बेल का वजन कितना था, यह जानने की

अगर इच्छा हुई तो खोपड़ा और बीज के निकाल देने से काम न बनेगा। इसी तरह जीव-जगत् को छोड़कर पहले सच्चिदानन्द में जाया जाता है। फिर उन्हें प्राप्त कर लेने पर मनुष्य देखता है, यह सब जीव-जगत् भी वे ही हुए हैं। जिस वस्तु का गूदा है, उसका खोपड़ा और बीज भी है, जैसे मट्ठे का मक्खन और मक्खन का मट्ठा।

"परन्तु कोई-कोई कह सकते हैं कि सच्चिदानन्द इतने कड़े क्यों हो गये – इस पृथ्वी को दबाने से वह बड़ी कठिन जान पड़ती है। इसका उत्तर यह है कि शोणित और शुक्र तो इतना तरल पदार्थ है, परन्तु उन्हीं से इतने मनुष्य, बड़े-बड़े जीव तैयार हो रहे हैं! ईश्वर से सब कुछ हो सकता है। एक बार अखण्ड सच्चिदानन्द तक पहुँचकर फिर वहाँ से उतरकर यह सब देखो।"

संसार और ईश्वर। योगी और भक्त में भेद

"वे ही सब कुछ हुए हैं। संसार उनसे अलग नहीं है। गुरु के पास वेद पढ़कर श्रीरामचंद्र को वैराग्य हो गया। उन्होंने कहा, संसार अगर स्वप्नवत् है तो इसका त्याग करना ही उचित है। इससे दशरथ डरे। उन्होंने राम को समझाने के लिए गुरु वशिष्ठ को भेज दिया। वशिष्ठ ने कहा, 'राम, हमने सुना है – तुम संसार छोड़ना चाहते हो। तुम हमें समझा दो कि संसार ईश्वर से अलग एक वस्तु है। यदि तुम समझा सको कि ईश्वर से संसार नहीं हुआ तो तुम इसे छोड़ सकते हो।' राम तब चुप हो रहे, कोई उत्तर न दे सके।

"सब तत्त्व अन्त में आकाश-तत्त्व में लीन हो जाते हैं। सृष्टि के समय आकाश-तत्त्व से महत्-तत्त्व, महत-तत्त्व से अहंकार, ये सब क्रमशः तैयार हुए हैं। अनुलोम और विलोम। भक्त इन सब को मानते हैं। भक्त अखण्ड सच्चिदानन्द को भी मानते हैं और जीव-जगत् को भी।

"परन्तु योगी का मार्ग अलग है। वह परमात्मा मे पहुँचकर फिर वहाँ से नहीं लौटता! उसी परमात्मा से युक्त हो जाता है।

"थोड़े के भीतर जो ईश्वर को देखता है, उसे खण्ड ज्ञानी कहते हैं। वह सोचता है, उसके परे और उनकी सत्ता नहीं है।

"भक्त तीन श्रेणी के होते हैं। अधम, मध्यम और उत्तम। अधम भक्त कहता है, वे हैं ईश्वर, और ऐसा कहकर आकाश की ओर उँगली उठा देता है। मध्यम भक्त कहता है, वे हृदय में अन्तर्यामी के रूप में विराजमान हैं। उत्तम भक्त कहता है वे ही यह सब हुए हैं, – जो कुछ मैं देख रहा हूँ, सब उन्हीं के एक-एक रूप हैं। नरेन्द्र पहले मजाक करके कहता था, अगर वे ही सब कुछ हुए हैं तो ईश्वर लोटा भी है और थाली भी। (सब हँसते हैं)

ईश्वरदर्शन और कर्मत्याग। विराट शिव।

"परन्तु उनके दर्शन होने पर सब संशय दूर हो जाते हैं। सुनना एक बात है और देखना दूसरी बात। सुनने से सोलहों आना विश्वास नहीं होता। साक्षात्कार हो जाने पर फिर विश्वास में कुछ बाकी नहीं रह जाता।

"ईश्वर-दर्शन करने पर कर्मों का त्याग हो जाता है। इसी तरह मेरी पूजा बन्द हो गयी। काली-मन्दिर में पूजा करता था, एकाएक माँ ने दिखाया, सब चिन्मय है – पूजा की चीजें, वेदी – मन्दिर की चौखट – सब चिन्मय है। मनुष्य, जीव, वस्तु, सब चिन्मय है। तब पागल की तरह चारों ओर फूल फेंकने लगा! जो कुछ दृष्टि में आता, उसी की पूजा करने लगा!

"एक दिन पूजा करते समय शिवजी के मस्तक पर चन्दन लगा रहा था, उसी समय दिखलाया, यह विराट् मूर्ति – यह विश्व ही शिव है। तब शिव-लिंग तैयार करके पूजा करना बन्द हो गया। मैं फूल तोड़ रहा था, उसी समय मुझे दिखलाया – फूल के पेड़ फूल के एक एक गुच्छे हैं।"

काव्यरस और ईश्वर-दर्शन में भेद

त्रैलोक्य – अहा! ईश्वर की रचना कैसी सुन्दर है!

श्रीरामकृष्ण – नहीं जी, आँखो के आगे पेड़ एकाएक फूल के गुच्छे बन गये – यह कुछ मेरा केवल मानसिक भाव ही नही था। दिखा दिया, एक एक फूल का पेड़ एक एक गुच्छा है और उस विराट् मूर्ति के सिर पर शोभायमान हो रहा है। उसी दिन से फूल तोड़ना बन्द हो गया। आदमी को भी मै उसी रूप में देखता हूँ। मानो वेही मनुष्य के आकार में झूम-झूमकर टहल रहे हैं। मानो तरंग पर एक तकिया बह रहा है – इधर उधर हिलता हुआ चला जा रहा है, लहर के लगने पर कभी कभी ऊँचा चढ़ जाता है और फिर लहर के साथ नीचे आ जाता है।

"शरीर दो दिन के लिए है। वही ईश्वर सत्य है। शरीर तो अभी अभी है, अभी अभी नहीं। बहुत दिन हुए, जब पेट की बीमारी से बड़ी तकलीफ मिल रही थी, हृदय ने कहा, माँ से एक बार कहते क्यों नहीं जिससे अच्छे हो जाओ! रोग के लिए मुझे कहते हुए बड़ी लज्जा लगी। मैंने कहा, माँ! सोसायटी (Asiatic Society) में मैंने आदमी का अस्थिपंजर (Skeleton) देखा था, तारों से जोड़कर आदमी के आकार का बनाया गया था, माँ, बस केवल उतना ही इस शरीर को रहने दो, अधिक मैं नहीं चाहता। मैं तुम्हारा नाम लेता रहूँ – तुम्हारे गुण कीर्तन करता रहूँ, उतनी ही इच्छा है।

"बचने की इच्छा क्यों है? जब रावण मारा गया तब राम और लक्ष्मण लङ्का के भीतर गये। जहाँ रावण रहता था, वहाँ जाकर देखा, उन्हें देख रावण की माँ निकषा भाग

रही थी। इससे लक्ष्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने राम से कहा, 'भाई! जिसके वंश में अब कोई भी नहीं रह गया, उसे भी शरीर की इतनी ममता है।' राम ने निकषा को अपने पास बुलाकर उससे कहा, 'तुम डरो मत, परन्तु यह बतलाओ कि तुम भाग क्यों रही थी?' निकषा ने कहा, 'राम! मैं इसलिए नहीं भागी कि मुझे देह की प्रीति है, नहीं, मैं बची थी, इसीलिए तो तुम्हारी इतनी लीलाएँ देखीं – यदि और भी कुछ दिन बची रहूँगी तो तुम्हारी और न जाने कितनी लीलाएँ देखूँगी! इसीलिए मुझे बचने की लालसा है।'

"वासना के बिना रहे शरीर धारण नहीं हो सकता।

(सहास्य) – "मुझे भी दो-एक इच्छाएँ थीं। मैंने कहा था, 'माँ, कामिनी-कांचन-त्यागियों का सत्संग मुझे दो। और ज्ञानी और भक्तों का सत्संग करूँगा। अतएव कुछ शक्ति भी दे दे, जिससे कुछ चल सकूँ – यहाँ-वहाँ जा सकूँ।' परन्तु उसने चलने की शक्ति नहीं दी।"

त्रैलोक्य – (सहास्य) – साध मिटी?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कुछ बाकी है। (सब हँसते हैं।)

"शरीर दो दिन के लिए है। हाथ जब टूट गया तब माँ से मैंने कहा – 'माँ! बड़ा दर्द हो रहा है!' तब उसने दिखाया, गाड़ी है और उसका इंजीनियर। गाड़ी के पुर्जे कहीं कहीं खुल गये थे! इंजीनियर जैसा चलाता है, गाड़ी वैसे ही चल रही है। उसकी अपनी कोई शक्ति नहीं है।

"फिर देह की देखभाल क्यों करता हूँ? इच्छा है, ईश्वर को लेकर आनन्द करूँ, उनका नाम लूँ, – उनके गुण गाऊँ, उनके ज्ञानियों और भक्तों को देखता फिरूँ।"

(२)

देह का सुख-दुःख

नरेन्द्र जमीन पर सामने बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (त्रैलोक्य और भक्तों से) – देह के लिए सुख-दुःख तो लगा ही है। देखो न, नरेन्द्र के पिता का देहान्त हो गया, घरवाले सब बड़ी तकलीफ पा रहे हैं, परन्तु कोई उपाय नहीं हो रहा है। वे कभी सुख में रहते हैं, कभी दुःख में।

त्रैलोक्य – जी, नरेन्द्र पर ईश्वर की दया होगी।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – और कब होगी! काशी में अन्नपूर्णा के यहाँ कोई भूखा नहीं रहता, परन्तु किसी किसी को शाम तक बैठा रहना पड़ता है। हृदय ने शम्भू मल्लिक से कहा था, मुझे कुछ रुपये दो। शम्भू मल्लिक अंग्रेजी मत का आदमी है। उसने कहा, 'तुम्हें क्यों रुपये दूँ? तुम मेहनत करके उपार्जन कर सकते हो। तुम कुछ रोजगार तो करते ही हो। हाँ, बहुत गरीब कोई हो, तो उसकी बात और है। अथवा अन्धे-लँगड़े-

लूले को कुछ देने से ठीक भी है।' तब हृदय ने कहा, 'महाशय, बस यह बात न कहियेगा। मुझे रुपयों की जरूरत नहीं। ईश्वर करें, मुझे अन्धा-लँगड़ा-लूला या दरिद्र न होना पड़े। न अब आपके देने का काम है और न मेरे लेने का।'

ईश्वर नरेन्द्र पर अब भी दया नहीं करते, इस पर मानो अभिमान करके श्रीरामकृष्ण ने यह बात कही। श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र की ओर स्नेह की दृष्टि से देख रहे है।

नरेन्द्र – मैं 'नास्तिकवाद' पढ़ रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – दो हैं – 'अस्ति' और 'नास्ति'। 'अस्ति को ही क्यों नहीं लेते?'

सुरेन्द्र – ईश्वर तो बड़े न्यायी हैं, वे क्या भक्त की देखभाल न करेंगे?

श्रीरामकृष्ण – शास्त्रों में है, पूर्वजन्म में जो लोग दान आदि करते हैं, उन्हीं को धन मिलता है: परन्तु बात यह है कि संसार उनकी माया है, माया के राज्य में बड़ा गोलमाल है, कुछ समझ में नहीं आता।

"ईश्वर का काम कुछ समझा नही जाता। भीष्मदेव शरशय्या पर लेटे हुए थे। पाण्डव उन्हें देखने गये। साथ में श्रीकृष्ण भी थे। आये तो थोड़ी देर बाद उन्होंने देखा, भीष्म रो रहे थे। पाण्डवों ने श्रीकृष्ण से कहा, 'कृष्ण, यह बड़े आश्चर्य की बात है! पितामह अष्ट वसुओ में एक है, उनकी तरह ज्ञानी देखने में नहीं आते, परन्तु ये भी मृत्यु के समय माया मे पड़कर रो रहे हैं!' श्रीकृष्ण ने कहा, 'भीष्म इसलिए नहीं रो रहे हैं। इसका कारण उन्हीं से पूछो।' पूछने पर भीष्म ने कहा, 'कृष्ण, ईश्वर के कार्य कुछ समझ न सका। मै इसलिए रो रहा हूँ कि जिनके साथ साथ साक्षात् नारायण घूम रहे हैं उन पाण्डवों की भी विपत्ति का अन्त नही होता! यह बात जब मैं सोचता हूँ तब यही निश्चय होता है कि उनके कार्य का कुछ भी अंश समझ में नहीं आ सकता।'

"मुझे उन्होंने दिखलाया था, जिन्हें वेदों में शुद्धात्मा कहा है, एक वही परमात्मा अटल सुमेरुवत् निर्लिप्त तथा सुख और दुःख से अलग हैं। उनकी माया के कार्यों में बड़ी जटिलता है। किसके बाद क्या होगा, कुछ कहा नहीं जा सकता।"

सुरेन्द्र – (सहास्य) – और पूर्वजन्म में कुछ दान आदि करने से इस जन्म में धन प्राप्त होता है, तो हमें दान आदि करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण – जिसके पास धन है, उसे दान करना चाहिए। (त्रैलोक्य से) जयगोपाल सेन के धन है, उसे दान करना चाहिए। वह नहीं करता, यह उसके लिए निन्दा की बात है। धन के रहने पर भी कोई कोई बड़े हिसाबी होते हैं – परन्तु इसका क्या ठिकाना कि वह धन किसके हिस्से में पड़ जायगा।

"अभी उस दिन जयगोपाल आया था। गाड़ी पर आया करता है। गाड़ी में फूटी लालटेन और घोड़े मरघट से लौटे हुए – दरवान मेडिकल कालेज के अस्पताल का वापस आया हुआ मरीज – और यहाँ के लिए ले आता है दो सड़े अनार!" (सब

हँसते हैं।)

सुरेन्द्र – जयगोपाल बाबू ब्राह्म-समाजी हैं। मेरी समझ में शायद केशव के सम्प्रदाय में अब कोई भी ढंग का आदमी नहीं रह गया है। विजय गोस्वामी, शिवनाथ तथा अन्य बाबुओं ने मिलकर साधारण ब्राह्मसमाज की स्थापना की है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – गोविन्द अधिकारी अपनी नाटकमण्डली में अच्छा आदमी न रखता था – हिस्सा देने का भय जो था। (सब हँसते है।)

"उस दिन केशव के एक शिष्य को मैंने देखा था। केशव के मकान में अभिनय हो रहा था। देखा, वह लड़के को गोद में लेकर नाच रहा है। फिर सुना, व्याख्यान भी देता है। खुद को कौन शिक्षा दे, इसका पता नहीं।"

त्रैलोक्य गाने लगे। गाना जब समाप्त हो गया तब श्रीरामकृष्ण ने उनसे 'आमाय दे माँ पागल करे' गाने के लिए कहा।

(२)

रविवार, ९ मार्च १८८४ ई.। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में मणिलाल मल्लिक, सींती के महेन्द्र कविराज, बलराम, मास्टर, भवनाथ, राखाल, लाटू, अधर, महिमाचरण, हरीश, किशोरी (गुप्त), शिवचन्द्र आदि अनेक भक्तों के साथ बैठे हैं। अभी तक गिरीश, काली, सुबोध आदि नहीं आये हैं। शरत् तथा शशी ने केवल एक-दो बार ही दर्शन किया है। पूर्ण, छोटे नरेन आदि ने भी अभी तक उन्हें नहीं देखा है।

श्रीरामकृष्ण के हाथ में बैण्डेज बँधा हुआ है। रेलिंग के किनारे गिरकर हाथ टूट गया है – उस समय भाव में विभोर हो गये थे। हाल ही में हाथ टूटा है – निरन्तर पीड़ा बनी रहती है।

परन्तु इस स्थिति में भी वे प्राय: समाधिमग्न रहते हैं और भक्तों के साथ गम्भीर तत्त्वों की बातें करते हैं।

एक दिन कष्ट से रो रहे हैं, उसी समय समाधिमग्न हो गये। समाधिभंग होने के बाद महिमाचरण आदि भक्तों से कह रहे हैं, "भाई, सच्चिदानन्द की प्राप्ति न हुई तो कुछ भी न हुआ। व्याकुल हुए बिना कुछ न होगा। मैं रो-रोकर पुकारता था और कहता था, 'हे दीनानाथ, मेरा साधन-भजन कुछ भी नहीं है, पर मुझे दर्शन देना होगा।' "

उसी दिन रात को फिर महिमाचरण, अधर, मास्टर आदि बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमाचरण के प्रति) – एक प्रकार है – अहेतुकी भक्ति, इसे यदि प्राप्त कर सको!

फिर अधर से कह रहे हैं – "इस हाथ पर जरा हाथ फेर सकते हो?"

मणिलाल मल्लिक तथा भवनाथ प्रदर्शनी की बातें कर रहे हैं जो १८८३-८४ ई.

में एशियाटिक म्युजियम के पास हुई थी। वे कह रहे हैं, "कितने राजाओं ने मूल्यवान चीजें भेजी हैं; सोने के पलंग आदि देखने योग्य चीजें हैं।"

श्रीरामकृष्ण तथा धन-ऐश्वर्य। योगी का चित्र

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति हँसते हुए) – हाँ, वहाँ जाने पर एक लाभ अवश्य होता है। ये सब सोने की चीजे – राजामहाराजाओं की चीजें देखकर बिलकुल क्षुद्र-सी मालूम होती है। यह भी बड़ा लाभ है। जब मैं कलकत्ता आता था, तो हृदय मुझे गवर्नर का मकान दिखाता था, कहता था, 'मामाजी, वह देखो, गवर्नर साहब का मकान, बड़े बड़े खम्भे!' माँ ने दिखा दिया, कुछ मिट्टी की बनी ईटें एक के ऊपर दूसरी रखकर सजायी हुई है!

"भगवान् और उनका ऐश्वर्य। ऐश्वर्य दो दिन के लिए है; भगवान् ही सत्य है। जादूगर और उसका जादू। जादू देखकर सभी लोग विस्मित हो जाते है, परन्तु सब झूठा है, जादूगर ही सत्य है। मालिक और उसका बगीचा। बगीचा देखकर बग़ीचे के मालिक की खोज करनी चाहिए।"

मणि मल्लिक – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – देखो, प्रदर्शनी मे कितनी बड़ी बिजली की बत्ती लगायी है। उस बत्ती को देखकर हमे लगता है वे (भगवान्) कितने बड़े है, जिन्होने बिजली की बत्ती बनायी है।

श्रीरामकृष्ण – (मणिलाल के प्रति) – एक और मत है, वे ही ये सब कुछ बने हुए हैं। फिर जो कह रहा है वह भी वे ही है। ईश्वर, माया, जीव, जगत्।

म्युजियम की चर्चा चली।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो के प्रति) – मै एक बार म्युजियम मे गया था। वहॉ मुझे फासिल* दिखाये गये। मैने देखा कि लकड़ी पत्थर बन गयी है, पूरा जानवर पत्थर बन गया है। देखा, – संग का क्या गुण है! इसी प्रकार सदा सज्जन का संग करने से वही बन जाता है।

मणि मल्लिक – (हँसकर) – महाराज, यदि आप एक बार प्रदर्शनी मे जाते तो शायद हमे १०-१५ वर्ष तक उपदेश देने की सामग्री आपको मिल जाती।

श्रीरामकृष्ण – (हॅसकर) – क्या उपमा के लिए?

बलराम – नही, वहाँ जाना ठीक नही। इधर-उधर जाने से हाथ को आराम नहीं मिलेगा।

श्रीरामकृष्ण – मेरी इच्छा है कि मुझे दो चित्र मिले। एक चित्र, योगी धुनी जलाकर

---

* फासिल (Fossil) – करोड़ो वर्ष पूर्व की लकड़ी, प्रत्ते, फल, यहाँ तक कि फूल भी हमे आज पत्थर के रूप मे प्राप्त हैं, इन्हे 'फासिल' कहते है।

बैठा है, और दूसरा चित्र, योगी गांजा की चिलम मुँह में लगाकर पी रहा है, और उसमें से एकाएक आग जल उठती है।

"इन सब चित्रों से काफी उद्दीपन होता है। जिस प्रकार मिट्टी का बनावटी आम देखकर सच्चे आम का उद्दीपन होता है।

"परन्तु योग में विघ्न है – कामिनी-कांचन। यह मन शुद्ध होने पर योग होता है। मन का निवास है कपाल में (आज्ञाचक्र में), परन्तु दृष्टि रहती है लिंग, गुदा और नाभि में – अर्थात् कामिनी और कांचन में। साधना करने पर उस मन की ऊपर की ओर दृष्टि होती है।

"कौनसी साधना करने पर मन की दृष्टि ऊपर की ओर होती है? सदा साधुपुरुषों का संग करने से सब जाना जा सकता है।

"ऋषिगण सदा या तो निर्जन में या साधुओं के संग में रहा करते थे – इसीलिए उन्होंने बिना क्लेश के ही कामिनी-कांचन का त्याग कर ईश्वर में मन लगा लिया था – निन्दा-भय कुछ भी नहीं है।

"त्याग करना हो तो ईश्वर से पुरुषकार के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। जो मिथ्या जँचे, उसका उसी समय त्याग करना उचित है।

"ऋषियों का यह पुरुषकार था। इसी पुरुषकार के द्वारा ऋषियों ने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की थी।

"कछुआ अगर हाथ पैर भीतर समेट ले, तो टुकड़े टुकड़े कर डालने पर भी वह हाथपैर नहीं निकालेगा!

"विषयी लोग कपटी होते हैं – सरल नहीं होते। मुँह से कहते हैं, 'ईश्वर से प्रेम करता हूँ', परन्तु उनका विषयों पर जितना आकर्षण तथा कामिनी-कांचन में जितना प्रेम रहता है, उसका एक अंश भी ईश्वर की ओर नहीं रहता। परन्तु मुँह से कहते हैं, 'ईश्वर से प्रेम करता हूँ।' (मणि मल्लिक के प्रति) कपटीपन छोड़ो।"

मणिलाल – मनुष्य के साथ या ईश्वर के साथ?

श्रीरामकृष्ण – सभी के साथ। मनुष्य के साथ भी, और ईश्वर के साथ भी – कपट कभी नहीं करना चाहिए।

"भवनाथ कैसा सरल है! विवाह करके आकर मुझसे कहता है, 'स्त्री पर मेरा इतना प्रेम क्यों हो रहा है?' अहा, वह बहुत ही सरल है।

"तो, स्त्री पर प्रेम नहीं होगा? यह जगन्माता की भुवनमोहिनी माया है। स्त्री को देखकर ऐसा लगता है मानो उसके समान अपना संसार भर में और कोई नहीं है – मानो वह उसका जीवन ही है, इहलोक और परलोक दोनों में!

"पर इसी स्त्री को लेकर मनुष्य क्या क्या दुःख नहीं भोग रहा है, फिर भी समझता

है कि उसके समान अपना और कोई नहीं है। क्या दुर्दशा है! बीस रुपये वेतन, तीन बच्चे हुए हैं – उन्हें अच्छी तरह से खिलाने की शक्ति नहीं है – मकान की छत से पानी टपकता है, मरम्मत कराने को पैसा नहीं है – लड़के को नयी पुस्तकें खरीद कर नहीं दे सकता – लड़के का यज्ञोपवीत-संस्कार नहीं कर सकता – किसी से आठ आना, किसी से चार आना करके भीख माँगता है!

"विद्यारूपिणी स्त्री वास्तव में सहधर्मिणी है। वह स्वामी के ईश्वर-पथ में जाने में विशेष सहायता करती है। एक-दो बच्चे होने के बाद दोनों आपस में भाई-बहन की तरह रहते हैं। दोनों ही ईश्वर के भक्त हो जाते हैं – दास तथा दासी। उनकी गृहस्थी विद्या की गृहस्थी है। ईश्वर और भक्तों को लेकर सदा आनन्द मनाते हैं। वे जानते हैं, ईश्वर ही एकमात्र अपना है – चिरकाल के लिए अपना। सुख में, दु:ख मे कभी उन्हें नहीं भूलते – जैसे पाण्डव।

"संसारियों का ईश्वरप्रेम क्षणिक है – जैसे तपाये हुए तवे पर जल पड़ा हो – 'छुन्' शब्द हुआ – और उसके बाद ही सूख गया। संसारी लोगों का मन भोग की ओर रहता है इसलिए वह अनुराग, वह व्याकुलता नहीं होती।

"एकादशी तीन प्रकार की होती है। प्रथम निर्जला एकादशी, जल तक नहीं पिया जाता; इसी प्रकार, फकीर पूर्ण त्यागी होते हैं – एकदम सब भोगों का त्याग। दूसरी में दूधमिठाई खायी जाती है – मानो भक्त ने घर में मामूली भोग रखा है। तीसरी – वह जिसमें हलवापूरी खायी जाती है – खूब भर पेट खा रहा है; इधर रोटी दूध में भी छोड़ रखी है – बाद में खायगा!

"लोग साधन-भजन करते हैं, परन्तु मन रहता है स्त्री तथा धन की ओर; मन भोग की ओर रहता है, इसीलिए साधन-भजन ठीक नहीं होता।

"हाजरा यहाँ पर बहुत जप-तप करता था, परन्तु घर में स्त्री, बच्चे, जमीन आदि थी, इसलिए जप-तप भी करता है, भीतर भीतर दलाली भी करता है। इन सब लोगों की बातों की स्थिरता नहीं रहती। कभी कहता है, 'मछली नहीं खाऊँगा', पर फिर खाता है।

"धन के लिए लोग क्या नहीं कर सकते। ब्राह्मणों से, साधुओं से कुली का काम ले सकते हैं!

"मेरे कमरे में कभी कभी सन्देश सड़ तक जाता था, फिर भी मैं उसे संसारी लोगों को दे नहीं सकता था। दूसरों के शौच के लोटे का जल ले सकता था परन्तु ऐसे लोगों का तो लोटा भी नहीं छू सकता था।

"हाजरा धनवानों को देखने पर उन्हें अपने पास बुलाता था – बुलाकर लम्बी लम्बी बातें सुनाता था और उनसे कहता था, 'राखाल आदि जिन्हें देख रहे हो वे जप-तप नही कर सकते – हो हो करके घूमते हैं।'

"मैं जानता हूँ कि यदि कोई पहाड़ की गुफा में रहता हो, देह पर भभूत मलता हो, उपवास करता हो, अनेक प्रकार के कठोर तप करता हो परन्तु भीतर भीतर उसका विषय की ओर मन रहता हो – कामिनी-कांचन में मन रहता हो – तो उसे मैं धिक्कारता हूँ। और जिसका कामिनी-कांचन में मन नहीं होता है – खाता पीता और मस्त घूमता है, उसे धन्य कहता हूँ।

(मणि मल्लिक को दिखाकर) "इनके घर में साधुओं के चित्र नहीं हैं। साधुओं के चित्र देखने पर ईश्वर का उद्दीपन होता है।"

मणिलाल – हाँ नन्दिनी* के कमरे में एक मेम का चित्र है – विश्वासरूपी पहाड़ को पकड़कर एक व्यक्ति है, नीचे गम्भीर समुद्र है, विश्वास छोड़ने पर एकदम अतल जल में जा गिरेगा।

"एक और है – कुछ लड़कियाँ दूल्हे के आने की प्रतीक्षा में दिपक में तेल भरकर जगती हुई बैठी हैं। जो सो जायगी, वह देख न सकेगी। ईश्वर का वर्णन दूल्हा कहकर किया गया है (Parable of the ten Virgins)।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – यह अच्छा है।

मणिलाल – और भी चित्र हैं। – विश्वास का वृक्ष तथा पाप और पुण्य के चित्र।

श्रीरामकृष्ण – (भवनाथ के प्रति) – अच्छे चित्र हैं सब; तू देखने को जाना।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, "कभी-कभी इन बातों पर सोचता हूँ तो ये सब अच्छी नहीं लगतीं। पहले एक बार पाप पाप सोचना होता है, कैसे पाप से मुक्ति मिले, परन्तु उनकी कृपा से एक बार प्रेम यदि आ जाय, एक बार प्रेमाभक्ति यदि हो जाय तो पाप पुण्य सब भूल जाता है। उस समय वह शास्त्र के विधि-निषेध के परे चला जाता है। पश्चात्ताप करना पड़ेगा, प्रायश्चित्त करना होगा, – यह सब चिन्ता फिर नहीं रह जाती।

"मानो टेढ़ी नदी में से होकर बहुत कष्ट से और काफी देर के बाद अपने गन्तव्य स्थान पर जा रहे हो। परन्तु यदि बाढ़ आ जाय तो सीधे रास्ते से थोड़े ही समय में उस स्थान पर पहुँच सकते हो। उस समय जमीन पर भी काफी जल हो जाता है।

"प्रथम स्थिति में काफी घूमना पड़ता है, बहुत कष्ट करना पड़ता है।

"प्रेमाभक्ति होने पर बहुत सरल हो जाता है, जैसे धान काट लेने के बाद मैदान में जिधर चाहो, जाओ। पहले मेड़ पर से घूम घूमकर जाना पड़ता था। अब जिधर से चाहो, जाओ। यदि कुछ कूड़ा-कर्कट पड़ा हो, तो जूता पहनकर जाने से फिर कोई कष्ट ही नहीं होता। विवेक, वैराग्य, गुरु के वाक्य पर विश्वास – ये सब रहने पर फिर कोई कष्ट नहीं है।"

---

* नन्दिनी – मणि मल्लिक की विधवा कन्या, श्रीरामकृष्ण की भक्तिनी।

निराकार ध्यान और साकार ध्यान

मणिलाल – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – अच्छा, ध्यान का क्या नियम है? कहाँ पर ध्यान करना चाहिए?

श्रीरामकृष्ण – प्रसिद्ध स्थान है हृदय। हृदय में ध्यान हो सकता है अथवा सहस्रार में। ये सब विधि के अनुसार ध्यान शास्त्रों में हैं। फिर तुम्हारी जहाँ इच्छा हो ध्यान कर सकते हो। सभी स्थान तो ब्रह्ममय हैं, वे कहाँ नहीं हैं?

"जिस समय बलि की उपस्थिति में नारायण ने तीन पदों से स्वर्ग, मृत्यु, पाताल ढँक लिया था। उस समय क्या कोई स्थान बाकी बचा था! गंगातट जैसा पवित्र है वैसा ही वह स्थान भी जहाँ कूड़ाकर्कट है। फिर यह बात भी है कि ये सब उन्हीं की विराट मूर्ति हैं।

"निराकार ध्यान बहुत ही कठिन है। उस ध्यान में तुम जो कुछ देख या सुन रहे हो – उन सब को हटा देना चाहिए। फिर केवल तुम्हारे सत्य स्वरूप का चिन्तन रह जाता है। इसी स्वरूप का चिन्तन कर शिव नृत्य करते हैं। 'मैं क्या हूँ', 'मैं क्या हूँ', कहकर नृत्य करते हैं।

"इसे कहते हैं शिवयोग। इस ध्यान के समय कपाल की ओर दृष्टि रखनी होती है। 'नेति' 'नेति' कहकर जगत् को छोड़ अपने स्वरूप का चिन्तन।

"और एक है विष्णुयोग। नासिका के अग्रभाग में दृष्टि। आधी भीतर, आधी बाहर। साकार ध्यान में इसी प्रकार होता है।

"शिव कभी कभी साकार चिन्तन करते हुए नाचते है – 'राम' 'राम' कहकर नाचते हैं।"

(३)

मणिलाल मल्लिक पुराने ब्राह्म-समाजी है। भवनाथ, राखाल, मास्टर बीच बीच में ब्रह्म समाज में जाते थे। श्रीरामकृष्ण ओंकार की व्याख्या तथा यथार्थ ब्रह्मज्ञान और उसके बाद की स्थिति का वर्णन कर रहे हैं।

अनाहत ध्वनि तथा परम पद

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति) – ॐ शब्द ब्रह्म है, ऋषि मुनि लोग उसी शब्द को प्राप्त करने के लिए तपस्या करते थे। सिद्ध होने पर साधक सुनता है कि नाभि से वह शब्द स्वयं ही उठ रहा है – अनाहत शब्द।

"एक मत है कि केवल शब्द सुनने से क्या होगा? दूर से समुद्र के शब्द का कल्लोल सुनायी देता है। उस शब्द-कल्लोल के सहारे धीरे धीरे आगे बढ़ने से तुम समुद्र

तक पहुँच सकते हो। जहाँ कल्लोल होगा, वहाँ समुद्र भी अवश्य होगा। अनाहत ध्वनि के अनुसार आगे बढ़ने पर उसका प्रतिपाद्य जो ब्रह्म उसके पास पहुँचा जा सकता है। उसे ही वेदों में परम पद कहते हैं।* मैं पन रहते वैसा दर्शन नहीं होता। जहाँ 'मैं' भी नहीं, 'तुम' भी नहीं, 'एक' भी नहीं, 'अनेक' भी नहीं, वहीं पर यह दर्शन होता है।

"मानो सूर्य और दस जलपूर्ण घड़े हैं, प्रत्येक घड़े में सूर्य का प्रतिबिम्ब दिखायी दे रहा है। पहले देखा जाता है एक सूर्य और दस परछाइयों के सूर्य। यदि नौ घड़े तोड़ डाले जायँ, तो बाकी रहते हैं एक सूर्य और एक परछाईवाला सूर्य। एक एक घड़ा मानो एक एक जीव है। परछाई के सूर्य को पकड़ पकड़कर वास्तव सूर्य के पास जाया जाता है; जीवात्मा से परमात्मा में पहुँचा जाता है। जीव (जीवात्मा) यदि साधन-भजन करे, तो परमात्मा का दर्शन कर सकता है। अन्तिम घड़े को तोड़ देने पर क्या है वह मुँह से नहीं कहा जा सकता।

"जीव पहले अज्ञानी बना रहता है। ईश्वरबुद्धि नहीं रहती वरन् नाना वस्तुओं की बुद्धि, अनेक चीजों का बोध रहता है। जब ज्ञान होता है, तब उसकी समझ में आता है कि ईश्वर सभी भूतों में है। जिस प्रकार पैर में काँटा चुभता है तो एक और काँटे को ढूँढ़कर उससे वह काँटा निकाला जाता है, अर्थात् ज्ञानरूपी काँटे के द्वारा अज्ञानरूपी काँटे को निकाल बाहर करना।

"फिर विज्ञान होने पर अज्ञान-काँटा और ज्ञान-काँटा दोनों को ही फेंक देना। उस समय केवल दर्शन ही नहीं, वरन् ईश्वर के साथ रातदिन बातचीत चलती रहती है।

"जिसने केवल दूध की बात सुनी है उसे अज्ञान है, जिसने दूध देखा है उसे ज्ञान हुआ और जो दूध पीकर मोटा-ताजा हुआ है उसे विज्ञान प्राप्त हुआ है।"

अब सम्भव है, श्रीरामकृष्ण अपनी स्थिति भक्तों को समझा रहे हैं। विज्ञानी की स्थिति का वर्णन कर, सम्भव है, अपनी स्थिति कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति) – ज्ञानी साधु और विज्ञानी साधु में भेद है। ज्ञानी साधु के बैठने का कायदा अलग है। मूँछों पर हाथ फेरकर बैठता है। कोई आये तो कहता है, 'क्या जी, तुम्हें कुछ पूछना है?'

"विज्ञानी साधु सदा ईश्वर का दर्शन करता रहता है, उनके साथ बातचीत करता है, अर्थात् जो विज्ञानी है उसका स्वभाव दूसरा होता है। कभी जड़ की तरह, कभी पिशाच की तरह, कभी बालक की तरह और कभी उन्माद की तरह।

"कभी समाधिमग्न होकर बाहर का ज्ञान खो बैठता है – जड़ की तरह बन जाता है।

---

* "यत्र नादो विलीयते। तद्विष्णोः परमं पदम्। सदा पश्यन्ति सूरयः।"

"ब्रह्ममय देखता है इसलिए पिशाच की तरह है। पवित्रता-अपवित्रता का ख्याल नही रहता। सम्भव है कि शौच करते बेर खा रहा हो – बालक की तरह। स्वप्नदोष के बाद अशुद्धि नही समझता है, – समझता है, वीर्य से ही शरीर बना है।

"विष्ठा-मूत्र का ज्ञान नही है। सब ब्रह्ममय। भात-दाल बहुत दिनो तक रख देने से विष्ठा की तरह बन जाता है।

"फिर उन्माद के समान, उसकी चाल-ढाल देखकर लोग उसे पागल समझते है। और फिर कभी बालक की तरह, लज्जा, घृणा, संकोच आदि कोई बन्धन नही रहता।

"ईश्वर-दर्शन के बाद यह स्थिति होती है। जैसे चुम्बक पहाड के पास होकर जाने से जहाज के स्क्रू-कील-कॉटे सब ढीले होकर छूट जाते है। ईश्वर-दर्शन के बाद काम, क्रोध आदि नही रह जाते।

"मॉं काली के मन्दिर पर जब बिजली गिरी थी, तो हमने देखा था, सभी स्क्रू के माथे उड़ गये थे।

"जिन्होने ईश्वर का दर्शन किया है, उनसे फिर बच्चा पैदा करना अथवा सृष्टि का काम नही होता। धान बोने से पौधा होता है, परन्तु धान उबाल कर बोने से उससे पौधा नही होता है।

"जिन्होने ईश्वर का दर्शन किया है उनका 'मै' केवल नाम का ही रह जाता है। उस 'मै' द्वारा कोई अनुचित कार्य नही होता, सिर्फ नाम को रह जाता है।

"मैने केशव सेन से कहा, 'मै' को त्याग दो – मै – कर्ता हूँ – मै लोगो को शिक्षा दे रहा हूँ – इस 'मै' को। केशव ने कहा, 'महाशय, तो फिर दल नही रहता!' मैने कहा, बुरे 'मै' को त्याग दो।

" 'ईश्वर का दास मै' 'ईश्वर का भक्त मै' इसे त्यागना नही पड़ेगा। 'बुरा मै' मौजूद है, इसीलिए 'ईश्वर का मै' नही रहता।

"यदि कोई भण्डारी रहे तो मकान का मालिक भण्डार का भार स्वयं नही लेता।"

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो के प्रति) – देखो इस हाथ मे चोट लगने के कारण मेरा स्वभाव बदलता जा रहा है। अब मनुष्य मे ईश्वर का अधिक प्रकाश दिखायी दे रहा है। मानो वे कह रहे है, मेरा मनुष्यो मे वास है, तुम मनुष्यो के साथ आनन्द करो।

"वे शुद्ध भक्तो मे अधिक प्रकट है – इसीलिए तो मै नरेन्द्र, राखाल आदि के लिए इतना व्याकुल होता हूँ।

"तालाब के किनारे पर छोटे छोटे गढ़े रहते है, उन्ही मे मछलियॉं, केकड़े आकर इकट्ठे हो जाते है, उसी प्रकार मनुष्य मे ईश्वर का प्रकाश अधिक है।

"ऐसा है कि शालग्राम से भी मनुष्य बड़ा है, नर ही नारायण है।

"प्रतिमा मे उनका आविर्भाव होता है और भला मनुष्य मे नही होगा?

"वे नरलीला करने के लिए मनुष्य-रूप में अवतीर्ण होते हैं – जैसे श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्ण, श्रीचैतन्यदेव। अवतार का चिन्तन करने से ही उनका चिन्तन होता है।"

ब्राह्मभक्त भगवानदास आये हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भगवानदास के प्रति) – ऋषियों का धर्म, सनातन धर्म – अनन्त काल से है और रहेगा। इस सनातन धर्म के भीतर निराकार, साकार सभी प्रकार की पूजाएँ हैं। ज्ञानपथ, भक्तिपथ सभी हैं। अन्य जो सम्प्रदाय हैं, वे आधुनिक हैं। कुछ दिन रहेंगे, फिर मिट जायँगे।

परिच्छेद ७८

ईश्वरलाभ ही जीवन का उद्देश्य है

(१)

दक्षिणेश्वर मन्दिर में राखाल, राम, आदि के साथ

रविवार, २३ मार्च १८८४। श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद राखाल, राम आदि भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। शरीर पूर्ण स्वस्थ नहीं है। अब तक हाथ में तख्ती बँधी हुई है।

शरीर अस्वस्थ रहने पर भी श्रीरामकृष्ण आनन्द की हाट लगाये हुए है। दल के दल भक्त आते हैं। सदैव ही ईश्वरी कथा-प्रसंग और आनन्द है। कभी कीर्तनानन्द और कभी समाधिमग्न होकर श्रीरामकृष्ण ब्रह्मानन्द का अनुभव कर रहे हैं। भक्तगण अवाक् होकर देखते हैं। श्रीरामकृष्ण वार्तालाप करने लगे।

राम – आर. मित्र की कन्या के साथ नरेन्द्र का विवाह ठीक हो रहा है। बहुत धन देने को कहता है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – इसी तरह किसी दल का नेता बन जायगा। वह जिस तरफ झुकेगा, उसी ओर बड़ा व्यक्ति होकर नाम पैदा करेगा।

श्रीरामकृष्ण ने फिर नरेन्द्र की बात ही न उटने दी।

श्रीरामकृष्ण – (राम से) – अच्छा, बीमार पड़ने पर मैं इतना अधीर क्यों हो जाया करता हूँ? कभी इससे पूछता हूँ, किस तरह अच्छा होऊँगा, कभी उससे पूछता हूँ!

"बात यह है कि विश्वास या तो सब पर करे या किसी पर न करे।

"वे ही डाक्टर और कविराज हुए हैं; इसलिए सभी चिकित्सकों पर विश्वास करना चाहिए। पर उन लोगों को आदमी सोचने पर विश्वास नहीं होता।

"शम्भू को घोर विकार था। डाक्टर सर्वाधिकारी ने देखकर बतलाया – दवा की गरमी है।

"हलधारी ने नाड़ी दिखायी, डाक्टर नें कहा – 'आँख देखें – अच्छा! तुम्हारी प्लीहा बढ़ गयी है!' हलधारी ने कहा – 'मेरे प्लीहा-फीहा कहीं कुछ नहीं है।'

"मधु डाक्टर की दवा अच्छी है।"

राम-दवा से फायदा नहीं होता, परन्तु इतना अवश्य होता है कि वह प्रकृति की बहुत कुछ सहायता जरूर करती है।

श्रीरामकृष्ण – दवा से अगर उपकार नहीं होता तो अफीम फिर कैसे दस्त रोक देती है?

राम केशव के देहान्त होने की बात कह रहे हैं।

राम – आपने तो ठीक ही कहा था – अच्छा गुलाब का पेड़ हुआ तो माली उसकी जड़ खोल देता है। ओस पाने पर पौधा और जोरदार होता है। सिद्धवचन का फल तो प्रत्यक्ष कर लिया।

श्रीरामकृष्ण – क्या जाने भाई, इतना तो हिसाब मैंने नहीं किया था, तुम्हीं कह रहे हो।

राम – उन लोगों ने आपकी बात समाचार-पत्रों में निकाल दी थी।

श्रीरामकृष्ण – छाप दी! यह क्या? अभी से छापना क्यों? मैं खाता हूँ – पड़ा रहता हूँ, बस, और मैं कुछ नहीं जानता।

"केशव सेन से मैंने कहा, छापा क्यो? उसने कहा – तुम्हारे पास लोग आयें इसलिए।

(राम आदि से) "आदमी की शक्ति से लोक-शिक्षा नही होती। ईश्वर की शक्ति के बिना अविद्या नही जीती जा सकती।

"दो आदमी कुश्ती लड़े – हनुमानसिंह और एक पंजाबी मुसलमान। मुसलमान खूब तगड़ा था। कुश्ती के दिन तथा उसके पन्द्रह दिन पहले उसने खूब मांस और घी खाया था। सब सोचते थे यही जीतेगा।

"हनुमानसिंह मैले कपड़े पहने रहता था। कुश्ती के कुछ दिन पहले वह बहुत कम खाया करता था, परन्तु महावीरजी का नाम खूब लेता था। जिस दिन कुश्ती होने की थी, उस दिन तो उसने निर्जल उपवास किया। लोग सोचने लगे, यह जरूर हारेगा।

"परन्तु जीता वही, और पन्द्रह दिन तक जिसने खूब खाया था, वह हार गया।

"धक्कमधक्का करने से क्या होगा? – जिसे लोक-शिक्षा देनी है, उसकी शक्ति ईश्वर के पास से आयेगी। और त्यागी हुए बिना लोक-शिक्षा नहीं होती।

"मैं हूँ मूर्खों का सिरमौर – " (लोग हँसते हैं।)

एक भक्त – ऐसा है तो आप के मुँह से वेद-वेदान्त – इसके अलावा भी न जाने क्या क्या – कैसे निकलते हैं?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – परन्तु मेरे लड़कपन में लाहा बाबू के यहाँ साधु-महात्मा जो कुछ पढ़ते थे, वह सब मैं समझ लेता था, परन्तु कहीं कहीं समझ में आता भी नहीं था। कोई पण्डित आकर यदि संस्कृत बोलता है तो मैं समझ लेता हूँ। परन्तु खुद

संस्कृत नहीं बोल सकता।

"उन्हें प्राप्त करना, यही जीवन का उद्देश्य है। लक्ष्य-भेद के समय अर्जुन ने कहा, मुझे और कुछ नहीं दीख पड़ता – केवल चिड़िया की आँख देख रहा हूँ, न राजाओं को देखता हूँ, न पेड़, यहाँ तक कि चिड़िया को भी नहीं देख रहा हूँ।

"उन्हें पाने ही से काम हो गया! – संस्कृत न पढ़ी तो क्या हुआ है?

"उनकी कृपा पण्डित, मूर्ख और सब बच्चों पर है – जो उनको पाने के लिए व्याकुल हो। पिता का स्नेह सब पर बराबर है।

"पिता के पाँच लड़के हैं, उनमें एक-दो बाबूजी कहकर पुकार सकते हैं। कोई बा कहकर पुकारता है। कोई पा कहता है, पूरा पूरा उच्चारण नहीं कर सकता। जो बाबूजी कहता है, उस पर क्या बाप का प्यार ज्यादा होगा और जो पा कहकर पुकारता है, उस पर कम? बाप जानता है, यह छोटा बच्चा अभी साफ बाबूजी नहीं कह सकता।

"हाथ टूटने के बाद से एक अवस्था बदल रही है। नरलीला की ओर मन बहुत जा रहा है। वे ही आदमी बनकर खेल रहे हैं।

"मिट्टी की मूर्ति में तो उनकी पूजा होती है और मनुष्यों में नहीं हो सकती?

"एक सौदागर, लंका के पास जहाज के डूब जाने से, लंका के तट पर बहकर लग गया। विभीषण के आदमी उसकी आज्ञा पा उस आदमी को विभीषण के पास ले गये। 'अहा! मेरे रामचन्द्र जैसी इसकी मूर्ति है। वही नर-रूप!' यह कहकर विभीषण आनन्द मनाने लगे। उस आदमी को तरह तरह के कपड़े पहनाकर उसकी पूजा-आरती की!

"यह बात जब मैंने पहले पहल सुनी थी, तब मुझे इतना आनन्द हुआ था जिसका ठिकाना नही।

"वैष्णवचरण से पूछने पर उसने कहा, जो जिसे प्यार करता है, उसे इष्ट मानने पर ईश्वर पर शीघ्र ही मन लग जाता है। 'तू किसे प्यार करता है?' – 'अमुक को।' 'तो उसे ही अपना इष्ट मान।' उस देश में (कामारपुकुर, श्यामबाजार में) मैंने, कहा – 'इस तरह का मत मेरा नहीं है – मेरा मातृ-भाव है। देखा, बातें तो बड़ी लम्बी-चौड़ी करते हैं और उधर व्यभिचार भी करते हैं। औरतों ने पूछा – क्या हम लोगों की मुक्ति न होगी? मैंने कहा – होगी अगर एक ही पर भगवद्दृष्टि से निष्ठा रहेगी। पाँच मर्दों के साथ रहने से न होगी।"

राम – केदार शायद कर्ताभजावालों (एक सम्प्रदाय) के यहाँ गये थे।

श्रीरामकृष्ण – वह पाँच तरह के फूलों से मधु लिया करता है।

(राम, नित्यगोपाल आदि से) – "यही मेरे इष्ट हैं, इस तरह का जब सोलहों आना विश्वास हो जायेगा, तब ईश्वर मिलेंगे – तब उनके दर्शन होंगे।

"पहले के आदमियों में विश्वास बहुत होता था। हलधारी के बाप का बड़ा पक्का

विश्वास था!

"वह अपनी लड़की की ससुराल जा रहा था। रास्ते में बेल खूब फूल रहे थे और बेल के अच्छे दल भी उसे दीख पड़े। श्रीठाकुरजी की सेवा करने के लिए फूल और बेलपत्र लेकर उल्टे पाँव तीन कोस जमीन अपने घर लौट आया!

"रामलीला हो रही थी। कैकेयी ने राम को वनवास की आज्ञा दी। हलधारी का बाप भी रामलीला देखने गया था। वह बिलकुल उठकर खड़ा हो गया। जो कैकेयी बना था उसके पास पहुँचकर कहा – 'अभागिन्!' यह कहकर उसने उसके मुँह मे दीया लगा देना चाहा!

"नहाने के बाद जब पानी मे खड़ा होकर 'रक्तवर्ण चतुर्मुखम्' कहकर ध्यान करता था, तब उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चलती थी।

"मेरे पिता जब खड़ाऊ पहनकर रास्ते पर चलते थे तब गाँव के दूकानदार उठकर खड़े हो जाते थे। कहते, वे आ रहे है!

"जब वे हलदार तालाब मे नहाते थे, तब वहाँ कोई नहाने जाय, ऐसी हिम्मत किसी मे न थी। लोग खबर रखते, वे नहाकर गये या नही।

"रघुवीर रघुवीर कहते कहते उनकी छाती लाल हो जाती थी।

"मुझे भी ऐसा ही होता था। वृन्दावन मे गौओं को चरकर लौटते हुए देखकर, भाव से शरीर की वैसी ही दशा हो गयी थी।

"तब के आदमियो मे बड़ा विश्वास था। ऐसी बात भी सुनने में आती है कि भगवान काली के रूप में नाच रहे हैं और साधक तालियाँ बजा रहे है।"

पंचवटी के कमरे में एक हठयोगी आये हुए है। एँड़ेदा के कृष्णकिशोर के पुत्र रामप्रसन्न और दूसरे भी कई आदमी उन हठयोगी पर बड़ी भक्ति रखते है। परन्तु उनके अफीम और दूध के लिए हर महीने पच्चीस रुपये का खर्च होता है। रामप्रसन्न ने श्रीरामकृष्ण से कहा था, 'आपके यहाँ तो कितने भक्त आते है, उनसे कुछ कह दीजियेगा; हठयोगी के लिए कुछ रुपये मिल जायँगे।'

श्रीरामकृष्ण ने कुछ भक्तों से कहा, "पंचवटी में जाकर हठयोगी को देखो, कैसा आदमी है।"

(२)

ठाकुरदादा अपने दो-एक मित्रों को साथ लेकर श्रीरामकृष्ण के पास आये हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। उम्र २७-२८ होगी। वराहनगर में रहते हैं। ब्राह्मण पण्डित के लड़के हैं। कथाएँ कहने का अभ्यास कर रहे हैं। अब संसार का भार ऊपर आ पड़ा है। कुछ दिन के लिए विरागी होकर घर से निकल गये थे। साधन-भजन अब भी करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – क्या तुम पैदल आ रहे हो? कहाँ रहते हो?

ठाकुरदादा – जी हाँ, वराहनगर में रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – यहाँ क्या कोई काम था?

ठाकुरदादा – जी, आपके दर्शन करने आया हूँ। उन्हें पुकारता हूँ, परन्तु बीच बीच मे अशान्ति क्यों होती है? दो-चार दिन तो आनन्द में रहता हूँ, परन्तु उसके बाद फिर अशान्ति क्यों होने लगती है?

कारीगर; मन्त्र में विश्वास; हरिभक्ति; ज्ञान के दो लक्षण

श्रीरामकृष्ण – मैं समझ गया। पटरी ठीक नहीं बैठती। कारीगर दाँत में दाँत ठीक बैठा देता है तब होता है। शायद कहीं कुछ अटक रहा है।

ठाकुरदादा – जी हाँ, ऐसी ही अवस्था हुई है।

श्रीरामकृष्ण – क्या तुम मन्त्र ले चुके हो?

ठाकुरदादा – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – मन्त्र पर विश्वास तो है?

ठाकुरदादा के एक मित्र ने कहा – 'ये बहुत अच्छा गाते है।' श्रीरामकृष्ण ने एक गाना गाने के लिए कहा। ठाकुरदादा गा रहे हैं –

"प्रेम-गिरि की कन्दरा में योगी बनकर रहूँगा। वहाँ आनन्द के झरने के पास मैं ध्यान करता हुआ बैठा रहूँगा। तत्त्व-फलों का संग्रह करके मैं ज्ञान की भूख मिटाऊँगा। और वैराग्यकुसुमों से श्रीपादपद्मों की पूजा करूँगा। विरह की प्यास बुझाने के लिए मैं अब कुएँ के पानी के लिए न जाऊँगा, हृदय के पात्र में शान्ति का सलिल भर लूँगा। कभी भाव के शिखर पर चरणामृत पीकर हँसूँगा, रोऊँगा, नाचूँगा और गाऊँगा।"

श्रीरामकृष्ण – वाह, अच्छा गाना है! आनन्द-निर्झर! तत्त्वफल! हँसूँगा, रोऊँगा, नाचूँगा और गाऊँगा!

"तुम्हारे भीतर से गाना कैसा मधुर लग रहा है! – बस और क्या चाहिए!

"संसार में रहने से सुख और दु:ख हैं ही – थोड़ी सी अशान्ति तो मिलेगी ही। काजल की कोठरी में रहने से देह में कुछ कालिख लग ही जाती है।"

ठाकुरदादा – जी, मैं अब क्या करूँ, बतला दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – तालियाँ बजा-बजाकर सुबह-शाम ईश्वर के गुण गाया करना – नाम लेना 'हरि बोल' 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहकर।

"एक बार और आना – मेरा हाथ कुछ अच्छा होने पर।"

महिमाचरण ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा से) – अहा! उन्होंने एक बड़ा सुन्दर गाना गाया है। गाओ

तो जी वही गाना एक बार और।

गाना समाप्त होने पर श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे हैं – 'तुम वही श्लोक एक बार कहो तो जरा, जिसमें ईश्वरभक्ति की बातें हैं।'

महिमाचरण ने, 'अन्तर्बहिर्यदि हरिस्तपसा ततः किम्', कहकर सुनाया; श्रीरामकृष्ण ने कहा, और वह भी कहो जिसमें 'लभ लभ हरिभक्तिम्' है।

महिमाचरण कहने लगे –

विरम विरम ब्रह्मन् किं तपस्यासु वत्स।
व्रज व्रज द्विज शीघ्रं शंकरं ज्ञानसिन्धुम्।।
लभ लभ हरिभक्तिं वैष्णवोक्तां सुपक्वाम्।
भवनिगडनिबन्धच्छेदनीं कर्तरीं च।।

श्रीरामकृष्ण – शंकर हरि-भक्ति देंगे।

महिमा – पाशमुक्तः सदा शिवः।

श्रीरामकृष्ण – लज्जा, घृणा, भय और संकोच, ये सब पाश हैं, क्यों जी?

महिमा – जी हाँ। गुप्त रखने की इच्छा, प्रशंसा से अत्यधिक सिकुड़ना।

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान के दो लक्षण हैं। पहला तो यह कि कूटस्थ बुद्धि हो। लाख दुःख, कष्ट, विपत्तियाँ और विघ्न हों – सब में निर्विकार रहना – जैसे लोहार के यहाँ का लोहा, जिस पर हथौड़ा चलाते हैं। और दूसरा है पुरुषकार – पूरी जिद। काम और क्रोध से अपना अनिष्ट हो रहा है – देखा कि एकदम त्याग!! कछुआ जब अपने हाथ पैर भीतर समेट लेता है, तब उसके चार खण्ड कर डालने पर भी उन्हें वह बाहर नहीं निकालता।

(ठाकुरदादा आदि से) "वैराग्य दो तरह का है। तीव्र वैराग्य और मन्द वैराग्य। मन्द वैराग्य वह है जिसका भाव है, 'होता है – हो जायगा।' तीव्र वैराग्य शान पर लगाये हुए छुरे की धार है – माया के पाशों को तुरन्त काट देता है।

"कोई किसान कितने ही दिनों से मेहनत करता है, परन्तु पानी खेत में आता ही नही मन में जिद है ही नहीं! और कोई दो-चार दिन मेहनत करने के बाद – 'आज पानी लाकर दम लूँगा' इस तरह का हठ ठान बैठता है। नहाना-खाना सब बन्द कर देता है। दिन भर मेहनत करने के बाद जब कुल्-कुल् स्वर से पानी आने लगता है तब उसे कितना आनन्द होता है! तब वह घर जाकर अपनी स्त्री से कहता है – 'ले आ तेल – मालिश करके नहाऊँगा'। नहा-खाकर फिर सुख की नींद सोता है।

"एक की स्त्री ने कहा, 'अमुक को बड़ा वैराग्य हुआ है – तुम्हें कुछ भी न हुआ।' जिसे वैराग्य हुआ था, उसके सोलह स्त्रियाँ थीं, एक एक करके वह सब को छोड़ रहा है।

"उस स्त्री का स्वामी कन्धे पर अँगौछा डाले हुए नहाने जा रहा था। उसने कहा, अरी, सुन, त्याग करने की शक्ति उसमें नहीं है, थोड़ा थोड़ा करके कभी त्याग नहीं होता। देख, मैं अब चला!

"घर का कोई प्रबन्ध न करके, उसी अवस्था में कन्धे पर अँगौछा डाले हुए, घर छोड़कर वह चला गया। इसे ही तीव्र वैराग्य कहते है।

"एक तरह का वैराग्य और है, उसे मर्कट-नैराग्य कहते हैं। संसार की ज्वाला से जलकर गेरुआ वस्त्र पहनकर काशी चला गया। बहुत दिनों तक कोई खबर नहीं। फिर एक चिट्ठी आयी – 'तुम लोग कोई चिन्ता न करो, यहाँ मुझे एक काम मिल गया है।'

"मंसार की ज्वाला तो है ही। बीबी कहना नहीं मानती, वेतन सिर्फ बीस रुपया महीना, बच्चे का 'अन्नप्राशन' नहीं हो रहा है, बच्चे को पढ़ाने का खर्च नहीं, घर टूटा हुआ, छत चू रही है, मरम्मत के लिए रुपये नही!

"इसीलिए जब कोई कम उम्र का लड़का आता है तब मैं उससे पूछ लेता हूँ कि तुम्हारे कौन कौन हैं।

(महिमा के प्रति) "तुम्हारे लिए संसार-त्याग करने की क्या जरूरत है? साधुओं को कितनी तकलीफ होती है! एक की स्त्री ने पूछा, 'तुम संसार छोड़ोगे – क्यों? दस घरों मे घूमघूमकर भीख माँगोगे, इससे तो एक घर में खाते हो, यही अच्छा है।'

"सदाव्रत की तलाश में रास्ता छोड़कर साधु-सन्त तीन कोस से भी दूर चले जाते हैं। मैंने देखा है, जगन्नाथ के दर्शन करके सीधे रास्ते से साधु आ रहे हैं, परन्तु सदाव्रत के लिए उन्हें सीधा रास्ता छोड़कर जाना पड़ता है।

"यह तो अच्छा है – किले से लड़ना। मैदान में खड़े होकर लड़ने में असुविधाएँ हैं। विपत्ति, देह पर गोले और गोलियाँ आकर गिरती है।

"हाँ कुछ दिनों के लिए निर्जन में जाकर, ज्ञान-लाभ करके संसार में आकर रहो। जनक ज्ञान-लाभ करके संसार में आकर रहे थे। ज्ञान-लाभ हो जाने पर फिर जहाँ रहो, उसमें कोई हानि नहीं।"

महिमाचरण – महाराज, मनुष्य विषय में क्यों फँस जाता है?

श्रीरामकृष्ण – उन्हें बिना प्राप्त किये ही विषय में रहता है, इसलिए। उन्हें प्राप्त कर लेने पर फिर मुग्ध नहीं होता। पतिंगा अगर एक बार उजाला देख लेता है, तो फिर और उसे अन्धकार अच्छा नहीं लगता।

"उन्हें पाने की इच्छा रखनेवालों को वीर्य-धारण करना पड़ता है।

"शुकदेवादि ऊर्ध्वरेता थे। इनका रेतपात कभी नहीं हुआ।

"एक और है धैर्यरेता। पहले रेतपात हो चुका है,– परन्तु इसके बाद से वे वीर्यधारण करने लगे हैं। बारह वर्ष तक धैर्यरेता रहने पर विशेष शक्ति पैदा होती है।

भीतर एक नयी नाड़ी होती है; उसका नाम है मेधानाड़ी। उस नाड़ी के होने पर सब स्मरण रहता है – आदमी सब जान सकता है।

"वीर्यपात से बल का क्षय होता है। स्वप्नदोष से जो कुछ निकल जाता है, उसमें दोष नहीं। ऐसा खाद्य पदार्थ के गुण से होता है। इस तरह निकल जाने पर भी जो कुछ रहता है, उसी से काम होता है। फिर भी स्त्री-प्रसंग हरगिज न करना चाहिए।

"अन्त में जो कुछ रहता है वह refine (सार पदार्थ) है। लाहा बाबू के यहाँ राब के घड़े रखे थे। घड़ों के नीचे एक एक छेद करके फिर एक साल बाद जब देखा, तब सब दाने बँध गये थे – मिश्री की तरह। जितना सीरा निकलना था, सब छेद से निकल गया था।

"स्त्रियों का सम्पूर्ण त्याग संन्यासियों के लिए है। तुम लोगों का विवाह हो गया है, कोई दोष नहीं है।

"संन्यासी को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। पर साधारण लोगों के लिए यह सम्भव नही है। सा, रे, ग, म, प, ध, नि; 'नि' मे तुम्हारी आवाज बहुत देर तक नहीं रह सकती।

"संन्यासी के लिए वीर्यपात बहुत ही बुरा है; इसीलिए उन्हें सावधानी से रहना पड़ता है, ताकि स्त्रियाँ दृष्टि में भी न पड़ें। भक्त-स्त्री होने पर भी वहाँ से हट जाना चाहिए। स्त्री-रूप देखना भी बुरा है। जाग्रत अवस्था मे चाहे न हो पर स्वप्न में अवश्य वीर्य-स्खलन हो जाता है।

"संन्यासी जितेन्द्रिय होने पर भी लोक-शिक्षा के लिए स्त्रियों के साथ उसे बातचीत न करनी चाहिए। भक्त-स्त्री होने पर भी उससे ज्यादा देर तक बातचीत न करे।

"संन्यासी की है निर्जला एकादशी। एकादशी और दो तरह की है। एक फलमूल खाकर रखी जाती है, एक पूड़ी-कचौड़ी और मालपुए खाकर। (सब हँसते हैं।)

"कभी तो ऐसा भी होता है कि उधर पूड़ियाँ उड़ रही हैं और इधर दूध मे दो-एक रोटियाँ भी भीग रही हैं, फिर खायेंगे! (सब हँसते हैं।)

(हँसते हुए) "तुम लोग निर्जला एकादशी न रख सकोगे।

"कृष्णकिशोर को मैंने देखा, एकादशी के दिन पूड़ियाँ और पकवान उड़ा रहे थे। मैंने हृदय से कहा, हृदय, मेरी इच्छा होती है कि मैं भी कृष्णकिशोर की एकादशी रखूँ। (सब हँसते हैं।) एक दिन ऐसा ही किया भी। खूब कसकर खाया। परन्तु उसके दूसरे दिन फिर कुछ न खाया गया।" (सब हँसते हैं।)

जो भक्त पंचवटी में हठयोगी को देखने गये थे, वे लौटे। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं – "क्यों जी, कैसा देखा? अपने गज से तो नापा ही होगा?" श्रीरामकृष्ण ने देखा, भक्तों में कोई भी हठयोगी को रुपये देने के लिए राजी नहीं है।

श्रीरामकृष्ण – साधु को जब रुपये देने पड़ते है तब फिर वह नही भाता।

"राजेन्द्र मित्र की तनख्वाह आठ सौ रुपया महीना है – वह प्रयाग से कुम्भ मेला देखकर आया था। मैने पूछा – 'क्यो जी, मेले मे कैसे सब साधु देखे?' राजेन्द्र ने कहा – 'कहाँ? – वैसा साधु एक भी न देखा। एक को देखा था, परन्तु वह भी रुपया लेता था।'

"मै सोचता हूँ, साधुओ को अगर कोई रुपया-पैसा न देगा तो वे खायेगे क्या? यहाँ कुछ देना नही पड़ता, इसलिए सब आते है। मै सोचता हूँ, इन लोगो को अपना पैसा बहुत प्यारा है। तो फिर रहे न उसी को लेकर।"

श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे है। एक भक्त छोटी खाट पर बैठे हुए उनके पैर दबा रहे है। श्रीरामकृष्ण भक्त से धीरे धीरे कह रहे है, "जो निराकार है वही साकार भी है। साकाररूप भी मानना चाहिए। काली-रूप की चिन्ता करते हुए साधक काली-रूप के ही दर्शन पाता है। फिर वह देखता है कि वह रूप अखण्ड मे लीन हो गया। जो अखण्ड सच्चिदानन्द है वही काली भी है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे मे महिमाचरण आदि के साथ हठयोगी की बाते कर रहे है। रामप्रसन्न भक्त कृष्णकिशोर के पुत्र है। इसीलिए श्रीरामकृष्ण उन पर स्नेह करते है।

श्रीरामकृष्ण – रामप्रसन्न उसी तरह अल्हडपने मे घूम रहा है। उस दिन यहाँ आकर बैठा, कुछ बोला भी नही, प्राणायाम साधकर श्वास चढ़ाये बैठा रहा। खाने को दिया, परन्तु खाया भी नही। एक और दूसरे दिन भी बुलाकर बैठाया। वह पैर पर पैर चढाकर बैठा – कप्तान की ओर पैर करके। उसकी माँ का दु:ख देखकर रोता हूँ।

(महिमाचरण से) "उस हठयोगी की बात तुमसे कहने के लिए उसने कहा था। प्रति दिन उसका साढ़े छ: आने का खर्च है। इधर खुद कुछ न कहेगा!"

महिमा – कहने से सुनता कौन है! (श्रीरामकृष्ण और दूसरे हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आकर अपने आसन पर बैठे। पानिहाटी के श्रीयुत मणि सेन दो-एक मित्रो के साथ आये है, श्रीरामकृष्ण के हाथ टूटने के सम्बन्ध मे पूछताछ कर रहे है। उनके साथियो मे एक डाक्टर भी है।

श्रीरामकृष्ण आजकल डाक्टर प्रतापचन्द्र मजूमदार का इलाज कर रहे है। मणिबाबू के साथवाले डाक्टर ने उनकी चिकित्सा का अनुमोदन नही किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे है – "वह (प्रताप) कुछ बेवकूफ तो है नही, तुम क्यो ऐसी बात कह रहे हो?"

इसी समय लाटू ने जोर से पुकारकर कहा, "शीशी गिरकर फूट गयी है।"

मणि सेन हठयोगी की बात सुनकर कह रहे हैं – "हठयोगी किसे कहते हैं? हॉट (hot) का तो अर्थ है गरम!"

मणि सेन के डाक्टर के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण ने पीछे से कहा – "उसे जानता हूँ। यदु मल्लिक से मैंने कहा भी था, यह तुम्हारा डाक्टर बिलकुल खोखला है – अमुक डाक्टर से भी इसकी बुद्धि मोटी है!"

अभी सन्ध्या नहीं हुई है। श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठकर मास्टर से बातचीत कर रहे हैं। वे खाट के पास पाँवपोश पर पश्चिम की ओर मुँह करके बैठे हैं; इधर महिमाचरण पश्चिमवाले गोल बरामदे में बैठकर मणि सेन के डाक्टर के साथ उच्च स्वर में शास्त्रालाप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने आसन से सुन रहे हैं और कुछ हँसकर मास्टर से कह रहे हैं – "देखो, झाड़ रहा है; रजोगुण है। रजोगुण होने से कुछ पाण्डित्य दिखलाने और लेक्चर देने की इच्छा होती है। सतोगुण से मनुष्य अन्तर्मुख हो जाता है, खुद के गुण छिपा रखने की इच्छा होती है। पर आदमी खासा है – ईश्वर के नाम पर कितना उत्साह है!"

अधर आये, प्रणाम किया और मास्टर के पास बैठ गये। श्रीयुत अधर सेन डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं। उम्र तीस साल की होगी। दिन भर ऑफिस का काम करके, कितने ही दिनों से शाम के बाद श्रीरामकृष्ण के पास आ रहे हैं। इनका मकान कलकत्ते के शोभा बाजार बनियाटोले में है। कई दिनों से ये आये नहीं थे।

श्रीरामकृष्ण – क्यों जी, इतने दिन क्यों नहीं आये?

अधर - कई कामों में फँसा था। स्कूलों की सभाओं और कुछ दूसरी मीटिंग में भी जाना पड़ा था।

श्रीरामकृष्ण – मीटिंग, स्कूल लेकर और सब बिलकुल भूल गये थे।

अधर – (विनयपूर्वक) – जी, नहीं, काम के कारण बाकी सब बातें दबी सी पड़ी थीं। आपका हाथ कैसा है?

श्रीरामकृष्ण – यह देखो, अभी तक अच्छा नहीं हुआ। प्रताप की दवा खा रहा था।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण एकाएक अधर से कहने लगे – "देखो, यह सब अनित्य है। मीटिंग, स्कूल, ऑफिस, यह सब अनित्य है। ईश्वर ही वस्तु है और सब अवस्तु। बस मन लगाकर उन्हीं की आराधना करनी चाहिए।"

अधर चुप है।

श्रीरामकृष्ण – यह सब अनित्य है। शरीर अभी अभी है, अभी अभी नहीं। जल्दी उन्हें पुकार लेना चाहिए।

"तुम लोगों को सब त्याग करने की आवश्यकता नहीं है। कछुए की तरह संसार में रहो। कछुआ स्वयं तो पानी में भोजन की तलाश करता है, परन्तु अपने अण्डे किनारे

पर रखता है – उसका सब मन वही रहता है जहाँ उसके अण्डे है।

"कप्तान का स्वभाव अब अच्छा हो गया है। जब पूजा करने बैठता है तब बिलकुल ऋषि की तरह जान पड़ता है। इधर कपूर की आरती और बहुत ही सुन्दर स्तव पाठ करता है। पूजा करके जब उठता है, तब भाव के कारण उसकी आँखे सूज जाती है, मानो चीटियो ने काटा हो। और सारे समय गीता, भागवत यही सब पढ़ता रहता है। मैने दो-चार अंग्रेजी शब्द कहे, इससे बिगड़ बैठा। कहा – अंग्रेजी पढ़नेवाले भ्रष्टाचारी होते है।"

कुछ देर बाद अधर ने बड़े विनीत भाव से कहा –

"हमारे यहाँ बहुत दिनो से आप नही पधारे है। बैठकखाने मे मानो संसारीपन की दुर्गन्ध आती है और बाकी तो सब अँधेरा ही अँधेरा है।"

भक्त की यह बात सुनकर श्रीरामकृष्ण के स्नेह का सागर उमड़ पड़ा। भावावेश मे वे उठकर खड़े हो गये। अधर और मास्टर के मस्तक और हृदय पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। स्नेहपूर्वक कहा – "मै तुम लोगो को नारायण देख रहा हूँ। तुम्ही लोग मेरे अपने आदमी हो।"

अब महिमाचरण भी कमरे मे आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा मे) – धैर्यरेता की बात उस समय जो तुम कह रहे थे, वह ठीक है। वीर्यधारण किये बिना इन सब बातो की धारणा नही होती।

"किसी ने चैतन्यदेव से कहा, 'आप इन भक्तो को इतना उपदेश दे रहे है, तो भी वे अपनी उतनी उन्नति क्यो नही कर पाते?'

"चैतन्यदेव ने कहा – 'ये लोग योषित्-संग करके सब अपव्यय कर देते है, इसीलिए धारणा नही कर सकते। फूटे घड़े मे पानी रखने से क्रमश: सब निकल जाता है।"

महिमा आदि भक्तगण चुपचाप बैठे है। कुछ देर बाद महिमाचरण ने कहा – ईश्वर के पास हम लोगो के लिए प्रार्थना कर दीजिये, जिससे हम लोगो को वह शक्ति प्राप्त हो।

श्रीरामकृष्ण – अब भी सावधान हो जाओ! सच है कि आषाढ़ का पानी है, रोकना मुश्किल है, परन्तु पानी निकल भी तो बहुत चुका है, अब बाँध बाँधने से रुक जायगा।

परिच्छेद ७९

अवतारवाद

(१)

प्राणकृष्ण, मास्टर, राम, गिरीश, गोपाल आदि के संग में

शनिवार, ५ अप्रैल १८८४। सुबह के आठ बजे हैं। मास्टर ने दक्षिणेश्वर में पहुँचकर देखा, श्रीरामकृष्ण प्रसन्नचित्त हैं; अपनी छोटी खाट पर बैठे हैं। जमीन पर कई भक्त बैठे थे। उनमें श्रीयुत प्राणकृष्ण मुखोपाध्याय भी थे।

प्राणकृष्ण जनाई के मुखर्जियों के वंश के है। कलकत्ते में श्यामपुकुर में रहते हैं, मेकेंजी लायल के एक्सचेंज (Exchange) नामक नीलाम-घर के कार्याध्यक्ष हैं। ये गृहस्थ तो हैं परन्तु वेदान्तचर्चा में उनकी बड़ी प्रीति है। श्रीरामकृष्णदेव की बड़ी भक्ति करते हैं – कभी कभी उनके दर्शन कर जाया करते हैं। अभी अभी एक दिन श्रीरामकृष्णदेव को अपने घर ले जाकर उन्होंने उत्सव मनाया था। ये बागबाजार के घाट में रोज प्रात:काल गंगास्नान करते है और वहाँ कोई नाव ठीक हो गयी तो उस पर चढ़कर सीधे दक्षिणेश्वर श्रीरामकृष्ण के दर्शन के लिए चले आते हैं। आज भी इसी तरह उन्होंने नाव किराये पर की थी। नाव जब किनारे से आगे बढ़ी तब उसमें लहरों की टक्कर लगने लगी। मास्टर भी उनके साथ थे। उन्होंने कहा, मुझे उतार दीजिये। प्राणकृष्ण और उनके दूसरे मित्र समझाने लगे, परन्तु उन्होंने कहा, नहीं, मुझे उतार दीजिये, मैं पैदल चलकर दक्षिणेश्वर जाऊँगा। लाचार हो उन्हें उतार देना पड़ा।

मास्टर ने पहुँचकर देखा, वे लोग कुछ पहले ही पहुँच गये हैं; श्रीरामकृष्ण से वार्तालाप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण को साष्टांग प्रणाम करके वे भी एक ओर बैठे।

अवतारवाद

श्रीरामकृष्ण – (प्राणकृष्ण से) – परन्तु आदमी में उनका ज्यादा प्रकाश है। अगर कहो, अवतार कैसे सिद्ध होगा, जिनमें भूखप्यास ये सब जीवों के धर्म हैं – सम्भव है कि उनमें रोग-शोक भी हों – तो इसका उत्तर यह है कि पंचभूतों के फन्दे में पड़कर ब्रह्म रो रहे हैं।

"देखो न, श्रीरामचन्द्र सीता के वियोग से रोने लगे थे। जब हिरण्याक्ष का वध करने के लिए वराह का अवतार लिया, तब हिरण्याक्ष का वध हो जाने पर भी भगवान अपने धाम को नहीं गये थे। वराह के ही रूप में रहने लगे। कुछ बच्चे भी हो गये थे! उन्हें लेकर एक तरह से बड़े मजे में रहते थे। देवताओं ने कहा, यह इन्हें क्या हो गया? – ये तो अब आना ही नहीं चाहते। तब सब मिलकर शिव के पास गये और सब हाल उन्हें कह सुनाया। शिव ने उनके पास जाकर उन्हें बहुत समझाया, पर सुनता कौन है, वे अपने बच्चों को दूध पिलाने लगे! (सब हँसे।) तब शिव ने त्रिशूल से देह नष्ट कर दी। भगवान् खिल-खिलाकर हँसे और अपने लोक को चले गये।"

प्राणकृष्ण – (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, यह अनाहत शब्द क्या है?

श्रीरामकृष्ण – अनाहत शब्द सदा आप ही आप हो रहा है। वह प्रणव-ओंकार की ध्वनि है, परब्रह्म से आती है, योगी इसे सुनते है। विषयी जीवों को यह ध्वनि नहीं सुन पड़ती। योगी जानते हैं कि वह ध्वनि एक ओर तो नाभि-कमल से उठती है और दूसरी ओर उस क्षीरसिन्धु-शायी परब्रह्म से।

परलोक के सम्बन्ध में श्री केशव सेन का प्रश्न

प्राणकृष्ण – महाराज, परलोक कैसा है?

श्रीरामकृष्ण – केशव सेन ने भी यह बात पूछी थी। जब तक आदमी अज्ञान दशा में रहता है, अर्थात् जब तक ईश्वर-लाभ नहीं होता, तब तक जन्म ग्रहण करना पड़ता है। परन्तु ज्ञान हो जाने पर, फिर इस संसार में नहीं आना पड़ता। पृथ्वी में या किसी दूसरे लोक में नहीं जाना पड़ता।

"कुम्हार धूप में सूखने के लिए हण्डियाँ रख लेता है। देखा नही तुमने? – उनमें कच्ची हण्डियाँ रहती हैं और पकी हुई भी। कभी कभी जानवरों के आने-जाने से कुछ हण्डियाँ फूट जाती है। उनमे जो हण्डी पकी हुई होती है उसे कुम्हार फेंक देता है, उससे फिर उसका कोई काम नहीं चलता। और अगर कच्ची हण्डी फूटी तो कुम्हार उसे ले लेता है, भिगोकर गाला बनाकर चाक पर फिर चढ़ा देता है – उससे फिर दूसरी हण्डी तैयार करता है। इसी तरह, जब तक ईश्वर-दर्शन नहीं हुए तब तक कुम्हार के हाथ जाना होगा, अर्थात् इस संसार में घूम-घामकर आना होगा।

"उबाले हुए धानों के गाड़ने से क्या होगा? फिर उससे पेड़ नहीं होता! मनुष्य यदि ज्ञानाग्नि में सिद्ध हो जाय, तो फिर वह नयी सृष्टि के काम का नहीं रहता – वह मुक्त हो जाता है।

वेदान्त और अहंकार। ज्ञान और विज्ञान

"पुराणों के मत में हैं भक्त और भगवान् – मैं एक अलग और तुम अलग। शरीर

एक पात्र है जिसमें मन-बुद्धि-अहंकार रूपी पानी है। ब्रह्म सूर्य-स्वरूप हैं। इस पानी में उनका प्रतिबिम्ब गिर रहा है। भक्त ईश्वर का वही रूप देखता है।

"वेदान्त के मत से ब्रह्म ही वस्तु है और सब माया, स्वप्नवत्, अवस्तु। अहं-रूपी एक लाठी सच्चिदानन्द-समुद्र में पड़ी हुई है। (मास्टर से) तुम इसे सुनते जाना – अहं-लाठी को उठा लेने पर एक सच्चिदानन्द-समुद्र रह जाता है। अहं-लाठी के रहने से दो दीख पड़ते हैं। इधर पानी का एक हिस्सा और उधर एक हिस्सा। ब्रह्मज्ञान होने पर मनुष्य को समाधि हो जाती है। तब यह अहं मिट जाता है।

"परन्तु लोक-शिक्षा के लिए शंकराचार्य ने 'विद्या का अहं' रखा था। (प्राणकृष्ण से) परन्तु ज्ञानियों का एक लक्षण और भी है। कोई कोई सोचते है, 'मैं ज्ञानी हो गया।' ज्ञान का लक्षण क्या है? ज्ञानी किसी की बुराई नहीं कर सकता। वह बालक-सा हो जाता है। लोहे के खड्ग में अगर पारस-पत्थर छुआ दिया जाय तो खड्ग सोने का हो जाता है। सोने से हिंसा का काम नहीं होता। बाहर से भले ही जान पड़ता हो कि इसमें राग-अहंकार है, परन्तु वास्तव में ज्ञानी में यह कुछ नहीं रहता।

"दूर से जली रस्सी देखिये तो जान पड़ता है कि यह रस्सी ही पड़ी हुई है, परन्तु पास जाकर फूँक मारिये तो सब राख होकर उड़ जाती है। क्रोध का, अहंकार का बस आकार मात्र है, परन्तु वह यथार्थ में क्रोध नहीं – अहंकार नहीं।

"बच्चे में आसक्ति नहीं रहती। अभी अभी उसने घरौंदा बनाया। कोई उसे छू ले तो तिनककर नाचने लगे, रोना शुरू कर दे, परन्तु खुद ही थोड़ी देर में उसे बिगाड डालता है। अभी अभी देखो तो कपड़े पर रीझा है। कहता है, मेरे बाबूजी ने ले दिया है, मैं नहीं दूँगा; परन्तु एक खिलौना दो; बस भूल जाता है, कपड़े को वहीं छोड़कर चला जाता है।

"ये ही सब ज्ञानी के लक्षण हैं। चाहे घर में बड़ा ऐश्वर्य हो – शीशे, मेज, तस्वीरें, गाड़ी-घोड़े, परन्तु दिल में आ जाय तो सब छोड़-छाड़कर काशी की राह पकड़ ले।

"वेदान्त के मत से जागरण अवस्था भी कुछ नहीं है। किसी लकड़हारे ने स्वप्न देखा था। कच्ची नींद में ही किसी दूसरे के जगा देने पर उसने झुँझलाकर कहा – 'तूने क्यों मुझे कच्ची नींद में जगाया? मैं राजा हो गया था और सात लड़कों का बाप। मेरे बच्चे लिखते-पढ़ते थे, अस्त्रविद्या सीख रहे थे। मैं सिंहासन पर बैठा राज कर रहा था। क्यों मेरा सब्ज-बाग उजाड़ डाला?' उस आदमी ने कहा – 'अरे वह तो स्वप्न था, उसमें क्या रखा है?' लकड़हारे ने कहा, 'चल, तू नहीं समझा। मेरा लकड़हारा होना जिस तरह सच है, स्वप्न में राजा होना उसी तरह सच है। लकड़हारा होना यदि सत्य हो तो स्वप्न में राजा होना भी सत्य है।"

अब श्रीरामकृष्ण विज्ञानी की बात कह रहे हैं –

"नेति-नेति करके आत्म-साक्षात्कार करने को ज्ञान कहते हैं। नेति-नेति विचार

करके मनुष्य समाधि में आत्मदर्शन करता है।

"विज्ञान अर्थात् विशेष रूप से ज्ञान प्राप्त करना। किसी ने दूध का नाम ही नाम सुना है, किसी ने दूध देखा भर है और किसी ने दूध पिया है। जिसने सिर्फ सुना है, वह अज्ञानी है, जिसने देखा है वह ज्ञानी है, और जिसने पिया है, वह विज्ञानी है, विशेष रूप से ज्ञान उसी को हुआ है। ईश्वर को देखकर उनसे वार्तालाप करना, जैसे वे परम आत्मीय हों, इसी का नाम विज्ञान है।

"पहिले 'नेति-नेति' किया जाता है। वे पंचभूत नहीं हैं, मन, बुद्धि, अहंकार भी नहीं हैं; वे सब तत्त्वों से परे हैं। छत पर चढ़ना होगा, सब सीढ़ियों को एक एक करके छोड़ जाना होगा। सीढ़ियाँ कभी छत नहीं हैं, परन्तु छत पर पहुँचकर देखा जाता है, जिन चीजों से छत बनी है – ईंट-चूना-सुरखी – उन्हीं चीजों से सीढ़ियाँ भी बनी हैं, पर सीढ़ियाँ कभी छत नहीं हैं। जो परब्रह्म है वे ही जीव-जगत् और चौबीसों तत्त्व भी हुए हैं। जो आत्मा हैं वे ही पंचभूत भी हुए हैं। मिट्टी इतनी कड़ी क्यों है अगर वह आत्मा से ही हुई है? उनकी इच्छा से सब हो सकता है। हाड़ और मांस, शोणित और शुक्र से ही तो होते हैं। समुद्र का फेन कितना कड़ा होता है!

क्या गृहस्थ को विज्ञान हो सकता है? साधना चाहिए

"विज्ञान के होने पर संसार में भी रहा जा सकता है। तब अच्छी तरह अनुभव हो जाता है कि जीव और जगत् वे ही हुए हैं, वे संसार से अलग नहीं हैं। श्रीरामचन्द्र ने ज्ञान-लाभ के पश्चात् जब कहा कि मैं संसार में न रहूँगा, तब दशरथ ने समझाने के लिए वशिष्ठ को उनके पास भेजा। वशिष्ठ ने कहा, 'राम! यदि संसार ईश्वर से अलग हो तो तुम इसे छोड़ सकते हो।' श्रीरामचन्द्र चुप हो रहे। वे अच्छी तरह जानते थे, ईश्वर से अलग कोई चीज नही है। उन्हें फिर संसार न छोड़ना पड़ा। बात यह है कि दिव्य दृष्टि चाहिए। मन के शुद्ध होने पर ही वह दृष्टि होती है। देखो न, कुमारी-पूजा क्या है। मल और मूत्र त्याग करके आयी हुई लड़कियाँ, उन्हें मैंने देखा – साक्षात् भगवती की मूर्ति। एक ओर स्त्री है और एक ओर बच्चा; दोनों को मनुष्य प्यार कर रहा है, किन्तु भाव भिन्न है, तात्पर्य यह है कि खेल सब मन का है। शुद्ध मन में एक खास भाव होता है। उस मन को प्राप्त कर लेने पर इसी संसार में ईश्वर के दर्शन होते हैं। अतएव साधना चाहिए।

"साधना चाहिए। यह समझ लेना चाहिए कि स्त्रियों पर सहज ही आसक्ति हो जाती है। स्त्रियाँ स्वभाव से ही पुरुषों को प्यार करती हैं। पुरुष स्वभाव से ही स्त्रियों को प्यार करते हैं। दोनों इसीलिए जल्दी गिर जाते हैं।"

(हठयोगी आता है।)

पंचवटी में कई दिनों से एक हठयोगी रहते हैं। वे सिर्फ दूध और अफीम खाते हैं

और हठयोग करते हैं। रोटी-भात, यह कुछ नहीं खाते। अफीम और दूध के दाम उनके पास नही हैं। श्रीरामकृष्ण जब पंचवटी के पास गये थे तब वे हठयोगी से बातचीत करके आये थे। हठयोगी ने राखाल से कहा था, 'परमहंसजी से कहकर मेरी कोई व्यवस्था करा देना।' श्रीरामकृष्ण ने कहला भेजा था कि कलकत्ते के बाबू जब आयेंगे तब उनसे कहा जायगा।

हठयोगी – (श्रीरामकृष्ण से) – आपने राखाल से क्या कहा था?

श्रीरामकृष्ण – कहा था, बाबुओं से कहूँगा। अगर वं कुछ देंगे तो दे देंगे। परन्तु क्यों – (प्राणकृष्णादि से) तुम शायद इन्हें like (पसन्द) नहीं करते?

प्राणकृष्ण चुपचाप बैठे रहे।

(हठयोगी चला जाता है।)

श्रीरामकृष्ण की बातचीत होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – (प्राणकृष्णादि भक्तों से) – और संसार में रहने पर सत्य का खूब ध्यान चाहिए। सत्य से ही परमात्मा की प्राप्ति होती है। मेरी तो इस समय सत्य की दृढ़ता कुछ कम हो गयी है, पहले बहुत थी। 'नहाऊँगा' यह कहा नही कि गंगा में उतरा, मन्त्रोच्चारण किया, सिर पर पानी भी डाला, परन्तु फिर भी सन्देह होता था कि शायद अच्छी तरह नहाना अभी नहीं हुआ। अमुक स्थान पर शौच के लिए जाऊँगा यह सोचा नहीं कि वहीं गया। राम के मकान गया, कलकत्ते मे। कह दिया कि पूड़ियाँ न खाऊँगा। जब खाने को दिया गया, तब देखा, भूख लगी है; परन्तु कह जो दिया है कि पूड़ियाँ न खाऊँगा तो मजबूरन मिठाई से पेट भरा। (सब हँसते हैं।) इस समय तो दृढ़ता कुछ घट गयी है। टट्टी की हाजत नहीं है, परन्तु कह डाला है कि टट्टी जाऊँगा, क्या किया जाय? राम* से पूछा, उसने कहा, नहीं लगी है तो जाकर क्या कीजियेगा? तब मैंने विचार किया, सभी तो नारायण हैं, राम भी नारायण है, उसकी बात क्यों न मानूँ? हाथी नारायण है, परन्तु महावत भी तो नारायण है। महावत जिस समय कह रहा है, हाथी के पास मत आओ, उस समय उसकी बात क्यों न मानी जाय? इस तरह विचार करके अब पहले की अपेक्षा दृढ़ता कुछ घट गयी है।

"अब इस समय देख रहा हूँ, एक और अवस्था आ रही है। बहुत दिन हुए वैष्णवचरण ने कहा था, आदमी के भीतर जब ईश्वर के दर्शन होंगे, तब पूर्ण ज्ञान होगा। अब देख रहा हूँ, अनेक रूपों में वही विचरण कर रहे हैं। कभी साधु के रूप में, कभी छल-रूप में, और कभी खल-रूप में। इसीलिए कहता हूँ, साधुरूपी नारायण, छलरूपी नारायण, खलरूपी नारायण, लुच्चारूपी नारायण।

---

* राम चॅटर्जी – दक्षिणेश्वर मन्दिर के एक पूजारी।

"अब चिन्ता है, सब को किस तरह भोजन कराया जाय। सब को भोजन कराने की इच्छा होती है। इसलिए एक-एक आदमी को यहाँ रखकर भोजन कराता हूँ।"

प्राणकृष्ण – (मास्टर को देखकर, सहास्य) – अच्छा आदमी है! (श्रीरामकृष्ण से) महाराज, नाव से उतरकर ही दम लिया!

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – क्या हुआ?

प्राणकृष्ण – ये नाव पर चढ़े थे; जरा सी लहर की टक्कर लगी और इन्होने कहा, उतार दो हमको – (मास्टर से) किस तरह फिर आये आप?

मास्टर – (सहास्य) – पैदल चलकर।

संसारी लोगों के लिए विषय-कर्मत्याग कठिन है

प्राणकृष्ण – (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, अब सोच रहा हूँ, काम छोड़ दूँगा। काम करने लगा, तो फिर और कुछ नही होगा। इन्हे (साथ के एक बाबू की ओर इशारा करके) काम सिखा रहा हूँ। मेरे छोड़ देने पर ये काम करेगे, अब और नही होता।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, बड़ी झंझट है। इस समय कुछ दिन निर्जन मे ईश्वर-चिन्तन करना बहुत अच्छा है। तुम कहते तो हो कि छोड़ोगे। कप्तान ने भी यही बात कही थी। संसारी आदमी कहते तो है, पर कर नही सकते।

"कितने ही पण्डित है जो ज्ञान की बाते कहा करते है। वे मुख ही से कहते है, काम कुछ नही कर सकते। जैसे गिद्ध उड़ता तो बहुत ऊँचे है, परन्तु उसकी नजर मरघट पर ही रहती है। अर्थात् उसी कामिनी-कांचन पर – संसार पर आसक्ति। अगर मैं सुनता हूँ कि किसी पण्डित को विवेक-वैराग्य है तो मुझे सचमुच उनसे श्रद्धापूर्ण भय होता है और नही तो वे सब भेड-बकरे-से ही जान पड़ते है।"

प्राणकृष्ण प्रणाम करके बिदा हुए। उन्होंने मास्टर से चलने के लिए पूछा। मास्टर ने कहा; मै अभी न जाऊँगा, आप चलिये। प्राणकृष्ण ने हँसते हुए कहा, तुम अब और नाव पर कदम रखोगे? (सब हँसते है।)

मास्टर ने पंचवटी मे थोड़ी देर टहलकर, जिस घाट मे श्रीरामकृष्ण नहाते थे, उसी मे नहाया। इसके बाद श्रीभवतारिणी और राधाकान्त के दर्शन किये। वे सोच रहे है, मैने सुना था ईश्वर निराकार है, तो फिर क्यो मै इस मूर्ति के सामने प्रणाम कर रहा हूँ? क्या श्रीरामकृष्ण साकार देव-देवियो को मानते है इसलिए? मै तो ईश्वर के सम्बन्ध में कुछ भी नही समझता; परन्तु जब कि श्रीरामकृष्ण मानते है, तो मै किस खेत की मूली हूँ – मानना ही होगा।

मास्टर श्रीभवतारिणी माता के दर्शन कर रहे है। देखा, उनके दोनों बायें हाथों मे खड्ग और नरमुण्ड शोभा दे रहे है, दोनों दाहिने हाथों में वर और अभय। एक ओर वे

भयंकरा मूर्ति हैं और दूसरी ओर भक्तवत्सला मातृमूर्ति। उनमें दो भावों का एकत्र समावेश हो रहा है। भक्तों के निकट, अपने दीन-हीन जीवों के निकट, माता दयामयी और स्नेहमयी के स्वरूप में आती हैं और यह भी सत्य है कि वे भयंकरा ओर कालकामिनी भी हैं। एक ही आधार में ये दो भाव क्यों हैं, इसका हाल तो वे ही जानें।

मास्टर श्रीरामकृष्ण की व्याख्या याद कर रहे हैं। सोच रहे हैं – सुना है, केशव सेन ने भी श्रीरामकृष्ण के पास देवी-प्रतिमा का अस्तित्व स्वीकार कर लिया था। 'क्या यही मृण्मय आधार में चिन्मयी मूर्ति है?' केशव यही बात कहते थे।

अब वे श्रीरामकृष्ण के पास आकर बैठे। वे नहा चुके हैं, यह देखकर श्रीरामकृष्ण ने उन्हें फलमूल प्रसाद खाने के लिए दिया। गोल बरामदे में आकर उन्होंने प्रसाद पाया। पानीवाला लोटा बरामदे में ही रह गया था। वे जल्दी से श्रीरामकृष्ण के पास आकर कमरे में बैठ ही रहे थे कि श्रीरामकृष्ण ने कहा, तुम लोटा नहीं लाये?

मास्टर – जी हाँ, लाता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – वाह!

मास्टर का चेहरा फीका पड़ गया। बरामदे से लोटा लाकर कमरे में रखा।

मास्टर का घर कलकत्ते में है। घर में शान्ति न मिलने के कारण उन्होंने श्यामपुकुर में किराये का मकान लिया है। उनका स्कूल भी वहीं है। उनके अपने मकान में उनके पिता और भाई रहते हैं। श्रीरामकृष्ण की इच्छा है कि वे अपने मकान में आकर रहें; क्योंकि एक ही घर और एक ही थाली के खानेवालों में भजन-पूजन करने की बड़ी सुविधा है। यद्यपि श्रीरामकृष्ण बीच-बीच में ऐसा कहते थे, तथापि दुर्भाग्यवश मास्टर अपने घर वापस नहीं जा सके। आज श्रीरामकृष्ण ने फिर वही बात उठायी।

श्रीरामकृष्ण – क्यों, अब तुम घर जाओगे?

मास्टर – मेरा तो वहाँ रहने के लिए किसी तरह जी नहीं चाहता।

श्रीरामकृष्ण – क्यों, तुम्हारा बाप मकान गिरवाकर वहाँ नयी इमारत खड़ी कर रहा है।

मास्टर – घर में मुझे बड़ी तकलीफ मिली है। वहाँ जाने को मेरा किसी तरह मन नहीं होता।

श्रीरामकृष्ण – तुम किससे डरते हो?

मास्टर – सब से।

श्रीरामकृष्ण – (गम्भीर स्वर में) – वह भय वैसा ही है जैसा तुम्हें नाव पर चढ़ते समय होता है।

देवताओं का भोग लग गया। आरती हो रही है। कालीमन्दिर में आनन्द हो रहा है। आरती का शब्द सुनकर, कंगाल, साधु, फकीर, सब अतिथि-शाला में दौड़े आ रहे हैं।

किसी के हाथ में पत्तल है, किसी के हाथ में थाली लोटा। सब ने प्रसाद पाया। आज मास्टर ने भी भवतारिणी का प्रसाद पाया।

(३)

केशवचन्द्र सेन और 'नवविधान'। 'नवविधान में सार है'

श्रीरामकृष्ण प्रसाद ग्रहण करके जरा विश्राम कर रहे है। इतने में राम, गिरीन्द्र तथा और भी कई भक्त आ पहुँचे। भक्तो ने माथा टेककर प्रणाम किया और आसन ग्रहण किया।

श्रीयुत केशवचन्द्र सेन के नवविधान की चर्चा चली।

राम – (श्रीरामकृष्ण से) – महाराज, मुझे तो ऐसा नही जान पड़ता कि नवविधान से कोई उपकार हुआ हो। केशव बाबू अगर सच्चे होते, तो फिर उनके शिष्यो की यह दशा क्यो होती? मेरे मत से उनके भीतर कुछ भी नही है। जैसे खपरे बजाकर दरवाजे में ताला लगाना। लोग सोचते है, इसके खूब रुपये है – झनकार हो रही है, परन्तु भीतर बस खपरे ही खपरे है! बाहर के लोग भीतर की खबर क्या जाने!

श्रीरामकृष्ण – कुछ सार जरूर है। नही तो इतने आदमी केशव को क्यो मानते है? शिवनाथ को लोग क्यो नही पहचानते? ईश्वर की इच्छा के बिना ऐसा कभी होता नही।

"परन्तु संसार का त्याग किये बिना आचार्य का काम नही होता। लोग कहते हैं, यह संसारी आदमी है, यह खुद तो कामिनी और कांचन का छिपकर भोग करता है और हमसे कहता है, 'ईश्वर ही सत्य है – संसार स्वप्नवत् अनित्य है।' सर्वत्यागी हुए बिना उसकी बात सब लोग नही मानते। जो लोग संसार मे पड़े है उन्ही में कोई कोई मान सकते है। केशव के घर-द्वार, कुटुम्ब-परिवार था, अतएव मन भी संसार मे था। संसार की रक्षा भी तो करनी होगी? इसीलिए इतना लेक्चर उसने दिया, परन्तु अपने संसार को बड़ी मजबूती में रख गया है। कैसा दामाद है। मै उसके घर के भीतर गया, देखा बड़े बड़े पलंग हैं। सांसारिक काम करने लगे तो धीरे धीरे ये सब आ जाते है। भोग की ही भूमि संसार कहलाती है।"

राम – वे पलंग और मकान केशव को हिस्से मे मिले थे। महाराज, आप कुछ भी कहें, परन्तु विजय बाबू ने कहा है – 'केशव सेन ने मुझसे कहा था, मै ईसा और गौरांग का अंश हूँ और तुम अपने को अद्वैत का अंश बतलाया करो।' और उसने क्या कहा था – आप जानते हैं? आपको कहा था – वे भी नवविधान के हैं! (श्रीरामकृष्ण और सब हँसते है।)

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – परमात्मा जाने, मै तो यह भी नही जानता कि नवविधान का अर्थ क्या है। (सब हँसते हैं।)

7 और भक्ति का समन्वय सब से पहले केशव बाबू ने किया है।

श्रीरामकृष्ण – (आश्चर्य मे आकर) – यह क्या! तो फिर अध्यात्म-रामायण है क्या? नारद श्रीरामचन्द्र की स्तुति करते है – 'हे राम! वेदो मे जिस परब्रह्म की कथा है, वह तुम्ही हो। तुम्ही (ब्रह्म ही) मनुष्य के रूप मे हमारे पास हो, तुम्हे (ब्रह्म को) ही हम मनुष्य देख रहे है, वस्तुतः तुम मनुष्य नही हो – वही परब्रह्म हो।' श्रीरामचन्द्र ने कहा, 'नारद, तुम पर मै प्रसन्न हुआ हूँ, तुम वर मॉगो।' नारद ने कहा, 'राम, और क्या वर मॉगूँ, अपने पादपद्मो मे मुझे शुद्धा भक्ति दो। और अपनी भुवनमोहिनी माया मे कभी फॅसा न देना।' इस तरह अध्यात्म-रामायण मे केवल ज्ञान और भक्ति की ही बाते है।

फिर केशव के शिष्य अमृत की बात चली।

राम – अमृत बाबू कैसे हो गये है।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, उस दिन मैने बडा दुबला देखा।

राम – महाराज, अब लेक्चर की भी बात सुन लीजिये। जब खोल मे पहला धावा मारा गया तब साथ ही कहा गया – 'केशव की जय।' आपने कहा था – बॅधी तलैया मे ही दल* होता है। इसी पर एक दिन लेक्चर मे अमृत बाबू ने कहा, साधु ने कहा है सही कि बॅधी तलैया मे दल होता है, परन्तु भाइयो, दल चाहिए – सगठन चाहिए – सच कहता हूँ – सच कहता हूँ – दल चाहिये। (सब हॅसते है।)

श्रीरामकृष्ण – यह क्या है। राम-राम यह भी लेक्चर है।

फिर यह बात उठी कि कोई कोई जरा अपनी तारीफ चाहते है।

श्रीरामकृष्ण – निमाई-संन्यास का नाटक हो रहा था। केशव के यहॉ मुझे ले गये थे। वहॉ सुना, न जाने किसने कहा, ये दोनो केशव और प्रताप गौराग और नित्यानन्द है। प्रसन्न ने तब मुझसे पूछा, तो फिर आप कौन है? देखा, केशव एकटक मेरी ओर देख रहा था, मै क्या कहता हूँ यह सुनने के लिए। मैने कहा, मै तुम्हारे दासो का दास, रेणु की रेणु हूँ। केशव ने हॅसकर कहा ये पकड मे नही आना चाहते।

राम – केशव कभी कभी आपको जान दि बैपटिस्ट बतलाते थे।

एक भक्त – और कभी कभी आपको उन्नीसवी सदी के चैतन्य बतलाते थे।

श्रीरामकृष्ण – इसके क्या माने?

भक्त – अर्थात् अग्रेजी की इस शताब्दी मे चैतन्यदेव फिर आये है और वे आप है।

श्रीरामकृष्ण – (अन्यमनस्क होकर) – खैर, वह तो जैसे हुआ। अब यह

---

* यहॉ 'दल' शब्द पर श्लेष है। 'दल' शब्द के दो अर्थ है – काई तथा सम्प्रदाय।

बतलाओ कि हाथ कैसे अच्छा हो। अब बस यही सोचता हूँ कि हाथ कैसे अच्छा हो।*

त्रैलोक्य के गाने की बात चली। त्रैलोक्य केशव के समाज में भगवत्-गुणानुवाद-कीर्तन करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – अहा! त्रैलोक्य का क्या ही सुन्दर गाना है!

राम – क्या सब बिलकुल ठीक होता है?

श्रीरामकृष्ण – हॉ, बिलकुल ठीक। अगर वैसा न होता तो मन को इतना क्यो खीचता?

राम – आप ही के सब भाव लेकर गीतो की रचना की गयी है। केशव सेन उपासना के समय उन्ही सब भावो का वर्णन करते थे और त्रैलोक्य बाबू उसी तरह के पद जोड़ते थे। देखिये, एक गाना है –

(भावार्थ) 'प्रेम के बाजार मे आनन्द का मेला लगा हुआ है। भक्तो के संग हरि अपनी मौज मे कितने ही खेल खेल रहे है।'

"आप भक्तो के साथ आनन्द करते है, यह देखकर इस गाने की रचना हुई है।"

श्रीरामकृष्ण – (हॅसते हुए) – तुम अब जलाओ मत। मुझे भला क्यो लपेटते हो? (सब हॅसते है।)

गिरीन्द्र – ब्राह्मगण कहते है, परमहंसदेव मे Faculty of organisation नही है।

श्रीरामकृष्ण – इसका क्या मतलब?

मास्टर - आप संगठन करना नही जानते, आप मे बुद्धि कम है, यह कहते है।

श्रीरामकृष्ण – (राम से) – अब यह बतलाओ, मेरा हाथ क्यों टूटा? तुम इसी विषय पर एक लेक्चर दो। (सब हॅसते हैं।)

"ब्राह्मसमाजी निराकार-निराकार कहा करते है। खैर, कहें। उन्हे अन्दर से पुकारने ही से हुआ। अगर अन्तर की बात हो तो वे तो अन्तर्यामी है, वे अवश्य समझा देगे, उनका स्वरूप क्या है।

"परन्तु यह अच्छा नही – यह कहना कि हम लोगो ने जो कुछ समझा है, वही ठीक है, और दूसरे जो कुछ करते है, सब गलत। हम लोग निराकार कह रहे है, अतएव वे साकार नही, निराकार है; हम लोग साकार कह रहे है, अतएव वे साकार हैं, निराकार नही! मनुष्य क्या कभी उनकी इति कर सकता है?

"इसी तरह वैष्णवो और शाक्तों में भी विरोध है। वैष्णव कहता है 'हमारे केशव ही एकमात्र उद्धारकर्ता हैं' और शाक्त कहता है, 'बस हमारी भगवती एकमात्र उद्धार करनेवाली है।'

---

* उनके टूटे हाथ से मतलब है।

"मैं वैष्णवचरण को सेजो बाबू* के पास ले गया था। वैष्णवचरण वैरागी है, बड़ा पण्डित है, परन्तु कट्टर वैष्णव है। इधर सेजो बाबू भगवती के भक्त हैं। अच्छी बातें हो रही थीं, इसी समय वैष्णवचरण ने कह डाला, 'मुक्ति देनेवाले तो एक केशव ही हैं।' केशव का नाम लेते ही सेजो बाबू का मुँह लाल हो गया और वे बोले, 'तू साला।' (सब हँस पड़े।) मथुर बाबू शाक्त जो थे! उनके लिए यह कहना स्वाभाविक ही था। मैंने इधर वैष्णवचरण को खींच लिया।

"जितनें आदमियों को देखता हूँ, धर्म-धर्म करके एक दूसरे से झगड़ा किया करते हैं। हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मसमाजी, शाक्त, वैष्णव, शैव, सब एक दूसरे से लड़ाई-झगड़ा करते हैं यह बुद्धिमानी नहीं है। जिन्हें कृष्ण कहते हो, वे ही शिव, वे ही आद्याशक्ति हैं, वे ही ईसा हैं और वे ही अल्लाह हैं। एक राम उनके हजार नाम।

"वस्तु एक ही है, केवल उसके नाम अलग अलग हैं। सब लोग एक ही वस्तु की चाह कर रहे हैं। अन्तर इतना ही है कि देश अलग है, पात्र अलग और नाम अलग। एक तालाब में बहुत से घाट हैं। हिन्दू एक घाट से पानी ले रहे हैं, घड़े में भरकर कहते हैं, 'जल'। मुसलमान एक दूसरे घाट से पानी भर रहे हैं, चमड़े के बैग में – कहते हैं, 'पानी'। क्रिस्तान तीसरे घाट से पानी ले रहे हैं – वे कहते हैं 'वाटर' (Water)। (सब हँसते हैं।)

"अगर कोई कहे, नहीं यह चीज जल नहीं है, यह पानी है या वाटर नहीं जल है, तो यह हँसी की ही बात होगी। इसीलिए दल, मतान्तर और झगड़े होते हैं। धर्म के नाम पर लट्ठम लट्ठा, मार-काट? यह सब अच्छा नहीं है। सब उन्हींके पथ पर जा रहे हैं। आन्तरिकता होने पर, व्याकुलता आने पर – उन्हें मनुष्य प्राप्त करेगा ही। (मणि से) तुम यह सुनते जाओ – वेद, पुराण, तन्त्र-शास्त्र उन्हींको चाहते हैं; वे किसी दूसरे को नहीं चाहते। सच्चिदानन्द बस एक ही हैं। जिन्हें वेदों में 'सच्चिदानन्द ब्रह्म' कहा है, तन्त्र में उन्हींको 'सच्चिदानन्द शिव' कहा है, उन्हींको उधर पुराणों में 'सच्चिदानन्द कृष्ण' कहा है।"

श्रीरामकृष्ण ने सुना, राम घर में कभी कभी स्वयं भोजन पकाते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – क्या तुम भी अपने हाथ से भोजन पकाते हो?

मणि – जी नहीं।

श्रीरामकृष्ण – कोशिश करके देखो न जरा, थोड़ा सा गो-घृत छोड़ कर भोजन किया करो। शरीर और मन शुद्ध जान पड़ने लगेंगे।

---

* रानी रासमणि के दामाद श्रीयुत मथुरानाथ विश्वास।

राम की घर-गृहस्थी की बहुत सी बातें हो रही हैं। राम के पिता परम वैष्णव हैं। घर मे श्रीधर की सेवा होती है। राम के पिता ने अपना दूसरा विवाह किया था उस समय राम की उम्र बहुत कम थी। पिता और विमाता राम के घर में ही थे, परन्तु विमाता के साथ रहकर राम सुखी नही रह सके। इस समय विमाता की उम्र चालीस साल की है। विमाता के कारण राम और उनके पिता में कभीकभी अनबन हो जाती थी। आज वे ही सब बातें हो रही हैं।

राम – बाबूजी की बुद्धि मारी गयी है।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – सुना? बाबूजी की बुद्धि मारी गयी है और आपकी बहुत अच्छी है।

राम – उनके (विमाता के) मकान में आने ही से अशान्ति होती है। एक न एक झंझट पैदा होती है। हमारा परिवार नष्ट होने पर आ गया। इसीलिए मैं कहता हूँ, वे अपने मायके में क्यों नहीं जाकर रहती?

गिरीन्द्र – (राम से) – अपनी स्त्री को उसी तरह मायके मे क्यों नहीं रखते? (सब हॅसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – यह क्या कुछ हण्डी और घड़ा है? हण्डी एक जगह रही और उसका ढक्कन दूसरी जगह! शिव एक ओर तथा शक्ति दूसरी ओर!

राम – महाराज, हम लोग सुख से हैं, वे आयी नहीं कि तोड़फोड़ मचाया। ऐसी दशा में –

श्रीरामकृष्ण – हॉ, अलग एक मकान कर दो, यह एक बात हो सकती है। महीने-महीने सब खर्च देते जाना। पिता कितने बड़े गुरु हैं! राखाल मुझसे पूछता था, क्या मैं बाबूजी की थाली में खा लूँ? मैंने कहा, 'अरे, यह क्या? तुझे हो क्या गया है जो तू अपने बाप की थाली में न खायेगा?'

"परन्तु एक बात है। जो लोग सन्मार्ग में हैं, वे अपना जूठा किसी को खाने के लिए नहीं देते। यहाँ तक कि कुत्ते को भी जूठन नहीं दी जाती।"

गिरीन्द्र – महाराज, माँ-बाप ने अगर कोई घोर अपराध किया हो, कोई घोर पाप किया हो तो?

श्रीरामकृष्ण – तो वह भी सही। माता यदि व्याभिचारिणी हो तो भी उसका त्याग न करना चाहिए। अमुक बाबुओं की गुरुपत्नी का चरित्र नष्ट हो गया। तब उन्होंने कहा, उनका लड़का गुरु बनाया जाय। मैंने कहा, 'यह तुम क्या कहते हो? तुम सूरन को छोड़कर सूरन की आँख लोगे? नष्ट हो गयी तो क्या हुआ? तुम उसे ही अपना इष्ट समझो।' एक गाने में है – 'मेरे गुरु यद्यपि कलवार की दूकान पर जाया करते हैं, तथापि मेरे गुरु नित्यानन्द राय हैं।'

चैतन्यदेव और माँ। मनुष्य के ऋण

"माँ-बाप क्या कुछ साधारण मनुष्य हैं? बिना उनके प्रसन्न हुए धर्म-कर्म कुछ भी नहीं होता। चैतन्यदेव प्रेम से पागल थे, परन्तु फिर भी संन्यास से पहले कुछ दिन लगातार उन्होंने अपने माता को समझाया था। कहा था – 'माँ! मैं कभी कभी आकर तुम्हें देख-दिखा जाया करूँगा।' (मास्टर से तिरस्कार करते हुए) और तुम्हारे लिए कहता हूँ, माँ-बाप ने तुम्हें आदमी बना दिया, अब कई लड़के-बच्चे भी हो गये हैं, इस पर बीबी को साथ लेकर निकल आना! माता-पिता को धोखा देकर बीबी-बच्चों को लेकर, वैष्णव-वैष्णवी बनकर निकलता है! तुम्हारे बाप को कोई कमी नहीं है, नहीं तो मैं कहता, धिक्कार है तुमको! (सब के सब स्तब्ध हैं।)

"कुछ ऋण हैं। देवऋण, ऋषिऋण; उधर मातृऋण, पितृऋण, स्त्री-ऋण। माता-पिता के ऋण का शोध किये बिना कोई काम नहीं होता। फिर पत्नी का भी ऋण है। हरीश पत्नी का त्याग करके यहाँ आकर रहता है। यदि उसकी स्त्री के भोजन की सुविधा न होती तो मैं कहता, साला बेईमान है।

"ज्ञान के पश्चात् उसी पत्नी को तुम साक्षात् भगवती देखोगे! सप्तशती में है, 'या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।' वे ही माँ हुई हैं।

"जितनी स्त्रियाँ देखते हो, सब वे ही हैं; इसीलिए मैं वृन्दा (नौकरानी) को कुछ कह नहीं सकता। कोई-कोई लोग श्लोक झाड़ते हैं – लम्बी-लम्बी बातें बघारते हैं, परन्तु उनका व्यवहार कुछ और ही होता है। इस हठयोगी के लिए किसी तरह अफीम और दूध इकट्ठा हो, रामप्रसन्न बस इसी चिन्ता में मारामारा घूमता है। और वह यह भी कहता है कि मनु में साधु-सेवा का उल्लेख है। इधर बूढ़ी माँ खाने को नहीं पाती, सौदा खरीदने के लिए हाट-बाजार खुद जाया करती है। क्या कहूँ ऐसा क्रोध आता है!

"परन्तु एक बात और है। अगर प्रेमोन्मत्त अवस्था हो तो फिर कौन है बाप, कौन है माँ और कौन है स्त्री? ईश्वर पर इतना प्यार हो कि पागल हो जाय। फिर उसके लिए कुछ भी कर्तव्य नहीं रह जाता। सब ऋणों से वह मुक्त हो जाता है। प्रेमोन्माद कैसा है, जानते हो? उस अवस्था के आने पर संसार भूल जाता है। अपनी देह जो इतनी प्यारी चीज है, वह भी भूल जाता है। यह अवस्था चैतन्यदेव की हुई थी। समुद्र में कूद पड़े, समुद्र का बोध ही नहीं। मिट्टी में बार-बार पछाड़ खा-खाकर गिरते हैं, न भूख है, न नींद; शरीर का बोध भी नहीं है!"

श्रीरामकृष्ण 'हा चैतन्य' कह उठे।

(भक्तों के प्रति) "चैतन्य के माने अखण्ड चैतन्य। वैष्णवचरण कहता था, गौरांग अखण्ड चैतन्य की ही एक छटा हैं।

"तुम्हारी क्या इस समय तीर्थ जाने की इच्छा है?"

बूढ़े गोपाल – जी हाँ, जरा देखभाल आयें।

राम – (बूढ़े गोपाल से) – ये कहते हैं, बहूदक के बाद कुटीचक की अवस्था होती है। जो साधु अनेक तीर्थों का भ्रमण करते हैं, उनका नाम है बहूदक, और जो एक जगह डटकर आसन जमा देते हैं उन्हें कुटीचक कहते हैं।

"एक बात और ये कहते हैं। एक पक्षी जहाज के मस्तूल पर बैठा था। जहाज गंगा से होकर काले पानी में (समुद्र मे) चला गया। पक्षी को इसका होश न था। जब वह होश में आया, तब किनारे का पता लगाने के लिए उत्तर की ओर उड़ गया। परन्तु उसने किनारा कहीं न देखा, तब लौट आया। फिर जरा देर विश्राम करके दक्षिण की ओर गया। उधर भी किनारा न दीख पड़ा। इसी तरह कुछ-कुछ विश्राम करके पूर्व और पश्चिम में भी गया। जब उसने देखा, कहीं किनारा नहीं है, तब मस्तूल पर आकर चुपचाप बैठ गया।"

श्रीरामकृष्ण – (बूढ़े गोपाल और भक्तों से) – जब तक यह बोध है कि ईश्वर वहाँ है – वहाँ है, तब तक अज्ञान है। जब यहाँ है, यह बोध हो जाता है, तब ज्ञान।

"एक आदमी तम्बाकू पीना चाहता था। वह अपने पड़ोसी के घर गया – टिकिया सुलगाने के लिए। घर के सब लोग सो गये थे। बड़ी देर तक दरवाजा खटखटाने पर एक आदमी खोलने के लिए नीचे उतर आया। उस आदमी को देखकर घरवाले ने पूछा, कहो, कैसे आये? उसने कहा, क्या कहूँ कैसे आया। जानते तो हो कि तम्बाकू पीने का चस्का है, टिकिया सुलगाने आया था। तब घरवाले ने कहा अजी वाह, तुम तो बड़े भले मानस निकले, इतनी मेहनत करके आये और दरवाजा खटखटाया, तुम्हारे हाथ में लालटेन जो है! (सब हँसते हैं।)

"जो कुछ चाहता है, वही उसके पास है, फिर भी आदमी अनेक स्थानों में चक्कर लगाया करता है।"

राम – महाराज, अब इसका मतलब समझ में आ गया। समझा कि गुरु क्यों कहते हैं कि चारों धाम करके आ जाओ। जब एक बार चक्कर मारकर देखता है कि जो कुछ यहाँ है, वही सब वहाँ भी है, तब फिर वह गुरु के पास लौटकर आता है। यह सब केवल गुरु की बात पर विश्वास होने के लिए है।

बात कुछ रुक गयी। श्रीरामकृष्ण राम की तारीफ कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – अहा! राम में कितने गुण हैं। कितने भक्तों की सेवा और उनका पालन-पोषण करता है। (राम से) अधर कहता था, तुमने उसकी बड़ी खातिरदारी की – क्यों, ठीक है न?

अधर शोभाबाजार में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के परमभक्त हैं। उनके यहाँ चण्डी के गीत हुए थे। श्रीरामकृष्ण और भक्तों में से कितने ही वहाँ गये थे। परन्तु अधर राम को

न्योता देना भूल गये थे। राम बड़े अभिमानी हैं – उन्होंने लोगों से उसके लिए दु:ख प्रकट किया था। इसीलिए अधर राम के घर गये थे। उनसे भूल हुई थी, इसके लिए दु:ख प्रकट करने गये थे।

राम – वह अधर का दोष नहीं है। न्योता देने का भार राखाल पर था।

श्रीरामकृष्ण – राखाल का दोष लेना ही नहीं चाहिए। गला दबाओ तो अब भी दूध निकल आये।

राम – महाराज, कहते क्या हैं, चण्डी के गीत हुए –?

श्रीरामकृष्ण – अधर यह नहीं जानता था। देखो न, उस दिन यदु मल्लिक के यहाँ मेरे साथ गया था। मैंने लौटते समय पूछा, तुमने सिंहवाहिनी को प्रणामी दी? उसने कहा, महाराज, मैं नहीं जानता था कि प्रणामी देनी पड़ती है।

"अच्छा, अगर न भी कहा हो, तो राम-नाम में दोष क्या है? जहाँ राम-नाम होता हो वहाँ बिना बुलाये भी जाया जाता है। न्योते की आवश्यकता नहीं होती।"

□□□

परिच्छेद ८०

आत्मदर्शन के उपाय

(१)

फलहारिणी पूजा तथा विद्यासुन्दर कृत नाटक का अभिनय

श्रीरामकृष्ण उसी पूर्वपरिचित कमरे में बैठे है दिन के ११ बजे का समय हुआ। राखाल, मास्टर आदि भक्तगण उसी कमरे में उपस्थित हैं। गत रात्रि में फलहारिणी काली की पूजा हो गयी। उस उत्सव के उपलक्ष्य में सभा-मण्डप में रात्रि के तीसरे पहर से नाटक का अभिनय शुरू हुआ है – विद्यासुन्दर कृत नाटक।

श्रीरामकृष्ण ने प्रात:काल काली माता के दर्शन को जाते समय थोड़ा अभिनय भी देखा है। नाटकवाले लोग स्नान आदि कर चुकने के बाद श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आये हैं।

शनिवार, २४ मई १८८४ ई., अमावस्या।

गोरे रंग का जो लड़का 'विद्या' बना था उसने अच्छा अभिनय किया था। श्रीरामकृष्ण आनन्द से उसके साथ ईश्वर सम्बन्धी अनेक बातें कर रहे हैं। भक्तगण उत्सुक होकर सब सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (विद्या के अभिनेता के प्रति) – तुम्हारा अभिनय बहुत अच्छा हुआ। यदि कोई गाने में, बजाने में, नाचने में या किसी भी एक विद्या में प्रवीण हो, तो वह चेष्टा करने पर शीघ्र ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।

'मृत्यु की याद करो।' 'अभ्यासयोग'

"और तुम लोग जिस प्रकार देर तक अभ्यास करके गाना, बजाना या नाचना सीखते हो, उसी प्रकार ईश्वर में मन लगाने का अभ्यास करना होता है। पूजा, जप, ध्यान, इन सब का नियमित रूप से अभ्यास करना पड़ता है।

"क्या तुम्हारा विवाह हो गया है? कोई बाल-बच्चे हैं?"

विद्या – जी, एक लड़की का देहान्त हो गया है, फिर एक सन्तान हुई है।

श्रीरामकृष्ण – इसी बीच में हुआ और मर भी गया। तुम्हारी यह कम उम्र! कहते

हैं – 'सन्ध्या के समय पति मरा, कितनी रात तक रोऊँगी!' (सभी हँस पड़े।)

"संसार में सुख तो देख रहे हो? मानो आमड़ाफल, केवल गुठली और छिलका है। और फिर खाने से अम्लशूल हो जाता है!

"नाटक कम्पनी में नट का काम कर रहे हो, ठीक है, परन्तु बड़ा कष्ट होता है! अभी कम उम्र है इसीलिए गोलगाल चेहरा है। इसके बाद सब बिगड़ जायगा। नट प्राय: उसी प्रकार के होते हैं। मुँह सूखा, पेट मोटा, बाँह पर ताबीज। (सभी हँसे)

मैंने क्यों विद्यासुन्दर का गाना सुना? देखा – ताल, मान, गाना सब अच्छे हैं। बाद में माँ ने दिखा दिया कि नारायण ही इन नटों का रूप धारण कर नाटक कर रहे हैं।"

विद्या – जी, काम और कामना में क्या भेद है?

श्रीरामकृष्ण – काम मानो वृक्ष का मूल है और कामना मानो शाखा-प्रशाखाएँ।

"ये काम, क्रोध, लोभ आदि छः रिपु एकदम तो जायेंगे नहीं, इसीलिए ईश्वर की ओर उनका मुँह फेर देना होगा। यदि कामना करनी हो, लोभ करना हो तो ईश्वर की भक्ति की कामना करनी चाहिए और उन्हें पाने के लिए लोभ करना चाहिए; यदि मद अर्थात् मत्तता करनी है, अहंकार करना है, तो 'मैं ईश्वर का दास हूँ, ईश्वर की सन्तान हूँ', यह कहकर मत्तता, अहंकार करना चाहिए। सम्पूर्ण मन उन्हें दिये बिना उनका दर्शन नहीं होता।

"कामिनी और कांचन में मन का व्यर्थ में व्यय होता है। यह देखो न, बाल-बच्चे हुए हैं, नाटक में काम करना पड़ रहा है – इन सब अनेक कर्मों के कारण ईश्वर में मन का योग नहीं हो पाता।

"भोग रहने से ही योग घट जाता है। भोग रहने से ही कष्ट होता है। श्रीमद्भागवत में कहा है – अवधूत ने अपने चौबीस गुरुओं में चील को भी एक गुरु बनाया था। चील के मुँह में मछली थी, इसीलिए हजार कौओं ने उसे घेर लिया। मछली को मुँह में लेकर वह जिधर जाती थी उधर ही सब कौए काँव काँव करके उसके पीछे भागते थे। पर जब चील के मुँह से अपने आप मछली गिर गयी, तो सब कौए मछली की ओर दौड़े, चील की ओर फिर न गये।

"मछली अर्थात् भोग की चीज। कौए हैं चिन्ताएँ। जहाँ भोग है वहीं चिन्ता है। भोगों का त्याग होने से ही शान्ति होती है।

"फिर देखो, अर्थ ही अनर्थ हो जाता है। तुम भाई भाई अच्छे हो, परन्तु भाई भाई में बटवारे के प्रश्न पर झगड़ा होता है। कुत्ते आपस में एक दूसरे को चाटते हैं, खूब प्रेम भाव रहता है। परन्तु उन्हें यदि कोई भात, रोटी आदि कुछ फेंक दे, तो आपस में वे एक दूसरे को काटने लगेंगे।

"बीच-बीच में यहाँ पर आते जाना। (मास्टर आदि को दिखाकर) ये लोग आते हैं,

रविवार या किसी दूसरे अवकाश के दिन आते है।''

विद्या – हमारा रविवार तीन मास का होता है। श्रावण, भाद्रपद और पौष – वर्षाकाल और धान काटने का समय। जी, आपके पास आये, यह तो हमारा अहोभाग्य है!

''दक्षिणेश्वर मे आते समय दो व्यक्तियो का नाम सुना था – आपका और ज्ञानार्णव का।''

श्रीरामकृष्ण – भाइयो के साथ मेल रखकर रहना। मेल रहने से ही देखने सुनने मे सब भला होता है। नाटक मे नही देखा? चार व्यक्ति गाना गा रहे है, परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति अलग अलग तान छेड़ दे तो नाटक पर ही पानी फिर जायगा!

विद्या – जाल मे अनेक पक्षी फँसे पड़े है। यदि एक साथ चेष्टा करके जाल लेकर एक ही दिशा मे उड़ जायँ तो बहुत कुछ बचाव हो सकता है। परन्तु यदि प्रत्येक पक्षी अलग अलग दिशा मे उड़ने की चेष्टा करे, तो कुछ नही होना। नाटक मे भी देखने मे आता है, सिर पर घड़ा, और नाच रहा है।

श्रीरामकृष्ण – गृहस्थी करो, परन्तु सिर पर घड़े को ठीक रखो अर्थात् ईश्वर की ओर मन को स्थिर रखो।

''मैने पल्टन के सिपाहियो से कहा था, तुम लोग संसार का कामकाज करोगे, परन्तु कालरूपी (मृत्युरूपी) मूसल हाथ पर पड़ेगा, इसका ख्याल रखना।

''उस देश मे बढ़ई लोगो की औरते ओखली मे चिउड़ा कूटती है। एक औरत मूसल को उठाती और गिराती है, और दूसरी चिउड़ा उलट देती है – यह ध्यान रखती है कि कही मूसला हाथ पर न पड़ जाय। इधर बच्चे को स्तन-पान भी कराती है और एक हाथ से भीगे धान को चूल्हे पर रखकर पतीले मे भून लेती है। फिर ग्राहक के साथ बातचीत भी करती है, कहती है, तुम्हारे ऊपर इतने पैसे पहले के उधार है, दे जाना।

''ईश्वर मे मन रखकर इसी प्रकार संसार मे अनेकानेक कामकाज कर सकते हो, परन्तु अभ्यास चाहिए और होशियार रहना चाहिए, तब दोनो ओर की रक्षा होती है।''

आत्मदर्शन या ईश्वरदर्शन का उपाय-साधुसंग या विज्ञान (साइन्स)?

विद्या – जी, इसका क्या प्रमाण है कि आत्मा शरीर से पृथक् है?

श्रीरामकृष्ण – प्रमाण? ईश्वर को देखा जा सकता है। तपस्या करने पर उनकी कृपा से ईश्वर का दर्शन होता है। ऋषियो ने आत्मा का साक्षात्कार किया था। साइन्स से ईश्वरतत्त्व जाना नही जाता, उसके द्वारा केवल इन इन्द्रियग्राह्य बातो का पता लगता है कि इसके साथ उसे मिलाने पर यह होता है और उसके साथ इसे मिलाने पर यह होता है,

इसीलिए इस बुद्धि के द्वारा यह सब समझा नही जाता। साधुसंग करना होता है। वैद्य के साथ रहते रहते नाड़ी परखना आ जाता है।

विद्या – जी, अब समझा।

श्रीरामकृष्ण – तपस्या चाहिए, तब वस्तु की प्राप्ति होगी। शास्त्र के श्लोको को रट लेने से भी कुछ न होगा। 'गांजा गांजा' मुँह से कहने से नशा नही होता। गांजा पीना पड़ता है।

"ईश्वर-दर्शन की बात लोगो को समझायी नही जा सकती। पॉच वर्ष के बालक को पति-पत्नी के मिलने के आनन्द की बात समझायी नहीं जा सकती।"

विद्या – जी, आत्मदर्शन किस उपाय से हो सकता है?

इसी समय राखाल कमरे मे भोजन करने बैठ रहे थे। परन्तु वहॉ अनेक लोग है, इसलिए सोच-विचार कर रहे है। श्रीरामकृष्ण आजकल राखाल का गोपाल-भाव से पालन कर रहे है। – ठीक मानो मां यशोदा का वात्सल्य-भाव।

श्रीरामकृष्ण (राखाल के प्रति) – खा न रे! ये लोग नही तो उठकर एक ओर खडे हो जायँ। (एक भक्त के प्रति) राखाल के लिए बर्फ रखो। (राखाल के प्रति) तू फिर बन-हुगली जायगा? धूप मे न जाना।

राखाल भोजन करने बैठे। श्रीरामकृष्ण फिर वि [illegible] करनेवाले लड़के के साथ वार्तालाप कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (विद्या के प्रति) – तुम सब ने [illegible] प्रसाद क्यो नही लिया? यही पर भोजन करते।

विद्या – जी, सभी की राय तो एक-सी नही है, इसीलिए अलग रसोई बन रही है। सभी लोग अतिथिशाला मे भोजन करना नही चाहते।

राखाल भोजन करने बैठे है, श्रीरामकृष्ण भक्तो के साथ बरामदे मे बैठकर फिर बातचीत कर रहे है।

(२)

आत्मदर्शन का उपाय

श्रीरामकृष्ण – (विद्या अभिनेता के प्रति) – आत्मदर्शन का उपाय है व्याकुलता। [illegible]चन और कर्म से उन्हे पाने की चेष्टा। जब देह मे काफी पित्त जम जाता है, तो सभी [illegible]ली दिखती है, पीले के अतिरिक्त दूसरा कोई रंग नही दिखता।

[illegible] नाटकवालो मे जो लोग केवल औरतो का काम करते है, उनका प्रकृतिभाव [illegible]रतो का चिन्तन करके औरतो की तरह चलना-फिरना, सभी कुछ उनके [illegible]ा है। इसी प्रकार रात-दिन ईश्वर का चिन्तन करने पर उन्ही का स्वभाव प्राप्त

हो जाता है।

"मन को जिस रंग मे रँगवाओगे उसका वही रंग हो जाता है। मन मानो धोबी के घर का धुला हुआ कपड़ा है।"

विद्या – तो इसे एक बार पहले धोबी के घर भेजना होगा।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, पहले चित्तशुद्धि, उसके बाद मन को यदि ईश्वर-चिन्तन मे छोड़ दो, तो उसी रंग का बन जायगा। फिर यदि संसार करो, नाटकवाले का काम करो या जो कुछ भी करो, उसी प्रकार का बन जायगा।

(३)

श्रीरामकृष्ण ने थोड़ा सा ही विश्राम किया था कि कलकत्ते से हरि, नारायण, नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय आदि ने आकर भूमिष्ठ हो उन्हे प्रणाम किया। नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय प्रेसीडेन्सी कॉलेज के संस्कृत अध्यापक राजकृष्ण बन्द्योपाध्याय के पुत्र है। घर मे मेल न होने के कारण श्यामपुकुर मे अलग मकान लेकर स्त्री-पुत्र के साथ रहते हैं। बहुत ही सरलचित्त व्यक्ति है, २९-३० साल की उम्र होगी। जीवन के शेष भाग मे उन्होने प्रयाग मे निवास किया था। ५८ वर्ष मे उनका देहान्त हुआ था।

[illegible] के समय वे घण्टा-ध्वनि आदि नाना प्रकार के शब्द सुनते थे। भूटान, उत्तर [illegible] अन्य अनेक प्रदेशो मे उन्होने भ्रमण किया था, बीच-बीच मे श्रीरामकृष्ण का [illegible] करने आते थे।

हरि (स्वामी तुरीयानन्द) उन दिनो अपने बागबाजार के मकान मे भाइयो के साथ रहते थे। जनरल असेम्बली मे प्रवेशिका (मैट्रिक) तक पढ़कर उस समय घर पर ईश्वर-चिन्तन, शास्त्र-पाठ तथा योग का अभ्यास किया करते थे। कभी कभी दक्षिणेश्वर मे जाकर श्रीरामकृष्ण का दर्शन करते थे। श्रीरामकृष्ण बागबाजार मे बलराम के घर जाने पर उन्हे कभी कभी बुला लेते थे।

बौद्धधर्म की बात; ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो के प्रति) – बुद्धदेव की बात हमने अनेक बार सुनी है। वे दस अवतारो मे से एक है। ब्रह्म अचल, अटल है, निष्क्रिय है और ज्ञानस्वरूप है। जब बुद्धि उस ज्ञानस्वरूप मे लीन हो जाती है, उस समय ब्रह्मज्ञान होता है, उस समय मनुष्य बुद्ध बन जाता है।

"न्यांगटा (तोतापुरी) कहा करता था, मन का लय बुद्धि मे, और बुद्धि का लय ज्ञानस्वरूप मे हो जाता है।

"जब तक 'अहं' भाव रहता है, तब तक ब्रह्मज्ञान नही होता। ब्रह्मज्ञान होने पर, ईश्वर का दर्शन होने पर 'अहं' अपने वश मे आ जाता है। ऐसा न होने पर 'अहं' को

वशीभूत नहीं किया जा सकता। अपनी परछाई को पकड़ना कठिन है परन्तु सूर्य जब सिर पर आ जाता है तो परछाई आधे हाथ के भीतर रहती है।''

भक्त – ईश्वर-दर्शन का स्वरूप कैसा है?

श्रीरामकृष्ण – नाटक का अभिनय नहीं देखा है? लोग सब आपस में बातचीत कर रहे हैं; ऐसे समय परदा उठ गया तब सब लोगों का सारा मन अभिनय में लग जाता है। फिर बाहर की ओर दृष्टि नहीं रहती। इसी का नाम है समाधिस्थ होना।

''फिर परदा गिरने पर पुन: बाहर की ओर दृष्टि। मायारूपी परदा गिरने पर फिर मनुष्य बहिर्मुख हो जाता है। (नरेन्द्र बन्द्योपाध्याय के प्रति) तुमने अनेक देशों में भ्रमण किया है। कुछ साधुओं की कहानी सुनाओ।''

बन्द्योपाध्याय ने भूटान में दो योगियों को देखा था, वे आधा सेर नीम का रस पी जाते थे, ये ही सब कहानियाँ कह रहे हैं। फिर नर्मदा के तट पर साधु के आश्रम में गये थे। उस आश्रम के साधु ने पैण्ट पहने बंगाली बाबू को देखकर कहा था, 'इसके पेट में छुरी है।'

श्रीरामकृष्ण – देखो, साधुओं के चित्र घर मे रखने चाहिए, इससे सदा ईश्वर का उद्दीपन होता है।

बन्द्योपाध्याय – मैंने आपका चित्र कमरे में रखा है और साथ ही एक पहाड़ी साधु का चित्र भी रखा है – हाथ में गांजा की चिलम में आग जल रही है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, साधुओं का चित्र देखने से उद्दीपन होता है। जैसे मिट्टी का बना हुआ आम देखने से वास्तविक आम का उद्दीपन होता है, युवती स्त्री देखने से लोगों के मन में जिस प्रकार भोग का उद्दीपन होता है।

''इसीलिए तुम लोगों से कहता हूँ कि सदैव ही साधु-संग आवश्यक है। (बन्द्योपाध्याय के प्रति) संसार की ज्वाला तो देखी है। भोग लेने में ही ज्वाला है। चील के मुँह में जब तक मछली थी, तब तक झुण्ड के झुण्ड कौए आकर उसे तंग कर रहे थे।

''साधु-संगति में शान्ति होती है। जल के भीतर मगर बहुत देर तक रहता है, साँस लेने के लिए एक एक बार जल के ऊपर चला आता है। उस समय साँस लेकर शान्त हो जाता है।''

नाटकवाला – जी आपने भोग की बातें कहीं सो ठीक है। ईश्वर से भोग माँगने पर अन्त में विपत्ति होती है। मन में कितने प्रकार की कामनाएँ उठ रही हैं, सभी कामनाओं से तो मंगल नहीं होता। ईश्वर कल्पतरु हैं। मनुष्य उनसे जो भी कुछ माँगता है, वही उसे प्राप्त होता है। अब उसके मन में यदि ऐसी भावना हो कि 'ये तो कल्पतरु हैं अच्छा, देखें, यदि शेर यहाँ पर आ जाय तो जानें।' बस शेर की याद करते ही शेर आ खड़ा होता है और उसे खा जाता है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ध्यान में रखना कि शेर आता है। अधिक और क्या कहूँ, इधर मन रखो, ईश्वर को न भूलो – सरल भाव से उन्हें पुकारने पर वे दर्शन देंगे।

"एक और बात – नाटक के अन्त में कुछ हरिनाम करके समाप्त किया करो। इससे जो लोग गाते है और जो लोग सुनते है वे सभी ईश्वर का चिन्तन करते करते अपने अपने स्थानों मे जायेंगे।"

नाटकवाले प्रणाम करके बिदा हुए।

गृही भक्तों की स्त्रियों को उपदेश

दो भक्तों की स्त्रियों ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। वे श्रीरामकृष्ण का दर्शन करने आयी हैं, इसलिए उपवास किये हुई हैं। दोनों ही घूँघटवाली, दो भाइयों की पत्नियाँ है। उम्र यही २२-२३ वर्ष के भीतर ही होगी। दोनों ही पुत्रों की माताएँ हैं।

श्रीरामकृष्ण – (स्त्रियों के प्रति) – देखो, तुम शिवपूजा किया करो। कैसे पूजा करनी होती है, 'नित्यकर्म' नाम की पुस्तक है, उसे पढ़कर देख लेना। देवपूजा करने से बहुत देर तक देवता का काम कर सकोगी। फूल चुनना, चन्दन घिसना, देवता के बर्तनो को मलना, देवता के लिए जलपान की सामग्री को सजाना – ये सब काम करने से उधर ही मन लगा रहेगा। नीच बुद्धि, हिसा, क्रोध ये सब भाग जायेगे। तुम दोनों – देवरानी जेठानी जब आपस में बातचीत किया करो, तो देवताओं की ही बातें किया करो।

"किसी प्रकार से ईश्वर में मन को लगा देना। एक बार भी उनकी विस्मृति न हो। जैसे तेल की धार – उसके बीच कुछ और नही है। एक ईट या पत्थर को भी यदि ईश्वर मानकर भक्ति के साथ उसकी पूजा करो, तो उससे भी उनकी कृपा से ईश्वर-दर्शन हो सकता है।

"पहले जो कहा, शिवपूजा – यह सब पूजा करनी चाहिए। उसके बाद मन पक्का हो जाने पर अधिक दिन पूजा नही करनी पड़ती। उस समय सदा ही मन का योग बना रहता है – सदा ही स्मरण-मनन होता रहता है।"

बड़ी बहू – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – हमें क्या कृपा कर कुछ मन्त्र दे देंगे?

श्रीरामकृष्ण – (स्नेह के साथ) – मैं तो मन्त्र नहीं देता? मन्त्र देने से शिष्य का पाप-ताप लेना पड़ता है। माँ ने मुझे बच्चे की स्थिति में रखा है। अब तुम्हें जो शिवपूजा के लिए कह दिया है वही करो। बीच-बीच में आती रहना, बाद में ईश्वर की इच्छा से जो होने का है, होगा। स्नान-यात्रा के दिन फिर आने की चेष्टा करना।

"घर पर हरिनाम करने के लिए मैने जो कहा था, क्या वह हो रहा है?"

बहू – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग उपवास करके क्यों आयी हो? खाकर आना चाहिए।

"स्त्रियाँ मेरी माँ का एक-एक रूप हैं न; इसीलिए मैं उनका कष्ट नहीं देख सकता। जगन्माता का एक-एक रूप। खाकर आओगी, आनन्द में रहोगी।"

यह कहकर श्री रामलाल को आदेश दिया कि वह उन बहुओं को जलपान कराये। फलहारिणी पूजा का प्रसाद – लूची, तरहतरह के फल, ग्लास ग्लास भर शरबत और मिठाई आदि उन्होंने ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण ने कहा, "तुम लोगों ने कुछ खा लिया तो अब मेरा मन शान्त हुआ। मैं स्त्रियों को उपवासी नहीं देख सकता।"

श्रीरामकृष्ण शिवमन्दिर की सीढ़ी पर बैठे है। दिन के पाँच बजे का समय होगा। पास ही अधर, डाक्टर, निताई, मास्टर आदि दो-एक भक्त बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों के प्रति) – देखो, मेरा स्वभाव बदलता जा रहा है।

अब कुछ गुह्य बातें कहने के उद्देश्य से एक सीढ़ी नीचे उतरकर भक्तों के पास जा बैठे।

मनुष्य में ईश्वर का सब से अधिक प्रकाश: अवतारतत्त्व

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग भक्त हो, तुमसे कहने में हानि नहीं – आजकल मुझे ईश्वर के चिन्मय रूप का दर्शन नहीं होता। साकार नर-रूप में उनका दर्शन करता हूँ। ईश्वर के रूप का दर्शन, स्पर्श तथा आलिंगन करना मेरा स्वभाव है। अब ईश्वर मुझसे कह रहे हैं, 'तुमने देह धारण की है, साकार नर-रूपों के साथ आनन्द करो।'

"वे तो सभी भूतों में विद्यमान हैं, परन्तु मनुष्य में अधिक प्रकट हैं।

"मनुष्य क्या कम है जी! ईश्वर का चिन्तन कर सकता है, अनन्त का चिन्तन कर सकता है; दूसरा कोई प्राणी ऐसा नहीं कर सकता।

"दूसरे प्राणियों में, वृक्षलताओं में तथा सर्व भूतों में वे हैं, परन्तु मनुष्य में उनका अधिक प्रकाश है।

"अग्नि-तत्त्व सर्व भूतों में है, सब चीजों में है, परन्तु लकड़ी में अधिक प्रकट है।

"राम ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, देखो हाथी इतना बड़ा जानवर है, परन्तु ईश्वर का चिन्तन नहीं कर सकता।'

"फिर अवतार में अधिक प्रकट हैं। राम ने लक्ष्मण से कहा था, 'भाई, जिस मनुष्य में रागा-भक्ति देखो – भाव में हँसता है, रोता है, नाचता है – वहीं पर मैं हूँ।' "

श्रीरामकृष्ण चुपचाप बैठे हैं। थोड़ी देर बाद फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, केशव सेन बहुत आता था। यहाँ पर आकर तो वह बहुत बदल गया। हाल में तो उसमें बहुत कुछ विशेषता आ गयी थी। यहाँ दलबल के साथ कई बार आया था। फिर अकेले आने की इच्छा थी। केशव का पहले वैसा साधुसंग नहीं हुआ

था।

"कोलूटोला के मकान पर भेंट हुई। हृदय साथ था। केशव सेन जिस कमरे में था, उसी कमरे में हमें बैठाया। मेज पर शायद कुछ लिख रहा था, बहुत देर बाद कलम छोड़कर कुर्सी से नीचे उतरकर बैठा। हमें नमस्कार आदि कुछ नहीं किया।

"यहाँ पर कभी आता था। मैंने एक दिन भावविभोर स्थिति में कहा, 'साधु के सामने पैर पर पैर रखकर नहीं बैठना चाहिए; उससे रजोगुण की वृद्धि होती है।' वह जब भी आता, मैं स्वयं उसे नमस्कार करता था; तब उसने धीरे धीरे भूमिष्ठ होकर नमस्कार करना सीखा।

"फिर मैंने केशव से कहा, 'तुम लोग हरिनाम किया करो, कलियुग में उनके नाम-गुणों का कीर्तन करना चाहिए।' तब उन लोगों ने खोल-करताल लेकर हरिनाम करना प्रारम्भ किया।*

"हरिनाम में मेरा और भी विश्वास क्यों हुआ? इसी देवमन्दिर में बीच बीच में सन्त लोग आया करते हैं। एक मुलतान का साधु आया था, गंगासागर के यात्रियों के लिए प्रतीक्षा कर रहा था। (मास्टर को दिखाकर) इन्ही की उम्र का होगा वह साधु। उसीने कहा था, उपाय नारदीय भक्ति।

"केशव एक दिन आया था। रात के दस बजे तक रहा। प्रताप तथा अन्य किसी किसी ने कहा, 'आज यही रहेगे।' हम सब लोग वटवृक्ष के नीचे (पंचवटी में) बैठे थे। केशव ने कहा, 'नहीं, काम है, जाना होगा।'

"उस समय मैंने हँसकर कहा, मछली की टोकरी की गन्ध न होने पर क्या नीद नही आयेगी? एक मछली बेचनेवाली एक माली के घर अतिथि बनी थी। मछली बेचकर आ रही थी, साथ में मछली की टोकरी थी। उसे फूलवाले कमरे में सोने को दिया गया। फूलों की गन्ध से उसे अधिक रात तक नींद नही आयी। घरवाली ने उसकी यह दशा देखकर कहा, 'क्यों तुम छटपटा क्यों रही हो?' उसने कहा, 'कौन जाने भाई! शायद इस फूल की गन्ध से ही नींद नहीं आ रही है। मेरी मछली की टोकरी जरा ला दो तो सम्भव है नींद आ जाय।' अन्त में मछली की टोकरी लायी। उस पर जल छिड़ककर उसने नाक के पास रख ली। फिर खर्राटे के साथ सो गयी!

"कहानी सुनकर केशव के दलवाले जोर से हँसने लगे।

"केशव ने सायंकाल के बाद गंगाघाट में उपासना की। उपासना के बाद मैंने केशव

* श्री केशव सेन खोल-करताल लेकर कुछ वर्षो से ब्रह्मनाम कर रहे थे। श्रीरामकृष्ण के साथ १८७५ में साक्षात्कार होने के बाद से विशेष रूप से हरिनाम तथा माँ के नाम का 'खोल-करताल' लेकर कीर्तन करने लगे।

से कहा, 'देखो, भगवान ही एक रूप में भागवत बने हैं, इसीलिए वेद, पुराण, तन्त्र इन सब की पूजा करनी चाहिए। फिर एक रूप में वे भक्त बने हैं; भक्त का हृदय उनका बैठकघर है। बैठकघर में जाने से अनायास ही बाबू का दर्शन होता है। इसीलिए भक्त की पूजा से भगवान की पूजा होती है।'

"केशव तथा उनके दलवालों ने इन बातों को बड़े ही ध्यान से सुना। पूर्णिमा की रात, चारों ओर चाँदनी फैली हुई थी। गंगातट पर सीढ़ी के ऊपर हम सब लोग बैठे हुए थे। मैंने कहा, सभी लोग कहो, 'भागवत भक्त भगवान।'

"उस समय सभी ने एक स्वर से कहा, 'भागवत भक्त भगवान।' फिर मैंने कहा, 'कहो ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म है।' उन्होंने फिर एक स्वर से कहा, 'ब्रह्म ही शक्ति, शक्ति ही ब्रह्म है।' मैंने उनसे कहा, 'जिसे तुम ब्रह्म कहते हो, उसी को मैं माँ कहता हूँ। माँ बहुत मीठा नाम है।'

"जब फिर उनसे कहा, 'फिर कहो, गुरु कृष्ण वैष्णव।' उस समय केशव बोला, 'महाराज, उतनी दूर नहीं। इससे तो सभी लोग हमें कट्टर वैष्णव समझेंगे।'

"केशव से बीच बीच में कहता था, जिसे तुम लोग ब्रह्म कहते हो, उसी को मैं शक्ति, आद्याशक्ति कहता हूँ। जिस समय वे वाणी एवं मन से परे, निर्गुण, निष्क्रिय हैं, उस समय वेद में उन्हें ब्रह्म कहा है। जब देखता हूँ कि वे सृष्टि, स्थिति, प्रलय कर रहे हैं, तब उन्हें शक्ति, आद्याशक्ति आदि सब कहता हूँ।

"केशव से कहा, 'गृहस्थी में रहकर साधना होना बड़ा कठिन है – जिस कमरे में अचार, इमली और जल का घड़ा हो उस कमरे में रहकर सन्निपात का रोगी कैसे अच्छा हो सकता है? इसीलिए बीच बीच में साधन-भजन करने के लिए निर्जन स्थान में चले जाना चाहिए। वृक्ष का तना मोटा होने पर उसमें हाथी बाँध दिया जा सकता है, परन्तु पौधों को गाय-बछिया-बकरे चर जाते हैं।' इसीलिए केशव ने व्याख्यान में कहा, 'तुम लोग पक्के बनकर संसार में रहो।'

(भक्तों के प्रति) "देखो, केशव इतना बड़ा पण्डित, अंग्रेजी में लेक्चर देता था, कितने लोग उसे मानते थे, स्वयं सम्राज्ञी विक्टोरिया ने उसके साथ बैठकर बातचीत की है। परन्तु वह जब यहाँ आता था, तो नंगे बदन; साधुओं का दर्शन करना हो तो हाथ में कुछ लाना चाहिए, इसीलिए फल हाथ में लेकर आता था। बिलकुल अभिमानशून्य।

(अधर के प्रति) "देखो तुम इतने बड़े विद्वान, फिर डेपुटी हो, फिर भी स्त्री के ऐसे वश में हो। आगे बढ़ो। चन्दन की लकड़ी के बाद भी और अच्छी अच्छी चीजें हैं; चाँदी की खान, उसके बाद सोने की खान, उनके बाद हीरा, जवाहिरात। लकड़हारा वन में लकड़ी काट रहा था, इसीलिए ब्रह्मचारी ने उससे कहा, 'आगे बढ़ो।' "

शिवमन्दिर से उतरकर श्रीरामकृष्ण आँगन में से होकर अपने कमरे की ओर आ रहे

है। साथ हैं अधर, मास्टर आदि भक्तगण। इसी समय विष्णुघर के सेवक पुजारी श्री राम चैटर्जी ने आकर समाचार दिया – श्री श्रीमाँ की नौकरानी को हैजा हुआ है।

राम चैटर्जी – (श्रीरामकृष्ण के प्रति) – मैंने तो दस बजे ही कहा था, आप लोगों ने नहीं सुना।

श्रीरामकृष्ण – मैं क्या करूँ?

राम चैटर्जी – आप क्या करेंगे? राखाल, रामलाल ये सब थे, उनमें से किसी ने कुछ न किया।

मास्टर – किशोरी (गुप्त) दवा लाने गया है, आलमबाजार से।

श्रीरामकृष्ण -- क्या अकेला ही? कहाँ से लायेगा?

मास्टर – और कोई साथ नही है। आलमबाजार से लायेगा।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर के प्रति) – जो लोग रोगी की देखभाल कर रहे हैं उन्हे समझा दो कि रोग बढ़ने पर क्या करना होगा। और रोग कम होने पर क्या खायेगी यह भी बता दो।

मास्टर – जी, अच्छा।

अब भक्त स्त्रियों ने आकर प्रणाम किया। उन्होने बिदा ली।

श्रीरामकृष्ण उनसे फिर बोले, "शिवपूजा जैसे कहा वैसे किया करो; और खा-पीकर आया करो। नही तो मुझे कष्ट होता है। स्नान-यात्रा के दिन फिर आने की चेष्टा करना।"

अब श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे में आकर बैठे हैं। बन्द्योपाध्याय, हरि, मास्टर आदि पास बैठे है। बन्द्योपाध्याय के सब पारिवारिक कष्ट श्रीरामकृष्ण जानते हैं।

श्रीरामकृष्ण – देखो, 'एक कौपीन' के लिए सन कष्ट हैं। विवाह करके बालबच्चे हुए हैं, इसीलिए नौकरी करनी पड़ती है। साधु कौपीन लेकर परेशान है। संसारी परेशान है भार्या लेकर। फिर घरवालों के साथ बनाव नहीं है, इसीलिए अलग मकान करना पड़ा। (हँसकर) चैतन्यदेव ने नित्यानन्द से कहा था, 'सुनो, सुनो, नित्यानन्दभाई, संसारी जीव की कभी गति नहीं है।'

मास्टर – (मन ही मन) – सम्भव है, श्रीरामकृष्ण अविद्या के संसार की बात कर रहे हैं। सम्भत्र है, अविद्या के संसार में 'संसारी जीव' रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर को दिखाकर बन्द्योपाध्याय के प्रति) – ये सभी अलग मकान लेकर रहते है। एक समय दो मनुष्यों की भेंट हुई। एक ने दूसरे से पूछा, 'तुम कौन हो?' दूसरे ने कहा, 'मैं हूँ विदेशी।' फिर उसने पहले से पूछा, 'और तुम कौन हो?' – 'मैं हूँ विरही।' (सभी हँसे।) दोनों में अच्छा मेल होगा!

"परन्तु शरणागत होने पर फिर भय नही रहता, वे ही रक्षा करेगे।"

हरि – अच्छा, कुछ लोगों को उन्हें प्राप्त करने में उतना विलम्ब क्यों होता है?

श्रीरामकृष्ण – बात क्या है, जानते हो? – भोग और कर्म समाप्त हुए बिना व्याकुलता नहीं आती। वैद्य कहता है, 'दिन बीतने दो, उसके बाद साधारण औषधि से ही लाभ होगा।'

"नारद ने राम से कहा, 'राम! तुम अयोध्या में बैठे हो, रावण का वध कैसे होगा? तुम तो उसी के लिए अवतीर्ण हुए हो।' राम ने कहा, 'नारद! ममय होने दो, रावण का कर्मक्षय होने दो, तब उसके वध की तैयारी होगी।' "

श्रीरामकृष्ण की विज्ञानि स्थिति

हरि – अच्छा, संसार में इतने दु:ख क्यों हैं?

श्रीरामकृष्ण – यह संसार उनकी लीला है, खेल की तरह। इस लीला में सुख-दु:ख, पाप-पुण्य, ज्ञान-अज्ञान, भला-बुरा सब कुछ है; दु:ख, पाप ये सब न रहने से लीला नहीं चलती।

"लुका-लुकौअल खेल में खूँटी छूना पड़ता है। खेल के प्रारम्भ में ही ढाई छूने पर वह सन्तुष्ट नहीं होती। ईश्वर (ढाई) की इच्छा है कि खेल कुछ देर तक चलता रहे। उसके बाद – 'लाखों पतंगों में से दो एक कटते हैं, माँ, तब तुम हँसती हुई हथेली बजाती हो!'

"अर्थात् ईश्वर का दर्शन करके एक-दो व्यक्ति मुक्त हो जाते हैं – बहुत तपस्या के बाद, उनकी कृपा से। तब माँ आनन्द से हथेली बजाती है – 'ओहो! कट गया' यह कहकर।"

हरि – परन्तु इसी खेल में तो हमारे प्राण जो निकलते हैं!

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – तुम कौन हो कहो न! ईश्वर ही सब कुछ बने हुए हैं – माया, जीव, जगत्, चौबीस तत्त्व।

"साँप बनकर काटता हूँ, और ओझा बनकर झाड़-फूक करता हूँ। वे विद्या, अविद्या दोनों ही बने हुए हैं। अविद्या-माया द्वारा अज्ञानी जीव बने हुए हैं, विद्या-माया द्वारा तथा गुरु के रूप में ओझा बनकर झाड़-फूक कर रहे हैं।

"अज्ञान, ज्ञान, विज्ञान। ज्ञानी देखते हैं, वे ही कर्ता हैं। सृष्टि, स्थिति तथा संहार कर रहे हैं। विज्ञानी देखता है कि वे ही यह सब बने हुए हैं।

"महाभाव, प्रेम होने पर देखता है, उनके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

"भाव के सामने भक्ति फीकि है। भाव पकने पर महाभाव, प्रेम!

(बन्द्योपाध्याय के प्रति) "क्या तुम अभी भी ध्यान के समय घण्टे का शब्द सुनते हो?"

बन्द्यो. – रोज उसी शब्द को सुनता हूँ। फिर रूप का दर्शन! एक बार मन द्वारा

अनुभव कर लेने पर क्या वह फिर रुकता है?

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – हा; लकड़ी में एक बार आग लग जाने पर फिर बुझती नही। (भक्तों के प्रति) ये विश्वास की अनेक बातें जानते हैं।

बन्द्यो. – मेरा विश्वास बहुत अधिक है!

श्रीरामकृष्ण – अपने घर की औरतों को बलराम की लड़कियों के साथ लाना।

बन्द्यो. – बलराम कौन हैं?

श्रीरामकृष्ण – बलराम को नहीं जानते? बोसपाड़ा में घर है।

किसी सरलचित्त व्यक्ति को देखकर श्रीरामकृष्ण आनन्द में विभोर हो जाते हैं। बन्द्योपाध्याय बहुत सरल है। निरंजन भी सरल है। इसीलिए उसे भी बहुत चाहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर के प्रति) – तुम्हें निरंजन से मिलने के लिए क्यों कह रहा हूँ? यह देखने के लिए कि वह वास्तव में सरल है या नहीं।

परिच्छेद ८१

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

(१)

जन्मोत्सव दिन। भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण पंचवटी के नीचे पुराने वटवृक्ष के चबूतरे पर विजय, केदार, सुरेन्द्र, भवनाथ, राखाल आदि बहुत से भक्तों के साथ दक्षिण की ओर मुँह किये बैठे हैं। कुछ भक्त चबूतरे पर बैठे हैं। अधिकांश चबूतरे के नीचे, चारों ओर खड़े हुए हैं। दिन के एक बजे का समय होगा। रविवार २५ मई १८८४।

श्रीरामकृष्ण का जन्म-दिन फाल्गुन शुक्ला द्वितीया है। परन्तु उनका हाथ अभी अच्छा नही हुआ, इसलिए अब तक जन्मोत्सव नहीं मनाया गया। अब हाथ बहुत कुछ अच्छा है। इसलिए भक्तगण आनन्द मनाना चाहते हैं। सहचरी का गाना होगा। सहचरी की उम्र ज्यादा हो गयी है, परन्तु कीर्तन करने में उसकी प्रसिद्धि है।

मास्टर श्रीरामकृष्ण को कमरे में न देख पंचवटी की ओर चले आये। देखा, सब के मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। उन्होंने यह नहीं देखा कि श्रीरामकृष्ण भी पेड़ के नीचे चबूतरे पर बैठे हैं। मास्टर खड़े थे – श्रीरामकृष्ण के बिलकुल सामने। उन्होंने व्यग्रतापूर्वक पूछा, वे कहाँ हैं? उनकी यह बात सुनकर सब के सब बड़े जोर से हँस पड़े। एकाएक सामने श्रीरामकृष्ण को देखकर वे लज्जित हो गये, उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। देखा श्रीरामकृष्ण के बाईं ओर केदार (चटर्जी) और विजय (गोस्वामी) चबूतरे पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण दक्षिण की ओर मुँह किये बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य, मास्टर से) – देखो, हमने दोनों को – केदार और विजय को कैसा मिला दिया है!

श्रीवृन्दावन से श्रीरामकृष्ण माधवी-लता ले आये थे। उसे पंचवटी में १८६८ ई. में लगाया था। अब वह लता खूब बड़ी हो गयी है। छोटे-छोटे लड़के उस पर बैठकर झूल रहे हैं, नाच रहे हैं, श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक देखते हुए कह रहे हैं – 'बन्दर के बच्चों का सा भाव है, गिर जाने पर भी नहीं छोड़ते!'

सुरेन्द्र चबूतरे के नीचे खड़े हैं। श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्वक कह रहे हैं – तुम ऊपर चले

आओ, इस तरह पैर भी मजे में झुला सकोगे!

सुरेन्द्र उपर चले गये। भवनाथ कुर्ता पहने हुए बैठे हैं, यह देखकर सुरेन्द्र ने कहा, 'क्यों जी, आप विलायत जा रहे हैं क्या?'

श्रीरामकृष्ण हँसते हुए कहते हैं, हमारा विलायत ईश्वर के पास है।

श्रीरामकृष्ण भक्तों से अनेक विषयो पर बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – मैं कभी कभी धोती-कपड़ा फेंककर आनन्दमय होकर घूमता था। शम्भू ने एक दिन कहा, 'क्यों जी, तुम इसीलिए कपड़े फेंककर घूमते हो! – बड़ा आराम मिलता है! – मैंने एक दिन ऐसा करके देखा था।'

सुरेन्द्र – आफिस से लौटकर कपड़े उतारता हुआ कहता हूँ, माँ, तुमने कितने बन्धनों से जकड़ रखा है।

श्रीरामकृष्ण – अष्टपाशों से बॉध रखा है। लज्जा, घृणा, भय, जाति-अभिमान, संकोच, छिपाने की इच्छा आदि सब।

श्रीरामकृष्ण गाने लगे। पहले गाने का भाव है – 'माँ, मुझे यही खेद है कि तुम्हारे जैसी माता के रहते भी मेरे जागते हुए घर में चोरी हो।' दूसरे गाने का अर्थ है – 'माँ, तुम इस संसार में खूब पतंग उड़ा रही हो। आशा की वायु पर पतंग उड़ रही है, उसमें माया की डोर लगी हुई है।'

श्रीरामकृष्ण – माया की डोर स्त्री-पुत्र हैं। विषय से वह डोर मांजी गयी है, इसीलिए उसमें इतनी तेजी आ गयी है। विषय अर्थात् कामिनी-कांचन।

श्रीरामकृष्ण फिर गाने लगे। गीत का भाव – "संसार में पासा खेलने के लिए आना है। यहाँ आकर मैंने बड़ी-बड़ी आशाएँ की थीं। आशा की आशा भग्न दशा ही है। पहले मेरे हक में पंजा आया। पौबारह! अठारह, सोलह, जिस तरह फिर फिरकर आया करते है, उसी तरह मैं भी युग और युगांतरों में आता गया। कच्चे बारह के पड़ने पर, मॉ, पंजे और छक्के में मुझे बंध जाना पड़ा। छः दो आठ, छः चार दस, माँ, ये कोई मेरे वंश में नहीं हैं। इस खेल में मुझे कोई यश न मिला। अब तो बाजी भी खतम होनी चाहती है।"

श्रीरामकृष्ण – पंजा अर्थात् पञ्चभूत। पंजे और छक्के में बँध जाना, अर्थात् पञ्चभूतों और षड्रिपुओं के वश में आना। छः तीनों नौ को अंगूठा दिखाना, अर्थात् छः रिपुओं के बस में न आना और तीनों गुणों के पार हो जाना।

"सत्त्व, रज और तम, इन तीनों गुणों ने आदमी को अपने वश में कर रखा है। तीनों भाई-भाई हैं। सत्त्व के रहने पर वह रज को बुला सकता है और रज के रहने पर वह तम को बुला सकता है। तीनों गुण चोर हैं। तमोगुण विनाश करता है, रजोगुण बद्ध करता है, सतोगुण बन्धन तो जरूर खोलता है, परन्तु वह ईश्वर के पास तक नहीं ले जा सकता।"

विजय – (सहास्य) – सत् भी चोर है न?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – वह ईश्वर के पास नहीं ले जा सकता, परन्तु रास्ता दिखा देता है।

भवनाथ – वाह! कैसी सुन्दर बात है!

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह बड़ी ऊँची बात है।

भक्तगण ये सब बातें सुनकर आनन्द मना रहे हैं।

(२)

कामिनी-कांचन के सम्बन्ध में उपदेश

श्रीरामकृष्ण – बन्धन का कारण कामिनी-कांचन है। कामिनी-कांचन ही संसार है। कामिनी-कांचन ही हमें ईश्वर को देखने नहीं देता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने अंगौछे से मुख छिपा लिया। फिर कहा, "क्या अब तुम लोग मुझे देख रहे हो? यही आवरण है। यह कामिनी-कांचन का आवरण दूर हुआ नहीं कि चिदानन्द मिले।

"देखो न, जिसने स्त्री का सुख छोड़ा उसने संसार का सुख छोड़ा, ईश्वर उसके बहुत निकट हैं।"

कोई भक्त बैठे, कोई खड़े ये सब बाते सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (केदार, विजय आदि से) – स्त्री का सुख जिसने छोड़ा, उसने संसार का सुख छोड़ा। यह कामिनी-कांचन ही आवरण है। तुम्हारे इतनी बड़ी बड़ी मूछें हैं, तो भी तुम लोग उसी में हो! कहो, मन ही मन विचार करके देखो।

विजय – जी हाँ, यह सच है।

केदार चुप हैं। श्रीरामकृष्ण फिर कहने लगे – "सभी को देखता हूँ, स्त्रियों के वशीभूत हैं। मैं कप्तान के घर गया था। वहाँ से होकर राम के घर जाना था। इसलिए कप्तान से कहा – 'गाड़ी का किराया दे दो।' कप्तान ने अपनी स्त्री से कहा। वह स्त्री भी वैसी ही थी – 'क्या हुआ' 'क्या हुआ' करने लगी! अन्त मे कप्तान ने कहा, 'खैर वे ही लोग (राम आदि) दे देंगे।' गीता-भागवत-वेदान्त सब स्त्री के सामने झुकते हैं।(सब हँसते हैं।)

"रुपया-पैसा और सर्वस्व बीबी के हाथ में! और फिर कहा जाता है – 'मैं दो रुपये भी अपने पास नहीं रख सकता – न जाने मेरा स्वभाव कैसा है।'

"बड़े बाबू के हाथ में बहुत से काम हैं, परन्तु वे किसी को देते नहीं। एक ने कहा गुलाब-जान के पास जाकर सिफारिश कराओ तो काम हो जायगा। गुलाब-जान बड़े बाबू की रखेली है।

"पुरुषों में यह समझ नहीं रह गयी कि देखें कि वे स्त्रियों के कारण कितना उतर

गये हैं।

"किले में जब गाड़ी पर सवार होकर पहुँचा, तब जान पड़ा कि मैं साधारण रास्ते से होकर आया। वहाँ पहुँचने पर देखा तो चार मंजिल नीचे चला गया था। रास्ता ढालू था। जिसे भूत पकड़ता है, वह नहीं समझ सकता है कि उसे भूत लगा है। वह सोचता है, मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

विजय – (सहास्य) – कोई ओझा मिल गया तो वह उतार देता है।

श्रीरामकृष्ण ने इसका विशेष उत्तर नहीं दिया, केवल कहा, वह ईश्वर की इच्छा है। वे फिर स्त्रियों के सम्बन्ध में कहने लगे।

श्रीरामकृष्ण – जिससे पूछता हूँ, वही कहता है, जी हाँ, मेरी स्त्री अच्छी है। किसी की स्त्री खराब नहीं निकली! (सब हँसते हैं।)

"जो लोग कामिनी-कांचन लेकर रहते हैं, वे नशे में कुछ समझ नहीं पाते। जो लोग शतरञ्ज खेलते हैं, वे बहुत समय तक नहीं समझते कि कौनसी चाल ठीक होगी; परन्तु जो लोग अलग से देखते हैं वे बहुत कुछ समझते हैं।

"स्त्री मायारूपिणी है। नारद राम की स्तुति करते हुए कहने लगे – 'हे राम, जितने पुरुष है, सब तुम्हारे ही अंश से हुए हैं और जितनी स्त्रियाँ हैं, वे सब मायारूपिणी सीता के अंश से हुई हैं। मैं और कोई वरदान नहीं चाहता। यही करो जिससे तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो। फिर तुम्हारे मोहिनी-माया में मुग्ध न होऊँ।' "

सुरेन्द्र के छोटे भाई गिरीन्द्र और उनके भतीजे नगेन्द्र आदि आये हुए हैं। नगेन्द्र वकालत के लिए तैयारी कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (गिरीन्द्र आदि से) – तुम लोगों से कहता हूँ, तुम लोग संसार में न फँस जाना। देखो, राखाल को ज्ञान और अज्ञान का बोध हो गया है – सत् असत् का विचार पैदा हो गया है – अब मैं उससे कहता हूँ तू घर जा, कभी कभी यहाँ आना, दो एक रोज रह जाया करना।

"और तुम लोग आपस में मिलकर रहोगे, तभी तुम्हारा कल्याण होगा, और आनन्दपूर्वक रहोगे। नाटकवाले अगर एक स्वर से गाते हैं तो नाटक अच्छा होता है, और जो लोग सुनते हैं, उन्हें भी आनन्द मिलता है।

"ईश्वर पर अधिक मन रखकर और संसार में थोड़ा मन लगाकर संसार का काम करना।

"साधुओं का बारह आने मन ईश्वर पर रहता है, चार आने दूसरे कामों में लगाते हैं। साधु ईश्वर की ही कथा पर अधिक ध्यान रखते हैं। साँप की पूँछ पर पैर रखने से फिर रक्षा नहीं। शायद पूँछ में उसे अधिक चोट लगती है।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जाते समय सींती के गोपाल से छाते के बारे में कह

गये हैं। गोपाल ने मास्टर से कहा, 'वे कह गये हैं, अपना छाता कमरे में रख देना।' पंचवटी में कीर्तन का आयोजन होने लगा। श्रीरामकृष्ण आकर बैठे। सहचरी गा रही है। भक्तगण चारों ओर बैठे हैं, कोई कोई खड़े भी हैं।

कल शनिवार अमावस्या थी। जेठ का महीना है। आज ही से मेघ दिखलायी देने लगे। एकाएक आँधी भी चल पड़ी। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे में चले आये। निश्चय हुआ कि कीर्तन उसी कमरे में होगा।

श्रीरामकृष्ण – (सींती के गोपाल से) – क्यों जी छाता ले आये हो?

गोपाल – जी नहीं, गाना सुनते ही सुनते भूल गया।

छाता पंचवटी में पड़ा हुआ है, गोपाल जल्दी से लेने के लिए चले गये।

श्रीरामकृष्ण – मै इतना लापरवाह तो हूँ, फिर भी इस दरजे को अभी नहीं पहुँचा।

"राखाल ने एक जगह निमन्त्रण की बात पर तेरह तारीख को कह दिया ग्यारह तारीख!

"और गोपाल आखिर गौओं के पाल (समूह) ही तो हैं! (सब हँसते हैं।)

"वही, जो एक सुनारों की कहानी है – एक कहता है 'केशव', दूसरा कहता है 'गोपाल', तीसरा कहता है 'हरि', चौथा कहता है 'हर'! उसमें, उस गोपाल का अर्थ है, गौओं का पाल (समूह)!" (सब हँसते है।)

सुरेन्द्र गोपाल को लक्ष्य करके हँसते हुए कह रहे हैं – 'कान्हा कहाँ हैं?'

(३)

कीर्तन करनेवाली गौरांग के संन्यास का कीर्तन गा रही है। श्रीरामकृष्ण गौरांग-संन्यास का कीर्तन सुनते सुनते खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। उसी समय भक्तों ने उनके गलें में फूलों की माला डाल दी। भवनाथ और राखाल श्रीरामकृष्ण को पकड़े हुए हैं कि कहीं गिर न जायँ। श्रीरामकृष्ण उत्तर की ओर मुँह किये हुए हैं। विजय, केदार, राम, मास्टर, मनमोहन, लाटू आदि भक्तगण मण्डलाकार उन्हें घेरकर खड़े हैं।

कृष्ण ही अखण्ड सच्चिदानन्द हैं वे ही जीव-जगत् हैं

धीरे धीरे समाधि छूट रही है। श्रीरामकृष्ण सच्चिदानन्द श्रीकृष्ण से बातचीत कर रहे हैं। 'कृष्ण' इस नाम का एक एक बार उच्चारण कर रहे हैं। कभी कभी साफ उच्चारण भी नहीं होता। कह रहे हैं – "कृष्ण! कृष्ण! सच्चिदानन्द! – कहाँ हो, आजकल तुम्हारा रूप देखने को नहीं मिलता! अब तुम्हें भीतर भी देख रहा हूँ और बाहर भी। जीव, जगत्, चौबीस तत्त्व सब तुम्हीं हो। मन, बुद्धि सब तुम्हीं हो। गुरु के प्रणाम में है –

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

तुम्ही अखण्ड हो, चराचर को व्याप्त किये हुए भी तुम्ही हो। तुम्हीं आधार हो, तुम्हीं आधेय हो। प्राण-कृष्ण! मन-कृष्ण! बुद्धि-कृष्ण! आत्मा-कृष्ण! प्राण हे गोविन्द! मेरे जीवन हो!"

विजय को भी आवेश हो गया है। श्रीरामकृष्ण कहते है, बाबू क्या तुम भी बेहोश हो गये हो?

विजय - (विनीत भाव से) - जी नही।

कीर्तन करनेवाली ने गाया - 'सदा ही हृदय मे रखती, ऐ प्राण प्यारे!' श्रीरामकृष्ण फिर समाधिमग्न हो गये। - टूटा हाथ भवनाथ के कन्धे पर है।

श्रीरामकृष्ण का मन जब कुछ बहिर्मुख हुआ, तब गानेवाली ने गाया - तुम्हारे लिए जिसने सर्वस्व का त्याग किया, उसे भी इतना दु:ख!

श्रीरामकृष्ण ने गानेवाली को प्रणाम किया। बैठकर गाना सुन रहे है। - कभी कभी भावाविष्ट हो रहे है। गानेवाली ने गाना बन्द कर दिया। श्रीरामकृष्ण बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण - (विजय आदि भक्तो के प्रति) - प्रेम किसे कहते है? ईश्वर पर जिसका प्रेम होता है - जैसे चैतन्यदेव का - वह संसार को तो भूल जायगा ही, किन्तु इतनी प्रिय वस्तु यह जो देह है, वह उसे भी भूल जायगा।

प्रेम के होने पर क्या होता है, इसका हाल श्रीरामकृष्ण एक गीत गाकर बतला रहे है। गीत का भाव है :-

"मेरे वे दिन कब आयेगे जब हरि हरि कहते हुए मेरी ऑखो से धारा बह चलेगी - शरीर पुलकायमान हो उठेगा - संसार की वासना मिट जायेगी - दुर्दिन दूर होगे और सुदिन आयेगे। ईश्वर की ऐसी दया कब होगी?"

श्रीरामकृष्ण खड़े होकर नृत्य कर रहे है। भक्तगण भी उनके साथ नाच रहे है। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर की बॉह पकड़ कर उन्हे मण्डल के भीतर खीच लिया।

नृत्य करते हुए श्रीरामकृष्ण फिर समाधि मे डूब गये। चित्रवत् खड़े रह गये। केदार समाधि भंग करने के लिए अब कह रहे है -

"हृदय-कमल मध्ये निर्विशेषं निरीहं,
हरि-हर-विधि-वेद्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम्।
जनन-मरण-भीति-भ्रंशि सच्चित्स्वरूपं,
सकल-भुवन-बीजं ब्रह्म-चैतन्यमीड़े।।"

क्रमश: श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। उन्होने आसन ग्रहण किया और नाम ले रहे है - ॐ सच्चिदानन्द! गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द! योगमाया! - भागवत भक्त भगवान!

कीर्तन और नृत्य की जगह की धूल श्रीरामकृष्ण ले रहे है।

(४)

संन्यासी का कठिन व्रत। संन्यासी और लोकशिक्षा

श्रीरामकृष्ण गंगा के किनारेवाले गोल बरामदे में बैठे हुए हैं। पास ही विजय, भवनाथ, मास्टर, केदार आदि भक्तगण हैं। श्रीरामकृष्ण एक एक बार कह रहे हैं, हा कृष्ण चैतन्य!

श्रीरामकृष्ण – (विजय आदि भक्तों से) – घर में खूब राम नाम किया गया है, कोई कहता था, इसीसे खूब रंग जमा!

भवनाथ – तिस पर संन्यास की बात!

श्रीरामकृष्ण – अहा! क्या भाव है!

यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने गौरांग पर एक गाना गाया। गीत के समाप्त होने पर आपने विजय आदि भक्तों से कहा – "कीर्तन में बहुत ही अच्छा कहा है! – संन्यासी को नारी की ओर नजर भी उठाकर न देखना चाहिए, संन्यासी का धर्म यही है।"

विजय – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – संन्यासी को देखकर लोग शिक्षा लेंगे न, इसीलिए इतना कठोर नियम है। संन्यासी को स्त्रियों का चित्र भी न देखना चाहिए। उसके लिए ऐसा कठोर नियम है। काला बकरा माता की बलि पर चढ़ाया जाता है, परन्तु जरा भी कहीं घाव हुआ तो फिर उसकी बलि नहीं दी जाती। स्त्रियों का संग तो करना ही नहीं चाहिए। इतना ही नहीं वरन् उनसे बातचीत करना भी संन्यासी के लिए निषिद्ध है।

विजय – छोटे हरिदास ने एक भक्त स्त्री के साथ बातचीत की थी, चैतन्यदेव ने हरिदास का त्याग कर दिया था।

श्रीरामकृष्ण – संन्यासी के लिए कामिनी-कांचन, जैसे सुन्दरी स्त्री के लिए उसके देह की एक खास बदबू। वह बदबू रही तो सब सौन्दर्य ही वृथा है।

"मारवाड़ी ने मेरे नाम से रुपये लिख देना चाहा – मथुर ने जमीन लिख देना चाहा, परन्तु मैं यह कुछ न ले सका।

"संन्यासी के लिए बड़े कठिन नियम हैं। जब साधु-संन्यासी का भेष किया, तब उसे ठीक ठीक साधुओं और संन्यासियों का काम करना चाहिए। थिएटर में देखा नहीं? जो राजा बनता है, वह राजा की ही तरह रहता है, जो मन्त्री बनता है, वह ठीक उसी तरह के आचरण करता है।

"किसी बहुरुपिये ने त्यागी साधु का स्वाँग दिखाया, बिलकुल साधु बन गया। दर्शकों ने उसे एक तोड़ा रुपया देना चाहा। वह 'उँह' कहकर चला गया। तोड़ा छुआ तक नहीं। परन्तु थोड़ी देर बाद, देह और हाथ-पैर धोकर अपने कपड़े पहनकर वह आया।

कहा, "क्या दे रहे थे अब दीजिये। जब साधु बना था तब रुपये नहीं छू सका, अब चार आने भी मिल जायँ तो न छोड़ें।'

"परन्तु मनुष्य परमहंस की अवस्था में बालक हो जाता है। पाँच वर्ष के बालक को स्त्री-पुरुष का ज्ञान नहीं होता। फिर भी लोक-शिक्षण के लिए परमहंस को सावधान रहना पड़ता है।"

श्रीयुत केशव सेन कामिनी-कांचन के भीतर थे, इसीलिए लोक-शिक्षण में बाधा पड़ी थी। श्रीरामकृष्ण यही बात कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – ये – (केशव) – समझे?

विजय – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – इधर-उधर दोनों की रक्षा के लिए बढ़े, इसीलिए विशेष कुछ न कर सके।

विजय – चैतन्यदेव ने नित्यानन्द से कहा, 'नित्यानन्द, अगर मैं संसार का त्याग न करूंगा, तो लोगों का कल्याण न होगा। मुझे देखकर सब लोग संसार में रहना ही पसन्द करेंगे। कामिनी-कांचन का त्याग करके श्रीभगवान के पादपद्मों में सम्पूर्ण मन समर्पित कर देने की चेष्टा फिर कोई न करेगा।'

श्रीरामकृष्ण – चैतन्यदेव ने लोक-शिक्षा के लिए ही संसार का त्याग किया था।

"साधु-संन्यासी को अपने कल्याण के लिए भी कामिनी-कांचन का त्याग करना चाहिए। और निर्लिप्त होने पर भी लोक-शिक्षा के लिए उसे अपने पास कामिनी-कांचन न रखना चाहिए। संन्यासी – जगद्गुरु! उसे देखकर लोगों में चेतना आती है।"

सन्ध्या होने को है। भक्तगण क्रमश: प्रणाम करके बिदा हो रहे हैं। विजय केदार से कह रहे हैं – आज सुबह मैने आपको देखा था (ध्यान में); देह में हाथ लगाना चाहा, पर फिर कही कोई नही!

परिच्छेद ८२

सुरेन्द्र के घर में महोत्सव

(१)

श्रीयुत सुरेन्द्र के बगीचे में

आज श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के बगीचे में आये हैं। रविवार, ज्येष्ठ कृष्ण ६, १५ जून १८८४। श्रीरामकृष्ण आज सुबह नौ बजे से भक्तों के साथ आनन्द मना रहे है।

सुरेन्द्र का बगीचा कलकत्ते के पास काकुड़गाछी गाँव में है। उसके पास ही राम का बगीचा भी है जिसमे करीब छः महीने पहले श्रीरामकृष्ण पधारे थे। आज सुरेन्द्र के बगीचे में महोत्सव है।

सुबह से ही संकीर्तन होने लगा है। कीर्तनिये कृष्ण और गोपियों के सम्बन्ध मे कीर्तन गा रहे हैं। गोपियों का प्रेम, कृष्ण के विरह से राधिका की अवस्था – यही सब गाया जा रहा है। श्रीरामकृष्ण को क्षण क्षण में भावावेश हो रहा है। भक्तगण उद्यानगृह के भीतर चारों ओर कतार बाँधे खड़े हैं।

उद्यानगृह में जो कमरा सब से बड़ा है, उसी में कीर्तन हो रहा है। जमीन पर सफेद चद्दर बिछी हुई है। जगह-जगह पर तकिये भी लगे है। इस कमरे के पूर्व और पश्चिम ओर एक एक कमरा और उत्तर और दक्षिण ओर बरामदे हैं। उद्यानगृह के सामने अर्थात् दक्षिण की ओर एक तालाब है, पक्का घाट भी बँधा हुआ है। गृह और तालाब के बीच से पूर्व-पश्चिम की ओर रास्ता है। रास्ते के दोनों तरफ फूल और क्रोटन आदि के पेड़ लगे हैं। उद्यानगृह के पूर्व तरफ से उत्तर के फाटक तक एक और रास्ता गया है। उसके भी दोनों ओर अनेक प्रकार की फूल-पत्तियों के पेड़ लगे है। फाटक के पास और रास्ते के पूर्व ओर एक और तालाब है – उसमें भी पक्का घाट है। यहाँ गांव के साधारण आदमी नहाया करते है और पीने के लिए पानी भी इसीसे ले जाते हैं। उद्यानगृह के पश्चिम की ओर भी रास्ता है, उसके दक्षिण-पश्चिम मे रन्धनागार है। आज यहाँ खूब धूम है, यहाँ श्रीरामकृष्ण और भक्तों की सेवा होगी। सुरेश और राम प्रत्येक समय सब तरह की देखभाल कर रहे हैं।

उद्यान-गृह के बरामदे में भी भक्तों का समावेश हुआ है। कोई-कोई अकेले कोई

मित्रों के साथ, उपर्युक्त तालाब के किनारे टहल रहे हैं। कोई कोई बँधे घाट पर जाकर थोड़ी देर के लिए विश्राम कर रहे हैं।

संकीर्तन हो रहा है। संकीर्तनवाले कमरे में बहुत से भक्त एकत्र हुए हैं। भवनाथ, निरंजन, राखाल, सुरेन्द्र, राम, मास्टर, महिमाचरण और मणि मल्लिक आदि कितने ही भक्त आये हैं। बहुत से ब्राह्मभक्त भी उपस्थित हैं।

कृष्णलीला गायी जा रही है। कीर्तनिया पहले गौर-चन्द्रिका गा रहा है। गौरांग ने संन्यास धारण किया है – वे कृष्ण के प्रेम में पागल हो गये हैं। उन्हें न देखकर नवद्वीप की भक्तमण्डली विलाप कर रही है। यही गीत कीर्तनिया गा रहा है।

श्रीरामकृष्ण को भावावेश है। एकाएक खड़े होकर बड़े ही करुणापूर्ण स्वरों में एक पद गाने लगे – "सखि! तू मेरे प्राणवल्लभ को मेरे पास ले आ या मुझे ही वहीं छोड आ।" श्रीरामकृष्ण को राधिका का भाव हो गया है। ये बातें कहते ही उनकी जबान रुक गयी। देह निःस्पन्द हो गयी और आँखें अर्धनिमीलित रह गयीं। उनका बाह्य-ज्ञान बिलकुल जाता रहा। वे समाधिमग्न हो गये।

बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण अपनी साधारण दशा में आये। फिर वही करुण-स्वर! कहते है – "सखि! उसके पास ले जाकर तू मुझे खगीद ले, मैं तेरी दासी हो जाऊँगी। कृष्ण का प्रेम मुझे तू ही ने तो सिखाया था। – प्राणवल्लभ!"

कीर्तनियों का गाना होने लगा। श्रीमती कह रही है – 'सखि! मैं यमुना में पानी भरने न जाऊँगी। कदम्ब के नीचे प्रिय सखा को मैने देखा था। उसे देखते ही मै विह्वल हो जाती हूँ।'

श्रीरामकृष्ण को फिर आवेश हो रहा है। दीर्घ श्वास छोड़कर कातर भाव से कह रहे है – 'आहा! आहा!'

कीर्तन हो रहा है। श्रीराधा की उक्ति – (कीर्तन का भाव) –

"संग-सुख की लालसा से मैं उनके शीतल अंग का निरीक्षण किया करती हूँ। माना कि वह तुम लोगों का है, परन्तु मुझे उसके दर्शन भी तो एक बार करा दो। वह भूषणों का आभूषण जब चला गया, तब ये भूषण किस काम के रहे? मेरे सुदिन चले गये हैं, ये दुर्दिन आये हैं। दुर्दशा के दिनों के आते कुछ देर भी न लगी।"

"सखि! मैं डूब मरूँगी, भला कह तो सही, कन्हैया जैसे गुणागार को मैं किसे दे जाऊँ? परन्तु देख, राधा की देह को जला न देना, पानी मे भी उसे प्रवाहित न करना, वह कृष्ण के विलास की देह है, उसे तमाल की डाल पर रखना; क्योंकि कृष्ण भी काले हैं और तमाल की डाल भी काली है!"

श्रीराधा की मूर्छित दशा का वर्णन

"श्रीराधा मूर्छित हो गयीं, ज्ञान जाता रहा, जीवन की संगिनी ने आँखें भी मूँद लीं। कोई सखी उनकी देह में चन्दन लगाती है और कोई दु:ख के आँसू बहा रही है। कोई उसके मुँह पर जल-सिंचन भी करती है।

"उन्हें मूर्छित देख सखियाँ कृष्ण का नाम ले रही हैं। कृष्ण का नाम सुन उन्हें चेतना हो आयी! तमाल देखकर वे सोचती हैं कि कहीं कृष्ण तो सामने आकर नहीं खड़े हो गये।

"सखियों ने सलाह करके मथुरा में कृष्ण के पास एक दूती को भेजा। समवयस्क किसी मथुरानिवासिनी से उसका परिचय हो गया। गोपियों की दूती ने कहा, मुझे बुलाना न होगा, वह आप ही आ जायेंगे। जहाँ पर कृष्ण हैं, वहीं मथुरानिवासिनी के साथ वह दूती जा रही है। वह रास्ते में विकल हो, रोकर कृष्ण को पुकार रही है –

'हे गोपियों के जीवनाधार! तुम कहाँ हो? – प्राणवल्लभ! राधावल्लभ! लज्जानिवारण हरि! एक बार तो दर्शन दे दो। मैंने बड़ा गर्व करके इन लोगों से कहा है कि तुम आप ही मिलोगे।'

गाना – "मधुपुर की नागरी हँसकर कहती है, 'ऐ गोकुल की गोपकुमारी, सातवें द्वार के उस पार राजा रहते हैं, क्या तू वहाँ तक जायगी? और तू जायगी भी कैसे? तेरी हिम्मत देखकर तो मुझे लाज आती है।' उसकी ये बातें सुनकर दूती दु:खित हो कृष्ण को पुकारने लगी – 'हे गोपियों के जीवन! हे नागर! हाय, तुम कहाँ हो? दर्शन दे दासी के प्राणों की रक्षा करो।' "

"हे गोपियों के जीवन! तुम कहाँ हो?" इतना सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। अन्त में कीर्तनिये ऊँचे स्वर से कीर्तन गाने लगे। श्रीरामकृष्ण फिर खड़े हो गये। समाधिमग्न। कुछ होश आने पर अस्पष्ट स्वरों में कह रहे हैं – 'किट्न-किट्न' (कृष्ण-कृष्ण), भाव में भरपूर मग्न हैं। पूरा नाम उच्चारण नहीं कर सकते।

राधा-कृष्ण का मिलनगीत कीर्तनिये गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भी गाते हैं – "राधा खड़ी है, अंग झुकाये हुए, श्याम के बाईं ओर मानो तमाल को घेरकर।"

अब नामकीर्तन होने लगा। खोल-करताल लेकर अब कीर्तनिये एक साथ गाने लगे। भक्तगण पागलसे हो गये। श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। उन्हें घेरकर भक्तगण भी आनन्द से नाच रहे हैं। सब लोग 'जय राधे गोविन्द जय राधे गोविन्द' कह रहे हैं।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने जरा देर के लिए आसन ग्रहण किया। इसी समय निरंजन आये और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर ही खड़े हो गये। आनन्द से श्रीरामकृष्ण की आँखें उज्ज्वल हो गयीं, कहा, "तू आ गया! (मास्टर से) देखो, यह लड़का बड़ा सरल है। सरलता पूर्वजन्मार्जित बहुत बड़ी तपस्या का फल है। कपटाचार, पटवारी बुद्धि, इन सब के रहते ईश्वर-प्राप्ति नहीं होती।

"देखा नही, ईश्वर उसी वंश मे अवतार लेते है जहाँ सरलता पायी जाती है। दशरथ कितने सरल थे! नन्द – श्रीकृष्ण के पिता – कितने सरल थे! अब भी आदमी कहते है, अहा! कैसा सरल है – मानो नन्द घोष हो।

(निरंजन से) "देख, तेरे मुँह पर स्याही आ गयी है, तू आफिस का काम करता है न? इसीलिए आफिस मे हिसाबकिताब करना पडता होगा, और भी कितने ही तरह के काम होगे! सब समय सोचना पड़ता होगा।

"संसारी आदमी जिस तरह नौकरी करते है, तू भी वैसे ही करता है, परन्तु कुछ भेद है। तूने अपनी माँ के लिए नौकरी की है। माँ गुरु है, ब्रह्ममयी की मूर्ति है अगर बीबी और बच्चो के लिए तू नौकरी करता तो मै कहता 'तुझे धिक्कार है, सौ बार धिक्कार है।'

(मणि मल्लिक से) "देखो यह लडका बडा सरल है, परन्तु आजकल कुछ झूठ बोलने लगा है। यही इतना दोष है। उस दिन कह गया, आऊँगा, परन्तु फिर नही आया। (निरंजन से) इसी पर राखाल कहता था, एँडेदाह मे आकर तूने क्यो नहीं भेट की?"

निरंजन – मै एँड़ेदाह मे बस दो दिनो के लिए आया था।

श्रीरामकृष्ण – (निरंजन से) – ये हेडमास्टर है। तुझसे मिलने गये थे। मैने भेजा था। (मास्टर से) क्या उस दिन बाबूराम को मेरे पास तुमने भेजा था?

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले कमरे मे दो-चार भक्तो के साथ बातचीत कर रहे है। उसी कमरे मे कुछ टेबिल और कुर्सियाँ इकट्ठी की हुई रखी थी। श्रीरामकृष्ण टेबिल के सहारे खडे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – अहा! गोपियो का कैसा अनुराग है! तमाल देखकर प्रेम से विह्वल हो गयी – एकदम प्रेमोन्माद! श्रीराधा की विरहाग्नि इतनी प्रचण्ड थी कि आँख के आँसू भी उसके ताप मे सूख जाते थे। पानी बनने से पहले ही वाष्प होकर उड़ जाते थे। कभी कभी दूसरे को उनके भाव का कुछ पता ही नही चलता था। बड़े तालाब मे हाथी के धँसने पर भी दूसरो को पता नही चलता।

मास्टर – जी हाँ। गौरांग का भी यही हाल था। वन देखकर उन्होने उसे वृन्दावन सोचा था और समुद्र देखकर यमुना।

श्रीरामकृष्ण – अहा! उस प्रेम का एक बूँद भी अगर किसी को हो – कैसा अनुराग! कैसा प्यार! सिर्फ सोलह आने अनुराग नही, पाँच चवन्नी और पाँच आने। प्रेमोन्माद इसी का नाम है। बात यह है कि उन्हे प्यार करना चाहिए। तो फिर तुम चाहे जिस मार्ग पर रहो, साकार पर ही विश्वास करो या निराकार पर – ईश्वर मनुष्य के रूप मे अवतार लेते है इस बात पर चाहे विश्वास करो या न करो – उन पर अनुराग रहने से ही काफी है। तब वे खुद समझा देगे कि वे कैसे है।

"अगर पागल ही होना है, तो संसार की चीज लेकर क्यो पागल होते हो? पागल

होना है, तो ईश्वर के लिए पागल बनो।"

(४)

भवनाथ, महिमा आदि भक्तों के साथ हरिकथा-प्रसंग

श्रीरामकृष्ण हॉलवाले कमरे में आये। उनके बैठने के आसन के पास एक तकिया लगा दिया गया। श्रीरामकृष्ण ने बैठते समय 'ॐ तत् सत' इस मन्त्र का उच्चारण करके तकिये को स्पर्श किया। विषयी लोग इस बगीचे में आया-जाया करते हैं और ये सब तकिये वे अपने काम में लाते हैं, इसीलिए शायद श्रीरामकृष्ण ने उस मन्त्र का उच्चारण कर तकिये को शुद्ध कर लिया। भवनाथ, मास्टर आदि उनके पास बैठे हैं। समय बहुत हो गया है, परन्तु भोजन आदि का बन्दोबस्त अभी तक नहीं हुआ। श्रीरामकृष्ण बालकस्वभाव हैं। कहा, 'क्यों जी, अभी तक कुछ देता क्यों नहीं? नरेन्द्र कहाँ हैं?'

एक भक्त – (श्रीरामकृष्ण के प्रति, सहास्य) – महाराज, अध्यक्ष रामबाबू हैं, वे ही सब देखभाल करते हैं। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – राम अध्यक्ष है, तब तो हो चुका!

एक भक्त – जी रामबाबू जहाँ अध्यक्ष होते हैं, वहाँ प्राय: यही हाल हुआ करता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – सुरेन्द्र कहाँ है, अहा, सुरेन्द्र का स्वभाव बहुत ही अच्छा हो गया है। बड़ा स्पष्टवक्ता है, बोलते समय किसी से दबता नहीं। और देखो, मुक्तहस्त भी है। कोई उसके पास सहायता के लिए जाता है, तो उसे खाली हाथ नहीं लौटाता। (मास्टर से) तुम भगवानदास के पास गये थे, उनके बारे में क्या राय है?

मास्टर – जी, मैं कालना गया था। भगवानदास बहुत वृद्ध हो गये हैं, रात में भेंट हुई थी। जाजम पर लेटे हुए थे। एक आदमी प्रसाद ले आया और खिलाने लगा। जोर से बोलने पर सुनते हैं। आपका नाम सुनकर कहने लगे, तुम लोगों को अब क्या चिन्ता है?

"उस घर में नाम-ब्रह्म की पूजा होती है।"

भवनाथ – (मास्टर से) – आप बहुत दिनों से दक्षिणेश्वर नहीं गये। वे दक्षिणेश्वर में मुझसे आपके सम्बन्ध में पूछताछ किया करते थे और कहा था, मास्टर को अरुचि हो गयी क्या?

यह कहकर भवनाथ हँसने लगे। श्रीरामकृष्ण दोनों की बातचीत सुन रहे थे, फिर मास्टर की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखकर बोले, "क्यों जी, बहुत दिन तक तुम वहाँ गये क्यों नहीं?"

मास्टर इसका कुछ जवाब न दे सके। इसी समय महिमाचरण आ पहुँचे।

महिमाचरण काशीपुर में रहते हैं। श्रीरामकृष्ण पर इनकी बड़ी भक्ति है और सर्वदा ये दक्षिणेश्वर आया-जाया करते हैं। ब्राह्मण के लड़के हैं, कुछ पैतृक सम्पत्ति भी है। स्वाधीन रहते हैं, किसी की नौकरी नहीं करते। सारे समय शास्त्राध्ययन और ईश्वरचिन्तन किया करते हैं। कुछ पाण्डित्य भी है, अंग्रेजी और संस्कृत के बहुत से ग्रन्थों का अध्ययन किया है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य, महिमाचरण से) – यह क्या! यहाँ तो जहाज आ गया! (सब हँसते हैं।) इन सब स्थानों में तो डोंगे ही आ सकते हैं, यह तो एकदम जहाज आ गया। (सब हँसे।) परन्तु एक बात है। यह आषाढ़ का महीना है। (सब हँसते हैं।)

महिमाचरण के साथ कितनी ही तरह की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमा के प्रति) – अच्छा, बताओं, लोगों को खिलाना एक तरह से उन्हीं की सेवा नहीं है? – सब जीवों के भीतर वे अग्नि के रूप से विराजमान हैं। खिलाना अर्थात् उनमें आहुति देना।

"परन्तु इसलिए बुरे आदमी को न खिलाना चाहिए – ऐसे आदमी जिन्होंने व्यभिचार आदि महापातक किया हो। घोर विषयासक्त आदमी जहाँ बैठकर भोजन करते हैं, वहाँ सात हाथ तक की मिट्टी अपवित्र हो जाती है।

"हृदय ने सिऊड़ में एक बार कुछ आदमियों को भोजन कराया था। उनमें अधिकांश मनुष्य बुरे थे। मैंने कहा, 'देख हृदय, उन्हें अगर तू खिलायेगा तो मैं तेरे घर एक क्षण भी न ठहरूँगा।' (महिमा से) – अच्छा, मैंने सुना है, पहले लोगों को तुम बहुत खिलाते-पिलाते थे। अब शायद खर्च बढ़ गया है!" (सब हँसते हैं।)

(५)

ब्राह्मभक्तों के संग में। अहंकार। दर्शन का लक्षण

अब पत्तल पड़ रहे हैं – दक्षिणवाले बरामदे में। श्रीरामकृष्ण महिमाचरण से कह रहे हैं, "तुम एक बार जाओ, देखो वे सब क्या कर रहे हैं। और तुमसे मैं कह नहीं सकता, परन्तु जी में आ जाय तो परोस भी देना।" "सामान तो आया जाय, परोसने की बात तो तब है!" – यह कहकर महिमाचरण लम्बे डग से दालान की ओर चले गये, फिर कुछ देर बाद लौटकर आ गये।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक भोजन कर रहे हैं।

भोजन के पश्चात् घर में आकर विश्राम करने लगे। भक्तगण भी दक्षिणवाले तालाब में हाथ-मुँह धोकर पान खाते हुए फिर श्रीरामकृष्ण के पास आ गये। सब ने आसन ग्रहण किया।

दो बजे के बाद प्रताप आये। ये एक ब्राह्मभक्त हैं। आकर श्रीरामकृष्ण को नमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण ने भी सिर झुकाकर नमस्कार किया। प्रताप के साथ बहुतसी बातें हो रही हैं।

प्रताप – मैं दार्जिलिंग गया था।

श्रीरामकृष्ण – परन्तु तुम्हारा शरीर उतना सुधर नहीं पाया। जान पड़ता है, कोई बीमारी हो गयी है।

प्रताप – जी, केशव को जो बीमारी थी, वही मुझे भी है। उन्हें भी यही बीमारी थी।

केशव की दूसरी बातें होने लगीं। प्रताप कहने लगे, केशव का वैराग्य उनके बचपन से ही जाहिर हो रहा था। उन्हें खेलते-कूदते हुए लोगों ने बहुत कम देखा है। हिन्दू कॉलेज में पढ़ते थे। उसी समय सत्येन्द्र के साथ उनकी बड़ी मित्रता हो गयी और उसी कारण श्रीयुत देवेन्द्रनाथ ठाकुर से उनकी मुलाकात हुई। केशव में दोनों बातें थीं, योग भी और भक्ति भी। कभी कभी उनमें भक्ति का इतना उद्रेक होता था कि वे मूर्छित हो जाते थे। गृहस्थों में धर्म लाना उनके जीवन का प्रधान उद्देश्य था।

महाराष्ट्र देश की एक स्त्री के सम्बन्ध में बातचीत होने लगी।

प्रताप – हमारे देश की कुछ महिलाएँ विलायत गयी थीं। महाराष्ट्र देश की एक महिला विलायत गयी थीं। वे खूब पण्डिता हैं; परन्तु ईसाई हो गयी हैं। आपने क्या उनका नाम सुना है?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, परन्तु तुम्हारे मुख से जैसा सुन रहा हूँ, इससे जान पड़ता है, उसे प्रसिद्धि तथा सम्मान-प्राप्ति की इच्छा है। इस तरह का अहंकार अच्छा नहीं। 'मैंने किया' यह अज्ञान से होता है। 'हे ईश्वर तुम्हीं ने ऐसा किया', यही ज्ञान है। ईश्वर ही कर्ता हैं, और सब अकर्ता।

"मैं-मैं करने से कितनी दुर्गति होती है, इसका ज्ञान बछड़े की अवस्था सोचने पर हो जाता है। बछड़ा 'हम्मा हम्मा' (मैं, मैं) किया करता है। उसकी दुर्गति देखो। बड़ा होने पर उसे सुबह से शाम तक हल जोतना पड़ता है – चाहे धूप हो, चाहे वृष्टि। कभी कसाई के हाथ गया कि उसने उसकी बिलकुल ही सफाई कर दी। मांस लोगों के पेट में चला गया और चमड़े के जूते बने। आदमी उन पर पैर रखकर चलता है। इतने पर भी दुर्गति की इति नहीं होती। चमड़े से जंगी ढोल मढ़े गये और लकड़ी से लगातार वह पीटा जाने लगा। अन्त में अँतड़ियों को लेकर ताँत बनायी गयी। जब धुनिये के धनुए में वह लगा दी जाती है और वह रुई धुनता है तब वह 'तू-ऊं – तूं-ऊं' कहने लगता है। तब 'हम्मा-हम्मा' नहीं कहता। जब 'तूं-ऊं–तूं-ऊं' कहता है, तब कहीं निस्तार पाता है। तब मुक्ति होती है। कर्म-क्षेत्र में फिर नहीं आना पड़ता।

"जीव भी जब कहता है, 'हे ईश्वर, मैं कर्ता नहीं हूँ, कर्ता तुम हो – मैं यन्त्र मात्र

हूँ, यन्त्री तुम हो, तब जीव संसार-यन्त्रणाओं से मुक्ति पाता है। तभी उसकी मुक्ति होती है, फिर इस कर्मक्षेत्र में उसे नही आना पड़ता।''

एक भक्त – जीव का अहंकार कैसे दूर हो?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर के दर्शन के बिना अहंकार दूर नही होता। यदि किसी का अहंकार मिट गया हो, तो उसे अवश्य ही ईश्वर के दर्शन हुए होंगे।

भक्त – महाराज, किस तरह समझ में आये कि ईश्वर के दर्शन हो चुके है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर-दर्शन के कुछ लक्षण हैं। श्रीमद्भागवत में कहा है, जिस आदमी को ईश्वर के दर्शन हुए है उसके चार लक्षण है – बालवत्, पिशाचवत्, जड़वत् तथा उन्मत्तवत्।

''जिसे ईश्वर के दर्शन हुए होगे, उसका स्वभाव बालक की तरह का हो जायेगा। वह त्रिगुणातीत हो जाता है। किसी गुण को गाँठ नही बॉधता, शुचि और अशुचि भी उसके पास बराबर है। इसीलिए वह पिशाचवत् है, और पागल की तरह कभी हँसता है, कभी रोता है। देखते ही देखते बाबुओ की तरह सजावट कर लेता है और फिर सब कपड़े बगल में दबाकर बिलकुल नंगा होकर घूमता है, इस तरह वह उन्मत्तवत् हो जाता है। और कभी यही है कि जड़ की तरह कहीं चुपचाप बैठा हुआ है, इसलिए जड़वत्।''

भक्त – ईश्वर-दर्शन के बाद क्या अहंकार बिलकुल चला जाता है?

श्रीरामकृष्ण – कभी कभी वे अहंकार बिलकुल पोंछ डालते हैं, जैसे समाधि की अवस्था में। कभी अहंकार कुछ रख भी देते हैं; परन्तु उस अहंकार में दोष नहीं। जैसे बालक का अहंकार। पॉच वर्ष का बच्चा मैं-मैं करता है, परन्तु किसी का अनिष्ट करना वह नहीं जानता।

''पारस पत्थर के छू जाने पर लोहा भी सोना हो जाता है। लोहे की तलवार सोने की तलवार हो जाती है। परन्तु तलवार का आकार मात्र रह जाता है, वह किसी का अनिष्ट नहीं कर सकती।''

(६)

जीवन का उद्देश्य – कर्म अथवा ईश्वरलाभ?

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – तुम विलायत गये थे, वहाँ क्या क्या देखा?

प्रताप – आप जिसे कांचन कहते हैं, विलायत के आदमी उसी की पूजा करते हैं; परन्तु कोई कोई अच्छे, अनासक्त मनुष्य भी हैं। यों तो आदि से अन्त तक सब रजोगुण की ही महिमा हे। अमेरिका में भी मैंने यही देखा।

श्रीरामकृष्ण -- (प्रताप से) – विषयकार्यों में केवल विलायतवालों को ही आसक्ति नहीं है, सभी जगह यही हाल है। परन्तु, बात यह है कि कर्मकाण्ड को आदिकाण्ड कहा

है। सतोगुण (भक्ति, विवेक, वैराग्य, दया आदि सब) के बिना ईश्वर नहीं मिल सकते। रजोगुण में कर्म का आडम्बर होता है, इसीलिए रजोगुण से तमोगुण आ जाता है। ज्यादा कर्म में फँसने पर ही ईश्वर को मनुष्य भूल जाता है। तब कामिनी-कांचन में भी आसक्ति बढ़ जाती है।

"परन्तु कर्मों का बिलकुल त्याग कोई नहीं कर सकता। तुम्हारी प्रकृति खुद तुमसे कर्म करा लेगी, तुम अपनी मर्जी से करो या न करो। इसीलिए कहा है, अनासक्त होकर कर्म करो, अर्थात् कर्म-फल की आकांक्षा न करो; जैसे, पूजा, जप, तप, यह सब कर रहे हो, परन्तु सम्मान या पुण्य के लिए नहीं।

"इस तरह अनासक्त होकर कर्म करने का ही नाम कर्मयोग है। यह बड़ा कठिन है। एक तो कलिकाल है, सहज ही आसक्ति आ जाती है। सोच रहा हूँ, अनासक्त होकर काम कर रहा हूँ, परन्तु न जाने किधर से आसक्ति आ जाती है, समझ में नहीं आता। कभी पूजा और महोत्सव किया या बहुत से कंगालों को खिलाया, सोचा, अनासक्त होकर मैं यह सब कर रहा हूँ, परन्तु फिर भी न जाने किधर से लोक-सम्मान की इच्छा आ जाती है, पता नहीं। बिलकुल अनासक्त होना उसके लिए सम्भव है जिसे ईश्वर के दर्शन हो चुके हैं।"

एक भक्त – जिन्होंने ईश्वर को प्राप्त नहीं किया, उनके लिए क्या उपाय है? क्या वे विषय-कर्म छोड़ दें?

श्रीरामकृष्ण – कलिकाल के लिए भक्तियोग है, नारदीय भक्ति। ईश्वर का नाम-गुणगान और व्याकुल होकर प्रार्थना करना – 'हे ईश्वर, मुझे ज्ञान दो, भक्ति दो, मुझे दर्शन दो।' कर्मयोग बड़ा कठिन है। इसीलिए प्रार्थना करनी चाहिए, 'हे ईश्वर, मेरे कर्म घटा दो और जितने कर्म तुमने रखे हैं, उन्हें तुम्हारी कृपा से अनासक्त होकर कर सकूँ और अधिक कर्म लपेटने की मेरी इच्छा न हो!'

"कर्म कोई छोड़ नहीं सकता। 'मैं सोच रहा हूँ', 'मैं ध्यान कर रहा हूँ' – ये भी कर्म हैं। भक्ति पा लेने पर विषयकर्म आप ही आप घट जाते हैं। तब वे अच्छे नहीं लगते। मिश्री का शरबत मिल जाय, तो फिर सीरा कौन पीता है?"

एक भक्त – विलायत के आदमी 'कर्म करो – कर्म करो' कहा करते हैं, तो क्या कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – जीवन का उद्देश्य है ईश्वर-लाभ। कर्म तो आदिकाण्ड है, वह जीवन का उद्देश्य नहीं हो सकता। निष्काम कर्म एक उपाय हो सकता है, परन्तु वह भी उद्देश्य नहीं हैं।

"शम्भू कहता था, अब ऐसा आशीर्वाद दीजिये कि जो रुपये हैं, उनका सद्व्यय कर सकूँ। अस्पताल, दवाखाना, रास्ताघाट, कुआँ इनके तैयार करने में लग जाय। मैंने

कहा, यह सब काम अनासक्त होकर कर सको तो अच्छा है, परन्तु है यह बड़ा कठिन। और चाहे जो हो, कम से कम इतना याद रहे कि तुम्हारे मनुष्य-जीवन का उद्देश्य है ईश्वर-लाभ – अस्पताल और दवाखाना बनाना नहीं। सोचो कि ईश्वर तुम्हारे सामने आये, आकर तुमसे कहा, कोई वर माँगो। तो क्या तुम उनसे कहोगे, मेरे लिए कुछ अस्पताल और दवाखाने बनवा दो या यह कहोगे, 'हे भगवन्, तुम्हारे पादपद्मों में मेरी शुद्धा भक्ति हो – मैं तुम्हें सब समय देख सकूँ।' अस्पताल, दवाखाना ये सब अनित्य वस्तुएँ हैं। एकमात्र ईश्वर वस्तु है, और सब अवस्तु। उन्हें प्राप्त कर लेने पर जान पड़ता है, कर्ता वे ही हैं, हम लोग अकर्ता हैं। तो फिर क्यों उन्हें छोड़कर इतने काम इकट्ठे कर हम अपनी जान दें? उन्हें पा लेने पर उनकी इच्छा से कितने ही अस्पताल और दवाखाने हो जायँगे।

"इसीलिए कहता हूँ, कर्म आदिकाण्ड है, कर्म जीवन का उद्देश्य नहीं, साधना करके और भी आगे बढ़ जाओ। साधना करते हुए जब और आगे बढ़ जाओगे, तब अन्त में समझोगे, ईश्वर ही एकमात्र वस्तु है, और सब अवस्तु, ईश्वरलाभ ही जीवन का उद्देश्य है। एक लकड़हारा जंगल में लकड़ी काटने गया था। एकाएक किसी ब्रह्मचारी से उसकी भेंट हो गयी। ब्रह्मचारी ने कहा, 'सुनो जी, बढ़ते जाओ।' लकड़हारा घर लौटकर सोचने लगा, ब्रह्मचारी ने आगे बढ़ने के लिए क्यों कहा।

"इसी तरह कुछ दिन बीत गये। एक दिन वह बैठा हुआ था, एकाएक ब्रह्मचारी की बात याद आ गयी। तब उसने मन ही मन कहा, मैं आज और भी आगे बढ़ जाऊँगा। वन में और भी आगे चलकर उसने देखा, चन्दन के हजारों पेड़ थे। तब मारे आनन्द के लोटपोट हो गया। चन्दन की लकड़ी उस दिन घर ले आया। बाजार में बेचकर खूब धनी हो गया।

"और भी बढ़ने पर ईश्वर की प्राप्ति होगी, उनके दर्शन होंगे। क्रमशः उनके साथ मुलाकात और बातचीत होगी।"

केशव के स्वर्गलाभ के पश्चात् मन्दिर की वेदी को लेकर जो विवाद हुआ था, अब उसकी बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – सुना है, तुम्हारे साथ वेदी के सम्बन्ध में कोई झगड़ा हुआ है। जिन लोगों ने झगड़ा किया है, वे तो सब ऐसे ही हैं। – मानो कीड़े-मकोड़े। (सब हँसते हैं।)

(भक्तों को) "देखो, प्रताप और अमृत ये सब शंख की तरह बजते हैं। और दूसरे आदमियों को देखो, उनमें कोई आवाज ही नहीं है।' (सब हँसते हैं।)

प्रताप – महाराज, बजने की बात अगर आपने चलायी तो आम की गुठली भी तो बजती है!

(७)

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – देखो, तुम्हारे ब्राह्मसमाज का लेक्चर सुनकर आदमी का भाव आसानी से ताड़ लिया जाता है। मुझे एक हरिसभा में ले गये थे। आचार्य थे एक पण्डित, नाम समाध्यायी था। कहा, ईश्वर नीरस हैं, हमें अपने प्रेम और भक्ति से उन्हें सरस कर लेना चाहिए। यह बात सुनकर मैं तो दंग रह गया। तब एक कहानी याद आ गयी। एक लड़के ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ बहुत से घोड़े हैं – गोशाले भर। अब सोचो, अगर गोशाला है, तो वहाँ गौओं का रहना ही सम्भव है, घोड़ों का नहीं। इस तरह की असम्बद्ध बातें सुनकर आदमी क्या सोचता है? यही कि घोड़े-सोड़े कहीं कुछ नहीं हैं! (सब हँसते हैं।)

एक भक्त – घोड़े तो हैं ही नहीं, गौएँ भी नहीं हैं! (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – देखो न, जो रस-स्वरूप हैं, उन्हें कहता है 'नीरस'; इससे यही समझ में आता है कि ईश्वर क्या चीज हैं, उसने कभी अनुभव भी नहीं किया।

'मैं कर्ता, मेरा घर' अज्ञान। जीवन का उद्देश्य 'डुबकी लगाना'

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – देखो, तुमसे कहता हूँ। तुम पढ़ेलिखे बुद्धिमान और गम्भीर हो। केशव और तुम मानो गौरांग और नित्यानन्द; दोनों भाई थे। लेक्चर देना, तर्क झाड़ना, वादविवाद यह सब तो खूब हुआ। क्या तुम्हें ये सब अब भी अच्छे लगते हैं? अब सब मन समेटकर ईश्वर पर लगाओ। अपने को अब ईश्वर में उत्सर्ग कर दो।

प्रताप – जी हाँ, इसमें क्या सन्देह है, यही करना चाहिए; परन्तु यह सब जो मैं कर रहा हूँ, उनके (केशव के) नाम की रक्षा के लिए ही कर रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – तुमने कहा तो है कि उनके नाम की रक्षा के लिए सब कुछ कर रहे हो; परन्तु कुछ दिन बाद यह भाव भी न रह जायगा। एक कहानी सुनो। किसी आदमी का घर पहाड़ पर था, घर क्या, कुटिया थी। बड़ी मेहनत करके उसने बनाया था। कुछ दिन बाद एक बहुत बड़ा तूफान आया। कुटिया हिलने लगी। तब उसे बचाने के लिए उस आदमी को बड़ी चिन्ता हुई। उसने कहा, हे पवन देव, देखो महाराज, घर न तोड़ियेगा। पवन देव क्यों सुनने लगे? कुटिया चरचराने लगी। तब उस आदमी ने एक उपाय सोच निकाला। उसे याद आ गया कि हनुमानजी पवन देव के लड़के हैं। बस, घबराया हुआ वह कहने लगा – दोहाई है, घर न तोड़ियेगा, दोहाई है, हनुमानजी का घर है। कितनी ही बार उसने कहा, 'हनुमानजी का घर है', 'हनुमानजी का घर है,' पर इससे कोई लाभ न हुआ। तब कहने लगा, 'महाराज, लक्ष्मणजी का घर है – लक्ष्मणजी का।' इससे भी कुछ हल न हुआ तब कहा, 'सुनो, यह श्रीरामचन्द्रजी का घर है, देखो महाराज, इसे अब न तोड़िये। दोहाई है, जय रामजी की।' इससे भी कुछ न हुआ। घर चरचराता हुआ

टूटने लगा। तब जान बचाने की फिक्र हुई। वह घर से निकल आया। निकलते समय कहा – 'धत्तेरे घर की!'

(प्रताप से) "केशव के नाम की रक्षा तुम्हें न करनी होगी। जो कुछ हुआ है, समझना, उन्हीं की इच्छा से हुआ है। उनकी इच्छा से हुआ और उन्ही की इच्छा से जा रहा है; तुम क्या कर सकते हो? तुम्हारा इस समय कर्तव्य है कि ईश्वर पर सब मन लगाओ – उनके प्रेम के समुद्र में कूद पड़ो।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण अपने मधुर कण्ठ से गाने लगे –

"ऐ मन, रूप के समुद्र में तू डूब जा, तलातल और पाताल तक में जब खोज करेगा, तब वह प्रेम रत्न तेरे हाथ लगेगा।"

(प्रताप से) "गाना सुना? लेक्चर और झगड़ा यह सब तो बहुत हो चुका, अब डुबकी लगाओ। और इस समुद्र मे डूबने से फिर मरने का भय न रह जायगा, यह तो अमृत का समुद्र है! यह न सोचना कि इससे आदमी का दिमाख बिगड़ जाता है। यह न सोचना की ज्यादा ईश्वर ईश्वर करने से आदमी पागल हो जाता है। मैंने नरेन्द्र से क़हा था –

प्रताप – महाराज, नरेन्द्र कौन?

श्रीरामकृष्ण – है एक लड़का। मैंने नरेन्द्र से कहा था, ईश्वर रस का समुद्र है। क्या तेरी इच्छा इस रस के समुद्र में डुबकी लगाने की नहीं होती? अच्छा, सोच, एक नाँद मे रस है और तू मखखी हो गया है, तो कहाॅ बैठकर रस पीयेगा? नरेन्द्र ने कहा, मैं नाँद के किनारे पर बैठकर रस पीऊँगा। मैंने पूछा, क्यों? किनारे पर क्यों बैठेगा? उसने कहा, ज्यादा बढ़ जाऊँगा तो डूब जाऊँगा और जान से भी हाथ धोना होगा। तब मैंने कहा, बेटा, सच्चिदानन्द-समुद्र में वह भय नहीं है। वह तो अमृत का समुद्र है, उसमें डुबकी लगाने से मृत्यु का भय नही है। आदमी अमर हो जाता है। ईश्वर के लिए पागल होने से आदमी का सिर बिगड़ नहीं जाता।

(भक्तों से) "मैं और मेरा, इसे अज्ञान कहते है। रासमणि ने कालीमन्दिर की प्रतिष्ठा की है, यही बात लोग कहते हैं। कोई यह नहीं कहता कि ईश्वर ने किया है। ब्राह्म समाज अमुक आदमी ने तैयार किया, यही लोग कहेंगे; कोई यह न कहेगा कि ईश्वर की इच्छा से यह हुआ है। मैंने किया, यह अज्ञान है। हे ईश्वर तुम कर्ता हो, मैं अकर्ता; तुम यन्त्री हो, मैं यन्त्र; यह ज्ञान है। हे ईश्वर, मेरा कुछ भी नहीं है – न यह मन्दिर मेरा है, न यह कालीबाड़ी न यह समाज, ये सब तुम्हारी चीजें है। यह स्त्री, पुत्र, परिवार, कुछ भी मेरा नहीं। सब तुम्हारी चीजें हैं; इसी का नाम ज्ञान है।

"मेरी वस्तु, मेरी वस्तु कहकर, उन सब चीजों को प्यार करना ही माया है। सब को प्यार करने का नाम दया है। मैं केवल ब्राह्म समाज के आदमियों को प्यार करता हूँ या अपने परिवार के मनुष्यों को, यह माया है। केवल देश के आंदमियों को प्यार करता हूँ, यह माया

है। सब देशों के मनुष्यों को प्यार करना, सब धर्मों के लोगों को प्यार करना, यह दया से होता है, भक्ति से होता है।

"माया से आदमी बँध जाता है, ईश्वर से विमुख हो जाता है। दया से ईश्वर की प्राप्ति होती है। शुकदेव, नारद, इनमें दया थी।"

(८)

ब्राह्म समाज और कामिनी-कांचन

प्रताप – महाराज, जो लोग आपके पास आते हैं, क्या क्रमशः उनकी उन्नति हो रही है?

श्रीरामकृष्ण – मैं कहता हूँ, संसार करने में दोष क्या है? परन्तु संसार में दासी की तरह रहो।

"दासी अपने मालिक के मकान को कहती है, 'हमारा मकान', परन्तु उसका अपना मकान कहीं किसी गाँव में होता है। मुख से तो वह मालिक के मकान को कहती है 'हमारा घर', परन्तु मन ही मन जानती है कि वह उसका घर नहीं, उसका घर एक दूसरे गाँव में है। और मालिक के लड़के को सेती है और कहती है, मेरा हरि बड़ा बदमाश हो गया, मेरे हरि को मिठाई पसन्द नहीं आती! 'मेरा हरि' वह मुख ही से कहती है, मन ही मन जानती है, हरि मेरा लड़का नहीं, मालिक का लड़का है।

"इसीलिए तो, जो लोग आते हैं, उनसे कहता हूँ संसार में रहो, इसमें दोष नहीं; परन्तु मन ईश्वर पर रखो। समझना कि घर-द्वार, संसार-परिवार तुम्हारे नहीं हैं, ये सब ईश्वर के हैं। समझना कि तुम्हारा घर ईश्वर के यहाँ है। मैं उनसे यह भी कहता हूँ कि व्याकुल होकर उनकी भक्ति के लिए उनके पाद-पद्मों में प्रार्थना करो।"

विलायत की बात फिर होने लगी। एक भक्त ने कहा, महाराज, आजकल विलायत के विद्वान लोग, सुना है, ईश्वर का अस्तित्व नहीं मानते।

प्रताप – मुँह से चाहे वे कुछ भी कहें, पर यह मुझे विश्वास नहीं होता कि उनमें कोई सच्चा नास्तिक है। इस संसार की घटनाओं के पीछे एक कोई महान् शक्ति है, यह बात बहुतों को माननी पड़ी है।

श्रीरामकृष्ण – तो बस हो गया। शक्ति तो मानते हैं न? तो नास्तिक फिर क्यों हैं?

प्रताप – इसके अतिरिक्त यूरोप के पण्डित, Moral Government (सत्कर्मों का पुरस्कार और पाप का दण्ड इस संसार में होता है) – यह बात भी मानते हैं।

बड़ी देर तक बातचीत होने के बाद प्रताप चलने के लिए उठे।

श्रीरामकृष्ण – (प्रताप से) – तुम्हें और क्या कहूँ? केवल इतना कहता हूँ कि अब वाद-विवाद के बीच में न रहो।

"एक बात और। कामिनी-कांचन ही मनुष्य को ईश्वर से विमुख करते हैं, उस ओर नहीं जाने देते। देखो न, अपनी स्त्री की सब लोग बड़ाई करते हैं। (सब हँसते है।) चाहे वह अच्छी हो या खराब। अगर पूछो, क्यों जी, तुम्हारी स्त्री कैसी है, तो उसी समय जवाब मिलता है, जी बहुत अच्छी है।"

प्रताप – तो मै अब चलता हूँ।

प्रताप चले गये। श्रीरामकृष्ण की अमृतमयी, कामिनी और कांचन के त्याग की बात समाप्त नहीं हुई। सुरेन्द्र के बगीचे के पेड़ और उनकी पत्तियाँ दक्षिणी हवा के झोंकों में झूम रही थीं तथा मृदुल मर्मर शब्द सुना रही थीं। बातें उसी मर्मर शब्द के साथ मिल गयीं, भक्तों के हृदय मे एक बार धक्का लगाकर अनन्त आकाश में विलीन हो गयीं।

कुछ देर बाद श्रीयुत मणिलाल मल्लिक ने श्रीरामकृष्ण से कहा, 'महाराज, अब दक्षिणेश्वर चलिये। आज वहाँ केशव सेन की माँ और उनके घर की स्त्रियाँ आपके दर्शनों के लिए आयेगी। आपको वहाँ न पाकर सम्भव है, वे दु:खित हो वहाँ से लौट जायँ।'

केशव को शरीर छोड़े कई महीने हो गये हैं। उनकी वृद्धा माता और घर की स्त्रियाँ, श्रीरामकृष्ण को बहुत दिनो से न देखने के कारण, आज दक्षिणेश्वर में उनके दर्शन करने जायेंगी।

श्रीरामकृष्ण – (मणि मल्लिक से) – ठहरो बाबू, एक तो मेरी आँख नहीं लगी, जल्दबाजी इतनी न कर सकूँगा। वे गयी है, तो क्या किया जाय? वहाँ वे लोग बगीचे में टहलेंगी, आनन्द मनायेंगी।

कुछ देर विश्राम करके श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर चले। जाते समय सुरेन्द्र की कल्याण-कामना करते है। सब कमरों मे एक एक बार जाते हैं और मृदु स्वर से नामोच्चार कर रहे हैं। कुछ अधूरा न रखेंगे, इसीलिए खड़े हुए कह रहे हैं – 'मैंने उस समय पूड़ी नही खायी, थोड़ी सी ले आओ।'

बिलकुल जरा ही लेकर खा रहे है और कह रहे हैं – 'इसके बहुत से अर्थ हैं। पूड़ी नहीं खायी, यह याद आयेगा तो फिर आने की इच्छा होगी।' (सब हंसते हैं।)

मणि मल्लिक – (सहास्य) – अच्छा तो था, हम लोग भी आते। (भक्तमण्डली हँस रही है।)

परिच्छेद ८३

निष्काम भक्ति

दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में भक्तों के साथ अपने कमरे में बैठे हुए हैं। शाम हो गयी है, श्रीरामकृष्ण जगन्माता का स्मरण कर रहे हैं। कमरे में राखाल, अधर, मास्टर तथा और भी दो-एक भक्त हैं।

आज शुक्रवार है, जेष्ठ की कृष्णा द्वादशी, २० जून १८८४। पाँच दिन बाद रथयात्रा होगी। कुछ देर बाद ठाकुरबाड़ी में आरती होने लगी। अधर आरती देखने चले गये। श्रीरामकृष्ण मणि के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, बाबूराम की क्या पढ़ने की इच्छा है?

"बाबूराम से मैंने कहा, तू लोक-शिक्षण के लिए पढ़। सीता का उद्धार हो जाने पर विभीषण को राज्य करना पसन्द न आया। राम ने कहा, मूर्खों को शिक्षा देने के लिए तुम राज्य करो। नहीं तो वे कहेंगे, विभीषण ने राम की सेवा की, परन्तु क्या पाया? – राज्य देखकर उन्हें भी सन्तोष होगा।

"तुमसे कहता हूँ, उस दिन मैने देखा, बाबूराम, भवनाथ और हरीश, ये प्रकृतिभाववाले हैं।

"बाबूराम को देखा कि वह देवीमूर्ति है। गले में माला, सखियाँ साथ है। उसने स्वप्न मे कुछ पाया है, वह शुद्धसत्त्व है, थोड़े से यत्न से ही उसकी आध्यात्मिक जागृति हो जायेगी।

"बात यह है कि देह-रक्षा के लिए बड़ी असुविधा हो रही है। वह अगर आकर रहे तो अच्छा है। इन लड़कों का स्वभाव एक खास तरह का हो रहा है। नोटो (लाटू) ईश्वरी भाव में ही रहता है – वह तो शीघ्र ही ईश्वर में लीन हो जायेगा।

"राखाल का स्वभाव ऐसा हो रहा है कि मुझे ही उसे पानी देना पड़ता है। (मेरी) सेवा वह विशेष नहीं कर सकता।

"बाबूराम और निरंजन, इन्हें छोड़कर और लड़के कौन हैं? अगर कोई आता है, तो मालूम होता है कि उपदेश लेकर चला जायेगा।

"परन्तु मैं, खींच-खाँचकर बाबूराम को भी नहीं लाना चाहता। घर में गुल-गपाड़ा मच सकता है। (सहास्य) मैं जब कहता हूँ, चला क्यों नहीं आता, तब बार बार कहता है, आप कुछ ऐसा ही कर दीजिये जिससे मैं आ सकूँ। राखाल को देखकर रोता है, कहता है, वह मजे में है।

"राखाल अब घर के बच्चे की तरह रहता है। जानता हूँ, अब वह आसक्ति में पड़ नहीं सकता। कहता है, 'वह सब फीका लगता है।' उसकी स्त्री यहाँ आयी थी। उम्र १४ साल की है। यहाँ होकर कोन्नगर गयी थी। उन लोगों ने उससे (राखाल से) कोन्नगर जाने को कहा, पर वह न गया। कहता है – आमोद-प्रमोद अब अच्छा नहीं लगता। अच्छा, निरंजन को तुम क्या समझते हो?"

मास्टर – जी, बड़े अच्छे चेहरे-मोहरे का है।

श्रीरामकृष्ण – नहीं, सिर्फ चेहरा-मोहरा नहीं। सरल है। सरल होने पर सहज ही ईश्वर को लोग पा जाते हैं। सरल होने पर उपदेश भी शीघ्र सफल हो जाता है। जोती हुई जमीन, कंकड़ का नाम नहीं, बीज पड़ते ही पेड़ उग जाता है। फल भी शीघ्र आ जाते हैं।

"निरंजन विवाह न करेगा। तुम क्या कहते हो? कामिनी और कांचन, ये ही बाँधते है न?"

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – पान-तम्बाकू के छोड़ने से क्या होगा? कामिनी और कांचन का त्याग ही त्याग है।

"भाव में मैंने देखा, यद्यपि वह नौकरी करता है, फिर भी उसे दोष स्पर्श नहीं कर सका। माँ के लिए नौकरी करता है, इसमे दोष नहीं है।

"तुम जो काम करते हो, इसमे दोष नही है। यह अच्छा काम है।

"नौकरी करके जेल गया, बद्ध हुआ, बेड़ियाँ पहनी, फिर मुक्त हुआ। मुक्त होने के बाद क्या वह नाचने-कूदने लगता है? नही, वह फिर नौकरी करता है। इसी प्रकार तुम्हारी भी इच्छा स्वयं के लिए कोई धन-संचय करने की नहीं है – ठीक है – तुम्हें तो केवल अपने कुटुम्ब के निर्वाह के लिए ही चिन्ता है – नही तो सचमुच वे और कहाँ जायँ?"

मणि – यदि कोई उनकी जिम्मेदारी ले ले तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँ।

श्रीरामकृष्ण – ठीक है, परन्तु अभी यह भी करो और वह भी करो – अर्थात् संसार के कर्तव्य भी करो और आध्यात्मिक साधना भी।

मणि – सब कुछ त्याग सकना बड़े भाग्य की बात है।

श्रीरामकृष्ण – ठीक है। परन्तु जैसे जिसके संस्कार। तुम्हारा कुछ कर्म अभी बाकी है। उतना हो जाने पर शान्ति होगी, तब तुम्हें वह छोड़ देगा। अस्पताल में नाम लिखाने

पर फिर सहज ही नहीं छोड़ते। बिलकुल अच्छे हो जाने पर छोड़ते हैं।

"यहाँ जो भक्त आते हैं, उनके दो दर्जे हैं। जो एक दर्जे के हैं वे कहते हैं, 'हे ईश्वर, हमारा उद्धार करो।' दूसरे दर्जेवाले अन्तरंग हैं, वे यह बात नहीं कहते। दो बातें जानने से ही उनकी बन जाती है। एक तो यह कि मैं (श्रीरामकृष्ण) कौन हूँ, दूसरी यह कि वे कौन हैं – मुझसे उनका क्या सम्बन्ध है।

"तुम इस श्रेणी के हो। नहीं तो और कोई क्या इतना कर सकता था!

"भवनाथ, बाबूराम का प्रकृतिभाव है। हरीश स्त्रियों का कपड़ा पहनकर सोता है। बाबूराम ने भी कहा है, मुझे वही भाव अच्छा लगता है। बस मिल गया। यही भाव भवनाथ का भी है। नरेन्द्र, राखाल, निरंजन, इन लोगों का पुरुष-भाव है।

"अच्छा, हाथ टूटने का क्या अर्थ है? पहले एक बार भावावस्था में दाँत टूट गया था। अबकी बार भावावस्था में हाथ टूट गया।"

मणि को चुपचाप बैठे देखकर श्रीरामकृष्ण आप ही आप कह रहे हैं –

"हाथ टूटा सब अहंकार निर्मूल करने के लिए। अब भीतर 'मैं' कहीं खोजने पर भी नहीं मिलता। खोजने को जब जाता हूँ तो देखता हूँ वे हैं। पूर्ण रूप से अहंकार नष्ट हुए बिना उन्हें कोई पा नहीं सकता।

"चातक को देखो, मिट्टी में रहता है, पर कितने ऊँचे पर चढ़ता है।

"कभी-कभी देह काँपने लगती है कि कहीं विभूतियाँ न आ जायँ। इस समय अगर विभूतियों का आना हुआ तो यहाँ अस्पताल-दवाखाने खुल जायेंगे। लोग आकर कहेंगे, मेरी बीमारी अच्छी कर दो। क्या विभूतियाँ अच्छी होती हैं?"

मास्टर – जी नहीं, आपने तो कहा है, आठ विभूतियों में से एक के भी रहने पर ईश्वर नहीं मिल सकते।

श्रीरामकृष्ण – बिलकुल ठीक, जो हीनबुद्धि हैं वे ही विभूतियाँ चाहते हैं।

"जो आदमी बड़े आदमी के पास कुछ प्रार्थना कर बैठता है, उसकी फिर खातिरदारी नहीं होती, उसे फिर एक ही गाड़ी पर, बड़े आदमी के साथ चढ़ने का सौभाग्य नहीं होता; यदि उसे वह चढ़ाता भी है, तो पास बैठने नहीं देता। इसीलिए निष्काम भक्ति, अहैतुकी भक्ति सब से अच्छी होती है।

साकार निराकार दोनों ही सत्य हैं

"अच्छा, साकार और निराकार दोनों सत्य हैं – क्यों? निराकार में मन अधिक देर तक नहीं रहता, इसीलिए भक्त साकार को लेकर रहते हैं।

"कप्तान ठीक कहता है, चिड़िया ऊपर उड़ती हुई जब थक जाती है, तब फिर डाल पर आकर विश्राम करती है। निराकार के बाद साकार।

"तुम्हारे अड्डे में एक बार जाना होगा। भावावस्था में देखा – अधर का घर, सुरेन्द्र का घर, बलराम का घर – ये सब मेरे अड्डे हैं।

"वे यहाँ आये या न आये, मुझे इसका हर्ष-दुःख नही।"

मास्टर – जी, ऐसा क्यों होगा? सुख का बोध होने से ही तो दुःख होता है। आप सुख और दुःख के अतीत हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, और मै देख रहा हूँ, बाजीगर और उसका खेल। बाजीगर ही नित्य है और उसका खेल अनित्य – स्वप्नवत्।

"जब चण्डी सुनता था, तब यह बोध हुआ था। शुम्भ और निशुम्भ का जन्म हुआ, थोड़ी ही देर मे सुना, उनका विनाश हो गया।"

मास्टर – जी, मैं कालना में गंगाधर के साथ जहाज पर जा रहा था। जहाज के धक्के से एक नाव उलट गयी, उस पर २०-२५ आदमी सवार थे। सब डूब गये। जहाज के पीछे उठनेवाली तरंगो के फेन की तरह सब लोग पानी के साथ मिल गये।

"अच्छा, जो मनुष्य बाजीगरी देखता है, क्या उसमें दया होती है? क्या उसे अपने उत्तरदायित्व का बोध रहता है, उत्तरदायित्व का बोध रहने पर ही तो मनुष्य में दया होगी न?"

श्रीरामकृष्ण – वह (ज्ञानी) सब देखना है – ईश्वर, माया, जीवजगत्। वह देखता है, माया (विद्या-माया और अविद्या-माया), जीव और जगत् – ये हैं भी और नहीं भी हैं। जब तक अपना 'मै' रहता है, तब तक वे भी रहते है। ज्ञानरूपी खड्ग के द्वारा उन्हें काट डालने पर फिर कुछ नहीं रह जाता। तब अपना 'मैं' भी बाजीगर का तमाशा हो जाता है।

मणि विचार कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा – "किस तरह, जानते हो? जैसे पच्चीस दलवाले फूल को एक ही वार से काटना।

"कर्तृत्व! राम राम! शुकदेव, शंकराचार्य, इन लोगों ने विद्या का 'मैं' रखा था। दया मनुष्य की नहीं, दया ईश्वर की है। विद्या के 'मै' के भीतर ही दया है। विद्या का 'मैं' वे ही हुए हैं।

"तुम चाहे लाख बार यह अनुभव करो कि यह सब तमाशा है, पर हो तुम उन्हीं के 'अण्डर' (Under अधीन)। उनसे तुम बच नहीं सकते। तुम स्वाधीन नहीं हो। वे जैसा करायें, वैसा ही करना होगा। वह आद्याशक्ति जब ब्रह्मज्ञान देगी तब ब्रह्मज्ञान होगा – तभी तमाशा देखा जाता है, नहीं तो नहीं।

"जब तक थोड़ासा भी 'मैं' है, तब तक उस आद्याशक्ति का ही इलाका है; उन्हीं के अण्डर हो – उन्हें छोड़कर जाने की गुंजाइश नहीं है।

"आद्याशक्ति की सहायता से ही अवतारलीला होती है। उन्हीं की शक्ति से अवतार, अवतार कहलाते हैं। तभी अवतार कार्य कर सकते हैं। सब माँ की शक्ति है।

"कालीबाड़ी के पहलेवाले खजांची से जब कोई कुछ ज्यादा चाहता था, तब वह कहता था, दो तीन दिन बाद आना, मालिक से पूछ लूँ।

"कलि के अन्त में कल्कि-अवतार होगा। वे ब्राह्मण बालक के रूप में जन्म लेंगे। एकाएक उनके एक घोड़ा और तलवार आ जायेगी ...।"

अधर आरती देखकर आये; आसन ग्रहण किया। भुवनमोहिनी नाम की धाई कभी-कभी श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए आया करती है। श्रीरामकृष्ण सब की चीजें नहीं ग्रहण कर सकते – विशेषकर डाक्टरों, कविराजों और धाइयों की नहीं ले सकते। घोर कष्ट देखकर भी वे लोग रुपया लेते हैं, इसीलिए श्रीरामकृष्ण उनकी चीजें नहीं ले सकते।

श्रीरामकृष्ण – (अधर से) – भुवनमोहिनी आयी थी। पच्चीस बम्बई आम और सन्देश-रसगुल्ले लायी थी। मुझसे कहा, एक आम आप भी लीजिये। मैंने कहा, नहीं पेट भरा हुआ है। और सचमुच, देखो न, जरा सा सन्देश और कचौड़ी खायी, इतने ही से पेट कैसा हो गया।

"केशव सेन की माँ बहिन आदि सब आयी थीं। इसलिए उनका दिल बहलाने के लिए मुझे कुछ नाचना पड़ा था। और मैं क्या करूँ, उन्हें कितनी गहरी चोट पहुँची है!"

□□□

परिच्छेद ८४

कलि में भक्तियोग

(१)

श्रीरामकृष्ण और शशधर पण्डित

आज रथयात्रा है; बुधवार, २५ जून १८८४ आषाढ़ की शुक्ला द्वितीया। आज सुबह श्रीरामकृष्ण ईशान के घर निमन्त्रित होकर आये हैं। ईशान का घर ठनठनिया मे है। यहाँ पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने सुना, शशधर पण्डितजी पास ही कालेज स्ट्रीट में चटर्जियों के यहाँ हैं। पण्डितजी को देखने की उनकी बड़ी इच्छा है। पिछले पहर पण्डितजी के यहाँ जाना निश्चित हुआ। दिन के दस बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण ईशान के नीचेवाले बैठकखाने मे भक्तों के साथ बैठे हैं। ईशान के मुलाकाती भाटपाड़ा के दो-एक ब्राह्मण थे जिनमें एक भागवत के पण्डित भी थे। श्रीरामकृष्ण के साथ हाजरा तथा और भी दो-एक भक्त आये हैं। श्रीश आदि ईशान के लड़के भी है। एक भक्त और आये हैं, ये शक्ति के उपासक हैं। मत्थे पर सिन्दूर का बुन्दा लगाये हैं। श्रीरामकृष्ण आनन्द में हैं। सिन्दूर का बुन्दा देखकर हँसते हुए कहा, इन पर तो मार्क लगा हुआ है!

कुछ देर बाद नरेन्द्र और मास्टर अपने अपने मकान से आये। दोनों ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उनके पास ही आसन ग्रहण किया। श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा था, अमुक दिन मैं ईशान के घर जाऊँगा, तुम वहीं नरेन्द्र को साथ लेकर मिलना।

श्रीरामकृष्ण ने मास्टर से कहा, उस दिन मै तुम्हारे यहाँ जा रहा था, तुम कहाँ रहते हो?

मास्टर – जी, अब श्यामपुकुर तेलीपाड़ा में स्कूल के पास रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – आज स्कूल नहीं गये?

मास्टर – जी आज रथ की छुट्टी है।

नरेन्द्र के पितृवियोग के बाद से घर में बड़ी तकलीफ है। वे ही अपने पिता के सब से बड़े लड़के हैं। उनके छोटे छोटे कई भाई और बहिनें हैं। पिता वकील थे, परन्तु कुछ छोड़कर नहीं जा सके। *परिवार के भोजन-वस्त्र के लिए नरेन्द्र नौकरी तलाश रहे हैं।*

श्रीरामकृष्ण ने नरेन्द्र को किसी काम में लगा देने के लिए ईशान आदि भक्तों से कह रखा है। ईशान Controller General (कंट्रोलर जनरल) के आफिस में कर्मचारियों के एक अध्यक्ष थे। नरेन्द्र के घर की तकलीफ सुनकर श्रीरामकृष्ण सदा ही चिन्तित रहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – मैंने ईशान से तेरे लिए कहा है। ईशान एक दिन वहाँ (दक्षिणेश्वर में) रहा था, तभी मैंने उससे तेरी बात कही थी। बहुतों के साथ उसका परिचय है।

ईशान ने श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण देकर बुलाया है। इस उपलक्ष्य में अपने कई दूसरे मित्रों को भी न्योता भेजा है। गाना होगा; पखावज, तबला और तानपूरे का इन्तजाम किया जा रहा है। घर से एक आदमी थोड़ा सा मैदा दे गया। (पखावज में लगाने के लिए।) ग्यारह बजे का समय होगा। ईशान की इच्छा है कि नरेन्द्र गावें।

श्रीरामकृष्ण – (ईशान से) – इस समय मैदा! तो अभी भोजन को बड़ी देर होगी?

ईशान – (सहास्य) – जी नहीं, ऐसी कुछ देर नहीं है।

भक्तों में कोई-कोई हँस रहे हैं, भागवत के पण्डित भी हँसकर एक संस्कृत श्लोक कह रहे हैं। श्लोक की आवृत्ति हो जाने पर पण्डितजी उसकी व्याख्या कर रहे हैं। कहते हैं, दर्शन आदि शास्त्रों से काव्य मनोहर है। जब काव्य का पाठ होता है, लोग उसे सुनते हैं, तब वेदान्त, सांख्य, न्याय, पातंजलि, ये सब रूखे जान पड़ते हैं। काव्य की अपेक्षा गीत मनोहर है। संगीत को सुनकर पाषाण-हृदयों का भी हृदय द्रवित हो जाता है। यद्यपि गीतों में इतना आकर्षण होता है, तथापि सुन्दरी स्त्री की तुलना में वह कम है। यदि एक सुन्दरी स्त्री यहाँ से निकल जाय तो न किसी का मन काव्य में लगेगा, न कोई गीत ही सुनेगा। सब के सब उसी स्त्री को देखने लगेंगे। और जब भूख लगती है, तब काव्य, गीत, नारी, कुछ भी अच्छा नहीं लगता अन्नचिन्ता चमत्कारा!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – ये रसिक हैं।

पखावज बँध गया, नरेन्द्र गा रहे हैं। गाना शुरू होने से कुछ पहले ही श्रीरामकृष्ण ऊपर के बैठकखाने में विश्राम करने के लिए चले गये। साथ मास्टर और श्रीश भी गये। यह बैठकखाना रास्ते के ऊपर है। मास्टर ने श्रीरामकृष्ण से श्रीश का परिचय कराया। कहा, ये पण्डित हैं और प्रकृति के बड़े शान्त हैं। बचपन से ही ये मेरे साथ पढ़ते थे। अब ये वकालत करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – इस तरह के आदमी भी वकालत करें!

मास्टर – भूलकर उस रास्ते में चले गये है।

श्रीरामकृष्ण – मैंने गणेश वक़ील को देखा है। वहाँ (दक्षिणेश्वर में) बाबुओं के साथ कभी-कभी जाता है। पन्ना (वकील) भी जाता है – सुन्दर तो नही है, पर गाता अच्छा है। मुझे मानता भी खूब है, बड़ा सरल है। (श्रीश से) आपने किसे सार-वस्तु सोचा?

श्रीश – ईश्वर हैं और वे ही सब कर रहे है। परन्तु उनके गुणों के सम्बन्ध में हमारी जो धारणा है, वह ठीक नहीं। आदमी उनके सम्बन्ध में क्या धारणा कर सकता है? अनन्त खेल है उनके!

श्रीरामकृष्ण – बगीचे में कितने पेड़ हैं, पेड़ों में कितनी डालियाँ हैं, इन सब का हिसाब लगाने से तुम्हारा क्या काम? तुम बगीचे में आम खाने के लिए आये हो, आम खाकर चले जाओ। उनमें भक्ति और प्रेम करने के लिए आदमी मनुष्य जन्म पाता है। तुम आम खाकर चले जाओ।

"तुम शराब पीने के लिए आये, तो शराबवाले की दूकान में कितने मन शराब है, इन सब का हिसाब करने से क्या प्रयोजन? तुम्हारे लिए तो एक गिलास ही काफी है। अनन्त लीलाओं के जानने से तुम्हें मतलब?

"कोटि कोटि वर्ष तक उनके गुणों का विचार करने पर उनके गुणों का अल्पांश भी न समझ पाओगे।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुप रहकर फिर बातचीत करने लगे। भाटपाड़ा के एक ब्राह्मण भी बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – संसार में कुछ नहीं। इनका (ईशान का) संसार अच्छा है, यही खैर है, नही तो अगर लड़के वेश्यागामी, गंजेड़ी, शराबी और उद्दण्ड होते, तो तकलीफ की हद हो जाती। सब का मन ईश्वर पर – विद्या का संसार – ऐसा अक्सर नहीं दीख पड़ता। ऐसे दो ही चार घर देखे। नहीं तो बस झगड़ा, 'तू-तू – मैं-मैं', हिंसा, और फिर रोग, शोक, दारिद्र। यही देखकर कहा – माँ, इसी समय मोड़ घुमा दो। देख न, नरेन्द्र कैसी विपत्ति में पड़ गया, बाप मर गया, घरवाले खाने को नहीं पाते, नौकरी की इतनी चेष्टा हो रही है, फिर भी कोई प्रबन्ध नहीं होता। अब देखो क्या करें? मास्टर! पहले तुम यहाँ इतना आते थे, अब उतना क्यों नहीं आते? जान पड़ता है, बीबी से प्रेम इस समय बढ़ा हुआ है।

"अच्छा है, दोष क्या है! चारों ओर कामिनी-कांचन है। इसीलिए कहता हूँ, माँ, अगर कभी शरीर ग्रहण करना पड़े तो संसारी न बना देना।"

भाटपाड़ा के ब्राह्मण – यह आपने कैसे कहा? गृहस्थ धर्म की तो बड़ी प्रशंसा है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, परन्तु बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण दूसरी बात करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – हम लोगों ने कैसा अन्याय किया, वे लोग गा रहे हैं, नरेन्द्र गा रहा है, और हम लोग चले आये।

(२)

कलि में भक्तियोग

दोपहर चार बजे के करीब, श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़े। बड़े ही कोमलांग है, बड़ी सावधानी से देह की रक्षा होती है। इसीलिए रास्ता चलते तकलीफ होती है। गाड़ी न होने पर थोड़ी दूर भी चलते हैं, तो बड़ा कष्ट होता है। गाड़ी पर चढ़कर भावसमाधि में मग्न हो गये। उस समय नन्ही-नन्ही बूँदों की वर्षा हो रही थी। आकाश में बादल छाये हैं, रास्ते में कीचड़ है। भक्तगण गाड़ी के पीछे-पीछे पैदल चल रहे हैं। उन्होंने देखा, रथयात्रा का स्वागत लड़के ताड़ के पत्ते की बाँसुरी बजाकर कर रहे थे।

गाड़ी मकान के सामने पहुँची। द्वार पर घर के मालिक और उनके आत्मीयों ने आकर स्वागत किया।

ऊपर जाने की सीढ़ी के बगल में बैठकखाना है। ऊपर पहुँचकर श्रीरामकृष्ण ने देखा, शशधर उनकी अभ्यर्थना के लिए आ रहे हैं। पण्डितजी को देखकर मालूम हुआ कि वे यौवन पार कर चुके हैं, प्रौढ़ावस्था को प्राप्त हैं। रंग साफ गोरा है – गले में रुद्राक्ष की माला पड़ी है। उन्होंने बड़े विनय-भाव से श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। फिर साथ ही उन्हें घर ले गये।

श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए लोग उनकी बातचीत सुनने के लिए बड़े उत्सुक हो रहे हैं। नरेन्द्र, राखाल, राम, मास्टर और दूसरे भी बहुत से भक्त उपस्थित हैं। हाजरा भी श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर-कालीमन्दिर से आये हुए हैं।

पण्डितजी के देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण को भावावेश होने लगा। कुछ देर बाद उसी अवस्था में हँसते हुए पण्डितजी की ओर देखकर कह रहे हैं – 'बहुत अच्छा, बहुत अच्छा।' फिर उनसे कहा, 'तुम कैसे लेक्चर देते हो?'

शशधर – महाराज, मैं शास्त्रों के उपदेश समझाने की चेष्टा करता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति है। शास्त्रों में जिन सब कर्मों की बात है, उनके साधन के लिए अब समय कहाँ है? आजकल के बुखार में दशमूल पाचन की व्यवस्था ठीक नहीं। दशमूल पाचन देने से इधर रोग ऐंठ जाता है। आजकल बस 'फीवर-मिक्श्चर'! कर्म करने के लिए अगर कहते हो, तो केवल सार की बात कह दिया करो। मैं आदमियों से कहता हूँ, तुम्हें 'आपोधन्यन्या' इतना यह सब न कहना होगा। गायत्री के जप से ही तुम्हारी बन जायगी। अगर कर्म की बात कहनी ही हो, तो ईशान की तरह के दो-एक कर्मियों से कह सकते हो।

"लाख लेक्चर दो, परन्तु विषयी मनुष्यों का कुछ कर न सकोगे। पत्थर की दीवार में क्या कभी कीला गाड़ सकते हो? कीला खुद चाहे टूट जाय – मुड़ जाय, पर पत्थर

का कुछ नही हो सकता। तलवार की चोट से घड़ियाल का क्या बिगड़ सकता है? साधु का कमण्डल चारो धाम हो जाता है, पर ज्यो का त्यों कडुआ बना रहता है। तुम्हारे लेक्चर से विषयी आदमियो का विशेष कुछ होता नही, यह बात तुम खुद धीरे धीरे समझ जाओगे। बछड़ा एक साथ ही खडा नही हो जाता। कभी-कभी गिर जाता है और फिर उठने की कोशिश करता है। तब खडा होना और चलना भी सीखता है।

"कौन भक्त है और कौन विषयी, यह बात तुम समझते नही, यह तुम्हारा दोष भी नही है। पहले जब आँधी आती है, तब कोई यह नही पहचान पाता, कौन आम है और कौन इमली।

"ईश्वर-लाभ जब तक नही होता, तब तक कोई कर्मों को बिलकुल छोड़ नही सकता। सन्ध्या-वन्दनादि कर्म कितने दिनो के लिए है? – जब तक ईश्वर के नाम पर अश्रु और पुलक न हो। 'हे राम' ऐसा एक बार कहने ही अगर आँखो मे आँसू आ जायँ, देह पुलकित होने लगे, तो निश्चय समझना कि उसके कर्मो का अन्त हो गया। फिर उसे सन्ध्यादि कर्म न करने पड़ेंगे।

"फल के होने पर ही फूल गिर जाता है, भक्ति फल है, कर्म फूल। गृहस्थ की बहू के लड़का होनेवाला हुआ, तो वह अधिक काम नहीं कर सकती। उसकी सास दिनोदिन उसका काम घटाती जाती है। दसवे महीने के आने पर फिर उसे बिलकुल काम नही छूने देती। लडका होने पर फिर वह उसी को लेकर रहती है, दूसरे काम नही करने पडते। सन्ध्या गायत्री मे लीन हो जाती है, गायत्री प्रणव मे, प्रणव समाधि मे। जैसे घण्टे का शब्द – टं-ट-अ-म्। योगी नाद-भेद करके परब्रह्म मे लीन होते है। समाधि मे सन्ध्यादि कर्मो का लय हो जाता है। इसी तरह ज्ञानियो के कर्म छूट जाते है।"

(३)

केवल पाण्डित्य व्यर्थ है। साधना तथा विवेक-वैराग्य

समाधि की बात कहते ही कहते श्रीरामकृष्ण का भाव बदलने लगा। उनके श्रीमुख से स्वर्गीय ज्योति निकलने लगी। देखते देखते बाह्य-ज्ञान जाता रहा, शब्दरहित हो गये, आँखे स्थिर हो गयी। वे इस समय परमात्मा के दर्शन कर रहे है। बड़ी देर बाद प्राकृत अवस्था आयी। बालक की तरह कह रहे है, मै पानी पीऊँगा। समाधि के बाद जब पानी पीना चाहते थे, तब भक्तो को मालूम हो जाता था कि अब ये क्रमशः बाह्य भूमि पर आ रहे है।

श्रीरामकृष्ण भावावेश मे कहने लगे, 'माँ, उस दिन ईश्वरचन्द्र विद्यासागर को तूने दिखलाया। इसके बाद मैने फिर कहा था, माँ, मै एक दूसरे पण्डित को देखूँगा, इसीलिए मुझे यहाँ लायी।'

फिर शशधर की ओर देखकर कहने लगे – "भैया, कुछ और बल बढ़ाओ, कुछ दिन और साधन-भजन करो। पेड़ पर अभी चढ़े नहीं और अभी से फल की आकांक्षा! परन्तु लोगो के भले के लिए तुम यह सब कर रहे हो।"

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण शशधर को सिर झुकाकर नमस्कार कर रहे हैं। फिर कहने लगे –

"जब पहले-पहल मैंने तुम्हारी बात सुनी, तो लोगों से पूछा, सिर्फ पण्डित है या कुछ विवेक-वैराग्य भी है?

"जिस पण्डित के विवेक नहीं, वह पण्डित ही नहीं।

"अगर आदेश मिला हो तो लोक-शिक्षा में दोष नही। आदेश पाने पर अगर कोई लोक-शिक्षा देता है, तो फिर उसे कोई पराजित नही कर सकता।

"सरस्वती के पास से अगर एक भी किरण आ जाय तो ऐसी शक्ति हो जाती है कि बड़े-बड़े पण्डित भी सिर झुका लेते है।

"दिया जलाने पर, झुण्ड के झुण्ड कीड़े इकट्ठे हो जाते है, उन्हें बुलाना नहीं पड़ता। उसी तरह जिसे आदेश मिला है, उसे आदमियों को बुलाना नही पड़ता। अमुक समय मे लेक्चर होगा, यह कहकर खबर नहीं भेजनी पड़ती, उसी में आकर्षण होता है और इतना कि आदमी आप खिंचकर आ जाते है। तब राजा, बाबू, सभी स्वय ही दल बॉध-बाँधकर उसके पास आते है और कहते रहने है, 'आपको क्या चाहिए? आम, सन्देश, रुपया, पैसा, दुशाले, यह सब ले आया हूँ, आप क्या लीजियेगा?' मैं उन आदमियों से कहता हूँ, 'दूर करो, यह कुछ मुझे अच्छा नहीं लगता, मैं कुछ नही चाहता।'

"चुम्बक-पत्थर क्या लोहे से कहेगा कि मेरे पास आओ? कहना नही होता। लोहा आप ही चुम्बक-पत्थर के आकर्षण से आ जाता है।

"सच है कि इस तरह का आदमी पण्डित नही होता; परन्तु इसलिए यह न सोच लेना कि उसके ज्ञान मे कुछ कमी है। कहीं किताबें पढ़कर भी ज्ञान होता है? जिसे आदेश मिला है उसके ज्ञान का अन्त नहीं है। वह ज्ञान ईश्वर के पास से आता है। वह कभी चुकता नहीं। उस देश में धान नापते समय एक आदमी नापता है और दूसरा राशि ठेलता जाता है। उसी तरह जो आदेश पाता है, वह जितनी ही लोक-शिक्षा देता रहता है, माँ उसकी ज्ञान की राशि पूरी करती जाती है; उस ज्ञान का अन्त नहीं होता। मेरी अवस्था इसी प्रकार की है।

"माँ यदि एक बार भी कृपा की दृष्टि फेर दें तो क्या फिर ज्ञान का अभाव रह सकता है? इसीलिए पूछ रहा हूँ, तुम्हें कोई आदेश मिला है या नहीं।"

हाजरा – हाँ, आदेश अवश्य मिला होगा। क्यों महाशय?

पण्डितजी – नहीं, आदेश तो विशेष कुछ नहीं मिला।

गृहस्वामी – आदेश तो जरूर नही मिला, परन्तु कर्तव्य के विचार से लेक्चर देते हैं।

श्रीरामकृष्ण – जिसने आदेश नही पाया, उसके लेक्चर से क्या होगा?

"एक (ब्राह्म) ने लेक्चर देते हुए कहा था, 'मै पहले खूब शराब पीता था, ऐसा करता था, वैसा करता था।' यह बात सुनकर लोग आपस में बतलाने लगे – 'साला कहता क्या है, शराब पीता था!' इस तरह कहने से उसे विपरीत फल मिला। इसीलिए अच्छा आदमी बिना हुए लेक्चर से कोई उपकार नही होता।

"बरीसालनिवासी किसी सरकारी अफसर ने कहा था, 'महाराज, आप प्रचार करना शुरू कर दीजिये, तो मै भी कमर कसूँ।' मैने कहा, 'अजी, एक कहानी सुनो। उस देश में हालदारपुकुर नाम का एक तालाब है। जितने आदमी थे, सब उसके किनारे पर दिशा-फरागत को जाते थे। सुबह को जो लोग तालाब पर जाते वे गाली-गलोज की बौछारों से उनके भूत उतार देते थे। परन्तु गालियो से कुछ फल न होता था। उसके दूसरे ही दिन सुबह फिर वही घटना होती; लोग फिर दिशा-फरागत को आते। कुछ दिनों बाद कम्पनी से एक चपरासी आया। वह तालाब के पास नोटिस चिपका गया। बस वहाँ टट्टी जाना बिलकुल बन्द हो गया!'

"इसीलिए कहता हूँ, ऐरे-गैरे के लेक्चर से कुछ फल नही होता। चपरास के रहने पर ही लोग बात सुनेगे। ईश्वर का आदेश न रहा, तो लोक-शिक्षा नही होती। जो लोक-शिक्षा देगा, उसमे बड़ी शक्ति चाहिए। कलकत्ते मे बहुत से हनुमानपुरी* है, उनके साथ तुम्हें लड़ना होगा।

"ये लोग (श्रीरामकृष्ण के चारों ओर जो सब भक्त बैठे हुए थे) तो अभी पट्ठे है।

"चैतन्यदेव अवतार थे। वे जो कुछ कर गये, कहो भला उसका अब कितना बचा हुआ है? और जिसने आदेश नहीं पाया, उसके लेक्चर से क्या उपकार होगा?

"इसीलिए कहता हूँ, ईश्वर के पादपद्मों मे मग्न हो जाओ।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण प्रेम से मतवाले होकर गा रहे हैं –

"ऐ मेरे मन, तू रूप के सागर मे डूब जा। जब तू तलातल और पाताल खोजेगा, तभी तुझे प्रेम-रत्न-धन प्राप्त होगा।

"इस समुद्र में डूबने से वह मरता नही, यह अमृत का समुद्र है।

"मैने नरेन्द्र से कहा था, 'ईश्वर रस के समुद्र है, तू इस समुद्र मे डुबकी लगायेगा या नहीं, बोल? अच्छा सोच, एक खप्पर में रस है, और तू मक्खी बन गया है। तो तू कहाँ बैठकर रस पीयेगा? – बोल।' नरेन्द्र ने कहा, 'मैं खप्पर के किनारे बैठकर मुँह

* एक विख्यात पहलवान.

बढ़ाकर पीऊँगा, क्योंकि अधिक बढ़ने से डूब जाऊँगा।' तब मैंने कहा, 'भैया, यह सच्चिदानन्दसागर है, इसमें मृत्यु का भय नहीं है। यह सागर अमृत का सागर है। जिन्हें ज्ञान नहीं, वे ही ऐसा कहते हैं कि भक्ति और प्रेम की बढ़ाचढ़ी अच्छी नहीं। परन्तु ईश्वर-प्रेम की क्या कहीं बढ़ाचढ़ी होती है?' इसीलिए तुमसे कहता हूँ, सच्चिदानन्द-सागर में मग्न हो जाओ।

"ईश्वर-लाभ हो जाने पर फिर क्या चिन्ता है? तब आदेश भी होगा और लोक-शिक्षा भी होगी।"

(४)

ईश्वर-लाभ के अनन्त मार्ग। भक्तियोग ही युगधर्म है

श्रीरामकृष्ण – देखो, अमृत-समुद्र में जाने के अनन्त मार्ग हैं। किसी तरह इस सागर में पड़े कि बस, हुआ। सोचो, अमृत का एक कुण्ड है। किसी तरह मुँह में उस अमृत के पड़ने से ही अमर होते हो, तो चाहे तुम खुद कूदकर उसमें गिरो या सीढ़ियों से धीरे-धीरे उतरकर कुछ पीयो, या कोई दूसरा धक्का मारकर तुम्हें कुण्ड में डाल दे, फल एक ही है। अमृत का कुछ स्वाद लेने से ही अमर हो जाओगे।

"मार्ग अनन्त हैं। ज्ञान, कर्म, भक्ति, चाहे जिस मार्ग से जाओ, आन्तरिक होने पर ईश्वर को अवश्य प्राप्त करोगे। संक्षेप में योग तीन प्रकार के हैं। ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग।

"ज्ञानयोग में ज्ञानी ब्रह्म को जानना चाहता है। नेति-नेति विचार करता है। ब्रह्म सत्य और संसार मिथ्या है, यह विचार करता है। विचार की समाप्ति जहाँ है, वहाँ समाधि होती है, ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता है।

"कर्मयोग है, कर्म करके ईश्वर पर मन लगाये रहना। अनासक्त होकर प्राणायाम, ध्यान-धारणादि कर्मयोग है। संसारी अगर अनासक्त होकर ईश्वर को फल समर्पित कर दे, उन पर भक्ति रखकर संसार का कर्म करे तो वह भी कर्मयोग है। ईश्वर को फल का समर्पण करके पूजा, जप आदि कर्म करना, यह भी कर्मयोग है। ईश्वर-लाभ करना ही कर्मयोग का उद्देश्य है।

"भक्तियोग है ईश्वर के नाम-गुणों का कीर्तन करके उन पर पूरा मन लगाना। कलिकाल के लिए भक्तियोग का मार्ग सीधा है। युगधर्म भी यही है।

"कर्मयोग बड़ा कठिन है। पहले ही कहा जा चुका है कि समय कहाँ है? शास्त्रों में जो सब कर्म करने के लिए कहा है, उसका समय कहाँ है? कलिकाल में इधर आयु कम है। उस पर अनासक्त होकर फल की कामना न करके कर्म करना बड़ा कठिन है। ईश्वर को बिना पाये कोई अनासक्त नहीं हो सकता। तुम नहीं जानते, परन्तु कहीं न कहीं

से आसक्ति आ ही जाती है।

"ज्ञानयोग भी इस युग के लिए बड़ा कठिन है। एक तो जीवो के प्राण अन्नगत हो रहे है, तिस पर आयु भी कम है, उधर देहबुद्धि किसी तरह जाती नही और देहबुद्धि के गये बिना ज्ञान होने का नही। ज्ञानी कहता है, मै ही वह ब्रह्म हूँ। न मै शरीर हूँ, न भूख हूँ, न तृष्णा हूँ, न रोग हूँ, न शोक हूँ, जन्म, मृत्यु, सुख, दुःख, इन सब से परे हूँ। यदि रोग, शोक, सुख, दुःख, इन सब का बोध रहा, तो तुम ज्ञानी फिर कैसे हो सकोगे? इधर हाथ कॉटो से छिद रहे है, घर घर खून बह रहा है, खूब पीड़ा होती है, फिर भी कहता है, 'कहाँ? हाथ तो कटा ही नही! मेरा क्या हुआ है?'

"इसीलिए इस युग मे भक्तियोग है। इससे दूसरे मार्गो की अपेक्षा ईश्वर के पास पहुँचने मे सुगमता है। ज्ञानयोग या कर्मयोग अथवा दूसरे मार्गो से भी लोग ईश्वर के पास पहुँच सकते है, परन्तु इन सब रास्तो मे मंजिल पूरी करना बड़ा कठिन है।

"इस युग के लिए भक्तियोग है। इसका यह अर्थ नही है कि भक्त एक जगह जायगा, ज्ञानी या कर्मी दूसरी जगह। इसका तात्पर्य यह है कि जो ब्रह्मज्ञान चाहते है, वे अगर भक्ति के मार्ग से चले तो भी वही ज्ञान उन्हे होगा। भक्तवत्सल अगर चाहेगे तो वह भी दे सकते है।

"भक्त ईश्वर का साकार-रूप देखना चाहता है, उनके साथ बातचीत करना चाहता है – वह बहुधा ब्रह्मज्ञान नही चाहता। परन्तु ईश्वर इच्छामय है। उनकी अगर इच्छा हो तो वे भक्त को सब ऐश्वर्यो का अधिकारी कर सकते है। भक्ति भी देते है और ज्ञान भी। अगर कोई एक बार कलकत्ता आ जाय, तो किले का मैदान, सोसायटी (Asiatic Society's Museum), सब उसे देखने को मिल जायगा।

"पर बात तो यह है कि कलकत्ता किस तरह आया जाय?

"संसार की मां को पा जाने पर ज्ञान भी पाता है और भक्ति भी। भाव-समाधि के होने पर रूप-दर्शन होता है और निर्विकल्प समाधि के होने पर अखण्ड सच्चिदानन्द-दर्शन। तब अहं, नाम और रूप नही रह जाते।

"भक्त कहता है, 'माँ, सकाम कर्मो से मुझे बड़ा भय लगता है। उस कर्म मे कामना है। उस कर्म के करने से फल भोगना ही पडेगा। तिस पर अनासक्त कर्म करना बडा कठिन है। उधर सकाम कर्म करूँगा, तो तुम्हे भूल जाऊँगा। चलो, ऐसे कर्म से मुझे अत्यन्त घृणा है। जब तक तुम्हे न पाऊँ तब तक कर्म घटते जायँ। जितना रह जायगा, उतने को अनासक्त होकर कर सकूँ। उसके साथ तुम पर मेरी भक्ति भी बढ़ती जाय। और जब तक तुम्हे न पाऊँ तब तक किसी नये कर्म मे न फँसूँ। जब तुम स्वयं कोई आज्ञा दोगी तब काम करूँगा, अन्यथा नही।' "

(५)

तीर्थयात्रा और श्रीरामकृष्ण। आचार्यों की तीन श्रेणियाँ

पण्डितजी – तीर्थाटन के लिए महाराज कहाँ तक गये हैं?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, कई स्थान देखे हैं! (सहास्य) हाजरा बहुत दूर तक गया है और बहुत ऊँचे चढ़ गया था, हृषीकेश तक हो आया है। (सब का हँसना।) मैं इतनी दूर नहीं जा सका, इतने ऊँचे नहीं चढ़ा।

"गीध भी बहुत ऊँचे चढ़ जाता है। परन्तु उसकी दृष्टि मरघट पर ही रहती है। (सब हँसते हैं।) मरघट का क्या अर्थ है जानते हो? मरघट अर्थात् कामिनी-कांचन।

"अगर यहाँ बैठकर भक्तिलाभ कर सको, तो तीर्थ जाने की क्या जरूरत है? काशी जाकर मैंने देखा, वहाँ भी वही पेड़ है और वही इमली के पत्ते।

"तीर्थ जाने पर भी अगर भक्ति न हुई तो तीर्थ जाने से फिर कुछ फल ही नहीं हुआ। और भक्ति ही सार है तथा एकमात्र उसी की आवश्यकता है। चीलें और गीध कैसे होते हैं, जानते हो? बहुतसे आदमी ऐसे होते हैं जो लम्बी लम्बी बातें करते हैं। कहते हैं, शास्त्रों में जिन सब कर्मों की बातें लिखी हैं, उनमें से अधिकांश की हमने साधना की है। वे कहते तो यह हैं, पर उनका मन घोर विषय में पड़ा रहता है। रुपया-पैसा, मान-मर्यादा, देह-सुख, इन्हीं सब विषयों के फेर में वे पड़े रहते हैं।"

पण्डितजी – जी हाँ, तीर्थ जाना तो अपने पास की मणि को छोड़कर काँच के पीछे दौड़ना है।

श्रीरामकृष्ण – और तुम यह समझ लेना कि चाहे लाख शिक्षा दो, पर उपयुक्त समय के आये बिना कोई फल न होगा। बिस्तरे पर सोते समय किसी लड़के ने अपनी माँ से कहा, 'माँ, मुझे टट्टी लगे तो जगा देना।' उसकी माँ ने कहा, 'बेटा, टट्टी की हाजत तुम्हें खुद ही उठा देगी, इसके लिए तुम कोई चिन्ता न करो।' (हास्य।) इसी प्रकार भगवान के लिए व्याकुलता ठीक समय आने पर ही होती है।

"वैद्य तीन तरह के होते हैं।

"जो वैद्य केवल नाड़ी देखकर दवा की व्यवस्था करके चला जाता है, रोगी से सिर्फ इतना ही कह जाता है कि दवा खाते रहना, वह अधम श्रेणी का वैद्य है।

"उसी तरह कुछ आचार्य केवल उपदेश दे जाते हैं, परन्तु उस उपदेश से अनुयायी को अच्छा फल प्राप्त हुआ या बुरा इसका फिर पता नहीं लेते।

"दूसरी श्रेणी के वैद्य ऐसे होते हैं, जो दवा की व्यवस्था करके रोगी से दवा खाने के लिए कहते हैं। अगर रोगी नहीं खाना चाहता, तो उसे तरह तरह से समझाते हैं। ये मध्यम श्रेणी के वैद्य हुए। इसी तरह मध्यम श्रेणी के आचार्य भी हैं। वे उपदेश देते हैं और

तरह तरह से आदमियों को समझाते भी हैं जिससे उपदेश के अनुसार वे चल सकें।

"अन्तिम श्रेणी के और उत्तम वैद्य वे हैं जो अगर मीठी बातों से रोगी नहीं मानता, तो बल का प्रयोग भी करते है। जरूरत होती है तो रोगी की छाती पर घुटना रखकर जबरन दवा पिला देते हैं। उसी प्रकार उत्तम श्रेणीवाले आचार्य भी हैं। ईश्वर के मार्ग पर लाने के लिए वे शिष्यों पर बल तक का प्रयोग करते हैं।"

पण्डितजी – महाराज, अगर उत्तम श्रेणी के आचार्य हों, तो क्यों फिर आपने ऐसा कहा कि समय के आये बिना ज्ञान नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – सच है। परन्तु सोचो कि दवा अगर पेट में न जाय – अगर मुँह से ही निकल जाय, तो बेचारा वैद्य भी क्या कर सकता है? उत्तम वैद्य भी कुछ नहीं कर सकता।

"पात्र देखकर उपदेश दिया जाता है। तुम लोग पात्र देखकर उपदेश नहीं देते। मेरे पास अगर कोई लड़का आता है तो मैं उससे पूछता हूँ – तेरे कौन कौन है! सोचो उसके बाप नहीं है, परन्तु बाप का ऋण है, तो वह कैसे ईश्वर की ओर मन लगा सकता है? – सुना?"

पण्डितजी – जी हाँ, मै सब सुन रहा हूँ।

श्रीरामकृष्ण – एक दिन काली-मन्दिर में कुछ सिक्ख सिपाही आये थे। काली माता के मन्दिर के सामने उनसे मेरी मुलाकात हुई। एक ने कहा – 'ईश्वर दयामय हैं।' मैने कहा – 'अच्छा? सच कहते हो? कैसे तुम्हें मालूम हुआ?' उन लोगों ने कहा, – 'क्यों जनाब, ईश्वर हमें खिलाते हैं – हमारी इतनी देखभाल करते हैं।' मैंने कहा – 'यह कैसे आश्चर्य की बात हैं? ईश्वर सब के पिता हैं। अपने पुत्रों की देखभाल पिता नहीं करेगा तो और कौन करेगा? क्या पड़ोसवाले उनकी खबर लेंगे?'

नरेन्द्र – तो फिर दयामय न कहें?

श्रीरामकृष्ण – क्या मैं मना करता हूँ? मेरे कहने का मतलब यह है कि ईश्वर अपने आदमी है, कोई दूसरे नहीं।

पण्डितजी – बात अनमोल है।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – तेरा गाना मैं सुन रहा था, पर अच्छा न लगा। इसलिए चला आया। कहा, अभी उम्मेदवार है, गाना फीका जान पड़ने लगा।

नरेन्द्र लज्जित हो गये। मुँह लाल हो गया। वे चुप हो रहे।

(६)

श्रीरामकृष्ण ने पीने के लिए पानी माँगा। उनके पास एक ग्लास पानी रखा गया था, परन्तु वह जल वे पी नहीं सके। एक ग्लास जल और लाने के लिए कहा। पीछे से मालूम

पड़ा कि किसी घोर इन्द्रियलोलुप मनुष्य ने उस ग्लास को छू लिया था।

पण्डितजी – (हाजरा से) – आप लोग इनके साथ दिनरात रहते हैं, आप लोग बड़े आनन्द में हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – आज मेरा बड़ा अच्छा दिन था। मैंने दूज का चाँद देखा। (सब हँसते हैं।) दूज का चाँद क्यों कहा, जानते हो? सीता ने रावण से कहा था, रावण, तू पूर्ण चन्द्र है और मेरे राम दूज के चाँद हैं। रावण ने इसका अर्थ नहीं समझा, उसे बड़ा आनन्द हुआ था। सीता के इस कथन का अर्थ यह है कि रावण की सम्पदा जहाँ तक बढ़ने को थी, बढ़ चुकी थी। अब दिनोंदिन पूर्ण चन्द्र की तरह उसका ह्रास ही होगा। श्रीरामचन्द्र दूज के चाँद हैं, उनकी दिनोंदिन वृद्धि होगी!

श्रीरामकृष्ण उठे। अपने बन्धु और बान्धवों के साथ पण्डितजी ने भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बिदा हुए।

(७)

संसार में किस प्रकार रहना चाहिए

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ ईशान के घर लौटे। अभी सन्ध्या नहीं हुई। ईशान के नीचेवाले बैठकखाने में आकर बैठे। कोई कोई भक्त भी उपस्थित हैं। भागवती पण्डित, ईशान तथा उनके लड़के भी हैं।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – शशधर से मैंने कहा, पेड़ पर चढ़ने के पहले ही फल की आकांक्षा करने लगे? – कुछ भजन साधन और करो, तब लोक-शिक्षा देना।

ईशान – सभी लोग सोचते हैं, मैं लोकशिक्षा दूँ। जुगनू सोचता है, संसार को प्रकाशित मैं कर रहा हूँ। इस पर किसी ने कहा भी था – 'ऐ जुगनू, क्या तुम भी संसार को प्रकाश दे सकते हो? तुम तो अँधेरे को और भी प्रकट करते हो!'

श्रीरामकृष्ण – (जरा मुस्कराकर) – परन्तु निरे पण्डित ही नहीं हैं, कुछ विवेक और वैराग्य भी है।

भाटपाड़ा के भागवती पण्डित भी अब तक बैठे हुए हैं। उम्र ७०-७५ होगी। वे टकटकी लगाये श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं।

भागवती पण्डित – (श्रीरामकृष्ण से) – आप महात्मा हैं।

श्रीरामकृष्ण – यह बात आप नारद, शुकदेव, प्रह्लाद, इन सब के लिए कह सकते हैं। मैं तो आपके पुत्र के समान हूँ।

"परन्तु एक दृष्टि से कह सकते हैं। यह लिखा है कि भगवान से भक्त बड़ा है, क्योंकि भक्त भगवान को हृदय में लिये हुए घूमता है। भक्त के लिए भगवान ने कहा है, 'भक्त मुझे छोटा देखता है और अपने को बड़ा।' यशोदा कृष्ण को बाँधने चली थीं।

यशोदा को विश्वास था, मै अगर कृष्ण की देख-रेख न करूँगी, तो और कौन करेगा? कभी तो भगवान चुम्बक है और भक्त सुई – भगवान भक्त को खीच लेते है; और कभी भक्त चुम्बक और भगवान सुई, भक्त का इतना आकर्षण होता है कि उसके प्रेम को देख, मुग्ध होकर भगवान उसके पास खिचे चले जाते है।''

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर लौटनेवाले है। नीचे के बैठकखाने के दक्षिण ओर वाले बरामदे मे आकर खड़े हुए है। ईशान आदि भक्तगण भी खड़े है। बातो ही बातो मे श्रीरामकृष्ण ईशान को बहुत से उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (ईशान से) – संसार मे रहकर जो उन्हे पुकारता है, वह वीर भक्त है। भगवान कहते है, जिसने संसार छोड़ दिया है, वह मुझे पुकारेगा ही, मेरी सेवा करेगा ही, उसकी इसमे बड़ाई क्या है? वह अगर मुझे न पुकारे तो लोग उसे धिक्कारेगे, पर जो संसार मे रहकर भी मुझे पुकारता है, बीस मन का पत्थर हटाकर मुझे देखता है, वही धन्य है, वही बहादुर है, वही वीर है।

भागवती पण्डित – शास्त्रो मे तो यही बात है – धर्मव्याध और पतिव्रता की कथा मे। तपस्वी ने सोचा था, मैने कौए और बगुले को भस्म कर डाला है – मेरा स्थान बड़ा ऊँचा है। वह पतिव्रता के घर गया था। पति पर उसकी इतनी भक्ति थी कि वह दिनरात उसी की सेवा किया करती थी। पति के घर आने पर पैर धोने के लिए उसे पानी देती, यहाँ तक कि अपने बालो से उसके पैर पोछती थी। तपस्वी अतिथि होकर गये थे। भिक्षा मिलने मे देर हो रही थी, इस पर चिल्लाकर कह उठे, तुम्हारा भला न होगा। पतिव्रता ने उसी समय भीतर से कहा, 'यह कौए और बगुले को भस्म करना थोड़े ही है। महाराज, जरा ठहरो, मै स्वामी की सेवा कर लूँ, तब तुम्हारी भी पूजा करूँगी।'

''धर्मव्याध के पास कोई ब्रह्मज्ञान के लिए गया था। व्याध पशुओ का मांस बेचता था, परन्तु पिता-माता को ईश्वर समझकर दिनरात उनकी सेवा करता था। जो मनुष्य ब्रह्मज्ञान के लिए उसके पास गया था, वह तो उसे देखकर दंग रह गया – सोचने लगा, यह व्याध मांस बेचता है और संसारी मनुष्य है, यह भला मुझे क्या ब्रह्मज्ञान दे सकता है? परन्तु वह व्याध पूर्ण ज्ञानी था।''

श्रीरामकृष्ण अब गाड़ी पर चढ़ेगे। ईशान तथा अन्य भक्तगण पास ही खड़े है, उन्हे गाड़ी पर चढ़ा देने के लिए। श्रीरामकृष्ण फिर बातो मे ईशान को उपदेश देने लगे –

''चीटी की तरह संसार मे रहो। इस संसार मे नित्य और अनित्य दोनो मिले हुए है। बालू के साथ शक्कर मिली हुई है। चीटी बनकर चीनी का भाग ले लेना।

''जल और दूध एक साथ मिले हुए है। चिदानन्द-रस और विषय-रस। हंस की तरह दूध का अंश लेकर जल का भाग छोड़ देना।

''पनडुब्बी चिड़िया की तरह रहो – परो मे पानी लग जाय तो झाड़कर निकाल

देना। इसी प्रकार 'पांकाल' मछली की तरह रहना। वह रहती है कीच में, परन्तु उसकी देह बिलकुल साफ रहती है।

"गोलमाल में 'माल' है, 'गोल' निकालकर 'माल' ले लेना।"

श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। गाड़ी दक्षिणेश्वर की ओर चल दी।

□□

परिच्छेद ८५

पण्डित शशधर को उपदेश

(१)

काली ही ब्रह्म है। ब्रह्म और शक्ति अभेद

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ अपने कमरे में जमीन पर बैठे हैं। पास ही शशधर पण्डित है। जमीन पर चटाई बिछी है, उस पर श्रीरामकृष्ण, पण्डित शशधर तथा कई भक्त बैठे है। कुछ लोग खाली जमीन पर ही बैठे हैं। सुरेन्द्र, बाबूराम, मास्टर, हरीश, लाटू, हाजरा, मणि मल्लिक आदि भक्त भी है। श्रीरामकृष्ण पण्डित पद्मलोचन की बात कह रहे है। पद्मलोचन बर्दवान महाराज के सभापण्डित थे। दिन का तीसरा पहर है, चार बजे का समय होगा।

आज सोमवार है, ३० जून, १८८४। छः दिन हो गये, जिस दिन रथयात्रा थी, उस दिन कलकत्ते में पण्डित शशधर के साथ श्रीरामकृष्ण की बातचीत हुई थी। आज पण्डितजी खुद आये है। साथ मे श्रीयुत भूधर चट्टोपाध्याय और उनके बड़े भाई है। कलकत्ते मे इन्ही के मकान पर पण्डित शशधरजी रहते है।

पण्डितजी ज्ञानमार्गी है। श्रीरामकृष्ण उन्हें समझा रहे हैं – "नित्यता जिनकी है, लीला भी उन्ही की है – जो अखण्ड सच्चिदानन्द है, उन्हीने लीला के लिए अनेक रूपो को धारण किया है।" भगवत्प्रसंग करते करते श्रीरामकृष्ण बेहोश होते जा रहे हैं। पण्डितजी से कह रहे हैं – "भैया, ब्रह्म सुमेरुवत् अटल और अचल है, परन्तु जिसमें न हिलने का भाव है उसमें हिलने का भाव भी है।"

श्रीरामकृष्ण प्रेम और आनन्द से मस्त हो गये है। सुन्दर कण्ठ से गाने लगे। एक के बाद दूसरा, इस तरह कई गाने गाये।

(गीतों का भाव) –

(१) कौन जानता है कि काली कैसी है? षड्दर्शन भी उनके दर्शन नहीं पाते ...।

(२) मेरी माँ किसी ऐसी-वैसी स्त्री की लड़की नही है। उसका नाम लेकर महेश्वर हलाहल पीकर भी बच गये। उसके कटाक्षमात्र से सृष्टि, स्थिति और प्रलय होते हैं। अनन्त ब्रह्माण्डों को वह अपने पेट में डाली हुई है। उसके चरणों की शरण लेकर देवता संकट

से उद्धार पाते हैं। देवों के देव महादेव उसके पैरों के नीचे लोटते हैं।

(३) मेरी माँ मे यह इतना ही गुण नहीं है कि वह शिव की सती है, नही, काल के काल भी उसे हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं। नग्न होकर वह शत्रुओं का संहार करती है। महाकाल के हृदय में उसका वास है। अच्छा मन! कहो तो सही, भला वह कैसी है जो अपने पति के हृदय में भी पाद-प्रहार करती है! रामप्रसाद कहते हैं! माता की लीलाएँ समस्त बन्धनों से परे हैं। मन! सावधानी के साथ प्रयत्न करते रहो, इससे तुम्हारी मति शुद्ध हो जायगी।

(४) यह मैं सुरापान नहीं कर रहा हूँ, काली का नाम लेकर मैं सुधापान करता हूँ। वह सुधा मुझे ऐसी मस्त कर देती है कि लोग मुझे मतवाला कहते है। गुरु के दिये हुए बीज को लेकर, उसमें प्रवृत्ति का मसाला डाल, ज्ञानरूपी कलवार जब शराब खींचता है, तब मेरा मतवाला मन उसका पान करता है। यन्त्रों से भरे हुए मूल मन्त्र का शोधन करके वह 'तारा-तारा' कहा करता है। रामप्रसाद कहता है, ऐसी सुरा के पीने से चतुर्वर्गों की प्राप्ति होती है।

(५) श्यामा-धन क्या कभी सब को थोडे ही मिलता है? बड़ी आफत है – यह नादान मन समझाने पर भी नही समझता। उन सुरंजित चरणो मे प्राणो को सौप देना शिव के लिए भी असाध्य है, तो साधारण जनों की बात ही क्या!

श्रीरामकृष्ण का भावावेश घट रहा है। गाना बन्द हो गया। वे थोड़ी देर चुपचाप बैठे रहे। फिर अपनी छोटी खाट पर जाकर बैठे।

पण्डितजी गाना सुनकर मुग्ध हो गये। बड़े ही विनयस्वर मे श्रीरामकृष्ण से कहा – क्या और गाना न होगा?

श्रीरामकृष्ण कुछ देर बाद फिर गाने लगे –

(१) श्यामा के चरणरूपी आकाश में मेरे मन की पतंग उड़ रही थी। पाप की हवा के झोके से वह चक्कर खाकर गिर गयी ...।

(२) अब मुझे एक अच्छा भाव मिल गया है। यह भाव मैंने एक अच्छे भावुक से सीखा है। जिस देश में रात नहीं है, उसी देश का एक आदमी मुझे मिला है। मै दिन और रात को कुछ नहीं समझता, सन्ध्या को तो मैंने वन्ध्या बना डाला है।

(३) तुम्हारे अभय चरणों में मैंने प्राणों को समर्पण कर दिया है। अब मैंने यम की चिन्ता नहीं रखी, न मुझे अब उसका कोई भय ही है। अपनी शिर-शिखा में मैंने काली-नाम के महामन्त्र की ग्रन्थि लगा ली है। भव की हाट में देह बेचकर मैं श्रीदुर्गा नाम खरीद लाया हूँ।

'श्रीदुर्गा-नाम खरीद लाया हूँ,' इस वाक्य को सुनकर पण्डितजी की आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गयी। श्रीरामकृष्ण फिर गा रहे हैं –

(१) मैंने अपने हृदय में काली-नाम के कल्पतरू को रोपित कर लिया है। अब की बार जब यमराज आयेंगे, तब उन्हें हृदय खोलकर दिखाऊँगा, इसीलिए बैठा हुआ हूँ। देह के भीतर छः दुर्जन हैं, उन्हें मैंने घर से निकाल दिया है। रामप्रसाद कहते हैं, श्रीदुर्गा का नाम लेकर मैंने पहले ही से यात्रारम्भ कर दिया है।

(२) मन! अपने मे ही रहना, किसी दूसरे के घर न जाना। जो कुछ तू चाहेगा, वह तुझे बैठे ही बैठे मिल जायगा। तू अपने अन्तःपुर में ही उसकी तलाश कर।

श्रीरामकृष्ण गाकर बतला रहे हैं कि मुक्ति की अपेक्षा भक्ति बड़ी है।

(गाना) "मुझे मुक्ति देते हुए कष्ट नही होता, परन्तु भक्ति देते बड़ी तकलीफ होती है। जिसे मेरी भक्ति मिलती है, वह सेवा का अधिकारी हो जाता है। फिर उसे कौन पा सकता है! वह त्रिलोकजयी हो जाता है। शुद्धा भक्ति एकमात्र वृन्दावन में है, गोपियों के सिवा किसी दूसरे को उसका ज्ञान नही। भक्ति ही के कारण, नन्द के यहाँ, उन्हें पिता मानकर, मै उनकी बाधाओ को अपने सिर लेता हूँ।"

(२)

ज्ञानी और विज्ञानी। विचार कब तक?

पण्डितजी ने वेद और शास्त्रो का अध्ययन किया है। सदा ज्ञान की चर्चा मे रहते हैं। श्रीरामकृष्ण छोटी खाट पर बैठे हुए उन्हें देख रहे है और कहानियों के रूप में अनेक प्रकार के उपदेश दे रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – वेदादि बहुत से शास्त्र हैं, परन्तु साधना किये बिना – तपस्या किये बिना – कोई ईश्वर को पा नही सकता। उनके दर्शन न तो षड्दर्शनों में होते है और न आगम, निगम और न तन्त्रसार मे ही।

"शास्त्रों मे जो कुछ लिखा है, उसे समझकर उसी के अनुसार काम करना चाहिए। किसी ने एक चिट्ठी खो दी थी। उसने चिट्ठी कहाँ रख दी यह उसे याद न रही। तब वह दिया लेकर खोजने लगा। दो तीन लोगों ने मिलकर खोजा, तब वह चिट्ठी मिली। उसमें लिखा था, पाँच सेर सन्देश और एक धोती भेजना। पढ़कर उसने फिर उस चिट्ठी को फेंक दिया। तब फिर चिट्ठी की कोई जरूरत न थी। पाँच सेर सन्देश और एक धोती के भेजने ही से मतलब था।

"पढ़ने की अपेक्षा सुनना अच्छा है, सुनने से देखना अच्छा है। श्रीगुरु-मुख से या साधु के मुख से सुनने पर धारणा अच्छी होती है, क्योंकि फिर शास्त्रो के असार-भाग के सोचने की आवश्यकता नही रहती। हनुमान ने कहा था, 'भाई, मैं तिथि और नक्षत्र यह सब कुछ नही जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण करता रहता हूँ।'

"सुनने की अपेक्षा देखना और अच्छा है। देखने पर सब सन्देह मिट जाते हैं।

शास्त्रों में तो बहुत सी बातें हैं, परन्तु यदि ईश्वर के दर्शन न हुए – उनके चरणकमलों में भक्ति न हुई – चित्त शुद्ध न हुआ तो सब वृथा है। पंचांग में लिखा है, वर्षा बीस बिस्वे की होगी, परन्तु पंचांग दबाने से कहीं एक बूँद भी पानी नहीं गिरता। एक बूँद गिरे, सो भी नहीं।

"शास्त्रादि लेकर विचार कब तक के लिए हैं? – जब तक ईश्वर के दर्शन न हों। भौंरा कब तक गुँजार करता है? – जब तक वह फूल पर बैठता नहीं। फूल पर बैठकर जब वह मधु पीने लगता है, तब फिर गुनगुनाता नहीं।

"परन्तु एक बात है, ईश्वर के दर्शनों के बाद भी बातचीत हो सकती है; वह बात ईश्वर के ही आनन्द की बात होगी – जैसे मतवाले का 'जय देवी' बोलना, और भौंरा फूल पर बैठकर जैसे अर्धस्फुट शब्दों में गुंजार करता है।

"ज्ञानी 'नेति-नेति' विचार करता है। इस तरह विचार करते हुए जहाँ उसे आनन्द की प्राप्ति होती है, वही ब्रह्म है।

"ज्ञानी का स्वभाव कैसा है, जानते हो? ज्ञानी कानून के अनुसार चलता है।

"मुझे चानक ले गये थे। वहाँ मैंने कई साधुओं को देखा। उनमें कोई कोई कपड़ा सी रहे थे। (सब हँसते हैं।) मेरे जाने पर वह सब अलग रख दिया। फिर पैर पर पैर चढ़ाकर मुझसे बातचीत करने लगे। (सब हँसते हैं।)

"परन्तु ईश्वर की बात बिना पूछे ज्ञानी उस सम्बन्ध में खुद कुछ नहीं बोलते। पहले वे पूछेंगे, इस समय कैसे हो? – घरवाले अब कैसे हैं?

"परन्तु विज्ञानी का स्वभाव और ही है। उसके स्वभाव मे ढिलाई रहती है। कभी देखा, धोती कहीं, खुली हुई है। कभी बगल में दबी है – बच्चे की तरह।

"ईश्वर हैं, यह जिसने जान लिया है, वह ज्ञानी है। लकड़ी में अवश्य ही आग है, यह जिसने जाना है, वह ज्ञानी है; परन्तु लकड़ी जलाकर भोजन पकाना, भरपेट खाना, यह जिसे आता है वह विज्ञानी है।

"विज्ञानी के आठों पाश खुल जाते हैं। उनमें कामक्रोधादि का आकार मात्र रह जाता है।"

पण्डितजी – "भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः।"

श्रीरामकृष्ण – हाँ, एक जहाज समुद्र में जा रहा था। एकाएक उसके कल-पुर्जे, लोहा-लक्कड़ खुलने लगे। पास ही एक चुम्बक का पहाड़ था। इसीलिए लोहा सब अलग होकर निकला जा रहा था। मैं कृष्णकिशोर के घर जाता था। एक दिन गया तो उसने कहा, तुम पान क्यों खाते हो? मैंने कहा, 'मेरी इच्छा। मैं पान खाऊँगा, शीशे में मुँह देखूँगा, हजार औरतों के बीच में नंगा होकर नाचूँगा।' कृष्णकिशोर की स्त्री उसे डाँटने लगी। कहा, 'तुम किसे यह सब कह रहे हो? – रामकृष्ण को?'

"इस अवस्था के आने पर कामक्रोधादि दग्ध हो जाते हैं। शरीर में कुछ फर्क नहीं होता, वह दूसरे आदमियों के जैसा दिखायी देता है; पर भीतर पोल और निर्मल हो जाता है।"

भक्त – ईश्वर-दर्शन के बाद भी क्या शरीर रहता है?

श्रीरामकृष्ण – किसी किसी का कुछ कर्मों के लिए रह जाता है – लोक-शिक्षा के लिए। गंगा नहाने से पाप धुल जाता है और मुक्ति हो जाती है, परन्तु आँख का अन्धापन नहीं जाता; परन्तु इतना होता है कि पापों के लिए जिन कुछ जन्मों तक कर्मफल का भोग करना होता है, वे जन्म फिर नहीं होते। जिस चक्कर को वह लग चुका है, बस उसे ही वह पूरा कर जायेगा। बचे हुए के लिए फिर उसे चक्कर न लगाना होगा। कामक्रोधादि सब दग्ध हो जाते है; शरीर सिर्फ कुछ कर्मों के लिए रह जाता है।

पण्डितजी – उसे ही संस्कार कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – विज्ञानी सदा ही ईश्वर के दर्शन किया करता है। इसीलिए तो उसका इतना ढीला स्वभाव होता है। वह आँखें खोलकर भी ईश्वर के दर्शन करता है। कभी वह नित्य से लीला में आ जाता है और कभी लीला से नित्य मे चला जाता है।

पण्डितजी – यह मै नही समझा।

श्रीरामकृष्ण – 'नेति नेति' का विचार करके वह उसी नित्य और अखण्ड सच्चिदानन्द में पहुँच जाता है। वह इस तरह विचार करता है – वे न जीव हैं, न संसार है, न चौबीसों तत्त्व हैं। नित्य में पहुँचकर फिर वह देखता है, यह सब वे ही हुए हैं – जीव, जगत् और चौबीसों तत्त्व – यह सब।

"दूध का दही जमाकर, फिर उसे मथकर मक्खन निकाला जाता है। परन्तु मक्खन के निकल आने पर वह देखता है, जिस मट्ठे का मक्खन है, उसी मक्खन का मट्ठा भी है। छाल का ही गूदा है और गूदे की ही छाल।"

पण्डितजी – (भूधर से सहास्य) – समझे? समझना बहुत मुश्किल है।

श्रीरामकृष्ण – मक्खन हुआ, तो मट्ठा भी हुआ है। मक्खन को सोचने लगे, तो साथ साथ मट्ठे को भी सोचता पड़ता है, क्योंकि मट्ठा न रहा तो मक्खन हो नहीं सकता। अतएव, नित्य को मानो तो लीला भी माननी होगी। अनुलोम और विलोम। साकार और निराकार के दर्शन कर लेने के बाद यह अवस्था है। साकार चिन्मय रूप है और निराकार अखण्ड सच्चिदानन्द।

"वे ही सब कुछ हुए है। इसीलिए, विज्ञानी इस संसार को 'आनन्द की कुटिया' देखता है। और ज्ञानी के लिए यह संसार 'धोखे की टट्टी' हैं। रामप्रसाद ने 'धोखे की टट्टी' कहा है, इसीलिए किसी ने उत्तर दिया – 'यह संसार आनन्द की कुटिया है। मैं

दही खाता हूँ और मजा लूटता हूँ। अरे वैद्य, तुझे बुद्धि भी नहीं है? तू इतने उथले में है? जरा जनक राजा को तो देख, वे कितने तेजस्वी थे, दोनों ओर वे संभालकर चलते थे, तभी तो दूध का कटोरा साफ कर देते थे!' (सब हँसते हैं।)

"विज्ञानी को विशेष रूप से ईश्वर का आनन्द मिला है। किसी ने दूध की बात-ही-बात सुनी है, किसी ने दूध देखा भर है और किसी ने दूध पिया है। विज्ञानी ने दूध पिया है, पीकर स्वाद लिया है और हृष्ट-पुष्ट भी हुआ है।"

श्रीरामकृष्ण कुछ देर के लिए चुप हो गये। पण्डितजी से उन्होंने तम्बाकू पीने के लिए कहा। पण्डितजी दक्षिण-पूर्ववाले लम्बे बरामदे में तम्बाकू पीने चले गये।

(३)

ज्ञान और विज्ञान। गोपीभाव

पण्डितजी लौटकर फिर से भक्तों के साथ जमीन पर बैठ गये। श्रीरामकृष्ण छोटी खटिया पर बैठकर फिर वार्तालाप करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – यह बात तुमसे कहता हूँ। आनन्द तीन प्रकार के होते हैं – विषयानन्द, भजनानन्द और ब्रह्मानन्द। जिसमें लोग सदा ही लिप्त रहते हैं – जो कामिनी और कांचन का आनन्द है, उसे विषयानन्द कहते हैं। ईश्वर के नाम और गुणों का गान करने से जो आनन्द मिलता है, उसका नाम है भजनानन्द और ईश्वर के दर्शन में जो आनन्द है, उसका नाम है ब्रह्मानन्द। ब्रह्मानन्द को प्राप्त करके ऋषि स्वेच्छा-विहारी हो जाते थे।

"चैतन्यदेव की तीन तरह की अवस्थाएँ होती थीं – अन्तर्दशा, अर्धबाह्यदशा और बाह्यदशा। अन्तर्दशा में वे ईश्वर का दर्शन करके समाधिस्थ हो जाया करते थे – जड़-समाधि की अवस्था हो जाती थी। अर्धबाह्यदशा में बाहर का कुछ होश रहता था। बाह्यदशा में नाम और गुणों का कीर्तन करते थे।

हाजरा – (पण्डितजी से) – अब तो आपके सब सन्देह मिट गये न?

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – समाधि किसे कहते हैं? – जहाँ मन का लय हो जाता है। ज्ञानी को जड़-समाधि होती है – फिर 'अहं' नहीं रह जाता। भक्तियोग की समाधि को चेतन-समाधि कहते हैं। इसमें सेव्य और सेवक का 'मैं' रहता है – रस-रसिक का 'मैं' – स्वाद के विषय और स्वाद लेनेवाले का 'मैं'। ईश्वर सेव्य हैं और भक्त सेवक; ईश्वर रस-स्वरूप हैं और भक्त रसिक। ईश्वर स्वाद के विषय हैं और भक्त स्वाद लेनेवाले। वह चीनी नहीं बन जाता, चीनी खाना पसन्द करता है।

पण्डितजी – वे अगर सम्पूर्ण 'मैं' का लय कर दें तो क्या हो? अगर चीनी बना लें तो?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम अपने मन की बात खोलकर कहो। 'माँ कौशल्ये, एक बार खोलकर कहो!' (सब हँसते है।) तो क्या नारद, सनक, सनातन, सनन्द, सनत्कुमार शास्त्रो मे नही है?

पण्डितजी – जी हाँ, शास्त्रो मे है।

श्रीरामकृष्ण – उन लोगो ने ज्ञानी होकर भक्त का 'मै' रख छोड़ा था। तुमने भागवत नही पढ़ा?

पण्डितजी – कुछ पढ़ा है, सब नही।

श्रीरामकृष्ण – प्रार्थना करो। वे दयामय हैं। क्या वे भक्त की बात न सुनेगे? वे कल्पतरु है। उनके पास पहुँचकर जो जो प्रार्थना करेगा, वह वही पायेगा।

पण्डितजी – मैने यह सब इतना नही सोचा। अब सब ममझ रहा हूं।

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्मज्ञान के बाद भी ईश्वर कुछ 'मै' रख देते है। वह 'मै' भक्त का 'मै' है – विद्या का 'मै'। उससे इस अनन्त लीला का स्वाद मिलता है। मूसल सब घिस गया था, थोड़ा-सा रह गया था। बेत के वन मे गिरकर उसने कुल का कुल नष्ट कर दिया – यदुवंश का इसी तरह ध्वंस हुआ। उसी तरह विज्ञानी भक्त का 'मै' – विद्या का 'मै' रखते है – लोक-शिक्षण के लिए।

"ऋषि डरपोक थे। उनका यह भाव था कि किसी तरह पार हो जायँ, फिर कौन आता है? सड़ी लकड़ो किसी तरह खुद तो बह जाती है, परन्तु उसपर अगर एक पक्षी भी बैठ जाय तो वह डूब जाती है। नारदादि बहादुर लकड़ी है, खुद भी बहते जाते है और कितने ही जीवों को भी साथ ले जाते है। स्टीम बोट (जहाज) खुद भी पार हो जाता है और दूसरो को भी पार कर देता है।

"नारदादि आचार्य विज्ञानी है – दूसरे ऋषियो की अपेक्षा साहसी है। जैसे पक्का खिलाड़ी, जैसा चाहता है, वैसे ही पासे पड़ते हैं – प्रत्येक बार बिलकुल ठीक! पाँच कहो, पॉच पड़े, छ: कहो छ: – नारदादि ऐसे खिलाड़ी है। वह अपनी शान में, रह रहकर, मूछों पर ताव देता रहता है।

"जो सिर्फ ज्ञानी हैं, उन्हे डर लगा रहता है। जैसे शतरंज खेलते समय कच्चे खिलाड़ी सोचते हैं, किसी तरह गोटी उठ जाय तो जी बचे। विज्ञानी को किसी बात का डर नही है। उसने साकार और निराकार दोनों को देखा है। ईश्वर के साथ उसने बातचीत की है – ईश्वर का आनन्द पाया है – उनका स्मरण करते हुए अगर उसका मन अखण्ड सच्चिदानन्द में लीन हो जाता है, तो भी उसे आनन्द है, और अगर मन लीन न हो तो लीला में रखकर भी आनन्द पाता है।

"जो केवल ज्ञानी है, वह एक ही प्रकार के बहाव में पड़ा रहता है। बस यही सोचता रहता है कि यह नहीं, यह नहीं – यह सब स्वप्नवत् है! मैंने दोनों हाथ ऊपर उठा दिये

हैं, इसलिए मैं सब कुछ लेता हूँ। सुनो, मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूँ।

"एक स्त्री अपनी एक पहचानवाली स्त्री से मिलने गयी जो जुलाहिन थी। यह जुलाहिन उस समय सूत कात रही थी – कितनेही तरह के रेशम के सूत। अपनी साथिन को देखकर उसे बड़ी खुशी हुई। उसने कहा आओ तुम्हारा स्वागत है, मुझे बड़ा आनन्द हुआ है, तुम जरा बैठो, मैं जाकर तुम्हारे लिए कुछ मिठाई ले आऊँ। और यह कहकर वह बाहर चली गयी। इधर तरह तरह के रंगीन रेशम के सूत देखकर उस स्त्री को लालच हो आया और उसने झट कुछ सूत बगल में छिपा लिया। कुछ समय बाद जुलाहिन मिठाई लेकर वापस आयी और बड़े उत्साह से उस स्त्री को खिलाने लगी, परन्तु थोड़ी ही देर में जब उसकी नजर अपने सूत पर पड़ी तो वह समझ गयी कि इस स्त्री ने मेरा कुछ सूत दबा लिया है। निदान उसने सूत वसूल करने का एक उपाय सोच निकाला।

"उसने कहा, 'सखी! आज तो बहुत दिनों के बाद तुमसे मुलाकात हुई है। आज बड़े आनन्द का दिन है। मेरी बड़ी इच्छा है, आओ हम दोनों आज नाचें।' दूसरी स्त्री ने कहा, 'आनन्द की बात तो कुछ न पूछो। तुम्हारी इच्छा है, तो ठीक ही है।' खैर दोनों स्त्रियाँ नाचने लगीं। पर जुलाहिन ने देखा कि वह स्त्री दोनों हाथ ऊपर उठाकर नहीं नाच रही है। तब उसने कहा, आओ हम लोग दोनों हाथ उठाकर नाचें – आज तो बड़े आनन्द का दिन है, परन्तु दूसरी स्त्री ने एक हाथ ज्यों का त्यों दबाये ही रखा, केवल एक हाथ उठाकर नाची! तब जुलाहिन ने कहा, 'अरे यह क्या, आओ मैं दोनों हाथ उठाये हूँ।' पर दूसरी स्त्री एक बगल दबाकर ही नाचती रही और कहा, भाई जिसे जैसा आता है!"

फिर श्रीरामकृष्ण कहने लगे, "मैं बगल में कुछ दबाता नहीं, मैंने दोनों हाथ उठा दिये हैं, इसलिए मैं नित्य और लीला दोनों को स्वीकार करता हूँ।

"केशव सेन से मैंने कहा, 'मैं' का त्याग बिना किये कुछ होने का नहीं। उसने कहा, तब तो महाराज, दल-बल कुछ रह नहीं जाता। तब मैंने कहा, कच्चे 'मै', दुष्ट 'मैं' को छोड़ने के लिए कहता हूँ। परन्तु पक्के 'मैं' में, ईश्वर के दास 'मैं' में, बालक के 'मैं' में, विद्या के 'मैं' में दोष नहीं। संसारियों का 'मैं' – अविद्या का 'मैं', कच्चा 'मैं' है; यह मोटी लाठी की तरह है। सच्चिदानन्द-सागर के पानी को वही लाठी दो भागों में बाँट रही है। परन्तु ईश्वर का दास 'मैं', बालक का 'मैं' या विद्या का 'मैं' पानी के ऊपर की पानी की रेखा की तरह है। पानी एक है; साफ नजर आ रहा है, केवल बीच में एक रेखा खिंची हुई, मानो पानी के दो भाग कर रही है। वस्तुतः पानी एक है – साफ दीख पड़ रहा है। शंकराचार्य ने विद्या का 'मैं' रखा था – लोकशिक्षा के लिए।

"ब्रह्मज्ञान के हो जाने पर भी वे अनेकों में विद्या का 'मैं' – भक्त का 'मैं' रख देते हैं। हनुमान साकार और निराकार के दर्शन करने के बाद सेव्य-सेवक का भाव लेकर, भक्त का भाव लेकर रहते थे। उन्होंने श्रीरामचन्द्र से कहा था, 'राम, कभी सोचता हूँ तुम

पूर्ण हो और मै अंश हूँ; कभी सोचता हूँ, तुम सेव्य हो और मैं सेवक हूँ; और राम! जब तत्त्वज्ञान होता है तब देखता हूँ, तुम्हीं 'मैं' हो, मैं ही 'तुम' हूँ।'

"कृष्ण के विरह से विकल होकर यशोदा राधिका के पास गयी। उनका कष्ट देखकर राधिका उनसे अपने स्वरूप मे मिली और कहा, 'श्रीकृष्ण चिदात्मा हैं और मैं चित्‌शक्ति। माँ, तुम मेरे पास वर माँगो।' यशोदा ने कहा, 'माँ! मुझे ब्रह्मज्ञान नहीं चाहिए, बस यही वरदान दो कि गोपाल के रूप के सदा दर्शन होते रहें, कृष्ण-भक्तों का सदा संग मिलता रहे। भक्तों की मै सेवा करूँ और उनके नाम-गुणों का कीर्तन करूँ।'

"गोपियो की इच्छा हुई थी कि भगवान के ईश्वरी रूप का दर्शन करें। कृष्ण ने उन्हें यमुना में डुबकी लगाने के लिए कहा। डुबकी लगाते ही सब वैकुण्ठ जा पहुँची। वहाँ भगवान के उस षडैश्वर्यपूर्ण रूप के दर्शन तो हुए, परन्तु वह उन्हें अच्छा न लगा। तब कृष्ण से उन लोगों ने कहा, 'हमारे लिए गोपाल के दर्शन, गोपाल की सेवा, बस यही रहे; हम और कुछ नही चाहतीं।'

"मथुरा जाने से पहले कृष्ण ने उन्हें ब्रह्मज्ञान देने का प्रयत्न किया था। कहला भेजा था, 'मैं सर्व भूतो के अन्तर में भी हूँ और बाहर भी। तुम लोग क्या एक ही रूप मे देख रही हो?' गोपियों ने कहा, 'कृष्ण हम लोगो को छोड़ जायेंगे, इसलिए ब्रह्मज्ञान का उपदेश भेजा है?'

"जानते हो गोपियों का भाव कैसा है? 'हम राधा की – राधा हमारी।' "

एक भक्त – यह भक्त का 'मैं' क्या कभी नहीं जाता?

श्रीरामकृष्ण – वह 'मै' कभी कभी चला जाता है। तब ब्रह्मज्ञान होता है, समाधि होती है। मेरा भी चला जाता है, परन्तु सब समय नही। सा, रे, ग, म, प, ध, नि; परन्तु 'नि' में अधिक देर तक नही रहा जाता। फिर नीचे के पदो में उतर आना पड़ना है। मै कहता हूँ, माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान न देना। पहले-पहल साकारवादी खूब आते थे। इसके बाद आजकल के निराकारवादी ब्राह्म समाजियों का धावा होने लगा। तब प्राय: उसी तरह मैं बेहोश होकर समाधिमग्न हो जाया करता था। और होश में आने पर कहता था, माँ, मुझे ब्रह्मज्ञान न देना।

पण्डितजी – हमारे कहने से क्या वे सुनेंगे?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर कल्पतरु हैं। भक्त जो कुछ चाहेगा, वही पायेगा। परन्तु कल्पतरु के पास पहुँचकर माँगना पड़ता है, तब कामना पूरी होती है।

"परन्तु एक बात है। वे भावग्राही हैं। जो जो कुछ सोचता है, साधना करने पर वह वैसा ही पाता है। जैसा भाव होता है, वैसा ही लाभ भी होता है, कोई बाजीगर राजा के सामने तमाशा दिखा रहा था। कहता था, 'महाराज, रुपया दीजो – कपड़े दीजो' यही सब। इसी समय उसकी जीभ ऊपर तालु में चढ़ गयी। साथ ही कुंभक हो गया। बस जबान

बन्द हो गयी, शरीर बिलकुल स्थिर हो गया। तब लोगों ने ईंट की कब्र बनाकर उसी में उसे गाड़ रखा। किसी ने हजार साल बाद उस कब्र को खोदा। तब लोगों ने देखा, एक आदमी समाधिमग्न बैठा हुआ था। उसे साधु समझकर वे लोग उसकी पूजा करने लगे, इतने में ही हिलाने-डुलाने के कारण उसकी जीभ तालु से हट गयी। तब उसे होश हुआ और वह चिल्लाता हुआ कहने लगा, 'देखी मेरी कलाबाजी, महाराज, रुपया दीजो – कपड़े दीजो!'

"मैं रोता था और कहता था, माँ, मेरी विचार-बुद्धि पर वज्रपात हो।"

पण्डितजी – तो कहिये आप में भी विचार-बुद्धि थी?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, एक समय थी।

पण्डितजी – तो बतलाइये जिस तरह हम लोगोंकी भी दूर हो जाय। आपकी किस तरह गयी?

श्रीरामकृष्ण – ऐसे ही एक तरह चली गयी।

(४)

ईश्वर-दर्शन जीवन का उद्देश्य है - उपाय व्याकुलता

श्रीरामकृष्ण कुछ देर चुपचाप बैठे रहकर फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर कल्पतरु हैं। उनके पास पहुँचकर माँगना चाहिए। तब जो जो कुछ चाहता है, वही पाता है।

"ईश्वर ने न जाने क्या क्या बनाये हैं। उनके असंख्य ब्रह्माण्ड हैं, उनके अनन्त ऐश्वर्य के ज्ञान से हमें क्या जरूरत है? और अगर जानने की इच्छा हो, तो पहले उन्हें प्राप्त करना चाहिए, फिर वे स्वयं ही समझा देंगे। यदु मल्लिक के कितने मकान हैं, कम्पनी के कितने कागज हैं, इन सब बातों के जानने से हमें क्या मतलब? हमारा काम है किसी तरह बाबू से मुलाकात करना। इसके लिए खाई पर से कुदकर जाना हो या प्रार्थना करके अथवा दरवान के धक्के सहकर, हमें उन तक पहुँचना ही चाहिए। मुलाकात हो जाने पर उनके क्या क्या हैं, एक बार पूछने से बाबू खुद ही सब बतला देंगे और बाबू से मुलाकात हो जाने पर उनके कर्मचारी भी मानने लगते हैं। (सब हँसते हैं।)

"कोई कोई ऐश्वर्य को जानना नहीं चाहते। वे कहते हैं, कलवार की दूकान में कितने मन शराब है, इसे जानकर हम क्या करेंगे? हमारा काम तो बस एक ही बोतल से निकल जाता है। ऐश्वर्य का ज्ञान क्या करेगा लेकर? जितनी शराब पी है, उतनी ही में होश दुरुस्त नहीं है।

"भक्तियोग, ज्ञानयोग – ये ही सब मार्ग हैं, चाहे जिस रास्ते से होकर जाओ, उन्हें पाओगे। भक्ति का मार्ग सीधा है। ज्ञान और विचार का मार्ग विपत्तियों से भरा हुआ है।

"कौनसा रास्ता अच्छा है, इसके अधिक विचार की क्या आवश्यकता है? विजय के साथ बहुत दिनों तक बातचीत हुई थी। विजय से मैंने कहा, एक आदमी प्रार्थना करता था, 'हे ईश्वर, तुम क्या हो, कैसे हो, मुझे बता दो, मुझे दर्शन दो।'

"ज्ञान-विचार का मार्ग पार करना कठिन है। पार्वतीजी ने पर्वतराज को अपने अनेक ईश्वरी रूप दिखाकर कहा, 'पिताजी, अगर ब्रह्मज्ञान चाहते हो तो साधुओं का संग करो।'

"शब्दों द्वारा ब्रह्म की व्याख्या नहीं की जा सकती। रामगीता में इस बात का निर्देश है कि शास्त्रों में ब्रह्म का केवल संकेत किया गया है – केवल उनके लक्षणों की ओर इशारा किया गया है; उदाहरणार्थ, यदि कोई यह कहे कि 'गंगा पर का ग्वालों का गाँव' तो उसका संकेत यही होता है कि वह गॉव गंगा के 'तट' पर स्थित है।

"निराकार ब्रह्मसाक्षात्कार क्यों नही होगा? पथ बड़ा कठिन है अवश्य। विषय-बुद्धि का लेशमात्र रहते नहीं होता। इन्द्रियो के जितने विषय हैं, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द इन सब का त्याग हो जाने पर, मन का लय हो जाने पर फिर कहीं ऊसका हृदय मे प्रत्यक्ष अनुभव होता है, और फिर भी इससे इतना भी समझ में आता है कि ब्रह्म है – केवल 'अस्ति' का ज्ञान।"

पण्डितजी – 'अस्तीत्येवोपलब्धव्य:' इत्यादि।

श्रीरामकृष्ण – उन्हें पाने की अगर किसी को इच्छा हो तो किसी एक भाव का आश्रय लेना पड़ता है, वीरभाव, सखीभाव, दासीभाव या सन्तानभाव।

मणिमल्लिक – हाँ, तभी दृढ़ता होगी।

श्रीरामकृष्ण – मैं सखीभाव में बहुत दिन था। कहता था, 'मै आनन्दमयी, ब्रह्ममयी की दासी हूँ।'

"हे दासियो, मुझे भी दासी बना लो, मैं गर्वपूर्वक कहता जाऊँगा कि मै ब्रह्ममयी की दासी हूँ।'

"किसी किसी को बिना साधना के ही ईश्वर मिल जाते है। उन्हें नित्यसिद्ध कहते हैं। जिन लोगों ने जप-तपादि साधनों द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया है, उन्हें साधनसिद्ध कहते हैं – और कोई कोई कृपासिद्ध भी होते हैं। जैसे हजार साल का अँधेरा घर, दिया ले जाओ तो उसी क्षण वहाँ उजाला हो जाता है।

"एक है वे, जो एकाएक सिद्ध हो जाते हैं, जैसे किसी गरीब का लड़का बड़े आदमी की दृष्टि में पड़ जाय। बाबू ने उसके साथ अपनी लड़की ब्याह दी, साथ ही उसे घर-द्वार, घोड़ेगाड़ी, दास-दासियाँ, सब कुछ मिल गया।

"एक और हैं स्वप्नसिद्ध। वे स्वप्न में दर्शन पाकर सिद्ध हो जाते हैं।"

सुरेन्द्र – (सहास्य) – तो हम लोग अभी खर्राटे लें, बाद में बाबू हो जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण – (सस्नेह) – तुम बाबू तो हो ही। 'क' में आकार लगाने से 'का'

होता है, उस पर एक और आकार लगाना वृथा है। 'का' का 'का' ही रहेगा। (सब हँसते हैं।)

"नित्यसिद्ध की एक अलग ही श्रेणी है, जैसे 'अरणि' काठ, जरासा रगड़ने से ही आग पैदा हो जाती है, और न रगड़ने से भी होती है। नित्यसिद्ध थोड़ीसी साधना करने पर ही ईश्वर को पा जाता है और साधना न करने पर भी पाता है।

"हाँ, नित्यसिद्ध ईश्वर को पा लेने पर साधना करते हैं। जैसे कुम्हड़े का पौधा, पहले उसमें फल लगता है, तब ऊपर फूल होता है।"

कुम्हड़े के पौधे में फल पहले होते हैं, फिर फूल, यह सुनकर पण्डितजी हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – और नित्यसिद्ध होमा पक्षी की तरह हैं। उसकी माँ आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है। अण्डे देने पर गिरते हुए अण्डे फूट जाते हैं और फिर बच्चे भी गिरते रहते हैं। गिरते गिरते ही उनके पर निकल आते और आँखें खुल जाती हैं; परन्तु जमीन पर गिरकर कहीं चोट न लग जाय, इस ख्याल से वे फिर सीधे ऊँचे की ओर अपनी माँ के पास उड़ने लगते हैं। माँ कहाँ है, बस यही धुन रहती है। देखो न, 'क' लिखते हुए प्रह्लाद की आँखों से अश्रुधारा बह चली थी।

पण्डितजी का विनयभाव देखकर श्रीरामकृष्ण बड़े सन्तुष्ट हुए हैं। वे पण्डितजी के स्वभाव के सम्बन्ध में भक्तों से कह रहे हैं –

"इनका स्वभाव बड़ा अच्छा है। मिट्टी की दीवार में कीला गाड़ते हुए कोई तकलीफ नहीं होती। पत्थर में कील की नोंक चाहे टूट जाय पर पत्थर का कुछ नहीं होता। ऐसे भी आदमी हैं, जो लाख ईश्वर की चर्चा सुनें, पर उन्हें चेतना किसी तरह नहीं होती। जैसे घड़ियाल, देह पर तलवार भी चोट नहीं कर सकती।"

पण्डितजी – घड़ियाल के पेट में बरछी मारने से मतलब सिद्ध हो जाता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – सब शास्त्रों के पाठ से क्या होगा – फिलॉसफी (Philosophy) पढ़कर क्या होगा? लम्बी लम्बी बातों से क्या होता है? धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करनी हो तो पहले केले के पेड़ पर निशाना साधना चाहिए, फिर नरईत के पौधे पर, फिर जलती हुई दीपक की बत्ती पर – फिर उड़ती हुई चिड़िया पर।

"इसीलिए पहले साकार में मन स्थिर करना चाहिए।

"और त्रिगुणातीत भक्त भी हैं – नित्यभक्त जैसे नारदादि। उस भक्ति में श्याम भी चिन्मय है, धाम भी चिन्मय है, और भक्त भी चिन्मय है। ईश्वर, उनका धाम तथा भक्त, सभी नित्य हैं।

"जो लोग 'नेति-नेति' के द्वारा ज्ञानपूर्वक विचार कर रहे हैं, वे अवतार नहीं मानते।

हाजरा सच कहता है, भक्तों के लिए ही अवतार है, वह ज्ञानियों के लिए नही – वे सोऽहं जो बने हैं!"

श्रीरामकृष्ण और सारी भक्तमण्डली चुपचाप बैठी है। पण्डितजी बातचीत करने लगे।

पण्डितजी – अच्छा, यह निष्ठुर भाव किस तरह दूर हो? हास्य देखता हूँ तो मांसपेशियों (Muscles) की, स्नायुओ (Nerves) की याद आती है। शोक देखता हूँ तो एक स्नायविक क्रिया (Nervous System) की उत्तेजना जान पड़ती है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – यही बात नारायण शास्त्री भी कहता था, शास्त्र पढ़ने का यह दोष है कि वह तर्क और विचार मे डाल देता है।

पण्डितजी – क्या कोई उपाय नही है?

श्रीरामकृष्ण – है, विवेक। एक गाना है, उसमे कहा है कि उसके विवेक नाम के लड़के से तत्त्व की बाते पूछना।

"विवेक, वैराग्य, ईश्वर पर अनुराग, ये ही सब उपाय है। विवेक के हुए बिना बात कभी पूरी नही उतरती। पण्डित सामाध्यायी ने बहुत कुछ व्याख्या के बाद कहा, ईश्वर नीरस है। एक ने कहा था, मेरे मामा के यहाँ एक गोशाले भर घोड़े है। गोशाले मे भी कही घोड़े रहते है!

(सहास्य) "तुम तो गुलाबजामुन बन रहे हो। अभी कुछ दिन रस मे पड़े रहो, इससे तुम्हारे लिए भी अच्छा है और दूसरो के लिए भी। बस दो-चार दिन के लिए रहो।"

पण्डितजी – (मुस्कराकर) – गुलाबजामुन जलकर खंगार हो गया है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – नही नही, अच्छा पका है, उसी की लाली है।

हाजरा – अच्छा भूना गया है, अभी रस और खींचेगा।

श्रीरामकृष्ण – बात यह है कि अधिक शास्त्र पढ़ने की जरूरत नही है। ज्यादा पढ़ने पर तर्क और विचार आ जाते है। न्यांगटा मुझे सिखलाता था – उपदेश देता था – गीता का दस बार उच्चारण करने से जो फल होता है, वही गीता का सार है। – अर्थात् दस बार 'गीता-गीता' कहने से तागी-तागी (त्यागी-त्यागी) निकलता है।

"उपाय विवेक और वैराग्य है, और ईश्वर पर अनुराग। पर कैसा अनुराग? ईश्वर के लिए जो व्याकुल हो रहा है – जैसी व्याकुलता के साथ बछड़े के पीछे गौ दौड़ती है।"

पण्डितजी – वेदों में बिलकुल ऐसा ही है। गौ जैसे बछड़े को पुकारती है, तुम्हें हम उसी तरह पुकारते हैं।

श्रीरामकृष्ण – व्याकुलता के साथ रोओ। और विवेक-वैराग्य प्राप्त करके अगर कोई सर्वस्व का त्याग कर सके तो उनका साक्षात्कार हो सकता है।

"उस व्याकुलता के आने पर उन्माद की अवस्था हो जाती है, ज्ञानमार्ग में रहो चाहे

भक्तिमार्ग में। दुर्वासा को ज्ञानोन्माद हो गया था।

"संसारियों के ज्ञान और सर्वत्यागियों के ज्ञान में बड़ा अन्तर है। संसारियों का ज्ञान दीपक के प्रकाश के समान है, उससे घर के भीतर के अंश में ही उजाला होता है, उसके द्वारा अपनी देह, घर के काम, इनके अतिरिक्त और कुछ नहीं समझा जा सकता। सर्वत्यागी का ज्ञान सूर्य के प्रकाश की भाँति है। उस प्रकाश से घर का भीतर और बाहर सब प्रकाशित हो जाता है, सब देख लिया जाता है। चैतन्य देव का ज्ञान सौर-ज्ञान था – ज्ञानसूर्य का प्रकाश था। और उनके भीतर भक्तिचन्द्र की ठण्डी किरणें भी थीं। ब्रह्मज्ञान और भक्ति-प्रेम, दोनों थे।

"अभावमुख चैतन्य और भावमुख चैतन्य। भाव-भक्ति का एक मार्ग है और अभाव (नेति नेति ज्ञान-विचार) का भी एक दूसरा। तुम अभाव की बात कह रहे हो, परन्तु वह बड़ा कठिन है। कहा है, वह जगह ऐसी है कि वहाँ गुरु और शिष्य में भी मुलाकात नहीं होती। जनक के पास शुकदेव ब्रह्मज्ञान के उपदेश के लिए गये। जनक ने कहा, पहले दक्षिणा दे दो, तुम्हें ब्रह्मज्ञान हो जाने पर फिर तुम दक्षिणा थोड़े ही दोगे, क्योंकि तब गुरु और शिष्य में भेद ही नहीं रह जाता।

"भाव और अभाव सभी रास्ते हैं। मत जैसे अनन्त हैं वैसे ही पथ अनन्त हैं। परन्तु एक बात है। कलिकाल के लिए नारदीय भक्ति का ही विधान माना जाता है। इस मार्ग में पहले है भक्ति, भक्ति के पक जाने पर है भाव, भाव से उच्च है महाभाव। और प्रेम सभी जीवों को नहीं होता। यह जिसे हुआ है वह वस्तुलाभ कर चुका है।"

पण्डितजी – धर्म की व्याख्या करनी है, तो बहुतसी बातें कहकर समझाना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – तुम अनावश्यक बातें छोड़कर कहा करो।

(५)

ब्रह्म शक्ति अभेद। सर्वधर्मसमन्वय

श्रीयुत मणि मल्लिक के साथ पण्डितजी बातचीत कर रहे हैं। मणि मल्लिक ब्राह्मसमाजी हैं। ब्राह्मसमाज के दोषों और गुणों पर घोर तर्क कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपनी छोटी खाट पर बैठे हुए सब सुन रहे है और फिर हँस रहे हैं। कभी कभी कह रहे हैं – यह सत्त्व का तम है, वीरों का भाव है, यह सब चाहिए। अन्याय और असत्य देखकर चुप न रहना चाहिए। सोचो कि व्यभिचारणी स्त्री परमार्थ बिगाड़ने के लिए आ रही है, उस समय ऐसा ही वीरभाव चाहिए। तब कहना चाहिए, 'क्यों री, मेरा परलोक बरबाद करने चली है? अभी तुझे काट डालूँगा।'

फिर हँसकर कह रहे हैं – "मणि मल्लिक का ब्राह्मसमाजी मत बहुत दिनों से है।

उसके भीतर तुम अपना मत घुसेड़ने की कोशिश न करो। पुराने संस्कार कभी एकाएक छूट सकते है? एक हिन्दू बड़ा भक्त था। सदा जगदम्बा की पूजा करता और उनका नाम लेता था। जब मुसलमानो का राज्य हुआ, तब उसे पकड़कर मुसलमानो ने मुसलमान बना लिया और कहा अब तू मुसलमान हो गया। अब अल्ला का नाम ले, अल्ला का नाम जपा कर। वह आदमी बड़े कष्ट से 'अल्ला-अल्ला' कहने लगा, परन्तु फिर भी कभी-कभी 'जगदम्बा' का नाम निकल ही पड़ता था। तब मुसलमान उसे मारने दौड़ते। वह कहता था, 'दोहाई – शेखजी, मुझे मारना नही, मै तुम्हारे अल्ला का नाम लेने की बड़ी कोशिश कर रहा हूँ, परन्तु करूँ क्या, भीतर जगदम्बा जो समायी हुई है, तुम्हारे अल्ला को धक्के मारकर निकाल देती है।' (सब हँसते है।)

(पण्डितजी से हँसते हुए) "मणि मल्लिक से कुछ कहना मत।

"बात यह है कि रुचि-भेद है, जिसके पेट मे जो कुछ फायदा पहुँचाये। अनेक धर्म और अनेक मतो की सृष्टि उन्होंने अधिकारी विशेष के लिए की है। सभी आदमी ब्रह्मज्ञान के अधिकारी नही होते। और यही सोचकर उन्होने साकार-पूजन की व्यवस्था की है। प्रकृति सब की अलग अलग होती है और फिर अधिकार-भेद भी है।"

सब लोग चुप है। श्रीरामकृष्ण पण्डितजी से कह रहे है, अब जाओ, देवताओ के दर्शन करो और बगीचा घूमकर देख लो।

दिन के पॉच बजे होंगे। पण्डितजी और उनके मित्र उठे। ठाकुरबाड़ी देखने जायेंगे। उनके साथ कोई-कोई भक्त भी गये। कुछ देर बाद मास्टर के साथ टहलते हुए श्रीरामकृष्ण भी गंगाजी के किनारे नहाने के घाट की ओर जा रहे है। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे है, बाबूराम अब कहता है, लिखना-पढ़कर क्या होगा?

गंगा के तट पर पण्डितजी के साथ श्रीरामकृष्ण की फिर भेट हुई। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, 'काली के दर्शन करने नही गये? – मै तो इसीलिए आया हूँ।' पण्डितजी ने कहा, जी हॉ, चलिये, दर्शन करे।

श्रीरामकृष्ण के चेहरे पर प्रसन्नता की झलक है। ऑगन के भीतर से काली-मन्दिर जाते हुए कह रहे है, एक गाना है। यह कहकर मधुर कण्ठ मे गा रहे है –

"मेरी मॉ काली थोडे ही है? वह दिगम्बरा मूर्ति काले रूप से ही हृदयपद्म को प्रकाशित कर देती है ...।"

चॉदनी से ऑगन मे आकर फिर कह रहे है – घर मे ज्ञानाग्नि प्रज्वलित करके ब्रह्ममयी का स्वरूप देखो।

मन्दिर मे आकर श्रीरामकृष्ण ने काली को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। माता के श्रीचरणो पर जवापुष्प तथा बिल्वदल शोभा दे रहे थे। त्रिनेत्रा भक्तो को स्नेह की दृष्टि से देख रही है। हाथो मे वर और अभय है। माता बनारसी साड़ी और भॉतिभॉति के अलंकार

पहने हुए हैं। श्रीमूर्ति के दर्शन कर भूधर के बड़े भाई ने कहा, 'मैं वह कुछ नहीं जानता। इतना ही जानता हूँ कि यह तो चिन्मयी है।'

ईश्वरलाभ और कर्मत्याग। नयी हण्डी

श्रीरामकृष्ण अब लौट रहे हैं। बाबूराम को उन्होंने बुलाया। मास्टर भी साथ हो लिये।

शाम हो गयी है। घर के पश्चिमवाले गोल बरामदे में आकर श्रीरामकृष्ण बैठ गये। भावस्थ है, अवस्था अर्ध-बाह्य है। पास ही बाबूराम और मास्टर हैं।

आजकल श्रीरामकृष्ण की सेवा ठीक से नहीं होती। उन्हें तकलीफ रहती है। आजकल राखाल नही रहते। कोई कोई हैं, परन्तु वे, श्रीरामकृष्ण को उनकी सभी अवस्थाओं में छू नहीं सकते। श्रीरामकृष्ण भावावस्था में कह रहे हैं – 'छू – ना-ग-छू-' अर्थात् 'इस अवस्था में और किसी को छूने नहीं दे सकता। तू रहे तो अच्छा हो।'

पण्डितजी देवताओं के दर्शन करके श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण पश्चिम के गोल बरामदे से कह रहे है, तुम कुछ जलपान कर लो। पण्डितजी ने कहा, अभी मुझे सन्ध्या करनी हैं। श्रीरामकृष्ण भावावेश में मस्त होकर गाने लगे और उठकर खड़े हो गये।

"गया, गंगा, प्रभास, काशी, कांची, यह सब कौन चाहता है – अगर काली का स्मरण करता हुआ वह अपनी देह त्याग सके? त्रिसन्ध्या की बात लोग कहते हैं, परन्तु वह यह कुछ नहीं चाहता। सन्ध्या खुद उसकी खोज में फिरती रहती है, परन्तु सन्धि कभी नहीं पाती। पूजा, होम, जप और यज्ञ, किसी पर उसका मन लगता ही नही।"

श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त होकर कह रहे हैं, सन्ध्या कितने दिन के लिए है? – जब तक ॐ कहते हुए मन लीन न हो जाय।

पण्डितजी – तो जलपान कर लेता हूँ, उसके बाद सन्ध्या करूँगा।

श्रीरामकृष्ण – मैं तुम्हारे बहाव को न रोकूँगा। समय के बिना आये त्याग अच्छा नहीं है। फल बड़ा हो जाता है, तब फूल आप झर जाता है। कच्चीं अवस्था में नारियल का पत्ता खींचना न चाहिए। इस तरह तोड़ने से पेड़ खराब हो जाता है।

सुरेन्द्र घर जाने के लिए तैयार हैं। मित्रों को अपनी गाड़ी पर ले जाने के लिए बुला रहे हैं।

सुरेन्द्र – महेन्द्र बाबू चलियेगा?

श्रीरामकृष्ण की अब भी भावावस्था है। अभी तक पूरी प्राकृत अवस्था नहीं आयी। वे उसी अवस्था में सुरेन्द्र से कह रहे हैं – 'तुम्हारा घोड़ा जितना खींच सके, उससे अधिक लोगों को न बैठाना।' सुरेन्द्र प्रणाम करके चले गये।

पण्डितजी सन्ध्या करने गये। मास्टर और बाबूराम कलकत्ता जायेंगे, श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – बात नहीं निकलती, जरा ठहरो अभी।

मास्टर बैठे। श्रीरामकृष्ण की क्या आज्ञा होती है, इसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने इशारे से बाबूराम से बैठने के लिए कहा। बाबूराम ने मास्टर से कहा, जरा देर और बैठिये। श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम से हवा करने के लिए कहा। बाबूराम पंखा झल रहे हैं, और मास्टर भी।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से, सस्नेह) – तुम अब उतना नहीं आते, क्यों?

मास्टर – जी, कोई खास कारण नही है। घर में काम था।

श्रीरामकृष्ण – बाबूराम का घर कहाँ है, यह मैं कल समझा। इसीलिए तो इसे रखने की इतनी कोशिश कर रहा हूँ। चिड़िया समय समझकर अण्डे फोड़ती है। बात यह है कि ये सब शुद्धात्मा लड़के हैं, कभी कामिनी और कांचन में नहीं पड़े। है न?

मास्टर – जी हाँ। अभी तक कोई धक्का नहीं लगा।

श्रीरामकृष्ण – नयी हण्डी है, दूध रखा जाय तो बिगड़ नही सकता।

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – बाबूराम के यहाँ रहने की जरूरत भी है। कभी कभी मेरी अवस्था ऐसी हो जाती है कि उस समय ऐसे आदमियों का रहना जरूरी हो जाता है। उसने कहा है, धीरे धीरे रहूँगा, नहीं तो घरवाले शोरगुल मचायेंगे। मैंने कहा है, शनिवार और रविवार को आ जाया कर।

इधर पण्डितजी सन्ध्या करके आ गये। उनके साथ भूधर और बड़े भाई भी थे। पण्डितजी अब जलपान करेंगे।

भूधर के बड़े भाई कह रहे हैं, हम लोगों का क्या होगा, जरा कुछ आज्ञा कर दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग मुमुक्षु हो। व्याकुलता के होने से ईश्वर मिलते हैं। श्राद्ध का अन्न न खाया करो। संसार में व्यभिचारिणी स्त्री की तरह होकर रहो। व्यभिचारिणी स्त्री घर का सब काम बड़ी प्रसन्नता से करती है, परन्तु उसका मन दिन-रात उसके यार के साथ रहता है। संसार का काम करो, परन्तु मन ईश्वर पर रखो।

पण्डितजी जलपान कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, आसन पर बैठकर खाओ।

उन्होंने पण्डितजी से फिर कहा, 'तुमने गीता पढ़ी होगी। जिसे सब लोग मानें उसमें ईश्वर की विशेष शक्ति है।'

पण्डितजी – "यद्यत् विभूतिमत् सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।"

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे भीतर अवश्य ही उनकी शक्ति है।

पण्डितजी – जो व्रत मैंने लिया है, क्या इसे अध्यवसाय के साथ पूरा करने की कोशिश करूँ?

श्रीरामकृष्ण ने जैसे अनुरोध की रक्षा के लिए कहा, 'हाँ होगा,' परन्तु इस बात को दबाने के लिए दूसरा प्रसंग उठा दिया।

श्रीरामकृष्ण – शक्ति को मानना चाहिए। विद्यासागर ने कहा, क्या उन्होंने किसी को ज्यादा शक्ति भी दी है? मैंने कहा, नहीं तो फिर एक आदमी सौ आदमियों को कैसे मार डालता है? क्वीन विक्टोरिया का इतना मान – इतना नाम क्यों है अगर उनमें शक्ति न होती? मैंने पूछा, तुम यह मानते हो या नहीं? तब उसने कहा, हाँ, मानता हूँ।

पण्डितजी उठे और श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। साथवाले उनके मित्रों ने भी प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण कहते हैं – "फिर आना। गंजेड़ी गंजेड़ी को देखता है, तो खुश होता है; कभी तो उसे गले से लगा लेता है। दूसरे आदमी देखकर मुँह छिपाते हैं। गाय अपने साथ की गायों को देखती है तो उनकी देह चाटती है, पर दूसरी गायों को सिर से ठोकर मारती है।" (सब हँसते हैं।)

पण्डितजी के चले जाने पर श्रीरामकृष्ण हँस हँसकर कह रहे हैं – "डाइल्यूट (Dilute = मुग्ध) हो गया है, एक ही दिन में। देखा, कैसा विनय-भाव है, और सब बातें समझकर ग्रहण कर लेता है।"

आषाढ़ की शुक्ला सप्तमी है। पश्चिमवाले बरामदे में चाँदनी छिटक रही है। श्रीरामकृष्ण अब भी वहीं बैठे हैं। मास्टर प्रणाम कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्वक पूछ रहे हैं, क्या जाओगे?

मास्टर – जी हाँ, अब चलता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – एक दिन मैंने सोचा कि सब के यहाँ एक-एक बार जाऊँगा – क्यों?

मास्टर – जी हाँ, बड़ी कृपा होगी।

□□□

परिच्छेद ८६

साधना की आवश्यकता

(१)

पुनर्यात्रा दिन

श्रीरामकृष्ण बलराम बाबू के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। श्रीमुख पर प्रसन्नता झलक रही है, भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

आज रथ की पुनर्यात्रा है, दिन बृहस्पति है, ३ जुलाई १८८४, आषाढ़ की शुक्ला दशमी। श्रीयुत बलराम के यहाँ जगन्नाथजी की सेवा होती है, एक छोटा सा रथ भी है। उन्होंने पुनर्यात्रा के उपलक्ष्य में श्रीरामकृष्ण को निमन्त्रण भेजा था। यहाँ छोटा रथ, घर के बाहरवाले दुमंजले बरामदे में चलाया जाता है।

गत २५ जून बुधवार को रथयात्रा का प्रथम दिन था। श्रीरामकृष्ण ने श्रीयुत ईशान मुखोपाध्याय के यहाँ आकर निमन्त्रण स्वीकार किया था। उसी दिन पिछले पहर कालेज स्ट्रीट में भूधर के यहाँ पण्डित शशधर के साथ उनकी पहली मुलाकात हुई थी। तीन दिन की बात है, दक्षिणेश्वर में शशधर श्रीरामकृष्ण से मिले थे।

श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पाकर बलराम ने आज शशधर को न्योता भेजा है। पण्डितजी हिन्दूधर्म की व्याख्या करके लोगों को शिक्षा देते हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ बातचीत कर रहे हैं। पास ही राम, मास्टर, बलराम, मनोमोहन, कई बालक भक्त, बलराम के पिता आदि बैठे हैं। बलराम के पिता वैष्णव हैं, बड़े निष्ठावान हैं। वे प्रायः वृन्दावन में अपने ही प्रतिष्ठित कुंज में अकेले रहते हैं और श्रीश्यामसुन्दर विग्रह की सेवा करते हैं। वृन्दावन में वे अपना सारा समय देवसेवा में ही लगाते हैं। कभी कभी चैतन्य-चरितामृत आदि भक्तिग्रन्थों का पाठ करते हैं। कभी किसी भक्तिग्रन्थ की दूसरी लिपि उतारते हैं। कभी बैठे हुए स्वयं ही फूलों की माला तैयार करते हैं। कभी वैष्णवों का निमन्त्रण करके उनकी सेवा करते हैं। श्रीरामकृष्ण के दर्शन करने के लिए बलराम ने उन्हें पत्र पर पत्र भेजकर कलकत्ता बुलाया है। 'सभी धर्मों में साम्प्रदायिक भाव है, खासकर वैष्णवों में। दूसरे मत वाले एक दूसरे से विरोध करते हैं, वे समन्वय करना नहीं जानते।' – यही बात श्रीरामकृष्ण भक्तों से कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (बलराम के पिता और दूसरे भक्तों से) – वैष्णवों का एक ग्रन्थ है भक्तमाल, बड़ी अच्छी पुस्तक है। भक्तों की सब बातें उसमें हैं। परन्तु एक ही ढर्रे की है। एक जगह भगवती को विष्णुमन्त्र दिलाया है, तब पिण्ड छोड़ा है!

"मैंने वैष्णचरण की बड़ी तारीफ करके सेजो बाबू के पास बुलवाया था। सेजो बाबू ने खूब खातिर की। चाँदी के बर्तन निकालकर उन्हीं में उनको जलपान कराया। फिर जब बातें होने लगीं, तब उसने सेजो बाबू के सामने कह डाला – 'हमारे केशव-मन्त्र के बिना कुछ होने-जाने का नहीं।' सेजो बाबू देवी के उपासक थे। इतना सुनते ही उनका मुँह लाल हो गया। मैंने वैष्णव चरण का हाथ दबा दिया।

"सुना है कि श्रीमद्भागवत जैसे ग्रन्थ में भी इस तरह की बातें हैं। 'केशव का मन्त्र बिना लिये भवसागर के पार जाना कुत्ते की पूँछ पकड़कर महासमुद्र पार करना है।' भिन्न-भिन्न मतवालों ने अपने ही मत को प्रधान बतलाया है।

"शाक्त भी वैष्णवों को छोटा सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। श्रीकृष्ण भव-नदी के नाविक हैं, पार कर देते हैं, इस पर शाक्त लोग कहते है – 'हाँ, यह बिलकुल ठीक है, क्योंकि हमारी माँ राजराजेश्वरी हैं, भला वे कभी खुद आकर पार कर सकती हैं? – कृष्ण को पार करने के लिऐ नौकर रख लिया है।' (सब हँसते हैं।)

"अपने मत पर लोग अहंकार भी कितना करते हैं! उस देश (कामारपुकुर), श्यामबाजार आदि स्थानों में कोरी बहुत हैं। उनमें बहुत से वैष्णव हैं। वे बड़ी लम्बी लम्बी बातें मारते हैं। कहते हैं, 'अरे ये किस विष्णु को मानते हैं – पाता (पालनकर्ता) विष्णु को? – उसे तो हम लोग छुयें भी नहीं! कौन शिव? – हम लोग तो आत्माराम शिव – आत्मारामेश्वर शिव को मानते हैं।' कोई दूसरा बोल उठा, 'तुम लोग समझाओ भी तो, किस हरि को मानते हो?' इधर कपड़े बुनते हैं और उधर इतनी लम्बी लम्बी बातें!

"रति की माँ, रानी कात्यायनी की सहचरी है; – वैष्णवचरण के दल की है, कट्टर वैष्णवी। यहाँ बहुत आया-जाया करती थी। भक्ति का खूब दिखलावा था, ज्योंही मुझे उसने काली का प्रसाद पाते हुए देखा कि भागी।

"जिसने समन्वय किया है, वही मनुष्य है। अधिकतर आदमी एक खास ढर्रे के होते हैं। परन्तु मैं देखता हूँ, सब एक हैं। शाक्त, वैष्णव, वेदान्त मत, सब उसी एक को लेकर हैं; जो साकार हैं वे ही निराकार हैं, उन्हीं के अनेक रूप हैं। 'निर्गुण मेरे पिता हैं, सगुण मेरी माँ; मैं किसकी निन्दा करूँ और किसकी वन्दना, दोनों ही पलडे भारी हैं।' वेदों में जिनकी बात है उन्हीं की बात तन्त्रों में है और पुराणों में भी उसी एक सच्चिदानन्द की बातें हैं। जो नित्य हैं, लीला भी उन्हीं की है।

"वेदों में है – ॐ सच्चिदानन्द ब्रह्म। तन्त्रों में है – ॐ सच्चिदानन्दः शिवः –

शिव: केवल: – केवल: शिव:। पुराणों में हैं – ॐ सच्चिदानन्द: कृष्ण:। उसी एक सच्चिदानन्द की बात वेदों, पुराणों और तन्त्रों में है। और वैष्णव-शास्त्र में भी है कि कृष्ण स्वयं काली हुए थे।''

(२)

श्रीरामकृष्ण की परमहंस अवस्था - बालकवत् और उन्मादवत्

श्रीरामकृष्ण जरा बरामदे की ओर जाकर फिर कमरे की ओर चले आये। बाहर जाते समय विश्वम्भर की लड़की ने उन्हें नमस्कार किया था, उसकी उम्र छ:-सात साल की होगी। कमरे में उनके चले जाने पर लड़की उनसे बातचीत कर रही है। उसके साथ और भी दो-तीन उसी की उम्र के लड़के-लड़कियाँ हैं।

विश्वम्भर की लड़की – (श्रीरामकृष्ण से) – मैंने तुम्हें नमस्कार किया, तुमने देखा भी नहीं!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कहाँ, मैंने नहीं देखा।

कन्या – तो खड़े हो जाओ, फिर नमस्कार करूँ। खड़े हो जाओ, इधर से भी करूँ।

श्रीरामकृष्ण हसते हुए बैठ गये और जमीन तक सिर झुकाकर कुमारी को प्रतिनमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण ने लड़की को गाने के लिए कहा। लड़की ने कहा – भाई-कसम, मैं गाना नहीं जानती।

उससे अनुरोध करने पर उसने कहा, भाई-कसम कहने पर फिर कभी कहा जाता है? श्रीरामकृष्ण उनके साथ आनन्द कर रहे हैं और गाना सुना रहे हैं, बच्चों के गीत।

बच्चे और भक्त गाना सुनकर हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – परमहंस का स्वभाव बिलकुल पाँच साल के बच्चे का-सा होता है। वह सब चेतन देखता है।

''मैं जब उस देश में (कामारपुकुर में) रहता था तब रामलाल का भाई (शिवराम) ४-५ साल का था; तालाब के किनारे पतिंगे पकड़ने जा रहा था। एक पत्ता हिल रहा था। पत्ते की खड़खड़ाहट से शिकार कहीं भाग न जाय, इस विचार से वह पत्ते से कहने लगा – 'अरे चुप! मैं पतिंगा पकड़ूँगा।' पानी बरस रहा था और आँधी भी चल रही थी। रह रहकर बिजली चमकती थी, फिर भी द्वार खोलकर वह बाहर जाना चाहता था। डाटने पर फिर बाहर न गया, झाँक-झाँककर देखने लगा, बिजली चमक रही थी, तो कहा – चाचा, फिर चकमकी घिस रहा है!

''परमहंस बालक की तरह होते हैं – उनके लिए न कोई अपना है, न कोई पराया। सांसारिक सम्बन्ध की कोई परवाह नही है। रामलाल के भाई ने एक दिन कहा, तुम चाचा

हो या मौसा?

"परमहंसों का चाल-चलन भी बालकों का-सा होता है; कोई हिसाब नहीं रहता कि कहाँ जायँ। सब ब्रह्ममय देखते हैं। कहाँ जा रहे हैं, कहाँ चल रहे हैं, कुछ हिसाब नहीं। रामलाल का भाई हृदय के यहाँ दुर्गापूजा देखने गया था। हृदय के यहाँ से आप ही आप किसी तरफ चला गया। किसी को इसका पता भी न चला। चार वर्ष के लड़के को देखकर लोग पूछने लगे, तू कहाँ से आ रहा है? वह कुछ न कह सकता था। उसने सिर्फ कहा – चाला* अर्थात् जिस आठ चाले में पूजा हो रही है। जब लोगों ने पूछा, तू किसके यहाँ से आ रहा है? तब उसने कहा – दादा।

"परमहंसों की पागलों की-सी अवस्था भी होती है। दक्षिणेश्वर की मन्दिर-प्रतिष्ठा के कुछ दिन बाद एक पागल आया था। वह पूर्ण ज्ञानी था – फटे जूते पहने था, एक हाथ में बांस की एक कमची लिये था और दूसरे में गमले में लगा हुआ एक आम का पौधा। गंगा में डुबकी मारकर उठा, न सन्ध्या, न पूजन; कपड़े में कुछ लिये हुए था, वही खाने लगा। फिर कालीमन्दिर में जाकर स्तव करने लगा। मन्दिर काँप उठा था! हलधारी उस समय मन्दिर में था। अतिथिशाला में लोगों ने उसे खाने को नहीं दिया था, परन्तु उसने जरा भी परवाह नहीं की। जूठी पत्तलें खींच खींचकर उनमें जो कुछ लगा था, वही खाने लगा; जहाँ कुत्ते खा रहे थे वहीं कभी-कभी कुत्तों को हटाकर खाता था। कुत्तों ने उसका कुछ नहीं किया। हलधारी उसके पीछे-पीछे गया था। पूछा – 'तुम कौन हो? क्या तुम पूर्ण ज्ञानी हो?' तब उसने कहा था – 'मैं पूर्ण ज्ञानी हूँ! चुप!!'

"मैंने हलदारी से जब ये सब बातें सुनीं, मेरा कलेजा दहलने लगा, मैं हृदय से लिपट गया। माँ से कहा – 'माँ, तो क्या वही अवस्था मेरी भी होगी?' हम लोग उसे देखने गये। हम लोगों से खूब ज्ञान की बातें करता था, दूसरे आदमी आते तो वही पागलपन शुरू कर देता था। जब वह गया, तब हलधारी बहुत दूर तक उसके साथ गया था। फाटक पार करते समय उसने हलधारी से कहा था, 'तुझे मैं क्या कहूँ? जब तलैया और गंगाजी के पानी में भेद-बुद्धि न रह जाय, तब समझना कि पूर्ण ज्ञान हुआ।' इतना कहकर उसने अपना सीधा रास्ता पकड़ा।"

पाण्डित्य की अपेक्षा तपस्या का प्रयोजन। साधना

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत कर रहे हैं। पास ही भक्तगण भी बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – शशधर को तुम क्या समझते हो?

मास्टर – जी, बहुत अच्छा।

---

* बड़े बड़े छप्परों से छाये हुए बंगले को बंगाल में 'आठ चाला' अर्थात् आठ चालियों या छप्परोवाला मकान कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – बड़ा बुद्धिमान है न?

मास्टर – जी हाँ, उसमें खूब पाण्डित्य है।

श्रीरामकृष्ण – गीता का मत है, जिसे बहुत से लोग मानते, जानते हैं, उसके भीतर ईश्वर की शक्ति है। परन्तु शशधर के कुछ काम बाकी हैं।

"सूखे पाण्डित्य से क्या होगा? कुछ तपस्या चाहिए – कुछ साधना चाहिए।

"गौरी पण्डित ने साधना की थी। जब वह स्तुतियाँ पढ़ता था – ॐ निरालम्बो लम्बोदर – तब अन्य पण्डित केंचुए हो जाते थे।

"नारायण शास्त्री भी केवल पण्डित नहीं, उसने भी साधना की है।

"नारायण शास्त्री पचीस साल तक एक ही बहाव में पड़ा था। सात साल तक सिर्फ न्याय पढ़ा था। फिर भी 'हर हर' कहते ही भावमग्न हो जाता था। जयपुर के महाराजा ने उसे अपना सभापण्डित बनाना चाहा था। उसने वह काम मंजूर नही किया। दक्षिणेश्वर में प्राय: आकर रहता था। वशिष्ठाश्रम जाने की उसकी बड़ी इच्छा थी। तपस्या करने के लिए जाने की बात प्राय: मुझसे कहा करता था। मैंने उसे वहाँ जाने के लिए मना किया, तब उसने कहा, किसी दिन दम खतम हो जायेगा, फिर साधना कब करूँगा? जब उसने हठ पकड़ा, तब मैंने कह दिया – अच्छा जाओ।

"सुनता हूँ, कोई कोई कहते है, नारायण शास्त्री का देहान्त हो गया है। तपस्या करते समय किसी भैरव ने चपत मारी थी। कोई कोई कहते हैं, वे बचे हुए है, अभी उनको रेल पर सवार कराके हम आ रहे हैं।

"केशव सेन को देखने से पहले नारायण शास्त्री से मैंने कहा, तुम एक बार जाकर उन्हें देख आओ और मुझे बताओ कि वे कैसे आदमी हैं। वह देखकर जब आया, तब कहा, वह जप करके सिद्ध हो गया है। नारायण ज्योतिष जानता था। उसने कहा, 'केशव सेन भाग्य का बड़ा जबरदस्त है। मैंने उससे संस्कृत में बातचीत की थी। वह भाषा (बंगाली) बोलता था।

"तब मैं हृदय को साथ लेकर बेलघर के बगीचे में केशव से मिला। उसे देखते ही मैंने कहा था, 'इन्हीं की पूँछ गिर गयी है – ये पानी में भी रह सकते हैं और जमीन पर भी।' "

श्रीरामकृष्ण पूँछ गिरने की लोकोक्ति के द्वारा कह रहे हैं कि यही केशव हैं जो संसार में भी रहते हैं और ईश्वर में भी।

"मेरी परीक्षा लेने के लिए तीन ब्राह्मसमाजियों को केशव ने काली-मन्दिर भेजा। उनमें प्रसन्न भी था। बात यह थी कि वे रात-दिन मुझे देखेंगे और केशव के पास खबर भेजते रहेंगे। मेरे घर में रात को सोये। बस 'दयामय' 'दयामय' करते थे और मुझसे कहते थे, 'तुम केशव बाबू की पैरवी करो तो तुम्हारे लिए अच्छा होगा।' मैने कहा, 'मैं साकार

जो मानता हूँ।' उन्होंने 'दयामय, दयामय' कहना न छोड़ा; तब मेरी एक दूसरी अवस्था हो गयी। उस अवस्था में मैंने कहा – 'हटो यहाँ से।' घर के भीतर मैंने उन्हें किसी तरह न रहने दिया। वे सब बरामदे में पड़े रहे।

"कप्तान ने भी जिस दिन मुझे पहले-पहल देखा, उस दिन रात को यहीं रह गया।

"नारायण जब था तब एक दिन माइकेल आया था। मथुर बाबू का बड़ा लड़का द्वारका बाबू उसे अपने साथ ले आया था। मैगजीन के साहबों के साथ मुकदमा होनेवाला था। इस पर सलाह लेने के लिए बाबुओं ने माइकेल को बुलाया था।

"दप्तर के साथ हीं बड़ा कमरा है। वहीं माईकेल से मुलाकात हुई थी। मैने नारायणशास्त्री को बातचीत करने के लिए कहा। संस्कृत में माइकेल अच्छी तरह बातचीत न कर सका। तब भाषा (बँगला) में बातचीत हुई।

"नारायण शास्त्री ने पूछा, तुमने अपना धर्म क्यो छोड़ा? माइकेल ने पेट दिखाकर कहा, पेट के लिए छोड़ना पड़ा।

"नारायण शास्त्री ने कहा, 'जो पेट के लिए धर्म छोड़ता है, उससे क्या बातचीत करूँ।' तब माइकेल ने मुझसे कहा, आप कुछ कहिये।

"मैंने कहा, न जाने क्यो मेरी कुछ बोलने की इच्छा नहीं होती। किसी ने मेरा मुँह जैसे दबा रखा हो।"

श्रीरामकृष्ण के दर्शनों के लिए चौधरी बाबू के आने की बात थी।

मनोमोहन – चौधरी नही आयेंगे; उन्होंने कहा है, फरीदपुर का वह शशधर जायेगा, अतएव मैं न जाऊँगा।

श्रीरामकृष्ण – कैसा नीचप्रकृती है! – विद्या का अहंकार दिखलाता है! उधर दूसरा विवाह किया है – संसार को तिनके बराबर समझने लगा है।

चौधरी ने एम. ए. पास किया है। पहली स्त्री की मृत्यु होने पर बड़ा वैराग्य था। श्रीरामकृष्ण के पास दक्षिणेश्वर प्राय: जाता था। उसने दूसरा विवाह किया है। तीन-चार सौ रुपया महीना पाता है।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो से) – इस कामिनी-कांचन की आसक्ति ने आदमी को नीच बना डाला है। हरमोहन जब पहले आया था तब उसके लक्षण बड़े अच्छे थे। उसे देखने के लिए मेरा जी व्याकुल हो जाता था। तब उसकी उम्र १७-१८ की रही होगी। मैं अक्सर उसे बुला भेजता था, पर वह न आता था। अब बीबी को लेकर अलग मकान में रहता है! जब अपने मामा के यहाँ रहता था, तब बड़ा अच्छा था। संसार की कोई झंझट न थी। अब अलग मकान लेकर रोज बीबी के लिए बाजार करता है। (सब हँसते हैं।) उस रोज वहाँ गया था। मैंने कहा, जा, यहाँ से चला जा: तुझे छूते मेरी देह किस तरह की हो जाती है।

कर्ताभजा चन्द्र चँटर्जी आये है। उम्र साठ-पैंसठ की होगी। मुख पर कर्ताभजावालों के श्लोक रहते हैं। श्रीरामकृष्ण के पैर दबाने के लिए जा रहे थे, उन्होंने पैर छूने ही न दिये, हँसकर कहा, इस समय तो खूब हिसाबी बातें कर रहा है। भक्तगण हँसने लगे।

अब श्रीरामकृष्ण बलराम के अन्तःपुर मे श्रीजगन्नाथ-दर्शन करने के लिए जा रहे हैं। वहाँ की स्त्रियाँ उनके दर्शनों के लिए व्याकुल हो रही है।

श्रीरामकृष्ण फिर बैठकखाने में आये। हँस रहे है, कहा, "मै शौच को गया था, कपड़े बदलकर श्रीजगन्नाथ के दर्शन किये और कुछ फूल-दल चढ़ाये।

"विषयी लोगों की पूजा, जप, तप, सब सामयिक हैं। जो लोग ईश्वर के सिवा और कुछ नही जानते, वे साँस के साथ साथ उनका नाम लेते हैं। कोई मन ही मन सदा 'राम ॐ राम' जपता रहता है। ज्ञानमार्गी 'सोऽहम् सोऽहम्' जपते हैं। किसी-किसी की जीभ सदा हिलती रहती है।

"सदा ही स्मरण-मनन रहना चाहिए।"

(४)

शशधर आदि भक्तगण। समाधि में श्रीरामकृष्ण

पण्डित शशधर दो-एक मित्रो के साथ कमरे मे आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हम लोग वधू-सखियों के समान शय्या के पास बैठे हुए जाग रहे हैं कि कब वर आयें।

पण्डित शशधर हँस रहे हैं। अनेक भक्त उपस्थित हैं। बलराम के पिता भी उपस्थित है। डाक्टर प्रताप भी आये हुए है। श्रीरामकृष्ण फिर बातचीत कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (शशधर से) – ज्ञान का पहला लक्षण है, स्वभाव शान्त हो; दूसरा, अभिमान न रहे। तुममें दोनों लक्षण हैं।

"ज्ञानी के और भी कुछ लक्षण है। साधु के पास वह त्यागी है, कार्य करते स[illegible] – जैसे लेक्चर देते हुए – वह सिंह के समान है, स्त्री के पास रसराज है, रसशास्त्र का पण्डित। (पण्डितजी और दूसरे लोग हँसते हैं।)

"विज्ञानी का और स्वभाव है। जैसे चैतन्यदेव की अवस्था। बालकवत्, उन्मत्तवत्, जड़वत्, पिशाचवत्।

"बालक की अवस्था में कई अवस्थाएँ है – बाल्य, कैशोर्य, यौवन। किशोरावस्था में दिल्लगी सूझती है। उपदेश देते समय यौवनावस्था होती है।"

पण्डितजी – किस तरह की भक्ति से वे मिलते हैं?

श्रीरामकृष्ण – प्रकृति के अनुसार भक्ति तीन तरह की है। भक्ति का सत्त्व, भक्ति का रज और भक्ति का तम।

"भक्ति का सत्त्व ईश्वर ही समझ सकते हैं। उस तरह का भक्त भाव छिपाना पसन्द करता है। कभी वह मसहरी के भीतर बैठकर ध्यान करता है। कोई समझ नहीं सकता। सत्त्व का सत्त्व अर्थात् शुद्ध सत्त्व के बन जाने पर फिर ईश्वर-दर्शन में देर नहीं रहती; जैसे पूरब की ओर ललाई छा जाने पर यह समझने में देर नहीं होती कि अब शीघ्र ही सूरज निकलेंगे।

"जिसे भक्ति का रजोभाव होता है, उसकी इच्छा होती है कि लोग देखें, जानें कि मैं भक्त हूँ। वह षोडशोपचार से उनकी पूजा करता है। रेशम की धोती पहनकर श्रीठाकुर-मन्दिर में जाता है, गले में रुद्राक्ष की माला धारण करता है जिसमें मुक्ता और कहीं कहीं सोने के दाने पड़े रहते हैं!

"भक्ति का तमोभाव वह है जिसमें डाके का मतलब दीख पड़े। डाकू बड़े बड़े हथियार लेकर डाका डालते हैं, आठ थानेदारों को भी नहीं डरते – मुख पर 'मारो – लूट लो' लगा रहता है; पागल की तरह 'बम शंकर' कहते जाते हैं; मन में पूरा भरोसा, पक्का बल और जीता-जागता विश्वास!

"शाक्तों का भी विश्वास ऐसा ही है। – क्या, एक बार मैं काली का नाम ले चुका, दुर्गा को पुकारा, राम-नाम जपा, इतने पर भी मुझे पाप छू ले?

"वैष्णवों के भाव में बड़ी दीनता है। वे लोग बस माला फेरते रहते हैं, रोते-कलपते हुए कहते हैं, हे कृष्ण! दया करो, मैं अधम हूँ, मैं पापी हूँ!

"ज्वलन्त विश्वास चाहिए। ऐसा विश्वास कि मैंने उनका नाम लिया है, मुझे फिर कैसा पाप? – पर कुछ लोग रात-दिन ईश्वर का नाम लेते हैं और कहते हैं – मैं पापी हूँ!"

यह कहते ही श्रीरामकृष्ण का प्रेम-पारावार उमड़ चला। वे गाने लगे। गाना सुनकर शशधर की आँखों में आँसू आ गये। गीतों का भाव यह है –

(१) यदि दुर्गा-दुर्गा कहते हुए मेरे प्राण निकलेंगे तो अन्त में इस दीन को तुम कैसे नहीं तारती हो, मै देखूँगा। ब्राह्मणों का नाश करके, गर्भपात करके, मदिरा पीकर और स्त्री-हत्या करके भी मैं नहीं डरता। मुझे विश्वास है कि इतने पर भी मुझे ब्रह्मपद की प्राप्ति होगी।

(२) शिव के साथ सदा ही रंग करती हुई तू आनन्द में मग्न है। सुधापान करके, तेरे पैर तो लड़खड़ा रहे हैं, पर, माँ, तू गिर नहीं जाती।

अब अधर के गवैये वैष्णवचरण गा रहे हैं – भाव इस प्रकार है।

(१) ऐ मेरी रसने, सदा दुर्गा-नाम का जप कर। बिना दुर्गा के इस दुर्गम मार्ग में और

कौन निस्तार करनेवाला है? तुम स्वर्ग हो, मर्त्य और पाताल हो। हरि, ब्रह्मा और द्वादश गोपाल भी तुम्हीं से हुए हैं; ऐ माँ, तुम दसों महाविद्याएँ हो, दस बार तुमने अवतार लिया है। अबकी बार किसी तरह मुझे पार करना ही होगा। माँ, तुम चल हो, अचल हो, तुम सूक्ष्म हो, तुम स्थूल हो, सृष्टि-स्थिति और प्रलय तुम हो, तुम इस विश्व की मूल हो। तुम तीनों लोक की जननी हो, तीनों लोक की त्राणकारिणी हो। तुम सब की शक्ति हो, तुम स्वयं अपनी शक्ति हो।

इस गाने को सुनकर श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। गाना समाप्त होने पर खुद गाने लगे। उनके बाद वैष्णवचरण ने फिर गाया। इस बार उन्होंने कीर्तन गाया। कीर्तन सुनते ही श्रीरामकृष्ण निर्बीज समाधि में लीन हो गये। शशधर की आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी।

श्रीरामकृष्ण समाधि से उतरे। गाना भी समाप्त हो गया। शशधर, प्रताप, रामदयाल, राम, मनमोहन आदि बालक भक्त तथा और भी बहुत से आदमी बैठे हैं। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, तुम लोग कुछ छेड़ते क्यों नहीं? (शशधर से कुछ पूछते क्यों नहीं?)

रामदयाल – (शशधर से) – ब्रह्म की रूप-कल्पना शास्त्रों में है, परन्तु वह कल्पना करते कौन है?

शशधर – ब्रह्म स्वयं। वह मनुष्य की कल्पना नहीं।

प्रताप – क्यों, वे रूप की कल्पना क्यों करते हैं?

श्रीरामकृष्ण – उनकी इच्छा, वे इच्छामय जो है। वे किसी से सलाह करके कुछ थोड़े ही करते हैं? क्यों वे करते हैं, इस बात से हमें क्या मतलब? बगीचे में आम खाने के लिए आये हो, आम खाओ – कितने पेड़ हैं, कितनी हजार डालियाँ हैं, कितने लाख पत्ते है, इस हिसाब से क्या काम? वृथा तर्क और विचार करने से वस्तुलाभ नहीं होता।

प्रताप – तो अब विचार न करें?

श्रीरामकृष्ण – वृथा तर्क और विचार न करो। हाँ, सदसत् का विचार करो कि क्या नित्य है और क्या अनित्य – काम, क्रोध और शोक आदि के समय में।

पण्डितजी – वह और चीज है, उसे विवेकात्मक विचार कहते हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, सदसत् विचार। (सब चुप हैं।)

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – पहले बड़े बड़े आदमी आते थे।

पण्डितजी – क्या धनी आदमी?

श्रीरामकृष्ण – नहीं, बड़े बड़े पण्डित।

इतने में छोटा रथ बाहर के दुमंजले वाले बरामदे में लाया गया। श्रीजगन्नाथ, बलराम और सुभद्रादेवी पर अनेक प्रकार की फूल-मालाएँ पड़ी हुई उनकी शोभा बढ़ा रही

हैं। सब नये नये अलंकार और नये नये वस्त्र धारण किये हुए है। बलराम की सात्त्विक पूजा होती है। उसमें कोई आडम्बर नहीं किया जाता। बाहर के आदमियों को जरा भी खबर नहीं कि भीतर रथ चल रहा है।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ रथ के सामने आये। उसी बरामदे में रथ खींचा जायगा। श्रीरामकृष्ण ने रथ की रस्सी पकड़ी और कुछ देर खींचा। फिर गाने लगे।

(भावार्थ) – "श्रीगौरांग के प्रेम की हिलोरों में नदिया डावाडोल हो रहा है।"

श्रीरामकृष्ण नृत्य कर रहे हैं। भक्तगण भी उनके साथ नाचते हुए गा रहे हैं। कीर्तनिया वैष्णवचरण भी सब में मिल गये।

देखते ही देखते सारा बरामदा भर गया। स्त्रियाँ भी पासवाले कमरे से यह सब आनन्द देख रही हैं। मालूम हो रहा था कि श्रीवास के घर में भगवत्प्रेम से विह्वल होकर श्रीगौरांग भक्तो के साथ नृत्य कर रहे हैं। मित्रों के साथ पण्डितजी भी रथ के सामने खड़े हुए इस नृत्य-गीत का दर्शन कर रहे हैं।

अभी शाम नहीं हुई है। श्रीरामकृष्ण बैठकखाने में चले आये। भक्तों के साथ आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण – (पण्डितजी से) – इसे भजनानन्द कहते हैं। संसारी लोग विषयानन्द में मग्न रहते है – वह कामिनी-कांचन का आनन्द है। भजन करते ही करते जब उनकी कृपा होती है, तब वे दर्शन देते है – तब उसे ब्रह्मानन्द कहते है।

शशधर और भक्तमण्डली चुपचाप सुन रही है।

पण्डितजी – (विनयपूर्वक) – अच्छा जी, किस तरह व्याकुल होने पर मन की यह सरस अवस्था होती है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर के दर्शन के लिए जब प्राण डूबते उतराते रहते हैं, तब वह व्याकुलता होती है। गुरु ने शिष्य से कहा, आओ, तुम्हें दिखा दें, किस तरह व्याकुल होने पर वे मिलते हैं। इतना कहकर वे शिष्य को एक तालाब के किनारे ले गये। वहाँ उसे पानी में डुबाकर ऊपर से दबा रखा। थोड़ी देर बाद शिष्य को निकालकर उन्होंने पूछा, कहो, तुम्हारा जी कैसा हो रहा था? उसने कहा, 'मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा था कि मानो मेरे प्राण निकल रहे हों। एक बार सांस लेने के लिए मैं छटपटा रहा था।'

पण्डितजी – हाँ हाँ, ठीक है, अब मैं समझा।

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर को प्यार करना, यही सार वस्तु है। भक्ति एकमात्र सार वस्तु है। नारद ने राम से कहा, 'ऐसा करो कि तुम्हारे पादपद्मों में मेरी सदा शुद्धा भक्ति रहे। अभी के समान संसार को मुग्ध कर लेनेवाली तुम्हारी माया में न पड़ूँ।' श्रीरामचन्द्र ने कहा, कोई दूसरा वर लो। नारद ने कहा, 'मुझे और कुछ न चाहिए। तुम्हारे पादपद्मों में भक्ति रहे – इतना ही बहुत है।'

पण्डितजी जानेवाले हैं। श्रीरामकृष्ण ने कहा, इनके लिए गाड़ी मँगवा दो।

पण्डितजी – जी नही, हम लोग ऐसे ही चले जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कभी ऐसा भी हो सकता है? – 'ब्रह्मा भी तुम्हें ध्यान में नहीं पाते'।

पण्डितजी – अभी जाने की कोई जरूरत न थी, परन्तु सन्ध्या अभी करनी है।

श्रीरामकृष्ण – "माँ की इच्छा से मेरे सन्ध्यादि कर्म छूट गये है। सन्ध्यादि के द्वारा देह और मन की शुद्धि की जाती है। वह अवस्था अब नहीं।" यह कहकर श्रीरामकृष्ण ने गाने के एक चरण की आवृत्ति की।

(भावार्थ) "शुचिता और अशुचिता के साथ दिव्यभवन मे तू कब सोयेगा? उन दोनों सौतों में जब प्रीति होगी तभी तू श्यामा माँ को पा सकेगा।"

पण्डित शशधर प्रणाम करके बिदा हुए।

राम – कल मैं शशधर के पास गया था, आपने कहा था।

श्रीरामकृष्ण – कहाँ, मैंने तो नही कहा; परन्तु तुम गये तो अच्छा किया।

राम – एक संवाद-पत्र (Indian Empire) का संपादक आपकी निन्दा कर रहा था।

श्रीरामकृष्ण – तो इससे क्या हुआ, की होगी।

राम – और भी तो सुनिये। मुझसे आपकी बात सुनकर मुझे छोड़ता ही न था, आपकी बात और सुनना चाहता था।

प्रताप अब भी बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण ने उनसे कहा, वहाँ एक बार जाना, भुवन ने कहा है, भाड़ा दूँगा।

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण जगज्जननी का नाम ले रहे है। कभी राम नाम करते हैं, कभी कृष्णनाम, कभी हरिनाम। भक्तगण चुपचाप सुन रहे हैं। इतने मधुर कण्ठ से नाम ले रहे है, जैसे मधु की वर्षा हो रही हो। आज बलराम का मकान नवद्वीप हो रहा है। बाहर नवद्वीप और भीतर वृन्दावन।

आज रात को ही श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर जायेंगे। बलराम उन्हें अन्तःपुर में लिये जा रहे हैं, जलपान कराने के लिए। इस सुयोग में स्त्रियाँ भी उनके दर्शन कर लेंगी।

इधर बाहर के बैठकखाने में भक्तगण उनकी प्रतीक्षा करते हुए एक साथ कीर्तन करने लगे। श्रीरामकृष्ण भी बाहर आकर उनके साथ मिल गये। खूब कीर्तन होने लगा।

परिच्छेद ८७

श्रीरामकृष्ण तथा समन्वय

(१)

कुण्डलिनी और षट्चक्र-भेद

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में दोपहर के भोजन के बाद भक्तों के साथ बैठे हैं। दिन के दो बजे होंगे।

शिवपुर से बाउलों (एक तरह के गानेवालों) का दल और भवानीपुर से भक्तगण आये हुए हैं। श्रीयुत राखाल, लाटू और हरीश आजकल हमेशा यहीं रहते हैं। कमरे में बलराम और मास्टर हैं।

आज श्रावण की शुक्ला द्वादशी है, ३ अगस्त, १८८४। झूलनयात्रा का दूसरा दिन है। कल श्रीरामकृष्ण सुरेन्द्र के घर गये थे। वहाँ शशधर आदि भक्त भी आपके दर्शन करने के लिए आये थे।

श्रीरामकृष्ण शिवपुर के भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – कामिनी और कांचन में मन पड़ा रहा तो योग नहीं होता। साधारण जीवों का मन लिंग, गुदा और नाभि में रहता है। बड़ी साधना करने के बाद कहीं कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती है। नाड़ियाँ तीन हैं, इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। सुषुम्ना के भीतर छः पद्म हैं। सब से नीचे वाले पद्म को मूलाधार कहते हैं। उसके ऊपर हैं स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध और आज्ञा। इन्हें षट्चक्र कहते हैं।

"कुण्डलिनी-शक्ति जब जागती है तब वह मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, इन सब पद्मों को क्रमशः पार करती हुई हृदय के अनाहत पद्म में आकर विश्राम करती है। जब लिंग, गुह्य और नाभि से मन हट जाता है, तब ज्योति के दर्शन होते हैं। साधक आश्चर्यचकित होकर ज्योति देखता है और कहता है, 'यह क्या, यह क्या!'

"छहों चक्रों का भेद हो जाने पर कुण्डलिनी सहस्रार पद्म में पहुँच जाती है; तब समाधि होती है।

"वेदों के मत से ये सब चक्र एक एक भूमि हैं। इस तरह सात भूमियाँ हैं। हृदय चौथी भूमि है। हृदयवाले अनाहत-पद्म के बारह दल हैं।

"विशुद्ध-चक्र पाँचवीं भूमि है। जब मन यहाँ आता है तब केवल ईश्वरी प्रसंग कहने और सुनने के लिए प्राण व्याकुल होते हैं। इस चक्र का स्थान कण्ठ है। वह पद्म सोलह दलों का है। जिसका मन इस चक्र पर आया है, उसके सामने अगर विषय की बातें – कामिनी और कांचन की बातें होती हैं, तो उसे बड़ा कष्ट होता है। उस तरह की बातें सुनकर वह वहाँ से उठ जाता है।

"इसके बाद छठी भूमि है आज्ञाचक्र। यह दो दलों का है। कुण्डलिनी जब यहाँ पहुँचती है, तब ईश्वरी रूप के दर्शन होते हैं। परन्तु फिर भी कुछ ओट रह जाती है, जैसे लालटेन के भीतर की बत्ती, जान तो पड़ता है कि हम बत्ती पकड़ सकते हैं, परन्तु शीशे के भीतर है – एक पर्दा है, इसलिए छुई नही जाती।

"इससे आगे चलकर सातवीं भूमि है सहस्रार पद्म। कुण्डलिनी के वहाँ जाने पर समाधि होती है। सहस्रार में सच्चिदानन्द शिव हैं, वे शक्ति के साथ मिलित हो जाते हैं। शिव और शक्ति का मेल।

"सहस्रार में मन के आने पर निर्बीज समाधि होती है। तब बाह्यज्ञान कुछ भी नहीं रह जाता। मुख में दूध डालने से दूध गिर जाता है। इस अवस्था में रहने पर इक्कीस दिन में मृत्यु हो जाती है। काले पानी में जाने पर जहाज फिर नहीं लौटता।

"ईश्वरकोटि और अवतारी पुरुष ही इस अवस्था से उतर सकते है। वे भक्ति और भक्त लेकर रहते हैं, इसीलिए उतर सकते हैं। ईश्वर उनके भीतर 'विद्या का मैं' – 'भक्त का मैं' केवल लोकशिक्षा के लिए रख देते हैं। उनकी अवस्था फिर ऐसी होती है कि छठी और सातवी भूमि के भीतर ही वे चक्कर लगाया करते हैं।

"समाधि के बाद कोई कोई इच्छापूर्वक 'विद्या का मैं' रख छोड़ते हैं। उस 'मैं' में कोई मजबूत पकड़ नहीं है, वह 'मैं' की एक रेखा मात्र है।

"हनुमान ने साकार और निराकार के दर्शनों के बाद 'दास मैं' रखा था। नारद, सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार आदि लोगों ने भी ब्रह्म-साक्षात्कार के बाद 'दास मैं', 'भक्त मैं' रख छोड़ा था। ये सब जहाज की तरह हैं। स्वयं भी पार जाते हैं और साथ बहुत से आदमियों को भी पार ले जाते हैं।

"परमहंस निराकारवादी भी हैं और साकारवादी भी। निराकारवादी जैसे त्रैलंगस्वामी। इनके जैसे परमहंस केवल अपने ही हित के लिए चिन्ता करते हैं। यदि उन्हें स्वयं को इष्ट-प्राप्ति हो जाती है तो वे उसी से सन्तुष्ट हो जाते हैं।

"ब्रह्मज्ञान के बाद भी जो लोग साकारवादी होते हैं, वे लोकशिक्षा के लिए भक्ति लेकर रहते हैं। वे उस घड़े के सदृश हैं जो मुँह तक लबालब भरा है। उसमें से थोड़ा पानी किसी दूसरे बर्तन में भी डाला जा सकता है।

"इन लोगों ने जिन साधनाओं के द्वारा ईश्वर को प्राप्त किया है, उनकी बातें लोक-

शिक्षा के लिए कही जाती हैं। इस तरह लोगों का कल्याण होता है। पानी पीने के लिए बड़ी मेहनत करके कुआँ खोदा गया, फावड़ा और कुदार लेकर। कुआँ खुद जाने पर कोई कोई कुदार आदि उसी में छोड़ देते हैं, क्योंकि फिर खोदने की कोई जरूरत नहीं रही। परन्तु कोई कोई कन्धे में डाले फिरते हैं, दूसरे के उपकार के लिए।

"कोई आम छिपाकर खाता है, फिर मुँह पोंछकर लोगों से मिलता है, और कोई कोई दूसरे को देकर खाते हैं, लोक-शिक्षा के लिए भी और लोगों को स्वाद चखाने के लिए भी। मैं चीनी खाना अधिक पसन्द करता हूँ, चीनी बन जाना नहीं।

"गोपियों को भी ब्रह्मज्ञान हुआ था, परन्तु वे ब्रह्मज्ञान नहीं चाहती थीं। वे ईश्वर का संभोग करना चाहती थीं, कोई वात्सल्यभाव से, कोई सख्यभाव से, कोई मधुरभाव से और कोई दासीभाव से।"

शिवपुर के भक्त गोपीयन्त्र बजाकर गा रहे हैं। पहले गाने में कह रहे हैं, "हम लोग पापी हैं, हमारा उद्धार करो।"

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – भय दिखाकर या भय खाकर ईश्वर की भक्ति करना प्रवर्तकों का भाव है। उन्हें पा जाने के गीत गाओ। आनन्द के गाने। (राखाल से) नवीन नियोगी के यहाँ उस दिन कैसा गाना हो रहा था? – 'नाम की मदिरा पीकर मस्त हो जाओ।'

"केवल अशान्ति की बात भी नहीं सुहाती। ईश्वर को लेकर आनन्द करना, उन्हें लेकर मस्त हो रहना।"

शिवपुर के भक्त – क्या आपका एक-आध गाना न होगा?

श्रीरामकृष्ण – मैं क्या गाऊँगा? अच्छा, जब भाव आ जायगा तब मैं गाऊँगा।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गाते हुए आप ऊर्ध्वदृष्टि हैं। आपने कई गाने गाये। एक का भाव नीचे दिया जाता है।

"श्यामा माँ ने कैसी कल बनायी है। वह साढ़े तीन हाथ की कल के भीतर कितने ही रंग दिखा रही है। वह स्वयं कल के भीतर रहती है और डोर पकड़कर अपनी इच्छा के अनुसार उसे घुमाती रहती है – परन्तु कल कहती है, मैं खुद घूम रही हूँ। वह नहीं जानती कि घुमानेवाली कोई दूसरी ही है। जिसने कल का हाल मालूम कर लिया है, उसे फिर कल नहीं बनना पड़ता। किसी किसी कल की भक्ति की डोर से तो श्यामा माँ स्वयं आकर बँध जाती है।"

(२)

समाधि में श्रीरामकृष्ण। प्रेमतत्त्व

यह गाना गाते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तगण स्तब्ध भाव से

निरीक्षण कर रहे हैं। कुछ देर बाद कुछ प्राकृत दशा के आने पर श्रीरामकृष्ण माता के साथ वार्तालाप करने लगे।

"माँ, ऊपर से (सहस्रार से) यहाँ उतर आओ! – क्यों जलाती हो! – चुपचाप बैठो।

"माँ, जिसके जो संस्कार हैं, वे तो होकर ही रहेंगे। – मै और इससे क्या कहूँ? विवेक-वैराग्य के हुए बिना कुछ होता नहीं।

"वैराग्य कितने ही तरह के हैं। एक ऐसा है जिसे मर्कटवैराग्य कहते हैं, वह वैराग्य संसार की ज्वाला से जलकर होता है, वह अधिक दिन नहीं टिकता। और सच्चा वैराग्य भी है। एक व्यक्ति के पास सब कुछ है, किसी वस्तु का अभाव नहीं, फिर भी उसे सब कुछ मिथ्या जान पड़ता है।

"वैराग्य एकाएक नही होता। समय के आये बिना नहीं होता। परन्तु एक बात है, वैराग्य के सम्बन्ध में सुन लेना चाहिए। जब समय आयेगा, तब इसकी याद होगी कि हाँ, कभी सुना था।

"एक बात और है। इन सब बातों को सुनते सुनते विषय की इच्छा थोड़ी थोड़ी करके घटती जाती है। शराब के नशे को घटाने के लिए थोड़ा थोड़ा चावल का पानी पिया जाता है। इस तरह धीरे-धीरे नशा घटता रहता है।

"ज्ञानलाभ करने के अधिकारी बहुत ही कम हैं। गीता में कहा है – हजारों आदमियों में कही एक उनके जानने की इच्छा करता है। और ऐसी इच्छा करनेवाले हजारो में से कही एक ही उन्हें जान पाता है।"

तान्त्रिक भक्त – 'मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये' आदि।

श्रीरामकृष्ण – संसार की आसक्ति जितनी ही घटती जायगी, ज्ञान भी उतना ही बढ़ता जायगा। आसक्ति अर्थात कामिनी और कांचन की आसक्ति।

"प्रेम सभी को नहीं होता। गौरांग को हुआ था। जीवों को भाव हो सकता है। बस ईश्वरकोटि को – जैसे अवतारो को – प्रेम होता है। प्रेम के होने पर संसार तो मिथ्या जान पड़ेगा ही, किन्तु इतने प्यार की वस्तु जो यह शरीर है, यह भी भूल जायगा।

"पारसियों के ग्रन्थ में लिखा है, चमड़े के भीतर मांस है. मांस के भीतर हड्डियाँ, हड्डियों के भीतर मज्जा, इसके बाद और भी न जाने क्या क्या; और सब के भीतर प्रेम!

"प्रेम से मनुष्य कोमल हो जाता है। प्रेम से कृष्ण त्रिभंग हो गये हैं।

"प्रेम के होने पर सच्चिदानन्द को बाँधनेवाली रस्सी मिल जाती है। उसे पकड़कर खींचने ही से हुआ। जब बुलाओगे तभी पाओगे।

"भक्ति के पकने पर भाव होता है। भाव के पकने पर सच्चिदानन्द को सोचकर वह निर्वाक् रह जाता है। जीवों के लिए बस यहीं तक है। और फिर भाव के पकने पर महाभाव या प्रेम होता है। जैसे कच्चा आम और पका हुआ आम।

"शुद्धा भक्ति ही एकमात्र सार वस्तु है और सब मिथ्या है।

"नारद के स्तुति करने पर श्रीरामचन्द्र ने कहा, तुम वरदान लो। नारद ने शुद्धा भक्ति माँगी और कहा, हे राम, अब ऐसा करो जिससे तुम्हारी भुवनमोहिनी माया से मुग्ध न हो जाऊँ। राम ने कहा, यह तो जैसे हुआ, दूसरा वर माँगो।

"नारद ने कहा, और कुछ न चाहिए, केवल भक्ति की प्रार्थना है।

"यह भक्ति भी कैसे हो? पहले साधुओं का संग करना चाहिए। सत्संग करने पर ईश्वरी बातों पर श्रद्धा होती है। श्रद्धा के बाद निष्ठा है, तब ईश्वर की बातों को छोड़ और कुछ सुनने की इच्छा नहीं होती। उन्हीं के काम करने को जी चाहता है।

"निष्ठा के बाद भक्ति है, इसके बाद भाव, फिर महाभाव और वस्तुलाभ।

"महाभाव और प्रेम अवतारों को होता है। संसारी जीवों का ज्ञान, भक्तों का ज्ञान और अवतार-पुरुषों का ज्ञान बराबर नहीं। संसारी जीवों का ज्ञान जैसे दीपक का उजाला है। उससे घर के भीतर ही प्रकाश होता है और वहीं की चीजें देखी जा सकती हैं। उस ज्ञान से खाना-पीना, घर-गृहस्थी का काम सम्हालना, शरीर की रक्षा, सन्तान-पालन, बस, यही सब होता है।

"भक्त का ज्ञान जैसे चाँदनी; भीतर भी दिखायी पड़ता है और बाहर भी; परन्तु बहुत दूर की चीज या बहुत छोटी चीज नहीं दिखायी देती। अवतार आदि का ज्ञान मानो सूर्य का प्रकाश है। भीतर-बाहर छोटी-बड़ी वस्तु, सभी दिखायी देती हैं।

"यह सच है कि संसारी जीवों का मन गंदले पानी की तरह बना हुआ है। परन्तु फिटकरी छोड़ने पर वह साफ हो सकता है। विवेक और वैराग्य उनके लिए फिटकरी है।"

अब श्रीरामकृष्ण शिवपुर के भक्तों से बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – आप लोगों को कुछ पूछना हो तो पूछिये।

भक्त – जी! सब तो सुन रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – सुन रखना अच्छा है, परन्तु समय के बिना हुए होता नहीं।

"जब ज्वर बहुत रहता है, तब कुनैन देने से क्या होगा? फीवर-मिक्शचर देकर दस्त कराने पर जब बुखार कुछ उतर जाता हं, तब कुनैन दी जा सकती है।

"और किसी किसी का बुखार ऐसे भी अच्छा हो जाता है। कुनैन नहीं देनी पड़ती।

"लड़के ने सोते समय अपनी माँ से कहा था, माँ, जब मुझे टट्टी की हाजत हो तब जगा देना। उसकी माँ ने कहा, बेटा, टट्टी की हाजत तुम्हें स्वयं उठा देगी।

"कोई कोई यहाँ आता है, देखता हूँ, वह किसी भक्त के साथ नाव पर चढ़कर आता है, परन्तु ईश्वर की बातें उसे नहीं सुहातीं। वह सदा अपने मित्र को कोंचता रहता है, कि कब उठे। जब उसका मित्र किसी तरह न उठा तब उसने कहा, अच्छा तो तुम यहाँ बैठो, मैं तब तक चलकर नाव पर बैठता हूँ।

"जिन्हें पहली ही बार आदमी का चोला मिला है, उन्हें भोग की आवश्यकता है। कुछ काम जब तक किये हुए नहीं होते तब तक चेतना नहीं आती।"

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जायेंगे। गोल बरामदे में मास्टर से कह रहे हैं –

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अच्छा, यह मेरी कैसी अवस्था है?

मास्टर – (सहास्य) – जी, बाहर से देखने में तो आपकी सहज अवस्था है, परन्तु भीतर बड़ी गम्भीर है – आपकी अवस्था समझना बड़ा कठिन है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाँ, जैसे पक्की फर्श; लोग ऊपर तो देखते हैं, परन्तु भीतर क्या है, यह नहीं जानते।

चाँदनीवाले घाट में बलराम आदि कुछ भक्त कलकत्ता जाने के लिए नाव पर चढ़ रहे हैं। दिन का तीसरा प्रहर है, चार बजे होंगे। गंगा में भाटा है, उस पर दक्षिणवाली हवा बह रही है। गंगा का वक्षस्थल तरंगों से शोभित हो रहा है।

बलराम की नौका बागबाजार की ओर जा रही है। मास्टर बड़ी देर से खड़े हुए देख रहे हैं।

नाव जब दृष्टि से ओझल हो गयी, तब वे श्रीरामकृष्ण के पास लौट आये।

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले बरामदे से उतर रहे हैं। झाऊतल्ला जायेंगे। उत्तर-पश्चिम के कोने में बड़े ही सुहावने मेघ उमड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – क्या वर्षा होगी? जरा छाता तो ले आओ। मास्टर छाता ले आये। लाटू भी साथ हैं।

श्रीरामकृष्ण पंचवटी में आये। लाटू से कह रहे है – तू दुबला क्यों हुआ जा रहा है?

लाटू – कुछ खाया नहीं जाता।

श्रीरामकृष्ण – क्या बस यही कारण है? मौसम बड़ा खराब है – और शायद तू अधिक ध्यान करता है –

(मास्टर से) "यह भार तुम पर है – बाबूराम से कहना राखाल के चले जाने पर दो-एक दिन के लिए आकर रह जाया करे, नहीं तो मेरे मन में बड़ी अशान्ति रहेगी।"

मास्टर – जी हाँ, मैं कह दूँगा।

सरल होने पर ही ईश्वर मिलते हैं। श्रीरामकृष्ण पूछ रहे हैं, बाबूराम सरल है न?

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से दक्षिण ओर आ रहे हैं। मास्टर और लाटू पंचवटी के नीचे उत्तर दिशा की ओर मुँह किये खड़े हैं।

श्रीरामकृष्ण के पीछे नये नये बादलों की छाया गंगा के विशाल वक्ष पर पड़ रही है, अपूर्व शोभा है! गंगाजल काला सा दिख रहा है।

(३)

श्रीरामकृष्ण तथा विरोधी शास्त्रों का समन्वय

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में आकर बैठे। बलराम आम ले आये थे। श्रीरामकृष्ण श्रीयुत राम चैटर्जी से कह रहे हैं, अपने लड़के के लिए कुछ आम लेते जाओ। कमरे में श्रीयुत नवाई चैतन्य बैठे हैं। ये लाल रंग की धोती पहनकर आये हैं।

उत्तरवाले लम्बे बरामदे में श्रीरामकृष्ण हाजरा से वार्तालाप कर रहे हैं। ब्रह्मचारी ने श्रीरामकृष्ण को हरताल भस्म दिया है। वही बात हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – ब्रह्मचारी की दवा मुझ पर खूब असर करती है। आदमी सच्चा है।

हाजरा – परन्तु बेचारा संसार में पड़ गया – क्या करे! कोन्नगर से नवाई चैतन्य आये हुए हैं। परन्तु संसारी होकर लाल धोती पहनना!

श्रीरामकृष्ण – क्या कहूँ! मैं देखता हूँ, ये सब मनुष्य-रूप ईश्वर ने स्वयं धारण किये हैं, इसी कारण किसी को कुछ कह नहीं सकता।

श्रीरामकृष्ण फिर कमरे के भीतर आये। हाजरा से नरेन्द्र की बात कह रहे हैं।

हाजरा – नरेन्द्र फिर मुकदमे में पड़ गया है।

श्रीरामकृष्ण – शक्ति नही मानता। देह धारण करके शक्ति को मानना चाहिए।

हाजरा – नरेन्द्र कहता है, मैं मानूँगा तो फिर सभी लोग मानने लगेंगे, इसीलिए मैं नहीं मान सकता।

श्रीरामकृष्ण – इतना बढ़ना अच्छा नहीं। अब तो शक्ति के ही इलाके में आया है। जज साहब भी जब गवाही देते हैं, तब उन्हें गवाहियों के कटघरे पर उठकर खड़ा होना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं – "क्या तुमसे नरेन्द्र की भेंट नहीं हुई?"

मास्टर – जी नहीं, इधर नहीं हुई।

श्रीरामकृष्ण – एक बार मिलना और गाड़ी पर बिठाकर ले आना। (हाजरा से) अच्छा यहाँ उसका क्या सम्बन्ध है?

हाजरा – आपसे उसे सहायता मिलेगी।

श्रीरामकृष्ण – और भवनाथ? शुभ संस्कार के हुए बिना यहाँ कभी इतना आ सकता है?

"अच्छा, हरीश और लाटू सदा ही ध्यान किया करते हैं, यह कैसा?"

हाजरा – हाँ, ठीक तो है, सदा ध्यान करना कैसा? यहाँ रहकर आपकी सेवा करे, तो बात दूसरी है।

श्रीरामकृष्ण – शायद तुम ठीक कहते हो। लेकिन कोई बात नहीं। कोई उनकी

जगह दूसरा आ जायगा।

हाजरा कमरे से चले गये। अभी सन्ध्या होने में देर है। श्रीरामकृष्ण कमरे में बैठे हुए माता के साथ एकान्त में बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मणि से) – अच्छा, भाव की अवस्था में मैं जो कुछ कहता हूँ, क्या इससे लोग आकर्षित होते हैं?

मणि – जी हाँ, खूब होते हैं।

श्रीरामकृष्ण – आदमी क्या सोचते हैं? भाववाली अवस्था देखने पर क्या कुछ समझ में आता है?

मणि – जान पड़ता है, एक ही आधार में ज्ञान, प्रेम, वैराग्य और सहज अवस्था विराजमान हैं। भीतर कितनी उथलपुथल मच गयी है, फिर भी बाहर से सहज भाव दीख पड़ता है। यह अवस्था बहुतेरे नहीं समझ सकते। परन्तु कुछ लोग उसी पर आकृष्ट होते हैं।

श्रीरामकृष्ण – घोषपाड़ा के मत में ईश्वर को सहज कहते हैं। और कहते हैं, सहज हुए बिना सहज को कोई पहचान नहीं सकता।

(मणि से) "अच्छा मुझमें अभिमान है?"

मणि – जी हाँ, कुछ है शरीर की रक्षा और भक्ति तथा भक्तों के लिए – ज्ञानोपदेश के लिए। यह भी तो आपने प्रार्थना करके रखा है।

श्रीरामकृष्ण – मैंने नहीं रखा, उन्हींने रख छोड़ा है। अच्छा भावावेश के समय क्या होता है?

मणि – आपने उस समय कहा, मन के छठी भूमि पर जाने से ईश्वरी रूप के दर्शन होते हैं। फिर जब आप बातचीत करते हैं, तब मन पाँचवी भूमि पर उतर आता हैं।

श्रीरामकृष्ण – वे ही सब कर रहे हैं। मैं कुछ नहीं जानता।

मणि – जी हाँ, इसीलिए तो इतना आकर्षण है।

"देखिये, शास्त्रों में दो तरह से कहा है। एक पुराण के मत में श्रीकृष्ण चिदात्मा हैं और श्रीराधा चित्‌शक्ति। एक दूसरे पुराण में श्रीकृष्ण को ही काली और आद्याशक्ति कहा है।"

श्रीरामकृष्ण – देवी पुराण के मत से काली ने ही कृष्ण का स्वरूप धारण किया है।

"तो इससे क्या हुआ? वे अनन्त हैं और उनके मार्ग भी अनन्त हैं।"

मणि – अब मैं समझा, आप जैसा कहते हैं, छत पर चढ़ना ही इष्ट है, चाहे जिस तरह चढ़ सको – जीने से या बाँस लगाकर अथवा रस्सी पकड़कर।

श्रीरामकृष्ण – यह जिसने समझा है, उस पर ईश्वर की दया है। ईश्वर की कृपा हुए

बिना कभी संशय दूर नहीं होता।

"बात यह है कि किसी तरह उन पर भक्ति होनी चाहिए, प्यार होना चाहिए। अनेक खबरों से काम क्या है? एक रास्ते से चलते चलते अगर उन पर प्यार हो जाय तो काम बन गया। प्यार के होने से ही उन्हें आदमी पाता है। इसके बाद अगर जरूरत होगी तो वे समझा देंगे – सब रास्तों की खबर बतला देंगे। ईश्वर पर प्यार होने ही से काम हुआ – तरह तरह के विचारों की क्या आवश्यकता है? आम खाने के लिए आये हो आम खाओ, कितनी डालियाँ हैं, कितने पत्ते हैं, इन सब के हिसाब से क्या मतलब? हनुमान का भाव चाहिए – 'मैं वार, तिथि, नक्षत्र, यह सब कुछ नहीं जानता, मैं तो बस श्रीरामचन्द्रजी का स्मरण किया करता हूँ।' "

मणि – इस समय ऐसी इच्छा होती है कि कर्म बिलकुल घट जायँ और ईश्वर की तरफ मन लगाऊँ।

श्रीरामकृष्ण – अहा! यह होगा क्यों नहीं?

"परन्तु ज्ञानी निर्लिप्त होकर संसार में रह सकता है।"

मणि – जी हाँ, परन्तु निर्लिप्त होकर रहने के लिए विशेष शक्ति चाहिए।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, यह ठीक है। परन्तु तुमने संसार चाहा होगा।

"श्रीकृष्ण राधिका के हृदय में ही थे, परन्तु राधा की इच्छा उनके साथ मनुष्य-रूप में लीला करने की हुई। इसीलिए वृन्दावन में इतनी लीलाएँ हुईं। अब प्रार्थना करो जिससे तुम्हारे सांसारिक कर्म सब घट जायँ।

"और मन से त्याग होने से तुम्हें अन्तिम ध्येय की प्राप्ति हो जायगी।"

मणि – यह तो उनके लिए है जो बाहर का त्याग नहीं कर सकते। ऊँचे दर्जेवालों के लिए तो एक साथ ही सब त्याग होना चाहिए – बाहर का भी और भीतर का भी।

श्रीरामकृष्ण चुप हैं। फिर बातचीत करने लगे।

श्रीरामकृष्ण – तुमने वैराग्य की बातें उस समय कैसी सुनीं?

मणि – जी हाँ, खूब।

श्रीरामकृष्ण – वैराग्य का अर्थ क्या है, जरा कहो तो – सुनूँ।

मणि – वैराग्य का अर्थ सिर्फ संसार से विराग नहीं, ईश्वर पर अनुराग और संसार से विराग है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, ठीक कहा।

"संसार में धन की जरूरत है अवश्य, परन्तु उसके लिए अधिक चिन्ता न करना। यदृच्छालाभ – यही अच्छा है। संचय के लिए इतना न सोचा करो। जो लोग उन्हें मन और अपने प्राण सौंप देते हैं, जो उनके भक्त हैं – शरणागत हैं, वे लोग यह सब इतना नहीं सोचते। जहाँ आय है वहाँ व्यय भी है। एक ओर से रुपया आता है, दूसरी ओर से

खर्च हो जाता है। इसका नाम है यदृच्छालाभ।"

श्रीरामकृष्ण हरिपद की बातें कहने लगे – "उस दिन हरिपद आया था।"

मणि – (सहास्य) – हरिपद कथक है। प्रह्लाद-चरित्र, श्रीकृष्ण की जन्मकथा, यह सब सस्वर बहुत अच्छा कहता है।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, उस दिन मैंने उसकी आँखें देखीं, जान पड़ता था, गुस्से में है। मैंने पूछा, क्या तू ध्यान ज्यादा करता है? वह सिर झुकाये बैठा रहा। तब मैंने कहा, अरे! इतना अच्छा नहीं।

शाम हो गयी है। श्रीरामकृष्ण माता का नाम ले रहे हैं – उनका स्मरण कर रहे हैं।

कुछ देर बाद श्रीठाकुर-मन्दिर में आरती होने लगी। आज सावन की शुक्ला द्वादशी है। झूलनोत्सव का दूसरा दिन है। आकाश में चन्द्रोदय हो गया। मन्दिर, मन्दिर का आँगन, बगीचा, सारे स्थान हँस रहे हैं। धीरे धीरे रात के आठ बजे। कमरे में श्रीरामकृष्ण बैठे हैं। राखाल और मास्टर भी हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – बाबूराम कहता है – 'संसार! अरे बापरे!'

मास्टर – यह सुनी बात है। बाबूराम अभी संसार का हाल क्या जाने!

श्रीरामकृष्ण – हाँ यह ठीक है। निरंजन को देखा है तुमने? – बड़ा सरल है।

मास्टर – जी हाँ। उसके चेहरे में ही आकर्षण है – खींच लेता है। आँखों का भाव कैसा है!

श्रीरामकृष्ण – आँखों का ही भाव नहीं, सब कुछ। उसके विवाह की बात घरवालों ने की थी, उसने कहा, क्यों मुझे डुबाते हो? (हँसते हुए) क्यों जी, लोग कहते हैं, दिन भर मेहनत करके शाम को बीबी के पास जाकर बैठने से बड़ा आनन्द आता है – यह कैसा है?

मास्टर – जी हाँ, जो लोग उसी भाव में हैं, उन्हें आनन्द आता क्यों नहीं? (राखाल से) परीक्षा हो रही है – Leading Question.

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – माँ कहती है, मैं अपने बच्चे का विवाह कर दूँ, तो जी ठिकाने हो। धूप में झुलसकर छाँह में थोड़ी देर बैठेगा, तो कुछ ठण्डा तो हो ही लेगा!

मास्टर – जी हाँ। माँ-बाप भी तरह-तरह के होते हैं। ज्ञानी पिता कभी अपने बच्चों को विवाह के बन्धन में नहीं डालता और अगर वह ऐसा करता है तब तो क्या कहना चाहिए उसके ज्ञान को! (श्रीरामकृष्ण हँसते हैं।)

श्रीयुत अधर सेन कलकत्ते से आये हैं। श्रीरामकृष्ण को भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया, जरा देर बैठकर काली के दर्शन करने चले गये।

मास्टर ने भी काली के दर्शन किये। फिर चाँदनी-घाट पर आकर गंगा के तट पर बैठे। गंगा का पानी ज्योत्स्ना में चमक रहा है। ज्वार का आना अभी शुरू हुआ है। मास्टर

एकान्त में बैठे हुए श्रीरामकृष्ण के अद्‌भुत चरित्र की चिन्ता कर रहे हैं। उनकी अद्‌भुत समाधि, क्षण क्षण में भाव, प्रेम और आनन्द, विश्रामविहीन ईश्वरी कथाप्रसंग, भक्तों पर अकृत्रिम स्नेह, बालक का-सा स्वभाव, यही सब सोच रहे हैं।

अधर और मास्टर श्रीरामकृष्ण के कमरे में गये। अधर चिटगाँव में दफ्तर के काम से गये थे। वे चन्द्रनाथ तीर्थ और सीताकुण्ड की बातें कह रहे हैं।

अधर – सीताकुण्ड के पानी में अग्नि की शिखाएँ उठती रहती हैं, जीभ के आकार की।

श्रीरामकृष्ण – यह किस तरह होता है?

अधर – पानी में फास्फोरस (Phosphorus) है।

श्रीयुत राम चैटर्जी भी कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण अधर से उनकी तारीफ कर रहे हैं। और कह रहे हैं – "राम है, इसीलिए हम लोगों को अधिक चिन्ता नहीं करनी पड़ती। हरीश, लाटू इन्हें वह बुला बुलाकर खिलाया करता है। वे सब कहीं एकान्त में ध्यान करते रहते हैं और राम उन्हें बुला लाता है।"

□□□

परिच्छेद ८८

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

(१)

अधर के घर में नरेन्द्रादि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण अधर के घर के बैठकखाने में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। बैठकखाना दुमंजले पर है। श्रीयुत नरेन्द्र, दोनों भाई मुखर्जी, भवनाथ, मास्टर, चुनीलाल, हाजरा आदि भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हैं। दिन के तीन बजे होंगे। आज शनिवार है, ६ सितम्बर १८८४।

भक्तगण प्रणाम कर रहे हैं। मास्टर के प्रणाम करने के बाद श्रीरामकृष्ण अधर से पूछते हैं, क्या निताई डाक्टर न आयेगा?

श्रीयुत नरेन्द्र गायेंगे, इसके लिए बन्दोबस्त हो रहा है। तानपूरा बाँधते समय तार टूट गया। श्रीरामकृष्ण ने कहा, अरे यह क्या किया! तब नरेन्द्र अपना तबला ठीक करने लगे। श्रीरामकृष्ण कहते हैं – अरे तुम तबला ठोंक रहे हो पर मुझे तो ऐसा मालूम होता है मानो कोई मेरे गाल पर चपत मार रहा हो।

कीर्तन के गीत के सम्बन्ध में बातचीत हो रही है। नरेन्द्र कह रहे हैं – कीर्तन में ताल-सम आदि कुछ नही हैं, इसीलिए इतना Popular (जनप्रिय) है और लोग उसे पसन्द करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – यह तू क्या कह रहा है? गाना करुणापूर्ण होता है, इसीलिए लोग इतना चाहते हैं।

नरेन्द्र गा रहे हैं –

(१) हे दीनशरण! तुम्हारा नाम बड़ा ही मधुर है।

(२) क्या मेरे दिन व्यर्थ ही चले जायेंगे? हे नाथ! सदा ही आशा-पथ पर मेरी दृष्टि लगी हुई हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से, सहास्य) – इसने पहली भेंट के समय यही गाना गाया था।

नरेन्द्र ने और भी दो-एक गाने गाये। फिर वैष्णवचरण ने एक गाना गाया।

श्रीरामकृष्ण – 'ऐ वीणा! तू ईश्वर का नाम ले,' यह गाना एक बार गाओ।

वैष्णवचरण गा रहे हैं –

"ऐ वीणा, तू ईश्वर का नाम ले। उनके श्रीचरणों को छोड़ तुझे परम-तत्त्व की प्राप्ति न होगी। उनके नाम से पाप और ताप दूर हो जाते हैं। तू 'हरे कृष्ण' 'हरे कृष्ण' कहती जा। उनकी कृपा होगी तो मैं भवसागर में फिर न रह जाऊँगा, न उसके लिए मुझे कोई चिन्ता होगी। वीणा, एक ही बार उनका नाम ले; नाम के सिवा और दूसरा अवलम्ब नहीं है। गोविन्ददास कहते हैं, दिन चले जा रहे हैं, सावधान रहना जिससे कि मैं अपार समुद्र में कहीं बह न जाऊँ।"

गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया है। वे उसी आवेश में कहते हैं – 'अहा! हरे कृष्ण कहो – हरे कृष्ण कहो।'

यह कहते हुए श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। भक्तगण चारों ओर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण को देख रहे हैं। कमरा आदमियों से भर गया है।

कीर्तनिया उस गाने को समाप्त कर एक दूसरा गाना गाने लगा – 'श्रीगौरांग सुन्दर नव नटवर तप्तकांचनकाय' वह गा रहा था, श्रीरामकृष्ण उठकर खड़े हो गये और नृत्य करने लगे। फिर बैठकर बाँहें फैलाकर स्वयं उसके पद गा रहे हैं।

गाते ही गाते श्रीरामकृष्ण को फिर भावावेश हो गया। सिर झुकाये हुए समाधिलीन हो गये। सामने तकिया पड़ा हुआ है, उस पर सिर झुककर ढुलक गया है। कीर्तनिया फिर गा रहे हैं –

"हरिनाम के सिवा संसार में और कौनसा धन है? मधाई, मधुर स्वर से तू उनके नाम का कीर्तन कर। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।"

कीर्तनिया ने एक गाना और गाया। श्रीरामकृष्ण प्रेमोन्मत्त हो गये, नृत्य कर रहे हैं। वह अपूर्व नृत्य देखकर नरेन्द्र आदि भक्तगण स्थिर न रह सके। सब श्रीरामकृष्ण के साथ नृत्य करने लगे।

नृत्य करते हुए श्रीरामकृष्ण को समाधि हो रही है। उस समय उनकी अन्तर्दशा हो गयी। जबान बन्द हो गयी। सर्वांग स्थिर हो गया। भक्तगण उन्हें घेरकर नाच रहे हैं। प्रेमोन्मत्त की तरह।

कुछ प्राकृत दशा में आते ही श्रीरामकृष्ण ने गाना शुरू किया।

आज अधर का बैठकखाना श्रीवास का आँगन हो रहा है। हरिनाम की ध्वनि सुनकर आम सड़क पर कितने ही आदमी एकत्र हो गये हैं।

भक्तों के साथ बड़ी देर तक नृत्य करके श्रीरामकृष्ण ने आसन ग्रहण किया। भावावेश अब भी है। उसी अवस्था में नरेन्द्र से कह रहे हैं, "वही गाना गा, 'माँ, मुझे

पागल कर दे।' "

श्रीरामकृष्ण की आज्ञा पाकर नरेन्द्र ने गाया – 'माँ मुझे पागल कर दे।' श्रीरामकृष्ण ने एक दूसरा गाना – 'चिदानन्द सिन्धुनीरे' – गाने के लिए कहा। नरेन्द्र गा रहे हैं –

"चिदानन्द सिन्धु मे प्रेमानन्द की तरंगें उठ रही है। वह महाभाव है, उस रसलीला की माधुरी का मै क्या वर्णन करूँ! महायोग में सब कुछ एकाकार हो गया। देश-काल की सीमा, भेदाभेद, सब दूर हो गये। अब आनन्द में मस्त होकर बाहुओ को उठा, मन! उनके नाम का कीर्तन कर।"

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – और 'चिदाकाश' वाला? – नहीं, रहे, वह बड़ा लम्बा है, न? अच्छा धीरे-धीरे सही।

नरेन्द्र ने वह गाना भी गाया। श्रीरामकृष्ण ने एक और गाना गाने के लिए कहा, उसे भी गाया।

श्रीरामकृष्ण और भक्तगण जरा विश्राम कर रहे हैं। नरेन्द्र ने धीरे-धीरे श्रीरामकृष्ण के कानों में कहा – 'आप वह गाना जरा गाइयेगा?' श्रीरामकृष्ण ने कहां, मेरा गला बैठ गया है। कुछ देर बाद उन्होंने पूछा, कौनसा गाना? नरेन्द्र – 'भुवन-रंजन-रूप'। श्रीरामकृष्ण ने धीरे-धीरे गाकर नरेन्द्र को सुना दिया।

(२)

श्रीरामकृष्ण तथा भक्त का जाति-विचार

गाना समाप्त हो गया। नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तगण श्रीरामकृष्ण से वार्तालाप कर रहे है। हँसते हुए कह रहे हैं, हाजरा नाचा था।

नरेन्द्र – (सहास्य) – जी हाँ, धीरे-धीरे!

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – धीरे-धीरे?

नरेन्द्र – (सहास्य) – उसकी तोंद भी नाचती थी! (सब हँसते हैं।)

शशधर जिस मकान में हैं, उस मकान में श्रीरामकृष्ण के निमन्त्रण की बात हो रही है।

नरेन्द्र – मकानवाला खिलायेगा?

श्रीरामकृष्ण – सुना है, उसका स्वभाव अच्छा नहीं है, लुच्चा है।

नरेन्द्र – इसीलिए जिस दिन शशधर से आपकी प्रथम भेंट हुई थी, उस दिन उसके छुये हुए गिलास से आपने पानी नहीं पिया। आपने कैसे पहचाना कि उसका स्वभाव अच्छा नहीं है?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाजरा एक घटना और जानता है। उस देश में –

सिहोड़ में – हृदय के घर में वह हुई थी।

हाजरा – वह एक वैष्णव है – मेरे साथ आपके दर्शन करने आया था। ज्योंही आकर बैठा कि आप उसकी ओर पीठ फेरकर बैठ गये।

श्रीरामकृष्ण – सुना, अपनी मौसी से फँसा था – पीछे से पता चला। (नरेन्द्र से) पहले तू कहता था, ये सब मेरे मन के विकार हैं।

नरेन्द्र – मैं तब जानता थोड़े ही था। अब तो कई बार देखा – सब मिलते हैं।

नरेन्द्र के कहने का तात्पर्य यह है कि श्रीरामकृष्ण भावावस्था में लोगों का अन्तर भी देख लेते हैं। इसी की उन्होंने कितनी ही बार परीक्षा ली है।

श्रीरामकृष्ण और भक्तों की सेवा के लिए अधर ने बड़ा इन्तजाम किया है। उन्होंने भोजन के लिए सब को बुलाया।

महेन्द्र और प्रियनाथ, दोनों मुखर्जी भाइयों से श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, क्यों जी, तुम भोजन करने न चलोगे?

उन्होंने विनयपूर्वक कहा – जी, हमें अब रहने दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – ये लोग सब कुछ करते हैं। बस इतने ही से इन्हें संकोच है।

"एक औरत के जेठों के नाम हरि और कृष्ण थे। उसे हरिनाम तो कहना ही होगा। इधर 'हरे कृष्ण' कहने से जेठों के नाम आते थे। इसलिए वह जपती थी –

'फरे फृष्ट, फरे फृष्ट, फृष्ट फृष्ट फरे फरे
फरे राम, फरे राम, राम राम फरे फरे।' "

अधर जाति के स्वर्णवणिक थे। इसीलिए कोई-कोई ब्राह्मण भक्त उनके यहाँ भोजन करते हुए संकोच करते थे। कुछ दिन बाद जब उन्होंने देखा, श्रीरामकृष्ण स्वयं भोजन कर रहे हैं, तब उनका वह भाव दूर हो गया।

रात के नौ बजे नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तों के साथ आनन्दपूर्वक श्रीरामकृष्ण ने भोजन किया।

अब बैठकखाने में आकर विश्राम कर रहे हैं। फिर दक्षिणेश्वर लौटने का उद्योग होने लगा।

कल रविवार है। दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्ण के आनन्द के लिए मुखर्जी भ्राताओं ने कीर्तन का बन्दोबस्त किया है। श्यामदास कीर्तनिये का गाना होगा। श्यामदास को अपने यहाँ बुलाकर राम ने कीर्तन सीखा था।

श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र से कल दक्षिणेश्वर जाने के लिए कह रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (नरेन्द्र से) – कल जाना, अच्छा?

नरेन्द्र – अच्छा जी, जाने की कोशिश करूँगा।

श्रीरामकृष्ण – स्नान-भोजन वही करना।

"ये (मास्टर) भी जायेगे अगर कोई अडचन न हो। (मास्टर से) तुम्हारी बीमारी तो अब अच्छी हो गयी है न? – अब पथ्यवाली व्यवस्था तो नही है?"

मास्टर – जी नही – मै भी जाऊँगा।

नित्यगोपाल वृन्दावन मे है। कई दिन हुए, चुनीलाल वृन्दावन से लौटे है। श्रीरामकृष्ण उनसे नित्यगोपाल का हाल पूछ रहे है। अब दक्षिणेश्वर चलने की तैयारी होने लगी। मास्टर ने भूमिष्ठ हो उनके पादपद्मो मे माथा टेककर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने स्नेहपूर्वक उनसे कहा, तो अब जाओ।

(नगेन्द्रादि भक्तो से सस्नेह) –

"नरेन्द्र, भवनाथ, तुम लोग जाना।"

नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्तो ने भूमिष्ठ हो उन्हे प्रणाम किया। उनके अपूर्व कीर्तनानन्द और भक्तो के साथ सुन्दर नृत्य की याद करते हुए भक्तगण घर लौटे।

आज भादो की कृष्णा प्रतिपदा, चादनी रात है। श्रीरामकृष्ण भवनाथ, हाजरा आदि भक्तो के साथ गाडी पर बैठकर दक्षिणेश्वर की ओर जा रहे है।

□□□

परिच्छेद ८९

प्रवृत्ति या निवृत्ति?

(१)

दक्षिणेश्वर में राम, बाबूराम आदि भक्तों के संग में

श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर मन्दिर में, अपने उसी कमरे में छोटी खाट पर भक्तों के साथ बैठे हैं। दिन के ग्यारह बजे होंगे, अभी उन्होंने भोजन नहीं किया।

कल शनिवार को श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ श्रीयुत अधर सेन के यहाँ गये थे। नाम-संकीर्तन के महोत्सव द्वारा भक्तों का जीवन सफल कर आये थे। आज यहाँ श्यामदास का कीर्तन होगा। श्रीरामकृष्ण को कीर्तनानन्द में देखने के लिए बहुत से भक्तों का समागम हो रहा है।

पहले बाबूराम, मास्टर, श्रीरामपुर के ब्राह्मण, मनोमोहन, भवनाथ, किशोरीलाल आये; फिर चुनीलाल, हरिपद, दोनों मुखर्जी भ्राता, राम, सुरेन्द्र, तारक, अधर और निरंजन आये। लाटू, हरीश और हाजरा आजकल दक्षिणेश्वर में ही रहते हैं। श्रीयुत रामलाल काली की पूजा करते हैं और श्रीरामकृष्ण की भी देखरेख रखते हैं। श्रीयुत राम चक्रवर्ती पर विष्णुमन्दिर की पूजा का भार है। लाटू और हरीश, दोनों श्रीरामकृष्ण की सेवा करते हैं। आज रविवार है, ७ सितम्बर, १८८४।

मास्टर के आकर प्रणाम करने पर श्रीरामकृष्ण ने पूछा, नरेन्द्र नहीं आया?

उस दिन नरेन्द्र नहीं आ सके। श्रीरामपुर के ब्राह्मण, रामप्रसाद के गाने की किताब लेते आये हैं और उसी पुस्तक से गाने पढ़-पढ़कर श्रीरामकृष्ण को सुना रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – हाँ पढ़ो।

ब्राह्मण एक गीत पढ़कर सुनाने लगे। उसमें लिखा था – माँ वस्त्र धारण करो।

श्रीरामकृष्ण – यह सब रहने दो, विकट गीत। ऐसा कोई गीत पढ़ो जिसमें भक्ति हो।

ब्राह्मण – कौन कहे कि काली कैसी है, षड्दर्शनों को भी जिसके दर्शन नहीं होते।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – कल अधर सेन के यहाँ भावावस्था में एक ही तरह बैठे रहने के कारण पैरों में दर्द होने लगा था। इसीलिए बाबूराम को ले जाया करता हूँ।

सहृदय है।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे –

"ऐ सखि री, मैं अपना हृदय किसके पास खोलूँ – मुझे बोलना मना जो है। बिना किसी ऐसे को पाये जो मेरी व्यथा समझ सके, मैं तो मरी जा रही हूँ। केवल उसकी आँखों में आँखें डालकर मुझे अपने हृदय के प्रेमी का मिलन प्राप्त हो जायगा – परन्तु ऐसा तो कोई विरला ही होता है जो आनन्दसागर में निरन्तर बहता रहे।

"ये सब बाउलों (एक सम्प्रदाय) के गीत हैं।

"शाक्त मत में सिद्ध को कौल कहते हैं, वेदान्त के मत से परमहंस कहते हैं। बाउल-वैष्णवों के मत में साई कहते हैं – साई अन्तिम सीमा है।

"बाउल जब सिद्ध हो जाता है तब साई होता है। तब सब अभेद हो जाता है। आधी माला गौ के हाड़ों की और आधी तुलसी की पहनता है। 'हिन्दुओं का नीर और मुसलमानों का पीर' बन जाता है।

"साई जो होते हैं, वे अलख जगाया करते है। इसे वैदिक मत से ब्रह्म कहते हैं; वे लोग कहते हैं अलख। जीवों के सम्बन्ध में कहते हैं, अलख से आते हैं और अलख में जाते है। अर्थात् जीवात्मा अव्यक्त से आता है और अव्यक्त में ही लीन हो जाता है।

"वे लोग पूछते हैं, हवा की खबर जानते हो?

"अर्थात् कुण्डलिनी के जागने पर, इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना के भीतर से जो महावायु चढ़ती है उसकी खबर है?

"पूछते हैं, किस पैठ में हो? – छः पैठ – छहों चक्र हैं।

"अगर कोई कहे कि पांचवें में है, तो समझना चाहिए कि विशुद्ध चक्र तक मन की पहुँच है।

(मास्टर से) "तब निराकार के दर्शन होते हैं, जैसा गीत में है।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण कुछ स्वर करके कह रहे हैं – "उसके ऊर्ध्व भाग में कमल आकाश है, उस आकाश के अवरुद्ध हो जाने पर सब कुछ आकाश हो जाता है।

"एक बाउल आया था। मैंने उससे पूछा, 'क्या तुम्हारा रस का काम हो गया? – कड़ाही उतर गयी?' रस को जितना ही जलाओगे, उतना ही Refine (साफ) होगा। पहले रहता है ईख का रस – फिर होती है राब – फिर उसे जलाओ – तो होती है चीनी – और फिर मिश्री। धीरे धीरे और भी साफ हो रहा है।

"कड़ाही कब उतरेगी, अर्थात् साधना की समाप्ति कब होगी? – जब इन्द्रियाँ जीत ली जायेंगी। जैसे जोंक पर नमक छोड़ने से वे आप ही छूटकर गिर जाती हैं वैसे ही इन्द्रियाँ भी शिथिल हो जायेंगी। स्त्री के साथ रहता है, पर वह रमण नहीं करता।

"उनमें बहुत से लोग राधातन्त्र के मत से चलते हैं। पाँचों तत्त्व लेकर साधना करते

हैं – पृथ्वीतत्त्व, जलतत्त्व, अग्नितत्त्व, वायुतत्त्व, आकाशतत्त्व, – मल, मूत्र, रज, वीर्य, ये सब तत्त्व ही हैं। ये साधनाएँ बड़ी घृणित हैं; जैसे पाखाने के भीतर से घर में प्रवेश करना।

"एक दिन मैं दालान में भोजन कर रहा था। घोषपाड़ा के मत का एक आदमी आया। आकर कहने लगा – 'तुम स्वयं खाते हो या किसी को खिलाते हो?' इसका यह अर्थ है जो सिद्ध होता है, वह अन्तर में ईश्वर देखता है।

"जो लोग इस मत से सिद्ध होते हैं, वे दूसरे मत के लोगों को 'जीव' कहते हैं। विजातीय मनुष्यों के सामने बातचीत नहीं करते। कहते हैं, यहाँ 'जीव' हैं!

"उस देश में मैंने इस मत को माननेवाली एक स्त्री देखी है। उसका नाम सरी (सरस्वती) पाथर है। इस मत के लोग आपस में एक दूसरे के यहाँ तो भोजन करते हैं, परन्तु दूसरे मत वालों के यहाँ नहीं खाते। मल्लिक घरानेवालों ने सरी पाथर के यहाँ तो भोजन किया, परन्तु हृदय के यहाँ नहीं खाया। कहते है, ये सब 'जीव' हैं! (सब हँसते है।)

"मैं एक दिन उसके यहाँ हृदय के साथ घूमने गया था। तुलसी के पेड़ खूब लगाये है। उसने चना-चिउड़ा दिया, मैंने थोड़ा सा खाया, हृदय तो बहुत सा खा गया – फिर बीमार भी पड़ा।

"वे लोग सिद्धावस्था को सहज अवस्था कहते है। एक दर्जे के आदमी है। वे 'सहज सहज' चिल्लाते फिरते है। वे सहज अवस्था के दो लक्षण बतलाते हैं। एक यह कि देह में कृष्ण की गन्ध भी न रहेगी और दूसरा यह कि पद्म पर भौंरा बैठेगा, परन्तु मधुपान न करेगा। कृष्ण की गन्ध भी न रह जायगी, इसका अर्थ यह है कि ईश्वर के भाव सब अन्तर मे ही रहेंगे, बाहर कोई लक्षण प्रकट न होगा – नाम का जप भी न करेगा। दूसरे का अर्थ है, कामिनी और कांचन की आसक्ति का त्याग – जितेन्द्रियता।

"वे लोग ठाकुर-पूजन, मूर्तिपूजन, यह सब पसन्द नही करते – जीता-जागता आदमी चाहते हैं। इसीलिए उनके दर्जे के आदमियों को कर्ताभजा कहते हैं। कर्ताभजा अर्थात् जो लोग कर्ता को – गुरु को ईश्वर समझते और इसी भाव से उनकी पूजा करते हैं।"

(२)

श्रीरामकृष्ण और सर्वधर्मसमन्वय

श्रीरामकृष्ण – देखा, कितने तरह के मत हैं। जितने मत उतने पथ। अनन्त मत हैं और अनन्त पथ हैं।

भवनाथ – अब उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – एक को बलपूर्वक पकड़ना पड़ता है। छत पर जाने की चाह है, तो जीने से भी चढ़ सकते हो; बॉस की सीढ़ी लगाकर भी चढ़ सकते हो; रस्सी की सीढ़ी लगाकर, सिर्फ रस्सी पकड़कर या केवल एक बॉस के सहारे, किसी भी तरह से छत पर पहुँच सकते हो, परन्तु एक पैर इसमे और दूसरा उसमें रखने से नही होता। एक को दृढ़ भाव से पकड़े रहना चाहिए। ईश्वरलाभ करने की इच्छा हो तो एक ही रास्ते पर चलना चाहिए।

"और दूसरे मतो को भी एक एक मार्ग समझना। यह भाव न हो कि मेरा ही मार्ग ठीक है, और सब झूठ हैं; द्वेष न हो।

"अच्छा, मै किस मार्ग का हूँ? केशव सेन कहता था, आप हमारे मत के है – निराकार मे आ रहे हैं। शशधर कहता है, ये हमारे हैं; विजय भी कहता है, ये हमारे मत के है।"

श्रीरामकृष्ण सभी मार्गो से साधना करके ईश्वर के निकट पहुँचे थे; इसलिए सब लोग उन्हे अपने ही मत का आदर्श मानते थे।

श्रीरामकृष्ण मास्टर आदि दो-एक भक्तो के साथ पंचवटी की ओर जा रहे है – हाथ मुँह धोयेंगे। दिन के बारह बजे का समय है। अब ज्वार आनेवाली है। देखने के लिए श्रीरामकृष्ण पंचवटी के रास्ते पर प्रतीक्षा कर रहे है।

भक्तों से कह रहे हैं – "ज्वार और भाटा कितने आश्चर्य के विषय हैं!

"परन्तु एक बात देखो, समुद्र के पास ही नदियों में ज्वार-भाटा होते हैं। परन्तु समुद्र से बहुत दूर होने पर उसी नदी में ज्वा' भाटा नही होता, बल्कि एक ही ओर बहाव रहता है। इसका क्या अर्थ? – इस भाव का अपने आध्यात्मिक जीवन पर आरोप करो। जो लोग ईश्वर के बहुत पास पहुँच जाते हैं, उन्ही में भक्ति और भाव होता है। और, किसी किसी को – ईश्वरकोटि को – महाभाव, प्रेम, यह सब होता है।

(मास्टर से) "अच्छा, ज्वार-भाटा क्यों होते हैं?"

मास्टर – अंग्रेजी ज्योतिष-शास्त्र मे लिखा है, सूर्य और चन्द्र के आकर्षण से ऐसा होता है।

यह कहकर मास्टर मिट्टी मे रेखाएँ खींचकर सूर्य और चन्द्र की गति बतलाने लगे। थोड़ी देर तक देखकर श्रीरामकृष्ण ने कहा – बस रहने दो, मेरा माथा घूमने लगा।

बात हो ही रही थी कि ज्वार आने की आवाज होने लगी। देखते ही देखते जलोच्छ्वास का घोर शब्द होने लगा। ठाकुरमन्दिर की तटभूमि में टकराता हुआ बड़े वेग से पानी उत्तर की ओर चला गया। श्रीरामकृष्ण एक नजर से देख रहे हैं। दूर की नाव देखकर बालक की तरह कहने लगे, देखो देखो – अब उस नाव की क्या हालत होती है!

श्रीरामकृष्ण मास्टर से बातचीत करते हुए पंचवटी के बिलकुल नीचे पहुँच गये।

उनके हाथ में एक छाता था, उसे पंचवटी के चबूतरे पर रख दिया। नारायण को वे साक्षात् नारायण देखते हैं इसीलिए बहुत प्यार करते हैं। नारायण स्कूल में पढ़ता है। इस समय श्रीरामकृष्ण उसी की बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – नारायण को देखा है तुमने? कैसा स्वभाव है! क्या लड़के, बच्चे, बूढ़े सब से मिलता है। विशेष शक्ति के बिना यह बात नहीं होती। और सब लोग उसे प्यार करते हैं। अच्छा, क्या वह यथार्थ ही सरल है।

मास्टर – जी हाँ, जान तो ऐसा ही पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण – सुना, तुम्हारे यहाँ जाता है।

मास्टर – जी हाँ, दो-एक बार आया था।

श्रीरामकृष्ण – क्या एक रुपया तुम उसे दोगे या काली से कहूँ?

मास्टर – अच्छा तो है, मैं ही दे दूँगा।

श्रीरामकृष्ण – बड़ा अच्छा है। जो ईश्वर के अनुरागी हैं उन्हें देना अच्छा है। इससे धन का सदुपयोग होता है। सब रुपये संसार को सौंपने से क्या होगा?

किशोरीलाल के लड़के-बच्चे हो गये हैं। वेतन कम पाता है इससे पूरा नहीं पड़ता। श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं – "नारायण कहता था, किशोरीलाल के लिए एक नौकरी ठीक कर दूँगा। नारायण को यह बात याद दिलाना।"

मास्टर पंचवटी में खड़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण कुछ देर बाद झाऊतल्ले से लौटे। मास्टर से कह रहे हैं – जरा बाहर एक चटाई बिछाने के लिए कहो, मैं थोड़ी देर बाद जाता हूँ, लेटूँगा।

श्रीरामकृष्ण कमरे में पहुँचकर कह रहे हैं – तुममें से किसी को छाता ले आने की बात याद नहीं रही। (सब हँसते हैं।) जल्दबाज आदमी पास की चीज भी नहीं देखते। एक आदमी एक दूसरे के यहाँ कोयले में आग सुलगाने के लिए गया था, और इधर उसके हाथ में लालटेन जल रही थी।

"एक आदमी अंगौछा खोज रहा था, अन्त में वह उसी के कन्धे पर पड़ा हुआ मिला!"

श्रीरामकृष्ण के लिए काली का अन्न-भोग लाया गया। श्रीरामकृष्ण प्रसाद पायेंगे। दिन के एक बजे का समय होगा। वे भोजन करके जरा विश्राम करेंगे। भक्तगण कमरे में बैठे ही रहे। समझाने पर वे बाहर जाकर बैठे। हरीश, निरंजन और हरिपद पाकशाला में प्रसाद पायेंगे। श्रीरामकृष्ण हरीश से कह रहे हैं, अपने लिए थोड़ा सा अमरस लेते जाना।

श्रीरामकृष्ण विश्राम करने लगे। बाबूराम से कहा, "बाबूराम, जरा मेरे पास आ।" बाबूराम पान लगा रहे थे, कहा, "मैं पान लगा रहा हूँ।"

श्रीरामकृष्ण – रख उधर, फिर पान लगाना।

श्रीरामकृष्ण विश्राम कर रहे हैं। इधर पंचवटी में और बकुल के पेड़ के नीचे कुछ भक्त बैठे हुए हैं – दोनों मुखर्जी भाई, चुनीलाल, हरिपद, भवनाथ और तारक। तारक वृन्दावन से अभी अभी लौटे हैं। भक्तगण उनसे वृन्दावन की बातें सुन रहे हैं। तारक नित्यगोपाल के साथ अब तक वृन्दावन में थे।

(३)

कीर्तनानन्द में

श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं। श्यामदास माथुर अपने आदमियों को लेकर कीर्तन गा रहे हैं – 'सुखमय सायर (सागर) मरुभूमि भइल, जलद निहारइ चातकि मरि गइल।' श्रीराधा का यह विरह-वर्णन हो रहा है। सुनकर श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो रहा है। वे छोटी खाट पर बैठे हुए हैं। बाबूराम, निरंजन, राम, मनोमोहन, मास्टर, सुरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्त जमीन पर बैठे हैं। गाना जम नहीं रहा है।

कोन्नगर के नवाई चैतन्य से श्रीरामकृष्ण कीर्तन करने के लिए कह रहे हैं। नवाई मनोमोहन के चाचा हैं। पेन्शन लेकर कोन्नगर में श्रीगंगाजी के तट पर भजन-साधन करते हैं। श्रीरामकृष्ण का प्राय: दर्शन करने आते हैं।

नवाई उच्च कण्ठ से संकीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण आसन छोड़कर नृत्य करने लगे। साथ ही नवाई और भक्तगण उन्हें घेरकर नृत्य करने लगे। कीर्तन खूब जम गया। महिमाचरण भी श्रीरामकृष्ण के साथ नृत्य कर रहे हैं।

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। हरिनाम के बाद अब आनन्दमयी का नाम ले रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भावपूर्ण हैं। नाम लेते हुए ऊर्ध्वदृष्टि हो रहे हैं।

गाना – "माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना।"

गाना – "उसका चिन्तन करने पर भाव का उदय होता है। जैसा भाव होता है, फल भी वैसा ही मिलता है। इसकी जड़ विश्वास है। जो काली का भक्त है, उसे तो जीवन्मुक्त कहना चाहिए। वह सदा ही आनन्द में रहता है। अगर उनके चरणरूपी सुधा-सरोवर में चित्त लगा रहा तो समझना चाहिए, उसके लिए पूजा, जप, होम, बलि, ये सब कुछ भी नहीं हैं।"

श्रीरामकृष्ण ने तीन-चार गाने और गाये। अन्त में जो पद उन्होंने गाया, उसका भाव यह है – "मन! आदरणीया श्यामा माँ को यत्नपूर्वक हृदय में रखना। तू देख और मैं देखूँ, कोई दूसरा उन्हें न देखने पाये।"

यह गाना गाते हुए श्रीरामकृष्ण जैसे खड़े हो गये। माता के प्रेम में पागल हो गये। 'आदरणीया श्यामा माँ को हृदय में रखना' यह इतना अंश बार बार भक्तों को गाकर सुना रहे हैं। शराब पीकर मतवाले हुए की तरह सब को गाकर सुना रहे हैं। श्रीरामकृष्ण गाते

हुए बहुत झूम रहे हैं। यह देख निरंजन उन्हें पकड़ने के लिए बढ़े। श्रीरामकृष्ण ने मधुर स्वरों में कहा – 'मत छू।' श्रीरामकृष्ण को नाचते हुए देखकर भक्तगण उठकर खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण मास्टर का हाथ पकड़कर कहते हैं – 'नाच।'

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए हैं। भाव की पूर्ण मात्रा है – बिलकुल मतवाले हैं।

भाव का कुछ उपशम होने पर कह रहे है – ॐ ॐ ॐ काली! भक्तों में से कितने ही खड़े हैं। महिमाचरण खड़े हुए श्रीरामकृष्ण को पंखा झुल रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महिमाचरण से) – आप लोग बैठिये।

"आप वेद से जरा कुछ सुनाइये।"

महिमाचरण सुना रहे हैं – जय यज्वमान आदि; फिर वे महानिर्वाण-तन्त्र की स्तुति का पाठ करने लगे –

"ॐ नमस्ते सते ते जगत्कारणाय नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय।।
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय।।
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम् त्वमेकं जगत्पालकं स्वप्रकाशम्।।
त्वमेकं जगत्कर्तृपातृप्रहर्तृ त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम्।।
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम् गति: प्राणिनां पावनं पावनानाम्।।
महोच्चै: पदानां नियन्तृ त्वमेकम् परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम्।।
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो वयं त्वां जगत्साक्षिरूपं नमाम:।।
सदेकं निधानं निरालम्बमीशम् भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजाम:।।"

श्रीरामकृष्ण ने हाथ जोड़कर स्तुति सुनी। पाठ हो जाने पर हाथ जोड़कर उन्होंने प्रणाम किया। भक्तों ने भी प्रणाम किया।

कलकत्ते से अधर आये। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – आज खूब आनन्द रहा। महिम चक्रवर्ती भी इधर झुक रहा है। कीर्तन में खूब आनन्द रहा – क्यों?

मास्टर – जी हाँ।

महिमाचरण ज्ञानचर्चा करते हैं। आज उन्होंने कीर्तन किया है, और नाचे भी हैं। श्रीरामकृष्ण इस बात पर आनन्द प्रकट कर रहे हैं।

शाम हो रही है। भक्तों में से बहुतेरे श्रीरामकृष्ण को प्रणाम कर बिदा हुए।

(४)

प्रवृत्ति या निवृत्ति? अधर का कर्म

शाम हो गयी है। दक्षिणवाले लम्बे बरामदे में और पश्चिम के गोल बरामदे में बत्ती

जला दी गयी। कुछ देर बाद चन्द्रोदय हुआ। मन्दिर का आँगन, बगीचे के रास्ते, गंगातट, पंचवटी, पेड़ों का ऊपरी हिस्सा, सब कुछ चाँदनी में हँस रहे थे।

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे हुए भावावेश में माता का स्मरण कर रहे हैं।

अधर आकर बैठे। कमरे में मास्टर और निरंजन भी हैं। श्रीरामकृष्ण अधर के साथ बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अजी, तुम अब आये! कितना कीर्तन और नृत्य हो गया। श्यामदास का कीर्तन था – राम के उस्ताद का। परन्तु मुझे बहुत अच्छा न लगा। उठने की इच्छा भी नहीं हुई। उस आदमी की बात फिर पीछे से मालूम हुई। गोपीदास के साथवाले ने कहा, मेरे सिर पर जितने बाल हैं, उतनी उसकी रखेलियाँ हैं! (सब हँसते हैं।) क्या तुम्हारा काम हुआ?

अधर डिप्टी हैं। तीन सौ तनख्वाह पाते हैं। उन्होंने कलकत्ता म्यूनिसिपल्टी के वाइस चेअरमैन के लिए अर्जी दी थी। वहाँ हजार रुपये महीने की तनख़्वाह है। इसके लिए अधर कलकत्ते के बहुत बड़े-बड़े आदमियों से मिले थे।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर और निरंजन से) – हाजरा ने कहा था, अधर का काम हो जायगा, तुम जरा माँ से कहो। अधर ने भी कहा था। मैंने माँ से कहा था, 'माँ, यह तुम्हारे यहाँ आयाजाया करता है, अगर उसे जगह मिलनी हो तो दे दो –' परन्तु इसके साथ ही माँ से मैंने यह भी कहा था कि माँ, इसकी बुद्धि कितनी हीन है? ज्ञान और भक्ति की प्रार्थना न करके तुम्हारे पास यह सब चाहता है!

(अधर से) "क्यों नीच प्रकृति के आदमियों के यहाँ इतना चक्कर मारते फिरे? इतना देखा और समझा, सातों काण्ड रामायण पढ़कर सीता किसकी भार्या थी, इतना भी नहीं समझे?"

अधर – संसार में रहने पर इन सब के बिना किये काम भी नही चलता। आपने तो मना भी नहीं किया था।

श्रीरामकृष्ण – निवृत्ति ही अच्छी है, प्रवृत्ति अच्छी नही। इस अवस्था के बाद मुझे तनख्वाह के बिल पर दस्तखत करने के लिए कहा था! मैंने कहा, 'यह मुझसे न होगा। मैं तो कुछ चाहता नहीं। तुम्हारी इच्छा हो तो किसी दूसरे को दे दो।'

"एकमात्र ईश्वर का दास हूँ – और किसका दास बनूँ?

"मुझे खाने की देर होती थी, इसलिए मल्लिक ने भोजन पकाने के लिए एक ब्राह्मण नौकर रख दिया था। एक महीने में एक रुपया दिया था। तब मुझे लज्जा हुई, उसके बुलाने से ही दौड़ना पड़ता था! – खुद जाऊँ वह बात दूसरी है।

"सांसारिक जीवन व्यतीत करने में मनुष्य को न जाने कितने नीच आदमियों को खुश करना पड़ता है, और उसके अतिरिक्त और भी न जाने क्या क्या करना पड़ता है।

"ऊँची अवस्था प्राप्त होने के पश्चात् तरह तरह के दृश्य मुझे दीख पड़ने लगे। तब माँ से कहा, 'माँ यहीं से मन को मोड़ दो जिससे मुझे धनी लोगों की खुशामद न करनी पड़े।

"जिसका काम कर रहे हो, उसी का करो। लोग सौ-पचास रुपये के लिए जी देते हैं, तुम तो तीन सौ महीना पाते हो। उस देश में मैंने डिप्टी देखा था, ईश्वर घोषाल को। सिर पर टोपी – गुस्सा नाक पर; मैंने लड़कपन में उसे देखा था; डिप्टी कुछ कम थोड़े ही होता है!

"जिसका काम कर रहे हो, उसी का करते रहो। एक ही आदमी की नौकरी से जी ऊब जाता है, फिर पाँच आदमियों की नौकरी?

"एक स्त्री किसी मुसलमान को देखकर मुग्ध हो गयी थी, उसने उसे मिलने के लिए बुलाया। मुसलमान आदमी अच्छा था, प्रकृति का साधु था। उसने कहा – 'मैं पेशाब करूँगा, अपनी हण्डी ले आऊँ।' उस स्त्री ने कहा – 'हण्डी तुम्हें यहीं मिल जायगी, मैं दूँगी तुम्हें हण्डी।' उसने कहा – 'ना, सो बात नहीं होगी! जिस हण्डी के पास मैंने एक दफे शर्म खोई, इस्तेमाल तो मैं उसी का करूँगा – नयी हण्डी के पास दोबारा बेईमान न हो सकूँगा।' यह कहकर वह चला गया। औरत की भी अक्ल दुरुस्त हो गयी; हण्डी का मतलब वह समझ गयी।"

पिता का वियोग हो जाने पर नरेन्द्र को बड़ी तकलीफ हो रही है। माता और भाइयो के भोजन-वस्त्र के लिए वे नौकरी की तलाश कर रहे हैं। विद्यासागर के बहूबाजार वाले स्कूल में कुछ दिनों तक उन्होंने प्रधान शिक्षक का काम किया था।

अधर – अच्छा, नरेन्द्र कोई काम करेगा या नहीं?

श्रीरामकृष्ण – हॉ, वह करेगा। माँ और भाई जो हैं।

अधर – अच्छा, नरेन्द्र की जरूरत पचास रुपये से भी पूरी हो सकती है और सौ रुपये से भी उसका काम चल सकता है। अब अगर उसे सौ रुपये मिलें तो वह काम करेगा या नहीं?

श्रीरामकृष्ण – विषयी लोग धन का आदर करते हैं। वे सोचते हैं, ऐसी चीज और दूसरी न होगी। शम्भू ने कहा – 'यह सारी सम्पत्ति ईश्वर के श्रीचरणों में सौंप जाऊँ, मेरी बड़ी इच्छा है।' वे विषय थोड़े ही चाहते हैं? वे तो ज्ञान, भक्ति, विवेक, वैराग्य यह सब चाहते हैं।

"जब श्रीठाकुर-मन्दिर से गहने चोरी चले गये, तब सेजो बाबू ने कहा – 'क्यों महाराज! तुम अपने गहने न बचा सके! हंसेश्वरी देवी को देखो, किस तरह अपने गहने बचा लिये थे!'

"सेजो बाबू ने मेरे नाम एक ताल्लुका लिख देने के लिए कहा था। मैंने काली-

मन्दिर से उनकी बात सुनी। सेजो बाबू और हृदय एक साथ सलाह कर रहे थे। मैंने सेजो बाबू से जाकर कहा, 'देखो, ऐसा विचार मत करो। इसमें मेरा बड़ा नुकसान है।'

अधर – जैसी बात आप कह रहे है, सृष्टि के आरम्भ से अब तक ज्यादा से ज्यादा छः ही सात ऐसे हुए होंगे।

श्रीरामकृष्ण – क्यो, त्यागी है क्यो नही? ऐश्वर्य का त्याग करने से ही लोग उन्हें समझ जाते हैं। फिर ऐसे भी त्यागी पुरुष है, जिन्हे लोग नही जानते। क्या उत्तर भारत में ऐसे पवित्र पुरुष नहीं हैं?

अधर – कलकत्ते मे एक को जानता हूँ, वे देवेन्द्र ठाकुर हैं।

श्रीरामकृष्ण – कहते क्या हो! – उसने जैसा भोग किया वैसा बहुत कम आदमियों को नसीब हुआ होगा। जब सेजो बाबू के साथ मै उसके वहाँ गया, तब देखा छोटे छोटे उसके कितने ही लड़के थे – डाक्टर आया हुआ था, नुस्खा लिख रहा था। जिसके आठ लड़के और ऊपर से लड़कियाँ है, वह ईश्वर की चिन्ता न करे तो और कौन करेगा? इतने ऐश्वर्य का भोग करके भी अगर वह ईश्वर की चिन्ता न करता तो लोग कितना धिक्कारते!

निरंजन – द्वारकानाथ ठाकुर का सब कर्ज उन्होने चुका दिया था।

श्रीरामकृष्ण – चल, रख ये सब बाते। अब जला मत। शक्ति के रहते भी जो बाप का किया हुआ कर्ज नही चुकाता, वह भी कोई आदमी है?

"हाँ, बात यह है कि संसारी लोग बिलकुल डूबे रहते है, उनकी तुलना मे वह बहुत अच्छा था – उन्हे शिक्षा मिलेगी।

"यथार्थ त्यागी भक्त और संसारी भक्त मे बड़ा अन्तर है। यथार्थ संन्यासी – सच्चा त्यागी भक्त – मधुमक्खी की तरह है। मधुमक्खी फूल को छोड़ और किसी चीज पर नही बैठती। मधु को छोड़ और किसी चीज का ग्रहण नही करती। संसारी भक्त दूसरी मक्खियो के समान होते है जो बर्फियो पर भी बैठती है और सड़े घावो पर भी। अभी देखो तो वे ईश्वरी भावो मे मग्न है, थोड़ी देर मे देखो तो कामिनी और कांचन को लेकर मतवाले हो जाते है।

"सच्चा त्यागी भक्त चातक के समान होता है। चातक स्वाति नक्षत्र के जल को छोड़ और पानी नही पीता, सात समुद्र और तेरह नदियाँ भले ही भरी रहे। वह दूसरा पानी हरगिज नही पी सकता। सच्चा भक्त कामिनी और कांचन को छू भी नही सकता, पास भी नही रख सकता, क्योकि कही आसक्ति न आ जाय।"

(५)

चैतन्यदेव, श्रीरामकृष्ण और लोकमान्यता

अधर – चैतन्य ने भी भोग किया था।

श्रीरामकृष्ण – (चौंककर) – क्या भोग किया था?

अधर – उतने बड़े पण्डित थे, कितना मान था!

श्रीरामकृष्ण – दूसरों की दृष्टि में वह मान था, उनकी दृष्टि में कुछ भी नहीं था।

"मुझे तुम जैसा डिप्टी माने अथवा यह छोटा निरंजन, मेरे लिए दोनों एक हैं, सच कहता हूँ। एक धनी आदमी मेरे वश में रहे ऐसा भाव मेरे मन में नहीं पैदा होता। मंनोमोहन ने कहा है, 'सुरेन्द्र कहता था, राखाल इनके (श्रीरामकृष्ण के) पास रहता है, इसका दावा हो सकता है' मैंने कहा, कौन है रे सुरेन्द्र? जिसकी दरी और तकिया यहाँ है, और जो दस रुपया महीना देता है, उसकी इतनी हिम्मत कि वह ऐसी बाते कहे?"

अधर – क्या दस रुपये प्रति महिना देते हैं?

श्रीरामकृष्ण – दस रुपये में दो महीने का खर्च चलता है। कुछ भक्त यहाँ रहते हैं, वह भक्तों की सेवा के लिए खर्च देता है। यह उसी के लिए पुण्य है, इसमें मेरा क्या है? मैं राखाल और नरेन्द्र आदि को प्यार करता हूँ तो क्या किसी अपने लाभ के लिए?

मास्टर – यह प्यार माँ के प्यार की तरह है।

श्रीरामकृष्ण – माँ फिर भी इस आशा से बहुत कुछ करती है कि नौकरी करके खिलायेगा। मै जो इन्हे प्यार करता हूँ, इसका कारण यह है कि मै इन्हे साक्षात् नारायण देखता हूँ – यह बात की बात नही है।

(अधर से) "सुनो, दिया जलाने पर कीड़ो की कमी नहीं रहती। उन्हें पा लेने पर फिर वे सब बन्दोबस्त कर देते हैं, कोई कमी नहीं रह जाती। वे जब हृदय में आ जाते हैं, तब सेवा करनेवाले बहुत इकट्ठे हो जाते है।

"एक कम उम्र का संन्यासी किसी गृहस्थ के यहाँ भिक्षा के लिए गया। वह जन्म से ही संन्यासी था। संसार की बातें कुछ न जानता था। गृहस्थ की एक युवती लड़की ने आकर भिक्षा दी। संन्यासी ने कहा, 'माँ, इसकी छाती पर कितने बड़े-बड़े फोडे हुए है?' उस लड़की की माँ ने कहा, 'नहीं महाराज, इसके पेट से बच्चा होगा, बच्चे को दूध पिलाने के लिए ईश्वर ने इसे स्तन दिये हैं – उन्हीं स्तनो का दूध बच्चा पीयेगा।' तब संन्यासी ने कहा, 'फिर सोच किस बात की है? मैं अब क्यों भिक्षा माँगूँ? जिन्होंने मेरी सृष्टि की है, वे ही मुझे खाने को भी देंगे।'

"सुनो, जिस यार के लिए सब कुछ छोड़कर स्त्री चली आयी है, उससे मौका आने पर वह अवश्य कह सकती है कि तेरी छाती पर चढ़कर भोजन-वस्त्र लूँगी।

"न्यांगटा कहता था कि एक राजा ने सोने की थाली और सोने के गिलास में साधुओं को भोजन कराया था। काशी में मैंने देखा, बड़े-बड़े महन्तों का बड़ा मान है – कितने ही पश्चिम के अमीर हाथ जोड़े हुए उनके सामने खड़े थे और कह रहे थे – कुछ आज्ञा हो।

"परन्तु जो सच्चा साधु है – यथार्थ त्यागी है, वह न तो सोने की थाली चाहता है और न मान। परन्तु यह भी है कि ईश्वर उनके लिए किसी बात की कमी नहीं रखते। उन्हें पाने के लिए प्रयत्न करते हुए जिसे जिस चीज की जरूरत होती है, वे पूरी कर देते हैं।

"आप हाकिम हैं – क्या कहूँ – जो कुछ अच्छा समझो, वही करो। मैं तो मूर्ख हूँ।"

अधर – (हँसते हुए, भक्तों से) – क्या ये मेरी परीक्षा ले रहे हैं?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – निवृत्ति ही अच्छी है। देखो न, मैंने दस्तखत नहीं किये। ईश्वर ही वस्तु हैं और सब अवस्तु।

हाजरा भक्तों के पास जमीन पर आकर बैठे। हाजरा कभी कभी 'सोऽहम-सोऽहम्' किया करते हैं। वे लाटू आदि भक्तों से कहते हैं – 'उनकी पूजा करके क्या होता है? उन्हीं की वस्तु उन्हें दी जाती है।' एक दिन उन्होंने नरेन्द्र से भी यही बात कही थी। श्रीरामकृष्ण हाजरा से कह रहे हैं –

"लाटू से मैंने कहा था, कौन किसकी भक्ति करता है।"

हाजरा – भक्त आप ही अपने को पुकारता है।

श्रीरामकृष्ण – यह तो बड़ी ऊँची बात है। महाराज बलि से वृन्धावलि ने कहा था, तुम ब्रह्मण्य देव को क्या धन दोगे?

"तुम जो कुछ कहते हो, उसी के लिए साधन-भजन तथा उनके नाम और गुणों का कीर्तन है।

"अपने भीतर अगर दर्शन हो जायँ तब तो सब हो गया। उसके देखने के लिए ही साधना की जाती है। और उसी साधना के लिए शरीर है। जब तक सोने की मूर्ति नहीं ढल जाती तब तक मिट्टी के साँचे की जरूरत रहती है। सोने की मूर्ति के बन जाने पर मिट्टी का साँचा फेंक दिया जाता है। ईश्वर के दर्शन हो जाने पर शरीर का त्याग किया जा सकता है।

"वे केवल अन्तर में ही नहीं हैं, बाहर भी हैं। काली-मन्दिर में माँ ने मुझे दिखाया, सब कुछ चिन्मय है। माँ स्वयं सब कुछ बनी हैं – प्रतिमा, मैं, पूजा की चीजें, पत्थर – सब चिन्मय हैं।

"इसका साक्षात्कार करने के लिए ही साधन-भजन, नाम-गुण-कीर्तन आदि सब हैं। इसके लिए ही उनकी भक्ति करना है। वे लोग (लाटू आदि) अभी साधारण भावों को लेकर हैं – अभी उतनी ऊँची अवस्था नहीं हुई। वे लोग भक्ति लेकर हैं। और उनसे 'सोऽहम्' आदि बातें मत कहना।"

अधर और निरंजन जलपान करने के लिए बरामदे में गये। मास्टर श्रीरामकृष्ण के पास जमीन पर बैठे हुए है।

अधर – (सहास्य) – हम लोगों की इतनी बातें हो गयीं, ये (मास्टर) तो कुछ भी न बोले।

श्रीरामकृष्ण – केशव के दल का एक लड़का – वह चार परीक्षाएँ पास कर चुका था – सब को मेरे साथ तर्क करते हुए देखकर बस मुस्कराता था और कहता था, इनसे भी तर्क! मैंने केशव सेन के यहाँ एक बार और उसे देखा था, परन्तु तब उसका वह चेहरा न रह गया था।

विष्णुमन्दिर के पुजारी राम चक्रवर्ती श्रीरामकृष्ण के कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं – "देखो राम! तुमने क्या दयाल से मिश्री की बात कही है? – नहीं-नहीं, इसके कहने की जरूरत नहीं है। बड़ी बड़ी बातें हो गयी हैं।"

रात में श्रीरामकृष्ण काली के प्रसाद की दो-एक पूड़ियाँ तथा सूजी की खीर खाते हैं। श्रीरामकृष्ण जमीन पर, आसन पर प्रसाद पाने के लिए बैठे। पास ही मास्टर बैठे हुए हैं, लाटू भी कमरे में हैं। भक्तगण सन्देश तथा कुछ मिठाइयाँ ले आये थे। एक सन्देश लेते ही श्रीरामकृष्ण ने कहा, यह किसका सन्देश है? इतना कहकर खीरवाले कटोरे से निकालकर उन्होंने वह नीचे डाल दिया। (मास्टर और लाटू से) – "यह मैं सब जानता हूँ। आनन्द चैटर्जी का लड़का ले आया है जो घोषपाड़ा-वाली औरत के पास जाता है।" लाटू ने एक दूसरी बर्फी देने के लिए पूछा।

श्रीरामकृष्ण – किशोरी लाया है।

लाटू - क्या इसे दूँ?

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाँ।

मास्टर अंग्रेजी पढ़े हुए हैं। श्रीरामकृष्ण उनसे कहने लगे –

"सब लोगों की चीजें नही खा सकता। क्या यह सब तुम मानते हो?"

मास्टर – देखता हूँ, सब धीरे धीरे मानना पड़ेगा।

श्रीरामकृष्ण – हाँ।

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे में हाथ धोने के लिए गये। मास्टर हाथ पर पानी छोड़ रहे हैं।

शरत्काल है। चाँद निकला हुआ है। आकाश निर्मल है। भागीरथी का हृदय स्वच्छ दर्पण के समान झलक रहा है; भाटे का समय है, भागीरथी दक्षिण की ओर बह रही हैं; मुँह धोते हुए श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं – 'तो नारायण को रुपया दोगे न?' मास्टर – 'जी हाँ, जैसी आज्ञा, जरूर दूँगा।'

□□□

परिच्छेद १०

साधना तथा साधुसंग

(१)

'ज्ञान, अज्ञान के परे चले जाओ।' शशधर का शुष्क ज्ञान

श्रीरामकृष्ण दोपहर के भोजन के बाद अपने कमरे में विश्राम कर रहे हैं। कुछ भक्त भी बैठे हुए हैं। आज नरेन्द्र, भवनाथ आदि भक्त कलकत्ते से आये हैं। दोनों मुखर्जी भाई, ज्ञानबाबू, छोटे गोपाल, बड़े काली, ये भी आये हैं। तीन-चार भक्त कोन्नगर से आये हुए है। उन्हें बुखार आया था, सूचना आयी थी। आज रविवार है, १४ सितम्बर, १८८४।

पिता का स्वर्गवास हो जाने पर नरेन्द्र अपनी माँ और भाइयो की चिन्ता में पड़कर बड़े व्याकुल हैं। वे कानून की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहे हैं।

ज्ञानबाबू चार परीक्षाएँ पास कर चुके हैं। वे सरकारी नौकरी करते हैं। दस-ग्यारह बजे के लगभग आये हैं।

श्रीरामकृष्ण – (ज्ञानबाबू को देखकर) – क्यों जी, एकाएक ज्ञानोदय, यह क्या?

ज्ञान – (सहास्य) – जी, बड़े भाग्य से ज्ञानोदय होता है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – तुम ज्ञानी होकर भी अज्ञानी क्यों हो? हाँ, मैं समझा, जहाँ ज्ञान है, वही अज्ञान है! वशिष्ठ देव इतने ज्ञानी थे, परन्तु लड़को के शोक से वे भी रोये थे। अतएव तुम ज्ञान और अज्ञान के पार हो जाओ। पैरों में अज्ञान का काँटा लग गया है, उसे निकालने के लिए ज्ञानरूपी कॉटे की जरूरत है। निकल जाने पर दोनों काँटे फेंक देना चाहिए।

"ज्ञान कहता है, यह संसार धोखे की टट्टी है; और जो ज्ञान और अज्ञान के पार चले गये हैं, वे कहते हैं, यह आनन्द की कुटिया है। वह देखता है, ईश्वर ही जीव-जगत् और चौबीसों तत्त्व हुए हैं।

"उन्हें पा लेने पर फिर संसार में रहा जा सकता है। तब आदमी निर्लिप्त हो सकता है। उस देश में बढ़ई की औरतों को मैंने देखा है, ढेकी में चूड़ा कूटत्ती हैं, एक हाथ से धान चलाती हैं, दूसरे से बच्चे को दूध पिलाती है, साथ ही खरीददारों से बातचीत भी करती हैं, कहतीं हैं तुम्हारे ऊपर दो आने उधार हैं, दे जाना। परन्तु उनका बारह आना मन

हाथ पर रहता है कि कहीं ढेंकी न गिर जाय।

"बारह आना मन ईश्वर पर रखकर चार आने से काम करना चाहिए।"

श्रीरामकृष्ण शशधर पण्डित की बात भक्तों से कह रहे हैं – "देखा, एकरुखा आदमी है। केवल सूखा ज्ञान और विचार लेकर है।

"जो नित्य में पहुँचकर लीला लेकर रहता है, उसका ज्ञान पक्का है, उसकी भक्ति भी पक्की है।

"नारदादि ने ब्रह्मज्ञान के पश्चात् भक्ति ली थी, इसी का नाम विज्ञान है।

"केवल ज्ञान शुष्क होता है – जैसे एकाएक फूट पड़नेवाले आतशबाजी के अनार – कुछ देर फूल छूटने पर तुरन्त फूट जाते हैं। नारद और शुकदेव आदि का ज्ञान, जैसे अच्छे अनार। थोड़ी देर एक तरह के फूल निकलते हैं, फिर बन्द होकर दूसरी तरह के फूल निकलने लगते हैं। नारद और शुकदेव आदि का ईश्वर पर प्रेम हुआ था। प्रेम सच्चिदानन्द को पकड़ने की रस्सी है।"

दोपहर के भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण जरा विश्राम कर रहे हैं।

बकुल के पेड़ के नीचे बैठने की जो जगह है, वहाँ दो-चार भक्त बैठे हुए गप्पें लड़ा रहे हैं। भवनाथ, दोनो मुखर्जी भाई, मास्टर, छोटे गोपाल, हाजरा आदि। श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले की ओर जा रहे हैं, वहाँ जाकर जरा बैठे।

मुखर्जी – (हाजरा से) – आपने इनके पास से बहुत कुछ सीखा है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – नही बचपन से ही इनकी यह अवस्था है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण झाऊतल्ले से लौट रहे हैं। भक्तों ने देखा, भावावेश मे हैं। पागल की तरह चल रहे है। जब कमरे में आये तब प्रकृतिस्थ हो गये।

(२)

गुरुवाक्य पर विश्वास। शास्त्रों की धारणा कब होती है?

श्रीरामकृष्ण के कमरे में बहुत से भक्तों का समागम हुआ है। कोन्नगर के भक्तो में एक साधक अभी पहले-पहल आये हैं। उम्र पचास के ऊपर होगी। देखने से मालूम होता है कि भीतर पाण्डित्य का पूरा अभिमान है। बातचीत करते हुए वे कह रहे, 'समुद्र-मंथन के पहले क्या चन्द्र न था? परन्तु इसकी मीमांसा कौन करे?'

मास्टर – (सहास्य) – देवी के एक गाने में है – जब ब्रह्माण्ड ही न था, तब मुण्डमाला तुझे कहाँ मिली होगी?

साधक – (विरक्ति से) – वह दूसरी बात है।

कमरे में खड़े होकर श्रीरामकृष्ण ने एकाएक कहा – 'वह आया था – नारायण।'

नरेन्द्र बरामदे में हाजरा आदि से बातें कर रहे हैं – उनकी चर्चा का शब्द श्रीरामकृष्ण के कमरे में सुन पड़ रहा है।

श्रीरामकृष्ण – खूब बक सकता है। इस समय घर की चिन्ता में बहुत पड़ गया है।

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – नरेन्द्र ने विपत्ति को सम्पत्ति समझने के लिए कहा था न?

मास्टर – जी हाँ, मनोबल खूब है।

बड़े काली – कम क्या है?

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठ गये। कोन्नगर के एक भक्त श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं – 'महाराज, ये (साधक) आपको देखने आये है; इन्हे कुछ पूछना है।

साधक देह और सिर ऊँचा किये बैठे हैं।

साधक – महाराज, उपाय क्या है?

श्रीरामकृष्ण – गुरु की बातों पर विश्वास करना। उनके आदेश के अनुसार चलने पर ईश्वर के दर्शन हो सकते हैं। जैसे डोर अगर ठिकाने से लगी हुई हो तो उसे पकड़कर चलने से पते पर पहुँचा जा सकता है।

साधक – क्या उनके दर्शन होते है?

श्रीरामकृष्ण – वे विषय-बुद्धि के रहते नहीं मिलते। कामिनी और कांचन का लेशमात्र रहते उनके दर्शन नहीं हो सकते। वे शुद्ध मन और शुद्ध बुद्धि से गोचर होते हैं। वह मन चाहिए जिसमें आसक्ति का लेशमात्र न हो। शुद्ध-मन, शुद्ध-बुद्धि और शुद्ध आत्मा, ये एक ही वस्तु हैं।

साधक – परन्तु शास्त्र में है – 'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह' – वे मन और वाणी से परे हैं।

श्रीरामकृष्ण – रखो इसे। साधना किये बिना शास्त्रों का अर्थ समझ में नहीं आता। 'भंग-भंग' चिल्लाने से क्या होता है? पण्डित जितने हैं, सर्राटे के साथ श्लोकों की आवृत्ति करते हैं, परन्तु इससे होता क्या है? भंग जाहे जितनी देह में लगा ली जाय, पर इससे नशा नहीं होता, नशा लाने के लिए तो भंग पीनी ही चाहिए।

"दूध में मक्खन है, दूध में मक्खन है, इस तरह चिल्लाते रहने से क्या होता है? दूध जमाओ, दही बनाओ, मथो, तब होगा।"

साधक – मक्खन बनाना, ये सब तो शास्त्र की ही बातें हैं।

श्रीरामकृष्ण – शास्त्र की बात कहने या सुनने से क्या होता है? – उसकी धारणा होनी चाहिए। पंचाग में लिखा हैं – वर्षा पूरी होंगी, परंतु पंचाग दबाओं तो कही बूंद भर भी पानी नहीं निकलता।

साधक – मक्खन निकालना बतलाते हैं – आपने निकाला है मक्खन?

श्रीरामकृष्ण – मैंने क्या किया है और क्या नहीं किया यह बात रहने दो। और ये बातें समझाना बहुत मुश्किल है। कोई अगर पूछे कि घी का स्वाद कैसा है तो कहना पड़ता है, जैसा है – वैसा ही है।

"यह सब समझना हो तो साधुओं का संग करना चाहिए। कौनसी नाड़ी कफ की है, कौनसी पित्त की और कौन वायु की, इसके जानने की अगर जरूरत हो तो सदा वैद्य के साथ रहना चाहिए।"

साधक – दूसरे के साथ रहने में कोई कोई आपत्ति करते हैं।

श्रीरामकृष्ण – वह ज्ञान के बाद – ईश्वर-प्राप्ति के बाद की अवस्था है। पहले तो सत्संग चाहिए ही न?

साधक चुप हैं।

साधक – (कुछ देर बाद, झुंझलाकर) – आपने उन्हें जाना? – कहिये – प्रत्यक्ष रूप से हो या अनुभव से। इच्छा हो और आप कह सकें तो कहिये, नहीं तो न सही।

श्रीरामकृष्ण – (मुस्कराते हुए) – क्या कहूँ, आभास मात्र कहा जा सकता है।

साधक – वही कहिये।

नरेन्द्र गायेंगे। नरेन्द्र कहते हैं, पखावज अभी तक नहीं लाया गया।

छोटे गोपाल – महिमाचरण बाबू के पास है।

श्रीरामकृष्ण – नही, उसकी चीज ले आने की कोई जरूरत नहीं।

कोन्नगर के एक भक्त कलाकारों के ढंग के गाने गा रहे हैं। गाना हो रहा है और श्रीरामकृष्ण एक एक बार साधक की अवस्था देख रहे हैं। गवैया नरेन्द्र के साथ गाने और बजाने के विषय पर घोर तर्क कर रहे हैं।

साधक गवैये से कह रहे हैं, "तुम भी तो यार कम नहीं हो, इन सब वाद-विवादों से गरज?" इस विवाद में एक और महाशय बोल रहे थे; श्रीरामकृष्ण ने साधक से कहा, "आपने इन्हें कुछ न कहा?"

श्रीरामकृष्ण कोन्नगर के भक्तों से कह रहे हैं, "देखता हूँ, आप लोगों के साथ भी इनकी नहीं बनती।" नरेन्द्र गा रहे हैं।

गाना सुनते हुए साधक ध्यानमग्न हो गये। श्रीरामकृष्ण के तख्त के उत्तर की ओर मुँह किये बैठे हैं। दिन के तीन या चार बजे का समय होगा – पश्चिम की ओर से धूप आकर उन पर पड़ रही थी। श्रीरामकृष्ण ने फौरन एक छाता लेकर अपने पश्चिम ओर रखा, जिससे धूप न लगे। नरेन्द्र गा रहे हैं –

"इस मलिन और पंकिल मन को लेकर तुम्हे कैसे पुकारूँ? क्या जलती हुई आग में कभी तृण पैठने का भी साहस कर सकता हैं? तुम पुण्य के आधार हो, जलती हुई आग के समान हो, मैं तृण जैसे पापी तुम्हारी पूजा कैसे करूँ? परन्तु सुना है, तुम्हारे नाम के

गुणों से महापापियों का भी परित्राण हो जाता है, पर तुम्हारे पवित्र नाम का उच्चारण करते हुए मेरा हृदय न जाने क्यों काँप रहा है। मेरा अभ्यास पाप की सेवा में बढ़ गया है, जीवन वृथा ही चला जाता है, मैं पवित्र मार्ग का आश्रय किस तरह लूँगा? यदि इस पातकी और नराधम को तुम अपने दयालु नाम के गुण से तारो तो तार दो। कहो, मेरे केशों को पकड़कर कब अपने चरणों में आश्रय दोगे?"

(३)

नरेन्द्रादि को शिक्षा: 'वेद-वेदान्त में केवल आभास है।'

नरेन्द्र गा रहे हैं –

"हे दीनों के शरण! तुम्हारा नाम बड़ा ही मधुर है। उसमें अमृत की धारा बह रही है। हे प्राणों में रमण करनेवाले! उससे मेरे श्रवणेन्द्रिय शीतल हो जाते हैं। जब कभी तुम्हारे नाम की सुधा श्रवणों का स्पर्श करती है तो समस्त विषाद-राशि का एक क्षण में नाश हो जाता है। हे हृदय के स्वामी – चिदानन्दघन! तुम्हारे नामों को गाते हुए हृदय अमृतमय हो जाता है।"

ज्योंही नरेन्द्र ने गाया – 'तुम्हारे नामों को गाते हुए हृदय अमृतमय हो जाता है', श्रीरामकृष्ण समाधिमग्न हो गये। समाधि के आरम्भ में हाथ की उँगलियाँ, खासकर अँगूठा काँप रहा था। कोन्नगर के भक्तों ने श्रीरामकृष्ण की समाधि कभी नहीं देखी थी। श्रीरामकृष्ण को मौन धारण करते हुए देखकर वे लोग उठे।

भवनाथ – आप लोग बैठिये, यह ः नकी समाधि की अवस्था है।

कोन्नगर के भक्तों ने फिर आसन ग्रहण किया। नरेन्द्र गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण भावावेश में नीचे उतरकर नरेन्द्र के पास जमीन पर बैठे। बड़ी देर बाद जब कुछ प्राकृत अवस्था हुई तब वहीं जमीन पर बिछी हुई चटाई पर जा बैठे। नरेन्द्र का गाना समाप्त हो गया। तानपूरा यथास्थान रख दिया गया। श्रीरामकृष्ण को भाव का आवेश अब भी है। उसी अवस्था में कह रहे हैं – "यह भला कैसी बात है माँ! मक्खन निकालकर मुँह के सामने रखो। न तालाब में चारा (मछलियों का) छोडेगा – न बंसी लेकर बैठा रहेगा – बस, मछली पकड़कर उसके हाथ में रख दो! कैसा उत्पात है! माँ! तर्क-विचार अब न सुनूँगा, कैसा उत्पात है! अब मैं फटकार दूँगा।

"वे वेदविधि के पार हैं। – क्या वेद, वेदान्त और शास्त्रों को पढ़कर कोई उन्हें प्राप्त कर सकता है? (नरेन्द्र से) समझा? वेदों में आभास मात्र है।"

नरेन्द्र ने फिर स्वयं तानपूरा ले आने के लिए कहा। श्रीरामकृष्ण कह रहे हैं, मैं गाऊँगा। अब भी भावावेश है, श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं।

उन्होंने कई गाने गाये। फिर वे गीत के एक चरण की आवृत्ति करते हुए कह रहे

हैं – "माँ, मुझे पागल कर दे। उन्हें ज्ञान और विचार द्वारा या शास्त्रों का पाठ करके कोई नहीं प्राप्त कर सकता।" वे विनयपूर्वक गानेवाले से कह रहे हैं – 'भाई, आनन्दमयी का एक गाना गाइये।' "

गवैये – महाराज, क्षमा कीजियेगा।

श्रीरामकृष्ण गवैये को हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कह रह हैं – "नहीं भाई, इसके लिए आग्रह कर सकता हूँ।" इतना कहकर गोविन्द अधिकारी की यात्रा (नाटक) के दल में गायी जानेवाली वृन्दा की उक्ति को गाते हुए कह रहे हैं – 'राधिका अगर कृष्ण को कुछ कहना चाहे तो कह सकती है, क्योंकि कृष्ण के लिए तमाम रात जगकर उन्होंने भोर कर दिया।'

"बाबू, तुम ब्रह्ममयी के पुत्र हो, वे घट-घट में हैं, तुम पर मेरा जोर अवश्य है। किसान ने अपने गुरु से कहा था – 'तुम्हें ठोंककर मन्त्र लूँगा।"

गवैये – (सहास्य) – जूतियों से ठोंककर?

श्रीरामकृष्ण – (गुरु के उद्देश्य में प्रणाम करके, हँसकर) – नहीं, इतनी दूर नहीं बढ़ सकता हूँ।

फिर भावावेश में कह रहे हैं – "प्रवर्तक, साधक, सिद्ध और सिद्धों के सिद्ध हैं – क्या तुम सिद्ध हो या सिद्ध के सिद्ध? अच्छा गाओ।"

गवैये आलाप करके गाने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (आलाप सुनकर) – भाई इससे भी आनन्द होता है।

गाना समाप्त हो गया। कोन्नगर के भक्त श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदा हो गये। साधक हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कह रहे हैं – 'गुसाईंजी, तो मैं अब चलता हूँ।' श्रीरामकृष्ण अब भी भावावेश में हैं – माता के साथ बातचीत कर रहे हैं –

"माँ, मैं या तुम? क्या मैं करता हूँ? – नहीं नहीं, तुम करती हो।

"अब तक तुमने विचार सुना या मैंने? ना – मैंने नहीं सुना – तुम्हीं ने सुना है।"

श्रीरामकृष्ण की प्राकृत अवस्था हो रही है। अब वे नरेन्द्र, भवनाथ, मुखर्जी आदि भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। साधक की बात उठाते हुए भवनाथ ने पूछा, कैसा आदमी है?

श्रीरामकृष्ण – तमोगुणी भक्त है।

भवनाथ – खूब श्लोक कह सकता है।

श्रीरामकृष्ण – मैंने एक आदमी से कहा था – 'वह रजोगुणी साधु है – उसे क्यों सीधा-फीधा देते हो?' एक दूसरे साधु ने मुझे शिक्षा दी। उसने कहा – 'ऐसी बात मत कहो, साधु तीन तरह के होते हैं – सतोगुणी, रजोगुणी और तमोगुणी।' उस दिन से मैं सब तरह के साधुओं को मानता हूँ।

नरेन्द्र – (सहास्य) – क्या? उसी तरह जैसे हाथी नारायण है? सभी नारायण है।

श्रीरामकृष्ण – (हॅसते हुए) – विद्या और अविद्या के रूपों से वे ही लीला कर रहे है। मै दोनो को प्रणाम करता हूॅ। चण्डी मे है – 'वही लक्ष्मी है और अभागे के यहॉ की धूल भी वही है।' (भवनाथ आदि से) यह क्या विष्णु पुराण मे है?

भवनाथ – (हॅसते हुए) – जी, मुझे तो नही मालूम। कोन्नगर के भक्त आप की समाधि-अवस्था देखकर उठे चले जा रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – कोई फिर कह रहा था कि तुम लोग बैठो।

भवनाथ – (हॅसते हुए) – वह मै हूॅ।

श्रीरामकृष्ण – तुम जैसे लोगो को यहॉ लाते हो, वैसे ही भगा भी देते हो!

गवैये के साथ नरेन्द्र का वादविवाद हुआ था, उसी की बात चल रही है।

मुखर्जी – नरेन्द्र ने भी मोर्चा नही छोड़ा।

श्रीरामकृष्ण – हॉ, ऐसी दृढ़ता तो चाहिए ही। इसे सत्त्व का तम क़हते है। लोग जो कुछ कहेंगे क्या उसी पर विश्वास करना होगा? वेश्या से क्या यह कहा जायगा कि तुम्हे जो रुचे वही करो? तो वेश्या की बात भी माननी होगी। मान करने पर एक सखी ने कहा था – 'राधिका को अहंकार हुआ है।' वृन्दे ने कहा, "यह 'अहं' किसका है? – यह उन्ही का अहंकार है – कृष्ण के ही गर्व से वे गर्व करती है।"

अब हरिनाम के माहात्म्य की बात हो रही है।

भवनाथ – नाम करने पर मेरी देह हलकी पड़ जाती है।

श्रीरामकृष्ण – वे पाप का हरण करते है, इसीलिए उन्हे हरि कहते है। वे त्रिताप के हरण करनेवाले है।

"और चैतन्य देव ने इस नाम का प्रचार किया था, अतएव अच्छा है। देखो, चैतन्य देव कितने बड़े पण्डित थे और वे अवतार थे। उन्होने इस नाम का प्रचार किया था, अतएव यह बहुत ही अच्छा है। (हॅसते हुए) कुछ किसान एक न्योते मे गये थे। भोजन करते समय उनसे पूछा गया, तुम लोग आमड़े की खटाई खाओगे? उन्होने कहा, बाबुओ ने अगर उसे खाया हो तो हमे भी देना। मतलब यह कि उन्होने खाया होगा तो वह चीज अच्छी ही होगी।" (सब हॅसते है।)

श्रीरामकृष्ण की शिवनाथ शास्त्री से मिलने की इच्छा हुई है। वे मुखर्जियो से कह रहे है – 'एक बार शिवनाथ शास्त्री को देखने के लिए जाऊॅगा, तुम्हारी गाड़ी से जाऊॅगा तो किराया न पड़ेगा।'

मुखर्जी – जो आज्ञा, एक दिन भेज दी जायगी।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो से) – अच्छा, क्या वह हम लोगो को पसन्द करेगा? वे लोग साकारवादियो की कितनी निन्दा करते है।

श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी तीर्थ-यात्रा करनेवाले है? श्रीरामकृष्ण कह रहे है –

(सहास्य) "यह कैसी बात! प्रेम के अंकुर के उगते ही जा रहे हो? अंकुर होगा, फिर पेड़ होगा, तब फल होंगे। तुम्हारे साथ अच्छी बाते हो रही थी।"

महेन्द्र – जी, जरा इच्छा हुई है, घूम लूँ। फिर जल्द ही आ जाऊँगा।

(४)

भक्तों के संग में

तीसरा पहर ढल गया है। दिन के पाँच बजे होंगे। श्रीरामकृष्ण उठे। भक्तगण बगीचे मे टहल रहे है। उनमे से कितने ही शीघ्र घर जाने वाले है।

श्रीरामकृष्ण उत्तरवाले बगमदे मे हाजरा से बातचीत कर रहे है। नरेन्द्र आजकल गुहो के बडे लड़के अन्नदा के पास प्राय: जाया करते है।

हाजरा – सुना है, गुहो का लड़का आजकल कठोर साधना कर रहा है। भोजन भी थोड़ा सा ही करता है। चार दिन बाद अन्न खाता है।

श्रीरामकृष्ण – कहते क्या हो। 'कौन कहे किस भेष से नारायण मिल जाय।'

हाजरा – नरेन्द्र ने स्वागत-गीत गाया था।

श्रीगमकृष्ण – (उत्सुकता से) – कैसा?

किशोर पास खड़ा था।

श्रीरामकृष्ण – तेरी तबियत अच्छी है न?

श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले गोल बरामदे मे खड़े है। शरत् काल है। फलालैन का गेरुआ कुर्ता पहने है और नरेन्द्र से कह रहे है – "तूने स्वागत-गीत गाया था?" गोल बरामदे से उतरकर श्रीरामकृष्ण नरेन्द्र के साथ गंगा के बाँध पर आये। साथ मास्टर है। नरेन्द्र गा रहे है। श्रीरामकृष्ण खड़े हुए सुन रहे है। सुनने सुनते उन्हे भावावेश हो रहा है।

अब भी दिन कुछ शेष है। सूर्य भगवान पश्चिम की ओर अभी कुछ दीख पड़ रहे है। श्रीरामकृष्ण भाव मे डूबे हुए है। एक ओर गंगा उत्तर की ओर बही जा रही है। अभी कुछ देर से ज्वार का आना शुरू हुआ है। पीछे फुलवाड़ी है। दाहिनी ओर नौबत और पंचवटी दिखायी दे रही है। पास मे नरेन्द्र खड़े हुए गा रहे है। शाम हो गयी।

नरेन्द्र आदि भक्त प्रणाम करके बिदा हो गये। श्रीरामकृष्ण अपने कमरे मे आये। जगन्माता का स्मरण-चिन्तन कर रहे है। श्रीयुत यदु मल्लिक पासवाले बगीचे मे आज आये हुए है। बगीचे मे आने पर प्राय: आदमी भेजकर श्रीरामकृष्ण को बुलवा ले जाते है। आज भी आदमी भेजा है – श्रीरामकृष्ण जायेगे। श्रीयुत अधर सेन कलकत्ते से आये और श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत यदु मल्लिक के बगीचे मे जायेगे। लाटू से कह रहे है –

'लालटेन जला – जरा चलेगे।'

श्रीरामकृष्ण लाटू के साथ अकेले जा रहे है। मास्टर भी साथ है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – तुम नारायण को लेते क्यो नही आये?

मास्टर कह रहे है – "क्या मै भी साथ चलूँ?"

श्रीरामकृष्ण – चलोगे? अधर आदि सब है – अच्छा, चलो। दोनो मुखर्जी भाई रास्ते मे खड़े थे। श्रीरामकृष्ण मास्टर से पूछ रहे है – "क्या ये लोग भी कोई जायेगे? (मुखर्जियो से) अच्छा है चलो। तो हम जल्दी चले आ सकेगे।"

श्रीरामकृष्ण यदु मल्लिक के बैठकखाने मे आये। कमरा सजा हुआ था। कमरे मे और बरामदे मे दीवारगीरे जल रही है। श्रीयुत यदुलाल छोटे-छोटे लड़को को लिये हुए प्रसन्नतापूर्वक दो-एक मित्रो के साथ बैठे है। नौकरो मे से कोई आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है, कोई पंखा झल रहा है। यदु बाबू ने हंसकर बैठे हुए श्रीरामकृष्ण से सम्भाषण किया, जैसे पुराने परिचितो का व्यवहार हो।

यदु बाबू गौरांग के भक्त है। उन्होने स्टार थियेटर मे चैतन्यलीला देखी थी। श्रीरामकृष्ण से उसी की बातचीत कर रहे है। कहा, चैतन्य-लीला का नया अभिनय बडा अच्छा हो रहा है।

श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक चैतन्यलीला की बातचीत सुन रहे है, रह-रहकर यदु बाबू के एक छोटे लड़के का हाथ लेकर खेल कर रहे है। मास्टर और दोनो मुखर्जी भाई उनके पास बैठे हुए है।

श्रीयुत अधर सेन ने कलकत्ता म्युनिसिपैल्टी के वाईस चेअरमन के पद के लिए बडी चेष्टा की थी। उस पद का वेतन हजार रुपया है। अधर डिप्टी मजिस्ट्रेट है। तीन सौ रुपया प्रति मास पाते है। उम्र तीस साल की होगी।

श्रीरामकृष्ण – (यदु बाबू से) - अधर का तो काम नही हुआ।

यदु और उनके मित्र – अधर की उम्र तो अभी ज्यादा नही हुई।

कुछ देर बाद यदु कह रहे है – 'तुम जरा उनके लिए नाम जप करो।' श्रीरामकृष्ण गौरांग का भाव गाकर बतला रहे है।

श्रीरामकृष्ण ने कीर्तन के कई गाने गाये।

(५)

राखाल के लिए चिन्ता

गीत के समाप्त हो जाने पर दोनो मुखर्जी भाई उठे। उनके साथ श्रीरामकृष्ण भी उठे। परन्तु भावावेश अब भी है। घर के बरामदे मे आकर खड़े होते समाधिमग्न हो गये। बरामदे मे कई बत्तियॉ जल रही थी। बगीचे का दरवान भक्त था। वह श्रीरामकृष्ण को

आमन्त्रित करके कभी कभी भोजन कराता था। दरवान श्रीरामकृष्ण को बड़े पंखे से हवा करने लगा।

बगीचे के कर्मचारी श्रीयुत रतन ने आकर श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण की प्राकृत अवस्था हो रही है।

उन लोगों से सम्भाषण करते हुए वे 'नारायण-नारायण' उच्चारण कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भक्तों के साथ ठाकुर-मन्दिर के सदर फाटक तक आये। यहाँ मुखर्जी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

अधर श्रीरामकृष्ण को खोज रहे थे।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – इनके (मास्टर के) साथ तुम लोग सदा मिलते रहना और बातचीत करना।

प्रिय मुखर्जी – (सहास्य) – हाँ, ये अब से हमारे मास्टर बने।

श्रीरामकृष्ण – गंजेड़ी का स्वभाव है कि दूसरे गंजेड़ी को देखकर उसे आनन्द होता है। अमीरों के आने पर तो वह बोलता भी नहीं। परन्तु अगर एक अभागा कहीं का गंजेड़ी आ जाय तो उसे गले लगाने लगता है। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण बगीचे के रास्ते से पश्चिम की ओर होकर अपने कमरे की ओर जा रहे हैं। रास्ते में कह रहे है – 'यदु बड़ा हिन्दू है – भागवत की बहुत सी बातें कहता है।'

मणि कालीमन्दिर मे चरणामृत ले रहे है। श्रीरामकृष्ण भी वही पहुँचे। माता के दर्शन करेंगे।

रात के नौ बजे मुखर्जियों ने प्रणाम करके बिदा ली। अधर और मास्टर जमीन पर बैठे हुए हैं। श्रीरामकृष्ण अधर से राखाल की बाते कर रहे हैं।

राखाल वृन्दावन में हैं, बलराम के साथ। पत्र द्वारा संवाद मिला था, वे बीमार हैं। दो-तीन दिन हुए श्रीरामकृष्ण राखाल की बीमारी का हाल पाकर इतने चिन्तित हो गये थे कि दोपहर की सेवा के समय हाजरा से, क्या होगा, कहकर बालक की तरह रोने लगे थे। अधर ने राखाल को रजिस्ट्री करके चिट्ठी लिखी है। परन्तु अब तक पत्र की स्वीकृति उन्हें नहीं मिली।

श्रीरामकृष्ण – नारायण को पत्र मिला और तुम्हें पत्र का जवाब भी नहीं मिला?

अधर – जी नहीं, अभी तक तो नही मिला।

श्रीरामकृष्ण – और मास्टर को भी लिखा है।

श्रीरामकृष्ण – चैतन्य-लीला देखने जायेंगे, इसी सम्बन्ध में बातचीत हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – यदु ने कहा था, एक रुपये वाली जगह से खूब दीख पड़ता है और सस्ता भी है!

"एक बार हम लोगों को पेनेटी ले जाने की बातचीत हुई थी, यदु ने हम लोगों के

चढ़ने के लिए चलती नाव किराये पर लेने की बातचीत की थी! (सब हँसते है।)

"पहले ईश्वर की बाते कुछ-कुछ सुनता था। अब वह नही दीख पड़ता। कुछ खुशामदी लोग यदु के दॉये-बॉये हमेशा बने रहते है – उन लोगो ने और चकाचौध लगा दिया है।

"बड़ा हिसाबी है। जाने के साथ ही उसने पूछा, कितना किराया है? मैने कहा, 'तुम्हारा न सुनना ही अच्छा है। तुम ढाई रुपया देना।' इससे चुप हो गया और वही ढाई रुपये देता है!" (सब हँसते है)

रात हो गयी है। अधर जायेगे, प्रणाम कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – नारायण को लेते आना।

परिच्छेद ९१

अभ्यासयोग

(१)

दक्षिणेश्वर में महेन्द्र, राखाल आदि भक्तों के साथ

श्रीरामकृष्ण अपने कमरे में भक्तों के साथ बैठे हुए हैं। शरत् काल है। शुक्रवार, १९ सितम्बर, १८८४। दिन के दो बजे होंगे। आज भादों की अमावास्या है, महालया। श्रीयुत महेन्द्र मुखोपाध्याय और उनके भाई श्रीयुत प्रिय मुखोपाध्याय, मास्टर, बाबूराम, हरीश, किशोर और लाटू जमीन पर बैठे है। कुछ लोग खड़े भी हैं – कोई कमरे में आ-जा रहे है। श्रीयुत हाजरा बरामदे में बैठे हैं। राखाल बलराम के साथ वृन्दावन मे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महेन्द्रादि भक्तों से) – कलकत्ते में मैं कप्तान के घर गया था। लौटते हुए बड़ी रात हो गयी थी।

"कप्तान का कैसा स्वभाव है! कैसी भक्ति है! छोटी धोती पहनकर आरती करता है। पहले तीन बत्तीवाले प्रदीप से आरती करता है – इसके बाद एक बत्तीवाले प्रदीप से और फिर कपूर से।

"उस समय बोलता नहीं। मुझे इशारे से आसन पर बैठने के लिए कहा।

"पूजा करते समय आँखें लाल हो जाती हैं, मानो बर्र ने काट लिया हो।

"गाना तो नहीं गा सकता। परन्तु स्तवपाठ बहुत ही सुन्दर करता है।

"वह अपनी माँ के पास नीचे बैठता है। माँ ऊँचे आसन पर बैठती है।

"बाप अंग्रेज का हवलदार है। लड़ाई के मैदान में एक हाथ में बन्दूक रखता है और दूसरे हाथ से शिवजी की पूजा करता है। नौकर शिवमूर्ति बना दिया करता है। बिना पूजा किये जल ग्रहण भी नहीं करता। सालाना छः हजार रुपये पाता है।

"कभी कभी अपनी माँ को काशी भेजता है। वहाँ उसकी माँ की सेवा पर बारह-तेरह आदमी रहते हैं। बड़ा खर्च होता है। वेदान्त, गीता, भागवत, कप्तान को कण्ठाग्र हैं।

"वह कहता है, कलकत्ते के बाबुओं का आचार बहुत ही भ्रष्ट है।

"पहले उसने हठयोग किया था, इसलिए जब मुझे समाधि या भावावस्था होती है

तब सिर पर हाथ फेरने लगता है।

"कप्तान की स्त्री के दूसरे इष्ट देवता है, गोपाल। अब की बार उसे उतनी कंजूसी करते नही देखा। वह भी गीता जानती है, कैसी भक्ति है उनकी! – मुझे जहाँ भोजन कराया, वही हाथ मुँह भी धुलाया। दाँत खोदने की सीक भी वही दी।

"मेरे खा चुकने पर कप्तान या उसकी पत्नी पंखा झलती है।

"उनमे बड़ी भक्ति है। साधुओ का बड़ा सम्मान करते है। पश्चिम के आदमियो मे साधुओ के प्रति भक्ति ज्यादा है। जंग बहादुर के लड़के और उसके भतीजे कर्नल यहाँ आये थे। जब आये तब पतलून उतारकर मानो बहुत डरते हुए आये।

"कप्तान के साथ उसके देश की एक स्त्री भी आयी थी। बड़ी भक्त थी – विवाह अभी नही हुआ था। गीतगोविन्द के गाने कण्ठाग्र थे। द्वारका बाबू आदि उसका गाना सुनने के लिए बैठे थे। जब उसने गीतगोविन्द का गाना गाया तब द्वारका बाबू रूमाल से आँसू पोछने लगे। विवाह क्यो नही किया, इस प्रश्न के पूछने पर उसने कहा – 'ईश्वर की दास हूँ? और किसकी दासी होऊँगी।' और सब लोग उसे देवी समझकर बहुत मानते है – जैसा पुस्तको मे लिखा हुआ मिलता है।

(महेन्द्रादि से) "आप लोग आते है, जब सुनता हूँ कि इससे कुछ उपकार होता है तब मन बहुत अच्छा रहता है। (मास्टर से) यहाँ आदमी क्यो आते है? – वैसा पढ़ा-लिखा भी तो नही हूँ।"

मास्टर – जी, कृष्ण जब स्वयं सब चरवाहे और गौएँ बन गये (ब्रह्मा के हर लेने पर) तब चरवाहो की माताएँ नये बच्चो को पाकर फिर यशोदा के पास नही गयी।

श्रीरामकृष्ण – इससे क्या हुआ?

मास्टर – ईश्वर स्वयं ही चरवाहे बने थे कि नहीं, इसीलिए उनमे इतना आकर्षण था। ईश्वर की सत्ता रहने से ही मन खिच जाता है।

श्रीरामकृष्ण – यह योगमाया का आकर्षण था – वह जादू डाल देती है। जटिला के डर से बछड़े को उठाये हुए सुबल का रूप धरकर राधिका जा रही थी; जब उन्होने योगमाया की शरण ली तब जटिला ने भी उन्हे आशीर्वाद दिया।

"हरि की सब लीलाएँ योगमाया की सहायता से हुई थी।

"गोपियो का प्यार क्या है, परकीया रति है। कृष्ण के लिए गोपियों को प्रेमोन्माद हुआ था। अपने स्वामी के लिए इतना नही होता। अगर कोई कहे, 'अरी तेरा स्वामी आया है', तो कहती है, 'आया है तो आये - खुद भोजन कर लेगा।' परन्तु अगर दूसरे पुरुष की बात सुनती है कि बड़ा रसिक है, बड़ा सुन्दर है और रसपण्डित है तो दौड़कर देखने के लिए जाती है – और ओट से झाँककर देखती है।

"अगर कहो कि उन्हे तो हमने देखा ही नही फिर गोपियो की तरह उन पर चित्त कैसे

लग सकता है? – तो इसके लिए यह कहना है कि सुनने पर भी वह आकर्षण होता है।

"एक गाने में कहा है, बिना जाने ही, उनका नाममात्र सुनकर मन उनमें आकर लिप्त हो गया।"

एक भक्त – अच्छा जी, वस्त्रहरण का क्या अर्थ है?

श्रीरामकृष्ण – आठ पाश हैं। गोपियों के सब पाश छिन्न हो गये थे, केवल लज्जा बाकी थी। इसलिए उन्होंने उस पाश का भी मोचन कर दिया। ईश्वर-प्राप्ति होने पर सब पाश चले जाते हैं।

(महेन्द्र मुखर्जी आदि भक्तों से) "ईश्वर पर सब का मन नहीं लगता। आधारों की विशेषता होती है। संस्कार के रहने से होता है। नहीं तो बागबाजार में इतने आदमी थे, उनमें केवल तुम्हीं यहाँ कैसे आये?

"मलय-पर्वत की हवा के लगने पर सब पेड़ चन्दन के हो जाते हैं; सिर्फ पीपल, बट, सेमर, ऐसे ही कुछ पेड़ चन्दन नहीं बनते।

"तुम लोगों को रुपये-पैसे का कुछ अभाव थोड़े ही है। योगभ्रष्ट होने पर भाग्यवानो के यहाँ जन्म होता है, इसके पश्चात् फिर वह ईश्वर के लिए तपस्या करता है।"

महेन्द्र मुखर्जी – मनुष्य क्यों योगभ्रष्ट होता है?

श्रीरामकृष्ण – पूर्वजन्म में ईश्वर की चिन्ता करते हुए एकाएक भोग करने की लालसा हुई होगी। इस तरह होने पर योगभ्रष्ट हो जाता है। और दूसरे जन्म में फिर उसी के अनुसार जन्म होता है।

महेन्द्र – इसके बाद उपाय?

श्रीरामकृष्ण – कामना के रहते, भोग की लालसा के रहते, मुक्ति नहीं होती। इसलिए खाना-पहनना, रमण करना, यह सब कर लेना। (सहास्य) तुम क्या कहते हो? स्वकीया के साथ या परकीया के साथ?

मास्टर, मुखर्जी, ये लोग हँस रहे हैं।

(२)

श्रीमुख द्वारा कथित आत्मचरित

श्रीरामकृष्ण – भोग-लालसा का रहना अच्छा नहीं। इसीलिए मेरे मन में जो कुछ उठता था, मैं कर डालता था।

"बड़ा बाजार के रंगे सन्देश खाने की इच्छा हुई। इन लोगों ने मँगा दिया। मैंने खूब खाया, फिर बीमार पड़ गया!

"लड़कपन में गंगा नहाते समय, एक लड़के की कमर में सोने की करधनी देखी थी। इस अवस्था के बाद उस करधनी के पहनने की इच्छा हुई। परन्तु अधिक देर रख

सकता ही न था, करधनी पहनी तो भीतर से सरसराकर हवा ऊपर की ओर चढ़ने लगी – देह में सोना छू गया न? जरा देर रखकर उसे खोल डाला। नही तो उसे तोड़ डालना पड़ता।

"धनियाखाली का कोईचूर (एक तरह की मिठाई), खानाकुल कृष्णनगर का सरभाजा (एक तरह की मिठाई) खाने की भी इच्छा हुई थी। (सब हँसते है।)

"शम्भू के चण्डी-गीत सुनने की इच्छा हुई थी। उसके सुन लेने के बाद फिर राजनारायण के चण्डी-गीतो के सुनने की इच्छा हुई। उसके गीतों को भी मैंने सुना।

"उस समय बहुत से साधु आते थे। इच्छा हुई कि उनकी सेवा के लिए एक अलग भण्डार किया जाय। सेजो बाबू ने वैसा ही किया। उसी भण्डार से साधुओं को सीधा, लकड़ी आदि सब दिया जाता था।

"एक बार जी में आया कि खूब अच्छा जरी का साज पहनूँ और चाँदी की गुड़गुड़ी मे तम्बाकू पीऊँ। सेजो बाबू ने नया साज, गुड़गुड़ी सब भेज दिया। साज पहना, गुड़गुड़ी कितनी ही तरह से पीने लगा। एक बार इस ओर से, एक बार उस ओर से – खड़ा होकर और बैठकर। तब मैने कहा, मन, देख ले, इसी का नाम है चॉदी की गुड़गुड़ी में तम्बाकू पीना। बस इतने से ही गुड़गुड़ी का त्याग हो गया। साज थोड़ी देर मे खोल डाला। – पैरों से उसे रौदने लगा – कहा, इसी का नाम है साज! इसी पोशाक के कारण रजोगुण बढ़ता है।"

बलराम के साथ राखाल वृन्दावन मे हैं। पहले-पहल वे वृन्दावन की बड़ी तारीफ करके चिट्ठी लिखते थे। मास्टर को चिट्ठी लिखी थी – 'यह बड़ी अच्छी जगह है – मोर नाचते रहते है – और नृत्य गीत, सदा ही आनन्द होता है!' इसके पश्चात् उन्हें बुखार आया, वृन्दावन का बुखार! श्रीरामकृष्ण को बड़ी चिन्ता रहती है। उनके लिए चण्डी के नाम पर उन्होंने मन्नत की है। श्रीरामकृष्ण राखाल की बातें कर रहे हैं – "यहाँ बैठकर पैर दबाते समय राखाल को पहले-पहल भाव हुआ था। एक भागवती पण्डित इस कमरे मे बैठा हुआ भागवत की बातें कह रहा था। उन्हीं बातों को सुन-सुनकर राखाल सिहर-सिहर उठता था। इसके बाद वह बिलकुल स्थिर हो गया।

"दूसरी बार बलराम के घर में भाव हुआ था। भावावेश में लेट गया था।

"राखाल साकार की श्रेणी का है, निराकार की बात सुनकर उठ जायगा।

"उसके लिए मैंने चण्डी की मन्नत की। उसने घर-द्वार सब छोड़कर मेरा सहारा लिया था न? उसकी स्त्री के पास उसे मैं ही भेज दिया करता था, भोग कुछ बाकी रह गया था।

"वृन्दावन से इन्हें लिख रहा है, यह बड़ा अच्छा स्थान है – मोरों का नृत्य हुआ करता है। अब मोरों ने विपत्ति में डाल दिया।

"वहाँ बलराम के साथ है। अहा, बलराम का क्या स्वभाव है! मेरे लिए उस देश मे नही जाता। उसके भाई ने उसे मासिक व्यय देना बन्द कर दिया था और लिखा था – 'तुम यहाँ आकर रहो, वाहियात क्यो इतना रुपया खर्च करते हो!' परन्तु उसने उसकी बात नही सुनी, मुझे देखने के लिए।

"कैसा स्वभाव है! दिन-रात केवल देवताओ को लेकर रहता है। माली फूलो की माला बनाते ही रहते है। रुपये बचेगे, इस विचार से दो महीने वृन्दावन मे रहेगा। दो सौ का मुसहरा पाता है।

"लड़को को क्यो प्यार करता हूँ? – उनके भीतर कामिनी और कांचन का प्रवेश अब तक नही हो पाया। मै उन्हे नित्यसिद्ध देखता हूँ!

"नरेन्द्र जब पहले-पहल आया, एक मैली चादर ओढ़े हुए था, परन्तु उसका मुँह और उसकी आँखे देखकर जान पडता था कि उसके भीतर कुछ है। तब ज्यादा गाने न जानता था। दो एक गाने।

"जब आता था तब घर भर आदमी रहते थे, परन्तु मै उसी की ओर नजर करके बातचीत करता था। जब वह कहता था – 'इससे भी बातचीत कीजिये' – तब दूसरे लोगो से बातचीत करता था।

"यदु मल्लिक के बगीचे मे रोया करता था – उसे देखने के लिए मै पागल हो गया था। यहाँ भोलानाथ का हाथ पकडकर मै रोने लगा! भोलानाथ ने कहा, एक कायस्थ के लड़के के लिए आपको इस तरह का रोना शोभा नही देता। मोटे ब्राह्मण ने एक दिन हाथ जोड़कर कहा – 'वह बहुत कम पढा-लिखा है, उसके लिए भी आप इतना रोते है?'

"भवनाथ नरेन्द्र की जोड़ी है – दोनो जैसे पति-पत्नी। इसीलिए भवनाथ से मैंने नरेन्द्र के पास ही मकान भाड़े पर लेने को कहा। वे दोनो ही अरूप के दर्जे के है।

संन्यासियों का कठिन नियम। लोकशिक्षार्थ त्याग

"मै लड़को को मना कर देता हूँ जिससे वे औरतो के पास आया-जाया न करे।

"हरिपद एक घोषाल-औरत के फेर मे पड़ा है। वह वात्सल्यभाव करती है। हरिपद बच्चा है, कुछ समझता तो है नही, मैंने सुना, हरिपद उसकी गोद मे सोता है। और वह अपने हाथ से उसे भोजन कराती है। मै उससे कह दूँगा, यह सब अच्छा नही। इसी वात्सल्यभाव से फिर हीन भाव पैदा हो जाते है।

"उन लोगो की वर्तमान साधना आदमी को लेकर की जाती है। आदमी को वे लोग श्रीकृष्ण समझती है। वे उसे 'रागकृष्ण' कहती है। गुरु पूछता है, 'रागकृष्ण' तुझे मिले? वे कहती हैं हाँ, मिले।

"उसी दिन वह औरत आयी थी। उसकी चितवन का ढंग मैने देखा, अच्छा नही

है। उसी के भावो मे उससे कहा, हरिपद के साथ जैसा चाहो करो, परन्तु बुरा भाव न लाना।

"लड़को की यह साधना की अवस्था है। इस समय केवल त्याग करना चाहिए। संन्यासियो को स्त्रियो का चित्र भी न देखना चाहिए। मै उनसे कहता हूँ, स्त्री अगर भक्त भी हो तो भी उसके पास बैठकर बातचीत न करनी चाहिए। खड़े होकर चाहे कुछ कह लिया जाय। सिद्ध होने पर भी इसी तरह चलना पड़ता है – अपनी सावधानी के लिए भी और लोकशिक्षा के लिए भी। औरतो के आने पर मै थोड़ी ही देर मे कहता हूँ, तुम लोग जाकर देवताओ के दर्शन करो। इससे भी अगर वे न उठी तो मै खुद उठ जाता हूँ। मुझे देखकर दूसरे शिक्षा ग्रहण करेगे।

"अच्छा, ये जो सब लडके आ रहे है, इसका क्या अर्थ है? और तुम लोग जो आ रहे हो, इसका भी क्या अर्थ है? इसके (अपने को दिखाकर) भीतर कुछ है जरूर. नही तो आकर्षण फिर कैसे होता?

"उस देश मे जब मैं हृदय के घर मे था, मुझे वे लोग श्यामबाजार ले गये थे। मै समझा, गौरांग के भक्त है यहाँ। गाँव मे घुसने से पहले ही मुझे माँ ने दिखा दिया – साक्षात् गौरांग। फिर वहाँ इतना आकर्षण हुआ कि सात दिन और सात रात लोगो की भीड लगी रही। सदा ही कीर्तन और आनन्द मचा हुआ था। इतने आदमो आये कि चार-दीवार और पेडो पर भी आदमी चढ़कर बैठे थे।

"मै नटवर गोस्वामी के यहाँ गया था। वहाँ रातदिन भीड़ लगी रहती। मै वहाँ से भागकर एक ताँती (जुलाहे) के यहाँ सुबह को बैठा करता था। फिर देखा, थोड़ी ही देर मे सब लोग वहाँ भी पहुँच गये थे। सब खोल-करताल ले गये। – फिर 'तिरकिट्-तिरकिट्' कर रहे थे। भोजन आदि तीन बजे होता था।

"चारो ओर अफवाह फैल गयी थी कि एक ऐसा आदमी आया है जो सात बार मरकर सातो बार जी उठता है। मुझे सर्दी-गर्मी न हो जाय इस डर से हृदय मुझे बाहर मैदान मे घसीट ले जाता था। वहाँ फिर चीटियो की पाँत की तरह आदमी उमड चलते थे – फिर वही खोल-करताल और 'तिरकिट'। हृदय ने खूब फटकारा, कहा – 'क्या हम लोगो ने कभी कीर्तन सुना नही?'

"वहाँ के गोस्वामी झगड़ा करने के लिए आये थे। उन्होने सोचा था कि ये लोग हमारा चढ़ाव हड़पने के लिए आये है। उन्होने देखा, मैने एक जोड़ा धोती तो क्या एक ताग सूत भी नही लिया। किसी ने कहा ब्रह्मज्ञानी है। इस पर गोस्वामी सब थाह लेने के लिए आये। एक ने पूछा, इनके माला, तिलक क्यो नही है? उन्ही मे से किसी ने कहा, नारियल का पत्ता आप ही निकलकर गिर गया है। नारियल के पत्तेवाली बात मैने वही सीखी थी। ज्ञान के होने पर उपाधियाँ आप छूट जाती है।

"दूर के गाँवो से लोग आकर इकट्ठे होते थे। वे लोग रात को वही रहते थे। जिस

घर में हम लोग थे, उसके आंगन में रात को औरतें सोई हुई थीं। लघुशंका करने के लिए बाहर जा रहा था, उन लोगों ने कहा, पेशाब यहीं (आंगन में ही) करो।

"आकर्षण किसे कहते हैं, यह मैं वहीं समझा था। ईश्वर की लीला में योगमाया की सहायता से आकर्षण होता है, एक तरह का जादू-सा चल जाता है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण और श्री राधिका गोस्वामी

दोनों मुखर्जी भाइयों से बातचीत करते हुए दिन के तीन बज गये। श्रीयुत राधिका गोस्वामी ने आकर प्रणाम किया। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को पहली ही बार देखा है। उम्र तीस के भीतर होंगी। गोस्वामी ने आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण – क्या आप लोग अद्वैत-वंश के हैं? – खानदान का गुण तो होता ही है।

"अच्छे आम के पेड़ में अच्छे ही आम लगते हैं। (सब हँसे।) खराब आम नहीं होते। केवल मिट्टी के गुण से कुछ छोटे-बड़े हो जाते हैं। आपकी क्या राय है?"

गोस्वामी – (विनयपूर्वक) – जी, मै क्या जानूँ?

श्रीरामकृष्ण – तुम कुछ भी कहो, दूसरे आदमी क्यों छोड़ने लगे?

"ब्राह्मण में चाहे लाख दोष हों परन्तु उसे भरद्वाज गोत्र और शाण्डिल्य गोत्र का समझकर लोग उसकी पूजा करते है। (मास्टर से) शंखचीलवाली बात जरा सुना तो दो।"

मास्टर चुपचाप बैठे हुए हैं। यह देखकर श्रीरामकृष्ण स्वयं कह रहे हैं –

"वंश में अगर महापुरुष का जन्म हुआ हो तो वे खींच लेंगे, चाहे लाख दोष भी हों। जब गंधर्वों ने कौरवों को बाँध लिया तब युधिष्ठिर ने उन्हें मुक्त कर दिया। जिस दुर्योधन ने इतनी शत्रुता की थी, जिसके लिए युधिष्ठिर को वनवास भी सहना पड़ा, उसी को उन्होंने मुक्त कर दिया।

"इसके सिवा भेष का भी आदर किया जाता है। भेष देखकर सत्य वस्तु की उद्दीपना होती है। चैतन्य देव ने गधे को भेष पहनाकर साष्टांग प्रणाम किया था।

"शंखचील (सफेद परवाली चील) को देखकर लोग प्रणाम क्यों करते हैं? कंस जब मारने के लिए चला था तब भगवती शंखचील का रूप धारण कर उड़ गयी थीं। इसलिए अब भी जब लोग शंखचील देखते हैं, तो उसे प्रणाम करते हैं।

"चानक के पल्टन के भीतर अंग्रेज को आते हुए देखकर सिपाहियों ने सलाम किया। कुँवर सिंह ने मुझे समझाया कि अंग्रेजों का राज्य है, इसीलिए अंग्रेजों को सलामी दी जाती है।

"शाक्तों का तन्त्र मत है। वैष्णवों का पुराण मत। वैष्णव जो साधना करते हैं उसके

कहने मे दोष नही है। तान्त्रिक को सब कुछ गुप्त रखना पड़ता है। इसीलिए तान्त्रिक को अच्छी तरह कोई समझ नही सकता।

(गोस्वामी से) "आप लोग अच्छे है। कितना जप करते है? और हरिनाम की संख्या क्या है?"

गोस्वामी – (विनय भाव से) – जी, मै क्या करता हूँ। मै अत्यन्त अधम – नीच हूँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – दीनता, यह अच्छा तो है। एक भाव और है – 'मै उनका नाम ले रहा हूँ, मुझे फिर पाप कैसा!' जो लोग, दिन रात 'मै पापी हूँ, मै अधम हूँ' ऐसा किया करते है, वे वैसे ही हो जाते है। कितना अविश्वास है! उनका इतना नाम ले करके भी पाप-पाप कहता है!

गोस्वामी यह बात आश्चर्यचकित हो सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण – मैने भी वृन्दावन मे भेष (वैष्णवो का) धारण किया था। पन्द्रह दिन तक रखा था। (भक्तो से) सब भावो की उपासना कुछ-कुछ दिनो तक करता था। तब शान्ति होती थी।

(सहास्य) "मैने सब तरह किया है – सब शास्त्रो को मानता हूँ। शाक्तो को भी मानता हूँ और वैष्णवो को भी। उधर वेदान्तवादियो को भी मानता हूँ। यहाँ इसीलिए सब मतो के आदमी आया करते है। और सब यही सोचते है कि ये हमारे मत के आदमी है। आजकल के ब्राह्म-समाजवालो को भी मानता हूँ।

"एक आदमी के पास एक रंग का गमला था। उस गमले मे एक बड़े आश्चर्य का गुण यह था कि जिस किसी रंग मे वह कपड़े रँगना चाहता था, उसी रंग मे कपड़े रंग जाते थे।

"परन्तु किसी होशियार आदमी न कहा, तुमने इसमे जो रंग घोला है वही रंग मुझे दो। (श्रीरामकृष्ण और सब हँसते है।)

"एक ही ढर्रे का मै क्यो हो जाऊँ? 'अमुक मत के आदमी फिर न आयेगे' मुझे इसका भय नही है। कोई आये चाहे न आये, मुझे इसकी जरा भी परवाह नही है। लोग मेरी मुट्ठी मे रहेगे, ऐसी कोई बात मेरे मन मे है ही नही। अधर सेन ने बड़ी नौकरी के लिए माँ से कहने के लिए कहा था – उसको वह काम नही मिला। वह अगर इसके लिए कुछ सोचे तो मुझे इसकी जरा भी परवाह नही है।

"केशव सेन के घर जाने पर एक और भाव हुआ। वे लोग निराकार-निराकार किया करते है। इस पर, जब भावावेश हुआ तो मैने कहा – माँ, यहाँ न आना, ये लोग तेरे रूप को नही मानते।"

साम्प्रदायिकता के विरोध की बात सुनकर गोस्वामीजी चुपचाप बैठे हुए है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – विजय इस समय बहुत अच्छा हो गया है।

"हरिनाम करते हुए जमीन पर गिर जाता है।

"प्रातः चार बजे तक कीर्तन और ध्यान, यह सब लेकर रहता है। इस समय गेरुआ पहने हुए है। देव-विग्रह देखता है तो एकदम साष्टांग प्रणाम करता है।

"जहाँ गदाधर* की पाठशाला थी वहाँ विजय को ले गया था और कहा, यही वे ध्यान करते थे। बस कहने के साथ ही उसने साष्टांग प्रणाम किया।

"चैतन्यदेव के चित्र के सामने फिर साष्टांग प्रणाम किया।"

गोस्वामी – राधाकृष्ण की मूर्ति के सामने?

श्रीरामकृष्ण – साष्टांग प्रणाम! और बड़ा आचारी है।

गोस्वामी – अब समाज मे लिया जा सकता है।

श्रीरामकृष्ण – लोग क्या कहेंगे, इसकी उसे कोई चिन्ता नहीं है।

गोस्वामी – ऐसे आदमी को प्राप्त कर समाज भी कृतार्थ हो सकता है।

श्रीरामकृष्ण – मुझे बहुत मानता है।

"उसे पाना ही मुश्किल हो रहा है। आज ढाके से बुलावा आता है तो कल किसी दूसरी जगह से, इस तरह सदा ही काम में उलझा रहता है।

"उसके समाजवालो मे बड़ी गडबड़ी मची हुई है।"

गोस्वामी – क्यो?

श्रीरामकृष्ण – उसे लोग कह रहे है, तुम साकारवादियो के साथ मिल रहे हो, तुम पौत्तलिक हो।

"और बड़ा उदार और सरल है। सरल हुए बिना ईश्वर की कृपा नही होती।"

'गृहस्थ, आगे बढ़ो।' अभ्यासयोग

अब श्रीरामकृष्ण मुखर्जियो से बातचीत कर रहे है। महेन्द्र उनमे बड़े है, व्यवसाय करते है, किसी की नौकरी नही करते। छोटे प्रियनाथ इंजीनियर थे, अब उन्होंने कुछ धनोपार्जन कर लिया है, अब नौकरी नही करते। बड़े भाई की उम्र ३५-३६ के लगभग होगी। उनका मकान केडेटी मौजे मे है। कलकत्ते के बागबाजार मे भी उनका अपना मकान है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – कुछ उद्दीपना हो रही है, यह देखकर चुप्पी न साध जाना। बढ़ जाओ! चन्दन की लकड़ी के बाद और भी चीजे है – चाँदी की खान – सोने की खान!

प्रिय – (सहास्य) – जी, पैरो मे जो बेड़ियाँ पड़ी हुई है, उनके कारण बढ़ा नही

* एक प्रसिद्ध वैष्णव साधु

जाता।

श्रीरामकृष्ण – पैरो के बन्धन से क्या होता है? बात असल मन की है।

"मन के द्वारा ही आदमी बँधा हुआ है और उसी के द्वारा छूटता भी है। दो मित्र थे। एक वेश्या के घर गया। दूसरा भागवत सुन रहा था। पहला सोच रहा था, मुझे धिक्कार है, मेरा मित्र भागवत सुन रहा है और मै वेश्या के यहाँ पड़ा हुआ हूँ। उधर दूसरा सोच रहा था, मै बड़ा बेवकूफ हूँ, मेरा मित्र तो मजा लूट रहा है और मै यहाँ आकर फँस गया। पर देखो, वेश्या के यहाँ जानेवाले को तो विष्णुदूत आकर वैकुण्ठ मे ले गये और दूसरे को यमदूतो ने नरक मे घसीटकर डाल दिया।

प्रिय – मन मेरे बस मे भी तो नही है।

श्रीरामकृष्ण – यह क्या! अभ्यासयोग – अभ्यास करो, फिर देखोगे मन को जिस ओर ले जाओगे, उसी ओर जायगा।

"मन धोबी के यहाँ का कपडा है। वहाँ से लाकर उसे लाल रंग से रँगो तो लाल हो जायगा और आसमानी से रँगो तो आसमानी। जिस रंग मे रँगोगे वही रंग उस पर चढ़ जायगा।

(गोस्वामी से) "आपको कुछ पूछना तो नही है?"

गोस्वामी – (बडे ही विनय भाव से) – जी नही, दर्शन हो गये, और सब बाते तो सुनता ही था।

श्रीरामकृष्ण – देवताओ के दर्शन करो।

गोस्वामी – (विनयपूर्वक) – कुछ महाप्रभु के गुणकीर्तन सुनना चाहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण कीर्तन गाने लगे। कीर्तन के समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण गोस्वामीजी से कह रहे है – यह तो आप लोगो के ढंग का हुआ। लेकिन अगर कोई शाक्त या घोषपाड़ा के मत का आदमी आ जाय तो मै दूसरे ढंग के गाने गाऊँगा।

"यहाँ सब तरह के आदमी आते है – वैष्णव, शाक्त, कर्ताभजा, वेदान्तवादी और आजकल के ब्राह्म-समाजवाले आदि भी। इसलिए यहाँ सब तरह के भाव है।

"उन्ही की इच्छा से अनेक धर्मों और मतो का चलन हुआ है।

"जिसे जो सह्य है उसे उन्होने वही दिया है।

"जिसकी जैसी प्रकृति, जिसका जैसा भाव, वह उसे ही लेकर रहता है।

"किसी धार्मिक मेले मे अनेक तरह की मूर्तियाँ पायी जाती है, और वहाँ अनेक मतो के आदमी जाते है। राधा-कृष्ण, हर-पार्वती, सीता-राम, जगह जगह पर भिन्न भिन्न मूर्तियाँ रखी रहती है। और हरएक मूर्ति के पास लोगो की भीड़ होती है। जो लोग वैष्णव है उनकी अधिक संख्या राधा-कृष्ण के पास खड़ी हुई हैं, जो शाक्त है, उनकी भीड़ हर-पार्वती के पास लगी है। जो रामभक्त है, वे सीताराम की मूर्ति के पास खड़े हुए है।

"परन्तु जिनका मन किसी देवता की ओर नही है, उनकी और बात है। वेश्या अपने आशिक की झाड़ू से खबर ले रही है, ऐसी मूर्ति भी वहाँ बनायी जाती है। उस तरह के आदमी मुँह फैलाये हुए वही मूर्ति देखते और अपने मित्रो को चिल्लाते हुए उधर ही बुलाते भी हैं, कहते है – 'अरे वह सब क्या खाक देखते हो? इधर आओ जरा, यहाँ तो देखो!' "

सब हँस रहे है। गोस्वामी प्रणाम करके बिदा हुए।

(४)

संस्कार तथा तपस्या का प्रयोजन। साधु-सेवा

दिन के पाँच बजे है। श्रीरामकृष्ण पश्चिमवाले बरामदे मे है। बाबूराम, लाटू, दोनो मुखर्जी भाई, मास्टर आदि भक्त उनके साथ है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर आदि से) – मै क्यो एक ढर्रे का होऊँ? वे लोग वैष्णव है, बड़े कट्टर है, सोचते है, हमारा ही धर्म ठीक है, और सब वाहियात है। मैने जो बाते सुनायी है, उनसे उमे चोट पहुँची होगी। (हँसते हुए) हाथी के सिर पर अंकुश मारा जाता है। कहते है, वही उसके सिर पर कोष (कोमलअंग) रहता है। (सब हँसे।)

श्रीरामकृष्ण लड़को के साथ हँसी करने लगे।

दोनो मुखर्जी बरामदे से चले गये। बगीचे मे कुछ देर टहलेगे।

श्रीरामकृष्ण – (हँसते हुए) – कही मुखर्जियो ने हमारी हँसी को बुरा तो नही मान लिया?

मास्टर – क्यो? कप्तान ने तो कहा था, आपकी अवस्था बालक की है। ईश्वर-दर्शन करने पर बालक की अवस्था हो जाती है।

श्रीरामकृष्ण – और बाल्य, कैशोर और युवा। कैशोर अवस्था मे दिल्लगी-मजाक सूझता है। कभी कुछ मुँह से निकल जाता है। पर युवावस्था मे सिह की तरह लोकशिक्षा देता है।

"तुम उन्हे मेरी मानसिक अवस्था समझा देना।"

मास्टर – जी, मुझे समझाना न होगा। क्या वे जानते नही?

श्रीरामकृष्ण लड़को के साथ आमोद-प्रमोद करते हुए एक भक्त से कह रहे है – "आज अमावास्या है, माँ के मन्दिर मे जाना।"

सन्ध्या के बाद आरती का शब्द सुनायी दे रहा है। श्रीरामकृष्ण बाबूराम से कह रहे है – "चल रे, चल काली-मन्दिर में।". श्रीरामकृष्ण बाबूराम के साथ जा रहे हैं। साथ मास्टर भी है। हरीश बरामदे मे बैठे हुए है, श्रीरामकृष्ण कह रहे है, जान पड़ता है, इसे भावावेश हो गया।

आँगन से जाते हुए श्रीरामकृष्ण ने जरा श्रीराधाकान्त की आरती देखी। फिर काली-मन्दिर की ओर जाने लगे। जाते ही जाते हाथ उठाकर जगन्माता को पुकारने लगे – "माँ – ओ – माँ – ब्रह्ममयी!" मन्दिर के चबूतरे पर मूर्ति के सामने पहुँचकर भूमिष्ठ हो माता को प्रणाम करने लगे। माता की आरती हो रही है। श्रीरामकृष्ण मन्दिर में प्रवेश कर चामर लेकर व्यजन करने लगे।

आरती समाप्त हो गयी। जो लोग आरती देख रहे है, सब ने एक ही साथ भूमिष्ठ हो प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने मन्दिर के बाहर आकर प्रणाम किया। महेन्द्र मुखर्जी आदि भक्तों ने भी प्रणाम किया।

आज अमावस्या है। श्रीरामकृष्ण को पूर्ण मात्रा मे भावावेश हो गया। बाबूराम का हाथ पकड़कर मतवाले की तरह झूमते हुए अपने कमरे मे जा रहे हैं।

कमरे के पश्चिमवाले गोल बरामदे मे एक बत्ती जला दी गयी है।

श्रीरामकृष्ण उसी बरामदे मे जाकर जरा बैठे। 'हरि ॐ' 'हरि ॐ' 'हरि ॐ' कहते हुए अनेक प्रकार के तन्त्रोक्त बीज-मन्त्रो का भी उच्चारण कर रहे है।

कुछ देर पश्चात् कमरे मे अपने आसन पर पूर्वास्य होकर बैठे। भाव अभी भी पूर्ण मात्रा मे है।

दोनो मुखर्जी भाई, बाबूराम आदि भक्त जमीन पर आकर बैठे।

श्रीरामकृष्ण भावावेश मे माता से बातचीत कर रहे है। कहते है – 'माँ, मै कहूँ तब तू करे, यह भी कोई बात है? बातचीत करना क्या है – इशारा ही तो है। – कोई कहता है 'मै खाऊँगा' – कोई कहता है, 'जा, मै न सुनूँगा।'

"अच्छा माँ, मान लो मैंने भले ही प्रकट रूप मे यह न कहा हो कि मुझे भूख लगी है, तो क्या मुझे असल में भूख नही लगी है? क्या यह सम्भव है कि तुम केवल उसी की प्रार्थना सुनो जो जोर जोर से पुकारता है और उसकी न सुनो जो भीतर ही भीतर व्याकुलतापूर्वक प्रार्थना करता रहता है?

"तुम जो हो सो हो, फिर मै क्यो बोलता हूँ, क्यो प्रार्थना करता हूँ?

"हाँ! जैसा कराती हो, वैसा करता हूँ।

"लो! सब गोलमाल हो गया! – क्यों विचार कराती हो?"

श्रीरामकृष्ण जगन्माता के साथ बातचीत कर रहे है। – भक्तगण आश्चर्यचकित हो सुन रहे हैं।

अब भक्तों पर श्रीरामकृष्ण की दृष्टि पड़ी।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – उन्हें प्राप्त करने के लिए संस्कार चाहिए। कुछ किये रहना चाहिए। तपस्या – वह इस जन्म में ही हो या उस जन्म में।

"द्रौपदी का जब वस्त्रहरण किया गया था तब उसका विकल होकर रोना

श्रीठाकुरजी ने सुना था, तभी उन्होंने दर्शन दिये। और कहा, तुमने अगर किसी को कभी वस्त्र दिया हो तो याद करो, उससे लज्जा का निवारण होगा। द्रौपदी ने कहा एक ऋषि नहा रहे थे, उनका कौपीन बह गया था, मैंने अपने कपड़े से आधा फाड़कर उन्हें दिया था। श्रीठाकुरजी ने कहा, तो अब तुम कोई चिन्ता न करो।"

मास्टर श्रीरामकृष्ण के आसन के पूर्व की तरफ पाँवपोश पर बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – तुम यह समझे?

मास्टर – जी, संस्कार की बात।

श्रीरामकृष्ण – एक बार कह तो जाओ, मैंने क्या कहा।

मास्टर – द्रौपदी नहाने गयी थी – आदि।

(हाजरा आये।)

(५)

क्या ईश्वर प्रार्थना सुनते है? साधना

हाजरा महाशय यहाँ दो साल से हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की जन्म-भूमि कामारपुकुर के पास सिऊड़ ग्राम में पहले-पहल उनके दर्शन किये थे, सन् १८८० ई. में। इस मौजे में श्रीरामकृष्ण के भांजे श्रीयुत हृदय मुखोपाध्याय रहते हैं। उस समय श्रीरामकृष्ण हृदय के यहाँ रहते थे।

सिऊड़ के पास मरागोड़ मौजे में हाजरा महाशय रहते हैं। उनके कुछ जमीन-जायदाद भी हैं। स्त्री-परिवार और लड़के-बच्चे भी हैं। घरगृहस्थी का काम किसी तरह चल जाता है। कुछ ऋण भी है, लगभग हजार रुपया होगा।

यौवनकाल से ही उनमें वैराग्य का भाव हैं। साधु कहाँ है, भक्त कहाँ है, यही सब खोजते फिरते थे। जब पहले-पहल दक्षिणेश्वर काली-मन्दिर में आये और वहाँ रहना चाहा तब श्रीरामकृष्ण ने उनके भक्तिभाव को देखकर, और उन्हें अपने देश का परिचित मनुष्य जानकर, यत्नपूर्वक अपने पास रख लिया।

हाजरा का ज्ञानियों जैसा भाव है। श्रीरामकृष्ण का भक्तिभाव और लड़कों के लिए उनकी व्याकुलता उन्हें पसन्द नहीं। कभी कभी वे श्रीरामकृष्ण को महापुरुष सोचते हैं और कभी कभी साधारण आदमी।

वे श्रीरामकृष्ण के दक्षिणपूर्ववाले बरामदे में आसन लगाकर बैठे हैं। वहीं माला लेकर बड़ी देर तक जप किया करते हैं। राखाल आदि भक्त अधिक जप नहीं करते, इसलिए लोगों से वे उनकी निन्दा किया करते हैं।

वे आचार का पक्ष बहुत लेते हैं। 'आचार-आचार' करके उन्हें एक तरह शुचिता का रोग हो गया है। उनकी उम्र ३८ साल की होगी।

हाजरा महाशय कमरे में आये। श्रीरामकृष्ण को फिर कुछ भावावेश हो गया है और उसी अवस्था में वे बातचीत कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से) – तुम जो कुछ कर रहे हो, वह ठीक है। परन्तु पटरी ठीक नहीं बैठती।

"किसी की निन्दा न किया करो – एक कीड़े की भी नहीं। तुम खुद भी तो लोमस मुनि की बात कहते हो। जब भक्ति की प्रार्थना करोगे तब साथ ही यह भी कहा करो कि कभी मुझसे दूसरे की निन्दा न हो।"

हाजरा – (भक्ति की) – प्रार्थना करने पर वे सुनेंगे?

श्रीरामकृष्ण – एक सौ बार! – अगर प्रार्थना ठीक हो – आन्तरिक हो। विषयी आदमी जिस तरह बच्चे या स्त्री के लिए रोता है, उसी तरह ईश्वर के लिए कहाँ रोता है?

"उस देश में एक आदमी की स्त्री बीमार हो गयी। वह अच्छी न होगी, यह सोचकर वह आदमी थर थर काँपने लगा – बेहोश होने को आ गया था।

"इस तरह ईश्वर के लिए किसकी अवस्था होती है?"

हाजरा श्रीरामकृष्ण की पद-रेणु ले रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (संकुचित होकर) – यह सब क्या है?

हाजरा – जिनके पास मैं हूँ उनके श्रीचरणों की धूलि न लूँ?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर को तुष्ट करो, सब तुष्ट हो जायेंगे। 'तस्मिन् तुष्टे जगत् तुष्टम्।' ठाकुरजी ने जब द्रौपदी का शाक खाकर कहा, मैं तृप्त हो गया हूँ, तब संसार भर के जीव तृप्त हो गये थे – गले तक भर गये थे – डकार लेने लगे थे। मुनियों के खाने से क्या संसार तुष्ट हुआ था – डकारें लीं थीं?

"ज्ञानलाभ के बाद भी लोक-शिक्षा के लिए पूजा आदि कर्मों को लोग किया करते हैं।

"मैं काली-मन्दिर जाता हूँ, और इस कमरे के सब चित्रों को भी प्रणाम किया करता हूँ – इस तरह दूसरे भी प्रणाम करते हैं। फिर तो अभ्यास हो जाने पर मनुष्य से वैसा किये बिना रहा ही नहीं जाता।

"बटतल्ले के संन्यासी को मैंने देखा; उसने जिस आसन पर गुरु की पादुका रखी थी उसी पर शालग्राम भी रखा था और पूजा कर रहा था! मैंने पूछा, 'अगर इतना ज्ञान हो गया है, तो इस तरह क्यों करते हो?" उसने कहा, 'सब कुछ किया जाता है, यह भी एक किया। कभी एक फूल इस पैर पर (गुरु के) चढ़ाया और कभी एक फूल उस पैर (शालग्राम) पर।'

"देह के रहते कोई कर्म छोड़ नहीं सकता – पंक रहते उससे बुलबुले उठेंगे ही।

(हाजरा से) "एक ज्ञान है तो अनेक का भी ज्ञान है।

"केवल शास्त्र पढ़ने से क्या होगा? शास्त्रो मे बालू और चीनी का-सा मेल है। उससे चीनी का अंश निकालना बड़ा मुश्किल है। इसीलिए शास्त्रो का मर्म गुरु के श्रीमुख से, साधु के श्रीमुख से सुन लेना चाहिए। तब फिर ग्रन्थो की क्या जरूरत है?

"चिट्ठी मे खबर आई है, 'पॉच सेर सन्देश भेजियेगा – और एक धारीदार धोती।' चिट्ठी खो गयी, तब तुरन्त चारो ओर ढूँढ-तलाश होने लगी। बहुत कुछ खोजने के बाद कही चिट्ठी मिली। पढ़कर देखा, लिखा है – 'पॉच सेर सन्देश भेजियेगा और एक धारीदार धोती।' तब फिर उसने चिट्ठी फेक दी। अब उसकी क्या जरूरत है? – अब तो सन्देश और धोती संग्रह करने से ही काम है।

(मुखर्जी, बाबूराम, आदि भक्तो से) "भलीभॉति खोज लेकर तब डूबो। तालाब मे अमुक स्थान पर लोटा गिर गया है, जगह की ठीक जॉच करके डुबकी लगानी चाहिए।

"शास्त्रो का मर्म गुरु के श्रीमुख से सुनकर तब साधना की जाती है। यह साधना ठीक ठीक करने पर तब कही प्रत्यक्ष दर्शन होते है।

"डुबकी लगाओगे तब ठीक ठीक साधना होगी। बैठे बैठे शास्त्रो की बात पर केवल विचार करते रहने से क्या होगा? साधक को डुबकी लगानी चाहिए।

"अगर कहो कि डुबकी लगाने से भी तो मगर और घड़ियाल का डर है, – काम क्रोधादि का भय है, तो हलदी लगाकर डुबकी लगाओ तो फिर वे पास न आ सकेगे। विवेक और वैराग्य हलदी है।"

(६)

पूर्व कथा। श्रीरामकृष्ण की पुराण, तन्त्र तथा वेद मत की साधना

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो से) – उन्होने मुझसे अनेक प्रकार की साधनाएँ करायी। पहली पुराण मत की थी, फिर तन्त्र मत की थी, इसके बादवाली वेद मत की थी। पहले मै पंचवटी मे साधना करता था। वहॉ तुलसी-वन लगाया गया, मैं उसके भीतर बैठकर ध्यान करता था। कभी विकल होकर 'मॉ-मॉ' कहकर पुकारता था, कभी 'राम-राम' कहता था।

"जब 'राम-राम' कहता था, तब हनुमान के भाव मे आकर एक पूँछ लगाकर बैठा रहता था – उन्माद की अवस्था थी। उस समय पूजा करते हुए मैं पीताम्बर पहनता था तो बड़ा आनन्द आता था। वह पूजा का ही आनन्द था।

"तन्त्र मत की साधना बेल के नीचे की थी। तब तुलसी का पेड़ और सहजन की फल्ली ये एक जैसे जान पड़ते थे।

"उस अवस्था में शिवानी की जूठन तमाम रात पड़ी रहती थी, सॉप खाता था या कौन खाता था इसका कुछ ख्याल न था, वही जूठन मैं खाता था।

"कभी कभी मै कुत्ते पर चढ़कर उसे पूड़ियाँ खिलाता और उसकी जूठी पूड़ियाँ खुद खाता था। सर्व विष्णुमयं जगत्।

"अविद्या का नाश बिना किये न होगा। इसलिए मै बाघ बन जाता था और अविद्या को खा जाता था।

"वेदमत से साधना करते समय संन्यास लिया। उस समय चाँदनी मे पड़ा रहता था। हृदय से कहता था, मैने संन्यास लिया है, मेरे लिए चाँदनी मे खाने को दे जाया करो।

(भक्तो से) "धरना दिया था। पड़ा हुआ मै माँ से कहता था – मै मूर्ख हूँ, तुम मुझे बतला दो, वेदो, पुराणो, तन्त्रो और शास्त्रो मे क्या है।

"माँ ने कहा 'वेदान्त का सार है ब्रह्म, उसी को सत्य और संसार को मिथ्या माना है। जिस सच्चिदानन्द ब्रह्म की बात वेदो मे है, उन्हे तन्त्रो मे 'सच्चिदानन्दः शिवः' कहते है। और पुराणो मे उन्हे ही 'सच्चिदानन्दः कृष्णः' कहते है।

"दस बार गीता का उच्चारण करने पर जो कुछ होता है, वही गीता का सार है। अर्थात् त्यागी – त्यागी।

"उन्हे जब कोई प्राप्त कर लेता है, तब वेद, वेदान्त, पुराण, तन्त्र सब इतने नीचे पडे रहते है कि कुछ कहना ही नही। (हाजरा से) ॐ का भी उच्चारण नही किया जा सकता, समाधि से जब मै बहुत नीचे उतर आता हूँ, तब कही जरूर ॐ का उच्चारण कर सकता हूँ।

"प्रत्यक्ष दर्शन के पश्चात् जो-जो अवस्थाएँ शास्त्रो मे लिखी है, वे सब मुझे हुई थी। बालवत्, उन्मत्तवत्, पिशाचवत्, जड़वत्।

"और शास्त्रो मे जैसा लिखा है, वैसा दर्शन भी होता था।

"कभी देखता था, तमाम संसार जलता हुआ अंगार है।

"कभी देखता था, चारो ओर पारे जैसा सरोवर – झिलमिल झिलमिल कर रहा है। और कभी गली हुई चाँदी की तरह देखता था।

"कभी देखता था मानो मसालेवाली सलाई का चारो ओर उजाला हो रहा है।

"इनसे शास्त्रों की बाते मिल जाती हैं।

"फिर दिखलाया, वे ही जीव है, वे ही जगत् है और चौबीसो तत्त्व भी वे ही हुए है। छत पर चढ़कर फिर सीढ़ियो से उतरना। अनुलोम और विलोम!

"उः! किस अवस्था मे उसने रखा है! – एक अवस्था जाती है तो दूसरी आती है! जैसे ढेकी के वार। एक ओर नीचा होता है तो दूसरी ओर ऊँचा हो जाता है।

"जब अन्तर्मुख होकर समाधिलीन हो जाता हूँ, तब भी देखता हूँ, वे ही है और जब बाहरी संसार मे मन आता है, तब भी देखता हूँ, वे ही है।

"जब आईने के इस ओर देखता हूँ, तब भी वे ही है और जब उस ओर देखता हूँ,

तब भी वे ही हैं।"

दोनों मुखर्जी भाई और बाबूराम आदि आश्चर्यचकित हो श्रीरामकृष्ण की बातें सुन रहे हैं।

(७)

शम्भू मल्लिक की अनासक्ति। महापुरुष का आश्रय

श्रीरामकृष्ण – (मुखर्जी आदि से) – कप्तान की भी यथार्थ साधक जैसी अवस्था है।

"केवल ऐश्वर्य के रहने से ही मनुष्य की उसमें बिलकुल आसक्ति हो जाती है सो बात नहीं। शम्भू कहता था, 'हृदू! मैं बोरिया-बधना समेटकर चलने के लिए बैठा हुआ हूँ।' मैंने कहा, यह क्या अशुभ बातें बक रहे हो?

"तब शम्भू ने कहा, 'नहीं, कहो, यह सब फेंककर जैसे उनके पास पहुँच सकूँ।'

"उनके भक्त को किसी बात का भय नहीं है। भक्त उनका आत्मीय है। वे उसे खींच लेंगे। गन्धर्वों के हाथों दुर्योधन आदि के बँध जाने पर युधिष्ठिर ने ही उनका उद्धार किया था। कहा था, आत्मीयों की ऐसी अवस्था होने पर हमारे ही सर पर कलंक का टीका लगता है।"

रात के नौ बज चुके हैं। दोनों मुखर्जी भाई कलकत्ता लौटने के लिए तैयार हो रहे हैं। कमरे में और बरामदे मे टहलते हुए श्रीरामकृष्ण ने सुना, विष्णु-मन्दिर में उच्च स्वर से संकीर्तन हो रहा है। उनके पूछने पर एक भक्त ने कहा, उनके साथ लाटू और हरीश भी गा रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – अच्छा, इतना (शोर) इसीलिए हो रहा है!

श्रीरामकृष्ण विष्णु-मन्दिर गये। साथ साथ भक्तगण भी गये। श्रीरामकृष्ण ने राधाकान्त को भूमिष्ठ होकर प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण ने देखा, ठाकुर-मन्दिर के ब्राह्मण जो पाककर्म करते हैं, नैवेद्य सजाते हैं, अतिथियों को प्रसाद परोसते हैं, वे तथा अन्य सब सेवक-टहलुए एकत्र होकर नामसंकीर्तन कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने जरा देर खड़े रहकर उनका उत्साह बढ़ाया।

आँगन के बीच से लौटते समय उन्होंने भक्तों से कहा – "देखो, इनमें से कोई वेश्या के यहाँ जाता है और कोई बर्तन धोया करता है!"

कमरे में आकर श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बैठे। जो लोग संकीर्तन कर रहे थे, उन लोगों ने श्रीरामकृष्ण को आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण उनसे कह रहे हैं – "रुपये के लिए जिस तरह देह का पसीना बहाते हो उसी तरह उनका नाम लेकर नाच-कूद कर बहाना चाहिए।

"मेरी इच्छा हुई तुम लोगों के साथ नाचूँ। जाकर देखा मसाला पड़ चुका था – मेथी तक। (सब हँसते हैं।) तब मै क्या डालकर उसे सुगन्धित करता?

"तुम लोग कभी कभी इसी तरह नाम-संकीर्तन करने के लिए आ जाया करो।"

मुखर्जी बन्धुओं ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदाई ली।

श्रीरामकृष्ण के कमरे के ठीक उत्तरवाले बरामदे के किनारे मुखर्जियो की गाड़ी मे बत्ती जला दी गयी है।

श्रीरामकृष्ण उसी बरामदे के ठीक उत्तर-पूर्ववाले कोने मे उत्तर की ओर मुँह किये खड़े है। एक भक्त रास्ता दिखाते हुए एक लालटेन ले आये है, भक्तो को चढ़ाने के लिए।

आज अमावस्या है। रात अँधेरी है। श्रीरामकृष्ण को क्रमशः प्रणाम करके भक्तगण गाड़ी पर बैठ रहे है। श्रीरामकृष्ण एक भक्त से कह रहे है – "ईशान से जरा उसके काम के लिए कहना।"

गाड़ी मे ज्यादा आदमी देखकर, घोड़े को कष्ट होगा, यह सोचकर श्रीरामकृष्ण ने कहा – "क्या गाड़ी मे इतने आदमी समा जायेगे?"

श्रीरामकृष्ण खड़े है। उनकी निर्मल मूर्ति देखते हुए भक्तगण कलकत्ते की ओर चल दिये।

परिच्छेद ९२

चैतन्यलीला-दर्शन

(१)

भक्तों से वार्तालाप

आज रविवार है; श्रीरामकृष्ण के कमरे में बहुत से भक्त एकत्रित हुए है। राम, महेन्द्र, मुखर्जी, चुनीलाल, मास्टर आदि बहुत से भक्त है। २१ सितम्बर, १८८४।

चुनीलाल अभी हाल ही वृन्दावन से आये है। वे और राखाल, बलराम के साथ वहाॅ गये थे। राखाल और बलराम अब भी नही लौटे। श्रीरामकृष्ण चुनीलाल से वृन्दावन की बाते कर रहे है।

श्रीरामकृष्ण -- राखाल कैसा है?

चुनी – जी, अब वे अच्छे है।

श्रीरामकृष्ण – नृत्यगोपाल आयगा या नहीं?

चुनी – अभी तो मै देखकर आ रहा हूॅ, वही है।

श्रीरामकृष्ण – तुम्हारे परिवार के लोग किसके साथ आ रहे है?

चुनी – बलराम बाबू ने कहा है, मै अच्छे आदमी के साथ भेज दूॅगा। नाम उन्होने नही बतलाया।

श्रीरामकृष्ण महेन्द्र मुखर्जी से नारायण की बातचीत कर रहे है। नारायण स्कूल मे पढ़ता है। उम्र १६-१७ साल की है। श्रीरामकृष्ण के पास कभी-कभी आया-जाया करता है। श्रीरामकृष्ण उसे बडा प्यार करते है।

श्रीरामकृष्ण – बड़ा सरल है न?

'सरल' शब्द कहते ही श्रीरामकृष्ण का मन आनन्द से भर गया।

महेन्द्र - जी हाँ, बड़ा सरल है।

श्रीरामकृष्ण – उसकी माँ उस दिन आयी थी। अभिमानिनी थी, देखकर भय हुआ। इसके पश्चात् जब उसने देखा, यहाँ तुम आते हो, कप्तान आता है, तब उसने जरूर ही सोचा होगा, केवल नारायण और मै कुल यहो दो वहाॅ नही जाते। (सब हँसने लगे।) इस कमरे में मिश्री रखी हुई थी। उसने देखकर कहा, अच्छी मिश्री है। साथ ही समझा होगा,

इसके खाने की विशेष असुविधा नही है।

"शायद उन लोगो के सामने मैने बाबूराम से कहा था, नारायण के लिए और अपने लिए ये सन्देश रख दे। इसके बाद गणी की माँ और वे सब कहने लगी – 'नारायण अपनी माँ को नित्य प्रति यहाँ आने के लिए नाव का किराया माँगकर परेशान किया करता है।'

"मुझसे कहा आप नारायण से कहिये जिससे विवाह करे। इस बात पर मैने कहा, ये सब भाग्य की बाते है। क्यो मै ऐसी बात के लिए जोर दूँ? (सब हँसते है।)

"नारायण अच्छी तरह पढ़ने मे जी नही लगाता। इस पर उसने कहा, आप कहिये, जरा अच्छी तरह पढ़े। मैने कहा, पढ़ना रे! तब उसने कहा, जरा अच्छी तरह कहिये। (सब हँसते है।)

(चुनी से) "क्यो जी भला गोपाल क्यों नही आता?"

चुनी – उसे खून जा रहा है – आँव के साथ।

श्रीरामकृष्ण – दवा खा रहा है न?

श्रीरामकृष्ण आज स्टार थियेटर मे 'चैतन्यलीला' नाटक देखने जायेगे। (पहले स्टार थियेटर का अभिनय जहाँ पर होता था, वहाँ आजकल कोहिनूर थियेटर है।) महेन्द्र मुखर्जी के साथ उन्हीं की गाड़ी पर चढ़कर अभिनय देखने जायेगे। कहाँ बैठने पर अच्छी तरह दीख पड़ता है, यही बात हो रही है। किसी ने कहा, एक रुपयेवाली जगह से खूब दीख पड़ता है। राम ने कहा, ये 'बाक्स' से देखेंगे।

श्रीरामकृष्ण हँस रहे है। किसी किसी ने कहा, वेश्याएँ अभिनय करती है। चैतन्यदेव, निताई, इनका पार्ट वे ही करती है।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तो से) – मै उन्हे माँ आनन्दमयी देखूँगा।

"वे चैतन्य सजकर निकली है तो इससे क्या हुआ? नकली फल देखिये तो यथार्थ फल की बात याद आ जाती है।

"किसी भक्त ने रास्ते पर जाते हुए देखा, कुछ बबूल के पेड़ थे। देखते ही भक्त को भावावेश हो गया। उसे यह याद आया कि इसकी लकड़ी से श्यामसुन्दर के बगीचे की कुदार के लिए अच्छा बेट हो सकता है। उसे श्यामसुन्दर की बात याद आ गयी थी। जब किले के मैदान मे मुझे बेलून दिखाने के लिए ले गये थे, तब एक साहब का लड़का पेड़ के सहारे तिरछा होकर खड़ा था। उसे देखने के साथ ही कृष्ण की उद्दीपना हो गयी और मै समाधिमग्न हो गया।

"चैतन्यदेव मेड़गाँव से होकर जा रहे थ। सुना, गाँव की मिट्टी से खोल बनते है। सुनने के साथ ही उन्हें भावावेश हो गया था।

"श्रीमती (राधा) मेघ या मोरो की गरदन देख लेने पर फिर स्थिर नही रह सकती

थीं। श्रीकृष्ण की ऐसी उद्दीपना होती थी कि उनका बाह्यज्ञान लुप्त हो जाता था।

श्रीरामकृष्ण जरा देर चुपचाप बैठे हैं। कुछ देर बाद फिर बातचीत करते हैं – "श्रीमती को महाभाव होता था। गोपियों के प्रेम में कोई कामना नहीं है। जो सच्चा भक्त है, वह कोई कामना नहीं करता। केवल शुद्धा भक्ति की प्रार्थना करता है। कोई शक्ति या विभूति नहीं चाहता।"

(२)

तोतापुरीजी की शिक्षा - अष्ट सिद्धियाँ ईश्वर-लाभ में विघ्नरूप हैं

श्रीरामकृष्ण – विभूति का होना एक आफत है। नांगे (तोतापुरी) ने मुझे सिखलाया – एक सिद्ध समुद्र के तट पर बैठा हुआ था। उसी समय एक तूफान आया। तूफान से कष्ट होने का भय हुआ। उसने कहा, 'तूफान रुक जा।' उसकी बात झूठ होने की नहीं थी, तूफान रुक गया। उधर एक जहाज जा रहा था। उसमें पाल लगा हुआ था। तूफान ज्योंही एकाएक रुक गया कि जहाज डूब गया। जहाज भर के आदमी उसीके साथ डूब गये। अब इतने आदमियों के मरने से जो पाप होने को था, सब उसी को हुआ। उसी पाप से उसकी विभूति भी चली गयी और उसे नरक भी हुआ।

"एक साधु के बहुत सी विभूतियाँ हुई थीं। और उनका उसे अहंकार भी था, परन्तु था वह कुछ अच्छा आदमी। उसमें तपस्या भी थी। भगवान छद्मवेश धारण कर एक दिन साधु के पास आये। आकर कहा, महाराज, मैंने सुना है, आपके पास बहुत सिद्धियाँ हैं। साधु ने उनकी खातिर करके बैठाया। उसी समय एक हाथी उधर से जा रहा था। तब छद्मवेशधारी साधु ने कहा, अच्छा महाराज, आप चाहें तो क्या इस हाथी को मार सकते हैं? साधु ने कहा, हाँ, क्यों नहीं? यह कहकर साधु ने धूल पढ़कर हाथी पर ज्योंही छोड़ी कि वह छटपटाकर मर गया। तब जो साधु आया था, उसने कहा, 'वाह! आपमें तो बड़ी शक्ति है। हाथी को आपने मार डाला!' वह साधु हँसने लगा। तब नये साधु ने कहा, अच्छा इसे आप अब जिला सकते है? उसने कहा, 'हाँ, ऐसा भी हो सकता है। यह कहकर ज्योंही धूल पढ़कर उसने हाथी पर छोड़ी कि हाथी तुरन्त उठकर खड़ा हो गया। तब इस साधु ने कहा – 'आप में बड़ी शक्ति है; परन्तु एक बात मैं आपसे पूछता हूँ। आपने हाथी को मारा और फिर से जिला दिया, इससे आपका क्या हुआ? आपकी अपनी उन्नति क्या हुई? इससे क्या आप ईश्वर को पा गये?' यह कहकर वह साधु अन्तर्धान हो गये।

"धर्म की सूक्ष्म गति है। जरासी कामना रहने पर भी कोई ईश्वर को पा नहीं सकता। सुई के भीतर सूत को जाना है, जरा सा रोवाँ भी बाहर रह गया तो फिर नहीं जा सकता।

"कृष्ण ने अर्जुन से कहा था, भाई, मुझे अगर पाना चाहते हो, तो समझ लो कि

आठ सिद्धियों में एक भी सिद्धि के रहते मैं नहीं मिलता।

"एक बाबू आया था, वह कंजा था। उसने कहा, 'आप परमहंस हैं तो अच्छा है, परन्तु जरा आपको मेरे लिए स्वस्त्ययन करना होगा।' कितनी नीच बुद्धि है! परमहंस कहता है और फिर स्वस्त्ययन भी कराना चाहता है! स्वस्त्ययन करके अमंगलबाधा दूर कर देना विभूति का प्रयोग दिखलाना है। अहंकार से ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। अहंकार कैसा है जानते हो? जैसे ऊँची जमीन, वहाँ बरसात का पानी नहीं ठहरता, बह जाता है। नीची जमीन में पानी जमता है और अंकुर उगते है। फिर पेड़ होते हैं और फल लगते हैं।

"इसीलिए हाजरा से कहता हूँ कि मैं ही समझता हूँ और सब मूर्ख हैं, ऐसी बुद्धि न लाया करो। सबको प्यार करना चाहिए। कोई दूसरे नहीं हैं। सर्व भूतों में परमात्मा का ही वास है। उन्हें छोड़ किसी भी वस्तु का अस्तित्व नहीं है। प्रह्लाद से श्रीठाकुरजी ने कहा, तुम वरदान लो। प्रह्लाद ने कहा, आपके दर्शन हो गये, मुझे और कुछ न चाहिए। श्रीठाकुरजी ने न छोड़ा। तब प्रह्लाद ने कहा, 'अगर वर दोगे, तो यही वर दो – मुझे जिन लोगों ने कष्ट दिया है, उनका अपराध न हो।'

"इसका अर्थ यह है कि ईश्वर ने एक रूप से कष्ट दिया है। उन आदमियों को यदि कष्ट हो तो वह ईश्वर को ही कष्ट मिलता है।"

(३)

श्रीरामकृष्ण का ज्ञानोन्माद तथा जाति-विचार

श्रीरामकृष्ण – श्रीमती (राधिका) को प्रेमोन्माद था। और भक्ति का उन्माद भी है जैसे हनुमान को हुआ था। सीताजी को अग्नि में प्रवेश करते हुए देखकर वे रामचन्द्र को मारने चले थे। एक और ज्ञानोन्माद है। एक ज्ञानी का मैंने पागल की तरह देखा था। कालीमन्दिर की प्रतिष्ठा के कुछ ही समय बाद की बात है। लोगों ने कहा, वह राममोहन राय की ब्राह्मसभा का एक आदमी था। एक पैर में फटा जूता था, हाथ में बाँस की पतली छड़ी, और एक हण्डी और आम का पौधा। गंगाजी में उसने डुबकी लगायी, फिर कालीमन्दिर में गया। हलधारी उस समय काली मन्दिर में बैठा था। वह मस्त होकर स्तवपाठ करने लगा – 'क्षौं क्षौं खट्वांगधारिणी' आदि।

"कुत्ते के पास पहुँचकर उसने उसके कान पकड़ उसका जूठा खाया। कुत्ते ने कुछ भी न किया। मेरी भी उस समय यही अवस्था हो चली थी। मैं हृदय के गले से लिपटकर कहने लगा – क्यों रे हृदय, क्या मेरी भी यही दशा होगी?

"मेरी उन्माद-अवस्था थी। नारायण शास्त्री ने आकर देखा, कन्धे पर एक बाँस रखकर टहल रहा था। तब उसने आदमियों से कहा – अः! इसे तो उन्माद हो गया है। उस अवस्था में जाति का कोई विचार नहीं रहता था। एक आदमी नीच जाति का था,

उसकी स्त्री शाक बनाकर भेजती थी और मै खाता था।

"कालीमन्दिर मे कंगले खा जाते थे, मै उनकी जूठी पत्तले सिर पर और मुँह मे छुआता था। हलधारी ने तब मुझसे कहा, 'तू कर क्या रहा है? कंगलो का जूठा तूने खा लिया? अरे, तेरे बच्चो का अब विवाह कैसे होगा?' तब मुझे बड़ा गुस्सा आया। हलधारी मेरा दादा लगता था, परन्तु इससे क्या? मैने कहा – 'क्यो रे! तू यही गीता और वेदान्त पढ़ता है? यही तू लोगो को सिखलाता है, ब्रह्म सत्य है और संसार मिथ्या? तूने खूब सोच रखा है, मेरे लड़के-बच्चे भी होगे? आग लगे ऐसे तेरे गीता पढ़ने मे।'

(मास्टर से) "देखो, सिर्फ पढ़ने और लिखने से कुछ नही होता। बाजे के बोल आदमी कह खूब सकता है, परन्तु हाथ से निकालना बड़ा मुश्किल है।"

श्रीरामकृष्ण फिर अपनी ज्ञानोन्माद-अवस्था का वर्णन कर रहे है –

"सेजो (मथुर) बाबू के साथ कुछ दिन नाव पर खूब सैर की। उसी यात्रा मे नवद्वीप भी गया था। बजरे मे देखा, केवट खाना पका रहे थे। उसके पास मै खड़ा हुआ था। सेजो बाबू ने कहा, बाबा, वहाँ क्या कर रहे हो? मैने हँसकर कहा, ये केवट बड़ा अच्छा खाना पका रहे है। सेजो बाबू समझ गये कि ये अब माँगकर भी खा सकते है। इसलिए कहा, बाबा, वहाँ से चले आओ।

"परन्तु अब वैसा नही होता। वह अवस्था अब नही है। अब तो ब्राह्मण हो, आचारी हो, श्रीठाकुरजी का प्रसाद हो, तभी खा सकता हूँ।

"कैसी कैसी अवस्थाएँ सब पार हो गयी है। कामारपुकुर के चीने शँखारी और दूसरे दूसरे जोड़वालो से मैने कहा – देखो, तुम्हारे पैर पडता हूँ, बस एक बार उनका नाम लो। सबके पैर भी पडने चला था। तब चीने ने कहा – 'अरे तेरा यह पहला अनुराग है इसीलिए यह समभाव आया है।' पहले-पहल आँधी के आने पर जब धूल उडती है, तब आम और इमली सब एक जान पडते है। कौनसा आम है, और कौनसी इमली, यह समझ मे नही आता।"

एक भक्त – यह भक्त का उन्माद, प्रेम का उन्माद या ज्ञान का उन्माद अगर संसारी आदमी को हो तो भला कैसे चल सकता है?

श्रीरामकृष्ण – (संसारी भक्तो को देखकर) – योगी दो तरह के होते है। एक व्यक्त योगी और दूसरे गुप्त योगी। संसार मे गुप्त योगी होते है। उन्हे कोई समझते नही। संसारी के लिए मन से त्याग है, बाहर से नही।

राम – आपकी बच्चो को फुसलाकर समझानेवाली बात है। संसारी ज्ञानी हो सकता है, पर विज्ञानी नही हो सकता।

श्रीरामकृष्ण – वह अन्त मे चाहे तो विज्ञानी हो सकता है। पर जबरन संसार छोडना अच्छा नही।

राम – केशव सेन कहते थे, उनके पास आदमी इतना क्यो जाते है? एक दिन चुपचाप चुभो देगे तब भागना होगा।

श्रीरामकृष्ण – चुभो क्यो दूँगा? मै तो आदमियो से कहता हूँ, यह भी करो और वह भी करो। संसार भी करो और ईश्वर को भी पुकारो। सब कुछ छोड़ने के लिए तो मै कहता नही। (हँसकर) केशव सेन ने एक दिन लेक्चर दिया। कहा 'हे ईश्वर ऐसा करो कि हम लोग भक्ति-नदी मे गोते लगा सके और गोते लगाकर सच्चिदानन्द-सागर मे पहुँच जायँ।' स्त्रियाँ सब 'चिक' की ओट मे बैठी थी। मैने केशव से कहा, 'एक ही साथ सब आदमियो के गोते लगाने से कैसे होगा? तो इन लोगो (स्त्रियो) की दशा क्या होगी? कभी कभी किनारे पर लग जाया करना। फिर गोते लगाना, फिर ऊपर आना।' केशव और दूसरे लोग हँसने लगे। हाजरा कहता है, 'तुम रजोगुणी आदमियो को बड़ा प्यार करते हो, जिनके रुपया-पैसा, मान-मर्यादा खूब है।' अगर ऐसी बात है तो हरीश, लाटू, इन्हे क्यो प्यार करता हूँ? नरेन्द्र को क्यो प्यार करता हूँ? उसके तो भूना भाँटा खाने को नमक भी नही है।

श्रीरामकृष्ण कमरे से बाहर आये, मास्टर से बातचीत करते हुए झाऊतल्ले की ओर जा रहे है। एक भक्त गडुआ और अँगौछा लेकर साथ साथ जा रहे है। श्रीरामकृष्ण कलकत्ते मे आज 'चैतन्यलीला' नाटक देखने जायेगे, उसी की बाते हो रही है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – राम सब रजोगुण की बाते कह रहा है। इतने अधिक दाम खर्च करके बैठने की क्या जरूरत है?

बाक्स का टिकट न लिया जाय, श्रीरामकृष्ण का यह उद्देश्य है।

(४)

हाथीबागान में भक्त के घर। श्री महेन्द्र मुखर्जी की सेवा

श्रीरामकृष्ण श्रीयुत महेन्द्र मुखर्जी की गाड़ी पर चढ़कर दक्षिणेश्वर से कलकत्ता आ रहे है। आज रविवार है, २१ सितम्बर, १८८४। दिन के पाँच का समय है। गाड़ी मे महेन्द्र मुखर्जी, मास्टर और दो-एक व्यक्ति और है। गाड़ी के कुछ बढ़ते ही ईश्वरचिन्तन करते हुए श्रीरामकृष्ण भाव-समाधि मे मग्न हो गये।

बड़ी देर के बाद समाधि छूटी। श्रीरामकृष्ण कह रहे है, हाजरा भी मुझे शिक्षा देता है! कुछ देर बाद फिर कह रहे है – मै पानी पीऊँगा। बाह्य संसार मे मन को उतारने के लिए समाधि के भंग होने पर प्राय: श्रीरामकृष्ण यह बात कहते थे।

महेन्द्र मुखर्जी – (मास्टर से) – तो कुछ जलपान के लिए मँगा लिया जाय।

मास्टर – नही, इस समय ये न खायेगे।

श्रीरामकृष्ण – (भावस्थ) – मै खाऊँगा और शौच भी जाऊँगा।

हाथीबागान में महेन्द्र मुखर्जी की आटे की चक्की है। उसी कारखाने में श्रीरामकृष्ण को लिए जा रहे हैं। वहाँ जरा देर विश्राम करके स्टार थियेटर में चैतन्यलीला नाटक देखने जायेंगे। महेन्द्र का मकान बाग-बाजार में है, श्रीमदनमोहनजी के कुछ उत्तर तरफ। श्रीरामकृष्ण को उनके पिता नहीं जानते; इसीलिए महेन्द्र उन्हें घर नहीं ले गये। उनके भाई प्रियनाथ भी श्रीरामकृष्ण के भक्त हैं।

महेन्द्र के कारखाने में तख्त पर दरी बिछी हुई है। उसी पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए ईश्वर-प्रसंग कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर और महेन्द्र से) – चैतन्यचरितामृत सुनते हुए हाजरा कहता है, 'यह सब शक्ति की लीला है – इसके भीतर विभु नहीं हैं।' विभु को छोड़कर शक्ति कभी रह सकती है? यहाँ के मत को उलट देने की चेष्टा!

"मैं जानता हूँ, ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं। जैसे जल और उसकी हिमशक्ति, अग्नि और उनकी दाहिका शक्ति। वे विभु के रूप से सर्व भूतों में विराजमान हैं, परन्तु कहीं उनकी शक्ति का अधिक और कही कम प्रकाश है। हाजरा यह भी कहता है, 'ईश्वर को पा जाने पर उन्हीं की तरह मनुष्य षड़ैश्वर्यशाली हो जाता है। षड़ैश्वर्य रहेंगे जरूर, फिर वह उन्हें अपने काम में लाये या न लाये।' "

मास्टर – षड़ैश्वर्य मुट्ठी में रहने चाहिए। (सब हँसते हैं।)

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – हाँ, मुट्ठी में रहने चाहिए। कैसी हीन बुद्धि हैं! जिसने ऐश्वर्य का कभी भोग नहीं किया, वह 'ऐश्वर्य ऐश्वर्य' चिल्लाकर अधीर होता है। जो शुद्ध भक्त है, वह कभी ऐश्वर्य के लिए प्रार्थना नहीं करता।

श्रीरामकृष्ण शौच को जायेंगे। महेन्द्र ने गडुए में पानी मँगवाया और गडुए को खुद हाथ में ले लिया। श्रीरामकृष्ण को साथ लेकर मैदान की ओर जायेंगे।

श्रीरामकृष्ण ने सामने मणि को देखकर महेन्द्र से कहा, तुम्हें न लेना होगा, इन्हें दे दो।

मणि गडुआ लेकर श्रीरामकृष्ण के साथ कारखाने के भीतरवाले मैदान की ओर गये।

हाथ-मुख धो चुकने के बाद श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं, "क्या सन्ध्या हो गयी? सन्ध्या होने पर सब काम छोड़कर ईश्वरचिन्तन करना चाहिए।"

यह कहकर श्रीरामकृष्ण हाथ के रोएँ देख रहे हैं – गिने जा सकते हैं या नहीं। रोएँ अगर न गिने जा सकें तो समझना चाहिए कि सन्ध्या हो गयी।

(५)

थियेटर में चैतन्यलीला। समाधि में श्रीरामकृष्ण

श्रीरामकृष्ण बीडन स्ट्रीट में स्टार थियेटर के सामने आ गये। रात के साढ़े आठ बजे

का समय होगा। साथ में मास्टर, बाबूराम, महेन्द्र, मुखर्जी तथा दो-एक भक्त और हैं। टिकट खरीदने का बन्दोबस्त हो रहा है। नाट्यागार के मैनेजर श्रीयुत गिरीश घोष कुछ कर्मचारियों के साथ श्रीरामकृष्ण की गाड़ी के पास आये। स्वागत करके आदरपूर्वक उन्हें ऊपर ले गये। गिरीश बाबू ने श्रीरामकृष्णदेव का नाम सुना था। वे चैतन्यलीला-अभिनय देखने के लिए आये हैं, यह सुनकर उन्हें बड़ा आनन्द हुआ है। श्रीरामकृष्ण को लोगों ने दक्षिण-पश्चिमवाले बाक्स में बैठाया। पीछे बाबूराम तथा और भी दो-एक भक्त बैठे।

रंगमंच में बत्ती जल गयी। नीचे बहुत से आदमी बैठे हुए थे। श्रीरामकृष्ण की बाईं ओर ड्रापसीन दीख पड़ रहा है। कितने ही बाक्सों में भी आदमी आ गये हैं। बाक्स के पीछे से हवा करने के लिए एक एक पंखा झलनेवाला नौकर है। श्रीरामकृष्ण को भी हवा करने के लिए गिरीश आदमी ठीक कर गये।

रंगमंच देखकर श्रीरामकृष्ण को बालकों की तरह प्रसन्नता हुई है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से हँसते हुए) – वाह! यहाँ तो बड़ा अच्छा है। आकर बड़ा अच्छा हुआ। बहुत से आदमियो के एक साथ होने से उद्दीपना होती है। तब मैं यथार्थ ही देखता हूँ कि वे ही सब हुए है।

मास्टर – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – यहाँ कितना लेगा?

मास्टर – जी, कुछ न लेगे। आप आये है, इसलिए उन्हें बड़ा हर्ष है।

श्रीरामकृष्ण – सब माँ का माहात्म्य है।

ड्रापसीन उठ गया। एक साथ ही दर्शको की दृष्टि रंगमंच पर पड़ी। पहले पाप और छः रिपुओ की सभा थी। फिर अरण्य-मार्ग में विवेक, वैराग्य और भक्ति की बातचीत थी।

भक्ति कह रही है – नदिया में गौरांग ने जन्म ग्रहण किया है, इसलिए विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि छन्नवेश धारण कर उनके दर्शन करने जा रहे है।

विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि गौरांग को अवतार मानकर उनकी स्तुति कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उन्हें देखकर भाव में विभोर हो रहे हैं। मास्टर से कह रहे है, अहा! देखो, कैसा है!

विद्याधरियाँ और ऋषि-मुनि गाकर श्रीगौरांग की स्तुति कर रहे है –

पुरुषगण – केशव कुरु करुणा दीने कुंज-कानन-चारी।

स्त्रियाँ – माधव मनमोहन मोहन-मुरलीधारी।।

सब मिलकर – हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, मन आमार।

पुरुष – ब्रजकिशोर कालीय-हर कातर-भय-भंजन।

स्त्रियाँ – नयन बाँका, बाँका शिखिपाखा, राधिका-हृदिरंजन।

पुरुष – गोवर्धन धारण, वनकुसुम – भूषण, दामोदर कंसदर्पहारी।

स्त्रियाँ – श्याम रासरसबिहारी।।

सब – हरि बोल, हरि बोल, हरि बोल, मन आमार।

विद्याधरियों ने जब गाया – 'नयन बाँका, बाँका शिखिपाखा राधिका-हृदिरंजन', तब श्रीरामकृष्ण गम्भीर समाधि में मग्न हो गये। कन्सर्ट (concert) में कई वाद्य एक साथ बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण को कोई होश नहीं।

(६)

चैतन्यलीला-दर्शन। गौर-प्रेम में उन्मत्त श्रीरामकृष्ण

जगन्नाथ मिश्र (श्रीगौरांग के पिता) के घर एक अतिथि आये हैं। बालक निमाई अपने साथियों के साथ आनन्दपूर्वक गा रहे हैं।

अतिथि आँखें मूँदकर भगवान को भोग लगा रहे हैं। निमाई दौड़कर अतिथि के पास पहुँचे और अतिथि के नैवेद्य को खाने लगे। अतिथि समझ गये कि ये ईश्वर के अवतार है। वे दस अवतारों की स्तुति को बालक के सामने पढ़कर उसे प्रसन्न करने लगे। मिश्र और शची के पास से विदा होते समय उन्होंने फिर गाकर स्तुतिपाठ किया –

"जय नित्यानन्द गौरचन्द्र जय जय भवतारण!
अनाथत्राण जीवप्राण भीतभयवारण!
युगे युगे रंग, नव लीला नव रंग,
नव तरंग, नव प्रसंग, धराभार-धारण!
तापहारी प्रेमवारि वितर रासरस-बिहारी,
दीनआश, कलुषनाश, दुष्टत्रासकारण!"

स्तुति सुनते ही सुनते श्रीरामकृष्ण को फिर भावावेश हो रहा है।

अब नवद्वीप के गंगातट का दृश्य आया। गंगा नहाकर ब्राह्मणों की स्त्रियाँ और पुरुष घाट पर बैठे हुए पूजा कर रहे हैं। निमाई नैवेद्य छीन-छीनकर खा रहे हैं। एक ब्राह्मण बहुत गुस्सा हो गये। उन्होंने कहा, क्यों रे दुष्ट, विष्णुपूजा का नैवेद्य छीनता है? – तेरा सर्वनाश होगा। निमाई ने फिर भी नैवेद्य छीनकर खाया और फिर वहाँ से चल दिया। बहुत सी औरतें थीं, जो उसे बड़ा प्यार करती थीं। निमाई को जाते देखकर उन्हें जो हार्दिक कष्ट हुआ, उसे वे सह न सकीं। वे उच्च स्वर से पुकारने लगीं, 'निमाई, लौट आ, निमाई लौट आ', पर निमाई ने उनकी एक न सुनी। स्त्रियों में एक निमाई को लौटाने का महामन्त्र जानती थीं। उसने 'हरि बोल, हरि बोल' कहना आरम्भ कर दिया। बस निमाई 'हरि बोल, हरि बोल' कहते हुए लौट पड़े।

मणि श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए हैं। कहा – अहा!

श्रीरामकृष्ण स्थिर न रह सके। 'अहा' कहते हुए मणि की ओर देखकर प्रेमाश्रु वर्षण

कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (बाबूराम और मास्टर से) – देखो, अगर मुझे भावसमाधि हो, तो तुम लोग शोरगुल न मचाना, संसारी आदमी समझेंगे – ढकोसला है।

निमाई का उपनयन हो रहा है। निमाई संन्यासी के वेश में हैं। शची और पड़ोसिनें चारों ओर खड़ी हैं। निमाई गाकर भिक्षा माँग रहे है।

सब चले गये। निमाई अकेले है। देव और दवियाँ ब्राह्मण और ब्राह्मणियो के वेश में उनकी स्तुति कर रहे है –

पुरुषगण – चन्द्रकिरण अंगे, नमो वामनरूपधारी।

स्त्रियाँ – गोपीगणमनमोहन, मंजुकुंजचारी।

निमाई – जय राधे, श्रीराधे!

पुरुष – व्रज-बालक-संग, मदन-मान-भंग।

स्त्रियाँ – उन्मादिनी व्रजकामिनी उन्माद-तरंग।।

पुरुष – दैत्य-छलन नारायणसुरगण-भय-हारी।।

स्त्रियाँ – व्रज-बिहारी, गोपनारी-मान-भिखारी।।

निमाई – जय राधे, श्रीराधे

श्रीरामकृष्ण यह गाना सुनते सुनते समाधिमग्न हो गये।

अब दूसरा अंक शुरू हुआ। अद्वैत के घर के सामने श्रीवास आदि बातें कर रहे हैं। मुकुन्द मधुर कण्ठ से गा रहे है।

निमाई घर मे हैं। श्रीवास इनसे भेंट करने के लिए आये हैं। पहले शची से भेंट हुई। शची रोने लगीं, 'मेरा पुत्र संसार-धर्म में मन नही देता। जब से विश्वरूप चला गया है, तब से सदा ही मेरे प्राण काँपते रहते है कि कही निमाई भी संन्यासी न हो जाय।'

इसी समय निमाई आते हुए दीख पड़े। शची श्रीवास से कह रही है, 'देखो – जान पड़ता है पागल है – आँसुओं से हृदय प्लावित हुआ जा रहा है, कहो, कहो – किस तरह इसका यह भाव दूर हो?'

निमाई श्रीवास को देखकर रो रहे है – 'कहाँ, प्रभु! कहाँ मुझे कृष्णभक्ति हुई? अधम जन्म तो व्यर्थ ही कटा जा रहा हैं!'

श्रीरामकृष्ण मास्टर की ओर देखकर कुछ बोलना चाहते हैं पर बात नहीं निकलती। गला भर गया है। कपोलों पर आँसुओं की धारा बहती जा रही है। अनिमेष लोचनों से देख रहे हैं – निमाई श्रीवास के पैरों पर पड़े हुए कह रहे हैं – 'कहाँ, प्रभु! कृष्ण की भक्ति तो मुझे नहीं हुई!'

इधर निमाई पाठशाला के छात्रों को अब पढ़ा भी नहीं सकते। निमाई ने गंगादास से पढ़ा था। वे निमाई को समझाने आये हैं। उन्होंने श्रीवास से कहा – 'श्रीवासजी, हम

लोग भी तो ब्राह्मण हैं, विष्णुपूजा भी किया करते है, परन्तु अब देखा जाता है, आप लोग उसके संसार को नष्ट-भ्रष्ट कर डालेंगे।'

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – यह संसारी की शिक्षा है, यह भी करो और वह भी करो। संसारी मनुष्य जब शिक्षा देता है, तब दोनों और सम्हालने के लिए कहता हैं।

मास्टर – जी हाँ।

गंगादास निमाई को फिर समझा रहे है – "क्यों जी, निमाई तुम्हें तो अब शास्त्रज्ञान भी हो गया है। तुम हमारे साथ तर्क करो। संसार-धर्म से बड़ा और कौन धर्म है? हमें समझाओ – तुम गृही हो, गृही की तरह आचरण न करके विपरीत आचरण क्यों करते हो?"

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – देखा? दोनों ओर सम्हालने के लिए कह रहा है।

मास्टर – जी हाँ।

निमाई ने कहा, "मैं अपनी इच्छा से संसार-धर्म की उपेक्षा नहीं कर रहा हूँ। मेरी तो यही इच्छा है कि लोक परलोक दोनों बनें। परन्तु प्रभु, न जाने क्यों प्राण उधर को खींचते है। समझाने पर भी नहीं समझते। अगाध समुद्र में कुदाना चाहते हैं।"

श्रीरामकृष्ण – अहा!

(७)

थियेटर में नित्यानन्द के वंशज; तथा श्रीरामकृष्ण का उद्दीपन

नवद्वीप में नित्यानन्द आये हुए हैं। वे निमाई को खोज रहे हैं, उसी समय निमाई से भेंट हो गयी। निमाई भी उनको खोज रहे थे। मुलाकात होने पर निमाई कह रहे हैं – "मेरा जीवन सार्थक है। मेरा स्वप्न सत्य हुआ। तुम मुझे स्वप्न में दर्शन देकर छिप गये थे।"

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से गद्गद स्वरों में) – निमाई कहते है कि स्वप्न में मैंने देखा है।

श्रीवास ने षड्भुजा मूर्ति देखी है और स्तव कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण भावावेश में षड्भुजा-मूर्ति के दर्शन कर रहे हैं।

गौरांग को इश्वरावेश हुआ हैं। वे अद्वैत, श्रीवास, हरिदास आदि के साथ भावावेश में बातचीत कर रहे हैं।

गौरांग का भाव समझकर नित्यानन्द गा रहे हैं – "क्यों री सखी, कुंज में श्रीकृष्ण कब आये?"

श्रीरामकृष्ण गाना सुनते ही समाधिमग्न हो गये। बड़ी देर तक उसी अवस्था में रहे। वाद्य बज रहे हैं। श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। अब खड़दह के एक बाबू आये, वे

नित्यानन्द के वंशज थे। वे श्रीरामकृष्ण की खुर्सी के पीछे खडे हुए। उम्र तीस पैतीस की होगी। श्रीरामकृष्ण को उन्हे देखकर अपार आनन्द हुआ। उनका हाथ पकड़कर उनसे कितनी ही बाते कह रहे है। कभी कभी उनसे कहते है – 'यहाँ बैठो, बैठो न, तुम्हारे यहाँ रहने पर बड़ी उद्दीपना होगी।' स्नेहपूर्वक उनका हाथ पकड़ मानो खेल कर रहे है। उनके मुँह पर हाथ फेरकर कितना ही स्नेह कर रहे है।

गोस्वामी के चले जाने पर मास्टर से कह रहे है – "वह बड़ा पण्डित है। उसका बाप बड़ा भक्त है। जब मै खड़दह के श्यामसुन्दर का दर्शन करने गया था, तब सौ रुपये देने पर भी जो भोग नही मिलता, वही भोग लाकर मुझे उसने खिलाया था।

"इसके लक्षण बड़े अच्छे है। जरा हिला-डुला देने से चेतना हो जायगी। उसे देखते ही उद्दीपना होती है और खूब होती है। और जरा देर रहता तो मै खडा हो जाता।"

पर्दा उठ गया। राजपथ पर नित्यानन्द सिर पर हाथ लगाये हुए खून का बहना रोक रहे है। मधाई ने कलसी का टुकड़ा फेककर मारा है। परन्तु नित्यानन्द का ध्यान मधाई की ओर नही है। गौरांग के प्रेम से वे पूरे मतवाले हो रहे है। श्रीरामकृष्ण को भावावेश हुआ है। देख रहे है, मारकर पश्चाताप करनेवाले मधाई को और उसके साथी जगाई को नित्यानन्द गले से लगा रहे है।

अब निमाई शची देवी से संन्यास की बात कह रहे है।

सुनकर शची देवी मूर्च्छित हो गयी। उनको मूर्च्छित देखकर कितने ही दर्शक हाहाकार कर रहे है। श्रीरामकृष्ण तिल भर भी विचलित न होकर एकदृष्टि से देख रहे है। केवल आँखो के कोरो मे एक एक बूँद आँसू झलक रहा है।

(८)

श्रीरामकृष्ण का भक्त-प्रेम

अभिनय समाप्त हो गया। श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर चढ़ रहे है। एक भक्त ने पूछा, आपने कैसा देखा? श्रीरामकृष्ण ने हँसते हुए कहा, असल और नकल एक देखा।

गाड़ी महेन्द्र मुखर्जी के कारखाने मे जा रही है। एकाएक श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। कुछ देर बाद प्रेमपूर्वक आप ही आप कह रहे हे – "हा कृष्ण! हे कृष्ण! ज्ञान कृष्ण! प्राण कृष्ण! मन कृष्ण! आत्मा कृष्ण! देह कृष्ण!" फिर कह रहे है – "प्राण हे गोविन्द मेरे जीवन!"

गाडी मुखर्जी के कारखाने मे पहुँची। बड़े आदर-सत्कार के साथ महेन्द्र ने श्रीरामकृष्ण को भोजन कराया। मणि पास बैठे हुए है। श्रीरामकृष्ण स्नेहपूर्वक उनसे कह रहे है, तुम भी कुछ खाओ। हाथ से उठाकर मिष्टान्न प्रसाद दिया।

अब श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर कालीमन्दिर जा रहे है। गाड़ी मे महेन्द्र मुखर्जी तथा और

भी दो-तीन भक्त हैं। महेन्द्र कुछ आगे बढ़कर छोड़ आयेंगे। श्रीरामकृष्ण आनन्दपूर्वक श्रीगौरांग पर रचा गया एक गाना गा रहे हैं। साथ साथ मणि भी गा रहे हैं।

महेन्द्र तीर्थ जायेंगे। श्रीरामकृष्ण से उसी सम्बन्ध की बातें कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (महेन्द्र से सहास्य) – प्रेम के अंकुर के बिना उगते ही जाओगे, सब सूख न जायेगा?

"परन्तु जल्दी आना। अहा, बहुत दिनों से तुम्हारे यहाँ आने की इच्छा हो रही थी। एक बार देख लिया, अच्छा हुआ।"

महेन्द्र – जी, हम लोगों का जन्म और जीवन सार्थक हो गया।

श्रीरामकृष्ण – सार्थक तो तुम हो ही। तुम्हारे पिता भी अच्छे हैं। उस दिन देखा, अध्यात्म रामायण पर विश्वास है।

महेन्द्र – जी, कृपा रखियेगा, जिससे भक्ति हो।

श्रीरामकृष्ण – तुम बड़े उदार और सरल हो। उदार हुए बिना कोई ईश्वर को पा नही सकता। वे कपट से बहुत दूर हैं।

महेन्द्र श्यामबाजार के पास बिदा हुए। गाड़ी जा रही है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – यदु मल्लिक ने क्या किया?

मास्टर – (मन ही मन) – श्रीरामकृष्ण सब की कल्याण-कामना कर रहे हैं।

परिच्छेद ९३

प्रार्थना-रहस्य

(१)

साधारण ब्राह्म-समाज मन्दिर में श्रीरामकृष्ण। 'समन्वय'

आज श्रीरामकृष्ण कलकत्ता आये हुए हैं। आज नवरात्रि की सप्तमी-पूजा है। शुक्रवार, २६ सितम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण को बहुत से काम है। शारदीय महोत्सव है – हिन्दुओं के यहाँ आज प्राय: घर-घर में यह महोत्सव मनाया जा रहा है, फिर राजधानी कलकत्ते की बात ही क्या है। श्रीरामकृष्ण अधर के यहाँ जाकर प्रतिमा-पूजन देखेगे और आनन्दमयी के आनन्दोत्सव मे भाग लेंगे। उनकी एक इच्छा और है। वे श्रीयुत शिवनाथ शास्त्री के दर्शन करेगे।

दिन के दोपहर से साधारण ब्राह्मसमाज के फुटपाथ पर हाथ में छाता लिये प्रतीक्षा मे मास्टर टहल रहे हैं। एक बजा, दो बजे, श्रीरामकृष्ण न आये। श्रीयुत महलानवीस के कारखाने की सीढ़ी पर बैठकर कभी पूजा के उत्सव मे आबाल-वृद्ध नरनारियों को आनन्द करते हुए देखते हैं।

तीन बज गये। कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण की गाड़ी आकर पहुँच गयी। साथ में हाजरा तथा दो-एक भक्त और हैं। मास्टर को श्रीरामकृष्ण के दर्शनों से अपार आनन्द हुआ है। उन्होंने श्रीरामकृष्ण की चरणवन्दना की। श्रीरामकृष्ण ने कहा, मैं शिवनाथ के घर जाऊँगा। श्रीरामकृष्ण के आने की बात सुनकर कई ब्राह्मभक्त वहाँ आ पहुँचे। श्रीरामकृष्ण को अपने साथ वे ब्राह्ममुहल्ले के भीतर शिवनाथ के यहाँ ले आये। शिवनाथ घर में न थे। अब क्या किया जाय? देखते ही देखते श्रीयुत विजय, श्रीयुत महलानवीस आदि ब्राह्मसमाज के संचालक आ गये। वे श्रीरामकृष्ण का स्वागत करके उन्हें समाज-मन्दिर के अन्दर ले गये। श्रीरामकृष्ण जरा देर के लिए बैठ गये, यह आशा थी कि तब तक शिवनाथ भी आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण सदा ही आनन्दमय बने रहते हैं। हँसकर उन्होंने आसन ग्रहण किया। वेदी के नीचे जिस जगह संकीर्तन होता है, वहीं बैठने का आसन कर दिया गया। विजय आदि बहुतेरे ब्राह्मभक्त सामने बैठे।

श्रीरामकृष्ण – (विजय से, हँसते हुए) – मैंने सुना है कि यहाँ कोई साइनबोर्ड है। दूसरे मतों के आदमी यहाँ नही आने पाते। नरेन्द्र ने कहा, समाज में जाने की जरूरत नहीं, आप शिवनाथ के यहाँ जाइयेगा।

"मैं कहता हूँ, उनको सभी पुकार रहे हैं। द्वेष की क्या जरूरत है? कोई साकार कहता है और कोई निराकार। मैं कहता हूँ, जिसका विश्वास साकार पर है, वह साकार की ही चिन्ता करे और जिसका विश्वास निराकार पर है, वह निराकार की चिन्ता करे। तात्पर्य यह कि इस कट्टरता की कोई आवश्यकता नहीं कि मेरा ही धर्म ठीक है, तथा अन्य सब वाहियात हैं। 'मेरा धर्म ठीक है, पर दूसरो के धर्म में सचाई है या वह गलत है, यह मेरी समझ में नहीं आता', ऐसा भाव अच्छा है, क्योंकि बिना ईश्वर का साक्षात्कार किये उनका स्वरूप समझ में नहीं आता। कबीर कहते थे, साकार मेरी माँ है और निराकार मेरा बाप।

'काको निन्दौ काको बन्दौ दोनों पल्ला भारी।'

"हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, शाक्त, वैष्णव, शैव, ऋषियों के समय के ब्रह्मज्ञानी और आजकल के ब्राह्मसमाजवाले तुम लोग, सब एक ही वस्तु की चाह रखते हो। अन्तर इतना ही है कि जिससे जिसका हाजमा नहीं बिगड़ता, उसी की व्यवस्था उसके लिए माँ ने की है।

"बात यह है कि देश, काल और पात्र के भेद से ईश्वर ने अनेक धर्मो की सृष्टि की है। परन्तु सब मत ही उनके रास्ते है, पर मत कभी ईश्वर नही है। बात यह है कि आन्तरिक भक्ति के द्वारा एक मत का आश्रय लेने पर उनके पास तक पहुँचा जाता है। अगर किसी मत का आश्रय लेने पर कोई भूल उसमे रहती है, तो आन्तरिकता के होने पर वे भूल सुधार देते है। अगर कोई आन्तरिक भक्ति के साथ जगन्नाथजी के दर्शनों के लिए निकलता है और भूलकर दक्षिण की ओर न जाकर उत्तर की ओर चला जाता है, तो रास्ते में उसे कोई अवश्य ही कह देता है, 'क्यों भाई, उस तरफ कहाँ जाते हो, दक्षिण की ओर जाओ।' वह आदमी कभी न कभी जगन्नाथजी के दर्शन अवश्य ही करेगा।

"परन्तु इस बात की आलोचना हमारे लिए निष्प्रयोजन है कि दूसरों का मत गलत है। जिनका यह संसार है, वे सोच रहे हैं। हमारा तो यह कर्तव्य है कि किसी तरह जगन्नाथजी के दर्शन करें। और तुम्हारा मत अच्छा तो है। उन्हें निराकार कह रहे हो, यह अच्छा तो है। मिश्री की रोटी सीधी तरह से खाओ या टेढ़ी करके खाओ, मीठी जरूर लगेगी।

"केवल कट्टरता अच्छी नहीं होती। तुम लोगों ने बहुरुपिये की कहानी सुनी होगी। आदमी ने जंगल में जाकर पेड़ पर एक गिरगिट देखा। मित्रों के पास लौटकर उसने कहा, मैंने एक लाल गिरगिट देखा। उसको विश्वास था कि वह बिलकुल लाल है। एक आदमो और उस पेड़ के नीचे से लौटकर आया और उसने आकर कहा, मैं एक हरा

गिरगिट देख आया हूँ। उसका विश्वास था कि वह बिलकुल हरा है। परन्तु जो मनुष्य उस पेड़ के ही नीचे रहता था, उसने आकर कहा, तुम लोग जो कुछ कहते हो, सब ठीक है, क्योंकि वह कभी लाल होता है, कभी पीला और कभी उसके कोई रंग नहीं रह जाता।

"वेदों मे ईश्वर को निर्गुण, सगुण दोनों कहा है। तुम लोग केवल निराकार कह रहे हो, यह एक खास ढर्रे का है, परन्तु इससे कोई हर्ज नहीं। एक का यथार्थ ज्ञान हो जाय तो दूसरे का भी हो जाता है। वे ही समझा देते है। तुम्हारे यहाँ जो आता है, वह इन्हे भी पहचानता है और उन्हे भी।" (यह कहकर उन्होंने दो-एक ब्राह्मभक्तों की ओर उँगली उठाकर बताया।)

(२)

विजय गोस्वामी के प्रति उपदेश

विजय तब भी साधारण ब्राह्मसमाज मे थे। उसी ब्राह्मसमाज मे वे तनख्वाह लेकर आचार्य का काम करते थे। आजकल वे ब्राह्मसमाज के सब नियमो को मानकर चलने मे असमर्थ हो रहे है। वे साकारवादियो के साथ भी मिल रहे है। इन सब बातों को लेकर साधारण ब्राह्मसमाज के सचालको के साथ उनका मतान्तर हो रहा है। समाज के ब्राह्मभक्तो मे कितने ही उनसे असन्तुष्ट हो रहे है। श्रीरामकृष्ण एकाएक विजय को लक्ष्य करके कह रहे है।

श्रीरामकृष्ण – (विजय से, हँसकर) – तुम साकारवादियो से मिलते हो, इसलिए मैंने सुना, तुम्हारी बड़ी निन्दा हो रही है। जो ईश्वर का भक्त है, उसकी बुद्धि कूटस्थ होती है, जैसे लोहार के यहाँ की निहाई। हथौड़े का अनगिनती चोटें लगातार पड़ रही है, फिर भी निर्विकार है। बुरे आदमी तुम्हे बहुत कुछ कहेंगे, तुम्हारी निन्दा करेंगे। अगर तुम हृदय से परमात्मा को चाहते हो, तो तुम्हे सब सहना होगा। दुष्टों के बीच में रहकर क्या ईश्वर की चिन्ता नही हो सकती? देखो न, ऋषि लोग वन में ईश्वर की चिन्ता करते थे। चारों ओर बाघ, रीछ, अनेक प्रकार के हिंसक पशु रहते थे। बुरे आदमियों का स्वभाव बाघों और रीछों जैसा ही है। वे धावा कर अनर्थ करते है।

"इन कई जीवों के पास सावधान रहना पड़ता है। प्रथम हैं बड़े आदमी। धन और जन, दोनों ही उनके पास यथेष्ट है, वे चाहें तो तुम्हारा अनर्थ कर सकते हैं। बहुत संभलकर उनसे बातचीत करनी चाहिए। वे जो कहें, उसमें हाँ मिलाते जाना पड़ता है। इसके बाद है कुत्ता। जब कुत्ता खदेड़ लेता है या भौकता है, तब खड़े होकर मुँह से पुचकारकर उसे ठण्डा करना पड़ता है। फिर है साँड़। मारने आये तो उसे भी पुचकारकर ठण्डा करना पड़ता है। इसके पश्चात् है शराबी। अगर चिढ़ा दो तो कहेगा, तेरी चौदह पीढ़ी की ऐसी-तैसी, तुझे फिर क्या कहूँ – इस तरह कितनी ही गालियाँ देता है। उससे

कहना पड़ता है, क्यों चचा कैसे हो? तो वह खूब प्रसन्न हो जायगा कहो तो तुम्हारे पास ही बैठकर तम्बाकू पीने लगे।

"बुरे आदमी को देखते ही मैं सावधान हो जाता हूँ। अगर कोई आकर पूछता है, क्या हुक्का-सुक्का है? तो मैं कहता हूँ, हाँ है।

"किसी का स्वभाव साँप के समान होता है। तुम्हारे बिना जाने ही कहो वह तुम्हें काट खाय। उसकी चोट से बचने के लिए बहुत विचार करना पड़ता है। नहीं तो तुम्हें ही ऐसा क्रोध आ जायगा कि उल्टे उसी के नाश करने की चिन्ता में पड़ जाओगे। इतने पर भी कभी कभी सत्संग की बड़ी आवश्यकता है। सत्संग करने पर ही सत् असत् का विचार आता है।"

विजय – अवकाश नही है, यहाँ काम में फँसा रहता हूँ।

श्रीरामकृष्ण – तुम लोग आचार्य हो, दूसरों को छुट्टी भी मिलती है, परन्तु आचार्य को छुट्टी नहीं मिलती, नायब जब एक हल्के का अच्छा इन्तजाम कर लेता है, तब जमीदार उसे दूसरे महाल के इन्तजाम के लिए भेजता है। इसीलिए तुम्हें छुट्टी नहीं मिलती। (सब हँसते है।)

विजय – (हाथ जोड़कर) – आप जरा आशीर्वाद दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – ये सब अज्ञान की बातें है। आशीर्वाद ईश्वर देंगे।

गृही ब्राह्मभक्त को उपदेश

विजय – जी, आप कुछ उपदेश दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – (समाज-गृह के चारों ओर नजर डालकर सहास्य) – यह (ब्राह्मसमाज) एक तरह से अच्छा है। इसमें राब भी है और शीरा भी। (सब हँसते है।) नक्श खेल जानते हो? सत्रह से अधिक होने पर बाजी बरबाद हो जाती है। यह एक प्रकार का ताशों का खेल है। जो लोग सत्रह नुक्ताओं से कम में रह जाते हैं – जो लोग पाँच में रहते हैं, सात या दस में, वे होशियार हैं। मैं अधिक चढ़कर जल गया हूँ।

"केशव सेन ने घर में लेक्चर दिया था। मैंने सुना था। बहुत से आदमी बैठे थे। चिक के भीतर औरतें भी थीं। केशव ने कहा, 'हे ईश्वर, तुम आशीर्वाद दो कि हम लोग भक्ति की नदी में बिलकुल डूब जाय।' मैंने हँसकर केशव से कहा, 'भक्ति की नदी में अगर बिलकुल ही डूब जाओगे, तो चिक के भीतर जो बैठी हुई हैं, उनकी दशा क्या होगी? इसलिए एक काम याद रखना, जब डूबना है, तब कभी-कभी तट पर लग जाया करना। बिलकुल ही तलस्पर्श न कर लेना।' यह बात सुनकर केशव तथा दूसरे लोग हँसने लगे।

"खैर, आन्तरिकता के रहने पर संसार में भी ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। 'मैं' और

'मेरा' यही अज्ञान है। हे 'ईश्वर, तुम और तुम्हारा' यह ज्ञान है।

"संसार मे इस तरह रहो जैसे बडे आदमियो के घर की दासी। सब काम करती है, बाबू के बच्चे की सेवा करके उसे बड़ा कर देती है, उसका नाम लेकर कहती है, यह मेरा हरि है। परन्तु मन ही मन खूब जानती हे कि न यह घर मेरा है और न यह लड़का। वह सब काम तो करती है, परन्तु उसका मन उसके देश मे लगा रहता है। उसी तरह संसार का सब काम करो, परन्तु मन ईश्वर पर रखो और समझो कि घर, परिवार, पुत्र सब ईश्वर के है। मेरा यहॉ कुछ भी नही है। मै केवल उनका दास हूँ।

"मै मन से त्याग करने के लिए कहता हूँ। संसार छोड़ने के लिए मै नही कहता। अनासक्त होकर, संसार मे रहकर, अन्तर से उनकी प्राप्ति की इच्छा रखने पर, उन्हे मनुष्य पा सकता है।

(विजय से) "मै भी ऑखे मूँदकर ध्यान करता था। उसके बाद सोचा, क्या इस तरह करने पर (ऑखे मूँदने पर) ईश्वर रहते है और इस तरह करने पर (ऑखे खोलने पर) ईश्वर नही रहते? ऑखे खोलकर भी मैने देखा, सब भूतो मे ईश्वर विराजमान है। मनुष्य, जीव-जन्तु, पेड-पौधे, सूर्य-चन्द्र, जल-स्थल और अन्य सब भूतो मे वे है।

"मै क्यो शिवनाथ को चाहता हूँ? जो बहुत दिनो तक ईश्वर की चिन्ता करता है, उसके भीतर सार पदार्थ रहता है। उसके भीतर ईश्वर की शक्ति रहती है। जो अच्छा गाता और बजाता है, कोई एक विद्या बहुत अच्छी तरह जानता है, उसके भीतर भी सार पदार्थ है, ईश्वर की शक्ति है। यह गीता का मत है। चण्डी मे है, जो बहुत सुन्दर है, उसके भीतर भी सार पदार्थ है, ईश्वर की शक्ति है। (विजय से) अहा! केदार का कैसा स्वभाव हो गया है, आते ही रोने लगता है। दोनो ऑखे सदा ही फूली हुई-सी दीख पडती है।"

विजय – वहॉ केवल आप ही की बाते होती है और वे आपके पास आने के लिए व्याकुल हो रहे है।

कुछ देर बाद श्रीरामकृष्ण उठे। ब्राह्मभक्तो ने नमस्कार किया। उन्होने भी नमस्कार किया। श्रीरामकृष्ण गाड़ी पर बैठे। अधर के यहॉ श्री दुर्गा के दर्शन करने के लिए जा रहे है।

(३)

महाष्टमी के दिन राम के घर पर श्रीरामकृष्ण

आज रविवार, महाष्टमी है, २८ सितम्बर, १८८४। श्रीरामकृष्ण देवी-प्रतिमा के दर्शन के लिए कलकत्ता आये हुए है। अधर के यहॉ शारदीय दुर्गोत्सव हो रहा है। श्रीरामकृष्ण का तीनो दिन न्योता है। अधर के यहाँ प्रतिमादर्शन करने के पहले आप राम के घर जा रहे है। विजय, केदार, राम, सुरेन्द्र, चुनीलाल, नरेन्द्र, निरंजन, नारायण,

हरीश, बाबूराम, मास्टर आदि बहुत भक्त साथ में हैं; बलराम और राखाल अभी वृन्दावन में हैं।

श्रीरामकृष्ण – (विजय और केदार को देखकर, सहास्य) – आज अच्छा मेल है। दोनों एक ही भाव के भावुक हैं! (विजय से) क्यों जी शिवनाथ की क्या खबर है? क्या तुमने –

विजय – जी हाँ, उन्होंने सुना है। मेरे साथ तो मुलाकात नहीं हुई परन्तु मैंने खबर भेजी थी और उन्होंने सुना भी है।

श्रीरामकृष्ण शिवनाथ के यहाँ गये थे, उनसे मुलाकात करने के लिए, परन्तु मुलाकात नहीं हुई। बाद में विजय ने खबर भेजी थी; परन्तु शिवनाथ को काम से फुरसत नहीं मिली, इसलिए आज भी नहीं मिल सके।

श्रीरामकृष्ण – (विजय आदि से) – मन में चार वासनाएँ उठी हैं।

"बैंगन की रसदार तरकारी खाऊँगा। शिवनाथ से मिलूँगा। हरिनाम की माला लाकर भक्तगण जप करें, मैं देखूँगा और आठ आने का कारण (शराब) अष्टमी के दिन तान्त्रिक साधक पीयेगा, मै देखकर प्रणाम करूँगा।"

नरेन्द्र सामने बैठे हुए थे। उनकी उम्र २२-२३ की होगी। ये बातें कहते कहते श्रीरामकृष्ण की नरेन्द्र पर दृष्टि पड़ी। श्रीरामकृष्ण खड़े होकर समाधिमग्न हो गये। नरेन्द्र के घुटने पर एक पैर बढ़ाकर उसी भाव से खड़े है। बाहर का कुछ भी ज्ञान नहीं है, आँखो की पलक नहीं गिर रही है।

बड़ी देर बाद समाधि भंग हुई अब भी आनन्द का नशा नहीं उतरा है। श्रीरामकृष्ण आप ही आप बातचीत कर रहे हैं। भावस्थ होकर नाम जप रहे हैं। कहते हैं –

"सच्चिदानन्द! सच्चिदानन्द! कहूँ? नहीं, आज तू कारणानन्ददायिनी है – कारणानन्दमयी। सा रे ग म प ध नि। नि में रहना अच्छा नहीं। बड़ी देर तक रहा नहीं जाता। एक स्वर नीचे रहूँगा।

"स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण। महाकारण में जाने पर चुप है। वहाँ बातचीत नहीं हो सकती।

"ईश्वरकोटि महाकारण में पहुँचकर लौट सकते हैं। वे ऊपर चढ़ते हैं, फिर नीचे भी आ सकते हैं। अवतार आदि ईश्वरकोटि हैं। वे ऊपर भी चढ़ते हैं और नीचे भी आ सकते हैं। छत के ऊपर चढ़कर, फिर सीढ़ी से उतरकर नीचे चल-फिर सकते हैं। अनुलोम और विलोम। सात मंजला मकान है, किसी की पहुँच बाहर के फाटक तक ही होती है, और जो राजा का लड़का है, उसका तो वह अपना ही मकान है, वह सातों मंजिल पर घूम-फिर सकता है। एक एक तरह के अनार है। एक खास प्रकार हैं, जिसमें थोडी देर तो एक तरह की फुलझड़ियाँ होती हैं, फिर कुछ देर बन्द रहकर दूसरे तरह के फूल

निकलने लगते है, फिर और किसी तरह के फूल, मानो फुलझड़ियों का छूटना बन्द ही नहीं होता।

"एक तरह के अनार और हैं। आग लगाने से थोड़ी ही देर के बाद वह भुस्स से फूट जाते हैं। उसी तरह बहुत प्रयत्न करके साधारण आदमी अगर ऊपर चला भी जाता है तो फिर वह लौटकर खबर नहीं देता। जीवकोटि के जो हैं, बहुत प्रयत्न करने पर उन्हें समाधि हो सकती है, परन्तु समाधि के बाद न वे नीचे उतर सकते हैं और न उतरकर खबर ही दे सकते हैं।

"एक हैं नित्यसिद्ध की तरह। वे जन्म से ही ईश्वर की चाह रखते हैं, संसार की कोई चीज उन्हें अच्छी नहीं लगती। वेदों में होमापक्षी की कथा है। यह चिड़िया आकाश में बहुत ऊँचे पर रहती है। वहीं वह अण्डे भी देती है। इतनी ऊँचाई पर रहती है कि अण्डा बहुत दिनों तक लगातार गिरता रहता है। गिरते गिरते अण्डा फूट जाता है। तब बच्चा गिरता रहता है। बहुत दिनों तक लगातार गिरता रहता है। गिरते ही गिरते उसकी आँखें भी खुल जाती हैं। जब मिट्टी के समीप पहुँच जाता हैं, तब उसे ज्ञान होता हैं। तब वह समझ लेता है कि देह में मिट्टी के छू जाने से ही जान जायगी। तब वह चीख मारकर अपनी माँ की ओर उड़ने लगता है। मिट्टी से मृत्यु होगी, इसीलिए मिट्टी देखकर भय हुआ है। अब अपनी माँ को चाहता है। माँ उस ऊँचे आकाश में है। उसी ओर बेतहाशा उड़ने लगता है, फिर दूसरी ओर दृष्टि नहीं जाती।

"अवतारों के साथ जो आते हैं, वे नित्यसिद्ध होते हैं, कोई अन्तिम जन्मवाले होते हैं।

(विजय से) "तुम लोगों को दोनो ही है, योग भी है और भोग भी। जनक राजा को योग भी था और भोग भी था। इसीलिए उन्हें लोग राजर्षि कहते हैं। राजा और ऋषि दोनों ही। नारद देवर्षि हैं, और शुकदेव ब्रह्मर्षि।

"शुकदेव ब्रह्मर्षि हैं, शुकदेव ज्ञानी नहीं, पुञ्जीकृत ज्ञान की मूर्ति हैं। ज्ञानी किसे कहते हैं? जिसे प्रयत्न करके ज्ञान हुआ हैं। शुकदेव ज्ञान की मूर्ति है, अर्थात् ज्ञान की जमायी हुई राशि है। यह ऐसे ही हुआ है, साधना करके नहीं।"

बातें कहते हुए श्रीरामकृष्ण की साधारण दशा हो गयी है। अब भक्तों से बातचीत कर सकेंगे।

केदार से उन्होंने संगीत गाने के लिए कहा। केदार गा रहे हैं। उन्होंने कई गाने गाये। एक का भाव नीचे दिया जाता है –

"देह में गौरांग के प्रेम की तरंगें लग रही हैं। उनकी हिलोरों में दुष्टों की दुष्टता बह जाती है। यह ब्रह्माण्ड तलातल को पहुँच जाता है। जी में आता है, डुबकर नीचे बैठा रहूँ परन्तु वहाँ भी गौरांग-प्रेम-रूपी घड़ियाल से जी नहीं बचता, वह निगल जाता है। ऐसा

सहानुभूतिपूर्ण और कौन है, जो हाथ पकड़कर खींच ले जाय?''

गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण फिर भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। श्रीयुत केशव सेन के भतीजे नन्दलाल वहाँ मौजूद थे। वे अपने दो-एक ब्राह्मभक्तों के साथ श्रीरामकृष्ण के पास ही बैठे हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – (विजय आदि भक्तों से) – कारण (शराब) की बोतल एक आदमी ले आया था, मैं छूने गया, पर मुझसे छुई न गयी।

विजय – अहा!

श्रीरामकृष्ण – सहजानन्द के होने पर यों ही नशा हो जाता है। शराब पीनी नहीं पड़ती। माँ का चरणामृत देखकर मुझे नशा हो जाता है, ठीक उतना जितना पाँच बोतल शराब पीने से होता है।

ज्ञानी तथा भक्त की अवस्था

''इस अवस्था में सब समय सब तरह का भोजन नहीं खाया जाता।''

नरेन्द्र – खाने-पीने के लिए जो कुछ मिला, वही बिना विचार के खाना अच्छा है।

श्रीरामकृष्ण – यह बात एक विशेष अवस्था के लिए है। ज्ञानी के लिए किसी में दोष नहीं। गीता के मत से ज्ञानी खुद नहीं खाता, वह कुण्डलिनी को आहुति देता है।*

''यह बात भक्त के लिए नहीं है। मेरी इस समय की अवस्था यह है कि ब्राह्मण का लगाया भोग न हो तो मैं नहीं खा सकता। पहले ऐसी अवस्था थी कि दक्षिणेश्वर के उस-पार से मुर्दों के जलने की जो बू आती थी, उसे मैं नाक से खींच लेता था – वह बड़ी मीठी लगती थी। पर अब सब के हाथ का नहीं खा सकता।

''और सचमुच नहीं खा सकता, यद्यपि कभी कभी खा भी लेता हूँ। केशव सेन के यहाँ मुझे नववृन्दावन नाटक दिखाने ले गये थे। पूड़ियाँ और पकौड़ियाँ ले आये। न मालूम धोबी ले आया था या नाई। (सब हँसते हैं।) मैंने खूब खाया। राखाल ने कहा, जरा और खाओ।

(नरेन्द्र से) ''तुम्हारे लिए इस समय यह चल सकता है। तुम इधर भी और उधर भी हो। इस समय तुम सब खा सकते हो।

(भक्तों से) ''शूकर-मांस खाकर भी अगर किसी का ईश्वर की ओर झुकाव हो, तो वह धन्य है और निरामिष-भोजन करने पर भी अगर किसी का मन कामिनी और कांचन पर लगा रहे, तो उसे धिक्कार है।

''मेरी इच्छा थी कि लोहारों के यहां की दाल खाऊँ बचपन की बात है। लोहार कहते थे, ब्राह्मण क्या खाना पकाना जाने? खैर, मैंने खाया, परन्तु उसमें लोहारी बू मिल रही थी। (सब हँसते हैं।)

"गोविन्द राय के पास मैने अल्ला मन्त्र लिया। कोठी में प्याज डालकर भात पकाया गया। मणि मल्लिक के बगीचे मे मैने तरकारी खायी, परन्तु उससे एक तरह की घृणा हो गयी।

"मै देश (कामारपुकुर) गया, तब रामलाल का बाप* डरा। उसने सोचा कि यह तो इधर-उधर किसी के यहाँ भी खा लेता है। कही ऐसा न हो कि जाति से च्युत कर दिया जाऊँ; इसीलिए मै अधिक दिन वहाँ न रह सका, वहाँ से चला आया।

"वेदो और पुराणो मे शुद्धाचार की बात लिखी है। वेदो और पुराणो मे जिसके लिए कहा है कि यह न करो, इनसे अनाचार होता है, तन्त्रो मे उसी को अच्छा कहा है।

"मेरी कैसी कैसी अवस्थाएँ बीत गयी है। मुख आकाश और पाताल तक फैलाता था और तब मै माँ कहता था, मानो माँ को पकड़े लिये आ रहा हूँ जैसे जाल डालकर जबरदस्ती मछली पकड़कर खीचना। एक गाने मे है –

"अबकी बार, ऐ काली, तुम्हे ही मै खा जाऊँगा। तारा, गण्डयोग मे मेरा जन्म हुआ है। इस योग मे पैदा होने पर बच्चा अपनी माँ को खा जाता है। अबकी बार, माँ, या तो तुम्ही मुझे खा जाओगी या मै ही तुम्हे खाऊँगा, दो मे एक तो होगा ही। मै हाथो मे, पैरो मे, सर्वाग मे कालिख† पोत लूँगा। जब यमराज आकर मुझे बाँधने लगेगे तब वही कालिख उसके मुँह मे लगाऊँगा। मै यह तो कहता हूँ कि तुझे खा जाऊँगा परन्तु माँ, यह समझ ले कि खाकर भी मै तुझे उदरस्थ न करूँगा, हृदय-पद्म मे तुझे बैठा लूँगा और तब अपनी मौज से तेरी पूजा करूँगा। अगर यह कहो कि काली को खा जाओगे तो फिर काल के हाथ से कैसे बचोगे, तो कहना यह है कि मै काली कहकर काल से पिण्ड छुड़ाऊँगा। ... 'मै उसे अच्छी तरह जना दूँगा कि रामप्रसाद काली का बेटा है। उससे या तो मन्त्र की सिद्धि ही होगी या मेरा यह शरीर ही न रह जायगा।'

"पागल की अवस्था हो गयी थी – यह व्याकुलता है!"

नरेन्द्र गा रहे है – "माँ, मुझे पागल कर दे, ज्ञान के विचार से मुझे काम नही।"

गाना सुनते ही श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये।

समाधि के छूटने पर पार्वती की माता का भाव अपने पर आरोपित करके श्रीरामकृष्ण 'आगमनी' (देवी के आगमन के समय का संगीत जो बंगाल मे गाया जाता है) गा रहे है।

गाने के बाद श्रीरामकृष्ण भक्तो से कह रहे है, आज महाष्टमी है न, माँ आयी हुई

* श्रीरामकृष्ण के बडे भाई रामेश्वर।

† बंगला शब्द 'काली' से दो अर्थ निकलते है – स्याही और कालिका देवी। यहाँ उसी श्लेष से मतलब है।

हैं। इसीलिए इतनी उद्दिपना हो रही है।

श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं –

"सखी री! जिसके लिए मैं पागल हो गयी उसे अभी कहाँ पाया?"

श्रीरामकृष्ण गा रहे हैं, एकाएक 'हरि बोल' 'हरि बोल' कहकर विजय खड़े हो गये। श्रीरामकृष्ण भी भावोन्मत्त होकर विजय आदि भक्तों के साथ नृत्य करने लगे।

(४)

किस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिए

कीर्तन हो जाने पर श्रीरामकृष्ण, विजय, नरेन्द्र तथा दूसरे भक्तों ने आसन ग्रहण किया। सब की दृष्टि श्रीरामकृष्ण पर लगी हुई है। सन्ध्या होने में अभी कुछ देर है। श्रीरामकृष्ण भक्तों से बातचीत कर रहे हैं। उनसे कुशल-प्रश्न पूछ रहे हैं। केदार बड़े ही विनीत भाव से हाथ जोड़कर बहुत ही मृदु तथा मधुर शब्दों में श्रीरामकृष्ण से निवेदन कर रहे हैं। पास हैं नरेन्द्र, चुनी, सुरेन्द्र, राम, मास्टर और हरीश।

केदार – (श्रीरामकृष्ण से, विनयपूर्वक) – सिर का चक्कर खाना किस तरह अच्छा होगा?

श्रीरामकृष्ण – (सस्नेह) – ऐसा होता है; मुझे भी हुआ था। थोड़ा थोड़ा बादाम का तेल सिर में लगाकर मालिश कर लिया कीजिये। सुना है, इस तरह यह बीमारी अच्छी हो जाती है।

केदार – जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण – (चुनी से) – क्यों जी, तुम सब कैसे हो?

चुनी – जी, इस समय तो सब कुशल है। वृन्दाबन मे बलराम बाबू और राखाल अच्छी तरह हैं।

श्रीरामकृष्ण – तुमने इतनी मिठाई क्यों भेज दी?

चुनी – जी, वृन्दावन से आ रहा हूँ।

चुनीलाल बलराम के साथ वृन्दावन गये हुए थे और कई महीने तक वहीं ठहरे थे। छुट्टी पूरी हो रही है, इसलिए अब कलकत्ता लौट आये हैं।

श्रीरामकृष्ण – (हरीश से) – तू दो-एक दिन बाद जाना। अभी बीमारी की हालत है, जाने पर वहाँ फिर बीमार पड़ जायगा।

(नारायण से, सस्नेह) "बैठ, आ मेरे पास आकर बैठ। कल जाना और वहीं खाना भी। (मास्टर की ओर इशारा करके) इनके साथ जाना। (मास्टर से) क्यों जी?"

मास्टर की इच्छा थी, वे उसी दिन श्रीरामकृष्ण के साथ दक्षिणेश्वर जायँ, अतएव वे सोचने लगे। सुरेन्द्र बड़ी देर तक थे। बीच में एक बार घर गये थे। घर से लौटकर

श्रीरामकृष्ण के पास खड़े हुए।

सुरेन्द्र कारण (शराब) पीते हैं। पहले नम्बर बहुत बढ़ा-चढ़ा था। सुरेन्द्र की हालत देखकर श्रीरामकृष्ण को चिन्ता हो गयी थी। बिलकुल ही पीना छोड़ देने के लिए नहीं कहा, उन्होंने कहा, "सुरेन्द्र, देखो, जो पीना, श्रीदेवी को निवेदित करके पीना और उतना ही जिससे न पैर लड़खड़ायें और न सिर घूमे। उनकी चिन्ता करते करते फिर तुम्हें पीना बिलकुल ही अच्छा न लगेगा। वे स्वयं कारणानन्ददायिनी हैं। उन्हें पा लेने पर सहजानन्द होता है।"

सुरेन्द्र पास खड़े है। श्रीरामकृष्ण ने उनकी ओर दृष्टि करके कहा, तुमने कारण पान किया है। यह कहकर ही भाव में तन्मय हो गये।

शाम हो गयी। कुछ बहिर्मुख होकर श्रीरामकृष्ण माता का नाम लेकर आनन्दपूर्वक गाने लगे। बीच बीच में तालियाँ बजा रहे हैं। स्वर करके कह रहे हें – "हरि बोल, हरि बोल, हरिमय हरि बोल, हरि हरि हरि बोल।"

फिर कहने लगे – "राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम, राम।"

श्रीरामकृष्ण अब प्रार्थना कर रहे है – "ऐ राम! हे राम! मै भजन हीन हूँ, साधन हीन हूँ, ज्ञान हीन हूँ, भक्ति हीन हूँ, क्रिया हीन हूँ, राम! शरणागत हूँ। मैं देह-सुख नहीं चाहता। अष्ट-सिद्धि तो क्या, शत सिद्धियॉ भी नही चाहता। मैं शरणागत हूँ, शरणागत। बस वही करो, जिससे तुम्हारे पादपद्मों में शुद्धा भक्ति हो, और तुम्हारी भुवनमोहिनी माया से मैं मुग्ध न होऊँ। राम! मैं शरणागत हूँ।"

श्रीरामकृष्ण प्रार्थना कर रहे हैं और सब लोग टकटकी लगाये देख रहे हैं। उनका करुणामय स्वर सुनकर भक्त आँसू रोक नही सकते। श्रीयुत राम पास आकर खड़े हुए हैं।

श्रीरामकृष्ण – (राम के प्रति) – राम, तुम कहाँ थे?

राम – जी ऊपर था।

श्रीरामकृष्ण तथा भक्तों की सेवा के लिए राम ऊपर प्रबन्ध करने के लिए गये थे।

श्रीरामकृष्ण – (राम से, सहास्य) – ऊपर रहने की अपेक्षा क्या नीचे रहना अच्छा नहीं? नीची जमीन में ही पानी ठहरता है। ऊँची जमीन से पानी बह जाता है।

राम – (हँसते हुए) – जी हाँ।

छत पर पत्तलें पड़ चुकी हैं। श्रीरामकृष्ण और भक्तों को लेकर राम ऊपर गये और उन्हें आनन्द से भोजन कराया। उत्सव हो जाने पर, श्रीरामकृष्ण निरंजन, मास्टर आदि भक्तों को साथ लेकर अधर के यहाँ गये। वहॉ माँ आयी हुई हैं। आज महाष्टमी है। अधर की विशेष प्रार्थना है, श्रीरामकृष्ण उपस्थित रहें, जिससे उनकी पूजा सार्थक हो जाये।

परिच्छेद १४

मातृभाव से साधना

(१)

ईश्वर-कोटि का विश्वास स्वयंसिद्ध

आज नवमी पूजा है, २९ सितम्बर, १८८४। अभी सबेरा हुआ ही है। काली की मंगलारती हो गयी है। नौबतखाने से रोशनचौकी में प्रभाती मधुर रागिनी बज रही है। ब्राह्मण देव हाथ में फूलदानी लेकर पूजार्थ फूल तोड़ने आ रहे हैं। उधर माली भी देवमन्दिरों में फूल चढ़ाने के उद्देश्य से पुष्पचयन करने निकले हैं। माता की पूजा होगी। श्रीरामकृष्ण उषा की ललाई छा जाने से पहले ही उठे हैं। भवनाथ, निरंजन और मास्टर गत रात्रि से ही यहाँ पर हैं। वे श्रीरामकृष्ण के कमरेवाले बरामदे में रात भर सोये थे। आँख खोलकर देखा, श्रीरामकृष्ण मतवाले होकर नृत्य कर रहे हैं और 'जय दुर्गा, जय दुर्गा' कह रहे हैं।

जैसे एक बालक, जिसके कमर में धोती भी नहीं रहती, माता का नाम लेते हुए कमरे भर में नाच रहे हैं।

कुछ देर बाद फिर कह रहे है – 'सहजानन्द – सहजानन्द।' इसके अनन्तर बार बार गोविन्द का नाम लेने लगे। कह रहे हैं – 'प्राण हे गोविन्द! मेरे जीवन हो।'

भक्तगण उठकर बैठ गये। एकदृष्टि से श्रीरामकृष्ण का भाव देख रहे हैं। हाजरा भी कालीमन्दिर में हैं। श्रीरामकृष्ण के कमरे के दक्षिण पूर्ववाले बरामदे में उनका आसन है। लाटू भी हैं और श्रीरामकृष्ण की सेवा किया करते हैं। राखाल इस समय वृन्दावन में हैं। नरेन्द्र कभी कभी दर्शन करने के लिए आते हैं। आज आयेंगे।

श्रीरामकृष्ण के कमरे के उत्तर-पूर्ववाले छोटे बरामदे में भक्तगण सोये हुए हैं। जाड़े का समय है, इसलिए टट्टी बँधी है। सब के हाथमुँह धो चुकने के बाद, इस उत्तरवाले बरामदे में श्रीरामकृष्ण एक चटाई पर आकर बैठे। दूसरे भक्त भी यहाँ कभी कभी आकर बैठते हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भवनाथ से) – बात यह है कि जो जीवकोटि के हैं उन्हें सहज ही विश्वास नहीं होता। ईश्वर-कोटि के जो हैं उनका विश्वास स्वत: सिद्ध है। प्रह्लाद 'क' लिखते

हुए ही फूट-फूटकर रोने लगे थे। उन्हें कृष्ण की याद आ गयी थी। जीव का स्वभाव है कि उसकी बुद्धि संशयात्मक होती है। वे कहते हैं 'हाँ यह सच तो है, परन्तु –'

'हाजरा किसी तरह भी विश्वास नहीं करना चाहता कि ब्रह्म और शक्ति, शक्ति और शक्तिमान दोनों अभेद हैं। जब वे निष्क्रिय हैं, तब उन्हें हम ब्रह्म कहते हैं और जब सृष्टि, स्थिति और प्रलय करते हैं, तब उन्हीं को शक्ति कहते हैं। हैं वे एक ही वस्तु – अभेद। अग्नि कहने के साथ ही दाहिका शक्ति का बोध हो जाता है और दाहिका शक्ति के कहने पर आग की याद आती है। एक को छोड़कर दूसरे को सोचने की गुंजाइश नहीं है।

"तब मैने प्रार्थना की, 'माँ, हाजरा यहाँ का मत उलट देना चाहता है। या तो तू उसे समझा दे या उसे यहाँ से हटा दो।' उसके दूसरे दिन उसने आकर कहा, हाँ मानता हूँ। तब उसने कहा, विभु सब जगह हैं।"

भवनाथ – (हँसकर) – हाजरा की इसी बात पर आपको इतना दुःख हुआ था?

श्रीरामकृष्ण – मेरी अवस्था बदल गयी है। अब आदमियों के साथ वादविवाद नहीं कर सकता। इस समय मेरी ऐसी अवस्था नही है कि हाजरा के साथ तर्क और झगड़ा कर सकूँ। यदु मल्लिक के बगीचे में हृदय ने कहा, 'मामा, क्या मुझे रखने की तुम्हारी इच्छा नही है?' मैने कहा, 'नही, अब मेरी वैसी अवस्था नही है कि तेरे साथ गला फाड़ता रहूँ।'

"ज्ञान और अज्ञान किसे कहते है? जब तक यह बोध है कि ईश्वर दूर हैं तब तक अज्ञान है और जब यह बोध है कि ईश्वर यहीं तथा सर्वत्र है, तभी ज्ञान है।

"जब यथार्थ ज्ञान होता है, तब सब चीजे चेतन जान पड़ती है। मैं शिबू के साथ खूब मिलता-जुलता था। तब शिबू निरा बच्चा था। चार-पाँच साल का रहा होगा। उस समय मैं देश में था, बादल घिरे हुए थे और मेघों की गर्जना हो रही थी। शिबू मुझसे कहता था, चाचा, देखो, चकमक पत्थर घिस रहा है। (सब हँसते है।) एक दिन देखा, वह अकेला पतिगे पकड़ने जा रहा था। इधर-उधर के पौधे हिल रहे थे। तब वह पत्तियो से कह रहा था, चुप-चुप, मै पतिंगे पकडूंगा। बालक सब चेतन देख रहा है! सरल विश्वास, बालक की तरह का विश्वास जब तक नही होता, तब तक ईश्वर नहीं मिलते। उफ! मेरी कैसी अवस्था थी! एक दिन घास के वन में किसी कीड़े ने काट लिया। मुझे इससे बड़ा भय हुआ। सोचा कही साँप ने न काटा हो। तब क्या करता? मैने सुना था, अगर वह फिर काटे तो विष उठा लेता है। बस वहीं बैठा हुआ मैं बिल खोजने लगा कि वह फिर काटे। इसी तरह बैठा था कि एक ने पूछा, यह आप क्या कर रहे है? मैने कहा, बिल खोज रहा हूँ। उसने सब कुछ सुनकर कहा, ठीक वहीं पर उसे दुबारा काटना चाहिए, तब कही विष उतरता है। तब मैं उठकर चला आया। शायद गोजर या किसी कीड़े ने काटा था।

"एक दूसरे दिन मैंने रामलाल से सुना, शरद् काल की ओस देह में लगाना अच्छा होना है। क्या एक श्लोक है, रामलाल ने कहा था। कलकत्ते से जाते समय गाड़ी की

खिड़की से मै गला बढाये हुए गया, ताकि खूब ओस लगे। बस दूसरे ही दिन बीमार पड गया।" (सब हँसते है।)

अब श्रीरामकृष्ण कमरे के भीतर जाकर बैठे। उनके पैर कुछ फुले हुए थे। उन्होने भक्तो को हाथ लगाकर देखने के लिए कहा कि दोनो उँगली से दबाने पर गड्ढा पडता है या नही। थोडा-थोडा गड्ढा पडने लगा। परन्तु लोगो ने कहा, यह कुछ नही है।

श्रीरामकृष्ण – (भवनाथ से) – सीती के महेन्द्र को बुला देना। उसके कहने से मेरा मन अच्छा हो जायगा।

भवनाथ – (सहास्य) – आप दवा पर बडा विश्वास करते है, हम लोग उतना नही करते।

श्रीरामकृष्ण – दवाएँ भी उन्ही की है। एक रूप मे वे ही चिकित्सक है। गंगाप्रसाद ने बतलाया, आप रात को पानी न पिया कीजिये। मै उसकी बात को वेदवाक्य की तरह पकडे हुए हूँ। मै मानता हूँ, वह साक्षात् धन्वन्तरि है।

(२)

समाधि में श्रीरामकृष्ण

हाजरा आकर बैठे। दो-एक बात इधर उधर की करके श्रीरामकृष्ण ने कहा – "देखो, कल राम के यहाँ उतने आदमी बैठे हुए थे विजय, केदार, आदि फिर भी नरेन्द्र को देखकर मुझे इतना उद्दीपन क्यो हुआ? केदार, मैने देखा, कारणानन्द के घर का है।"

श्रीरामकृष्ण महाष्टमी के दिन कलकत्ता गये हुए थे – देवी-प्रतिमा के दर्शनो के लिए। अधर के यहाँ प्रतिमा-दर्शन करने के लिए जाने से पहले राम के यहाँ गये थे। वहाँ बहुत से भक्त आये थे। नरेन्द्र को देखकर श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये थे। नरेन्द्र के घुटने पर उन्होने अपना पैर रख दिया था और खडे हुए समाधि-मग्न हो गये थे।

देखते ही देखते नरेन्द्र भी आ गये। उन्हे देखकर श्रीरामकृष्ण के आनन्द की सीमा नही रही। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करने के पश्चात् भवनाथ आदि के साथ उसी कमरे मे नरेन्द्र बातचीत करने लगे। पास मास्टर है। कमरे मे लम्बी चटाई बिछी हुई है। नरेन्द्र बातचीत करते हुए पेट के बल चटाई पर लेट गये। उन्हे देखते ही देखते श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गये। वे नरेन्द्र की पीठ पर जा बैठे, वही समाधि मे डूब गये।

भवनाथ गा रहे है – (भाव) –

"माँ, आनन्दमयी होकर मुझे निरानन्द न करना। तेरे कमलचरणो को छोड मेरा मन और कुछ नही चाहता। यह मुझे दोषदुष्ट बतलाता है, परन्तु मेरी समझ मे नही आता कि मेरा दोष क्या है। तू मुझे बतला दे। माँ, मेरी तो यह इच्छा थी कि भवानी का नाम लेकर मै भव-सागर से पार हो जाऊँ। मै स्वप्न मे भी नही जानता था कि अछोर समुद्र मे मुझे

इस तरह डूबना होगा। दिन-रात मैं दुर्गानाम की रट लगाये रहता हूँ, फिर भी मेरी दुःख-राशि दूर नहीं होती है। हर-सुन्दरी, अबकी बार अगर मैं मरा, तो तेरा दुर्गा नाम और कोई न लेगा।"

श्रीरामकृष्ण की समाधि छूटी। उन्होंने दो गाने गाये। एक का भाव यह है –

"श्रीदुर्गा नाम का जप करो, ऐ मेरे मन! ... माँ! दुखी दास पर दया करो, तो तुम्हारा गुण भी मेरी समझ मे आये। माँ, तुम सन्ध्या हो, तुम दीपक हो, तुम्हीं यामिनी हो। कभी तो तुम पुरुष होती हो और कभी स्त्री। माँ, रामरूप में तो तुम धनुर्धारण करती हो और कृष्ण रूप में तुम वंशी हाथ में लेती हो। मॉ, मुक्त-कुन्तला होकर तुमने शिव को मुग्ध कर लिया था। तुम्ही दस महाविद्याएँ हो और तुम्ही दस अवतार। अबकी बार किसी तरह, मॉ, मुझे पार करो। माँ, जवापुष्पों और बिल्वदलों से यशोदा ने तुम्हारी पूजा की थी। तुमने कृष्ण को उनकी गोद में डालकर उनकी मनोकामना पूरी की। माँ, जहाँ-तहाँ पड़ा रहा करता हूँ; कभी तो जंगल में ही पड़ा रहता हूँ, परन्तु मेरा मन तेरे श्रीचरणों में ही लगा रहता है। मॉ, मै जहॉ-तहॉ दुर्भाग्य के फेर में पड़ा अपने भाग्य पर रोया करता हूँ। खैर, मुझे इसका भी दु:ख नही, प्रार्थना है कि अन्त समय मे जिह्वा तेरे नाम का उच्चारण करे। अगर तू मुझे किसी दूसरी जगह चले जाने के लिए कहे, तो माँ, इतना तो बतला, मैं किसके पास जाऊँ? मॉ, दूसरी जगह यह सुधा-मधुर तेरा नाम मुझे कहॉ मिल सकता है? तू चाहे कितना ही 'छोड़ छोड़' क्यों न करे, परन्तु मैं तुझे न छोडूँगा। मैं नुपुर बनकर तेरे श्रीचरणों में बजता रहूँगा। मॉ, जब तू शिव के निकट बैठेगी तब तेरे चरणों में मैं 'जय शिव जय शिव' कहकर बजता रहूँगा।"

(३)

समाधि और नृत्य

हाजरा उत्तर-पूर्ववाले बरामदे मे हरिनाम की माला हाथ में लिए हुए जप कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण सामने आकर बैठे और हाजरा की माला लेकर जप करने लगे। साथ मे मास्टर और भवनाथ हैं। दिन के दस बजे का समय होगा।

श्रीरामकृष्ण – (हाजरा से) – देखो, मुझसे जप नही होता – नही, नहीं, होता है! बायें हाथ से होता है, परन्तु उधर (नाम-जप) फिर नहीं होता।

इतना कहकर श्रीरामकृष्ण नाम-जप की चेष्टा करने लगे, परन्तु जप का आरम्भ करते ही समाधि लग गयी।

श्रीरामकृष्ण इसी समाधि-अवस्था में बड़ी देर से बैठे हुए हैं। हाथ में माला अब भी लिऐ हुए है। भक्तगण निर्वाक् होकर देख रहे है। हाजरा अपने आसन पर बैठे हुए हैं। वे भी चुपचाप श्रीरामकृष्ण की समाधि-अवस्था देख रहे हैं। बड़ी देर बाद श्रीरामकृष्ण को

होश हुआ। वे कह उठे, मुझे भूख लगी है। साधारण अवस्था को लाने के लिए श्रीरामकृष्ण प्राय: इस तरह कहा करते हैं।

मास्टर खाना लाने के लिए जा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण बोल उठे, "नहीं भाई, पहले काली-मन्दिर जाऊँगा।"

पक्के आँगन से होकर श्रीरामकृष्ण काली-मन्दिर जा रहे हैं। जाते हुए द्वादश शिवालयों के शिवजी को प्रणाम कर रहे हैं। बाई ओर राधाकान्तजी का मन्दिर है। राधाकान्तजी को देखकर श्रीरामकृष्ण ने प्रणाम किया। कालीमन्दिर में पहुँचकर माता को प्रणाम किया और आसन पर बैठकर माता के पादपद्मों में उन्होंने फूल चढ़ाये। फिर अपने सिर पर फूल रखा। लौटते हुए भवनाथ से बोले, यह सब ले चल – माता का प्रसाद, नारियल और चरणामृत। श्रीरामकृष्ण कमरे में लौट आये। साथ में भवनाथ हैं और मास्टर।

हाजरा के सामने पहुँचते ही उन्होंने प्रणाम किया। 'यह आप क्या कर रहे हैं – यह क्या कर रहे है' कहकर हाजरा चिल्ला उठे।

श्रीरामकृष्ण – तुम कह सकते हो कि यह अन्याय है?

हाजरा तर्क करके प्राय: यह बात कहते थे कि ईश्वर सब के भीतर है, साधना करके सब लोग ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

दिन बहुत चढ़ गया है। भोग की आरती का घण्टा बज चुका है। ब्राह्मण, वैष्णव और कंगाल सब अतिथिशाला की ओर जा रहे हैं। सब लोग माता का प्रसाद पायेगे। अतिथिशाला में काली-मन्दिर के कर्मचारी जहाँ बैठकर प्रसाद पाते हैं, वही भक्तो के लिए भी प्रसाद पाने का बन्दोबस्त हो रहा है। श्रीरामकृष्ण ने कहा – "सब लोग वहीं जाकर प्रसाद पाओ – क्यो? (नरेन्द्र से) नही, तू यहाँ भोजन कर।

"अच्छा, नरेन्द्र तथा मेरे लिए यही प्रसाद की व्यवस्था हो।"

प्रसाद पाने के बाद श्रीरामकृष्ण ने थोड़ी देर विश्राम किया। भक्त-मण्डली बरामदे में बातचीत करने लगी। श्रीरामकृष्ण भी वही आकर बैठे। दो बजे का समय होगा। एकाएक भवनाथ दक्षिण-पूर्ववाले बरामदे से ब्रह्मचारी के वेश में आकर उपस्थित हुए। भगवा धारण किये, हाथ में कमण्डलु लिए हुए हँस रहे हैं। श्रीरामकृष्ण और भक्त सब हँस रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – उसके मन का भाव भी यही है, इसीलिए तो यह भेष धारण किया।

नरेन्द्र – वह ब्रह्मचारी बना तो मै अब वामाचारी बनूँ। (सब हँसते हैं।)

हाजरा – उसमें पञ्चमकार, चक्र, यह सब करना पड़ता है।

श्रीरामकृष्ण वामाचार की बात से चुप हो रहे हैं। इस बात पर उन्होंने कोई मत प्रकट

नही किया। बस हँसकर बात उड़ा दी। एकाएक मतवाले होकर नृत्य करने लगे। गा रहे है – "माँ, अब मै किसी दूसरे लालच मे नही पड सकता, तुम्हारे अरुण चरणो को मैने देख लिया।"

श्रीरामकृष्ण ने कहा – "अहा! राजनारायण चण्डी-गीत बहुत ही सुन्दर गाता है। वे लोग नाचते हुए गाते है, और उस देश* के नकुड आचार्य का गाना! अहा! कितना सुन्दर होता है और नृत्य भी वैसा ही मधुर!"

पञ्चवटी मे एक साधु आये हुए है। बड़े क्रोधी स्वभाव के है। जिस तिसको गालियाँ दिया करते है – शाप देते है। खडाऊ पहने हुए वे आकर हाजिर हो गये।

साधु ने पूछा, 'क्या यहाँ आग मिल जायगी?' श्रीरामकृष्ण हाथ जोडकर साधु को नमस्कार कर रहे है। जब तक वे साधु वहाँ पर रहे, तब तक हाथ जोडे हुए खडे रहे।

साधु के चले जाने पर भवनाथ हँसते हुए कहने लगे, साधु पर आपकी कितनी भक्ति है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – अरे, तम प्रधान नारायण है। जिनका यही स्वभाव है, उन्हे ऐसे ही प्रसन्न करना चाहिए। ये साधु जो है।

गोलोकधाम (एक तरह का खेल) खेला जा रहा है। भक्त भी खेलते है और हाजरा भी खेलते है, श्रीरामकृष्ण आकर खडे हो गये। मास्टर और किशोरी की गोटियाँ पक गयी। श्रीरामकृष्ण ने दोनो को नमस्कार किया। कहा – "तुम दोनो भाई धन्य हो! (मास्टर से एकान्त मे) अब न खेलना।"

श्रीरामकृष्ण खेल रहे है। हाजरा की गोटी एक बार नरक मे पडी थी। श्रीरामकृष्ण ने कहा – "हाजरा को क्या हो गया! फिर!" अर्थात् हाजरा की गोटी दुबारा नरक मे पडी। इस पर सब लोग जोर से हँसने लगे।

संसारवाले कोठे मे लाटू की गोटी थी। एक बार ही सातो कौडियाँ चित्त पडी, इससे एक ही चाल मे गोटी लाल हो गयी। लाटू मारे आनन्द के नाचने लगे। श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "लाटू को कितना आनन्द है, जरा देखो। उसकी गोटी अगर लाल न होती तो उसको दु:ख होता। (भक्तो से अलग) इसका एक अर्थ है। हाजरा को बड़ा अहंकार है कि इसमे भी मेरी जीत होगी। ईश्वर की इच्छा ऐसी भी होती है कि सच्चे आदमी की हार कही नही होती। कही भी उसका अपमान नही होने देते।"

(४)

मातृभाव से साधना

कमरे मे छोटे तख्त पर श्रीरामकृष्ण बैठे हुए है। नरेन्द्र, भवनाथ, बाबूराम, मास्टर

* उनके जन्मस्थान से मतलब है – कामारपुकुर के आसपास।

जमीन पर बैठे हुए हैं। घोषपाड़ा और पंचनामी मतों की बात नरेन्द्र ने चलायी। श्रीरामकृष्ण उनका वर्णन कर रहे हैं :-

"ये लोग ठीक ठीक साधना नहीं कर सकते। धर्म का नाम लेकर इन्द्रियों को चरितार्थ किया करते हैं।

(नरेन्द्र से) "तुझे अब इन मतों के सम्बन्ध में कुछ सुनने की आवश्यकता नहीं है।

"ये जो भैरव-भैरवियाँ हैं, ये सब ऐसे ही हैं। जब मैं काशी गया था, तब एक दिन मुझे भैरवी-चक्र ले गये थे। उनमें एक एक भैरव था और एक एक भैरवी। मुझे कारण-पान करने के लिए कहा। मैंने कहा, माँ, मैं तो कारण छू भी नहीं सकता। तब वे लोग खुद पीने लगे। मैंने सोचा अब शायद ये लोग जपध्यान करेंगे; परन्तु वह तो रहा अलग, वे लोग नाचने लगे। मुझे भय होने लगा कि कहीं गंगाजी में न गिर जायँ। चक्र गंगा के तट पर ही था।

"पति और पत्नी अगर भैरव-भैरवी हो जायँ तो उनका बड़ा सम्मान होता है।

(नरेन्द्र आदि भक्तों से) "मेरा मातृभाव है, सन्तान-भाव। मातृभाव बड़ा शुद्ध भाव है। इसमें कोई विपत्ति नहीं है। भगिनी भाव भी बुरा नहीं स्त्रीभाव या वीरभाव बड़ा कठिन है। तारक का बाप इसी भाव की साधना करता था। बड़ा कठिन है, भाव ठीक नहीं रहता।

"ईश्वर के पास पहुँचने के अनेक मार्ग हैं। सभी मत एक एक मार्ग हैं जैसे काली-मन्दिर जाने की बहुतसी राहें हैं। इनमें भेद इतना ही है कि कोई राह शुद्ध है और कोई राह अशुद्ध; शुद्ध रास्ते से होकर जाना ही अच्छा है।

"मैंने बहुत से मत देखे, बहुत से पथ देखे। यह सब अब और अच्छा नहीं लगता। सब एक दूसरे से विवाद किया करते हैं। यहाँ और कोई नहीं है, तुम सब अपने आदमी हो, तुम लोगों से कह रहा हूँ, अब मैंने यही समझा कि वे पू‍र्ण है और मैं उनका अंश हूँ, वे प्रभु हैं और मैं उनका दास हूँ। कभी यह भी सोचता हूँ कि 'वही' 'मैं' है और 'मैं' ही 'वह' हूँ।"

(भक्तमण्डली स्तब्ध हो सुन रही है।)

भवनाथ – (विनयपूर्वक) – लोगों से मतान्तर होने पर मन न जाने कैसा करने लगता है। इससे यह याद आता है कि सब को मैं प्यार न कर सका।

श्रीरामकृष्ण – पहले एक बार बातचीत करने की, उनसे प्रीतिपूर्वक बर्ताव करने की चेष्टा करना। चेष्टा करने पर भी अगर न हो, तो फिर इसकी चिन्ता न करनी चाहिए। उनकी शरण में जाओ – उनकी चिन्ता करो। उन्हें छोड़कर दूसरे आदमियों के लिए मन में दु:ख लाने की क्या जरूरत है?

भवनाथ – ईसा मसीह और चैतन्य, इन लोगों का कहना है कि सब को प्यार करना चाहिए।

श्रीरामकृष्ण – प्यार तो करना ही चाहिए, क्योंकि सब में परमात्मा का ही वास है, परन्तु जहाँ दुष्टात्मा हों वहाँ दूर से नमस्कार करना ही ठीक है। और चैतन्यदेव? उनके लिए भी एक गाने में है – 'विजातीय लोगों को देखकर प्रभु भाव संवरण करते है।' श्रीवास के यहाँ से उनकी सास को बाल पकड़कर निकाल दिया था।

भवनाथ – परन्तु किसी दूसरे ने निकाला था।

श्रीरामकृष्ण – बिना उनकी सम्मति के क्या वह कभी ऐसा कर सकता था?

"किया क्या जाय! अगर दूसरे का मन न मिला, तो क्या रातदिन बैठे हुए इसीकी चिन्ता की जाय? जो मन उन्हें देना चाहिए, उसे इधर-उधर लगाये रखकर उसका व्यर्थ खर्च किया करूँ? मैं कहता हूँ, 'माँ, मैं नरेन्द्र, भवनाथ, राखाल, किसी को नहीं चाहता, मैं तुम्हें चाहता हूँ। आदमी को लेकर मैं क्या करूँ?

"उन्हें पा लेने पर सब को पा जाऊँगा। रुपया मिट्टी है और मिट्टी ही रुपया, सोना मिट्टी है और मिट्टी ही सोना, यह कहकर मैंने त्याग किया था – गंगाजी में फेंक दिया था। पीछे से डरा कि लक्ष्मीजी को कहीं क्रोध न आ जाय। लक्ष्मी के ऐश्वर्य की मैंने अवज्ञा की, यदि वे मेरी खुराक बन्द कर दें तो? तब कहा, माँ, बस तुम्हें चाहता हूँ और कुछ नहीं। उन्हें पाया तो सब कुछ पा गया।"

भवनाथ – (हँसते हुए) – यह तो चालबाजी है।

श्रीरामकृष्ण – हाँ, उतनी चालबाजी है।

"श्रीठाकुरजी ने किसी को दर्शन देकर कहा, तुम्हारी तपस्या देखकर मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। तुम अब कोई वरदान माँगो। साधक ने कहा, 'भगवन्, अगर वरदान दीजियेगा तो यह वर दीजिये – मैं सोने की थाली में अपने पोते के साथ भोजन करूँ।' इस तरह एक वर मे बहुत से वर मिल गये। धन हुआ, लडका हुआ और पोता हुआ।"(सब हँसे।)

(५)

श्रीरामकृष्ण की मातृभक्ति। संकीर्तनानन्द

भक्तगण कमरे में बैठे हैं। हाजरा बरामदे में ही बैठे हैं।

श्रीरामकृष्ण – जानते हो, हाजरा क्या चाहता है? कुछ रुपया चाहता है, घर में ऋण है, इसीलिए जप और ध्यान करता है, कहता है, ईश्वर रुपये देंगे।

एक भक्त – क्या वे मनोरथ की पूर्ति नहीं कर सकते?

श्रीरामकृष्ण – यह उनकी इच्छा है। परन्तु प्रेमोन्माद के बिना हुए वे सम्पूर्ण भार नहीं लेते। छोटे बच्चे को, देखो न, हाथ पकड़कर भोजन करने के लिए बैठा देते हैं। बूढ़ों को कौन देता है? उनकी चिन्ता करके जब आदमी खुद अपना भार नहीं ले सकता, तब ईश्वर उसका भार लेते हैं। हाजरा खुद घर की खबर नहीं लेता। हाजरा के लड़के ने

रामलाल से कहा है, 'बाबा से आने के लिए कहना। हम लोग उनसे कुछ माँगेंगे नहीं।' उसकी बातें सुनकर मेरी आँखों में आँसू भर आये।

"हाजरा की माँ ने रामलाल से कहा है, 'प्रताप (हाजरा) से एक बार आने के लिए कहना। और अपने चाचा (श्रीरामकृष्ण) से मेरा नाम लेकर कहना जिससे वे उसे आने के लिए कहें।' मैंने हाजरा से कहा; उसने कुछ ध्यान ही नहीं दिया।

"माँ का स्थान कितना ऊँचा है! चैतन्यदेव ने कितना समझाया था, तब माँ के पास से आ सके थे। शची ने कहा था, 'मै केशव भारती को काट डालूँगी।' चैतन्यदेव ने बहुत तरह से समझाया। कहा, 'माँ, तुम्हारी आज्ञा जब तक न होगी, तब तक मैं न जाऊँगा; परन्तु अगर मुझे संसार में रखोगी, तो मेरा शरीर न रह जायगा। और माँ जब तुम मेरी याद करोगी, तभी मैं तुमसे मिलूँगा। मैं पास ही रहा करूँगा। कभी कभी तुमसे मिल जाया करूँगा।' तब शची ने आज्ञा दी।

"माँ जब तक थी, तब तक नारद तपस्या के लिए नही निकल सके। माता की सेवा करते थे न? माता की देह छूट जाने पर वे साधना के लिए निकले थे।

"वृन्दावन जाकर फिर वहाँ से मेरी लौटने की इच्छा ही नही हुई। गंगा माँ के पास रहने का विचार हुआ। सब ठीक हो गया कि इस ओर मेरा बिस्तरा लगाया जायगा, उस ओर गंगा माँ का। अब कलकत्ता न जाऊँगा। केवट का अन्न और कितने दिन खाऊँ? तब हृदय ने कहा, नही, तुम कलकत्ता चलो। एक ओर वह खींचता था, एक ओर गंगा माँ। मेरी तो रहने की इच्छा अधिक थी; इसी समय माँ की याद आ गयी। बस सब ठाट बदल गया। माँ बुड्ढी हो गयी थी। सोचा, माँ की चिन्ता करने लगूँगा तो ईश्वर-फीश्वर का भाव सब उड़ जायगा। अतएव माँ के पास ही चलकर रहना चाहिए। वही जाकर ईश्वरचिन्ता करूँगा, निश्चिन्त होकर।

(नरेन्द्र से) "तुम जरा उससे कहो न। मुझसे उस दिन कहा था कि देश जायेगा, जाकर तीन दिन रहेगा। परन्तु फिर ज्यो का त्यों हो गया।

(भक्तों से) "आज घोषपाड़ा-फोसपाड़ा की कैसी सब वाहियात बातें हुई। गोविन्द! गोविन्द! गोविन्द! अब जरा ईश्वर का नाम लो। उड़द की दाल के बाद पायस-लड्डू हो जाय।"

नरेन्द्र गा रहे हैं।

"निरंजन पुरातन पुरुष एक हैं, अरे तू उन पर अपने चित्त को लगा दे। वे आदि-सत्य हैं, वे कारण (माया) के भी कारण हैं। प्राणरूप से वे चराचर में व्याप्त हैं। वे स्वतः प्रकाशित और ज्योतिर्मय हैं। सब के आश्रय हैं। जिसका उन पर विश्वास होता है, वह उनके दर्शन करता है। वे अतीन्द्रिय भूमि में रहते हैं, नित्य और चैतन्यस्वरूप हैं।" इत्यादि।

नरेन्द्र एक गाना और गा रहे हैं। श्रीरामकृष्ण उठकर नाचने लगे। उन्हें घेरकर

भक्तगण भी नाच रहे हैं। सब लोग एक साथ कीर्तन गाते हुए नाच रहे हैं। श्रीरामकृष्ण ने भी एक गाना गाया।

मास्टर ने भी गाया था। श्रीरामकृष्ण को इसकी बड़ी खुशी है। गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण हँसते हुए मास्टर से कह रहे है, "अच्छा खोल बजानेवाला होता तो गाना और जमता। ताक्ताक् ता धिना, दाक्, दाक् दा धिना, ये सब बोल बजते!" कीर्तन होते होते शाम हो गयी।

□□□

परिच्छेद ९५

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द

(१)

अधर के मकान पर

आज आश्विन शुक्ला एकादशी है। बुधवार, १ अक्टूबर, १८८४। श्रीरामकृष्ण दक्षिणेश्वर से अधर के यहाँ आ रहे है। साथ में नारायण और गंगाधर हैं। रास्ते में एकाएक श्रीरामकृष्ण को भावावेश हो गया। श्रीरामकृष्ण भावावेश में कह रहे हैं – "मै माला जपूँगा? छि:! ये शिव पाताल फोड़कर निकले हुए शिव है, स्वयम्भू लिग।"

वे अधर के यहाँ पहुँचे। वहाँ बहुत से भक्त एकत्रित हुए हैं। केदार, विजय, बाबूराम आदि सब आये हैं। कीर्तनिया वैष्णवचरण आये हुए है। श्रीरामकृष्ण की आज्ञानुसार, रोज आफिस से आते ही, अधर वैष्णवचरण का कीर्तन सुनते हैं। वैष्णवचरण बड़ा मधुर कीर्तन करते है।

आज भी संकीर्तन होगा। श्रीरामकृष्ण अधर के बैठकखाने मे गये। भक्तमण्डली उन्हे देखकर खड़ी हो गयी और चरण-वन्दना करने लगी। श्रीरामकृष्ण ने प्रसन्न-चित्त से आसन ग्रहण किया। उसके बाद उन लोगों ने भी आसन ग्रहण किया। केदार और विजय ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। श्रीरामकृष्ण ने बाबूराम और नारायण से उन्हें प्रणाम करने के लिए कहा, फिर कहा, आप लोग आशीर्वाद दें, जिससे इन्हें भक्ति हो। नारायण को दिखाकर बोले, यह बड़ा सरल है। भक्तगण नारायण और बाबूराम को देख रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (केदार आदि भक्तों से) – तुम्हारे साथ रास्ते में मुलाकात हुई, नहीं तो तुम लोग काली-मन्दिर जाते। ईश्वर की इच्छा से मुलाकात हो गयी।

केदार – (विनयपूर्वक) – जो ईश्वर की इच्छा है, वही आपकी इच्छा है। (श्रीरामकृष्ण हँस रहे हैं।)

(२)

भक्तों के साथ कीर्तनानन्द

अब कीर्तन शुरू हुआ। अभिसार से आरम्भ करके रासलीला कहकर वैष्णवचरण

ने कीर्तन समाप्त किया। फिर श्रीराधाकृष्ण का मिलन गाया जाने लगा। श्रीरामकृष्ण मारे आनन्द के नृत्य करने लगे। साथ साथ भक्तगण भी उन्हें घेरकर नाचने और गाने लगे। कीर्तन हो जाने पर सब ने आसन ग्रहण किया।

श्रीरामकृष्ण – (विजय से) – ये बहुत अच्छा गाते हैं।

यह कहकर उन्होंने वैष्णवचरण को इशारे से बतला दिया। फिर 'गौरांग-सुन्दर' गाने के लिए उनसे कहा। वैष्णवचरण गाने लगे।

गाना समाप्त हो जाने पर श्रीरामकृष्ण विजय से पूछते है "कैसा रहा?" –

विजय – सुनकर तो मुझे आश्चर्य हो रहा है।

इसके बाद बड़ी देर तक कीर्तनानन्द होता रहा।

(३)

साकार-निराकार की कथा। चीनी का पहाड़

केदार और कई भक्त घर जाने के लिए उठे। केदार ने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया, और कहा, आज्ञा हो तो अब चले।

श्रीरामकृष्ण – तुम अधर से बिना कहे ही चले जाओगे, अभद्रता न होगी?

केदार – तस्मिन् तुष्टे जगत् तुष्टम्। जब आप रहे तो सब का रहना हुआ। अभी मेरी तबीयत भी कुछ खराब है और फिर विवाह आदि के लिए जरा कुछ डर भी लगता है। समाज ही तो है – एक बार गड़बड़ हो भी चुका है।*

विजय – क्या इन्हें (श्रीरामकृष्ण को) छोड़कर जायेंगे?

इसी समय श्रीरामकृष्ण को ले जाने के लिए अधर आये। भीतर पत्तलें पड़ चुकी थीं। श्रीरामकृष्ण उठे। विजय और केदार से कहा – "आओ जी मेरे साथ।" विजय, केदार और दूसरे भक्तों ने श्रीरामकृष्ण के साथ बैठकर प्रसाद पाया।

भोजन के बाद श्रीरामकृष्ण एक बार फिर बैठकखाने में आकर बैठे। केदार, विजय और दूसरे भक्त चारों ओर बैठे।

केदार ने हाथ जोड़कर बड़े ही विनयपूर्ण शब्दों में श्रीरामकृष्ण से कहा – 'मैं टाल-मटोल कर रहा था, मुझे क्षमा कीजिये।'

केदार ढाका में काम करते हैं। वहाँ बहुत से भक्त उनके पास आते हैं और उन्हें खिलाने के लिए सन्देश आदि बहुत तरह की चीजे ले आया करते हैं। केदार यही सब बातें श्रीरामकृष्ण से कह रहे हैं।

---

* अधर केदार की अपेक्षा कुछ नीची जाति के थे। केदार ब्राह्मण थे इसलिए वे न तो अधर के घर पर खा सकते थे और न उनके साथ ही।

केदार – (विनयपूर्वक) – बहुत से आदमी खिलाने के लिए आते है। क्या करूँ? कोई आज्ञा दीजिये।

श्रीरामकृष्ण – भक्ति होने पर चाण्डाल का भी अन्न खाया जा सकता है। सात वर्ष की उन्माद-अवस्था के बाद मै उस देश मे (कामारपुकुर) गया। तब कैसी कैसी अवस्थाएँ थी। वेश्याओ तक ने खिलाया, परन्तु अब वह सब नही होता।

केदार जाने को उठे।

केदार – (धीमी आवाज मे) – महाराज, आप मुझ मे कुछ शक्ति-संचार कर दीजिये, बहुत से लोग मेरे पास आते है, मुझे क्या ज्ञान है?

श्रीरामकृष्ण – अजी, मब हो जायगा, आन्तरिक भक्ति के रहने पर सब हो जाता है।

केदार के बिदा होने के पहले बगवासी के सम्पादक श्रीयुत योगेन्द्र ने आकर प्रवेश किया। श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके उन्होने आसन ग्रहण किया। साकार निराकार की बात होने लगी।

श्रीरामकृष्ण – वे साकार है, निराकार है और भी क्या क्या है, यह सब हम लोग क्या जाने? केवल निराकार कहने से कैसे काम चलेगा?

योगेन्द्र - ब्राह्म समाज की एक बात बडे आश्चर्य की है। बारह वर्ष का लडका है, उसे भी निराकार ही सूझता है। आदि-समाजवाले साकार पर विशेष आपत्ति नही करते। दुर्गा पूजा के समय वे लोग भलेमानसो के घर भी जा सकते है।

श्रीरामकृष्ण – (हँसकर) – उन्होने ठीक कहा, उसे भी निराकार ही सूझता है।

अधर – शिवनाथ बाबू साकार नही मानते।

विजय – वह उनके समझने की भूल है। ये जैसा कहते है, गिरगिट कितने ही रंग बदलता रहता है, जो पेड के नीचे रहता है, वही जान सकता है। मैने ध्यान करते हुए मूर्तियाँ देखी। कितने ही देवता थे। उन्होने बहुत कुछ कहा। मैने मन मे कहा, 'मै उनके (श्रीरामकृष्ण के) पास जाऊँगा, ये बाते तभी मेरी समझ मे आयेगी।'

श्रीरामकृष्ण – तुमने ठीक देखा है।

केदार – भक्तो के लिए वे साकार है। भक्त प्रेम से उन्हे साकार देखता है। ध्रुव ने जब उनके दर्शन किये, तब पूछा, आपके कुण्डल क्यो नही हिल रहे है? श्रीठाकुरजी ने कहा, हिलाओ तो हिले।

श्रीरामकृष्ण – सब मानना चाहिए जी – निराकार और साकार सब मानना चाहिए। काली-मन्दिर मे ध्यान करते हुए मैने देखी, एक वेश्या। मैने कहा, माँ, तू इस रूप मे भी है। इसीलिए कहता हूँ, सब मानना चाहिए। वे कब किस रूप से दर्शन देते है, सामने आते है, यह कहा नही जा सकता।

यह कहकर श्रीरामकृष्ण गाने लगे। गाना हो जाने पर विजय ने कहा, 'वे अनन्तशक्ति है – क्या किसी दूसरे रूप से दर्शन नही दे सकते? कितने आश्चर्य की बात है! लोग रेणु की रेणु जो है, फिर भी वे समझ बैठते है कि ईश्वर के सम्बन्ध मे सब कुछ जान लिया।'

श्रीरामकृष्ण – कुछ गीता, भागवत और वेदान्त पढ़कर लोग सोचते है, हमने सब समझ लिया। चीनी के पहाड़ पर एक चीटी गयी थी। एक दाना खाने से ही उसका पेट भर गया। एक दाना और मुँह मे दबाकर वह घर लौट पड़ी। जाते हुए सोच रही थी, अबकी बार आकर सारा पहाड़ उठा ले जाऊँगी! (सब हँसते है।)

(४)

कर्मयोग तथा मनोयोग

आज बृहस्पतिवार, २ अक्टूबर, १८८४ – आश्विन शुक्ला द्वादशी-त्रयोदशी। कल श्रीरामकृष्ण कलकत्ते मे अधर के यहाँ आये हुए थे। श्रीरामकृष्ण वहाँ कीर्तनानन्द मे नाचे थे।

श्रीरामकृष्ण के पास आजकल लाटू, हरीश और रामलाल रहते है। बाबूराम भी कभी कभी आकर रहते है। श्रीयुत रामलाल श्रीभवतारिणी की सेवा करते है। हाजरा महाशय भी है।

आज श्रीयुत मणिलाल मल्लिक, प्रिय मुखर्जी, उनके आत्मीय हरि, शिवपुर के एक ब्राह्मभक्त, बड़ाबाजार १२ नम्बर मल्लिक स्ट्रीट के मारवाड़ी भक्त श्रीरामकृष्ण के पास बैठे हुए है। क्रमश: दक्षिणेश्वर के कई लड़के और सीती के महेन्द्र वैद्य आये। मणिलाल पुराने भक्त है।

श्रीरामकृष्ण – (मणिलाल आदि से) – नमस्कार मन ही मन का अच्छा होता है। पैरो पर हाथ रखकर नमस्कार की क्या जरूरत है? और मन ही मन जिसे नमस्कार किया जाता है, उसे सङ्कोच भी नही होता।

"मेरा ही धर्म ठीक है और सब मिथ्या है; यह सब अच्छा नही।

"मै देखता हूँ, वे ही सब कुछ हुए है – मनुष्य, प्रतिमा, शालग्राम; सब के भीतर एक ही सत्ता देखता हूँ! मै एक को छोड दूसरा कुछ नही देखता।

"बहुत से लोग सोचते है, मेरा ही मत ठीक है और सब गलत है – हम जीते और सब हार गये। इससे, जो, बढ़ गया है, वह थोड़े के लिए अटक जाता है। तब जो पीछे पड़ा था, वह बढ़ जाता है। गोलकधाम के खेल मे, बहुत कुछ बढ़ गया, परन्तु फिर पौ न पड़ा।

"हार और जीत उनके हाथ मे है। उनका काम कुछ समझ मे नही आता। देखो,

नारियल इतने ऊँचे रहता है, धूप लगती है, फिर भी उसके जल की तासीर ठण्डी है। इधर पानी-फल (सिंघाड़े) पानी मे रहते है, परन्तु उनकी तासीर गर्म होती है।

"आदमी का शरीर देखो। सिर जो मूल है, ऊपर चला गया।"

मणिलाल – हमारा इस समय कर्तव्य क्या है?

श्रीरामकृष्ण – किसी तरह उनके साथ युक्त होकर रहना। दो रास्ते है, कर्मयोग और मनोयोग।

"जो लोग गृहस्थाश्रमी है, उनका योग कर्म के द्वारा होता है। चार आश्रम है – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। संन्यासी को काम्य कर्मो का त्याग करना चाहिए, परन्तु नित्यकर्म उसे कामना-हीन होकर करना चाहिए। दण्डधारण, भिक्षा, तीर्थ-यात्रा, पूजा, जप, इन सब कर्मो के द्वारा उनके साथ योग होता है।

"और चाहे जो काम करो, फल की आकांक्षा का त्याग करके, फल की आकांक्षा को छोड़कर कर सको तो उनके साथ योग होगा।

"एक मार्ग और है, मनोयोग, इस तरह के योगी मे बाहर से कोई चिह्न नही दीख पड़ते। उसका योग अन्तर से होता है। जैसे जड़भरत तथा शुकदेव। और भी बहुत से है, पर ये दो प्रसिद्ध है। इनकी दाढ़ी और बाल तैसे ही रहते है, वे उन्हे नही निकालते।

"परमहंस अवस्था मे कर्म उठ जाते है। तब स्मरण-मनन ही रहता है। सदा ही मन का योग रहता है। अगर वह कर्म भी करता है तो लोक-शिक्षा के लिए।

"चाहे कर्म के द्वारा योग हो या मन के द्वारा, भक्ति के होने पर सब समझ मे आ जाता है।

"भक्ति से कुम्भक आप ही हो जाता है। मन मे एकाग्रता होने पर ही वायु स्थिर हो जाती है, और वायु के स्थिर होने पर ही मन एकाग्र होता है, बुद्धि स्थिर हो जाती है। जिसे होता है, वह खुद नही समझ सकता।

"भक्तियोग मे योग के साधन होते है। मैने माँ से रो-रोकर कहा था – 'माँ, योगियो ने योग करके, ज्ञानियो ने विचार करके जो कुछ समझा है, वह सब तू मुझे समझा दे – मुझे दिखला दे।' माँ ने मुझे सब कुछ दिखा दिया है। व्याकुल होकर, उनके निकट रोने पर सब कुछ बतला देती है। वेद, वेदान्त, पुराण, इन सब शास्त्रो मे क्या है, सब उन्होने मुझे समझा दिया है।"

मणि – हठयोग?

श्रीरामकृष्ण – हठयोगी देहाभिमानी साधु है। वे बस नेति-धौति करते है – केवल देह की चिन्ता! उनका उद्देश्य आयु की वृद्धि करना है। देह की ही दिनरात सेवा किया करते है। यह अच्छा नही।

"तुम्हारा कर्तव्य क्या है? – तुम लोग मन ही मन कामिनी और कांचन का त्याग

करो। तुम लोग ससार को काकविष्ठा नही कह सकते।

"गोस्वामी गृहस्थ है, इसीलिए मै उनसे कहता हूँ, तुम्हारे यहाँ श्रीठाकुरजी की सेवा है, तुम लोग क्या संसार का त्याग करोगे – तुम लोग संसार को माया कहकर उनका अस्तित्व लोप नही कर सकते।

"संसारियो का जो कर्तव्य है, उस पर श्रीचैतन्यदेव ने कहा है – 'जीवो पर दया रखो, वैष्णवो की सेवा करो, उनका नाम लो।'

"केशव सेन ने कहा था – 'वे इस समय, दोनो ही करो, कह रहे है। एक दिन कही चुपचाप काट खायेंगे।' परन्तु बात ऐसी नही – भला मै क्यो काटूँगा? '

मणि मल्लिक – किन्तु आप तो काटते है।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – क्यो? तुम जैसे के वैसे ही तो बने हो – तुम्हे त्याग करने की क्या जरूरत है?

(५)

आचार्य का कामिनी-कांचन त्याग, फिर लोकशिक्षा का अधिकार

श्रीरामकृष्ण – जिनके द्वारा वे लोक-शिक्षा देना चाहते है, उन्हे संसार का त्याग करना चाहिए। जो आचार्य है, उन्हे कामिनी और कांचन का त्याग करना चाहिए। नही तो उनके उपदेश लोग मानते नही। केवल भीतर ही त्याग के होने से काम नही होता। बाहर भी त्याग होना चाहिए। लोक-शिक्षा तभी हो सकती है। नही तो लोग सोचते है, ये कामिनी और काचन का त्याग करने के लिए कह तो रहे है, परन्तु भीतर ये खुद उसका भोग कर रहे है।

"एक वैद्य ने रोगी को दवा देकर कहा, 'तुम किसी दूसरे दिन आना, भोजन-आदि की बात बता दूँगा।' उस दिन वैद्य के यहाँ राब की बहुतसी कलसियाँ भरी थी। रोगी का घर बहुत दूर था। उसने दूसरे दिन आकर उनसे भेट की। वैद्य ने कहा, 'खाने पीने मे जरा सावधानी रखना, गुड खाना अच्छा नही।' रोगी के चले जाने पर एक आदमी ने वैद्य से पूछा, 'उसे इतनी तकलीफ आपने क्यो दी? उसी दिन कह देते कि गुड न खाना।' हँसकर वैद्य ने कहा, 'इसका एक खास अर्थ है। उस दिन मेरे यहाँ राब और गुड के बहुत से घड़े रखे हुए थे। उस दिन अगर मै कहता तो उसको विश्वास न होता। वह सोचता, जब इन्ही के यहाँ इतना गुड़ रखा हुआ है, तो ये जरूर कुछ न कुछ गुड़ खाया करते होगे। अतएव गुड़ कुछ ऐसी बुरी चीज नही हो सकती। आज मैने गुड़ के घड़ो को छिपा रखा है। अब उसे मेरी बात का विश्वास होगा।

"मैने आदि-समाज के आचार्य को देखा, सुना, दूसरी या तीसरी बार उसने विवाह किया है। – लड़के सब बडे-बडे हो गये है।

"ये ही लोग आचार्य है! ये लोग अगर कहे, ईश्वर सत्य है और सब मिथ्या, तो इनकी बात का विश्वास भला किसे हो सकता है?

"जैसा गुरु है, उसको शिष्य भी वैसे ही मिलते है। संन्यासी भी अगर मन से त्याग करके बाहर कामिनी और कांचन लेकर रहे, तो उसके द्वारा लोक-शिक्षा नही हो सकती। लोग कहेगे, यह छिपकर गुड़ खाता है।

"सीती का महेन्द्र वैद्य रामलाल को पॉच रुपये दे गया था। मुझे यह बात मालूम नही थी।

"रामलाल के कहने पर मैने पूछा, किसे दिया है? उसने कहा, यहाँ के लिए। मैने पहले सोचा कि दूधवाले को रुपया देना है, न हो, इन्ही मे से दे दिया जायगा! हरे-हरे। जब कुछ रात हुई, तब मै खाट पर उठकर बैठ गया – बड़ी बेचैनी थी। जान पड़ता था, छाती मे कोई खरोच रहा है! तब रामलाल के पास जाकर मैने फिर पूछा – 'उसने तेरी चाची को तो नही दिया है?' उसने कहा – 'नही।' तब मैने कहा, 'तू अभी रुपये लौटा दे।' रामलाल उसके दूसरे दिन रुपये लौटा आया।

"संन्यासी के लिए रुपये लेना या लोभ मे फॅस जाना कैसा है, जानते हो? जैसे ब्राह्मण की विधवा बहुत दिनो तक आचार और ब्रह्मचर्य से रहकर एक दिन एक नीच शूद्र के साथ निकल गयी थी।

"उस देश मे भगी तेलिन के बहुत से चेले हो गये थे। शूद्र को सब लोग प्रणाम करते है, यह देखकर वहाँ के जमीदार ने उसके पीछे किसी बदमाश को भिडा दिया। उसने उसका धर्म नष्ट कर दिया। साधन-भजन सब मिट्टी मे मिल गया। पतित संन्यासी भी वैसा ही है।

"तुम लोग संसारी हो, तुम्हारे लिए सत्संग की आवश्यकता है।

"पहले है साधुसंग, फिर है श्रद्धा। साधु सन्त अगर उनका नाम न ले – उनका गुण न गाये, तो ईश्वर पर लोगो का विश्वास और श्रद्धा-भक्ति कैसे हो सकती है? जब लोग तुम्हे तीन पुश्त का अमीर समझेगे, तभी मानेगे न?

(मास्टर से) "ज्ञान के होने पर भी सदा अनुशीलन चाहिए। नागा (तोतापुरी) कहता था, लोटे को एक दिन मलने से क्या होगा? डाल रखोगे तो फिर मैला हो जायगा।

"तुम्हारे घर एक बार जाना है। तुम्हारा अड्डा अगर मालूम रहा तो सम्भव है, वहाँ बहुत से भक्त आ मिले। तुम ईशान के पास एक बार जाना।

(मणिलाल से) "केशव सेन की माँ आयी थी। उनके घर के बालको ने हरिनाम गाया। वे तालियाँ बजा-बजाकर उनकी प्रदक्षिणा करने लगी। मैने देखा, शोक से उन्हे बहुत दु:ख न था। यहाँ आकर वे एकादशी को माला लेकर जप करती थी। मैने देखा, उनमे बडी भक्ति है।"

मणिलाल – केशव बाबू के पितामह रामकमल सेन भक्त थे। तुलसी-कानन मे बैठकर नाम-जप करते थे। केशव के पिता प्यारीमोहन भी वैष्णव भक्त थे।

श्रीरामकृष्ण – बाप अगर वैसा न होता तो लडका कभी इतना भक्त नही हो सकता। विजय की अवस्था देखो न।

"विजय का बाप भागवत पढ़ता था तब भावावेश मे बेहोश हो जाता था। विजय भी कभी 'हो हो' कहता हुआ, उठकर खड़ा हो जाता था।

"आजकल विजय जो कुछ दर्शन कर रहा है, सब ठीक है।

"साकार और निराकार की बात विजय ने कही, जैसे गिरगिट का रंग लाल पीला हर तरह का होता है और फिर कोई भी रंग नही रहता, उसी तरह साकार और निराकार है।

सरलता तथा ईश्वर-प्राप्ति

"विजय बड़ा सरल है। खूब उदार और सरल हुए बिना ईश्वर के दर्शन नही होते।

"कल विजय अधर सेन के यहाँ गया हुआ था। व्यवहार ऐसा था, जैसे अपना मकान हो – सब अपने आदमी हो।

"विषय-बुद्धि के गये बिना कोई उदार और सरल नही होता।

"मिट्टी बनायी हुई न हो, तो उसके बरतन नही बन सकते। भीतर बालू या कंकड के रहने पर बरतन चिटक जाते है, इसीलिए कुम्हार पहले मिट्टी बनाता है।

"आईने मे गर्द पड़ गयी हो तो उसमे मुँह नही दिखायी पड़ता। चित्त-शुद्धि के हुए बिना अपने स्वरूप के दर्शन नही होते।

"देखो न, जहाँ अवतार है वही सरलता है। नन्द, दशरथ, ये सब सरल थे।

"वेदान्त कहता है, बुद्धि की शुद्धि हुए बिना ईश्वर के जानने की इच्छा नही होती। अन्तिम जन्म या अर्जित तपस्या के बिना उदारता या सरलता नही आती।"

(६)

श्रीरामकृष्ण की बालक जैसी अवस्था। वेदान्त-विचार

श्रीरामकृष्ण के पैर फूले हुए है। इसके लिए वे एक बालक समान चिन्ता कर रहे है।

सीती के महेन्द्र कविराज आये और उन्होने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया।

श्रीरामकृष्ण – (प्रिय मुखर्जी आदि भक्तों से) – कल नारायण से मैने कहा, 'तू अपने पैर मे उँगली गड़ाकर जरा देख तो सही, उँगली का निशान बनता है या नही।' उसने गड़ाकर देखा तो निशान बन गया। तब मेरे जी मे जी आया कि मेरे पैरो का फूलना भी कुछ नही है। (मुखर्जी से) तुम भी जरा अपने पैर मे उसी तरह उँगली गड़ाओ। गड्ढा हुआ?

मुखर्जी – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – अब मेरा जी ठिकाने हुआ।

मणि मल्लिक –आप बहते हुए पानी मे नहाया कीजिये। दवा की क्या जरूरत है?

श्रीरामकृष्ण – नही जी, तुम्हारा अभी खून ताजा है, तुम्हारी बात ही कुछ और है?

"मुझे बच्चे की अवस्था मे रखा है।

"एक दिन घास के जंगल में मुझे किसी कीड़े ने काट लिया। मैने सुना था, साँप अगर दो बार काटे तो विष निकाल लेता है। इसी ख्याल से बिलो मे हाथ डालता फिरता था। एक ने आकर कहा, 'यह आप क्या कर रहे है? – साँप जब उसी जगह फिर काटता है, तब विष निकाल लेता है। दूसरी जगह काटने से नही होता।'

"मैंने सुना था, शरद् काल की ओस लगाना अच्छा है। उस दिन कलकत्ते से आते हुए गाडी मे से सिर निकालकर मैंने खूब ओस लगायी। (सब हँसते है।)

(सीती के महेन्द्र से) "तुम्हारे सीती के वे पण्डितजी अच्छे है। वेदान्तवागीश है, मुझे मानते है। जब मैने कहा, तुमने तो खूब अध्ययन किया है – परन्तु 'मै अमुक पण्डित हूँ', ऐसे अभिमान का त्याग करना, तब उसे बडा आनन्द हुआ।

"उसके साथ वेदान्त की बाते हुई।

(मास्टर से) "जो शुद्ध आत्मा है, वे निर्लिप्त है। उनमे माया या अविद्या है। इस माया के भीतर तीन गुण है – सत्त्व, रज और तम। जो शुद्ध आत्मा है उन्ही मे ये तीनो गुण है, किन्तु फिर भी वे निर्लिप्त है। आग मे अगर आसमानी रंग की बड़ी डाल दो तो उसकी शिखा उसी रंग की दीख पड़ती है। लाल बडी छोड़ो तो शिखा भी लाल हो जाती है। परन्तु आग का अपना कोई रंग नही है।

"पानी मे आसमानी रंग डालो तो आसमानी रंग हो जायेगा और फिटकरी छोड़ो तो वही पानी का रंग रहता है।

"चाण्डाल मांस का भार लिये जा रहा था। उसने आचार्य शंकर को छू लिया। शंकर ने ज्योंही कहा – 'तूने मुझे छू लिया?' चाण्डाल बोला – 'महाराज, न तुम्हे मैने छुआ और न मुझे तुमने। तुम तो शुद्ध आत्मा हो – निर्लिप्त हो।'

"जड़भरत ने भी ऐसी ही बाते राजा रहुगण से कही थी।

"शुद्ध आत्मा निर्लिप्त है और शुद्ध आत्मा को कोई देख नही सकता। पानी मे नमक घोला हुआ हो तो आँखे नमक को देख नही सकती।

"जो शुद्ध आत्मा है, वही महाकारण – कारण का कारण है। स्थूल, सूक्ष्म, कारण और महाकारण, ये इतने है। पाँच भूत स्थूल है। मन, बुद्धि और अहंकार सूक्ष्म है। प्रकृति अथवा आद्याशक्ति सब की कारणरूपिणी है। ब्रह्म या शुद्ध आत्मा कारण का कारण है।

"यही शुद्ध आत्मा हमारा स्वरूप है।

"ज्ञान किसे कहते हैं? इसी स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करना और मन को उसी में लगाये रहना – इस शुद्ध आत्मा को जानना – यही ज्ञान है।

कर्म कब तक? प्रथम माया के संसार का त्याग, फिर ब्रह्मज्ञान

"कर्म कब तक है? – जब तक देहाभिमान रहता है अर्थात् देह ही मैं हूँ, यह बुद्धि रहती है। यह बात गीता में लिखी है।

"देह पर आत्मा-बुद्धि का आरोप करना ही अज्ञान है।

(शिवपुर के ब्राह्मभक्त से) "आप क्या ब्राह्म हैं?"

ब्राह्म – जी हाँ।

श्रीरामकृष्ण – (सहास्य) – मैं निराकार साधक का मुँह और उसकी आँखें देखकर उसे समझ लेता हूँ। आप जरा डूबिये; ऊपर उतराते रहियेगा तो रत्न आपको नहीं मिल सकता। मैं साकार और निराकार सब मानता हूँ।

बड़ाबाजार के मारवाड़ी भक्तों ने आकर प्रणाम किया। श्रीरामकृष्णं उन लोगों की प्रशंसा कर रहे हैं।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – अहा! ये सब कैसे भक्त हैं! सब के सब श्रीठाकुरजी के दर्शन करते है, स्तुतियाँ पढ़ते हैं और प्रसाद पाते हैं। इस बार इन लोगों ने जिसे पुरोहित रखा है, वह भागवत का पण्डित है।

मारवाड़ी भक्त – 'मैं तुम्हारा दास हूँ', यह जो कहता है वह 'मैं' कौन है?

श्रीरामकृष्ण – लिंग-शरीर या जीवात्मा है। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार, इन चारों के मेल से लिंग-शरीर होता है।

मारवाड़ी – जीवात्मा कौन हैं?

श्रीरामकृष्ण – अष्ट-पाशों से बँधा हुआ आत्मा; और चित्त उसे कहते हैं जो (किसी चीज की याद आने पर) 'अहा' कर उठता है।

मारवाड़ी भक्त – महाराज, मरने पर क्या होता है?

श्रीरामकृष्ण – गीता के मत से मरते समय जीव जो कुछ सोचता है, वही हो जाता है। भरत ने हरिण सोचा था, इसलिए वह वही हो भी गया था। यही कारण है कि ईश्वर को प्राप्त करने के लिए साधना की आवश्यकता है। दिन-रात उनकी चिन्ता करते रहने पर मरते समय भी उन्हीं की चिन्ता होगी।

मारवाड़ी भक्त – अच्छा, महाराज, विषय से वैराग्य क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – इसे ही माया कहते हैं। माया से सत् असत् और असत् सत् जान पड़ता है।

"सत् अर्थात् जो नित्य है – परब्रह्म हैं। असत् संसार है – अनित्य है।

"पढ़ने से क्या होता है? साधना और तपस्या चाहिए। उन्हें पुकारो।

" 'भंग-भंग चिल्लाने से क्या होगा? कुछ पीना चाहिए।

"यह संसार काँटे के पेड़ की तरह है। हाथ लगाओं तो खून निकल आता है। अगर काँटे के पेड़ के सम्बन्ध में बैठे ही बैठे यह कल्पना करते रहें कि पेड़ जल गया, तो क्या इससे वह कभी जला जाता है? ज्ञानाग्नि लाओ, वही आग लगाओ, तब पेड़ कहीं जल सकता है।

"साधना की अवस्था में कुछ परिश्रम करना पड़ता है। फिर तो सीधा मार्ग है। मोड़ पार करके अनुकूल वायु में पाल लगाकर नाव छोड़ दो।

"जब तक माया के घेरे के भीतर हो, जब तक माया के मेघ हैं, तब तक ज्ञान-सूर्य की किरणें नहीं फैल सकतीं। माया का घेरा पार कर जब बाहर आकर खड़े हो जाओगे तब ज्ञान-सूर्य अविद्या का नाश कर देगा। घर के भीतर ले आने पर आतशी शीशे से कोई काम नहीं हो सकता। घर के घेरे से बाहर खड़े होने पर जब धूप उस पर गिरती है तब उसकी ज्वाला से कागज जल जाता है।

"और बादलों के रहने पर भी आतशी शीशे से कागज नहीं जलता। बादलों के हट जाने पर ही वह काम कर सकेगा।

"कामिनी और कांचन के घेरे से जरा हटकर खड़े होने पर, अलग रहकर कुछ साधना करने पर मन का अन्धकार दूर होता है – अविद्या और अहंकार के बादल हट जाते हैं – ज्ञान-लाभ होता है।

"कामिनी और कांचन ही बादल हैं।"

(७)

श्रीरामकृष्ण का कांचन-त्याग

श्रीरामकृष्ण – (मारवाड़ी से) – त्यागियों के नियम बड़े कठिन हैं। कामिनी और कांचन का संसर्ग लेशमात्र भी न रहना चाहिए। रुपया अपने हाथ से तो छूना ही न चाहिए; परन्तु दूसरे के पास रखने की भी कोई व्यवस्था न रहनी चाहिए।

"लक्ष्मीनारायण मारवाड़ी था, वेदान्तवादी भी था, प्राय: यहाँ आया करता था। मेरा बिस्तरा मैला देखकर उसने कहा, मैं आपके नाम दस हजार रुपया लिख दूँगा, उसके व्याज से आपकी सेवा होती रहेगी।

"उसने यह बात कही नहीं कि मैं जैसे लाठी की चोट खाकर बेहोश हो गया।

"होश आने पर उससे कहा, तुम्हें अगर ऐसी बातें करनी हों, तो यहाँ फिर कभी न आना। मुझमें रुपया छूने की शक्ति ही नहीं है, और न मैं रुपया पास ही रख सकता हूँ।

"उसकी बुद्धि बड़ी सूक्ष्म थी। उसने कहा, 'तो अब भी आपके लिए त्याज्य और

ग्राह्य है! तो आपको अभी ज्ञान नहीं हुआ।'

"मैने कहा, नहीं भाई, इतना ज्ञान मुझे नहीं हुआ। (सब हँसते हैं।)

"लक्ष्मीनारायण ने तब वह धन हृदय के हाथ में देना चाहा। मैंने कहा – 'तो मुझे कहना होगा, इसे दे, उसे दे'; अगर उसने न दिया तो क्रोध का आना अनिवार्य होगा। रुपयों का पास रहना ही बुरा है। ये सब बातें न होंगी।

"आईने के पास अगर कोई वस्तु रखी हुई हो, तो क्या उसका प्रतिबिम्ब न पड़ेगा?"

मारवाड़ी भक्त – महाराज, क्या गंगा में शरीर-त्याग होने पर मुक्ति होती है?

श्रीरामकृष्ण – ज्ञान होने ही से मुक्ति होती है। चाहे जहाँ रहो – चाहे महा कलुषित स्थान में प्राण निकलें, और चाहे गंगातट ही हो; ज्ञानी की मुक्ति अवश्य होगी।

"परन्तु हाँ, अज्ञानी के लिए गंगातट ठीक है।"

मारवाड़ी भक्त – महाराज, काशी में मुक्ति कैसे होती है?

श्रीरामकृष्ण – काशी में मृत्यु होने पर शिव के दर्शन होते हैं। शिव प्रकट होकर कहते है – 'मेरा यह साकार रूप मायिक है, मैं भक्तों के लिए वह रूप धारण करता हूँ – यह देख, मै अखण्ड सच्चिदानन्द मे लीन होता हूँ।' यह कहकर वह रूप अन्तर्धान हो जाता है।

"पुराण के मत से चाण्डाल को भी अगर भक्ति हो, तो उसकी भी मुक्ति होगी। इस मत के अनुसार नाम लेने से ही काम होता है। योग, तन्त्र, मन्त्र, इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

"वेद का मत अलग है। ब्राह्मण हुए बिना मुक्ति नही होती। और मन्त्रों का यथार्थ उच्चारण अगर नहीं होता तो पूजा का ग्रहण ही नहीं होता। याग, यज्ञ, मन्त्र, तन्त्र, इन सब का अनुष्ठान यथाविधि करना चाहिए।

"कलिकाल में वेदोक्त कर्मों के करने का समय कहाँ है? इसीलिए कलि में नारदीय भक्ति चाहिए।

"कर्मयोग बड़ा कठिन है। निष्काम कर्म अगर न कर सके तो वह बन्धन का ही कारण होता है। इस पर आजकल प्राण अन्नगत हो रहे हैं। अतएव विधिवत् सब कर्मों के करने का समय नहीं रहा। दशमूल-पाचन अगर रोगी को खिलाया जाता है तो इधर उसके प्राण ही नहीं रहते, अतएव चाहिए फीवर-मिक्श्चर।

"नारदीय भक्ति है – उनके नाम और गुणों का कीर्तन करना।

"कालिकाल के लिए कर्मयोग ठीक नहीं, भक्तियोग ही ठीक है।

"संसार में कर्मों का भोग जितने दिनों के लिए हैं, उतने दिन तक भोग करो, परन्तु भक्ति और अनुराग चाहिए। उनके नाम और गुणो का कीर्तन करने पर कर्मों का क्षय हो

जाता है।

"सदा ही कर्म नहीं करते रहना पड़ता। उन पर जितनी ही शुद्धा भक्ति और प्रीति होगी, कर्म उतने ही घटते जायेंगे। उन्हें प्राप्त करने पर कर्मों का त्याग हो जाता है। गृहस्थ की बहू को जब गर्भ होता है तो उसकी सास उसका काम घटा देती है। लड़का होने पर उसे काम नहीं करना पड़ता।"

शुभ संस्कार तथा ईश्वर के लिए व्याकुलता

दक्षिणेश्वर मौजे से कुछ लड़के आये। उन्होंने श्रीरामकृष्ण को प्रणाम किया। वे लोग आसन ग्रहण करके श्रीरामकृष्ण से प्रश्‍न कर रहे हैं। दिन के चार बजे होंगे।

एक लड़का – महाराज, ज्ञान किसे कहते है?

श्रीरामकृष्ण – ईश्वर सत् हैं और सब असत्, इसके जानने का नाम ज्ञान है।

"जो सत् हैं उनका एक और नाम ब्रह्म है, एक दूसरा नाम है काल। इसीलिए लोग कहा करते हैं – अरे भाई, काल में कितने आये और कितने चले गये।

"काली वे हैं जो काल के साथ रमण करती हैं। आद्याशक्ति वे ही हैं। काल और काली, ब्रह्म और शक्ति अभेद हैं।

"संसार अनित्य है, वे नित्य हैं। संसार इन्द्रजाल है, बाजीगर ही सत्य है, उसका खेल अनित्य है।"

लड़का – संसार अगर माया है, इन्द्रजाल है, तो यह दूर क्यों नहीं होता?

श्रीरामकृष्ण – संस्कार-दोषों के कारण यह माया नहीं जाती। कितने ही जन्मों तक इस माया के संसार रहने के कारण यह सच जान पड़ती है।

"संस्कार में कितनी शक्ति है, सुनो। एक राजा का लड़का पिछले जन्म में धोबी के घर पैदा हुआ था। राजा का लड़का होकर जब वह खेल रहा था, तब अपने साथियों से उसने कहा, ये सब खेल रहने दो, मैं पेट के बल लेटता हूँ, तुम लोग मेरी पीठ पर कपड़े पटको!

"यहाँ बहुत से लड़के आते हैं, परन्तु कोई कोई ईश्वर के लिए व्याकुल हैं। वे अवश्य ही संस्कार लेकर आये हैं।

"वे सब लड़के विवाह की बात पर रो देते हैं। स्वयं विवाह की बात तो सोचते ही नहीं। निरंजन बचपन से ही कहता है मैं विवाह न करूँगा।

"बहुत दिन हो गये (बीस वर्ष से अधिक) यहाँ वराहनगर से दो लड़के आते थे, एक का नाम था गोविन्द पाल, दूसरे का गोपाल सेन। उनका मन बचपन से ही ईश्वर पर था। विवाह की बात होने पर डर से सिकुड़ जाते थे। गोपाल को भावसमाधि होती थी। विषयी-मनुष्यों को देखकर वह दब जाता था जैसे बिल्ली को देखकर चूहे। जब ठाकुरों

(Tagore) के लड़के उस बगीचे मे घूमने के लिए गये हुए थे, तब उसने अपने घर का दरवाजा बन्द कर लिया था, इसलिए कि कही उनसे बातचीत न करनी पड़े।

"पञ्चवटी के नीचे गोपाल को भावावेश हो गया था। उसी अवस्था मे मेरे पैरो पर हाथ रखकर उसने कहा, 'अब मुझे जाने दीजिये। अब इस संसार मे मुझ से रहा नही जाता – आपको अभी बहुत देर है – मुझे जाने दीजिये।' मैने भी भावावस्था मे कहा – 'तुम्हे फिर आना होगा।' उसने कहा – 'अच्छा, फिर आऊँगा।

"कुछ दिन बाद गोविन्द आकर मिला। मैने पूछा, गोपाल कहाँ है? उसने कहा, गोपाल चला गया (उसका निधन हो गया)।

"दूसरे लड़के देखो, किस चिन्ता मे घूम रहे है! – किस तरह धन हो – गाड़ी हो – मकान हो – वस्त्राभूषण हो – फिर विवाह हो – इसी के लिए घूम रहे है। विवाह करना है, तो लड़की कैसी है, इसकी पहले खोज करते है और सुन्दर है या नही, इसकी जॉच करने के लिए स्वयं जाते है।

"एक आदमी मेरी बडी निन्दा करता है। बस यही कहता है कि ये लड़को को प्यार करते है। जिनके अच्छे संस्कार है, जो शुद्धात्मा है, ईश्वर के लिए व्याकुल होते है, रुपया, शरीर-सुख इन सब वस्तुओ की ओर जिनका मन नही है, मै उन्ही को प्यार करता हूँ।

"जिन्होने विवाह कर लिया है, उनकी अगर ईश्वर पर भक्ति हो, तो वे संसार मे लिप्त न हो जायेगे। हीरानन्द ने विवाह किया है तो इससे क्या हुआ? वह संसार मे अधिक लिप्त न होगा।"

हीरानन्द सिन्ध का रहनेवाला, बी. ए पास एक ब्राह्मसमाजी है।

मणिलाल, शिवपुर के ब्राह्मभक्त, मारवाड़ी भक्त श्रीरामकृष्ण को प्रणाम करके बिदा हुए।

(८)

कर्मत्याग कब?

शाम हो गयी। दक्षिण के बरामदे मे और पश्चिमवाले गोल बरामदे मे दीपक जलाये जा चुके है। श्रीरामकृष्ण के कमरे का प्रदीप जला दिया गया, कमरे मे धूप दी गयी।

श्रीरामकृष्ण अपने आसन पर बेठे हुए माता का नाम ले रहे है। कमरे मे मास्टर, श्रीयुत प्रिय मुखर्जी और उनके आत्मीय हरि बैठे है। कुछ देर तक ध्यान और चिन्तन कर लेने पर श्रीरामकृष्ण भक्तो से वार्तालाप करने लगे। अब श्रीठाकुरमन्दिर मे आरती ही की देर है।

श्रीरामकृष्ण – (मास्टर से) – जो दिन-रात उनकी चिन्ता कर रहा है उसके लिए सन्ध्या की क्या जरूरत है?

"सन्ध्या गायत्री में लीन हो जाती है और गायत्री ओंकार में।

"एक बार ॐ कहने के साथ ही जब समाधि हो जाय तब समझना चाहिए कि अब साधु साधन-भजन में पक्का हो गया।

"हृषीकेश में एक साधु सुबह उठकर, जहाँ एक बहुत बड़ा झरना है, वहाँ जाकर खड़ा होता है। दिन भर वही झरना देखता है और ईश्वर से कहता है, 'वाह, खूब बनाया है तुमने! कितने आश्चर्य की बात है!' उसके लिए जप-तप कुछ नहीं है। रात होने पर वह अपनी कुटी पर लौट जाता है।

"निराकार या साकार इन सब बातों के सोचने की ऐसी क्या आवश्यकता है! निर्जन में व्याकुल हो रो-रोकर उनसे कहने से ही काम बन जायगा। कहो – 'हे ईश्वर, तुम कैसे हो, यह मुझे समझा दो, मुझे दर्शन दो।'

"वे अन्दर भी है और बाहर भी।

"अन्दर भी वे ही हैं। इसीलिए वेद कहते है – तत्त्वमसी। और बाहर भी वे ही हैं। माया से अनेक रूप दिखायी पड़ते है। परन्तु वस्तुत: हैं वे ही।

"इसीलिए सब नामों और रूपो का वर्णन करने के पहले कहा जाता है – ॐ तत् सत्।

"दर्शन करने पर एक तरह का ज्ञान होता है और शास्त्रों से एक दूसरी तरह का। शास्त्रो में उसका आभास मात्र मिलता है, इसलिए कई शास्त्रो के पढ़ने की कोई जरूरत नही। इससे निर्जन मे उन्हें पुकारना अच्छा है।

"गीता सब न पढ़ने से भी काम चलता है। दस बार गीता गीता कहने से जो कुछ होता है, वही गीता का सार है। अर्थात् त्यागी। हे जीव, सब त्याग करके ईश्वर की आराधना करो। यही गीता का सार है।"

श्रीरामकृष्ण को भक्तों के साथ काली की आरती देखते देखते भावावेश हो रहा है। अब देवी-प्रतिमा के सामने भूमिष्ठ होकर प्रणाम नही कर सकते। भावावेश अब भी है। भावावस्था में वार्तालाप कर रहे हैं।

मुखर्जी के आत्मीय हरि की उम्र अठारह-बीस साल की होगी। उनका विवाह हो गया है। इस समय मुखर्जी के ही घर पर रहते हैं। कोई काम करनेवाले हैं। श्रीरामकृष्ण पर बड़ी भक्ति है।

श्रीरामकृष्ण – (भावावेश में हरि से) – तुम अपनी माँ से पूछकर मन्त्र लेना। (श्रीयुत प्रिय से) मै इनसे (हरि से) कह भी न सका, मन्त्र तो मैं देता ही नहीं हूँ।

"तुम जैसा ध्यान-जप करते हो; वैसा ही करते रहो।"

प्रिय – जो आज्ञा।

श्रीरामकृष्ण – और मैं इस अवस्था में कह रहा हूँ; बात पर विश्वास करना। देखो,

यहाँ ढोंग इत्यादि नहीं है।

"मैंने भावावेश में कहा – माँ, जो लोग यहाँ अन्तर की प्रेरणा से आते हैं, वे सिद्ध हों।"

सींती के महेन्द्र वैद्य बरामदे में आकर बैठे। वे श्रीयुत रामलाल, हाजरा आदि के साथ बातचीत कर रहे हैं। श्रीरामकृष्ण अपने आसन से उन्हें पुकार रहे हैं – 'महेन्द्र, महेन्द्र!'

मास्टर जल्दी से वैद्यराज को बुला लाये।

श्रीरामकृष्ण – (कविराज से) – बैठो – जरा सुनो तो सही।

वैद्यराज कुछ लज्जित से हो गये। बैठकर श्रीरामकृष्ण के उपदेश सुनने लगे।

श्रीरामकृष्ण – (भक्तों से) – कितने ही प्रकार से उनकी सेवा की जा सकती है।

"प्रेमी भक्त उन्हें लेकर कितनी ही तरह से सम्भोग करता है।

"कभी तो वह सोचता है, ईश्वर पद्म हैं और वह भौंरा, और कभी ईश्वर सच्चिदानन्द सागर हैं और वह मीन।

"प्रेमी भक्त कभी सोचता है कि वह ईश्वर की नर्तकी है। यह सोचकर वह उनके सामने नृत्य करता है – गाने सुनाता है। कभी सखीभाव या दासीभाव में रहता है। कभी उन पर उसका वात्सल्यभाव होता है – जैसा यशोदा का था। कभी पतिभाव – मधुरभाव होता है – जैसा गोपियों का था।

"बलराम का भी तो सखीभाव रहता था और कभी वे सोचते थे, मैं कृष्ण का छाता या लाठी बना हुआ हूँ। सब तरह से वे कृष्ण की सेवा करते थे।

"चैतन्यदेव की तीन अवस्थाएँ थीं। जब अन्तर्दशा होती थी, तब वे समाधिलीन हो जाते थे। उस समय बाहर का ज्ञान बिलकुल न रह जाता था। जब अर्धबाह्य दशा होती थी, तब नृत्य तो कर सकते थे, पर बोल नहीं सकते थे। बाह्यदशा में संकीर्तन करते थे।

(भक्तों से) "तुम लोग ये सब बातें सुन रहे हो, धारणा करने की चेष्टा करो। विषयी जब साधु के पास आते हैं, तब विषय की चर्चा और विषय की चिन्ता को बिलकुल छिपा कर आते हैं। जब चले जाते हैं, तब उन्हें निकालते हैं। कबूतर मटर खाता है, तो जान पड़ता हैं, निगल कर हजम कर गया, परन्तु नहीं, गले के भीतर रखता जाता है। गले में मटर भरे रहते हैं।

"सब काम छोड़कर तुम्हें चाहिए कि सन्ध्या समय उनका नाम लो।

"अँधेरे में ईश्वर की याद आती है। यह भाव आता है कि अभी तो सब दीख पड़ रहा था, किसने ऐसा किया। मुसलमानों को देखो, सब काम छोड़कर ठीक समय पर जरूर नमाज पढ़ेंगे।"

मुखर्जी – अच्छा महाराज, जप करना अच्छा है?

श्रीरामकृष्ण – हाँ, जप से ईश्वर मिलते हैं। एकान्त में उनका नाम जपते रहने से उनकी कृपा होती है, इसके पश्चात् है दर्शन।

"जैसे पानी में काठ डुबाया हुआ है – लोहे की जंजीर से बाँधा हुआ है, उसी जंजीर को पकड़कर जाओ तो वह लकड़ी अवश्य छू सकोगे।

"पूजा की अपेक्षा जप बड़ा है, जप की अपेक्षा ध्यान बड़ा है, ध्यान से बढ़कर है भाव और भाव से बढ़कर महाभाव या प्रेम। प्रेम चैतन्यदेव को हुआ था। प्रेम यदि हुआ तो ईश्वर को बाँधने की मानो रस्सी मिल गयी। (हाजरा आकर बैठे।)

(हाजरा से) "उन पर जब प्यार होता है, तब उसे रागभक्ति कहते हैं। वैधी-भक्ति जितनी शीघ्र आती है जाती भी उतनी ही शीघ्र हैं; राग-भक्ति स्वयम्भू लिंग-सी है। उसकी जड़ नहीं मिलती। स्वयम्भू लिंग की जड़ काशी तक है। राग-भक्ति अवतार और उनके सांगोपांग अंशों को होती है।"

हाजरा – अहा!

श्रीरामकृष्ण – तुम जब एक दिन जप कर रहे थे, तब मैं जंगल से होकर आ रहा था। मैंने कहा – माँ, इसकी बुद्धि तो बड़ी हीन है, यह यहाँ आकर भी माला जप रहा है। जो कोई यहाँ आयेगा, उसे तत्काल ही चैतन्य होगा। उसे माला जपना, यह सब इतना न करना होगा। तुम कलकत्ता जाओ, देखोगे, वहाँ हजारों आदमी माला जपते हैं – वेश्याएँ तक।

श्रीरामकृष्ण मास्टर से कह रहे हैं –

"तुम नारायण को किराये की गाड़ी पर ले आना।

"इनसे (मुखर्जी से) भी नारायण की बात कह रखता हूँ। उसके आने पर उसे कुछ खिलाऊँगा! उसको खिलाने के बहुत से अर्थ हैं।"

(९)

कीर्तनानन्द में श्रीरामकृष्ण

आज शनिवार है। श्रीयुत केशव सेन के बड़े भाई नवीन सेन के कोलूटोलावाले मकान में श्रीरामकृष्ण गये हुए हैं। ४ अक्टूबर, १८८४।

गत बृहस्पतिवार के दिन केशव की माँ श्रीरामकृष्ण को न्योता देकर, आने के लिए हर तरह से कह गयी थीं।

बाहर के ऊपरवाले कमरे में जाकर श्रीरामकृष्ण बैठे। नन्दलाल आदि केशव के भतीजे, केशव की माँ और उनके बन्धु-बान्धव श्रीरामकृष्ण की बड़ी आवभगत कर रहे हैं। ऊपरवाले कमरे में ही संकीर्तन होने लगा। कोलूटोले में सेन परिवार की बहुत सी स्त्रियाँ भी आयी हुई हैं।

श्रीरामकृष्ण के साथ बाबूराम, किशोरी तथा और भी दो-एक भक्त आये है। मास्टर भी आये है। वे नीचे बैठे हुए श्रीरामकृष्ण का संकीर्तन सुन रहे है।

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तो से कह रहे है – "ससार अनित्य है। मृत्यु पर सदा ही ध्यान रखना चाहिए।" श्रीरामकृष्ण गा रहे है –

"मन। सोच कर देख, कोई किसी का नही है। इस संसार मे वृथा ही तू चक्कर मारता फिरता है। माया-जाल मे फॅसकर दक्षिणाकाली को कभी भूल न जाना। इस संसार मे दो ही दिन के लिए लोक 'मालिक-मालिक' करते है। जब कभी कालरूप मालिक आ जाते है, तब पहले के उस मालिक को लोग श्मशान मे डाल देते है। जिसके लिए तुम सोचकर मर रहे हो, क्या वह तुम्हारे संग भी जाता है? तुम्हारी वही प्रेयमी तुम्हारे मर जाने पर अमंगल की आशंका करके गोबर से घर को लीपती-पोतती है।"

श्रीरामकृष्ण कह रहे है – "डूबो, ऊपर उतराते रहने से क्या होगा? कुछ दिन एकान्त मे, सब कुछ छोडकर, उन पर सोलहो आने मन लगाकर, उन्हे पुकारो।" श्रीरामकृष्ण गा रहे है – "ऐ मन, रूप के समुद्र मे तू डूब जा। तलातल और पाताल मे खोज करने पर तुझे प्रेमरूपी रत्न मिलेगा।"

श्रीरामकृष्ण ब्राह्मभक्तो से "तुम मेरे सर्वस्व हो" यह गाना गाने के लिए कह रहे है।

ब्राह्मभक्तो का गाना हो जाने पर श्रीरामकृष्ण ने श्रीकृष्ण पर एक गाना गाया। यह गाना सुनकर केशव ने इसी के जोड का एक दूसरा गीत रचा था।

अब श्रीरामकृष्ण गौरांग-कीर्तन करने लगे। भक्तो के साथ बडी देर तक नृत्य-गीत होता रहा।

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य

एवं अन्य आध्यात्मिक प्रकाशनों के लिए लिखें :

रामकृष्ण मठ, (प्रकाशन विभाग)

रामकृष्ण आश्रम मार्ग, धन्तोली, नागपुर ४४० ०१२

(H-1) Shri Ramakrishna-Vachanamrit Part : 1

SRI RAMAKRISHNA MATH